॥ अथ श्रीवाल्मीकीयरामायणे उत्तरकाण्डं भाषाटीकासमेतं प्रारभ्यते ॥

॥ अथ श्रीवाल्मीकिरामायणे उत्तरकाण्डं भाषाटीकासमेतं प्रारभ्यते ॥

उत्तरकाण्डम्—७.

दोहा—भरत लषन शत्रुघ्न सह, दशरथ ४ कुमार ॥ ...

सुर नर मुनि वंदन करत, योग समाधि विसारि ॥ शत्रुजीत निज जननके, दिये सकल दुख टारि ॥ २ ॥
सुखकी सुति छविमों छके, कही कौन पै जाय ॥ या झलकन मन कविनको, लियो चुराय रिझाय ॥ ३ ॥
धनुधार सब महीको, दीनों भार उतार ॥ तिन रघुनायक स्वामिको, वन्दों वारम्वार ॥ ४ ॥

सीता रामकी वंदना—छप्पय ।

जयति जयति जय जननि लडैती जनक जानकी ॥ जयति जयति प्रियतमा राम करुणानिधानकी ॥
जयति २ ललना ललाम अतिशय कमनीया ॥ जयति २ लीला ललित मनुज जन्म पावन धरणि । जयति २ दुखहरणि सब मम इच्छा पूरण करणि ॥ १ ॥ जयति जयति सिय सती तीयगण मणिगणनीया ॥
जयति जानकीरमन जनक कन्या प्रिय हित रत ॥ जयति अनुज जाया समेत धृत कठिन तपोव्रत ॥ जयति वाट वट विटप क्षीर कृत जटा जूट लट ॥
जयति उग्र संकट विचित्र थित चित्रकूट तट ॥ जय जयति कुटिल अति भट जनित जटिल विकट संकट हरण । जय जयति पीतपट धरण मम इच्छा पूरण करण ॥ २ ॥
॥ श्रीगणेशाय नमः ॥ ॥ राक्षस कुलको निर्मूल करके जब श्रीरामचन्द्रजी राजगद्दीपर बैठे तब मुनिगण उनके वैभवकी प्रशंसा करनेकी वासनासे उनके निकट आये ॥
॥ १ ॥ कौशिक, यवक्रीत, गार्ग्य, गालव, कण्व और मेधातिथीके पुत्र प्रभृति जो कि पूर्व दिशाके रहनेवालेथे ॥ २ ॥ स्वस्त्यात्रेय, भगवान् नमुचि,
श्रीगणेशायनमः ॥ प्राप्तराज्यस्यरामस्यराक्षसानांवधेकृते ॥ आजग्मुर्मुनयःसर्वेराघवंप्रतिनंदितुम् ॥ १ ॥ कौशिकोथयवक्रीतोगार्ग्योगालव
प्रमुच ॥ कण्वोमेधातिथेःपुत्रःपूर्वस्यांदिशियेश्रिताः ॥ २ ॥ स्वस्त्यात्रेयश्चभगवान्नमुचिःप्रमुचिस्तथा ॥ अगस्त्योऽत्रिश्चभगवान्सुमुखोविमुख
स्तथा ॥ ३ ॥ आजग्मुस्तेसहागस्त्यायेश्रितादक्षिणांदिशम् ॥ नृषङ्गुःकवषीधौम्यःकौपेयश्चमहानृषिः ॥ ४ ॥ तेप्याजग्मुःसशिष्यावैयेश्रिताः
पश्चिमांदिशम् ॥ वसिष्ठःकश्यपोथात्रिर्विश्वामित्रःसगौतमः ॥ ५ ॥ जमदग्निर्भरद्वाजस्तेपिसप्तर्षयस्तथा ॥ उदीच्यांदिशिसप्तैतेनित्यमेव
निवासिनः ॥ ६ ॥
प्रमुचि, अगस्त्य, अत्रि, भगवान सुमुख और विमुख ॥ ३ ॥ इत्यादि जो कि, दक्षिण दिशामें वास करनेथे आये. नृषङ्ग, कवषी, धौम्य; महाऋषि कौपेय ॥ ४ ॥
इत्यादि यह सबही पश्चिम दिशाके रहनेवाले अपने शिष्योंके सहित आये । वसिष्ठ, कश्यप, अत्रि, विश्वामित्र, गौतम ॥ ५ ॥ जमदग्नि, भरद्वाज और सप्तर्षि जो कि

सातों नित्य उत्तर दिशामें वास करतेथे ॥ ६ ॥ यह सब महात्मा श्रीरामचंद्रजीके स्थानपर आये इन सब अग्निके समान प्रभावालोंको प्रतिहारियोंने भलीभाँति बैठाया ॥ ७ ॥ वेद वेदाङ्गके जाननेवाले अनेक शास्त्र विशारद मुनिश्रेष्ठ धर्मात्मा अगस्त्यजी द्वारपालसे बोले ॥ ८ ॥ कि, हम समस्त ऋषि यहांपर आयेहैं, यह समाचार तुम श्रीरामचंद्रजीसे निवेदन करदो। अगस्त्यजीके वचन सुनकर प्रतिहारी अतिशीघ्रतासे चला॥९॥ वह शीघ्रही महात्मा श्रीरामचन्द्रजीके समीप प्रवेश करता हुआ और नीति और मनकी वात जाननेवाला श्रेष्ठ व्रतयुक्त चतुर व धैर्यवान् ॥१०॥ वह द्वारपाल पूर्ण चंद्रमाके समान श्रीरामचंद्रजीके दर्शन करके कहने लगा कि: भगवन्! ऋषिश्रेष्ठ अगस्त्यजी प्रभृति ऋषि यहांपर आयेहैं ॥ ११ ॥ बाल सूर्यके समान उन समस्त लोगोंका आना सुनकर श्रीरामचंद्रजीने द्वारपालसे कहा कि,

संप्राप्यैतेमहात्मानोराघवस्यनिवेशनम् ॥ विष्ठिताःप्रतिहारार्थंहुताशनसमप्रभाः ॥ ७ ॥ वेदवेदांगविदुषोनानाशास्त्रविशारदाः ॥ द्वाःस्थंप्रो वाचधर्मात्माअगस्त्योमुनिसत्तमः ॥ ८ ॥ निवेद्यतांदाशरथेऋषयोवयमागताः ॥ प्रतीहारस्ततस्तूर्णमगस्त्यवचनाद्द्रुतम् ॥ ९ ॥ समीपं राघवस्याशुप्रविवेशमहात्मनः ॥ नयेंगितज्ञःसद्वृत्तोदक्षोधैर्यसमन्वितः ॥ १० ॥ सरामंदृश्यसहसापूर्णचंद्रसमद्युतिम् ॥ अगस्त्यंकथयामास संप्राप्तमृषिसत्तमम् ॥ ११ ॥ श्रुत्वाप्राप्तान्मुनींस्तांस्तुवालसूर्यसमप्रभान् ॥ प्रत्युवाचततोद्वाःस्थंप्रवेशयथासुखम् ॥ १२ ॥ दृष्ट्वाप्राप्तान्मु नींस्तांस्तुप्रत्युत्थायकृतांजलिः ॥ पाद्यार्घ्यादिभिरानर्चगांनिवेद्यचसादरम् ॥ १३ ॥ रामोऽभिवाद्यप्रयतआसनान्यादिदेशह ॥ तेषुकांचन चित्रेषुमहत्सुचवरेषुच ॥ १४ ॥ कुशांतर्धानदत्तेषुमृगचर्मयुतेषुच ॥ यथार्हमुपविष्टास्तेआसनेष्वृषिपुंगवाः ॥ १५ ॥ रामेणकुशलंपृष्टाःसशि ष्याःसपुरोगमाः ॥ महर्षयोवेदविदोरामंवचनमब्रुवन् ॥ कुशलंनोमहाबाहोसर्वत्ररघुनंदन ॥१६॥ त्वांतुदिष्ट्याकुशलिनंपश्यामोहतशात्रवम् ॥ दिष्ट्यात्वयाहतोराजन्रावणोलोकरावणः ॥ १७ ॥

तुम आदर सन्मान सहित उनको यहाँपर ले आओ ॥ १२ ॥ जब मुनि लोग यहांपर आगये तब श्रीरामचन्द्रजी हाथ जोडकर खडे होगये और पाद्य अर्घ्यसे आदर सहित उनकी पूजा कर प्रत्येकको गोदान किया ॥ १३ ॥ श्रीरामचन्द्रजीने अतियत्न सहित सबको प्रणाम करके बैठनेको आसन दिये, उन सुवर्ण चित्रित बडे श्रेष्ठ ॥ १४ ॥ कुशासनोंपर और मृग चर्मादिपर यथायोग्य आसन बिछाय २ सब मुनिश्रेष्ठ बैठे ॥ १५ ॥ फिर श्रीरामचन्द्रजीने उन सबसे कुशल मङ्गल पूँछा तब वेदके जाननेवाले शिष्योंके सहित महर्षिगण बोले हे महावीर रघुनंदन ! हमारा सब प्रकारसे मंगलहै ॥ १६ ॥ अधिक करके आप शत्रुओंका संहार कर कुशल सहित हैं ... आपने बडे भाग्यसेही लोकोंके रुलानेवाले रावणको मारा ॥ १७ ॥ हे श्रीरामचन्द्र ! इसमें कुछ संदेह नहीं कि, आप ... नाश करना तो एक साधारण बात है ॥ १८ ॥ हे श्रीरामचंद्रजी । आपने भाग्यसेही ... विजयी देखा ॥ १९ ॥ हे धर्मात्मन् ! आपके हितकारी भ्राता लक्ष्मण

यह देखकर हमको अत्यन्त आनन्द हुआ। हे राजन्! आ...

...सुरकी सहायतासे त्रिलोकीको भी जीत सकतेहैं फिर पुत्र पौत्र सहित रावणका नाश करना तो एक साधारण बात है ॥ १८ ॥ हे श्रीरामचन्द्रजी ! ...
पुत्र पौत्र सहित रावणका संहार किया और हमनेभी आज बडे भाग्यसेही सीताजीके सहित आपको विजयी देखा ॥१९॥ हे धर्मात्मन् ! आपके हितकारी भ्राता लक्ष्मण ... माता व और बन्धु बान्धवोंके साथ आपको बडे भाग्यसेही आज हम लोगोंने देखा ॥ २० ॥ हे राजन्! प्रहस्त, विकट, विरूपाक्ष महोदर और अकम्पन इन दुर्धर्ष राक्षसोंको आपने भाग्यसेही संहार कियाहै ॥ २१ ॥ जिसके शरीरके प्रमाणसे बडे प्रमाणके शरीरवाले और राक्षस इस जगत्में नहीं हैं. आपने बडे ...

नहिभारःसतेरामरावणःपुत्रपौत्रवान् ॥ सधनुस्त्वंहिलोकांस्त्रीन्विजयेथानसंशयः ॥ १८ ॥ दिष्ट्यात्वयाहतोरामरावणःपुत्रपौत्रवान् ॥ दिष्ट्याविजयिनंत्वाद्यपश्यामःसहसीतया ॥ १९ ॥ लक्ष्मणेनचधर्मात्मन्भ्रात्रात्वद्धितकारिणा ॥ मातृभिर्भ्रातृसहितंपश्यामोऽद्यवयंनृप ॥ २० दिष्ट्याप्रहस्तोविकटोविरूपाक्षोमहोदरः ॥ अकंपनश्चदुर्धर्षोनिहतास्तेनिशाचराः ॥ २१ ॥ यस्यप्रमाणाद्विपुलंप्रमाणंनेहविद्यते ॥ दिष्ट्यातेसमरेरामकुंभकर्णोनिपातितः ॥ २२ ॥ त्रिशिराश्चातिकायश्चदेवांतकनरांतकौ ॥ दिष्ट्यातेनिहतारामसहावीर्यानिशाचराः ॥ २३ दिष्ट्यात्वंराक्षसेंद्रेणद्वंद्वयुद्धमुपागतः ॥ देवतानामवध्येनविजयंप्राप्तवानसि ॥ २४ ॥ संख्येतस्यनकिंचित्तुरावणस्यपराभवः ॥ द्वंद्वयुद्धमवाप्तोदिष्ट्यातेरावणिर्हतः ॥ २५ ॥ दिष्ट्यातस्यमहाबाहोकालस्येवाभिधावतः ॥ मुक्तःसुररिपोर्वीरप्राप्तश्चविजयस्त्वया ॥ २६ ॥ अभिनंदामतेसर्वेसंश्रुत्येंद्रजितोवधम् ॥ अवध्यःसर्वभूतानांमहामायाधरोयुधि ॥ २७ ॥

...सेही तुमने शरीरधारी कुम्भकर्णको संग्राममें विनाश किया ॥ २२ ॥ हे राम ! त्रिशिरा, अतिकाय, देवान्तक, और नरान्तक इत्यादि महावीर्यवान् निशाचर आपने भाग्यहीसे वध कियाहै ॥ २३ ॥ देवता लोगोंसेभी अवध्य राक्षसराज रावणके सहित द्वन्द्वयुद्ध करके आपने विजय पाई है यह बडे आनंदकी बात ॥ २४ ॥ हे महावीर ! संग्राममें रावणका जीत लेना तो कुछ नहीं है परंतु इन्द्रजीतका मार डालना अतिकठिन कार्यथा, सो आपने उस मेघनादको द्वन्द्वयुद्ध ... भाग्यसेही उसका संहार कियाहै ॥ २५ ॥ हे वीर ! आप कालके समान दृष्टि न आयकर ऊपर दौडनेवाले देवताओंके शत्रु इन्द्रजीतके अस्त्रबंधनसे ... होगे छूटे और उससे विजय पाई, इस कारण इन्द्रजीतका वध सुनकर हम अत्यन्त आनंदित हुए ॥ २६ ॥ हे वीर ! संग्राममें इन्द्रजीत अनेक प्रकारके मायारूप ध...

करगाया, विशेष करके यह सब प्राणियोंसे अवध्य था. उस इन्द्रजीवके वधका वृत्तान्त सुन हम सब आपकी बडाई करते हैं ॥ २७ ॥ इन्द्रजीतका संहार सुन
हम सबको परम विस्मय होताहै. हे वीर! यह बडे भाग्यकी बातहै कि, आपने इस प्रकारसे राक्षसकुल निर्मूल करके जगत्‌को शान्ति देनेवाली परमपुण्य अभय दक्षि
णा दी. हे शत्रुओंके रोननेवाले रघुनंदन ! बडाही भाग्य है कि, आप इसप्रकार विजय पाय बढे हैं ॥ २८ ॥ इसके उपरांत श्रीरामचंद्रजी ब्रह्मज्ञानसम्पन्न मुनि
लोगोंके वचन सुनकर अतिविस्मितहो हाथ छोडकर बोले ॥ २९ ॥ हे भगवन् ! महावीर निशाचर रावण और कुम्भकर्णको छोडकर आप किस कारणसे रावणके
पुत्र इन्द्रजीतकी बडाई करते हैं ? ॥ ३० ॥ महोदर, प्रहस्त, विरूपाक्ष, मत्त, उन्मत्त, दुर्द्धर्ष, देवान्तक; नरान्तक इत्यादि महावीर राक्षसोंको छोडकर आप
किसकारणसे रावणके पुत्र मेघनादकी प्रशंसा करते हैं ? ॥ ३१ ॥ अतिकाय, त्रिशिरा, धूम्राक्ष, इत्यादि महावीर निशाचरोंको त्यागकर आप किसलिये रावणके
विस्मयस्तेनपनास्माकंतंश्रुत्वेंद्रजितंहतम् ॥ दत्त्वापुण्यामिमांवीरसौम्यामभयदक्षिणाम् ॥ दिष्ट्यावर्धसिकाकुत्स्थजयेनामित्रकर्शन ॥ २८ ॥
श्रुत्वातुवचनंतेपांमुनीनांभावितात्मनाम् ॥ विस्मयंपरमंगत्वारामःप्रांजलिरब्रवीत्॥२९॥ भगवंतःकुंभकर्णंरावणंचनिशाचरम् ॥ अतिक्रम्यमहावी
र्यौकिंप्रशंसथरावणिम् ॥ ३० ॥ महोदरंप्रहस्तंचविरूपाक्षंचराक्षसम् ॥ मत्तोन्मत्तौचदुर्धर्षौदेवांतकनरांतकौ ॥ अतिक्रम्यमहावीरान्किंप्रशंस
थरावणिम् ॥ ३१ ॥ अतिकायंत्रिशिरसंधूम्राक्षंचनिशाचरम्॥ अतिक्रम्यमहावीर्यान्किंप्रशंसथरावणिम्॥३२॥ कीदृशोवैप्रभावोऽस्यकिंबलंकः
पराक्रमः॥केनवाकारणेनैपरावणादतिरिच्यते॥३३॥ शक्यंयदिमयाश्रोतुंनखल्वाज्ञापयामिवः॥यदिगुह्यंनचेद्वक्तुंश्रोतुमिच्छामिकथ्यताम् ॥३४॥
शक्रोपिविजितस्तेनकथंलब्धवरश्चसः ॥ कथंचबलवान्पुत्रोनपितातस्यरावणः॥३५॥कथंपितुश्चाप्यधिकोमहाहवेशक्रस्यजेताहिकथंसराक्षसः ॥
वराश्चलब्धाःकथयस्वमेद्यपाप्रच्छतश्चास्यमुनींद्रसर्वम् ॥ ३६ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकाण्डे प्रथमःसर्गः ॥ १ ॥
सुतकी बडाई करते हैं ? ॥३२॥ उस वीरका प्रभाव कैसा था ? बल कैसा था ? और उसमें पराक्रम कितनाथा? व वह इन्द्रजीत किस कारणसे रावणसे बलवीर्यमें
अधिकथा ? ॥ ३३ ॥ यह वृत्तान्त जो छिपानेके योग्य न हो और आप लोगोंकोभी इसके कहनेमें बाधा न हो तो हम उसके श्रवण करनेकी इच्छा करते हैं कुछ
आपको यह आज्ञा नहीं दीजातीहै ॥३४॥ हे मुनिश्रेष्ठ ! इन्द्रजीतने इन्द्रको किसप्रकारसे जीत लिया और उसने किस उपायसे वर पाया ? पुत्र बलवान् हुआ परंतु
उसका पिता रावण वैसा बलवान क्यों न हुआ ? ॥३५॥ और वह राक्षस संग्राममें अपने पितासे क्यों अधिक पराक्रमी हुआ ? किस प्रकारसे इन्द्रको जीता ? किस
प्रकारसे वर प्राप्त किया ? हे मुनिश्रेष्ठ ! हम पूँछते हैं आप इन सब बातोंका उत्तर दीजिये॥ ३६ ॥इत्यार्षे श्रीम०वा०आदि०उत्तरकांडे भाषाटीकायां प्रथमः सर्गः॥ १ ॥

गद्गद हुए, महातेजस्वी अगस्त्यजी महात्मा रघुनंदन श्रीरामचंद्रजीके एस वचन सुनकर बोले ॥ १ ॥ हे श्रीरामचन्द्र ...
सब शत्रुओंका संहार कियाथा, और जिस कारण वह समस्त शत्रुओंसे अवध्य था, हम उसके बडे भारी बल वीर्यका वृत्तांत ठीक २ कहेंगे ॥ २ ॥ ...
नाथजी! प्रथम तो रावणके कुल, जन्म और जिस प्रकारसे उसने वर पायाथा, वह समस्त तुम्हारे निकट यथार्थ २ वर्णन करताहूँ आप श्रवण करैं ॥ ३ ॥ हे ...
सतयुगमें पुलस्त्यनामक प्रजापतिके एक पुत्र हुए, ब्रह्मर्षि पुलस्त्यजी तपके प्रभावसे साक्षात् ब्रह्माजीकी समान थे ॥ ४ ॥ क्या धर्ममें, क्या शीलमें, उनकी गुण रा...
वर्णन करना असाध्य है, तोभी इन नाम मात्रसे उनकी गुण राशिका वर्णन होसकताहै कि, वह प्रजापतिके पुत्र हुए ॥ ५ ॥ वह महामतिमान् पुलस्त्यजी ...

तस्यतद्वचनंश्रुत्वाराघवस्यमहात्मनः ॥ कुंभयोनिर्महातेजावाक्यमेतदुवाचह ॥ १ ॥ शृणुरामयथावृत्तंतस्यतेजोबलंमहत् ॥ जघानशत्रू-
न्येनासावध्यः सशत्रुभिः ॥ २ ॥ तावत्तेरावणस्येदंकुलंजन्मचराघव ॥ वरप्रदानंचतथातस्मैदत्तंब्रवीमिते ॥ ३ ॥ पुराकृतयुगेरामप्रजापति-
सुतःप्रभुः ॥ पुलस्त्योनामब्रह्मर्षिःसाक्षादिवपितामहः ॥ ४ ॥ नानुकीर्त्यागुणास्तस्यधर्मतःशीलतस्तथा ॥ प्रजापतेःपुत्रइतिवक्तुंशक्यं
हिनामतः ॥ ५ ॥ प्रजापतिसुतत्वेनदेवानांवल्लभोहिसः ॥ इष्टः सर्वस्यलोकस्यगुणैःशुभ्रैर्महामतिः ॥ ६ ॥ सतुधर्मप्रसंगेनमेरोःपार्श्वेमहा
गिरेः ॥ तृणबिंद्वाश्रमंगत्वाप्यवसन्मुनिपुंगवः ॥ ७ ॥ तपस्तेपेसधर्मात्मास्वाध्यायनियतेंद्रियः ॥ गत्वाश्रमपदंतस्यविघ्नंकुर्वंतिकन्यकाः ॥ ८ ॥
ऋषिपन्नगकन्याश्चराजर्षितनयाश्चयाः ॥ क्रीडंत्योऽप्सरसश्चैवतंदेशमुपपेदिरे ॥ ९ ॥ सर्वर्तुपूपभोग्यत्वाद्रम्यत्वात्काननस्यच ॥ नित्यश-
स्तास्तुतंदेशंगत्वाक्रीडंतिकन्यकाः ॥ १० ॥ देशस्यरमणीयत्वात्पुलस्त्योयत्रसद्विजः ॥ गायंत्योवादयंत्यश्चलासयंत्यस्तथैवच ॥ ११ ॥

...की संतान होनेके कारण देवोंके अत्यन्त प्यारेथे, वरन विमलगुणोंसे वह सब लोकोंमें पूज्य हुएथे ॥ ६ ॥ परन्तु वह धर्मात्मा मुनिश्रेष्ठ तप क...
...कारणसे महापर्वत मेरुकी बगलमें तृणबिन्दुके आश्रममें जाय बसतेहुए ॥ ७ ॥ वह पुलस्त्यजी वेदाध्ययनकर तथा अपनी इन्द्रियोंको जीत त...
...करने लगे, इतनेहीमें कन्यागण आश्रमके निकट आय उनके तपमें विघ्न करने लगीं ॥ ८ ॥ राजर्षियोंकी लडकियें, ऋषियोंकी पुत्रियें, ना...
...बेटी व अप्सरागण विहार करते २ उस स्थानमें आय पहुँचीं ॥ ९ ॥ वह वन समस्त ऋतुओंमेंही विहार करनेके योग्यथा और अत्यन्त र...
...रमणीक मनभावना था, इसीकारण यह सब कन्यायें उस वनमें आयकर नित्य खेल कूद करने लगीं ॥ १० ॥ जिस स्थानमें वह ब्राह्मण पुल...

रहतेथे उसी देशमें रमणीय होनेके कारण यह सब कन्यागण गाती बजाती और भाँति २ के विलास दिखातीथीं ॥ ११ ॥ इस प्रकारसे यह निन्दारहित कन्यागण उन तपस्वीकी तपस्यामें विघ्न करने लगीं, तब महातेजस्वी पुलस्त्यजी क्रोधित होकर बोले ॥ १२ ॥ कि " जो हमारी दृष्टिके सामने आवेगी वह उसी समय गर्भ धारण करेगी " यह सब इन महात्मा ऋषिके वचन सुनकर ॥ १३ ॥ ब्रह्मशापके भयसे भीतहो फिर उस स्थानमें न गईं, परन्तु राजर्षि तृणबिन्दुकी पुत्रीने यह वचन नहीं सुन पाया ॥१४॥ इसकारण वही उस आश्रममें जायकर निर्भय घूमने लगी, परन्तु वहां उसने अपनी किसी सखीको आती हुई न देखा ॥ ॥ १५ उस कालमें महातेजस्वी महर्षि प्रजापतिपुत्र पुलस्त्यजी तपके प्रभावसे प्रदीप्तहो आश्रममें वेद पढ रहेथे ॥ १६ ॥ वह राजकुमारी वेदध्वनिके

मुनेस्तपस्विनस्तस्यविघ्नंचक्रुरनिंदिताः ॥ अथरुष्टोमहातेजाव्याजहारमहामुनिः ॥ १२ ॥ यामेदर्शनमागच्छेत्सागर्भंधारयिष्यति ॥ तास्तु सर्वाः प्रतिश्रुत्यतस्यवाक्यंमहात्मनः ॥ १३ ॥ ब्रह्मशापभयाद्भीतास्तंदेशंनोपचक्रमुः ॥ तृणबिंदोस्तुराजर्षेस्तनयानशृणोतितत् ॥ १४ ॥ गत्वाश्रमपदंतत्रविचचारसुनिर्भया ॥ नचापश्यच्चसातत्रकांचिदभ्यागतांसखीम् ॥ १५ ॥ तस्मिन्कालेमहातेजाःप्राजापत्योमहानृषिः ॥ स्वाध्यायमकरोत्तत्रतपसाभावितःस्वयम् ॥ १६ ॥ सातुवेदश्रुतिंश्रुत्वादृष्ट्वावैतपसोनिधिम् ॥ अभवत्पांडुदेहासासुव्यंजितशरीरजा ॥ १७ ॥ बभूवचसमुद्विग्नादृष्ट्वातद्दोषमात्मनः ॥ इदंमेकिंत्वितिज्ञात्वापितुर्गत्वाश्रमेस्थिता ॥१८॥ तांतुदृष्ट्वातथाभूतांतृणबिंदुरथाब्रवीत् ॥ किंत्वमेतत्त्वस दृशंधारयस्यात्मनोवपुः ॥ १९ ॥ सातुकृत्वांजलिंदीनाकन्योवाचतपोधनम् ॥ नजानेकारणंतातयेनमेरूपमीदृशम् ॥ २० ॥ किंतुपूर्वंगतास्म्ये कामहर्षेर्भावितात्मनः ॥ पुलस्त्यस्याश्रमंदिव्यमन्वेष्टुंस्वसखीजनम् ॥ २१ ॥ नचपश्याम्यहंतत्रकांचिदभ्यागतांसखीम् ॥ रूपस्यतुविपर्यासं दृष्ट्वात्रासादिहागता ॥ २२ ॥

श्रवण करनेकी अभिलाषा करके वैसेही उन तपोनिधानका दर्शन करती हुई वैसेही उसका शरीर पीला पडगया और गर्भके लक्षण प्रकाशित होगये ॥ १७ ॥ वह अपने शरीरमें इन लक्षणोंको देखकर उदास तो हुई परन्तु अपने शरीरकी अवस्था जान पिताके आश्रममें जायकर रहने लगी ॥१८॥ परन्तु तृणबिन्दुने कन्याकी अवस्था देखकर कहा तुमने कन्यापनके अयोग्य अंग क्यों धारण कियाहै ? ॥ १९ ॥ उस कन्याने अत्यन्त दीनभावसे हाथ जोडकर उन तपोधन पितासे कहा हे पितः ! जिस कारणसे हमारा ऐसा रूप हुआ उसको हम कुछभी नहीं जानती हैं ॥ २० ॥ परन्तु इससे पहले मैं अपनी सखियोंको ढूंढती २ ब्रह्मचिन्ता परायण महर्षि पुलस्त्यजीके रमणीय आश्रममें अकेली चली गई ॥ २१ ॥ वहां हमने किसी सखीकोभी आतीहुई न देखा परन्तु रूपका यह पलट जाना देखकर

मैं भयके मारे यहां चली आई हूं ॥ २२ ॥ तब तपक ...
गार यत्नसेही यह सब हुआ है ॥ २३ ॥ वह ब्रह्मचिन्तापरायण महर्षि पुलस्त्यजीके शापका वृत्तान्त जानकर कन्याके सहित वहां जाय पुलस्त्यजीसे बोले॥ २४॥
कि हे भगवन् ! अपनेही गुणोंसे भूषित हमारी पुत्री आपही यहांपर आई है सो आप भिक्षाके लिये इसको ग्रहण कर लीजिये॥ २५॥ हे महर्षि ! तपस्या करते२ जब आपकी
इन्द्रियां थक जाया करेंगी, तब यह सदा आपकी सेवा किया करेगी, इसमें कुछभी संदेह नहीं है ॥ २६ ॥ उसकालमें ब्राह्मणश्रेष्ठ पुलस्त्यजी धार्मिक राजर्षिके ऐसे
वचन सुन उसे अंगीकार करलेते हुए कि "अच्छा हम इसका पाणिग्रहण कर लेंगे"॥ २७ ॥ राजर्षि कन्यादान करके अपने आश्रमको चलेआये और कन्याभी अपने

तृणबिंदुस्तुराजर्षिस्तपसाद्योतितप्रभः ॥ ध्यानंविवेशतच्चापिअपश्यदृषिकर्मजम् ॥ २३ ॥ सतुविज्ञायतंशापंमहर्षेर्भावितात्मनः ॥ गृहीत्वातन यांगत्वापुलस्त्यमिदमब्रवीत् ॥२४॥ भगवंस्तनयांमेत्वंगुणैःस्वैरेवभूषिताम् ॥ भिक्षांप्रतिगृहाणेमांमहर्षेस्वयमुद्यताम् ॥ २५ ॥ तपश्चरणयुक्तस्य श्राम्यमाणेंद्रियस्यते ॥ शुश्रूषणपरानित्यंभविष्यतिनसंशयः ॥२६॥ तंब्रुवाणंतुतद्वाक्यंराजर्षिंधार्मिकंतदा ॥ जिघृक्षुरब्रवीत्कन्यांबाढमित्येवस द्विजः ॥२७॥ दत्त्वातुतनयांराजास्वमाश्रमपदंगतः ॥ सापितत्रावसत्कन्यातोषयंतीपतिंगुणैः ॥२८॥ तस्यास्तुशीलवृत्ताभ्यांतुतोषमुनिपुंगवः ॥ प्रीतःसतुमहातेजावाक्यमेतदुवाचह ॥२९॥ परितुष्टोस्मिसुश्रोणिगुणानांसंपदाभृशम् ॥ तस्माद्देविददाम्यद्यपुत्रमात्मसमंतव ॥ उभयोर्वंशकर्तारं पौलस्त्यइतिविश्रुतम् ॥३०॥ यस्मात्तुविश्रुतोवेदस्त्वयेहाध्ययतोमम ॥ तस्मात्सविश्रवानामभविष्यतिनसंशयः ॥३१ ॥ एवमुक्तातुसादेवीप्रहृष्टे नांतरात्मना ॥ अचिरेणैवकालेनासूतविश्रवसंसुतम् ॥ त्रिषुलोकेषुविख्यातंयशोधर्मसमन्वितम् ॥ ३२ ॥

गुणोंसे पतिको सन्तुष्ट करके वहाँ वास करनेलगी ॥२८॥ इसी अवसरमें मुनिश्रेष्ठ उस कन्याके सच्चरित्र व्यवहारसे संतुष्ट हुए और वह महातेजस्वी प्रसन्न होकर यह
बोले ॥ २९ ॥ कि हे सुश्रोणि ! हम तुम्हारे गुणोंसे परमप्रसन्न हुएहैं इस कारण हे देवि ! आज तुमको अपने समान पुत्र देंगे, यह पुत्र पौलस्त्यनामसे विख्यात हो
पिता और माताके वंशकी वृद्धि करेगा ॥ ३० ॥ हमारे वेद पढनेके समयमें तुम करके वेद सुना गयाथा, इसकारण तुम्हारे इस पुत्रका नाम विश्रवा होगा; इसमें
संशय नहीं ॥ ३१ ॥ यह देवी इस प्रकारसे वर पाय अपने मनके सहित अत्यन्त हर्षित हो, थोडेही दिनोंमें त्रिलोकविख्यात यशस्वी और धर्मवान् विश्रवा नामक

पुत्र उत्पन्न करती हुई ॥ ३२ ॥ श्रुति ज्ञान युक्त विश्रवाजी मुनि सब बातोंमें समदर्शी हुए, और व्रताचारमें रतहो अपने पिताकी समान तपस्या करने लगे ॥ ३३ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषाटीकायां द्वितीयः सर्गः ॥ २ ॥ इसके उपरान्त पुलस्त्यजीके पुत्र मुनियोंमें श्रेष्ठ विश्रवाजी बहुत थोडे समयमें पिताकी समान तपस्वी हुए ॥ १ ॥ वे सत्यवान्, शीलवान् इन्द्रियोंको जीतनेवाले, वेदाध्ययनमें तत्पर पवित्र, सब भोगके पदार्थोंसे चित्तको हटाये और अपने धर्मोंमें नित्यपरायण थे ॥ २ ॥ महामुनि भरद्वाजजीने विश्रवाके ऐसे चारित्रज्ञान देख देववर्णिनी नामक अपनी कन्या उनको भार्या बनानेके लिये दे दी ॥ ३ ॥ धर्मानुसार भरद्वाजजीकी कन्याको ग्रहणकर प्रजा लोगोंके शुभाकांक्षी हो अधिक करके ज्योतिष ज्ञानके प्रभावसे उन्होंने होनेवाले पुत्रकी भलाई विचार ॥ ४ ॥ अति

श्रुतिमान्समदर्शीचव्रताचाररतस्तथा ॥ पितेवतपसायुक्तोअभवद्विश्रवामुनिः ॥३३॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्ये उत्तरकांडे द्वितीयःसर्गः ॥२॥ अथपुत्रःपुलस्त्यस्यविश्रवामुनिपुंगवः॥ अचिरेणैवकालेनपितेवतपसिस्थितः ॥१॥ सत्यवान्शीलवान्दान्तःस्वाध्यायनिरतःशुचिः॥ सर्वभोगेष्वसंसक्तोनित्यंधर्मपरायणः ॥२॥ ज्ञात्वातस्यतुतद्वृत्तंभरद्वाजोमहामुनिः॥ ददौविश्रवसेभार्यांस्वसुतांदेववर्णिनीम् ॥३॥ प्रतिगृह्यतुधर्मेणभरद्वाजसुतांतदा ॥ प्रजान्वीक्षिकयाबुद्ध्याश्रेयोह्यस्यविचिंतयन् ॥४॥ मुदापरमयायुक्तोविश्रवामुनिपुंगवः ॥ सतस्यांवीर्यसंपन्नमपत्यंपरमाद्भुतम् ॥५॥ जनयामासधर्मज्ञःसर्वै ब्र ह्मगुणैर्वृतम् ॥ तस्मिञ्जातेतुसंहृष्टःसबभूवपितामहः ॥६॥ दृष्ट्वाश्रेयस्करींबुद्धिंधनाध्यक्षोभविष्यति॥ नामचास्याकरोत्प्रीतःसार्धंदेवर्षिभिस्तदा ॥ ७ ॥ यस्माद्विश्रवसोपत्यंसादृश्याद्विश्रवाइव ॥ तस्माद्वैश्रवणोनामभविष्यत्येषविश्रुतः ॥ ८ ॥ सतुवैश्रवणस्तत्रतपोवनगतस्तदा ॥ अवर्धताहुतिहुतोमहातेजायथाऽनलः ॥ ९ ॥ तस्याश्रमपदस्थस्यबुद्धिर्जज्ञेमहात्मनः ॥ चरिष्येपरमंधर्मंधर्मोहिपरमागतिः ॥ १० ॥ सतुवर्षसहस्राणितपस्तप्त्वामहावने ॥ यंत्रितोनियमैरुग्रैश्चकारसुमहत्तपः ॥ ११ ॥

हर्षसे युक्त हो मुनियोंमें श्रेष्ठ विश्रवाजीने उस अपनी भार्यामें वीर्य सम्पन्न परम अद्भुत पुत्र ॥ ५ ॥ ब्राह्मणोंके सम्पूर्ण गुणोंसे युक्त इन धर्मज्ञने उत्पन्न किया। इन पुत्रके जन्म ग्रहण करनेसे इसके पितामह पुलस्त्यजी अत्यन्त हर्षित हुए ॥ ६ ॥ और उस पुत्रकी कल्याण कारिणी बुद्धिके देखनेसे परिणाममें इसका धनाध्यक्ष होना जान परम प्रसन्न चित्तसे देवर्षि लोगोंके सहित उस पुत्रका नामकरण करते हुए ॥ ७ ॥ विश्रवाके सहित पुत्रका सादृश्य हुआ है इसलिये यह पुत्र वैश्रवणके नामसे प्रसिद्ध होगा ॥ ८ ॥ उस कालमें वैश्रवण तपोवनमें रहकर आहुती होमें हुए महातेजस्वी अग्निके समान बढने लगे ॥ ९ ॥ आश्रममें रहनेके समय उन महात्माको ऐसा ज्ञानका उदय हुआ कि, धर्मही परमगति है इस कारण हम परमधर्मका आचरण करेंगे ॥ १० ॥ उन्होंने इस प्रकारसे विचार तपस्याके उत्तम नियमोंके

रगह्री महावनमें हजार वर्षतक घार तप किया ॥ ११ ॥

तपस्या करते करते इस प्रकारसे यह हजारवर्ष एक वर्षकी समान बीतगये ॥ १२ ॥ इसके उपरान्त महातेजस्वी पितामह ब्रह्माजी प्रसन्न हो इन्द्रा
इनके आश्रममें आयकर यह वचन बोले ॥ १३ ॥ वत्स ! तुम्हारे इस कार्यसे हम प्रसन्न हुए हैं । हे सुव्रत ! तुम अत्यन्त बुद्धिमान् और वरके योग्य पात्रहो
इस कारण वर मांगो तुम्हारा मंगल होगा ॥ १४ ॥ इसके उपरान्त वैश्रवण आयेहुए ब्रह्माजीसे बोले कि, हे भगवन् ! हम धनरक्षक लोकपाल होनेकी वासना
करते हैं ॥ १५ ॥ ब्रह्माजी सब देवताओंके साथ प्रसन्नचित्तहो वैश्रवणके वचनोंको हर्षसहित अंगीकारकर उनसे बोले ॥ १६ ॥ कि, हे वत्स ! हम चौथा लोकपाल

पूर्णं वर्षसहस्राणि तंतं विधिमकल्पयत् ॥ जलाशीमारुताहारोनिराहारस्तथैवच ॥ एवंवर्षसहस्राणिजग्मुस्तान्येकवर्षवत् ॥ १२ ॥ अथप्रीतोमहा
तेजाःसेंद्रैःसुरगणैःसह ॥ गत्वातस्याश्रमपदंब्रह्मेदंवाक्यमब्रवीत् ॥ १३ ॥ परितुष्टोस्मितेवत्सकर्मणानेनसुव्रत ॥ वरंवृणीष्वभद्रंतेवरार्हस्त्वंमहा
मते ॥ १४ ॥ अथाब्रवीद्वैश्रवणःपितामहमुपस्थितम् ॥ भगवँल्लोकपालत्वमिच्छेहंलोकरक्षणम् ॥ १५ ॥ अथाब्रवीद्वैश्रवणंपरितुष्टेनचेतसा ॥
ब्रह्मासुरगणैःसार्धंबाढमित्येवहृष्टवत् ॥ १६ ॥ अहंवैलोकपालानांचतुर्थंस्रष्टुमुद्यतः ॥ यमेंद्रवरुणानांचपदंयत्तवचेप्सितम् ॥ १७ ॥ तद्गच्छव्रत
धर्मज्ञनिधीशत्वमवाप्नुहि ॥ शक्राम्बुपयमानांचचतुर्थस्त्वंभविष्यसि ॥ १८ ॥ एतच्चपुष्पकंनामविमानंसूर्यसन्निभम् ॥ प्रतिगृह्णीष्वयानार्थंत्रि
दशैःसमतांव्रज ॥ १९ ॥ स्वस्तितेस्तुगमिष्यामःसर्वएवयथागतम् ॥ कृतकृत्यावयंतातदत्त्वातववरद्वयम् ॥ २० ॥ इत्युक्त्वासगतो
ब्रह्मास्वस्थानंत्रिदशैःसह ॥ गतेषुब्रह्मपूर्वेषुदेवेष्वथनभस्तलम् ॥ २१ ॥ धनेशःपितरंप्राहप्रांजलिःप्रयतात्मवान् ॥ भगवँल्लब्धवानस्मिव
रमिष्टंपितामहात् ॥ २२ ॥

बनाने करनेको तैयार हैं, इन्द्र, यम और वरुणजीकी तुम्हारी लोकपाल पदवी (ईप्सित) है सो तुम उसको ग्रहण करो ॥ १७ ॥ हे धर्मज्ञ ! तुम धनाध्यक्षका
पद प्राप्त होकर इन्द्र, वरुण और यमसे चौथे लोकपाल होगे ॥ १८ ॥ सूर्यके समान प्रभावाला पुष्पक नामक यह विमान अपने चढनेके लिये ग्रहण करके तुम
देवताओंकी समानता पाओ ॥ १९ ॥ हे तात ! तुमको दो वर देकर हम कृतकृत्य हुये इस समय हम जिस स्थानसे आये हैं उसी स्थानको जाते हैं, अब तुम्हारा
मंगलहो ॥ २० ॥ यह कहकर ब्रह्माजी सब देवताओंके साथ अपने स्थानको चले गये । ब्रह्मादि देवगण जब आकाशमंडलको चले गये ॥ २१ ॥ तब धनेश

सावधानचित्तहो हाथ जोडकर पिताजीसे बोले कि, हे भगवन् ! हमने पितामह ब्रह्माजीसे मनमाना वर पाया है ॥२२॥ परन्तु उन देव प्रजापतिने हमारे रहनेको कोई वासस्थान नहीं बताया। हे प्रभु भगवन् ! जहां रहनेसे किसी प्राणीको पीडा पहुँचानेकी सम्भावना नहीं हो आप हमारे लिये ऐसाही श्रेष्ठ वासस्थान खोज दीजिये ॥ २३ ॥ मुनिश्रेष्ठ विश्रवाजीने धर्मज्ञ पुत्रके ऐसे वचन सुनकर उनसे कहा हे धर्मज्ञ ! सुन ॥ २४ ॥ दक्षिण समुद्रके तीरपर त्रिकूट नाम पर्वत है, उसके शिखर पर इन्द्रजीकी समान पुरी वसती है ॥ २५ ॥ विश्वकर्माकी बनाई हुई उस रमणीक पुरीका नाम लंकाहै, यह पुरी राक्षस लोगोंके रहनेके लियेही मानो इन्द्रकी अमरावती पुरी है ॥२६॥ तुम उसी लंकापुरीमें जायकर वासकरो, तुम्हारा मंगल होगा इसमें कुछ संदेह नहीं; सुवर्णकी कोटकी भीत है: चारोंओर खाई खुदी है यंत्र

निवासनंनमेदेवोविदधेसप्रजापतिः ॥ तंपश्यभगवन्कंचिन्निवासंसाधुमेप्रभो ॥ नचपीडाभवेद्यत्रप्राणिनोयस्यकस्यचित् ॥ २३ ॥ एवमुक्त
स्तुपुत्रेणविश्रवामुनिपुंगवः ॥ वचनंप्राहधर्मज्ञश्रूयतामितिसत्तम ॥ २४ ॥ दक्षिणस्योदधेस्तीरेत्रिकूटोनामपर्वतः ॥ तस्याग्रेतुविशालासाम
हेंद्रस्यपुरीयथा ॥ २५ ॥ लंकानामपुरीरम्यानिर्मिताविश्वकर्मणा ॥ राक्षसानांनिवासार्थंयथेंद्रस्यामरावती ॥ २६ ॥ तत्रत्वंवसभद्रंतेलंकायां
नात्रसंशयः ॥ हेमप्राकारपरिखायंत्रशस्त्रसमावृता ॥ २७ ॥ रमणीयापुरीसाहिरुक्मवैदूर्यतोरणा ॥ राक्षसैःसापरित्यक्तापुराविष्णुभया
र्दितैः ॥ २८ ॥ शून्यारक्षोगणैःसर्वैरसातलतलंगतैः ॥ शून्यासंप्रतिलंकासाप्रभुस्तस्यानविद्यते ॥ २९ ॥ सत्वंतत्रनिवासायगच्छपुत्रयथा
सुखम् ॥ निर्दोषस्तत्रतेवासोनबाधस्तत्रकस्यचित् ॥ ३० ॥ एतच्छ्रुत्वासधर्मात्माधर्मिष्ठंवचनंपितुः ॥ निवासयामासतदालंकांपर्वतमूर्धनि ॥
॥ ३१ ॥ नैर्ऋतानांसहस्रैस्तुहृष्टैःप्रमुदितैःसदा ॥ अचिरेणैवकालेनसंपूर्णातस्यशासनात् ॥ ३२ ॥ सतुतत्रावसत्प्रीतोधर्मात्मानैर्ऋतर्षभः ॥
समुद्रपरिखायांसलंकायांविश्रवात्मजः ॥ ३३ ॥

(कलें) और शस्त्रोंसे भरीपुरी है ॥ २७ ॥ उसके समस्त फाटक सुवर्ण और वैदूर्य मणिके बने हैं। इस रमणीयपुरीको पहले समयमें विष्णुजीके भयसे भीतहो राक्षस लोग छोड गये ॥२८॥ वह सबही राक्षस इस पुरीको शून्य करके पातालको चले गये, अब लंकापुरी सूनी है उसका स्वामी कोई नहीं है ॥ २९ ॥ हे पुत्र! तुम वहां वास करनेके लिये सुखसे गमन करो; तुम्हारा वहां रहना निर्दोष होगा, वहां रहनेमें तुम्हें कोई बाधा नहीं दे सकेगा ॥ ३० ॥ धर्मात्मा, कुबेरजी पिताके ऐसे धर्मयुक्त वचन सुनकर पर्वतके शिखरपर बसीहुई लंकानगरीमें वास करने लगे ॥ ३१ ॥ सहस्र २ राक्षसगण हर्षित होकर उनके साथ गये, कुबेर जीके पालन करनेसे लंकानगरी बहुत थोडे कालमेंही समृद्धि युक्त होगई ॥ ३२ ॥ तब नैर्ऋतवर धर्मात्मा विश्रवाजीके पुत्र कुबेरजी प्रसन्नहो समुद्ररूप खाईसे घिरी लंकानगरीमें वास करने लगे ॥ ३३ ॥ धर्मात्मा धनेश्वर कुबेरजी पुष्पकविमान पर सवार होकर विनीत भावसे समय २ पिता माताके निकट आतेथे ॥ [illegible] उस कालमें देवता व गन्धर्व लोग उनकी स्तुति करते रहते, अप्सरागण [illegible] नाचती रहतीथीं, किरणोंकी माला [illegible] मान होकर कुबेरजी पिता माताके समीप आतेथे ॥ ३५ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्ये उत्तरकांडे [illegible] महामुनि अगस्त्यजीके यह वचन सुनकर अत्यन्त विस्मि[illegible]

मन्दर ॥ नाग गमन करके जलगभ ॥ २० ॥ अवश्यमेवदातव्यापरस्मैसेतिसंध्यया ॥ चिंतयित्वा

संध्यादुहितरंसोथसंध्यातुल्यांप्रभावतः ॥ वरयामासपुत्रार्थंहेतीराक्षसपुंगवः ॥ २० ॥ अवश्यमेवदातव्यापरस्मैसेतिसंध्यया ॥ चिंतयित्वा सुतादत्ताविद्युत्केशायराघव ॥ २१ ॥ संध्यायास्तनयांलब्ध्वाविद्युत्केशोनिशाचरः ॥ रमतेसतयासार्धंपौलोम्यामघवानिव ॥ २२ ॥ केन चित्त्वथकालेनराममसालकटंकटा ॥ विद्युत्केशाद्गर्भमापघनराजिरिवार्णवात् ॥ २३ ॥ ततः साराक्षसीगर्भंघनगर्भसमप्रभम् ॥ प्रसूतामंदरंग त्वागंगागर्भमिवाग्निजम् ॥ समुत्सृज्यतुसागर्भंविद्युत्केशरतार्थिनी ॥ २४ ॥ रेमेतुसार्धंपतिनाविसृज्यसुतमात्मजम् ॥ उत्सृष्टस्तुतदागर्भोघन शब्दसमस्वनः ॥ २५ ॥ तयोत्सृष्टःसतुशिशुःशरदर्कसमद्युतिः ॥ निधायास्येस्वयंमुष्टिंरुरोदशनकैस्तदा ॥२६॥ ततोवृषभमास्थायपार्वत्यास हितःशिवः ॥ वायुमार्गेणगच्छन्वैशुश्रावरुदितस्वनम् ॥ २७ ॥ अपश्यदुमयासार्धंरुदंतंराक्षसात्मजम् ॥ कारुण्यभावात्पार्वत्याभवस्त्रिपुर सूदनः ॥ २८ ॥ तंराक्षसात्मजंचक्रेमातुरेववयःसमम् ॥ अमरंचैवतंकृत्वामहादेवोक्षरोव्ययः ॥ २९ ॥ पुरमाकाशगंप्रादात्पार्वत्याःप्रियकाम्यया ॥ उमयापिवरोदत्तोराक्षसीनांनृपात्मज ॥ ३० ॥

अपने पुत्रको छोडकर स्वामीके साथ विहार करनेमें रत हुई उसका त्यागा हुआ वह पुत्र वहीं मेघके समान शब्द करने लगा २५ ॥ परंतु शारदीय सूर्यके समान द्युतिमान् वह बालक पिता माता करके त्यागा हुआ मुँहमें अँगूठा देकर धीरे २ रोनेलगा ॥ २६ ॥ इसके उपरांत महादेवजी श्रीपार्वतीजीके साथ बैलपर चढकर गमन करते २ आकाशमार्गमें वह रोनेका शब्द सुनते हुए ॥ २७ ॥ फिर रोतेहुए इस राक्षसपुत्रको दोनोंने देखाभी और करुणाके वशहो पार्वतीजीके कहनेसे त्रिपुरदमनकारी महादेवजीने ॥२८॥ उस राक्षसके पुत्रकी अवस्था उसकी माताके समान करदी; उस अवसरमें महादेवजीने उसको अमरभी करदिया ॥२९॥ और पार्वतीजीकी प्रिय कामनासे उसे एक आकाशमें चलनेवाला पुरभी दिया, हे राजकुमार ! पार्वतीजीनेभी राक्षसियोंको यह वरदान दिया ॥३०॥

कि राक्षसियें पतिका संयोग होतेही शीघ्र गर्भ धारण करें, और शीघ्रही उनका प्रसव करें और शीघ्रही उनका बालक माताकी समान अवस्थावाला हो जाया करे ॥ ३१ ॥ महामतिवाला राक्षसश्रेष्ठ विद्युत्केश यह वर पाय अत्यन्त गर्वित हुआ, अधिक करके स्वामी शिवके निकट लक्ष्मी और आकाशगामी विमान प्राप्त होकर यह सब जगत् घूमने लगा कि जिस प्रकार इन्द्रजी विचरण करते हैं ॥ ३२ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषाटीकायां चतुर्थः सर्गः ॥ ४ ॥ रूपयौवनमें त्रिभुवनविख्यात और दूसरी लक्ष्मीकी समान अपनी पुत्री देववती नामक कन्याको ॥ २ ॥ उसने धर्मात्मा राक्षसराज सुकेशको राक्षसोंकी लक्ष्मीके समान दानदी । शिवजीसे वरदान पानेके

मद्योपलब्धिर्गर्भस्यप्रसूतिःसद्यएवच ॥ सद्यएववयःप्राप्तिंमातुरेववयःसमम् ॥ ३१ ॥ ततःसुकेशोवरदानगर्वितःश्रियंप्रभोः प्राप्यहरस्यपार्श्वतः॥ चचारसर्वंनमहान्महामतिःखगंपुरंप्राप्यपुरंदरोयथा ॥ ३२ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे चतुर्थः सर्गः ॥ ४ ॥ सुकेशंधार्मिकंदृष्ट्वावरलब्धंचराक्षसम् ॥ ग्रामणीर्नामगंधर्वोविश्वावसुसमप्रभः ॥ १ ॥ तस्यदेववतीनामद्वितीयाश्रीरिवात्मजा ॥ त्रिषुलोकेषुविख्यातारूपयौवनशालिनी ॥ २ ॥ तांसुकेशायधर्मात्माददौरक्षःश्रियंयथा ॥ वरदानकृतैश्वर्यंसातंप्राप्यपतिंप्रियम् ॥ ३ ॥ आसीद्देववतीतुष्टा धनंप्राप्येवनिर्धनः ॥ सतयासहसंयुक्तोरराजरजनीचरः ॥ ४ ॥ अंजनादभिनिष्क्रांतःकरेण्वेवमहागजः ॥ ततः कालेसुकेशस्तुजनयामासराघव॥ त्रीन्पुत्राञ्जनयामासत्रेताग्निसमविग्रहान् ॥ ५ ॥ माल्यवंतंसुमालिंचमालिंचबलिनांवरम् ॥ त्रींस्त्रिनेत्रसमान्पुत्रान्राक्षसान्राक्षसाधिपः ॥ ६ ॥ त्रयोलोकाइवाव्यग्राःस्थितास्त्रयइवाग्नयः ॥ त्रयोमंत्राइवात्युग्रास्त्रयोघोराइवामयाः ॥ ७ ॥

कारण सुकेश ऐश्वर्यशाली होगयाथा, ऐसे प्रियपतिको पाय ॥ ३ ॥ देववती परम प्रसन्न हुई, जैसे निर्धन पुरुष धनको पायकर प्रसन्न होताहै. वह राक्षसभी उसके संग ऐसे शोभायमान होनेलगा ॥ ४ ॥ कि जैसे हथिनीके संग अंजन नामक दिग्गजसे उत्पन्न हुए महागजकी अति शोभा होतीहै. हे रघुनंदन ! राक्षसपति सुकेशने देववतीके गर्भसे तीन अग्नियोंकी समान मूर्तिमान् तीन पुत्र उत्पन्न किये ॥ ५ ॥ माल्यवान, सुमाली और बलवानोंमें श्रेष्ठ माली, राक्षसपति सुकेशने तीन नेत्रोंकी समान यह तीन पुत्र उत्पन्न कियेथे ॥ ६ ॥ एक स्थानपर स्थित तीन अग्निके समान अव्यग्र हुए तीन लोकके समान अतिउग्र तीन मंत्रोंकी समान

वात.पित्त.कफसे उत्पन्न हुए तीन रोगोंकी समान घोर ॥ ७ ॥ व तीनों अग्नियोंकेही समान तेजस्वी सुकेशके वह तीन पुत्र इस प्रकारसे बढने लगे कि जैसे [illegible] दिन २ बढताहै ॥ ८ ॥ वह तीनों राक्षसपुत्र तपके बलसे पिताको वरपाया देख, और तपके प्रभावसे उस ऐश्वर्यके पानेको जान [illegible] पर्वतपर चले गये ॥ ९ ॥ हे नृपश्रेष्ठ ! वह तीनों राक्षस उस समय कठोर नियमोंक [illegible]

वात,पित्त,कफसे उत्पन्न हुए तीन रोगोंकी समान घोर॥७॥व तीन अ ग्नेय के३ समा

दिन २ बढगाहै ॥ ८ ॥ वह तीनों राक्षसपुत्र तपके बलसे पिताको वरपाया देख, और तपके प्रभावसे उस ऐश्वर्यके पानेको जान तप करनेका संकल्प मनमें ठान मेरु पर्वतपर चले गये ॥९॥ हे नृपश्रेष्ठ ! वह तीनों राक्षस उस समय कठोर नियमोंका आश्रय लेकर सब प्राणियोंको भय उपजाने वाला घोर तप करने लगे ॥१०॥ सत्य बोलना, सबसे सरलता रखना, इन्द्रियोंको सब ओरसे आकर्षण कर अपने वशमें रखना इस भांतिसे औरभी पृथ्वीतलपर दुर्लभ तपोंको करके उन लोगोंने देवता, दैत्य, मनुष्य, सहित तीनों लोकोंको संतापित करदिया ॥ ११ ॥ इसके उपरान्त विभु भूतभावन चतुरानन ब्रह्माजी विमानपर चढकर सुकेशके सब पुत्रोंसे बोले कि "हम

त्रयःसुकेशस्यसुतास्त्रेताग्निसमतेजसः ॥ विवृद्धिमगमंस्तत्रव्याधयोपेक्षिताइव ॥ ८ ॥ वरप्राप्तिंपितुस्तेतुज्ञात्वैश्वर्यंतपोबलात् ॥ तपस्तप्तुंगता मेरुंभ्रातरःकृतनिश्चयाः॥ ९ ॥ प्रगृह्यनियमान्घोरान्राक्षसानृपसत्तम ॥ विचेरुस्तेतपोघोरंसर्वभूतभयावहम् ॥ १० ॥ सत्यार्जवशमोपेतैस्तपोभि र्भुविदुर्लभैः ॥ संतापयंतस्त्रींल्लोकान्सदेवासुरमानुषान् ॥ ११ ॥ ततोविभुश्चतुर्वक्त्रोविमानवरमाश्रितः ॥ सुकेशपुत्रानामंत्र्यवरदोस्मीत्यभाषत ॥ १२ ॥ ब्रह्माणंवरदंज्ञात्वासेंद्रैर्देवगणैर्वृतम् ॥ ऊचुःप्राञ्जलयःसर्वेवेपमानाइवद्रुमाः ॥ १३ ॥ तपसाराधितोदेवयदिनोदिशसेवरम् ॥ अजेयाः शत्रुहंतारस्तथैवचिरजीविनः ॥ प्रभविष्णवोभवामेतिपरस्परमनुव्रताः ॥ १४ ॥ एवंभविष्यथेत्युक्त्वासुकेशतनयान्विभुः ॥ सययौब्रह्मलोकाय ब्रह्माब्राह्मणवत्सलः ॥ १५ ॥ वरंलब्ध्वातुतेसर्वेरामरात्रिंचरास्तदा ॥ सुरासुरान्प्रबाधंतेवरदानसुनिर्भयाः ॥ १६ ॥ तैर्बाध्यमानास्त्रिदशाःसर्षि संघाःसचारणाः ॥ त्रातारंनाधिगच्छंतिनिरयस्थायथानराः ॥ १७ ॥

वरदान देनेको आयेहैं" ॥ १२ ॥ इन्द्रादि देवता लोगोंके साथ ब्रह्माजीको वरदान देनेको तैयार देख, वह सब राक्षस वृक्षोंकी श्रेणीकी समान कांपते हुए हाथ जोडकर उनसे बोले ॥ १३ ॥ हे देव ! तप करके आराधना किये जानेपर जो आप वर देनेको आयेहैं, तो हमारा परस्पर सदा अनुराग रहे, कोई हम लोगोंको जीत न सके, शत्रुको हम लोग संहार किया करें, और अजर अमर हों आप हमें यह वरदान दीजिये ॥ १४ ॥ ब्राह्मणप्रिय विभु ब्रह्माजी बोले कि "तुम लोग ऐसेही होगे" यह वरदान सुकेशके पुत्रोंको दे, ब्रह्मा ब्रह्मलोककी ओर चले गये ॥ १५ ॥ हे श्रीरामचन्द्रजी ! इस प्रकारसे वह राक्षस वरदान पायकर अत्यन्त निर्भयहो देवता व असुर लोगोंको पीडा देने लगे ॥१६॥ देवता लोगोंने ऋषि, व चारणगणोंने राक्षसोंसे वध्यमानहो नरकमें पडेहुए

कि राक्षसियें पतिका संयोग होतेही शीघ्र गर्भ धारण करें, और शीघ्रही उनका प्रसव करें और शीघ्रही उनका बालक माताकी समान अवस्थावाला हो जाया करे ॥ ३१ ॥ महामतिवाला राक्षसश्रेष्ठ विद्युत्केश यह वर पाय अत्यन्त गर्वित हुआ, अधिक करके स्वामी शिवके निकट लक्ष्मी और आकाशगामी विमान प्राप्त होकर यह सपजगन् घूमने लगा कि जिस प्रकार इन्द्रजी विचरण करते हैं ॥ ३२ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषाटीकायां चतुर्थः सर्गः ॥ ४ ॥ सूर्यके समान तेजस्वी ग्रामणी नामक गन्धर्व राक्षस सुकेशको धार्मिक और वरदान पाया हुआ देखकर ॥ १ ॥ रूपयौवनमें त्रिभुवनविख्यात और दूसरी लक्ष्मीकी समान अपनी पुत्री देववती नामक कन्याको ॥ २ ॥ उसने धर्मात्मा राक्षसराज सुकेशको राक्षसोंकी लक्ष्मीके समान दानदी । शिवजीसे वरदान पानेके

सद्योपलब्धिर्गर्भस्यप्रसूतिःसद्यएवच ॥ सद्यएववयःप्राप्तिंमातुरेववयःसमम् ॥ ३१ ॥ ततःसुकेशोवरदानगर्वितःश्रियंप्रभोः प्राप्यहरस्यपार्श्वतः ॥ चचारसर्वत्रमहान्महामतिःखगंपुरंप्राप्यपुरंदरोयथा ॥ ३२ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे चतुर्थः सर्गः ॥ ४ ॥ सुकेशंधार्मिकंदृष्ट्वावरलब्धंचराक्षसम् ॥ ग्रामणीर्नामगंधर्वोविश्वावसुसमप्रभः ॥ १ ॥ तस्यदेववतीनामद्वितीयाश्रीरिवात्मजा ॥ त्रिषुलोकेषुविख्याताऽरूपयौवनशालिनी ॥ २ ॥ तांसुकेशायधर्मात्मादद्दौरक्षःश्रियंयथा ॥ वरदानकृतैश्वर्यंसातंप्राप्यपतिंप्रियम् ॥ ३ ॥ आसीद्देववतीतुष्टा धनंप्राप्येवनिर्धनः ॥ सतयासहसंयुक्तोरराजरजनीचरः ॥ ४ ॥ अंजनादभिनिष्क्रांतःकरेण्वेवमहागजः ॥ ततः कालेसुकेशस्तुजनयामासरा घव ॥ त्रीन्पुत्राञ्जनयामासत्रेताग्निसमविग्रहान् ॥ ५ ॥ माल्यवंतंसुमालिंचमालिंचबलिनांवरम् ॥ त्रींस्त्रिनेत्रसमान्पुत्रान्राक्षसान्राक्षसाधिपः ॥ ६ ॥ त्रयोलोकाइवाव्यग्राःस्थितास्त्रयइवाग्नयः ॥ त्रयोमंत्राइवात्युग्रास्त्रयोघोराइवामयाः ॥ ७ ॥

कारण सुकेश ऐश्वर्यशाली होगयाथा, ऐसे प्रियपतिको पाय ॥ ३ ॥ देववती परम प्रसन्न हुई, जैसे निर्धन पुरुष धनको पायकर प्रसन्न होताहै. वह राक्षसभी उनके संग ऐसे शोभायमान होनेलगा ॥ ४ ॥ कि जैसे हथिनीके संग अंजन नामक दिग्गजसे उत्पन्न हुए महागजकी अति शोभा होतीहै. हे रघुनंदन ! राक्षसपति सुकेशने देववतीके गर्भसे तीन अग्नियोंकी समान मूर्तिमान् तीन पुत्र उत्पन्न किये ॥ ५ ॥ माल्यवान, सुमाली और बलवानोंमें श्रेष्ठ माली, राक्षसपति सुकेशने तीन नेत्रोंकी समान यह तीन पुत्र उत्पन्न कियेथे ॥ ६ ॥ एक स्थानपर स्थित तीन अग्निके समान अव्यग्र हुए तीन लोकके समान अतिउग्र तीन मंत्रोंकी समान वात.पित्त.कफसे उत्पन्न हुए तीन रोगोंकी समान घोर ॥ ७ ॥ व तीनों अग्नियोंकेही समान तेजस्वी सुकेशके वह तीन पुत्र इस प्रकारसे बढने लगे कि जैसे बिना औषधि [illegible] दिन २ बढताहै ॥ ८ ॥ वह तीनों राक्षसपुत्र तपके बलसे पिताको वरपाया देखा, और तपके प्रभावसे उस ऐश्वर्यके पानेको जान तप करनेका [illegible] पर्वतपर चले गये ॥ ९ ॥ हे नृपश्रेष्ठ ! वह तीनों राक्षस उस समय कठोर नियमोंका अ [illegible]

वात, पित्त, कफने उत्पन्न हुए तीन रोगोंकी समान घोर ॥ ७ ॥ व तीन अग्नि के समान तेजस्वी सुके...
दिन २ बढताहै ॥ ८ ॥ वह तीनों राक्षसपुत्र तपके बलसे पिताको वरपाया देखा, और तपके प्रभावसे उस ऐश्वर्यके पानेको जान तप करनेका संकल्प मनमें ठान मेरु पर्वतपर चले गये ॥ ९ ॥ हे नृपश्रेष्ठ ! वह तीनों राक्षस उस समय कठोर नियमोंका आश्रय लेकर सब प्राणियोंको भय उपजाने वाला घोर तप करने लगे ॥ १० ॥ सत्य बोलना, सबसे सरलता रखना, इन्द्रियोंको सब ओरसे आकर्षण कर अपने वशमें रखना इस भांतिसे औरभी पृथ्वीतलपर दुर्लभ तपोंको करके उन लोगोंने देवता, दैत्य, मनुष्य, सहित तीनों लोकोंको संतापित करदिया ॥ ११ ॥ इसके उपरान्त विभु भूतभावन चतुरानन ब्रह्माजी विमानपर चढकर सुकेशके सब पुत्रोंसे बोले कि "हम

त्रयःसुकेशस्यसुतास्त्रेताग्निसमतेजसः ॥ विवृद्धिमगमंस्तत्रव्याधयोपेक्षिताइव ॥ ८ ॥ वरप्राप्तिंपितुस्तेतुज्ञात्वैश्वर्यंतपोबलात् ॥ तपस्तप्तुंगता मेरुंभ्रातरःकृतनिश्चयाः॥ ९ ॥ प्रगृह्यनियमान्घोरान्राक्षसानृपसत्तम ॥ विचेरुस्तेतपोघोरंसर्वभूतभयावहम् ॥ १० ॥ सत्यार्जवशमोपेतैस्तपोभि र्भुविदुर्लभैः ॥ संतापयंतस्त्रींल्लोकान्सदेवासुरमानुषान् ॥ ११ ॥ ततोविभुश्चतुर्वक्त्रोविमानवरमास्थितः ॥ सुकेशपुत्रानामंत्र्यवरदोस्मीत्यभाषत ॥ १२ ॥ ब्रह्माणंवरदंज्ञात्वासेंद्रैर्देवगणैर्वृतम् ॥ ऊचुःप्राञ्जलयःसर्वेवेपमानाइवद्रुमाः ॥ १३ ॥ तपसाराधितोदेवयदिनोदिशसेवरम् ॥ अजेयाः शत्रुहंतारस्तथैवचिरजीविनः ॥ प्रभविष्णवोभवामेतिपरस्परमनुव्रताः ॥ १४ ॥ एवंभविष्यथेत्युक्त्वासुकेशतनयान्विभुः ॥ सययौब्रह्मलोकाय ब्रह्माब्राह्मणवत्सलः ॥ १५ ॥ वरंलब्ध्वातुतेसर्वेरामरात्रिंचरास्तदा ॥ सुरासुरान्प्रबाधंतेवरदानसुनिर्भयाः ॥ १६ ॥ तैर्बाध्यमानास्त्रिदशाःसर्षि संघाःसचारणाः ॥ त्रातारंनाधिगच्छंतिनिरयस्थायथानराः ॥ १७ ॥

वरदान देनेको आयेहैं" ॥ १२ ॥ इन्द्रादि देवता लोगोंके साथ ब्रह्माजीको वरदान देनेको तैयार देख, वह सब राक्षस वृक्षोंकी श्रेणीकी समान कांपते हुए हाथ जोडकर उनसे बोले ॥ १३ ॥ हे देव ! तप करके आराधना किये जानेपर जो आप वर देनेको आयेहैं; तो हमारा पर स्पर महा अनुराग रहे, कोई हम लोगोंको जीत न सके, शत्रुको हम लोग संहार किया करें, और अजर अमर हों आप हमें यह वरदान दीजिये ॥ १४ ॥ ब्राह्मण प्रिय विभु ब्रह्माजी बोले कि "तुम लोग ऐसेही होगे" यह वरदान सुकेशके पुत्रोंको दे, ब्रह्मा ब्रह्मलोककी ओर चले गये ॥ १५ ॥ हे श्रीरामचन्द्रजी ! इस प्रकारसे वह राक्षस वरदान पायकर अत्यन्त निर्भयहो देवता व असुर लोगोंको पीडा देने लगे ॥ १६ ॥ देवता लोगोंने ऋषि, व चारणगणोंने राक्षसोंसे वध्यमानहो नरकमें पडेहुए

समुद्रकी समान अपना उद्धार करनेवाले किसीकोभी न देखा॥ १७॥ हे रघुश्रेष्ठ ! उन राक्षसोंने हर्षितचित्तसे आगमन करके शिल्पियोंमें श्रेष्ठ चिरंजीवी विश्वकर्माजीसे कहा ॥ १८ ॥ हे महामते ! शुभगुणसमन्वित, तेजस्वी, बलवान, महान्, सब देवताओंके भवन उनके मनमाने आपही बनानेवाले हैं ॥ १९ ॥ इस कारण हम लोगोंके लियेभी मनमाना भवन आपही बनावें, मेरु मन्दर अथवा हिमालय पर्वतका अवलंबन करके ॥२०॥ शिवजीके स्थानकी समान हमारा बडाभारी गृह आप बनाइये । तिन महाबलवान् राक्षसोंके वचन सुन विश्वकर्माजीने ॥ २१ ॥ उन लोगोंके रहनेको इन्द्रकी अमरावतीकी समान निवास स्थान बताया कि दक्षिण समुद्रके तीर त्रिकूट नाम पर्वतहै ॥२२॥ हे राक्षसगण ! और इस त्रिकूटकीही समान सुवेल नामक दूसरा एक पर्वतहै उस पर्वतका बीचवाला शृङ्ग मेघकी समानहै॥ २३॥

अथतेविश्वकर्माणंशिल्पिनांवरमव्ययम् ॥ ऊचुःसमेत्यसंहृष्टाराक्षसारघुसत्तम ॥१८॥ ओजस्तेजोबलवतांमहतामात्मतेजसा ॥ गृहकर्ताभवानेव देवानांहृदयेप्सितम् ॥ १९ ॥ अस्माकमपितावत्त्वंगृहंकुरुमहामते ॥ हिमवंतमुपाश्रित्यमेरुंमंदरमेववा ॥ २० ॥ महेश्वरगृहप्रख्यंगृहंनःक्रियतां महत् ॥ विश्वकर्माततस्तेषांराक्षसानांमहाभुजः ॥२१॥ निवासंकथयामासशक्रस्येवामरावतीम् ॥ दक्षिणस्योदधेस्तीरेत्रिकूटोनामपर्वतः ॥२२॥ सुवेलइतिनाप्यन्योद्वितीयोराक्षसेश्वर ॥ शिखरेतस्यशैलस्यमध्यमेऽम्बुदसन्निभे ॥ २३ ॥ शकुनैरपिदुष्प्राप्येटंकच्छिन्नचतुर्दिशि ॥ त्रिंश द्योजनविस्तीर्णाशतयोजनमायता ॥ २४ ॥ स्वर्णप्राकारसंवीताहेमतोरणसंवृता ॥ मयालंकेतिनगरीशक्राज्ञतेननिर्मिता ॥ २५ ॥ तस्यांवस तदुर्धर्षांपुरींराक्षसपुंगवाः ॥ अमरावतींसमासाद्यसेंद्राइवदिवौकसः ॥ २६ ॥ लंकादुर्गंसमासाद्यराक्षसैर्बहुभिर्वृताः ॥ भविष्यथदुराधर्षाःशत्रूणां शत्रुसूदनाः ॥ २७ ॥ विश्वकर्मवचःश्रुत्वाततस्तेराक्षसोत्तमाः ॥ सहस्रानुचराभूत्वागत्वातामवसन्पुरीम् ॥ २८ ॥

जिसपर पक्षीभी किसी प्रकारसे नहीं जा सकते क्योंकि उसके सब ओर विदीर्ण पत्थर फैले हुएहैं। तीस योजनकी विस्तारवाली, और सौ योजनकी चौडी॥२४॥ सुवर्णकी चहार दिवारीसे युक्त और सुवर्णकेही फाटकोंसे समन्वित इस प्रकारकी लंका हमने इन्द्रकी आज्ञासे बनाईथी ॥२५॥ हे दुर्द्धर्ष राक्षस लोगो ! स्वर्गवासी इन्द्रादि देवता जिस प्रकार अमरावतीमें वास करतेहैं तुमभी वैसेही उस लंकानगरीमें जायकर वसो ॥ २६ ॥ हे शत्रुओंका संहार करनेवाले राक्षसवृन्दो ! तुम सब बहुत सारे राक्षसोंके साथ लंकागढमें टिककर शत्रुगणोंके लिये दुराधर्ष होओगे ॥ २७ ॥ इसके उपरान्त वह सब राक्षसश्रेष्ठ, विश्वकर्माजीके वचन सुनकर सहस्र २ सेवकोंके साथ जायकर उस पुरीमें बसे ॥२८॥ एक गढकी भीत व खाईसे युक्त सैकडों हजारों सुवर्णगृहमालासे अलंकृत लंकानगरीको प्राप्त होकर हर्षित चित्तसे वास करने लगे ॥ २९ ॥ हे रामचंद्रजी ! इसीसमयमें नर्मदा नामक एक गन्धर्वी अपनी इच्छासे उत्पन्न हुई श्री और कीर्तिकी समान द्युतिवाली तीन कन्या हुई । उस नामकी राक्षसीने ज्येष्ठके क्र राक्षसं . . .

गरकोंके साथ आकर उस पुरीमें बसे ॥२८॥ ... ॥ ३० ॥ इसके
हर्षित चित्तसे वास करने लगे ॥ २९ ॥ हे रामचंद्रजी ! इसीसमयमें नर्मदा नामक एक गन्धर्वी अपनी इच्छासे उत्पन्न हुई ॥ ३० ॥ कन्या देदीं । हर्षित होकर
श्री और कीर्तिकी समान द्युतिवाली तीन कन्या हुई । उस नामकी राक्षसीने ज्येष्ठके क्रमसे राक्षसोंको ॥ ३१ ॥ उस महाभागाने अपनी तीनों कन्याओंको पूर्वाफा
पूर्णमासीके चंद्रमाकी समान मुखवाली तीन कन्या उस गन्धर्वीने तीन राक्षसश्रेष्ठोंको दीं ॥ ३२ ॥ उस कालमें अप्सराओंके सहित देवताओंकी समान विहार करनेमें
ल्गुनी नक्षत्रमें उन राक्षसोंको दियाथा. हे राम ! वह सुकेशके पुत्र अपनी स्त्रियोंके संग ॥ ३३ ॥

दृष्ट्वा कांचनप्राकारां हेमैर्गृहशतैर्वृताम् ॥ लंकामवाप्यतेहृष्टान्यवसन्रजनीचराः ॥ २९ ॥ एतस्मिन्नेवकालेतुयथाकामंचराघव ॥ नर्मदानामगंधर्वीव
भूवरघुनंदन ॥ ३० ॥ तस्याःकन्यात्रयंह्यासीद्ध्रीश्रीकीर्तिसमद्युति ॥ ज्येष्ठक्रमेणसातेषांराक्षसानामराक्षसी ॥ ३१ ॥ कन्यास्ताःप्रददौहृष्टापू
र्णचंद्रनिभाननाः ॥ त्रयाणांराक्षसेंद्राणांतिस्रोगंधर्वकन्यकाः ॥३२॥ दत्तामात्रामहाभागानक्षत्रेभगदैवते ॥ कृतदारास्तुतेरामसुकेशतनयास्तदा ॥
॥ ३३ ॥ चिक्रीडुःसहभार्याभिरप्सरोभिरिवामराः ॥ ततोमाल्यवतोभार्यासुंदरीनामसुंदरी ॥ ३४ ॥ सतस्यांजनयामासयदपत्यंनिबोधतत् ॥
वज्रमुष्टिर्विरूपाक्षोदुर्मुखश्चैवराक्षसः ॥ ३५ ॥ सुप्तघ्नोयज्ञकोपश्चमत्तोन्मत्ततथैवच ॥ अनलाचाभवत्कन्यासुंदर्यांरामसुंदरी ॥ ३६ ॥ सुमालि
नोपिभार्यासीत्पूर्णचंद्रनिभानना ॥ नाम्नाकेतुमतीरामप्राणेभ्योपिगरीयसी ॥३७॥ सुमालीजनयामासयदपत्यंनिशाचरः ॥ केतुमत्यांमहारा
जतन्निबोधानुपूर्वशः ॥३८॥ प्रहस्तोकंपनश्चैवविकटःकालिकामुखः ॥ धूम्राक्षश्चैवदंडश्चसुपार्श्वश्चमहाबलः ॥३९॥ संह्रादिःप्रघसश्चैवभासकर्णश्च
राक्षसः ॥ राकापुष्पोत्कटाचैवकैकसीचशुचिस्मिताः ॥ कुंभीनसीचइत्येतेसुमालेःप्रसवाःस्मृताः ॥ ४० ॥

लगे हुए, सुन्दरी नामक माल्यवानकी सुन्दरी भार्याथी ॥ ३४ ॥ माल्यवानने उस सुन्दरी नामक भार्यामें जो जो पुत्र उत्पन्न कियेथे वह मैं कहताहूं । वज्रमुष्टि,
विरूपाक्ष, दुर्मुख, ॥ ३५ ॥ सुप्तघ्न, यज्ञकोप, मत्त, उन्मत्त । हे राम ! यह तो सुन्दरीके पुत्र हुए, और अनला नामक एक सुन्दर कन्याभी उसके हुई ॥ ३६ ॥
हे श्रीरामचंद्रजी ! सुमालीकी भार्याका नाम केतुमतीथा वहभी पूर्ण चंद्रमाकी समान विमल वदनवाली और उस राक्षसको प्राणोंसेभी अधिक प्यारीथी ॥ ३७ ॥
हे महाराज ! निशाचर सुमालीने केतुमतीके गर्भसे जिन सन्तानोंको जन्म दिया, आप उन सबके नाम क्रमानुसार हमसे सुनिये ॥ ३८ ॥ प्रहस्त, कंपन, विकट,
कालिकामुख, धूम्राक्ष, दंड, महाबली सुपार्श्व ॥ ३९ ॥ संह्रादि, प्रघस, और भासकर्ण राक्षस यह तो महाबलवान् सुमालीके पुत्र हुए और कुम्भीनसी, कैकसी,

हमारे राक्षसके स्थान सब आश्रमोंको उन्होंने अपनाका स्थान कर ॥५॥

हमही विष्णु, हमही ब्रह्मा, हमही देवराज इन्द्र, हमही यम, हमही वरुण, हमही चंद्रमा, और हमही सूर्य हैं ॥६॥ इस प्रकारसे कहकर माली, सुमाली, माल्यवान, यह तीन राक्षस संग्राममें उत्साहीहो जिसको सामने पाते हैं उसकोही मारडालते हैं ॥७॥ इसकारण हे देव! भयसे आर्त हम लोगोंको आप अभय दीजिये। आप रौद्रमूर्ति धारण करके इस समय इन समस्त देवकंटकोंका संहार कीजिये ॥ ८ ॥ प्रभु नीललोहित महादेवजीने देवतोंके इस प्रकारसे वचन सुनकर सुकेशपर दया कर देवता ओंसे कहा ॥ ९ ॥ हे देवगण! वह हमसे नहीं मारे जायँगे इस कारण हम उनको नहीं मारेंगे परन्तु जो उनको मारडालेगा हम उसका उपाय

शरणान्यशरण्यानिआश्रमाणिकृतानिनः ॥ स्वर्गाच्चदेवान्प्रच्याव्यस्वर्गेक्रीडंतिदेववत् ॥ ५ ॥ अहंविष्णुरहंरुद्रोब्रह्माहंदेवराडहम् ॥ अहंयमश्च वरुणश्चंद्रोहंरविरप्यहम् ॥ ६ ॥ इतिमालीसुमालीचमाल्यवांश्चैवराक्षसाः ॥ बाधंतेसमरोद्धर्षायेचतेषांपुरःसराः ॥ ७ ॥ तन्नोदेवभयार्तानामभयंदातुमर्हसि ॥ अशिवंवपुरास्थायजहिवैदेवकंटकान् ॥८॥ इत्युक्तस्तुसुरैःसर्वैःकपर्दीनीललोहितः ॥ सुकेशंप्रतिसापेक्षःप्राहदेवगणान्प्रभुः ॥९॥ अहंतान्नहनिष्यामिममावध्याहितेसुराः ॥ किंतुमंत्रंप्रदास्यामियोवैतान्निहनिष्यति ॥ १० ॥ एतमेवसमुद्योगंपुरस्कृत्यमहर्षयः ॥ गच्छध्वंशरणंविष्णुंहनिष्यतिसतान्प्रभुः ॥ ११ ॥ ततस्तुजयशब्देनप्रतिनंद्यमहेश्वरम् ॥ विष्णोःसमीपमाजग्मुर्निशाचरभयार्दिताः ॥ १२ ॥ शंखचक्रधरंदेवंप्रणम्यबहुमान्यच ॥ ऊचुःसंभ्रांतवद्वाक्यंसुकेशतनयान्प्रति ॥ १३ ॥ सुकेशतनयैर्देवत्रिभिस्त्रेताग्निसन्निभैः ॥ आक्रम्यवरदानेनस्थानान्यपहृतानिनः ॥ १४ ॥ लंकानामपुरीदुर्गात्रिकूटशिखरेस्थिता ॥ तत्रस्थिताःप्रबाधंतेसर्वान्नःक्षणदाचराः ॥ १५ ॥

बताये देते हैं ॥ १० ॥ हे महर्षियो! कुछभी विलम्ब न करके उस उद्योगमेंही आप सबजन विष्णुजीकी शरणमें जायँ, वही इनका संहार करेंगे ॥ ११ ॥ तिसके पीछे राक्षसोंके भयसे पीडितहुए देवतागण जय शब्दसे महादेवजीकी वन्दना कर भगवान् विष्णुजीके समीप आये ॥ १२ ॥ उन शंख चक्रधारी देवता विष्णुजीको अधिक सन्मानसे प्रणामकर सुकेशके पुत्रोंपर कोप किये और घबडाकर सब देवता यह वचन बोले ॥ १३ ॥ हे देव! तीन अग्निकी समान अत्यन्त तेजःपुंज सुकेशके तीन पुत्रोंने वर पानेसे चढाई कर हमारे सब स्थानछीन लियेहैं ॥ १४ ॥ त्रिकूटपर्वतके शिखरपर एक लंका नामक पुरी बसीहुई है,

निशाचर गण उसी पुरीमें रहकर हम सबको सताते हैं ॥ १५ ॥ हे मधुसूदन! आप हमारे हित करनेकी कामनासे उनको मारडालिये. हे सुरेश्वर! हम आपकी शरण आये, इस कारण आपही हमारे आश्रय हो ॥ १६ ॥ उनका वदनकमल अपने चक्रसे काटकर आप यमको सौंपदें, आपके सिवाय भयके समय हमको आश्रयका देनेवाला और कोई नहीं है ॥१७॥ हे देव! सूर्य भगवान् जिस प्रकार अंधकारका नाश करतेहैं, वैसेही आप हर्षितचित्तसे मदसे उद्धत समस्त राक्षसोंको उनके सेवकोंके साथ संग्राममें मारकर हमारा भय दूर कीजिये ॥ १८ ॥ शत्रुओंके भय देनेवाले जनार्दन, देवताओंके ऐसे वचन सुनकर सबको अभय देकर बोले कि ॥ १९ ॥ हम सुकेश राक्षसको जानते हैं और उसके सब पुत्रभी हमारे जानेहुए हैं उन सबमें बडा माल्यवान् है ॥ २० ॥ उन समस्त अधर्मी

सत्वमस्मद्धितार्थायजहितान्मधुसूदन ॥ शरणंत्वांवयंप्राप्तागतिर्भवसुरेश्वर ॥ १६ ॥ चक्रकृत्तास्यकमलान्निवेदययमायवै ॥ भयेष्वभयदोस्माकंनान्योस्तिभवताविना ॥ १७ ॥ राक्षसान्समरेहृष्टान्सानुबंधान्मदोद्धतान् ॥ नुदत्वंनोभयंदेवनीहारमिवभास्करः ॥ १८ ॥ इत्येवंदैवतैरुक्तोदेवदेवोजनार्दनः ॥ अभयंभयदोऽरीणांदत्त्वादेवानुवाचह ॥ १९ ॥ सुकेशंराक्षसंजानेईशानवरदर्पितम् ॥ तांश्चास्यतनयाञ्जानेयेषांज्येष्ठःसमाल्यवान् ॥ २० ॥ तानहंसमतिक्रांतमर्यादान्राक्षसाधमान् ॥ निहनिष्यामिसंक्रुद्धःसुराभवतविज्वराः ॥ २१ ॥ इत्युक्तास्तेसुराःसर्वेविष्णुनाप्रभविष्णुना ॥ यथावासंययुर्हृष्टाःप्रशंसंतोजनार्दनम् ॥ २२ ॥ विबुधानांसमुद्योगंमाल्यवांस्तुनिशाचरः ॥ श्रुत्वातौभ्रातरौवीराविदंवचनमब्रवीत् ॥ २३ ॥ अमराऋषयश्चैवसंगम्यकिलशंकरम् ॥ अस्मद्वधंपरीप्संतइदंवचनमब्रुवन् ॥ २४ ॥ सुकेशतनयादेववरदानबलोद्धताः ॥ बाधंतेऽस्मान्समुद्दृप्ताघोररूपाःपदेपदे ॥ २५ ॥ राक्षसैरभिभूताःस्मोनशक्ताःस्मप्रजापते ॥ स्वेषुसद्मसुसंस्थातुंभयात्तेषांदुरात्मनाम् ॥ २६ ॥

राक्षसोंने लंकाकी मर्यादाको तोड दियाहै इस कारण हम क्रोध सहित उनको संहार करेंगे. हे सुरगण! तुम निडर होवो ॥ २१ ॥ समस्त देवताओंके शिरोमणि विष्णुजीके यह वचन सुनकर सब देवता हर्षितहो जनार्दनजीकी बडाई करते हुए अपने २ स्थानोंको गये ॥२२॥ परंतु निशाचर माल्यवान् देवतोंके इस उद्योगका वृत्तांत सुन अपने दो वीर भ्राताओंसे कहता हुआ ॥ २३ ॥ देवतों और ऋषिवृन्दोंने हमारे वध करवानेकी वासनासे शिवजीके निकट जायकर उनसे ऐसा कहाहै कि ॥ २४ ॥ हे देव! घोररूपी सुकेशकी संतान एकतो वैसेही गर्वित है और विशेष करके वरदान पानेसे उद्धतहो वह प्रतिक्षण हमको पीडा देतीहै ॥ २५ ॥ हे प्रजारक्षक! उन दुरात्मा राक्षसों करके तिरस्कृत होके हम अपने २ स्थानोंमें रहनेकोभी तो समर्थ नहीं हैं ॥ २६ ॥

इसकारण हे त्रिलोचन ! हमारे हितके लिये आप उनका संहार करो
॥ २७ ॥ अंधकासुरके मार डालनेवाले त्रिलोचन महादेवजी देवतोंके ऐसे वचन सुन कान, हाथ और शिर कंपायकर बोले कि ॥ २८ ॥ " हे देवगण !
वह सुकेशके पुत्र हमसे अवध्य हैं, जो उनको संग्राममें मारेगा, हम तुमको उसका उपाय बताये देतेहैं ॥ २९ ॥ कि तुम सब गदाधर, चक्रपाणि, पीताम्बरधारी, जना
र्दन श्रीमान् नारायण हरिकी शरणमें जाओ " ॥ ३० ॥ वह देवता महादेवजीसे इस प्रकारसे उपाय जान कामके शत्रु महादेवजीको प्रणाम कर नारायणजीके
निकट आय उनसे सब वृत्तांत निवेदन करते हुए ॥ ३१ ॥ तब नारायणजीने इन्द्रादि देवतोंसे कहा कि " हे देवगण ! तुम सब निर्भय होवो, हम उन देवतोंके

तदस्माकंहितार्थायजहितांश्चत्रिलोचनं ॥ राक्षसान्हुंकृतेनैवदहप्रदहतांवर ॥ २७ ॥ इत्येवंत्रिदशैरुक्तोनिशम्यांधकसूदनः ॥ शिरःकरंचधुन्वानइदं
वचनमब्रवीत् ॥ २८ ॥ अवध्याममतेदेवाःसुकेशतनयारणे ॥ मंत्रंतुवःप्रदास्यामियस्तान्वैनिहनिष्यति ॥ २९ ॥ योसौचक्रगदापाणिःपीत
वासाजनार्दनः ॥ हरिर्नारायणःश्रीमान्छरणंतंप्रपद्यथ ॥ ३० ॥ हरादवाप्यतेमंत्रंकामारिमभिवाद्यच ॥ नारायणालयंप्राप्यतस्मैसर्वंन्यवेद
यन् ॥ ३१ ॥ ततोनारायणेनोक्तादेवाइंद्रपुरोगमाः ॥ सुरारींस्तान्हनिष्यामिसुराभवतनिर्भयाः ॥ ३२ ॥ देवानांभयभीतानांहरिणाराक्षसर्ष
भौ ॥ प्रतिज्ञातोवधोऽस्माकंचिंत्यतांयदिहक्षमम् ॥ ३३ ॥ हिरण्यकशिपोर्मृत्युरन्येषांचसुरद्विषाम् ॥ नमुचिः कालनेमिश्चसंह्रादोवीरसत्तमः
॥ ३४ ॥ राधेयोबहुमायीचलोकपालोऽथधार्मिकः ॥ यमलार्जुनौचहार्दिक्यःशुंभश्चैवनिशुंभकः ॥ ३५ ॥ असुरादानवाश्चैवसत्त्ववंतोमहाब
लाः ॥ सर्वेसमरमासाद्यनश्रूयंतेऽपराजिताः ॥ ३६ ॥ सर्वैःक्रतुशतैरिष्टंसर्वेमायाविदस्तथा ॥ सर्वेसर्वास्त्रकुशलाःसर्वेशत्रुभयंकराः ॥ ३७ ॥

शत्रु राक्षसोंका संहार कर डालेंगे" ॥ ३२ ॥ हे दोनों राक्षसश्रेष्ठो ! भयसेभीत हुए देवताओंसे नारायणजीने हम लोगोंके मार डालनेकी प्रतिज्ञाकी है
इसलिये अब जो कुछ उचित हो सो करो ॥ ३३ ॥ नारायणकरके हिरण्यकशिपु, व औरभी देवताओंके शत्रु मारेगये हैं; उनके सिवाय नमुचि, कालनेमि, वीरश्रेष्ठ
संह्राद ॥ ३४ ॥ बहुत सारी माया जाननेवाला राधेय, धार्मिक लोकपाल, यमल, अर्जुन, हार्दिक्य, शुम्भ, निशुम्भ, ॥ ३५ ॥ इत्यादि बलसम्पन्न महाबलवान् असुर
व दानवगण समस्तही उन विष्णुजीके निकट संग्राममें पराजित हुएहैं ॥ ३६ ॥ विशेष करके वह सबही मायाके जाननेवाले थे और सबही सब शास्त्रोंमें पारदर्शीथे

मवही शत्रुओंके लिये भयंकरथे, और सबहीने सैकडों यज्ञभी कियेथे ॥ ३७ ॥ परन्तु नारायणजीने उन सैकडों हजारों देवताओंके शत्रुओंको मार डालाहै। इस कारण यह जानकर सबका जिसमें भला हो वही तुम सबको करना चाहिये, परंतु जिन्होंने हमारे मारडालनेकी वासनाकी है; उन नारायणका जीतना अत्यन्त कठिन है ॥३८॥ इसके उपरान्त सुमाली, माली, माल्यवान्के वचन सुनकर अपने वडे भातासे बोले जैसे दोनों अश्विनीकुमार इन्द्रजीसे बोलते हैं ॥३९॥ हम लोगोंने भली भांतिसे वेद पढ़े, बहुतेरे दान दिये, ऐश्वर्य बढायकर उसका पालनभी बहुत किया और रोगरहित आयुर्बल पाय उसके अनुसार धर्मकी स्थापना की ॥४०॥ अधिक करके देवरूप अचल समुद्रोंमें शस्त्रसमूहोंमें स्नानकर अप्रमाण बलवाले शत्रुओंको हमने जीता, तिससे अब हमको मृत्युकाभी भय नहीं रहाहै ॥ ४१ ॥ नारायण, रुद्र, इन्द्र अथवा यमराज सबही हमारे सम्मुख खडे होते हुए सदा डरतेहैं ॥४२॥ हे राक्षसराज ! हमारे प्रति विष्णुजीके द्वेष होनेका कोई कारण नहीं है,

नारायणेननिहताःशतशोथसहस्रशः ॥ एतज्ज्ञात्वातुसर्वेषांक्षमंकर्तुमिहार्हथ ॥ दुःखंनारायणंजेतुंयोनोहंतुमिहेच्छति ॥३८॥ ततःसुमालीमालीच श्रुत्वामाल्यवतोवचः ॥ ऊचतुर्भ्रातरंज्येष्टमश्विनाविववासवम् ॥३९॥ स्वधीतंदत्तमिष्टंचऐश्वर्यंपरिपालितम्॥आयुर्निरामयंप्राप्तंसुधर्मःस्थापितः पथि ॥४०॥ देवसागरमक्षोभ्यंशस्त्रैःसमवगाह्यच ॥ जिताद्विपोह्यप्रतिमास्तन्नोमृत्युकृतंभयम् ॥ ४१ ॥ नारायणश्चरुद्रश्चशक्रश्चापियमस्तथा ॥ अस्माकंप्रमुखेस्थातुंसर्वेबिभ्यतिसर्वदा ॥ ४२ ॥ विष्णोर्द्वेषस्यनास्त्येवकारणंराक्षसेश्वर ॥ देवानामेवदोषेणविष्णोःप्रचलितंमनः ॥ ४३ ॥ तस्माद्वयंवसहिताःसर्वेऽन्योन्यसमावृताः ॥ देवानेवजिघांसामोयेभ्योदोषःसमुत्थितः ॥ ४४ ॥ एवंसंमन्त्र्यबलिनःसर्वेसैन्यमुपासिताः ॥ उद्योगं घोषयित्वातुसर्वेनैर्ऋतपुंगवाः ॥ ४५ ॥ युद्धायनिर्ययुःक्रुद्धाजंभवृत्रादयोयथा ॥ इतितेरामसंमंत्र्यसर्वोद्योगेनराक्षसाः ॥४६॥ युद्धायनिर्ययुःसर्वे महाकायामहाबलाः॥स्यंदनैर्वारणैश्चैवहयैश्चकरिसन्निभैः॥४७॥ खरैर्गोभिरथोष्ट्रैश्चशिशुमारैर्भुजंगमैः॥मकरैःकच्छपैर्मीनैर्विहंगैर्गरुडोपमैः ॥४८॥

देवताओंके दोषसेही विष्णुजीका मन इस प्रकारसे चलायमान हुआ है ॥ ४३ ॥ इसलिये हम सब और सब राक्षसोंके साथ इकट्ठे होकर आज उनके सहित देवतोंको मार डालेंगे, क्योंकि उनलोगोंसेही यह दोष उपजा है ॥ ४४ ॥ राक्षस परस्पर इस प्रकारकी सम्मति करके युद्धके उद्योगका ढँढोरा फिरवा देते हुए, और सब सेनाकी योजना करने लगे ॥ ४५ ॥ फिर वृत्रासुर और जम्भासुरकी समान युद्ध करनेके लिये निकले. हे राम ! इसप्रकार सम्मति और उद्योग करके वह राक्षस ॥ ४६ ॥ युद्ध करनेके लिये निकले. वह सब वडे २ शरीरवालेथे और महाबलवान्थे; उनमेंसे कोई रथोंपर, कोई हाथीपर कोई हाथीके समान ऊंचे घोडोंपर ॥ ४७ ॥ कोई गधोंपर कोई बैलों पर, कोई ऊंटोंपर, कोई शिशुमार पर, कोई सर्पोंपर, कोई मछलियों, कच्छपों, और गरुडजीकी समान वेग

उनमें माल्यवान पर्वतके समान उस माल्यवान्का सब कोई ॥ ६० ॥ राक्षस आश्रय करके चले, जैसे देवता विधाताका आश्रय ग्रहण करते हैं । वह राक्षसश्रेष्ठोंकी सेना महा घनकी समान गर्जती हुई ॥ ६१ ॥ मालीके वशमें रहकर जयकी अभिलाषासे देवताओंके लोकमें गई; राक्षसोंकी इस तैयारीको नारायण प्रभु ॥ ६२ ॥ देवदूतके मुखसे सुनकर नारायणजी युद्ध करनेके लिये गमन करते हुए, सब आयुधोंसे सज, तरकश धारणकर गरुडजीपर सवारहो ॥ ६३ ॥ सहस्रसूर्यके समान द्युतिमान, दिव्य कवचसे अपने शरीरको आवृत कर, बाणोंसे पूर्ण विमल दो तरकश ॥६४॥ कमलनेत्र नारायणने कमर बाँधनेकी डोरी, विमल खड्ग, शंख, चक्र, गदा, धनुष और खड्गादि श्रेष्ठ आयुध धारणकर ॥ ६५ ॥ सम्पूर्ण पर्वतकी समान गरुडजीपर सवारहो राक्षसोंके विनाश करनेके लिये शीघ्र यात्रा करते हुए ॥ ६६ ॥ बिजलीकी दरारसे विराजमान बादल जिसप्रकार कांचनगिरिके शिखरपर शोभायमान होतेहैं; उस कालमें श्यामवर्ण पीताम्बरधारे हरिभी गरुडपर

निशाचराआश्रयंतिधातारमिवदेवताः ॥ तद्बलंराक्षसेंद्राणांमहाभ्रघननादितम् ॥६१॥ जयेप्सयादेवलोकंययौमालिवशेस्थितम् ॥ राक्षसानांसमुद्योगंतंतुनारायणःप्रभुः ॥ ६२ ॥ देवदूतादुपश्रुत्यचक्रेयुद्धेतदामनः ॥ ससज्जायुधतूणीरोवैनतेयोपरिस्थितः ॥ ६३ ॥ आसाद्यकवचंदिव्यंसहस्रार्कसमद्युति ॥ आबध्यशरसंपूर्णेइषुधीविमलेतदा ॥ ६४ ॥ श्रोणिसूत्रंचखड्गंचविमलंकमलेक्षणः ॥ शंखचक्रगदाशार्ङ्गखड्गांश्चैववरायुधान्॥ ॥ ६५ ॥ संपूर्णगिरिसंकाशंवैनतेयमथास्थितः ॥ राक्षसानामभावायययौतूर्णतरंप्रभुः ॥ ६६ ॥ सुपर्णपृष्ठेसबभौश्यामःपीतांबरोहरिः ॥ कांचनस्यगिरेःशृंगेसतडित्तोयदोयथा ॥ ६७ ॥ ससिद्धदेवर्षिमहोरगैश्चगंधर्वयक्षैरुपगीयमानः ॥ समाससादासुरसैन्यशत्रुश्चक्रासिशार्ङ्गायुधशंखपाणिः ॥ ६८ ॥ सुपर्णपक्षानिलनुन्नपक्षंभ्रमत्पताकंप्रविकीर्णशस्त्रम् ॥ चचालतद्राक्षसराजसैन्यंचलोपलंनीलमिवाचलाग्रम् ॥ ६९ ॥ ततःशितैःशोणितमांसरूषितैर्युगांतवैश्वानरतुल्यविग्रहैः ॥ निशाचराःसंपरिवार्यमाधवंवरायुधैर्निर्बिभिदुःसहस्रशः ॥ ७० ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडेषष्ठःसर्गः ॥ ६ ॥ नारायणगिरिंतेतुगर्जंतोराक्षसांबुदाः ॥ अर्दयंतोस्त्रवर्षेणवर्षेणेवाद्रिमंबुदाः ॥ १ ॥

चढकर वैसेही शोभायमान होतेथे ॥ ६७ ॥ वह हरिनारायण शंख, चक्र, खड्ग और शार्ङ्गआयुध हाथमें धारण किये सिद्ध, महर्षि, नाग, यक्ष और गन्धर्वोंसे गाये जाते हुए देवतोंके शत्रुओंकी सेनामें आयपहुँचे ॥ ६८ ॥ पाषाणोंके चंचल होनेसे नीलाचलके अग्र भागकी शोभा जैसी होती है उस समय राक्षसराजकी वह समस्त सेना गरुडजीके पंखोंसे निकली हुई पवनके घातसे बलहीन होगई, उसकी सब झंडियां गिरगई और हथियार हाथसे छूटकर चलायमान होगये ॥ ६९ ॥ तिसके पीछे सहस्र २ राक्षस माधवको चारों ओरसे घेरकर, रुधिर और मांससे रंगे प्रलयकालके अग्निकी नाईं आकारवाले तेजस्वी तीखे श्रेष्ठ अस्त्र २ ओंसे उनको

नवमूह गर्जन करके नारायणजी रहता प चको अस्त्र चलायक ...
...ने करन हुये जान पडे मानो वर्षा करतेहुए मेघोंने अंजन पर्वतको ढक लियाहै ॥ २ ॥ जैसे टीडियोंके झुण्ड खेतीमें, मच्छर अग्निमें, मक्खियें शहदके ... और मत्सियें समुद्रमें पैठती हैं ॥३॥ वैसे वज्र पवन और मनकी समान वेगसे चलनेवाले बाणोंके समूह राक्षसोंके धनुषसे छूटकर नारायण हरिजीकी देहमें ... करने लगे जैसे प्रलयकालमें सब लोक नारायणमें मिल जाते हैं ॥ ४ ॥ रथपर चढेहुए रथके सहित हाथियोंके चढनेवाले हाथियोंके सहित, घुडसवार घोडों ... और पैदल पैदलसे नभस्थ नभस्योंसे युद्ध करनेके लिये खडे रहे ॥५॥ पर्वतके समान देहवाले राक्षसोंने बाण, शक्ति, ऋष्टि, भाला, आदि अस्त्र शस्त्रोंसे ...नारायणजीको श्वासरहित कर दिया. जैसे प्राणायाम ब्राह्मणोंके श्वासको रोक लेताहै ॥ ६ ॥ जैसे मछलियोंसे समुद्र ताडित होताहै; वैसेही निशाचरोंसे परम

श्यामासदानन्नौविष्णुर्नीलैर्नैकंचरोत्तमैः ॥ वृतोंऽजनगिरीवायंवर्षमाणैःपयोधरैः ॥ २ ॥ शलभाइवकेदारंमशकाइवपावकम् ॥ यथामृतघटं दंशामकरास्नरार्णवम् ॥ ३ ॥ तथारक्षोधनुर्मुक्तावज्रानिलमनोजवाः ॥ हरिंविशंतिस्मशरालोकाइवविपर्यये ॥ ४ ॥ स्यंदनैःस्यंदनगतागजैश्च गजमूर्धगाः ॥ अश्वारोहास्तथाश्वैश्चपादाताश्चांबरेस्थिताः ॥ ५ ॥ राक्षसेंद्रागिरिनिभाःशरैःशक्त्यृष्टितोमरैः ॥ निरुच्छ्वासंहरिंचक्रुःप्राणायामा इवद्विजम् ॥ ६ ॥ निशाचरैस्ताड्यमानोमीनैरिवमहोदधिः ॥ शार्ङ्गमायम्यदुर्धर्षोराक्षसेभ्योऽसृजच्छरान् ॥ ७ ॥ शरैःपूर्णायतोत्सृष्टैर्वज्र कल्पैर्मनोजवैः ॥ चिच्छेदविष्णुर्निशितैःशतशोथसहस्रशः ॥ ८ ॥ विद्राव्यशरवर्षेणवर्षंवायुरिवोत्थितम् ॥ पांचजन्यंमहाशंखंप्रदध्मौपुरुषो त्तमः ॥ ९ ॥ सोंबुजोहरिणाध्मातःसर्वप्राणेनशंखराट् ॥ ररासभीमनिर्ह्रादस्त्रैलोक्यंव्यथयन्निव ॥ १० ॥ शंखराजरवःसोथत्रासयामासराक्ष सान् ॥ मृगराजइवारण्येसमदानिवकुंजरान् ॥ ११ ॥ नशेकुरश्वाःसंस्थातुंविमदाकुंजराभवन् ॥ स्यंदनेभ्यश्च्युतावीराःशंखरावितदुर्बलाः ॥१२॥

... हो ताडित होकर शार्ङ्गधनुषको खैंच राक्षसोंके ऊपर बाण छोडनेलगे ॥ ७ ॥ कानतक खैंचकर वज्रके समान और मनके वेगकी समान चलनेवाले ...ने बाणोंके समूहको छोडकर विष्णुजीने सैकडों हजारों राक्षसोंको मारडाला ॥ ८ ॥ उठेहुए मेघोंको पवन जिस प्रकारसे छिन्न भिन्नकर उडाय देतीहै, वैसेही पुरुषोत्तम विष्णुजीने बाण वर्षाय राक्षसोंको भगाय पाञ्चजन्य नामक अपना बडाभारी शंख बजाया ॥ ९ ॥ वह जलसे निकला हुआ शंखराज हरिनारायण करके ...श्वासमें बजाया जाकर त्रिलोकीको व्यथित करताही हुआसा मानो घोर शब्दसे गर्जन कर उठा ॥ १० ॥ मृगराज सिंह जिस प्रकार वनमें मतवाले हाथियोंको त्रासित करताहै, वैसेही उस शंखराजके शब्दने राक्षसोंको त्रासित किया ॥११॥ उस कालमें समस्त राक्षस वीर शंखके घोर शब्दसे दुर्बल होकर रथसे गिर पडे,

हाथी मदको त्याग करतेहुए और घोडेभी स्थिर होकर खडे न रह सके ॥ १२ ॥ वज्रके समान मुखवाले फोंकदार समस्त बाण शार्ङ्गधनुषसे छूट उन राक्षसोंको भरतकर पृथ्वीमें पैठ गये ॥ १३ ॥ राक्षस लोग नारायणके करकमलसे छूटेहुए बाणसमूहसे संग्राममें विदारितहो वज्र लगेहुए पर्वतके समान पृथ्वीपर गिरे ॥ ॥ १४ ॥ पर्वतोंमें जिस प्रकार गेरूकी धारा निकला करतीहै; वैसेही राक्षसोंके शरीरमें जो घाव विष्णुजीके चक्रसे होगयेथे उनसे रुधिरकी धारा गिरने लगी ॥ ॥ १५ ॥ विष्णुके किये हुए शंखोंके राजा पांचजन्यका शब्द, और शार्ङ्गधनुषका शब्द, इन शब्दोंने मिलकर राक्षसोंके शब्द और प्राणोंको मानो ग्रास कर लिया ॥१६॥ तब विष्णुजीने बाणसमूहसे राक्षसोंके कंपायमान गले;बाण, ध्वजा, धनुष, रथ, पताका और तरकश काट डाले ॥ १७ ॥ सूर्यमंडलमें जिसप्रकार किरणोंकी राशि निकलतीहै; समुद्रसे जिस प्रकार जलसमूह निकलताहै, बडे २ पर्वतोंसे जैसे सर्प निकलतेहैं, मेघसे जैसे जलधारा निकलतीहै ॥ १८ ॥ वैसेही

शार्ङ्गचापविनिर्मुक्तावज्रतुल्याननाःशराः ॥ विदार्यतानिरक्षांसिसुपुंखाविविशुःक्षितिम् ॥१३॥ भिद्यमानाःशरैःसंख्येनारायणकरच्युतैः ॥ निपेतू राक्षसाभूमौशैलावज्रहताइव॥१४॥व्रणानिपरगात्रेभ्योविष्णुचक्रकृतानिहि ॥ असृक्क्षरंतिधाराभिःस्वर्णधाराइवाचलाः॥१५॥ शंखराजरवश्चापि शार्ङ्गचापरवस्तथा ॥ राक्षसानांरवांश्चापिग्रसतेवैष्णवोरवः ॥१६॥ तेषांशिरोधरान्धूताञ्छरध्वजधनूंषिच ॥ रथान्पताकांस्तूणीरांश्चिच्छेदसहरिः शरैः ॥ १७ ॥ सूर्यादिवकराघोरावार्योघाइवसागरात् ॥ पर्वतादिवनागेंद्राधारोघाइवचांबुदात् ॥ १८ ॥ तथाशार्ङ्गविनिर्मुक्ताःशरानारायणेरितात् ॥ निर्धावंतीषवस्तूर्णंशतशोथसहस्रशः ॥ १९ ॥ शरभेणयथासिंहाःसिंहेनद्विरदायथा ॥ द्विरदेनयथाव्याघ्राव्याघ्रेणद्वीपिनोयथा ॥ २० ॥ द्वीपिनेवयथाश्वानःशुनामार्जारकायथा ॥ मार्जारेणयथासर्पाःसर्पेणचयथाखवः ॥ २१ ॥ तथातेराक्षसाःसर्वेविष्णुनाप्रभविष्णुना ॥ द्रवंतिद्राविताश्चान्येशायिताश्चमहीतले ॥२२॥ राक्षसानांसहस्राणिनिहत्यमधुसूदनः ॥ वारिजंपूरयामासतोयदंसुरराडिव ॥ २३ ॥ नारायणशरत्रस्तंशंखनादसुविह्वलम् ॥ ययौलंकामभिमुखंप्रभग्नंराक्षसंबलम् ॥२४॥ प्रभग्नेराक्षसबलेनारायणशराहते ॥ सुमालीशरवर्षेणनिववाररणेहरिम् ॥२५॥

सैकडों हजारों,बाण नारायणजीके शार्ङ्गधनुषसे निकलकर अतिवेगसे दौडने लगे ॥ १९ ॥ जिस प्रकार महाबली शरभ करके सिंह, सिंहसे हाथी, हाथीसे व्याघ्र, व्याघ्रसे चीता ॥ २० ॥ चीतेसे कुत्ता; कुत्तेसे बिल्ली, बिल्लीसे सर्प और सर्पसे चूहे भागतेहैं ॥ २१ ॥ वैसेही वह समस्त राक्षस विष्णुजीके भयसे भागगये और बहुतसारे मरकर पृथ्वीपर सोगये ॥ २२ ॥ मधुसूदन नारायणजी इस प्रकार हजार२ राक्षसोंका संहार करके अपने पाञ्चजन्य शंखकी ध्वनि करने लगे कि, जैसे देवराज इन्द्रजीके बादल गर्जन करतेहैं ॥ २३ ॥ मुख्य २ राक्षसोंकी सेना नारायणजीके बाण लगनेसे त्रासित शंखनादसे विह्वलहो लंकाकी ओरको भागी ॥ २४ ॥ नारायणजीके बाणोंसे घायल होकर जब राक्षसोंकी सेना भागी तब सुमाली बाणोंकी वर्षा करके भगवान [illegible] करता हुआ ॥ २५ ॥

हुए जिसप्रकार सूर्यभगवान्‌को ढक देताहै वस । सुमा
प्रज्वलित वह राक्षस सुमाली कोधके वशहो घोर गर्जन करते २ राक्षसोंको मानो फिर जिलाताही हुआ विष्णुजीको प्राप्त हुआ ॥ २७ ॥ र वायमान भूषण युक्त हाथ ऊपरको उठाय सुमाली राक्षस दर्पके वशहो उस कालमें बिजलीयुक्त मेघकी समान गर्जने लगा; जैसे हाथी गर्जता है ॥ २८ ॥ जब सुमाली राक्षस गर्जने लगा, तब नारायणजीने उसके सारथीका प्रज्वलित कुण्डलभूषित शिर काट डाला । उस कालमें राक्षसके रथके घोडे सारथिहीन इच्छानुसार इधर उधर घूमने लगे ॥ २९ ॥ धीरजहीन मनुष्य जिस प्रकार इन्द्रियरूप घोडोंसे भ्रमके मार्गमें गिरता है राक्षसोंका राजा सुमालीभी वैसेही इन सब घोडोंके इधर उधर

सतुतंछादयामासनीहारइवभास्करम् ॥ राक्षसाःसत्त्वसंपन्नाःपुनर्धैर्यंसमादधुः ॥ २६ ॥ अथसोभ्यपतद्रोषाद्राक्षसोवलदर्पितः ॥ महानादंप्रकुर्वाणोराक्षसाञ्जीवयन्निव ॥ २७ ॥ उत्क्षिप्यलंबाभरणंधुन्वन्करमिवद्विपः ॥ ररासराक्षसोहर्षात्सतडित्तोयदोयथा ॥ २८ ॥ सुमालेर्नर्दतस्तस्य शिरोज्वलितकुंडलम् ॥ चिच्छेदयंतुरश्वाश्चभ्रांतास्तस्यतुरक्षसः ॥ २९ ॥ तैरश्वैर्भ्राम्यतेभ्रांतैःसुमालीराक्षसेश्वरः ॥ इंद्रियाश्वैःपरिभ्रांतैर्धृतिहीनोयथानरः ॥ ३० ॥ ततोविष्णुंमहाबाहुंप्रपतंतंरणाजिरे ॥ हृतेसुमालेरश्वेश्चरथेविष्णुरथंप्रति ॥ मालीचाभ्यद्रवद्युक्तःप्रगृह्यसशरासनम् ॥ ३१ ॥ माल्येर्धनुश्च्युताबाणाःकार्तस्वरविभूषिताः ॥ विविशुर्हरिमासाद्यक्रौंचपत्ररथाइव ॥ ३२ ॥ अर्द्यमानःशरैःसोथमालिमुक्तैःसहस्रशः ॥ चुक्षुभेनरणेविष्णुर्जितेंद्रियइवाधिभिः ॥ ३३ ॥ अथमौर्वीस्वनंकृत्वाभगवान्भूतभावनः ॥ मालिनंप्रतिबाणौघान्ससर्जासिगदाधरः ॥ ३४ ॥ तेमालिदेहमासाद्यवज्रविद्युत्प्रभाःशराः ॥ पिबंतिरुधिरंतस्यनागाइवसुधारसम् ॥ ३५ ॥

घूमनेसे कुमार्गमें चलनेलगा ॥ ३० ॥ इसके उपरान्त सुमालीके घोडे जब उसका रथ विष्णुजीके सामने लाये तब महाबाहु विष्णुजीको संग्राम खेतमें आया हुआ देखकर, माली धनुष ग्रहण करके विष्णुजीके सम्मुख धाया ॥ ३१ ॥ सुवर्णसे विभूषित बाण मालीके धनुषसे छूटकर श्रीहरिजीके शरीरमें प्रवेश करने लगे, जैसे स्वामिकार्तिकजीकी शक्तिसे कटेहुए क्रौञ्चनाम पर्वतपर पक्षिगण आयकर कूदतेहैं ॥ ३२ ॥ उस समय भगवान् विष्णुजी मालीके चलायेहुए हजार२ बाणोंसे पीडित होकरभी चलायमान नहीं हुए, जैसे जितेन्द्रिय पुरुष मानसिक कथाओंसे चलायमान नहीं होता ॥ ३३ ॥ तिसके पीछे गदाधर, खड्गधारी, भूतभावन विष्णुजी अपने धनुषपर टंकार देकर मालीके ऊपर बाण चलाने लगे ॥ ३४ ॥ वज्र सौदामिनीकी समान तेजःपुंज वह बाण मालीके शरीरमें पैठकर

उसके रुधिरको पीने लगे जैसे नाग सुधारसको पीते हैं ॥ ३५ ॥ तब शंख, चक्र, गदाधारी नारायणजीने मालीको विमुख करके उसका मुकुट, ध्वजा, तथा धनुष बाण और रथके घोडोंकोभी गिरादिया ॥ ३६ ॥ परंतु निशाचर माली रथहीन हो, गदा हाथमें ले विष्णुजीके सामने आय कूदा जैसे पर्वतसे कूदकर सिंह आवे ॥ ३७ ॥ यमराजने जिस प्रकार शिवजीके ऊपर अस्त्र चलायाथा, और इन्द्रजीने जिसप्रकार पर्वतोंको घायल कियाथा, वैसेही मालीने पक्षिराज गरुडजीके माथेमें गदा मारी ॥ ३८ ॥ तब गरुडजी उस मालीकी गदा लगनेसे अत्यन्त व्याकुल हुए, और पीडासे व्यथितहो वह देव हरिको विमुख करते हुए, क्योंकि विष्णुजी उनके ऊपर सवारथे ॥ ३९ ॥ तब राक्षसोंके घोर गर्जनसे कठोर शब्द उत्पन्न हुआ यह शब्द उस समय हुआ

मालिनंविमुखंकृत्वाशंखचक्रगदाधरः ॥ मालिमौलिंध्वजंचापंवाजिनश्चाप्यपातयत् ॥ ३६ ॥ विरथस्तुगदांगृह्यमालीनक्तंचरोत्तमः ॥ आप्लुप्लुवेगदापाणिर्गिर्यग्रादिवकेसरी ॥ ३७ ॥ गदयागरुडेशानमीशानमिवचांतकः ॥ ललाटदेशेभ्यहनद्वज्रेणेंद्रोयथाचलम् ॥ ३८॥ गदयाभिहतस्तेन मालिनागरुडोभृशम् ॥ रणात्पराङ्मुखंदेवंकृतवान्वेदनातुरः ॥ ३९ ॥ पराङ्मुखेकृतेदेवेमालिनागरुडेनवै ॥ उदतिष्ठन्महाञ्शब्दोरक्षसामभिनर्दताम् ॥ ४० ॥ रक्षसांरुवतांरावंश्रुत्वाहरिहयानुजः ॥ तिर्यगास्थायसंक्रुद्धःपक्षीशेभगवान्हरिः ॥ ४१ ॥ पराङ्मुखोप्युत्ससर्जमालेश्चक्रंजिघांसया ॥ तत्सूर्यमंडलाभासंस्वभासाभासयन्नभः ॥ ४२ ॥ कालचक्रनिभंचक्रंमालेःशीर्षमपातयत् ॥ तच्छिरोराक्षसेंद्रस्यचक्रोत्कृत्तंविभीषणम् ॥ पपातरुधिरोद्गारिपुराराहुशिरोयथा ॥ ४३ ॥ ततःसुरैःसंप्रहृष्टैः सर्वप्राणसमीरितः ॥ सिंहनादरवोमुक्तःसाधुदेवेतिवादिभिः ॥ ४४ ॥ मालिनं निहतंदृष्ट्वासुमालीमाल्यवानपि ॥ सबलौशोकसंततौलंकामेवप्रधावितौ ॥ ४५ ॥

जब गरुडजीने राक्षसोंको रणमें विमुख किया ॥४०॥ गर्जते हुए निशाचरोंका वह सिंहनाद इन्द्रानुजजीने सुना तब पक्षिराज गरुडजीकी पीठपर पूंछकी ओरको मुखकर संभल भगवान् हरिजीने ॥ ४१ ॥ विमुख होकरभी मालीका संहार करनेके लिये चक्र चलाया । सूर्य मंडलकी समान प्रकाशित व अपनी दीप्तिसे आकाशको प्रकाशित करते हुए ॥ ४२ ॥ कालचक्रके समान द्युतियुक्त उस चक्रने मालीका शिर काट डाला राक्षसराजका वह अत्यन्त भयंकर मस्तक चक्रसे कट कर रुधिर उगलता हुआ पृथ्वीपर गिरपडा, जैसे पूर्वकालमें राहुका शिर चक्रसे कटकर अलग गिराथा ॥ ४३ ॥ उस कालमें देवता अत्यन्त हर्षितहो " धन्यहो महाराज ! " यह शब्द कह तब सिंह ...

सेनाके साथ लंकाको भाग गये ॥ ४५ ॥ उस काल
हुई पवनसे राक्षसोंको भगाने लगे ॥ ४६ ॥ श्रीविष्णुजीने किसी २ राक्षसके मुखकमल चक्रसे काटडाले, और किसी २ की छातीको गदासे चूर्ण कर दिया, किसी २ की गर्दन हलसे खैंचली, मूसलके प्रहारसे किसीका शिर फोडदिया ॥ ४७ ॥ और किसी २ के सर्वाङ्ग खड्गसे काटडाले, किसी २ को बाणोंसे पीडित करदिया इस प्रकारसे राक्षस घायल होकर आकाशसे अतिशीघ्र समुद्रके जलमें गिरने लगे क्योंकि यह राक्षस आकाशमेंही टिककर लड रहेथे ॥ ४८ ॥ सौदामिनीसहित महामेघ जिस प्रकार वज्रसे फटजाताहै वैसेही नारायणजीभी धनुषसे छोडे श्रेष्ठ तीरप्रहारसे बालखुले राक्षसोंको विदीर्ण करने लगे ॥ ४९ ॥ उस कालमें राक्षसोंकी सेनाका विनीतवेष बाणोंसे नष्ट होगया; और अस्त्रोंसे छत्र कट जानेसे बाणोंके प्रहारसे आंतोंके निकल आनेसे वह राक्षसोंकी सेना मारे भयके चलायमान

गरुडस्तुसमाश्वस्तःसन्निवृत्ययथापुरा ॥ राक्षसान्द्रावयामासपक्षवातेनकोपितः॥४६॥ चक्रकृत्तास्यकमलागदासंचूर्णितोरसः॥ लांगलग्लपितग्रीवामुसलैर्भिन्नमस्तकाः॥४७॥ केचिच्चैवासिनाछिन्नास्तथान्येशरताडिताः ॥ निपेतुरंबराच्चूर्णंराक्षसाःसागरांभसि ॥४८॥ नारायणोपीपुवराशनीभिर्विदारयामासधनुर्विमुक्तैः ॥ नक्तंचरान्धूतविमुक्तकेशान्यथाशनीभिःसतडिन्महाभ्रः ॥४९॥ भिन्नातपत्रंपतमानशस्त्रंशरैरपध्वस्तविनीतवेषम्॥ विनिःसृतांत्रंभयलोलनेत्रंबलंतदुन्मत्ततरंबभूव ॥५०॥ सिंहार्दितानामिवकुंजराणांनिशाचराणांसहकुंजराणाम्॥ रवाश्चवेगाश्चसमंबभूवुःपुराणसिंहेनविमर्दितानाम् ॥५१॥ तेवार्यमाणाहरिबाणजालैःस्वबाणजालानिसमुत्सृजंतः ॥ धावंतिनक्तंचरकालमेघावायुप्रणुन्नाइवकालमेघाः ॥ ५२ ॥ चक्रप्रहारैर्विनिकृत्तशीर्षाःसंचूर्णितांगाश्चगदाप्रहारैः॥असिप्रहारैर्द्विविधाविभिन्नाःपतंतिशैलाइवराक्षसेंद्राः ॥५३॥ विलंबमानैर्मणिहारकुंडलैर्निशाचरैर्नीलबलाहकोपमैः ॥ निपात्यमानैर्ददृशेनिरंतरंनिपात्यमानैरिवनीलपर्वतैः ॥५४॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वा०आ०उ० सप्तमःसर्गः ॥ ७ ॥

नेवहो अपने परायेके ज्ञानको भूलगई ॥ ५० ॥ सिंह करके हाथीकी समान नृसिंहसे पीडित राक्षसगणोंका शब्द और वेग व हाथियोंका चिंघाडना और वेग एक समयही उत्पन्न हुआ ॥ ५१ ॥ जिस प्रकार काले बादल पवनसे छिन्न भिन्न होकर उड जातेहैं वैसेही राक्षसरूपी काले बादल हरिके बाणजालसे निवारितहो अपने २ बाण जालको छोडते हुए भागे ॥५२ ॥ समस्त श्रेष्ठ राक्षसगण चक्रके प्रहारसे मस्तक कटाय, गदाकी चोटसे अंग चूर्ण कराय, खड्गके प्रहारसे शरीरके दो भाग कराय पर्वतके समान गिर पडे ॥ ५३ ॥ उस कालमें गिरते हुये नीले पर्वतकी समान लम्बायमान मणिमय हार और कुण्डलोंसे शोभित नीले बादलकी समान गिरते जाते हुए राक्षसोंसे पृथ्वी ढक गई ॥ ५४ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषाटीकायां सप्तमः सर्गः ॥ ७ ॥

...नारायणजी पीछे २ धायकर जब उस राक्षसोंकी सेनाको मारतेही गये, तो माल्यवान् राक्षस लंकापुरीतक पहुँचकर फिर लौटा, जैसे तीरपर पहुँच कर समुद्रका जल फिर शीघ्र लौट जाताहै ॥ १ ॥ फिर निशाचर माल्यवान् क्रोधके मारे लाल २ नेत्रकर, शिर कँपाय पुरुषोत्तम पद्मनाभ श्रीनारायणजीसे यह बोला ॥ २ ॥ हे नारायण ! तुम प्राचीन क्षत्रियोंके धर्मको नहीं जानते कारण कि हम तो भीत होकर युद्ध करनेकी इच्छा नहीं करते हैं तथापि तुम नीचकी समान हम लोगोंको मारेही डालतेहो ॥ ३ ॥ हे सुरेश्वर ! जो भागेहुए पुरुषका वधजनित पाप करताहै वह पुण्यकर्मकारियोंके जाने योग्य स्वर्गको प्राप्त नहीं होता ॥४॥ हे शंख चक्र-गदाधर ! यदि तुमको बहुतही युद्धका अभिलाष हुआहै तो लीजिये हम यह टिके हुए हैं; आपमें जो कुछ बल है सो दिखाइये ॥५॥

हन्यमानेबलेतस्मिन्पद्मनाभेनपृष्ठतः ॥ माल्यवान्सन्निवृत्तोथवेलामेत्यइवार्णवः ॥ १ ॥ संरक्तनयनःकोपाच्चलन्मौलिर्निशाचरः ॥ पद्मनाभमिदंप्राहवचनंपुरुषोत्तमम् ॥ २ ॥ नारायणनजानीषेक्षात्रधर्मंपुरातनम् ॥ अयुद्धमनसोभीतानस्मान्हंसियथेतरः ॥ ३ ॥ पराङ्मुखवधंपापंयःकरोतिसुरेश्वर ॥ सहंतानगतःस्वर्गंलभतेपुण्यकर्मणाम् ॥ ४ ॥ युद्धश्रद्धाथवातेऽस्तिशंखचक्रगदाधर ॥ अहंस्थितोस्मिपश्यामिबलंदर्शययत्तव ॥ ५ ॥ माल्यवंतंस्थितंदृष्ट्वामाल्यवंतमिवाचलम् ॥ उवाचराक्षसेंद्रंतंदेवराजानुजोबली ॥ ६ ॥ युष्मत्तोभयभीतानांदेवानांवैमयाभयम् ॥ राक्षसोत्सादनंदत्तंतदेतदनुपाल्यते ॥ ७ ॥ प्राणैरपिप्रियंकार्यंदेवानांहिसदामया ॥ सोहंवोनिहनिष्यामिरसातलगतानपि ॥ ८ ॥ देवदेवंब्रुवाणंतंरक्तांबुरुहलोचनम् ॥ शक्त्याबिभेदसंक्रुद्धोराक्षसेंद्रोभुजांतरे ॥ ९ ॥ माल्यवद्भुजनिर्मुक्ताशक्तिर्घंटाकृतस्वना ॥ हरेरुरसिबभ्राजमेघस्थेवशतह्रदा ॥ १० ॥

यह कह राक्षसराज माल्यवान्को पर्वतकी समान टिकाहुआ देखकर महाबलवान् देवराजके अनुज विष्णुजी उससे बोले ॥ ६ ॥ तुम लोगोंके भयसे भीत देवताओंको हमने राक्षसनाशरूप अभयदान दियाहै सो इस समय राक्षसोंका विनाश करके हम वह प्रतिज्ञा पूरी करते हैं ॥ ७ ॥ प्राणोंसेभी देवताओंका प्रियकार्य करना हमारा सदाही योग्य कर्तव्यहै; तुम चाहे पातालमें प्रवेश करो तोभी हम तुम सबको मार डालेंगे ॥ ८ ॥ लाल कमलके समान नेत्रवाले देवदेव विष्णुजी इस प्रकार से कहही रहेथे कि इतनेहीमें राक्षसश्रेष्ठ माल्यवानने क्रोधके वश हो शक्तिसे उनकी दोनों बाहोंके बीच छातीमें घाव किया ॥ ९ ॥ उस समय वह माल्यवानकी बाँहोंसे चलाई हुई शक्ति घंटेके शब्दसे शब्दायमान होतीहुई सौदामिनी (बिजली) ...

शक्तिधर प्रिय कमलदललोचन हरिने तत्कालही उस शक्तिको उठायकर माल्यवान्के ऊपर चलाया ॥ ११ ॥ बडाभारी ... प्रकार अंजन पर्वतको आ
दौडती है वैसेही वह शक्ति गोविंद नारायणके हाथसे छूटकर स्वामिकार्तिकजीके समान राक्षसके संहार करनेकी अभिलाषासे दौडी ॥१२॥ जिस प्रकार वज्र पर्वतके
शिखरपर गिरे वैसेही वह शक्ति राक्षसश्रेष्ठ माल्यवान्की हारमालाविभूषित विशाल छातीमें जायकर लगी ॥१३॥ शक्ति प्रहारसे कवच कट जानेपर माल्यवान
अतिमोहको प्राप्त हुआ परन्तु फिर सावधानहो पर्वतकी समान अचलहो उठा ॥ १४ ॥ तिसके पीछे बहुतसारे कांटोंसे युक्त काले लोहेसे बनाहुआ शूल लेकर
माल्यवानने देवताओंमें श्रेष्ठ विष्णुजीकी छातीमें अतिजोरसे मारा ॥ १५ ॥ और वह रणप्रिय निशाचर इन्द्रजीके अनुज विष्णुजीको मूका मारकर तीन हाथ

ततस्तामंबरोत्कृष्यशक्तिंशक्तिधरप्रियः ॥ माल्यवंतंसमुद्दिश्यचिक्षेपांबुरुहेक्षणः ॥ ११ ॥ स्कंदोत्सृष्टेवसाशक्तिर्गोविंदकरनिःसृता ॥ कांक्षंती राक्षसंप्रायान्महोल्केवांजनाचलम् ॥ १२ ॥ सातस्योरसिविस्तीर्णेहारभारावभासिते ॥ आपतद्राक्षसेंद्रस्यगिरिकूटइवाशनिः ॥१३॥ तयाभिन्नतनुत्राणःप्राविशद्विपुलंतमः ॥ माल्यवान्पुनराश्वस्तस्तस्थौगिरिरिवाचलः ॥ १४ ॥ ततःकालायसंशूलंकंटकैर्बहुभिश्चितम् ॥ प्रगृह्याभ्यहनद्देवंस्तनयोरंतरेदृढम् ॥ १५ ॥ तथैवरणरक्तस्तुमुष्टिनावासवानुजम् ॥ ताडयित्वाधनुर्मात्रमपक्रांतोनिशाचरः ॥ १६ ॥ ततोंबरेमहाञ्छब्दः साधुसाध्वितिचोत्थितः ॥ आहत्यराक्षसोविष्णुंगरुडंचाप्यताडयत् ॥ १७ ॥ वैनतेयस्ततःक्रुद्धःपक्षवातेनराक्षसम् ॥ व्यपोहद्बलवान्वायुः शुष्कपर्णचयंयथा ॥ १८ ॥ द्विजेंद्रपक्षवातेनद्रावितंदृश्यपूर्वजम् ॥ सुमालीस्वबलैःसार्धंलंकामभिमुखोययौ ॥ १९ ॥ पक्षवातबलोद्धूतोमाल्यवानपिराक्षसः ॥ स्वबलेनसमागम्यययौलंकांह्रियावृतः॥ २० ॥ एवंतेराक्षसारामहरिणाकमलेक्षण ॥ बहुशःसंयुगेभग्नाहतप्रवरनायकाः ॥२१॥

पीछे हटगया ॥ १६ ॥ तब आकाशमंडलमें "साधु साधु" यह बडाभारी शब्द हुआ राक्षसने विष्णुजीको मार फिर गरुडजीके ऊपर प्रहार किया ॥ १७ ॥ फिर
बलवान् विनताके पुत्र गरुडजीने महाक्रोधकर पवनसे उडते हुए सूखे पत्तोंकी समान राक्षसको बहुत दूर फेंक दिया ॥१८॥ अपने बडे भाई माल्यवान्को पक्षि
राज गरुडजीके पंखोंकी पवनसे ताडित देखकर सुमाली सेनाके सहित लंकाको भागगया ॥ १९ ॥ पंखोंसे उत्पन्न पवनके बलसे फेंका जायकर माल्यवान
राक्षसभी लाजके मारे अपनी सेनामें जाय घुसा ॥ २० ॥ हे कमललोचन श्रीरामचन्द्रजी! इस प्रकारसे भगवान् हरिने उन राक्षसोंको अनेक बार रण..

पद्मनाभ नारायणजी पीछे २ धायकर जब उस राक्षसोंकी सेनाको मारतेही गये, तो माल्यवान् राक्षस लंकापुरीतक पहुँचकर फिर लौटा, जैसे तीरपर पहुँच कर समुद्रका जल फिर शीघ्र लौट जाताहै ॥ १ ॥ फिर निशाचर माल्यवान् क्रोधके मारे लाल २ नेत्रकर, शिर कँपाय पुरुषोत्तम पद्मनाभ श्रीनारायणजीसे यह बोला ॥ २ ॥ हे नारायण ! तुम प्राचीन क्षत्रियोंके धर्मको नहीं जानते कारण कि हम तो भीत होकर युद्ध करनेकी इच्छा नहीं करते हैं तथापि तुम नीचकी समान हम लोगोंको मारेही डालतेहो ॥ ३ ॥ हे सुरेश्वर ! जो भागेहुए पुरुषका वधजनित पाप करताहै वह पुण्यकर्मकारियोंके जाने योग्य स्वर्गको प्राप्त नहीं होता ॥४॥ हे शंख चक्र-गदाधर ! यदि तुमको बहुतही युद्धका अभिलाष हुआहै तो लीजिये हम यह टिके हुए हैं; आपमें जो कुछ बलहै सो दिखाइये ॥५॥

हन्यमानेबलेतस्मिन्पद्मनाभेनपृष्ठतः ॥ माल्यवान्सन्निवृत्तोथवेलामेत्यइवार्णवः ॥ १ ॥ संरक्तनयनःक्रोधाच्चलन्मौलिर्निशाचरः ॥ पद्मनाभमिदंप्राहवचनंपुरुषोत्तमम् ॥ २ ॥ नारायणनजानीसेक्षात्रधर्मंपुरातनम् ॥ अयुद्धमनसोभीतानस्मान्हंसियथेतरः ॥ ३ ॥ पराङ्मुखवधंपापंयःकरोतिसुरेश्वर ॥ सहंतानगतःस्वर्गंलभतेपुण्यकर्मणाम् ॥ ४ ॥ युद्धश्रद्धाथवातेऽस्तिशंखचक्रगदाधर ॥ अहंस्थितोस्मिपश्यामिबलंदर्शययत्तव ॥ ५ ॥ माल्यवंतंस्थितंदृष्ट्वामाल्यवंतमिवाचलम् ॥ उवाचराक्षसेंद्रंतंदेवराजानुजोबली ॥ ६ ॥ युष्मत्तोभयभीतानांदेवानांवैमयाभयम् ॥ राक्षसोत्सादनंदत्तंतदेतदनुपाल्यते ॥ ७ ॥ प्राणैरपिप्रियंकार्यंदेवानांहिसदामया ॥ सोहंवोनिहनिष्यामिरसातलगतानपि ॥ ८ ॥ देवदेवंब्रुवाणंतंरक्तांबुरुहलोचनम् ॥ शक्त्याबिभेदसंक्रुद्धोराक्षसेंद्रोभुजांतरे ॥ ९ ॥ माल्यवद्भुजनिर्मुक्ताशक्तिर्घंटाकृतस्वना ॥ हरेरुरसिबभ्राजमेघस्थेवशतह्रदा ॥ १० ॥

यह कह राक्षसराज माल्यवान्‌को पर्वतकी समान टिकाहुआ देखकर महाबलवान् देवराजके अनुज विष्णुजी उससे बोले ॥ ६ ॥ तुम लोगोंके भयसे भीत देवताओंको हमने राक्षसनाशरूप अभयदान दियाहै सो इस समय राक्षसोंका विनाश करके हम वह प्रतिज्ञा पूरी करते हैं ॥ ७ ॥ प्राणोंसेभी देवतोंका प्रियकार्य करना हमारा सदाही योग्य कर्तव्यहै; तुम चाहे पातालमें प्रवेश करो तोभी हम तुम सबको मार डालेंगे ॥ ८ ॥ लाल कमलके समान नेत्रवाले देवदेव विष्णुजी इस प्रकार से कहही रहेथे कि इतनेहीमें राक्षसश्रेष्ठ माल्यवानने क्रोधके वश हो शक्तिसे उनकी दोनों बाहोंके बीच छातीमें घाव किया ॥ ९ ॥ उस समय वह माल्यवानकी बाँहोंसे चलाई हुई शक्ति घंटोंके शब्दसे ... बीचमें सौदामिनी (बिजली) युक्त मेघकी समान शोभायमान होने लगी ॥ १० ॥

गक्तिरर फिर कमलदललोचन हरिने वत्कालही उस श के । उठायकर माल्यवान् . . . . . . [illegible] प्रकार अजन [illegible] और
दौडीहै; ऐसेही वह शक्ति गोविंद नारायणके हाथमे छूटकर स्वामिकार्तिकजीके समान राक्षसके संहार करनेकी अभिलाषासे दौडी ॥१२॥ जिस प्रकार वज्र पर्वतके शिखरपर गिरे ऐसेही वह शक्ति राक्षसश्रेष्ठ माल्यवानकी हारमालाविभूपित विशाल छातीमें जायकर लगी ॥१३॥ शक्ति प्रहारसे कवच कट जानेपर माल्यवान् अतिसंतको प्राप्त हुआ परन्तु फिर सावधानहो पर्वतकी समान अचलहो उठा ॥ १४ ॥ तिसके पीछे बहुतसारे कांटोंसे युक्त काले लोहेसे बनाहुआ शूल लेकर माल्यवानने देवताओंमें श्रेष्ठ विष्णुजीकी छातीमें अतिजोरसे मारा ॥ १५ ॥ और वह रणप्रिय निशाचर इन्द्रजीके अनुज विष्णुजीको मूका मारकर तीन हाथ

ततस्तामंसनोत्कृष्यशक्तिंशक्तिधरप्रियः ॥ माल्यवंतंसमुद्दिश्यचिक्षेपांबुरुहेक्षणः ॥ ११ ॥ स्कंदोत्सृष्टेवसाशक्तिर्गोविंदकरनिःसृता ॥ कांक्षंती राक्षसंप्रायान्महोल्केवांजनाचलम् ॥ १२ ॥ सातस्योरसिविस्तीर्णहारभारावभासिते ॥ आपतद्राक्षसेंद्रस्यगिरिकूटइवाशनिः ॥१३॥ तयाभिन्नतनुत्राणःप्राविशद्विपुलंतमः ॥ माल्यवान्पुनराश्वस्तस्तस्थौगिरिरिवाचलः ॥ १४ ॥ ततःकालायसंशूलंकंटकैर्बहुभिश्चितम् ॥ प्रगृह्याभ्यहनद्देवंस्तनयोरंतरेदृढम् ॥ १५ ॥ तथैवरणरक्तस्तुमुष्टिनावासवानुजम् ॥ ताडयित्वाधनुर्मात्रमपक्रांतोनिशाचरः ॥ १६ ॥ ततोंबरेमहाञ्छब्दः साधुसाध्वितिचोत्थितः ॥ आहत्यराक्षसोविष्णुंगरुडंचाप्यताडयत् ॥ १७ ॥ वैनतेयस्ततःक्रुद्धःपक्षवातेनराक्षसम् ॥ व्यपोहद्बलवान्वायुः शुष्कपर्णचयंयथा ॥ १८ ॥ द्विजेंद्रपक्षवातेनद्रावितंदृश्यपूर्वजम् ॥ सुमालीस्वबलैःसार्धंलंकामभिमुखोययौ ॥ १९ ॥ पक्षवातबलोद्धूतोमाल्यवानपिराक्षसः ॥ स्वबलेनसमागम्यययौलंकांह्रियावृतः॥ २० ॥ एवंतेराक्षसारामहरिणाकमलेक्षण ॥ बहुशःसंयुगेभग्नाहतप्रवरनायकाः ॥२१॥

पीछे हटगया ॥ १६ ॥ तब आकाशमंडलमें "साधु साधु" यह बडाभारी शब्द हुआ राक्षसने विष्णुजीको मार फिर गरुडजीके ऊपर प्रहार किया ॥ १७ ॥ फिर पश्चात् विनताके पुत्र गरुडजीने महाक्रोधकर पवनसे उडते हुए सूखे पत्तोंकी समान राक्षसको बहुत दूर फेंक दिया ॥१८॥ अपने बडे भाई माल्यवान्को पक्षिराज गरुडजीके पंखोंकी पवनसे ताडित देखकर सुमाली सेनाके सहित लंकाको भागगया ॥ १९ ॥ पंखोंसे उत्पन्न पवनके बलसे फेंका जायकर माल्यवान् राक्षसभी लाजके मारे अपनी सेनामें जाय घुसा ॥ २० ॥ हे कमललोचन श्रीरामचन्द्रजी! इस प्रकारसे भगवान् हरिने उन राक्षसोंको अनेक वार रणमें

भगाया; और उनमें मुखिया २ सेनापतियोंका संहार किया ॥२१॥ वह बलसे पीडित हुए राक्षस विष्णुजीके साथ युद्ध करनेमें असमर्थ हो लंकाको छोड अपनी २ स्त्रियोंके साथ पाताल लोकमें रहनेको चलेगये. ॥ २२ ॥ हे रघुनंदनश्रेष्ठ ! विख्यात बलवीर्यवाले राक्षस सालकटंकटाके वंशवाले सुमाली राक्षसका आश्रय लेकर समय बिताने लगे ॥ २३ ॥ हे राम ! तुमने पुलस्त्यवंशवाले जिन समस्त राक्षसोंका संहार कियाहै महाभाग सुमाली माल्यवान् और माली यह सबही उनसे प्रधान थे अधिक क्या कहैं यह रावणसेभी अधिक बलवान थे ॥ २४ ॥ शंख चक्र गदाधारी देव नारायणके सिवाय और कोईभी देवताओंको पीडा देनेवाले सुरशत्रु राक्षसोंका संहार नहीं कर सकताहै ॥ २५ ॥ तुमही चार भुजावाले देव सनातन नारायण हो आपही अजित प्रभु अविनाशी हैं परन्तु

अशक्नुवंतस्तेविष्णुंप्रतियोद्धुंबलार्दिताः ॥ त्यक्त्वालंकांगतावस्तुंपातालंसहपत्नयः॥२२॥ सुमालिनंसमासाद्यराक्षसंरघुसत्तम॥ स्थिताःप्रख्यातवीर्यास्तेवंशेसालकटंकटे ॥ २३ ॥ येत्वयानिहतास्तेतुपौलस्त्यानामराक्षसाः ॥ सुमालीमाल्यवान्मालीयेचतेपांपुरःसराः ॥ सर्वएतेमहाभागारावणाद्बलवत्तराः ॥ २४ ॥ नचान्योराक्षसान्हंतासुरारीन्देवकंटकान् ॥ ऋतेनारायणंदेवंशंखचक्रगदाधरम् ॥ २५ ॥ भवान्नारायणोदेवश्चतुर्बाहुःसनातनः ॥ राक्षसान्हंतुमुत्पन्नोह्यजय्यःप्रभुरव्ययः ॥ २६ ॥ नष्टधर्मव्यवस्थानांकालेकालेप्रजाकरः ॥ उत्पद्यतेदस्युवधेशरणागतवत्सलः ॥ २७ ॥ एषामयातवनराधिपराक्षसानामुत्पत्तिरद्यकथितासकलायथावत् ॥ भूयोनिबोधरघुसत्तमरावणस्यजन्मप्रभावमतुलंससुतस्यसर्वम् ॥ २८ ॥ चिरात्सुमालीव्यचरद्रसातलंसराक्षसोविष्णुभयार्दितस्तदा ॥ पुत्रैश्चपौत्रैश्चसमन्वितोबलीततस्तुलंकामवसद्धनेश्वरः ॥२९॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडेऽष्टमःसर्गः ॥ ८ ॥

आप राक्षसका नाश करनेके लिये मायारूपसे उत्पन्न हुए हैं ॥ २६ ॥ आप नष्ट हुए धर्मकी सुव्यवस्था कियाकरतेहैं; आप समय २ पर प्रजाकी सृष्टि करतेहैं; आप शरणागतवत्सल हैं; बस इस कारणसे अधर्मी पापाचारोंका वध करनेके लिये समय २ पर आपको अपनी मायासे रूप धारण करना पडताहै ॥ २७ ॥ हे नरनाथ ! आज आपके निकट राक्षसोंका यह समस्त उत्पत्तिवृत्तान्त कहा । हे रघुश्रेष्ठ ! रावण और उसके पुत्रोंका जन्म व अतुल प्रभावका वर्णन हम फिर आदिसे अंततक कहतेहैं आप श्रवण करैं ॥ २८ ॥ जब वह बलवान् राक्षस सुमाली विष्णुजीके भयसे पीडित बेटे पोतोंके सहित बहुत कालतक पाताल मेंही विचरता रहा, तब उसकाल कुबेरजी लंकामें वास करते रहे ॥ २९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषाटीकायामष्टमः सर्गः ॥ ८ ॥

इसके उपरान्त कुछ काल बीतनेपर सुमाली नाम राक्षस [illegible] ॥ १ ॥ नीले बादलकी समान तपाये हुए सुवर्णके कुंडल पहरे वह सुमाली घूमनेके समय पद्मरहित लक्ष्मीकी समान कुमारी बेटीको संगमें लेलेता हुआ ॥ २ ॥ इसप्रकारसे पृथ्वीपर घूमते २ उस राक्षसनाथने पुष्पक विमानपर बैठेहुए कुबेरजीको देखा ॥ ३ ॥ पुलस्त्यजीके पुत्र विभु धनेश्वर कुबेरजी उस समय पिताजीके दर्शनको पुष्पक विमानपर चढकर जाय रहेथे, देवताकी समान व अग्निकी नाईं उन कुबेरजीको जाताहुआ देख ॥ ४ ॥ राक्षस मृत्युलोकसे विस्मयसहित पातालको चलागया, महामति राक्षस वहां जायकर इस प्रकारकी चिन्ता करने लगा ॥ ५ ॥ "किस श्रेष्ठ कार्य करनेसे हम लोगोंकी ऐसी बढती हो ?" नीले बादलकी समान तपाये हुए सुवर्णके कुंडल पहरे ॥ ६ ॥

कस्यचित्त्वथकालस्यसुमालीनामराक्षसः ॥ रसातलान्मर्त्यलोकंसर्वंवैविचचारह ॥ १ ॥ नीलजीमूतसंकाशस्तप्तकांचनकुंडलः ॥ कन्यांदुहितरंगृह्यविनापद्ममिवश्रियम् ॥ २ ॥ राक्षसेंद्रःसतुतदाविचरन्वैमहीतले ॥ तदापश्यत्सगच्छंतंपुष्पकेणधनेश्वरम् ॥ ३ ॥ गच्छंतंपितरंद्रष्टुंपुलस्त्यतनयंविभुम् ॥ तंदृष्ट्वामरसंकाशंगच्छंतंपावकोपमम् ॥ ४ ॥ रसातलंप्रविष्टःसन्मर्त्यलोकात्सविस्मयः ॥ इत्येवंचिंतयामासराक्षसानांमहामतिः ॥ ५ ॥ किंकृत्वाश्रेयइत्येवंवर्धेमहिकथंवयम् ॥ नीलजीमूतसंकाशस्तप्तकांचनकुंडलः ॥ ६ ॥ राक्षसेंद्रःसतुतदाचिंतयत्सुमहामतिः ॥ अथाब्रवीत्सुतांरक्षःकैकसींनामनामतः ॥ ७ ॥ पुत्रिप्रदानकालोऽयंयौवनंव्यतिवर्तते ॥ प्रत्याख्यानाच्चभीतैस्त्वंनवरैःपरिगृह्यसे ॥ ८ ॥ त्वत्कृतेचवयंसर्वेयंत्रिताधर्मबुद्धयः ॥ त्वंहिसर्वगुणोपेताश्रीःसाक्षादिवपुत्रिके ॥ ९ ॥ कन्यापितृत्वंदुःखंहिसर्वेषांमानकांक्षिणाम् ॥ नज्ञायतेचकःकन्यांवरयेदितिकन्यके ॥ १० ॥ मातुःकुलंपितृकुलंयत्रचैवचदीयते ॥ कुलत्रयंसदाकन्यासंशयेस्थाप्यतिष्ठति ॥ ११ ॥

महामति उस कालमें ऐसी चिन्ता करके कैकसी नामक अपनी बेटीसे बोला ॥ ७ ॥ हे बेटी ! तुम्हारी यह अवस्था बीती जातीहै, इससे तुमको विवाह देनेका यही उचित समय है, कदाचित् तुम उसको अंगीकार न करो, इसी आशंकासे भीतहो कोईभी पात्र तुमको ग्रहण नहीं करताहै ॥ ८ ॥ हे बेटी ! तुम साक्षात् लक्ष्मीकी समान समस्त गुणोंसे भूषितहो; इस कारण हम सब धर्ममें बुद्धि स्थापन करके तुम्हारे योग्य वर प्राप्त करनेके लिये यत्न कररहे हैं ॥ ९ ॥ मानके चाहनेवाले पुरुषोंके लिये कन्याका पिता होना बडेही दुःखकी बातहै; वह दिन रात यही विचार करतेहैं कि " यह कन्या किसको दीजायगी " परन्तु कन्या इस दुःखको नहीं जानती ॥ १० ॥ माताके कुलको, पिताके कुलको, श्वशुरके कुलको इन तीन कुलोंको कन्या सदा संशयमें डालकर टिकी रहतीहै ॥ ११ ॥

हे पुत्रि ! अपनाशीश कुलमें उत्पन्न हुए मुनिश्रेष्ठ पुलस्त्यजीके पुत्र विश्रवाजीके निकट जाय उनको तुम अपना पति बनालो ॥१२॥ हे बेटी ! जो तुम उनको अपना पति बनालोगी तो तेजमें सूर्यकी समान इस धनेश्वर कुबेरकी समान तुम्हारेभी पुत्र उत्पन्न होंगे इसमें कुछ संदेह नहीं ॥१३॥ वह कन्या ऐसे वचन सुन पिताजीके गौरवके मारे वहांपर जाकर खडी होगई कि, जहां विश्रवाजी मुनि तप कर रहेथे ॥ १४ ॥ हे श्रीरामचन्द्रजी ! उस कालमें पुलस्त्यजीके पुत्र ब्राह्मणश्रेष्ठ विश्रवाजी चौथे अग्निके समान दमकते समय अग्निहोत्रकी उपासना कर रहेथे ॥ १५ ॥ कैकसी उस दारुण प्रदोष कालका कुछ विचार न करके पिताके गौरवके मारे मुनिके निकट जाय उनके चरणोंमें दृष्टि लगाय खडी होगई ॥ १६ ॥ और वह भामिनी वारंवार अपने पांवके अँगूठेसे पृथ्वीको कुरेदने लगी;

मानसुनिरश्रेष्ठंप्रजापतिकुलोद्भवम् ॥ भजविश्रवसंपुत्रिपौलस्त्यंवरयस्वयम् ॥ १२ ॥ ईदृशास्तेभविष्यंतिपुत्रापुत्रिनसंशयः ॥ तेजसाभास्करसमोयादृशोयंधनेश्वरः ॥ १३ ॥ सातुतद्वचनंश्रुत्वाकन्यकापितृगौरवात् ॥ तत्रगत्वाचसातस्थौविश्रवायत्रतप्यते ॥ १४ ॥ एतस्मिन्नंतरेरामपुलस्त्यतनयोद्विजः अग्निहोत्रमुपातिष्ठच्चतुर्थइवपावकः ॥ १५ ॥ अविचिंत्यतुतांवेलांदारुणांपितृगौरवात् ॥ उपसृत्याग्रतस्तस्यचरणाधोमुखीस्थिता ॥ १६ ॥ विलिखंतीमुहुर्भूमिमंगुष्ठाग्रेणभामिनी ॥ सतुतांवीक्ष्यसुश्रोणींपूर्णचंद्रनिभाननाम् ॥ १७ ॥ अब्रवीत्परमोदारोदीप्यमानस्तेजसा ॥ भद्रेकस्यासिदुहिताकुतोवात्वमिहागता ॥ किंकार्यंकस्यवाहेतोस्तत्त्वतोब्रूहिशोभने ॥१८॥ एवमुक्तातुसाकन्याकृतांजलिरथाब्रवीत् ॥ आत्मप्रभावेणमुनेज्ञातुमर्हसिमेमतम् ॥१९॥ किंतुमांविद्धिब्रह्मर्षेशासनात्पितुरागताम् ॥ कैकसीनामनाम्नाहंशेषंत्वंज्ञातुमर्हसि ॥ २० ॥ सतुगत्वामुनिर्ध्यानंवाक्यमेतदुवाचह ॥ विज्ञातंतेमयाभद्रेकारणंयन्मनोगतम् ॥ २१ ॥

उस पूर्णिमाके चन्द्रमाकी समान मुखवाली परमसुन्दरीको देख ॥ १७ ॥ परम उदार स्वभाववाले अपने तेजसे दीप्तिमान् ऋषिजी उस कन्यासे बोले कि, " हे भद्रे ! तुम किसकी बेटीहो ? और किस स्थानसे यहांपर आई हो ? किसके निमित्त आईहो ? व हमको कौनसा कार्य करना होगा ? हे शोभने ! तुम यह समस्त वृत्तान्त ठीक २ हमसे कहो " ॥ १८ ॥ वह कन्या इस भाँतिसे पूँछे जानेपर हाथ जोडकर बोली कि, हे महाराज ! आप अपने प्रभावसेही हमारे मनका वृत्तान्त जान लें ॥१९॥ हे ब्रह्मर्षे ! हमारा नाम कैकसी, हम अपने पिताके कहनेसे यहां आई हैं, शेष वृत्तान्त हम नहीं कह सकतीं सब आप

हे मतवाले हाथीके समान चालवाली तुम ... दारुणस्वभाव और दारुणरूप होंगे ॥२३॥ हे सुश्रोणी ! ऐसे क्रूर कर्मकारी राक्षसोंको तुम उत्पन्न करोगे,
उत्पन्न करोगी वह सुनो, क्रूर बन्धु बान्धवोंके प्यारे दारुणस्वभाव और दारुणरूप होंगे ॥२३॥ हे सुश्रोणी ! ऐसे क्रूर कर्मकारी राक्षसोंको तुम उत्पन्न करोगे, आप ब्रह्मवादी हैं इसलिये आपके निकटसे हम ऐसे दुराचारी पुत्रोंको उत्पन्न करना नहीं
कैकसी उनके वचन सुन प्रणाम कर बोली ॥ २४ ॥ कि, हे भगवन् ! आप ब्रह्मवादी हैं इसलिये आपके निकटसे हम ऐसे दुराचारी पुत्रोंको उत्पन्न करना नहीं मुनिश्रेष्ठ विश्रवाजी इस कन्याके ऐसे वचन सुनकर कैकसीसे फिर बोले, जिस
चाहतीं, इस कारण जिसमें उत्तम पुत्र उत्पन्न हों ऐसा अनुग्रह कीजिये ॥ २५ ॥ मुनिश्रेष्ठ विश्रवाजी इस कन्याके ऐसे वचन सुनकर कैकसीसे फिर बोले, जिस प्रकार पूर्ण चन्द्रमा रोहिणीसे बोलते हैं ॥ २६ ॥ हे श्रेष्ठ मुखवाली ! तुम्हारा छोटा पुत्र हमारे वंशके अनुरूप धर्मात्मा होगा, इसमें कुछभी संदेह नहीं ॥ २७ ॥

दारुणायांतुवेलायांयस्मात्त्वंमामुपस्थिता ॥२२॥ शृणुतस्मात्सुतान्भद्रेयादृशाञ्जनयिष्यसि ॥ दारुणान्दारुणाकारान्दारुणाभिजनप्रियान् ॥२३॥ प्रसविष्यसिसुश्रोणिराक्षसान्क्रूरकर्मणः ॥ सातुतद्वचनंश्रुत्वाप्रणिपत्याब्रवीद्वचः ॥२४॥ भगवन्नीदृशान्पुत्रांस्त्वत्तोहंब्रह्मवादिनः ॥ नेच्छामिसुदुराचारान्प्रसादंकर्तुमर्हसि ॥ २५ ॥ कन्ययात्वेवमुक्तस्तुविश्रवामुनिपुंगवः ॥ उवाचकैकसींभूयःपूर्णेंदुरिवरोहिणीम् ॥ २६ ॥ पश्चिमोयस्तवसुतोभविष्यतिशुभानने ॥ ममवंशानुरूपःसधर्मात्माचनसंशयः ॥ २७ ॥ एवमुक्तातुसाकन्यारामकालेनकेनचित् ॥ जनयामासबीभत्संरक्षोरूपंसुदारुणम् ॥ २८ ॥ दशग्रीवंमहादंष्ट्रंनीलांजनचयोपमम् ॥ ताम्रोष्ठंविंशतिभुजंमहास्यंदीप्तमूर्धजम् ॥ २९ ॥ तस्मिञ्जातेततस्तस्मिन्सज्वालकवलाःशिवाः ॥ क्रव्यादाश्चापसव्यानिमंडलानिप्रचक्रमुः ॥ ३० ॥ ववर्षरुधिरंदेवोमेघाश्चखरनिस्वनाः ॥ प्रबभौनचसूर्योवैमहोल्काश्चापतन्भुवि ॥ ३१ ॥ चकंपेजगतीचैववव्युर्वाताःसुदारुणाः ॥ अक्षोभ्यःक्षुभितश्चैवसमुद्रःसरितांपतिः ॥ ३२ ॥ अथनामाकरोत्तस्यपितामहसमःपिता ॥ दशग्रीवःप्रसूतोऽयंदशग्रीवोभविष्यति ॥ ३३ ॥

हे राम ! वह कन्या इसप्रकारसे कहीजाकर कुछ समयके बीतनेपर दारुण व बीभत्स राक्षस उत्पन्न करतीहुई ॥ २८ ॥ इसके दश शिर बडे विशालथे, बाल चमकीलेथे, ओंठ अधर तांबेके रंगके समान लालथे, बीस भुजा थीं, रंग काले अंजनकी समान नीलाथा ॥ २९ ॥ जब इस पुत्रने जन्मग्रहण किया तब शृगालियें मुखसे ज्वाला उगलने लगीं। मांस खानेवाले गिद्धादि पक्षी बाईं ओरको मंडल बांधकर घूमने लगे ॥ ३० ॥ देवतोंने रुधिर वर्षाना आरंभ किया, मेघ अतिशब्दसे गर्जने लगे, सूर्यमें दीप्ति न रही, बडी भारी उल्का पृथ्वीपर गिरी ॥ ३१ ॥ पृथ्वी कंपायमान होगई, दारुण पवन चलने लगी, अचल नदीपति समुद्र खलबलाय उठा ॥ ३२ ॥ तिसके पीछे पितामह ब्रह्माजीकी समान उसके पिताने उसका नामकरण किया, यह बालक दशगर्दन होकर जन्मा है इस कारण इसका "दशग्रीव" नाम होगा ॥ ३३ ॥

जिसके शरीरके परिमाणसे बडे परिमाणवाला और कोई इस जगत्में विद्यमान नहीं है; ऐसे महाबली कुंभकर्णका जन्म इसके पीछे हुआ ॥ ३४ ॥ तिसके पीछे विकराकारवाली शूर्पणखा जन्मी। धर्मात्मा विभीषणजी कैकसीके सबसे छोटे (पिछले) पुत्र हुए ॥३५॥ उन महासत्ववान् विभीषणजीका जन्म होतेही आकाशसे देवतोंने नगाडे बजाये, फूल वर्षाये और आकाशसे वारंवार " धन्य २" शब्द उत्पन्नहोने लगा ॥३६॥ रावण और कुम्भकर्ण यह दोनों सब लोकोंके व्याकुल कर नेवाले उस महावनमें बढनेलगे ॥ ३७ ॥ यह कुम्भकर्ण धर्मवत्सल महर्षियोंको भक्षण करके सदा असन्तुष्टहो त्रिलोकीमें घूमने लगा ॥ ३८ ॥ परन्तु विभीष णजी धर्मशील होनेके कारण सदाही विधिपूर्वक धर्मकार्यमें लगे रहते; विशेष करकेवह इन्द्रियोंको जीत वेदशास्त्रसंमत आहार करतेथे ॥ ३९ ॥ कुछ समयके

तस्यत्वनंतरंजातःकुंभकर्णोमहाबलः ॥ प्रमाणाद्यस्यविपुलंप्रमाणंनेहविद्यते ॥ ३४ ॥ ततःशूर्पणखानामसंजज्ञेविकृतानना ॥ विभीषणश्च धर्मात्माकैकस्याःपश्चिमःसुतः ॥ ३५ ॥ तस्मिञ्जातेमहासत्त्वेपुष्पवर्षंपपातह ॥ नभःस्थानेदुंदुभयोदेवानांप्राणदंस्तथा ॥ वाक्यंचैवांतरिक्षे चसाधुसाध्वितितत्तदा ॥ ३६ ॥ तौतुतत्रमहारण्येववृधातेमहौजसौ ॥ कुंभकर्णदशग्रीवौलोकोद्वेगकरौतदा ॥ ३७ ॥ कुंभकर्णःप्रमत्तस्तुमहर्षी न्धर्मवत्सलान् ॥ त्रैलोक्येनित्यसंतुष्टोभक्षयन्विचचारह ॥ ३८ ॥ विभीषणस्तुधर्मात्मानित्यंधर्मव्यवस्थितः ॥ स्वाध्यायनियताहारउवास विजितेंद्रियः ॥ ३९ ॥ अथवैश्रवणोदेवस्तत्रकालेनकेनचित् ॥ आगतःपितरंद्रष्टुंपुष्पकेणधनेश्वरः ॥ ४० ॥ तंदृष्ट्वाकैकसीतत्रज्वलंतमिवते जसा ॥ आगम्यराक्षसीतत्रदशग्रीवमुवाचह ॥ ४१ ॥ पुत्रवैश्रवणंपश्यभ्रातरंतेजसावृतम् ॥ भ्रातृभावेसमेचापिपश्यात्मानंत्वमीदृशम् ॥ ४२ ॥ दशग्रीवतथायत्नंकुरुष्वामितविक्रम ॥ यथात्वमपिमेपुत्रभवेर्वैश्रवणोपमः ॥ ४३ ॥ मातुस्तद्वचनंश्रुत्वादशग्रीवःप्रतापवान् ॥ अमर्षमतुलंलेभे प्रतिज्ञांचाकरोत्तदा ॥ ४४ ॥ सत्यंतेप्रतिजानामिभ्रातृतुल्योऽधिकोऽपिवा ॥ भविष्याम्योजसाचैवसंतापंत्यजहृद्गतम् ॥ ४५ ॥

पीछे वैश्रवण देवता धनेश्वर कुबेरजी पुष्पक विमानपर चढ अपने पिताजीके दर्शन करनेको आये ॥ ४० ॥ कुबेरजीको अपने तेजसे प्रदीप्त देख राक्षसी कैकसी अपने पुत्र दशग्रीवसे बोली ॥४१॥ हे पुत्र ! तुम अपने द्युतिमान् भ्राता वैश्रवण कुबेरको देखो, भायपन समान होनेपरभी कुबेरसे अपनेकूं तू हीन अवस्थामें देख ॥ ४२ ॥ इसलिये हे अमितविक्रमकारी पुत्र दशग्रीव ! जिससे तू कुबेरकी समान ऐश्वर्यवान् होसके ऐसा यत्न कर ॥ ४३ ॥ उस कालमें माताके ऐसे वचन

या करना ठान अपने छोटे भ्राताओंके साथ दुष्कर कार्य करनेका अभिलाष करता हुआ ॥ ४६ ॥ दशग्रीव "तपस्यासे मन वांछित फल प्राप्त होगा" करके कार्यका आश्रय ले तप सिद्ध करनेको गोकर्णनामक आश्रममें आया ॥४७॥ वह उग्र विक्रमवाला राक्षस अपने छोटे भ्राताओंके सहित अनुपम तप करके विभु ब्रह्माजीको प्रसन्न करता हुआ। तब ब्रह्माजीने परमप्रसन्न होकर बहुतसे जयदायक वरदान दिये ॥४८॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० उत्तरकांडे भाषाटीकायां नवमः सर्गः॥९॥ इसके उपरान्त श्रीरामचन्द्रजीने अगस्त्यजीसे कहा,हे ब्रह्मन्! महाबलवान उन समस्त भ्राताओंने वनमें किसप्रकार कैसी तपस्या कीथी?॥ १॥ ऋषि अगस्त्यजी

ततःक्रोधेनतेनैवदशग्रीवःसहानुजः ॥ चिकीर्षुर्दुष्करंकर्मतपसेधृतमानसः ॥ ४६ ॥ प्राप्स्यामितपसाकाममितिकृत्वाऽध्यवस्यच ॥ आगच्छदात्मसिद्ध्यर्थंगोकर्णस्याश्रमंशुभम् ॥ ४७ ॥ सराक्षसस्तत्रसहानुजस्तदातपश्चचारातुलमुग्रविक्रमः ॥ अतोषयच्चापिपितामहंविभुंददौसतुष्टश्चवराञ्जयावहान् ॥ ४८ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा०वा०आ०उत्तरकांडे नवमः सर्गः ॥ ९ ॥ अथाब्रवीन्मुनिंरामःकथंतेभ्रातरोवने ॥ कीदृशंतुतदाब्रह्मंस्तपस्तेपुर्महाबलाः ॥ १ ॥ अगस्त्यस्त्वब्रवीत्तत्ररामंसुप्रीतमानसम् ॥ तांस्तान्धर्मविधींस्तत्रभ्रातरस्तेसमाविशन् ॥२॥ कुंभकर्णस्ततोयत्तोनित्यंधर्मपथेस्थितः ॥ ततापग्रीष्मकालेतुपंचाग्नीन्परितःस्थितः ॥ ३ ॥ मेघांबुसिक्तोवर्षासुवीरासनमसेवत ॥ नित्यंचशिशिरेकालेजलमध्यप्रतिश्रयः॥ ॥ ४ ॥ एवंवर्षसहस्राणिदशतस्यापचक्रमुः ॥ धर्मेप्रयतमानस्यसत्पथेनिष्ठितस्यच ॥ ५ ॥ विभीषणस्तुधर्मात्मानित्यंधर्मपरःशुचिः ॥ पंचवर्षसहस्राणिपादेनैकेनतस्थिवान् ॥ ६ ॥ समाप्तेनियमेतस्यननृतुश्चाप्सरोगणाः ॥ पपातपुष्पवर्षंचतुष्टुवुश्चापिदेवताः ॥ ७ ॥ पंचवर्षसहस्राणि सूर्यंचैवान्ववर्तत ॥ तस्थौचोर्ध्वशिरोबाहुःस्वाध्यायेधृतमानसः ॥ ८ ॥

अतिशय प्रसन्नचित्तहो श्रीरामचंद्रजीसे बोले कि, वनमें समस्त भाई विविध भाँतिके तपके धर्म करने लगे॥ २॥ मतवाला कुंभकर्ण नियम धार सदा धर्म मार्गमें टिका ग्रीष्म समयमें पंचाग्नि तापकर तप करने लगा ॥ ३ ॥ वर्षाऋतुमें वीरासनपर बैठ बरसातके जलसे भीजने लगा; और शीतकालमें सदा जलमें वास करने लगा ॥ ॥ ४ ॥ इस प्रकारसे उसने दश हजार वर्ष विताये। दश हजार वर्षतक सदा धर्ममार्गमें टिककर कुंभकर्णने केवल तपही कियाथा ॥५॥ धर्मात्मा विभीषणजी सदा धर्मपरायण और पवित्र रहकर पांच हजार वर्षतक केवल एक चरणसेही खडे रहे ॥ ६ ॥ इस नियमके समाप्त होनेपर देवताओंने उनकी स्तुति की, आकाशसे फूलोंकी वर्षा हुई; व अप्सरागण नाचनेलगीं॥७॥ इसके उपरान्त विभीषणजीने वेदपाठ करनेमें चित्त लगाय नीचेको शिरकर पांच सहस्र वर्षतक सूर्यनारायणका

प्रगट किया ॥ ८ ॥ इस प्रकारसे मनको प्रसन्न किये विभीषणजी नन्दन वनमें टिकेहुए देवताओंकी समान परमानन्दसे दश सहस्र वर्ष विताय देते हुए ॥९॥ दशाननभी निराहारहो दश सहस्र वर्षतक तप करता रहा; इन दश सहस्र वर्षोंके बीचमें जब २ एक २ सहस्र वर्ष पूर्ण होते तब २ दशग्रीव अपना एक शिर अग्निमें होम देताथा ॥ १० ॥ इस प्रकारसे जब नौ हजार वर्ष पूर्ण होगये तब एक २ करके रावणके नौ मस्तक अग्निमें चढ गये ॥ ११ ॥ इस प्रकारसे जब दश हजारवाँ वर्ष आया तब रावणने अपने दशवें शिरकोभी काटनेकी वासना की; उसी समय ब्रह्माजी वहां आये ॥१२॥ ब्रह्माजीने अत्यन्त प्रसन्नहो सब देवताओंके सहित वहां आयकर कहा कि, हे दशग्रीव ! हम तुमपर प्रसन्न हुएहैं ॥१३॥ हे धर्मज्ञ ! तुम जिस वरकी अभिलाषा करतेहो उस वरको अति शीघ्र हमसे माँगो, तुम्हारा परिश्रम वृथा नहीं

एवंविभीषणस्यापिस्वर्गस्थस्येवनंदने ॥ दशवर्षसहस्राणिगतानिनियतात्मनः ॥ ९ ॥ दशवर्षसहस्रंतुनिराहारोदशाननः ॥ पूर्णेवर्षसहस्रेतुशिरश्चाग्नौजुहावसः ॥ १० ॥ एवंवर्षसहस्राणिनवतस्यातिचक्रमुः ॥ शिरांसिनवचाप्यस्यप्रविष्टानिहुताशनम् ॥ ११ ॥ अथवर्षसहस्रेतुदशमेदशमंशिरः ॥ छेत्तुकामेदशग्रीवेप्राप्तस्तत्रपितामहः ॥ १२ ॥ पितामहस्तुसुप्रीतःसार्धंदेवैरुपस्थितः ॥ तवतावद्दशग्रीवप्रीतोस्मीत्यभ्यभाषत ॥ ॥ १३ ॥ शीघ्रंवरयधर्मज्ञवरोयस्तेभिकांक्षितः ॥ कंतेकामंकरोम्यद्यनवृथातेपरिश्रमः ॥ १४ ॥ अथाब्रवीद्दशग्रीवःप्रहृष्टेनांतरात्मना ॥ प्रणम्यशिरसादेवंहर्षगद्गदयागिरा ॥ १५ ॥ भगवन्प्राणिनांनित्यंनान्यत्रमरणाद्भयम् ॥ नास्तिमृत्युसमःशत्रुरमरत्वमहंवृणे ॥ १६ ॥ एवमुक्तस्तदाब्रह्मादशग्रीवमुवाचह ॥ नास्तिसर्वामरत्वंतेवरमन्यंवृणीष्वमे ॥१७॥ एवमुक्तेतदारामब्रह्मणालोककर्तृणा ॥ दशग्रीवउवाचेदंकृतांजलिरथाग्रतः ॥ १८ ॥ सुपर्णनागयक्षाणांदैत्यदानवरक्षसाम् ॥ अवध्योहंप्रजाध्यक्षदेवतानांचशाश्वत ॥ १९ ॥ नहिचिंताममान्येषुप्राणिष्वमरपूजित ॥ तृणभूताहिते मन्येप्राणिनोमानुषादयः ॥ २० ॥

होगा, इसलिये तुम्हारी कौनसी मनोकामना पूर्ण करें ॥ १४ ॥ तब रावण मनमें सन्तुष्ट हो शिर झुकाय देव पितामहको प्रणाम कर हर्षसे गद्गद वाणीसे बोला ॥ ॥ १५ ॥ हे भगवन् ! समस्त प्राणियोंको सदा मृत्युका भय हुआ करताहै और कोई भय नहीं, विशेष करके मृत्युकी समान शत्रु नहीं इसलिये हम अमर होनेकी वासना करते हैं ॥ १६ ॥ रावणके वचन सुनकर ब्रह्माजी बोले, सर्वथा अमरत्व नहीं; इस कारण तुम अमरता नहीं पाय सकते इससे दूसरा वर मांगो ॥ १७॥ संसारके रचनेवाले ब्रह्माजीने जब ऐसे वचन कहे तब दशग्रीव उनके सामने हाथ जोडकर इस प्रकारसे कहने लगा ॥ १८ ॥ हे लोकनाथ ! हे नित्यस्वरूप ! [illegible]

और प्राणियोंसे तो हमको को भी चिन्ता न. हे ॥२० द
बोले ॥ २१ ॥ हे राक्षसश्रेष्ठ ! तुम जैसा चाहतेहो वैसाही होगा. हे राम ! ब्रह्माजी यह कहकर फिर रावणसे बोले ॥ २२ ॥ हे पापरहित ! हम प्रसन्न होकर जो वर तुमको देते हैं वह तुम श्रवण करो । तुमने जो अपने शिर पूर्व समय अग्निमें होम दियेहैं ॥ २३ ॥ हे राक्षस ! वह शिर अब फिर वैसेही होजायँगे। हे सौम्य ! हम तुमको एक औरभी दुर्लभ वर देतेहैं ॥ २४ ॥ कि, तुम मनही मनमें जिस रूपके धारण करनेकी अभिलाषा करोगे, इच्छा करतेही तुम्हारा वैसा रूप होजायगा, जब पितामह ब्रह्माजीने ऐसा कहा तब राक्षस दशग्रीवके ॥२५॥ मस्तक जोकि अग्निमें होम दियेगयेथे वह फिर वैसेही निकल आये। हे राम ! ब्रह्माजी इस प्रकार दशग्रीवसे

एवमुक्तस्तुधर्मात्मादशग्रीवेणरक्षसा ॥ उवाचवचनंदेवःसहदेवैःपितामहः ॥ २१ ॥ भविष्यत्येवमेतत्तेवचोराक्षसपुंगव ॥ एवमुक्त्वातुतंराम दशग्रीवंपितामहः ॥ २२ ॥ शृणुचापिवरोभूयःप्रीतस्येहशुभोमम ॥ हुतानियानिशीर्षाणिपूर्वमग्नौत्वयानघ ॥ २३ ॥ पुनस्तानिभविष्यंतितथैवतवराक्षस ॥ वितरामीहतेसौम्यवरंचान्यंदुरासदम् ॥ २४ ॥ छंदतस्तवरूपंचमनसायद्यथेप्सितम् ॥ एवंपितामहोक्तंचदशग्रीवस्यरक्षसः ॥ ॥ २५ ॥ अग्नौहुतानिशीर्षाणिपुनस्तान्युत्थितानिवै ॥ एवमुक्त्वातुतंरामदशग्रीवंपितामहः ॥ २६ ॥ विभीषणमथोवाचवाक्यंलोकपितामहः॥ विभीषणत्वयावत्सधर्मसंहितबुद्धिना ॥ २७ ॥ परितुष्टोस्मिधर्मात्मन्वरंवरयसुव्रत ॥ विभीषणस्तुधर्मात्मावचनंप्राहसांजलिः ॥ २८ ॥ वृतः सर्वगुणैर्नित्यंचंद्रमारश्मिभिर्यथा ॥ भगवन्कृतकृत्योहंयन्मेलोकगुरुःस्वयम् ॥ २९ ॥ प्रीतेनयदिदातव्योवरोमेशृणुसुव्रत ॥ परमापद्गतस्यापि धर्मेममतिर्भवेत् ॥ ३० ॥ अशिक्षितंचब्रह्मास्त्रंभगवन्प्रतिभातुमे ॥ यायामेजायतेबुद्धिर्येषुयेष्वाश्रमेषुच ॥ ३१ ॥ सासाभवतुधर्मिष्ठातंतंधर्मंचपालये ॥ एषमेपरमोदारवरःपरमकोमतः ॥ ३२ ॥

कह ॥ २६ ॥ फिर वह पितामह विभीषणजीसे बोले, हे वत्स विभीषण ! तुम्हारी बुद्धि धर्ममें लगी हुई है ॥२७॥ इससे हम तुम्हारे ऊपर अत्यन्त प्रसन्न हुएहैं. अब हे धर्मात्मा सुव्रत ! तुम वर मांगो, तब धर्मात्मा विभीषणजी हाथ जोडकर बोले ॥ २८ ॥ हे भगवन् ! आप समस्त लोकोंके गुरु होकर स्वयंही हमारे ऊपर प्रसन्न हुएहैं, इससे हम कृतार्थ होगये और किरणसे युक्त चन्द्रमाके समान हममें पुरुषार्थ आगये ॥ २९ ॥ जो प्रसन्न होकर आप हमको कोई वर अवश्यही देना चाहतेहैं तो श्रवण कीजिये. हे सुव्रत ! अत्यन्त विपद् पडनेपरभी हमारी मति धर्ममें रतरहे ॥ ३० ॥ और गुरुसे न सीखा हुआभी ब्रह्मास्त्र हमको आजावे, हे भगवन् ! और जिस किसी आश्रममेंभी हमारी कोई बुद्धिहो ॥ ३१ ॥ वह समस्त धर्मकी बुद्धिहो; और हम उसी धर्मको पालन करें, हे परम दाता ! यही हमारा परमचहीता वरहै ॥ ३२ ॥

कारण कि, धर्मानुरागी पुरुषोंको लोकमें कुछभी दुर्लभ नहीं रहता; फिर ब्रह्माजी प्रसन्न होकर विभीषणजीसे बोले ॥ ३३ ॥ हे वत्स ! तुम धर्मिष्ठहो; जो कुछ चाहते हो वोही होगा हे शत्रुनाशी ! राक्षसकुलमें उत्पन्न होकरभी ॥ ३४ ॥ तुम्हारी अधर्ममें बुद्धि नहीं है इस कारण हम तुम्हें अमरता देतेहैं । यह कहकर कुम्भकर्णके वर देनेके लिये तैयार हुए ॥ ३५ ॥ तब समस्त देवता हाथ जोडकर ब्रह्माजीसे बोले इस कुम्भकर्णको आप वरदान न दें ॥ ३६ ॥ आप जानतेहीहैं कि, यह दुर्मति सब लोगोंको त्रास देताहै; नंदनवनमें सात अप्सरा और दश इन्द्रके सेवकोंको ॥ ३७ ॥ हे ब्रह्मन् ! इसने भक्षण करलिया, इसके सिवाय कितनेही ऋषि और मनुष्य इसने खाये हैं; जब विना वरदानही इस राक्षसने ऐसे कार्य किये हैं ॥ ३८ ॥ जो यह वरदान पालेगा वो त्रिभुवनकोही खाजायगा इसलिये हे

नहिधर्माभिरक्तानांलोकेकिंचनदुर्लभम् ॥ पुनःप्रजापतिःप्रीतोविभीषणमुवाचह ॥ ३३ ॥ धर्मिष्ठस्त्वंयथावत्सतथाचैतद्भविष्यति ॥ यस्माद्राक्षसयोनौतेजातस्यामित्रनाशन ॥ ३४ ॥ नाधर्मेजायतेबुद्धिरमरत्वंददामिते ॥ इत्युक्त्वाकुंभकर्णायवरंदातुमवस्थितम् ॥३५॥ प्रजापतिंसुराःसर्वेवाक्यंप्रांजलयोऽब्रुवन् ॥ नतावत्कुंभकर्णायप्रदातव्योवरस्त्वया ॥ ३६ ॥ जानीषेहियथालोकांस्त्रासयत्येषदुर्मतिः ॥ नंदनेऽप्सरसःसप्तमहेंद्रानुचरादश ॥ ३७ ॥ अनेनभक्षिताब्रह्मन्नृषयोमानुषास्तथा ॥ अलब्धवरपूर्वेणयत्कृतंराक्षसेनतु ॥ ३८ ॥ यद्येषवरलब्धःस्याद्भक्षयेद्भुवनत्रयम् ॥ वरव्याजेनमोहोऽस्मैदीयताममितप्रभ ॥ ३९ ॥ लोकानांस्वस्तिचैवंस्यादभवेदस्यचसंमतिः ॥ एवमुक्तःसुरैर्ब्रह्माचिंतयत्पद्मसंभवः ॥ ४० ॥ चिंतिताचोपतस्थेऽस्यपार्श्वंदेवीसरस्वती ॥ प्रांजलिःसातुपार्श्वस्थाप्राहवाक्यंसरस्वती ॥ ४१ ॥ इयमस्म्यागतादेवकिंकार्यंकरवाण्यहम् ॥ प्रजापतिस्तुतांप्राप्तांप्राहवाक्यंसरस्वतीम् ॥ ४२ ॥ वाणित्वंराक्षसेंद्रस्यभववाग्देवतेप्सिता ॥ तथेत्युक्त्वाप्रविष्टासाप्रजापतिरथाब्रवीत् ॥ ४३ ॥ कुम्भकर्णमहाबाहोवरंवरययोमतः ॥ कुम्भकर्णस्तुतद्वाक्यंश्रुत्वावचनमब्रवीत् ॥ ४४ ॥

अमितप्रभायुक्त ! वरदानके छलसे आप इसको मोह दीजिये ॥ ३९ ॥ इससे त्रिभुवनका मंगल होगा और इसके सन्मानकीभी रक्षा होजायगी, देवतोंके यह वचन सुनकर कमलयोनि ब्रह्माजीने चिंता की ॥ ४० ॥ चिन्ता करतेही देवी सरस्वतीजी ब्रह्माजीके निकट आय खडी हुई । उन सरस्वतीजीने ब्रह्माजीके निकट आय हाथ जोडकर उनसे निवेदन किया ॥ ४१ ॥ हे देव ! हम आईहैं, हमको कौन कार्य करना होगा ? आज्ञा कीजिये, देवी सरस्वतीजीको आईहुई देखकर ब्रह्माजीने उनसे कहा ॥ ४२ ॥ हे भारती ! देवता जैसी इच्छा करते हैं; तुम इस राक्षसकी जीभके आगे बैठकर वैसेही वचन कहो । "जो आज्ञाहै" ऐसा

मांगो, कुम्भकर्ण ब्रह्माजीके देने लगे तो इसने छः मास सोनेके पीछे एक दिन भोजन कर लियाकरे)। "ऐसाही होगा" यह कह ब्रह्माजी सब देवताओंके संग चले गये ॥४५॥ फिर देवी सरस्वतीने भी उस राक्षसका त्याग किया तब देवता ब्रह्माजीके सहित आकाशमंडलको चले गये ॥ ४६ ॥ तब वह राक्षस सरस्वतीसे छूटकर अपनी चेतनाको प्राप्त करता हुआ । तिसके पीछे दुरात्मा कुंभकर्ण दुःखित होकर चिन्ता करने लगा ॥४७॥ कि, आज ऐसे वचन हमारे मुखसे क्यों निकले ऐसा जान पडता है कि, उस काल देवतोंने आयकर हमको मोहित कर रक्खा होगा ॥ ४८ ॥ वह दीप्त तेजसे सम्पन्न तीनों भाई इस प्रकारके वर पायकर श्लेष्मातक वनमें जाय वहां अत्यन्त सुखसे वसने लगे ॥४९॥

स्वप्नंवर्षाण्यनेकानिदेवदेवममेप्सितम् ॥ एवमस्त्वितितंचोक्त्वाप्रायाद्ब्रह्मासुरैःसमम् ॥४५॥ देवीसरस्वतीचैवराक्षसंतंजहौपुनः ॥ ब्रह्मणासहदेवेषुगतेषुनभःस्थलम् ॥ ४६ ॥ विमुक्तोसौसरस्वत्यास्वांसंज्ञांचततोगतः ॥ कुंभकर्णस्तुदुष्टात्माचिंतयामासदुःखितः ॥ ४७ ॥ ईदृशंकिमिदंवाक्यंममाद्यवदनाच्च्युतम् ॥ अहंव्यामोहितोदेवैरितिमन्येतदागतैः ॥४८॥ एवंलब्धवराःसर्वेभ्रातरोदीप्ततेजसः ॥ श्लेष्मातकवनंगत्वातत्रतेन्यवसन्सुखम् ॥ ४९ ॥ इत्या० श्रीमद्रा० वा० आ० उत्तरकांडे दशमः सर्गः ॥ १० ॥ सुमालीवरलब्धांस्तुज्ञात्वाचैतान्निशाचरान् ॥ उदतिष्ठद्भयंत्यक्त्वासानुगःसरसातलात् ॥ १ ॥ मारीचश्चप्रहस्तश्चविरूपाक्षोमहोदरः ॥ उदतिष्ठन्सुसंरब्धाःसचिवास्तस्यरक्षसः ॥ २ ॥ सुमालीसचिवैःसार्धंवृतोराक्षसपुंगवैः ॥ अभिगम्यदशग्रीवंपरिष्वज्येदमब्रवीत् ॥ ३ ॥ दिष्ट्यातेवत्ससंप्राप्तश्चिंतितोयंमनोरथः ॥ यस्त्वंत्रिभुवनश्रेष्ठाल्लब्धवान्वरमुत्तमम् ॥ ४ ॥ यत्कृतेचवयंलंकांत्यक्त्वायातारसातलम् ॥ तद्गतंनोमहाबाहोमहद्विष्णुकृतंभयम् ॥ ५ ॥ असकृत्तद्भयाद्भग्नाःपरित्यज्यस्वमालयम् ॥ विद्रुताःसहिताःसर्वेप्रविष्टाःस्मरसातलम् ॥ ६ ॥

इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषाटीकायां दशमः सर्गः ॥ १० ॥ इधर सुमाली इन तीनों राक्षसोंका वर पाना सुनकर भय छोड अपने सेवकोंके साथ पातालसे निकला ॥ १ ॥ मारीच, महोदर, प्रहस्त, विरूपाक्ष, इत्यादि राक्षसमंत्रीभी अत्यन्त उत्साहके सहित निकले ॥ २ ॥ सुमाली मुख्य २ राक्षस मंत्रियोंके साथ और मंत्रीजनोंके संग जाय रावणको भेंटकर यह वचन बोला ॥३॥ हे वत्स ! तुमने त्रिभुवनश्रेष्ठ ब्रह्माजीके निकट उत्तम वर पायाहै जो मनोरथ हम लोगोंने पहले करेथे तुमने भाग्यसेही वही वर पाया ॥ ४ ॥ हे महावीर ! हम जिसके लिये लंका छोडकर पातालमें चलेगयेथे हम लोगोंको उन विष्णुजीका जो बडाभारी डरथा वह भी अब दूर होगयाहै ॥ ५ ॥ विष्णुजीके भयसे वारंवार भागकर अपने स्थानको छोड और भागकर हम सब दलसहित पातालमें

प्रवेश कर गयेथे ॥ ६ ॥ पूर्वकालमें यह लंकानगरी हमारे अधिकारमें थी, उस समय राक्षस इसमें वसतेथे परन्तु अब धीमान् धनेश्वर कुवेरजी इसमें वास करते हैं ॥ ७ ॥ हे पापरहित महावीर ! साम दान या वल जो लंकापुरीके लौटानेमें समर्थ हो तो हम लोगोंका शुभकार्य कियाजाय ॥ ॥ ८ ॥ हे तात ! इसमें कुछ संदेह नहीं है कि, तुम लंकाके राजा होजाओगे । राक्षस वंश डूबरहाथा हे महावीर ! इस डूबेहुएका तुमनेही उद्धार कियाहै ॥ ॥ ९ ॥ इस कारण हे महावलवान् ! तुमही हम सबोंके राजा होगे । तब रावण पास आयेहुए नानासे बोला ॥ १० ॥ धनपति कुवेरजी भाई होनेके कारण हमारे गुरु हैं इस कारण आप ऐसे वचन न कहिये. जब राक्षसश्रेष्ठने इसप्रकार भलीभाँतिसे समझादिया ॥ ११ ॥ तब वह सुमाली राक्षस

अस्मदीयानलंकेयंनगरीराक्षसोपिता ॥ निवेशितातवभ्रात्राधनाध्यक्षेणधीमता ॥ ७ ॥ यदिनामात्रशक्यंस्यात्साम्नादानेनवानघ ॥ तरसा वामहाबाहोप्रत्यानेतुंकृतंभवेत् ॥ ८ ॥ त्वंचलंकेश्वरस्तातभविष्यसिनसंशयः ॥ त्वयाराक्षसवंशोयंनिमग्नोपिसमुद्धृतः ॥९॥ सर्वेषांनःप्रभुश्चैव भविष्यसिमहाबल ॥ अथाब्रवीद्दशग्रीवोमातामहमुपस्थितम् ॥ १० ॥ वित्तेशोगुरुरस्माकंनार्हसेवक्तुमीदृशम् ॥ साम्नाहिराक्षसेंद्रेणप्रत्याख्या तोगरीयसा ॥ ११ ॥ किंचिन्नाहतदारक्षोज्ञात्वातस्यचिकीर्षितम् ॥ कस्यचित्त्वथकालस्यवसंतंरावणंततः ॥ १२ ॥ प्रहस्तःप्रश्रितंवाक्यमिद माहसरावणम् ॥ दशग्रीवमहाबाहोनार्हसेवक्तुमीदृशम् ॥ १३ ॥ सौभ्रात्रंनास्तिशूराणांशृणुचेदंवचोमम ॥ अदितिश्चदितिश्चैवभगिन्यौसहितेहि ते ॥ १४ ॥ भार्येपरमरूपिण्यौकश्यपस्यप्रजापतेः ॥ अदितिर्जनयामासदेवांस्त्रिभुवनेश्वरान् ॥ १५ ॥ दितिस्त्वजनयद्दैत्यान्कश्यपस्यात्मसं भवान् ॥ दैत्यानांकिलधर्मज्ञपुरेयंवसनार्णवा ॥ १६ ॥ सपर्वतामहीवीरतेऽभवन्प्रभविष्णवः ॥ निहत्यतांस्तुसमरेविष्णुनाप्रभविष्णुना॥१७॥ देवानांवशमानीतंत्रैलोक्यमिदमव्ययम् ॥ नैतदेकोभवानेवकरिष्यतिविपर्ययम् ॥ १८ ॥

उसके मनकी वात जानकर कुछ न बोला. कुछ कालतक रावणके वहां वसनेपर ॥ १२ ॥ एक दिन प्रहस्त नाम राक्षस हाथ जोड विनीतभावसे रावणसे बोला कि, हे महावीर दशग्रीव ! आपका ऐसा कहना उचित नहीं हुआ ॥१३॥ शूरलोगोंमें भ्रातापन नहीं होता,हम इसका दृष्टान्त कहते हैं तुम सुनो,अदिति व दिति दोनों वहनें हितके साथ हितसे मिल ॥ १४ ॥ प्रजापति कश्यपजीकी भार्या हुईं, यह दोनों परमरूपवती थीं, उन दोनोंके मध्य अदितिने त्रिभुवनके स्वामी देवतोंको उत्पन्न किया ॥ १५ ॥ परन्तु दितिने कश्यपजीके औरस दैत्योंको उत्पन्न किया । हे धर्मज्ञ ! पूर्वकालमें दैत्योंहीके सागर कानन और पर्वत सहित यह पृथ्वी अधिकारमेंथी और [illegible]

रागमें ले आवें, क्योंकि आपही अपने भाईके साथ वैरभाव करते ऐसा ॥ १८ ॥ पूर्वकालमें द
गुन मनमें हर्षितहो ॥ १९ ॥ एक मुहूर्त भरतक चिन्ता करके बोला कि, अच्छा हमने स्वीकार किया। तब ऐसा कहकर हर्षके मारे वीर्यवान् ॥ २० ॥ दशग्रीव
उसी दिन निशाचरोंके साथ लंकाके समीपवाले वनमें गया। उस समय निशाचर दशग्रीवने त्रिकूटपर्वतपर टिककर ॥ २१ ॥ वाक्यविशारद प्रहस्तको दूत बना
कर भेजा. हे राक्षसोंमें श्रेष्ठ प्रहस्त ! तुम शीघ्र जायकर कहो ॥ २२ ॥ तुम हमारे कहनेके अनुसार धनपति कुवेरसे समझाकर यह कहना कि,—हे राजन् ! यह
लंकापुरी पूर्वकालमें महात्मा राक्षसोंके अधिकारमें थी ॥ २३ ॥ हे पापरहित सौम्य ! इस समय आप इसमें विराजमान हैं यह आपको उचित नहीं है. हे अतुल

सुरासुरेरगनरैर्तत्कुरुष्ववचोमम ॥ एवमुक्तोदशग्रीवःप्रहृष्टेनांतरात्मना ॥ १९ ॥ चिंतयित्वामुहूर्तंवैबाढमित्येवसोऽब्रवीत् ॥ सतुतेनैवहर्षेण
तस्मिन्नहनिवीर्यवान् ॥ २० ॥ वनंगतोदशग्रीवःसहतैःक्षणदाचरैः ॥ त्रिकूटस्थःसतुतदादशग्रीवोनिशाचरः ॥ २१ ॥ प्रेषयामासदौत्येन
प्रहस्तंवाक्यकोविदः ॥ प्रहस्तशीघ्रंगच्छत्वंब्रूहिनैर्ऋतपुंगव ॥ २२ ॥ वचसाममवित्तेशंसामपूर्वमिदंवचः ॥ इयंलंकापुरीराजन्राक्षसानांमहा
त्मनाम् ॥ २३ ॥ त्वयानिवेशितासौम्यनैतद्युक्तंतवानघ ॥ तद्भवान्यदिनोह्यद्यदद्यादतुलविक्रम ॥ २४ ॥ कृताभवेन्ममप्रीतिर्धर्मश्चैवानुपा
लितः ॥ सतुगत्वापुरींलंकांधनदेनसुरक्षिताम् ॥ २५ ॥ अब्रवीत्परमोदारंवित्तपालमिदंवचः ॥ प्रेषितोहंतवभ्रात्रादशग्रीवेणसुव्रत ॥ २६ ॥
त्वत्समीपंमहाबाहोसर्वशस्त्रभृतांवर ॥ वचनंममवित्तेशयद्ब्रवीतिदशाननः ॥ २७ ॥ इयंकिलपुरीरम्यासुमालिप्रमुखैःपुरा ॥ भुक्तपूर्वाविशा
लाक्षराक्षसैर्भीमविक्रमैः ॥ २८ ॥ तेनविज्ञाप्यतेसोयंसांप्रतंविश्रवात्मज ॥ तदेषादीयतांतातयाचतस्तस्यसामतः ॥ २९ ॥ प्रहस्तादपिसंश्रुत्य
देवोवैश्रवणोवचः ॥ प्रत्युवाचप्रहस्तंतंवाक्यंवाक्यविदांवरः ॥ ३० ॥

विक्रमकारी ! अब जो लंकापुरी आप हमको लौटादें ॥ २४ ॥ तो हमको बडीही प्रीति दिखाई जाय, और धर्मका प्रतिपालनभी हो. तब प्रहस्त धननाथ कुवेरजीसे
रक्षा की जाती हुई लंकापुरीमें गया ॥ २५ ॥ और परमोदार धनेश्वर कुवेरजीसे बोला, हे सुव्रत ! आपके भ्राता दशग्रीवसे भेजे जाकर ॥ २६ ॥ हम आपके
समीप आयेहैं। हे सर्वशस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ महावीर धनेश्वर ! उस दशाननने जो कुछ कहाहै आप हमारे मुखसे निकले हुए उन सब वचनोंको सुनें ॥ २७ ॥ हे
विशालनेत्र ! पूर्वकालमें यह रमणीक सुप्रसिद्ध लंकापुरी भयंकर विक्रमकारी सुमाली इत्यादि राक्षसों करके प्रथम भोगी गई है ॥ २८ ॥ हे वत्स ! विश्रवाके पुत्र !
इसी कारणसे वह इस लंकापुरीको मांगते हैं, आप समझानेसे हमको देदीजिये, यह बात हम आपको जतातेहैं ॥ २९ ॥ वचन बोलनेमें चतुर धननाथ कुवेरजी प्रहस्तसे

ऐसे वचन सुनकर उसको उत्तर देते हुए ॥ ३० ॥ हे रात्रिचर ! यह राक्षसशून्य लंकापुरी पिताजीने हमको दीहै, हमने दान और सन्मानादि गुणद्वारा ... रके लोगोंको यहां वसायाहै ॥ ३१ ॥ तुम रावणके निकट जायकर उनसे कहना कि, हे महावीर ! हमारी जो राज्य और पुरीहै यह सब तुम्हारी है; इस कारण तुम अकंटक राज्य भोगो ॥ ३२॥ और हमारा धन व राज्य यह हमारा व आपका एकही है । कुबेरजी यह कहकर अपने पिताके निकट गये ॥ ३३ ॥ और उनको प्रणामकर रावणके अभिप्रायको निवेदन करके कहा,–हे पितः ! रावणने अभी हमारे पास दूत भेजाया ॥ ३४ ॥ और कहाहै कि, लंकापुरी हमको देदो; क्योंकि पहले राक्षसही इसके रहनेवालेथे । हे सुव्रत ! इस समय हमको क्या करना चाहिये सो आप उपदेश कीजिये ॥ ३५ ॥ मुनिश्रेष्ठ ब्रह्मर्षि विश्रवाजी यह

दत्ताममेयंपित्रातुलंकाशून्यानिशाचरैः ॥ निवेशिताचमेरक्षोदानमानादिभिर्गुणैः ॥ ३१ ॥ ब्रूहिगच्छदशग्रीवंपुरीराज्यंचयन्मम ॥ तवाप्येतन्महाबाहोभुंक्ष्वराज्यमकंटकम् ॥ ३२ ॥ अविभक्तंत्वयासार्धंराज्यंयच्चापिमेवसु ॥ एवमुक्त्वाधनाध्यक्षोजगामपितुरंतिकम् ॥ ३३ ॥ अभिवाद्य गुरुंप्राहरावणस्यतदीप्सितम् ॥ एषतातदशग्रीवोदूतंप्रेषितवान्मम ॥ ३४ ॥ दीयतांनगरीलंकापूर्वंरक्षोगणोषिता ॥ मयात्रयदनुष्ठेयंतन्ममाचक्ष्वसुव्रत ॥ ३५ ॥ ब्रह्मर्षिस्त्वेवमुक्तोसौविश्रवामुनिपुंगवः ॥ प्रांजलिंधनदंप्राहशृणुपुत्रवचोमम ॥ ३६ ॥ दशग्रीवोमहाबाहुरुक्तवान्ममसन्निधौ ॥ मयानिर्भर्त्सितश्चासीद्बहुशोक्तःसुदुर्मतिः ॥ ३७॥ सक्रोधेनमयाचोक्तोध्वंससेचपुनःपुनः ॥ श्रेयोभियुक्तंधर्म्यंचशृणुपुत्रवचो मम ॥३८॥ वरप्रदानसंमूढोमान्यामान्यंसुदुर्मतिः ॥ नवेत्तिममशापाच्चप्रकृतिंदारुणांगतः ॥ ३९ ॥ तस्माद्गच्छमहाबाहोकैलासंधरणीधरम् ॥ निवेशयनिवासार्थंत्यक्त्वालंकांसहानुगः ॥ ४० ॥ तत्रमंदाकिनीरम्यानदीनामुत्तमानदी ॥ कांचनैःसूर्यसंकाशैःपंकजैःसंवृतोदका ॥ ४१ ॥ कुमुदैरुत्पलैश्चैव अन्यैश्चैवसुगंधिभिः ॥ तत्रदेवाःसगंधर्वाःसाप्सरोरगकिन्नराः ॥ ४२ ॥

वचन सुनकर हाथ जोडकर आगे खडे कुबेरजीसे बोले कि, हमारे वचन सुनो ॥ ३६ ॥ महावीर दशग्रीवने हमसे भी पहले यह बात कहीथी, हमने उन दुर्मतिको बहुत तिरस्कार किया और कह दियाथा ॥ ३७ ॥ हमने क्रोधित होकर " तेरा नाश हो जायगा " वारंवार उसको यह कहाहै. हे पुत्र ! कल्याणकारी धर्मयुक्त हमारे वचन तुम सुनो ॥ ३८ ॥ वह दुर्मति वरदान पानेसे मोहितहो मान्य अमान्य किसीको कुछ नहीं मानता; हमारे शापसे उसका दारुण स्वभाव होगया है ॥ ३९ ॥ इसलिये हे महावीर ! तुम लंकाको छोडकर अपने सब संगियोंके साथ कैलास पर्वतपर जाय रहनेके लिये पुरी बनाओ ॥ ४० ॥ वहां नदियोंमें ... मंदाकिनीके जलमें नित्य विहार करतेहैं । हे धनद ! इस ...

सुगन्धियुक्त पुष्पोंसे उसमें खिल रहेहैं; वहांपर देवता, गन्धर्व, अ ॥ ० ॥

सुगन्धियुक्त पूष्पी उसमें खिल रहेहैं; वहांपर देवता, गन्धर्व, अ . ॥ ० ॥ . . .
गन्धर्वने उग्र वरदान पायाहै, यह तुम जानतेही हो इसकारण इसके साथ विरोध करना तुमको उचित नहीं है ॥ ४३ ॥ यह सुनकर कुबेरजी
सग उनके वचन मान स्त्री, पुत्र, मंत्री, समस्त वाहन और धनको लेकर कैलासको चले गये ॥ ४४ ॥ इसके उपरान्त प्रहस्तने हर्षितचित्तसे अनुज और
मंत्रियोंके साथ बैठेहुए महाबलवान रावणके निकट जायकर कहा कि; ॥ ४५ ॥ लंकापुरी इस समय सूनी पडी है। धनेश्वर कुबेरजी लंकापुरीको
छोडकर चलेगये इस कारण आप हम लोगोंको संग लेकर वहांपर अपना धर्मप्रतिपालन कीजिये ॥ ४६ ॥ महाबलवान् रावण प्रहस्तके ऐसे वचन सुन

विहारशीलाःसततंसंतेसर्वदाश्रिताः ॥ नहिक्षमंत्वयानेनवैरंधनदरक्षसा ॥ जानीषेहियथानेनलब्धःपरमकोवरः ॥ ४३ ॥ एवमुक्तोगृहीत्वातुतद्व
नःपितृगौरवात् ॥ सदारपुत्रःसामात्यःसवाहनधनोगतः ॥ ४४ ॥ प्रहस्तोऽथदशग्रीवंगत्वावचनमब्रवीत् ॥ प्रहृष्टात्मामहात्मानंसहामात्यं
महानुजम् ॥ ४५ ॥ शून्यासानगरीलंकात्यक्त्वैनांधनदोगतः ॥ प्रविश्यतांसहास्माभिःस्वधर्मंतत्रपालय ॥ ४६ ॥ एवमुक्तोदशग्रीवःप्रहस्तेन
महाबलः ॥ विवेशनगरीलंकांभ्रातृभिःसबलानुगैः ॥ ४७ ॥ धनदेनपरित्यक्तांसुविभक्तमहापथाम् ॥ आरुरोहसदेवारिःस्वर्गंदेवाधिपोयथा ॥
॥ ४८ ॥ सचाभिषिक्तःक्षणदाचरैस्तदानिवेशयामासपुरींदशाननः ॥ निकामपूर्णाचबभूवसापुरीनिशाचरैर्नीलबलाहकोपमैः ॥ ४९ ॥ धनेश्वर
स्तथपितृवाक्यगौरवान्न्यवेशयच्छशिविमलेगिरौपुरीम् ॥ स्वलंकृतैर्भवनवरैर्विभूषितांपुरंदरःस्वरिवयथामरावतीम् ॥ ५० ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा०
वा० आ० उत्तरकांडे एकादशः सर्गः ॥ ११ ॥ राक्षसेंद्रोऽभिषिक्तस्तुभ्रातृभिःसहितस्तदा ॥ ततःप्रदानंराक्षस्याभगिन्याःसमचिंतयत् ॥ १ ॥

कर अभिषिक्त हुआ, और सेना, मंत्री, व छोटे भ्राताओंको संगले लंकानगरीमें प्रवेश करता हुआ ॥ ४७ ॥ देवनाथ इन्द्रजी जिस प्रकार स्वर्गमें पहुँचतेथे,वैसेही
वह देवताओंका शत्रु रावण कुबेरजीकी छोडी हुई बडे २ मार्गवाली लंकानगरीमें पहुँचा ॥४८॥ पहले तो वहाँपर पहुँचकर निशाचरोंने रावणका अभिषेक किया,
फिर रावणने पुरीको बसाया नीलेबादरकी समान देहवाले निशाचरोंके झुण्डोंसे वह लंकापुरी अत्यन्त परिपूर्ण होगई ॥ ४९ ॥ इन्द्रजीने जिस प्रकार स्वर्गमें अम
रावती पुरी बसाईथी वैसेही कुबेरजीने चंद्रमाके समान निर्मल कैलास पर्वतके शिखरपर शोभित गहनोंसे सजाय, श्रेष्ठ गृहोंसे विराजमान अलकापुरी बसाई॥५०॥
इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषाटीकायां एकादशः सर्गः ॥ ११ ॥ इसके उपरान्त राक्षसपति रावण लंकाका राज्य पाय राक्षसी बहनके व्याह

धनारा. शैलूष नाम महात्मा गन्धर्वराजकी पुत्री ॥ २४ ॥ सरमा नामको उसने विभीषणकी स्त्री किया । इस सरमाने मानस सरोवरके तीरपर जन्म ग्रहण कियाथा॥ ॥ २५ ॥ इस समय वर्षा ऋतुके आजानेसे मानस सरोवर उस स्थानतक बढा कि जहां वह कन्या थी, वह देखकर कन्याकी माता स्नेहके मारे रोते २ यह बोली॥ ॥ २६ ॥ "सरः मा वर्द्धत" (सरोवर तुम मत बढो) तिस कहनेहीसे इस कन्याका नाम सरमा हुआ. इस प्रकारसे विवाहकर निशाचर रावण, कुंभकर्ण, विभीषण॥ ॥ २७ ॥ अपनी २ स्त्रियोंके साथ लंकामें विहार करने लगे । जैसे नंदन वनमें गन्धर्व लोग विहार करतेहैं. कुछ काल बीते मन्दोदरीने मेघनाद नामक पुत्रको उत्पन्न किया ॥ २८ ॥ यही पुत्र आप सब लोगोंके निकट इन्द्रजीत नामसे विख्यात हुआ । पूर्वकालमें यह रावणका पुत्र ॥ २९ ॥ रोदन करते २ बादलके

सरमानामधर्मज्ञांलेभेभार्यांविभीषणः ॥ तीरेतुसरसोवैतुसंजज्ञेमानसस्यहि ॥ २५ ॥ सरस्तदामानसंतुववृधेजलदागमे ॥ मात्रातुतस्याःकन्यायाःस्नेहेनाक्रंदितंवचः ॥ २६ ॥ सरोमावर्धतेत्युक्तततःसासरमाऽभवत् ॥ एवंतेकृतदारावैरेमिरेतत्रराक्षसाः ॥ २७ ॥ स्वांस्वांभार्यामुपादायगंधर्वाइवनंदने ॥ ततोमंदोदरीपुत्रंमेघनादमजीजनत् ॥२८॥ सएषइंद्रजिन्नामयुष्माभिरभिधीयते ॥ जातमात्रेणहिपुरातेनरावणसूनुना ॥ २९ ॥ रुदतासुमहान्मुक्तोनादोजलधरोपमः ॥ जडीकृताचसालंकातस्यनादेनराघव ॥ ३० ॥ पितातस्याकरोन्नाममेघनादइतिस्वयम् ॥ सोवर्धततदारामरावणांतःपुरेशुभे ॥३१॥ रक्ष्यमाणोवरस्त्रीभिश्छन्नःकाष्ठैरिवानलः ॥ मातापित्रोर्महाहर्षंजनयन्रावणात्मजः ॥ ३२ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडेद्वादशः सर्गः ॥ १२ ॥ अथलोकेश्वरोत्सृष्टातत्रकालेनकेनचित् ॥ निद्रासमभवत्तीव्राकुंभकर्णस्यरूपिणी ॥ १ ॥ ततोभ्रातरमासीनंकुंभकर्णोऽब्रवीद्वचः॥ निद्रामांबाधतेराजन्कारयस्वममालयम् ॥२॥ विनियुक्तास्ततोराज्ञाशिल्पिनोविश्वकर्मवत् ॥ विस्तीर्णंयोजनंस्निग्धंततोद्विगुणमायतम् ॥ ३ ॥

समान महान् शब्दसे नाद करने लगा, हे राघव ! उसके नाद करनेसे यह लंकापुरी जड होगई ॥ ३० ॥ इस कारणसे उसके पिता रावणने स्वयं उसका नाम मेघनाद रक्खा. हे राम ! वह रावणके शुभ अन्तःपुरमें बढने लगा ॥३१॥ भली स्त्रियोंसे उसकी रक्षा होनेलगी वह काठसे ढकी हुई अग्निके समान माता पिताको अत्यन्त हर्ष उपजाता हुआ मेघनाद बढनेलगा ॥ ३२ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे भाषाटीकायां द्वादशः सर्गः ॥ १२ ॥ ॥

इसके उपरान्त मूर्तिमान घोर निद्रा कुछ कालके पीछे ब्रह्माजीसे प्रेरितहो कुंभकर्णका आश्रय करती हुई ॥ १ ॥ तब कुंभकर्ण बैठे हुए अपने भ्रातासे बोला कि, हे राजन् ! नींद हमको पीडित करतीहै, इसलिये हमारे सोनेके

नियुक्त हो एक यज्ञान ... [illegible]

सुवर्णमय खंभोंसे सब जगह शोभायमान था ॥ ४ ॥ इसकी सीढियें वैदूर्यमणिकी बनी हुईथीं,द्वार हाथीदांतके और चबूतरे स्फटिकके बने और किंकिणियोंके जालसे वह स्थान छाया गया ॥ ५ ॥ मेरु पर्वतकी पुण्ययुक्त गुफाकी समान सबकहीं सदा सुखदायक सर्वसुखकारी मनोहर स्थान राक्षसराज रावणने बनवाया ॥ ६ ॥ महाबल कुम्भकर्ण निद्रामें युक्त होकर महस्रों वर्षतक वहां सोता रहा परन्तु जागा नहीं ॥ ७ ॥ जब कुम्भकर्ण नींदके वश हुआ तब रावण निरंकुश हो देवता, गन्धर्व, यक्ष और ऋषि जनोंका संहार करने लगा ॥ ८ ॥ नन्दन इत्यादि जितने विचित्र उद्यान थे दशानन अत्यन्त क्रोधमें भरकर जाय उन सब वनोंको उजाडने लगा ॥

दर्शनीयंनिगायार्थंकुंभकर्णस्यचक्रिरे ॥ स्फाटिकैःकांचनैश्चित्रैःस्तंभैःसर्वत्रशोभितम् ॥ ४ ॥ वैदूर्यकृतसोपानंकिंकिणीजालकंतथा ॥ दांततो रणविन्यस्तंवज्रस्फटिकवेदिकम् ॥ ५ ॥ मनोहरंसर्वसुखंकारयामासराक्षसः ॥ सर्वत्रसुखदंनित्यंमेरोःपुण्यांगुहामिव ॥ ६ ॥ तत्रनिद्रांसमा विष्टःकुंभकर्णोमहाबलः ॥ बहून्यब्दसहस्राणिशयानोनचबुद्धयते ॥ ७ ॥ निद्राभिभूतेतुतदाकुंभकर्णेदशाननः ॥ देवर्षियक्षगंधर्वान्संजघ्नेहिनि रंकुशः ॥ ८ ॥ उद्यानानिविचित्राणिनंदनादीनियानिच ॥ तानिगत्वासुसंक्रुद्धोभिनत्तिस्मदशाननः ॥ ९ ॥ नदींगजइवक्रीडन्वृक्षान्वायुरिव क्षिपन् ॥ नगान्वज्रइवोत्सृष्टोविध्वंसयतिराक्षसः ॥ १० ॥ यथावृत्तंतुविज्ञायदशग्रीवंधनेश्वरः ॥ कुलानुरूपंधर्मज्ञोवृत्तंसंस्मृत्यचात्मनः ॥ ११ ॥ सौभ्रात्रदर्शनार्थंतुदूतंवैश्रवणस्तदा ॥ लंकांसंप्रेषयामासदशग्रीवस्यवैहितम् ॥ १२ ॥ सगत्वानगरींलंकामाससादविभीषणम् ॥ मानितस्तेनच धर्मेणपृष्टश्चागमनंप्रति ॥१३॥ पृष्ट्वाचकुशलंराज्ञोज्ञातीनांचविभीषणः ॥ सभायांदर्शयामासतमासीनंदशाननम् ॥१४॥ सदृष्ट्वातत्रराजानंदीप्यमा नंस्वतेजसा ॥ जयेतिवाचासंपूज्यतूष्णींसमभिवर्तते ॥१५॥ सतत्रोत्तमपर्यंकेवरास्तरणशोभिते ॥ उपविष्टंदशग्रीवंदूतोवाक्यमथाब्रवीत् ॥ १६ ॥

॥ ९ ॥ हाथी जिसप्रकार नदीमें क्रीडा करके उनको विध्वंस करताहै, पवन जिसप्रकार वृक्षोंको हिलायकर उखाड डालताहै, वज्र जिस प्रकार पर्वतपर गिरकर उनको भेदताहै वैसेही रावण राक्षसने इन उद्यानोंका नाश किया ॥ १० ॥ परन्तु धर्मात्मा कुवेरजीने रावणका ऐसा चरित्र जानकर अपने कुलके अनुरूप व्यव हारका स्मरण किया ॥ ११ ॥ उस कालमें कुवेरजीने भ्रातपन दिखानेकी वासनासे हितकारी उपदेश देनेके लिये रावणके निकट लंकामें एक दूत भेजा ॥ ॥ १२ ॥ दूत लंकानगरीमें जायकर पहले विभीषणजीके साथ मिला विभीषणजीने धर्मानुसार उसका सन्मान करके आनेका कारण पूंछा॥ १३ ॥ और धनपति कुवेरजीका कुशल व अपने जातिवालोंका कुशल पूंछकर विभीषणजीने उस दूतको सभामें बैठे हुए रावणको दिखादिया ॥ १४ ॥ अपने तेजकी प्रभासे देदीप्यमान राजा रावणको वहां देखकर दूत जय शब्दसे उनको सन्मानित कर एकक्षण तो वहां चुपचाप खडारहा ॥ १५ ॥ फिर सभामें बिछेहुए बिछौनोंसे सजेहुए उत्तम आसनपर

बैठेहुए रावणसे वह दूत बोला ॥ १६ ॥ हे राजन् ! आपके भ्राता कुबेरजीने मातापिताके कुलचारित्रके समान जो आपसे कहाहै हम वह समस्त आपके निकट कह
तेहैं ॥ १७ ॥ हे राजन् ! अबतक आपने जो कुछ कियाहै; बस वह बहुत होगया; इस समय श्रेष्ठ चरित्रको संग्रह करना आपको उचितहै. यदि तुम
सामर्थ्य रखते हो तो साधु लोगोंका आचरण किया हुआ धर्म आप आचरण करो ॥ १८ ॥ आपने नंदनवन उजाडा गया; अनेक ऋषि मार
डाले गये यह सब हमने देखा. और सुना है, देवता तुम्हारा नाश करनेके लिये जोः बडाभारी उद्योग करते हैं वहभी समस्त हमने सुना है ॥ १९ ॥ हे
राक्षसनाथ ! बालक अपराध करनेपरभी बन्धुलोगोंसे रक्षित होताहै, यद्यपि तुमने वारंवार हमारा निरादर कियाहै, तथापि तुम्हारी रक्षा करनी हमारा कर्तव्य है
॥ २० ॥ और हम जितेंद्रिय व नियमके वशहो रुद्रजीके प्रसाद पानेका व्रत धारणकर हिमालय पर्वतपर धर्मकी उपासना करनेके लिये गयेथे ॥ २१ ॥ उसी

राजन्वदामितेसर्वंभ्रातातवयदब्रवीत् ॥ उभयोःसदृशंवीरवृत्तस्यचकुलस्यच ॥१७॥ साधुपर्याप्तमेतावत्कृतश्चारित्रसंग्रहः ॥ साधुधर्मेव्यवस्थानं
क्रियतांयदिशक्यते ॥ १८ ॥ दृष्टंमेनंदनंभग्नमृषयोनिहताःश्रुताः ॥ देवतानांसमुद्योगस्त्वत्तोराजन्मयाश्रुतः ॥ १९ ॥ निराकृतश्चबहुशस्त्वयाहं
राक्षसाधिप ॥ सापराधोपिबालोहिरक्षितव्यःस्वबांधवैः ॥ २० ॥ अहंतुहिमवत्पृष्ठंगतोधर्ममुपासितुम् ॥ रौद्रंव्रतंसमास्थायनियतोनियते
न्द्रियः ॥ २१ ॥ तत्रदेवोमयादृष्टउमयासहितःप्रभुः ॥ सव्यंचक्षुर्मयादैवात्तत्रदेव्यांनिपातितम् ॥ २२ ॥ कान्वेषेतिमहाराजनखल्वन्येनहेतुना ॥
रूपंचानुपमंकृत्वारुद्राणीतत्रतिष्ठति ॥ २३ ॥ देव्यादिव्यप्रभावेणदग्धंसव्यंममेक्षणम् ॥ रेणुध्वस्तमिवज्योतिःपिंगलत्वमुपागतम् ॥ २४ ॥
ततोहमन्यद्विस्तीर्णंगत्वातस्यगिरेस्तटम् ॥ तूष्णींवर्षशतान्यष्टौसमधारंमहाव्रतम् ॥ २५ ॥ समाप्तेनियमेतस्मिंस्तत्रदेवोमहेश्वरः ॥ ततःप्रीतेन
मनसाप्राहवाक्यमिदंप्रभुः ॥ २६ ॥ प्रीतोस्मितवधर्मज्ञतपसानेनसुव्रत ॥ मयाचैतद्व्रतंचीर्णंत्वयाचैवधनाधिप ॥ २७ ॥

स्थानमें हमने पार्वतीजीके सहित देवाधिदेव महादेवजीको देखपाया, उस कालमें रुद्राणीजी अनुपम रूप धारण करके वहां स्थित थीं सो "यह कौन है" इसको
जाननेके लिये विस्मितहो हमने भाग्यके वशहो देवीकी ओर बाईं आंखसे देखा, इस देखनेमें और किसी प्रकारकाभी कारण नहींथा ॥ २२ ॥ २३ ॥ उसी
आंखसे निहारतेही देवीजीके दिव्य प्रभावसे हमारा बायां नेत्र भस्म होगया और धूल पडनेसे ढके नक्षत्रके समान हमारा वह नेत्र पीला पडगया ॥२४॥ इसके
उपरान्त हमने उस पर्वतकी ओर एक बडे विस्तारवाले तटपर मौनभावसे आठ शत वर्षतक सर्व भाँतिसे महाव्रत [illegible] नियम
समाप्त होगया तब देव महेश्वरजी वहां उपस्थित हुए [illegible] ॥ २५ ॥ अब यह नियम

एक हमनेही इस व्रतको पूर्ण कियाथा और एक इस समय तुमने किया ॥ २७ ॥ ...
आचरण करनेमें समर्थ हो, हमनेही यह परम दुष्कर व्रत प्रथम कालमें सिद्ध कियाथा ॥ २८ ॥ इस कारण हे सौम्य ! धनेश्वर ! तुम हमारे संग ...
होनेकी कामना करो. हे पापरहित ! तुमने तपके प्रभावसे हमको जीत लिया है इसलिये तुम हमारे सखा होओ ॥ २९ ॥ अधिक करके तुम्हारा बायां नेत्र
दग्ध होगयाहै, देवीजीका रूप देखनेसे पिंगल वर्ण होगयाहै ॥ ३० ॥ इसी कारणसे तुम्हारा " एकाक्षिपिङ्गली " नाम बहुत दिनोंतक बना रहेगा, इस प्रक...
शिवजीके साथ बंधुता प्राप्त करके उनकी आज्ञा ले ॥ ३१ ॥ जब हम लौटकर आये तब हम तुम्हारे पाप कार्योंकी बातें सुनने लगे इसी कारणसे तुमसे कह...

...र्तीयःपुरुषोनास्तियश्चरेद्व्रतमीदृशम् ॥ व्रतंसुदुष्करंह्येतन्मयैवोत्पादितंपुरा ॥ २८ ॥ तत्सखित्वंमयासौम्यरोचयस्वधनेश्वरः॥ तपसानिर्जि...
तश्चैवसखाभवममानघ ॥ २९ ॥ देव्यादग्धंप्रभावेणयच्चसव्यंतवेक्षणम् ॥ पैंगल्यंयदवाप्तंहिदेव्यारूपनिरीक्षणात् ॥ ३० ॥ एकाक्षिपिंगलीत्वे...
नामस्थास्यतिशाश्वतम् ॥ एवंतेनसखित्वंचप्राप्यानुज्ञांचशंकरात् ॥ ३१ ॥ आगतेनमयाचैवंश्रुतस्तेपापनिश्चयः ॥ तदधर्मिष्ठसंयोगान्निव...
कुलदूषणात् ॥ ३२ ॥ चिंत्यतेहियथोपायःसर्षिसंघैःसुरैस्तव ॥ एवमुक्तोदशग्रीवःकोपसंरक्तलोचनः ॥ ३३ ॥ हस्तान्दंतांश्चसंपिष्यवाक्यमे...
दुवाचह ॥ विज्ञातंतेमयादूतवाक्यंयत्त्वंप्रभाषसे ॥ ३४ ॥ नैवत्वमसिनैवासौभ्रात्रायेनासिचोदितः ॥ हितंनैषममैतद्धिब्रवीतिधनरक्षकः ...
॥ ३५ ॥ महेश्वरसखित्वंतुमूढःश्रावयतेकिल ॥ नैवेदंक्षमणीयंमेयदेतद्भाषितंत्वया ॥ ३६ ॥ यदेतावन्मयाकालंदूततस्यतुमर्षितम् ॥ नहंतव्यो...
गुरुर्ज्येष्ठोमयायमितिमन्यते ॥ ३७ ॥

कि, तुम कुलके कलंकजनक अधर्मी लोगोंका संग करना छोडदो ॥ ३२ ॥ निश्चय जान रक्खो कि, देवता और देवर्षि लोग मिलकर तुम्हारे वधका उपाय ...
रहेहैं । यह वचन सुनकर रावणके नेत्र क्रोधके मारे लाल हो आये ॥ ३३ ॥ वह दाँतोंको किटकिटाताहुआ और हाथोंको मलताहुआ क्रोधसे पूर्ण होकर बोला
हे दूत ! तेरा कहा हुआ हम समस्त जानतेहैं ॥ ३४ ॥ तू या तेरा भेजनेवाला हमारा भ्राता दोनोंकाही अब जीवित रहना नहीं पडेगा धनेश्वरने जो कुछभी कह...
यह कुछभी हमारा हितकर नहीं है ॥ ३५ ॥ उस मूढने हमको केवल यही सुनायाहै कि मैं महेश्वर का सखा होगया, इससे जो कुछ तैंने कहा उसको हम नहीं सह स...
॥ ३६ ॥ हे दूत ! इतने दिनोंतक जो हम चुप रहे इसका यह कारण है कि हम समझतेथे कि वह गुरुजनहैं बडे भ्राताहैं उनका मारना उचित नहींहै ॥ ३७

परन्तु इस समय उसका वचन सुनकर हमारी यह मति स्थिर हुई है कि, हम उसका विनाश करेंगे, अधिक करके आज हम बाहुवीर्यका आश्रय लेकर त्रिलोकीको जीतेंगे ॥ ३८ ॥ अधिक क्या कहें, हम केवल इस कुवेरके वध प्रसंगसे चारों लोकपालोंको इसी मुहूर्त यमराजके भवनमें पठावेंगे ॥ ३९ ॥ लंकापति रावणने यह कहकर खड्गके प्रहारसे दूतके प्राणोंका नाश किया, और उस दूतकी मृतक देह खानेको रावणने दुरात्मा राक्षसोंको आज्ञा दी ॥ ४० ॥ तिसके पीछे रावण त्रिलोकीको जीतनेके अभिलापसे स्वस्त्ययनादि पढ, रथपर चढ वहांको गया जहां कुवेरजी वसतेथे ॥ ४१ ॥ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकाण्डे भाषाटीकायां त्रयोदशः सर्गः ॥ १३ ॥ ॥ इसके उपरान्त सदाके बलदर्पित रावणने छः मंत्रियोंको मंगले, जिनके नाम महोदर,

तस्यत्विदानींश्रुत्वामेवाक्यमेपाकृतामतिः ॥ त्रीँल्लोकानपिजेष्यामिबाहुवीर्यमुपाश्रितः ॥ ३८ ॥ एतन्मुहूर्तमेवाहंतस्यैकस्यतुनेकृते ॥ चतुरोलोकपालांस्तान्नयिष्यामियमक्षयम् ॥ ३९ ॥ एवमुक्त्वातुलंकेशोदूतंखड्गेनजघ्निवान् ॥ ददौभक्षयितुंह्येनंराक्षसानांदुरात्मनाम् ॥ ४० ॥ ततःकृतस्वस्त्ययनोरथमारुह्यरावणः ॥ त्रैलोक्यविजयाकांक्षीययौयत्रधनेश्वरः ॥ ४१ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे त्रयोदशः सर्गः ॥ १३ ॥ ततःससचिवैःसार्धंषड्भिर्नित्यवलोद्धतः ॥ महोदरप्रहस्ताभ्यांमारीचशुकसारणैः ॥ १ ॥ धूम्राक्षेणचवीरेणनित्यंसमरगर्धिना ॥ वृतःसंप्रययौश्रीमान्क्रोधाल्लोकान्दहन्निव ॥ २ ॥ पुराणिसनदीःशैलान्वनान्युपवनानिच ॥ अतिक्रम्यमुहूर्तेनकैलासंगिरिमागमत् ॥ ३ ॥ सन्निविष्टंगिरौतस्मिन्राक्षसेंद्रंनिशम्यतु ॥ युद्धेप्सुंतंकृतोत्साहंदुरात्मानंसमंत्रिणम् ॥ ४ ॥ यक्षानशेकुःसंस्थातुंप्रमुखेतस्यरक्षसः ॥ राज्ञोभ्रातेतिविज्ञायगतायत्रधनेश्वरः ॥ ५ ॥ तेगत्वासर्वमाचख्युर्भ्रातुस्तस्यचिकीर्षितम् ॥ अनुज्ञातायुयुत्सध्युद्धायधनदेनते ॥ ६ ॥

प्रहस्त, मारीच, शुक, सारण ॥ १ ॥ और धूम्राक्ष थे इन सब वीरोंको जो कि, नित्य संग्राम करनेके लिये तैयार थे, साथ लिये तीनों लोकोंको भस्म करता हुआसाही रावण चला ॥ २ ॥ विविध नगर, नदी, पर्वत, और इन उपवनोंको एक मुहूर्तमें नांघकर कैलासके शिखरपर आया ॥ ३ ॥ दुर्मति राक्षसपति रावण मंत्रीजनोंके साथ समरकी वासनासे उत्साहितहो उस पर्वतके शिखरपर आयाहै ॥ ४ ॥ यहांके यक्ष लोग यह वृत्तान्त सुनकर उस राक्षसके सम्मुख खडे होनेमें समर्थ न ए बरन यह राक्षस कुबेरजी राजाके भ्राताहै, यह जान कुबेरजीके

होग कुर क आगा

होने लगा ॥ ७ ॥ फिर यक्ष और राक्षसलोगोंका कठोर युद्ध आरंभ हुआ, शीघ्रही राक्षसराजके सब मंत्री व्याकुल हुए ॥ ८ ॥ तब निशाचर दशग्रीव अपन सेनाका ऐसा हाल देख हर्ष सहित बडा भारी सिंहनाद करके क्रोधके वशहो उनके सम्मुख दौडा ॥ ९ ॥ राक्षसपति रावणके जो घोर पराक्रमी सचिवथे, उनमेंसे एक २ मंत्री हजार २ यक्षोंके साथ युद्ध करने लगे ॥ १० ॥ तब रावण शक्ति, तोमर, असि, मूसल और गदोंसे वध्यमानहो उस सेनाकी थाह लेने लगा ॥ ११ ॥ मेघसे छुटीहुई वर्षाकी धाराके समान शस्त्रोंकी धारासे निरन्तर घायलहो रावणको श्वास लेनेका अवकाशभी न रहा ॥ १२ ॥ मेघ जिसप्रकार पर्वतको जलसे

ततोबलानांसंक्षोभोव्यवर्धतइवोदधेः ॥ तस्यनैर्ऋतराजस्यशैलंसंचालयन्निव ॥ ७ ॥ ततोयुद्धंसमभवद्यक्षराक्षससंकुलम् ॥ व्यथिताश्चाभवंस्तत्रसचिवाराक्षसस्यते ॥ ८ ॥ सदृष्ट्वाताह्शंसैन्यंदशग्रीवोनिशाचरः ॥ हर्षनादान्बहून्कृत्वासक्रोधादभ्यभापत ॥ ९ ॥ येतुतेराक्षसेंद्रस्यसचिवाघोरविक्रमाः ॥ तेषांसहस्रमेकैकोयक्षाणांसमयोधयत् ॥ १० ॥ ततोगदाभिर्मुसलैरसिभिःशक्तितोमरैः ॥ हन्यमानोदशग्रीवस्तत्सैन्यंसमगाहत ॥ ११ ॥ सनिरुच्छ्वासवत्तत्रवध्यमानोदशाननः ॥ वर्षद्भिरिवजीमूतैर्धाराभिरवरुध्यत ॥ १२ ॥ नचकारव्यथांचैवयक्षशस्त्रैःसमाहतः ॥ महीधरइवांभोदैर्धाराशतसमुक्षितः ॥ १३ ॥ समहात्मासमुद्यम्यकालदंडोपमांगदाम् ॥ प्रविवेशततःसैन्यंनयन्यक्षान्यमक्षयम् ॥ १४ ॥ सकक्षमिवविस्तीर्णंशुष्कंधनमिवाकुलम् ॥ वातेनाग्निरिवादीप्तोयक्षसैन्यंददाहतत् ॥ १५ ॥ तैस्तुतत्रमहामात्यैर्महोदरशुकादिभिः ॥ अल्पावशेपास्तेयक्षाःकृतावातैरिवांबुदाः ॥ १६ ॥ केचित्समाहताभग्नाःपतिताःसमरेक्षितौ ॥ ओष्ठांश्चदशनैस्तीक्ष्णैरदशन्कुपितारणे ॥ १७ ॥ श्रांताश्चान्योन्यमालिंग्यभ्रष्टशस्त्रारणाजिरे ॥ सीदंतिचतदायक्षाःकूलाइवजलेनह ॥ १८ ॥

गीला करतेहैं वैसेही रावण रुधिरधारासे भीग गया, परन्तु यक्षलोगोंके असंख्य अस्त्रोंसे घायल होकरभी रावणने कुछ पीडा नहीं मानी ॥ १३ ॥ महाबलवान रावणने कालदंडकी समान गदा उठाय सेनामें प्रवेश करते २ अनेक यक्षोंको यमराजके भवनमें पहुँचा दिया ॥ १४ ॥ अग्निसे लहकीहुई आग जिस प्रकार घडे २ बहुत सूखे काठको जलादेती है वैसेही रावण यक्षोंकी सेनाको भस्म करने लगा ॥ १५ ॥ पवनके चलनेसे जिसप्रकार बादल टुकडे २ होजातेहैं, वैसेही महोदर और शुकादि मंत्रियोंनेभी यक्षोंको छिन्नभिन्न करके उनको बहुतही अल्प कर डाला ॥ १६ ॥ कोई २ संग्राममें घायलहो अंग कटाय पृथ्वीपर गिरपडे और कोई २ कुपितभावसे युद्धभूमिमें तीक्ष्ण दांतोंसे ओठ काटते २ पृथ्वीपर गिरे ॥ १७ ॥ सैकडों यक्ष थककर रणभूमिमें शस्त्र छोड परस्परको

लिपटने चिपटने लगे । इस प्रकारसे वह लोग धारसे टूटेहुए नदीके किनारेकी समान भहरा पडे ॥ १८ ॥ यक्ष वीरलोग पृथ्वीपर धाय २ युद्ध करते २ गङ्के द्वा थसे मृतकहो झुण्डके झुण्ड स्वर्गको गमन करने लगे. इस कारण युद्ध देखनेवाले ऋपिजनोंको और स्वर्गमें गये वीर लोगोंको वहां ठहरनेके लिये स्थान मिलना कठिन हुआ ॥ १९ ॥ पहले यक्षोंका राक्षसोंसे भागाजाना देख धननाथ महावीर कुबेरजी और दूसरे यक्षलोगोंको संग्राममें भेजने लगे ॥२०॥ हे राम! इसी अवस रमें संयोधकंटक नामक यक्ष कुबेरजीका भेजा हुआ बडीभारी सेना और वाहनोंके सहित संग्राममें आया ॥ २१ ॥ विष्णुजीके चक्रकी समान उस यक्षके चक्र मार नेसे मारीच राक्षस संग्राममें घायलहो पुण्यक्षीण नक्षत्रकी समान पर्वतसे पृथ्वीपर गिर पडा ॥ २२ ॥ निशाचर मारीच चेतना पाय एक मुहूर्ततक विश्राम करके

हतानांगच्छतांस्वर्गंयुध्यतामथधावताम् ॥ प्रेक्षतामृपिसंघानांबभूवनतदांतरम् ॥ १९ ॥ भग्नांस्तुतान्समालक्ष्ययक्षेंद्रांस्तुमहाबलान् ॥ धना ध्यक्षोमहाबाहुःप्रेषयामासयक्षकान् ॥ २० ॥ एतस्मिन्नंतरेरामविस्तीर्णबलवाहनः ॥ प्रेषितोन्यपतद्यक्षोनाम्नासंयोधकंटकः ॥ २१ ॥ तेन चक्रेणमारीचोविष्णुनेवरणेहतः ॥ पतितोभूतलेशैलात्क्षीणपुण्यइवग्रहः ॥ २२ ॥ ससंज्ञस्तुमुहूर्तेनसविश्रम्यनिशाचरः ॥ तंयक्षंयोधयामास सचभग्नःप्रदुद्रुवे ॥ २३ ॥ ततःकांचनचित्रांगंवैदूर्यरजतोक्षितम् ॥ मर्यादांप्रतिहाराणांतोरणान्तरमाविशत् ॥ २४ ॥ तंतुराजन्दशग्रीवंप्रविशंतं निशाचरम् ॥ सूर्यभानुरितिख्यातोद्वारपालोन्यवारयत ॥ २५ ॥ सवार्यमाणोयक्षेणप्रविवेशनिशाचरः ॥ यदातुवारितोरामनव्यतिष्ठत्स राक्षसः ॥ २६ ॥ ततस्तोरणमुत्पाट्यतेनयक्षेणताडितः ॥ रुधिरंप्रस्रवन्भातिशैलोधातुस्रवैरिव ॥ २७ ॥ सशैलशिखराभेणतोरणेनसमाहतः॥ जगामनक्षतिंवीरोवरदानात्स्वयंभुवः ॥ २८ ॥

उस यक्षसे युद्ध करताहै कि, इतनेहीमें वह यक्ष संग्रामसे भागगया ॥२३॥ जिस स्थानमें द्वारपाल लोग खडे रहतेहैं, सुवर्ण, चांदी और वैदूर्यमणिसे खचित मनोहर फाटकमें इसके पीछे रावण पैठा ॥ २४ ॥ हे राजन्! निशाचर रावण उस फाटकमें प्रवेश कर रहाथा, कि इतनेमें सूर्यभानु नामक द्वारपालने उसको निवारण किया ॥ २५ ॥ जब कि वह राक्षस रोका जाकरभी नहीं खडा हुआ और उसमें पैठताही गया । हे राम! जब कि निवारण किये जानेपरभी वह राक्षस शान्त नहीं हुआ ॥ २६ ॥ तब उस यक्षने फाटकमें लगा हुआ दंड उखाडकर उससे रावणको मारा तो उस कालमें रावण रुधिर चुआताहुआ ऐसा शोभायमान हुआ

दूसोंतर नहीं लगी ॥ २८ ॥ जिसके पीछे रावणने [illegible]
किगाईभी न लिया ॥ २९ ॥ तब राक्षस रावणका ऐसा पराक्रम देखकर वहांसे सब द्वारपाल भागगये फिर भयके मारे सब यक्ष अस्त्र शस्त्र छोड़कर थकावटके वश विवर्णमुख हो कोई नदियोंमें घुसे और कोई गुफाओंमें पैठे ॥ ३० ॥ इत्यार्षे श्रीमद्वा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषाटीकायां चतुर्दशः सर्गः ॥ १४ ॥
सहस्र २ पराक्रमकारी यक्षोंको त्रासित देखकर धनाध्यक्ष कुवेरजी माणिभद्रनामक एक महायक्षसे बोले ॥ १ ॥ हे यक्षश्रेष्ठ ! दुराचारी पापपरायण रावणको संग्राममें संहार कर तुम युद्धकी इच्छावाले वीर यक्षोंके रक्षक होवो ॥ २ ॥ यह वचन सुनकर दुर्जय महावीर माणिभद्र यक्ष चार हजार यक्षोंकी सेनाको साथ लेकर युद्ध करने लगा ॥ ३ ॥ यक्षलोग, गदा, मुसल, प्रास, शक्ति, तोमर और मुद्गरादि प्रहार करते २ राक्षसोंके ऊपर दौडने लगे ॥ ४ ॥ "अस्त्र दो" "नहीं हम इच्छा नहीं

तेनैवतोरणेनाथयक्षस्तेनाभिताडितः ॥ नादृश्यततदायक्षोभस्मीकृततनुस्तदा ॥२९॥ ततःप्रदुद्रुवुःसर्वेदृष्ट्वारक्षःपराक्रमम् ॥ ततोनदीर्गुहाश्चैवविविशुर्भयपीडिताः ॥ त्यक्तप्रहरणाःश्रांताविवर्णवदनास्तदा ॥३०॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा०वाल्मी०आदिकाव्ये उत्तरकाण्डे चतुर्दशः सर्गः ॥१४॥ ततस्तांल्लक्ष्यवित्रस्तान्यक्षेंद्रांश्चसहस्रशः ॥ धनाध्यक्षोमहायक्षंमाणिचारमथाब्रवीत् ॥१॥ रावणंजहियक्षेंद्रदुर्वृत्तंपापचेतसम् ॥ शरणंभववीराणांयक्षाणांयुद्धशालिनाम ॥२॥ एवमुक्तोमहाबाहुर्माणिभद्रःसदुर्जयः ॥ वृतोयक्षसहस्रैस्तुचतुर्भिःसमयोधयत् ॥३॥ तेगदामुसलप्रासैःशक्तितोमरमुद्गरैः ॥ अभिघ्नन्तस्तदायक्षाराक्षसान्समुपाद्रवन् ॥४॥ कुर्वंतस्तुमुलंयुद्धंचरंतःश्येनवल्लघु ॥ बाढंप्रयच्छनेच्छामिदीयतामितिभाषिणः ॥५॥ ततोदेवाःसगंधर्वाऋषयोब्रह्मवादिनः ॥ दृष्ट्वातत्तुमुलंयुद्धंपरंविस्मयमागमन् ॥६॥ यक्षाणांतुप्रहस्तेनसहस्रंनिहतंरणे ॥ महोदरेणचानिंद्यंसहस्रमपरंहतम् ॥७॥ क्रुद्धेनचतदाराजन्मारीचेनयुयुत्सुना ॥ निमेषांतरमात्रेणद्वेसहस्रेनिपातिते ॥८॥ क्वचयक्षार्जवंयुद्धंक्वचमायाबलाश्रयम् ॥ रक्षसांपुरुषव्याघ्रतेनतेऽभ्यधिकायुधि ॥ ९ ॥ धूम्राक्षेणसमागम्यमाणिभद्रोमहारणे ॥ मुसलेनोरसिक्रोधात्ताडितोनचकंपितः ॥ १० ॥

करते, तुम दो" इस प्रकारसे कहते २ यक्ष और राक्षसलोग बाज पक्षीकी समान घूम २ कर तुमुल युद्ध करने लगे ॥ ५ ॥ तिसके पीछे ब्रह्मवादी ऋषि, देवता और गन्धर्वगण उस तुमुल संग्रामको देखकर अत्यन्त विस्मित हुए ॥ ६ ॥ परन्तु प्रहस्तने हजार यक्षोंको संग्राममें मार डाला और महोदरनेभी एक सहस्र यक्षोंका महासंग्राममें संहार किया ॥ ७ ॥ हे राजन् ! उसकालमें मारीचने युद्धमें क्रोध कर एक पलक मारनेमें दो हजार यक्षोंको यमभवनमें भेजदिया ॥ ८ ॥ हे पुरुषश्रेष्ठ ! राक्षसोंका युद्ध मायाके बलसे होताथा. और यक्षोंका युद्ध सरलतासे पूर्णथा; इसलिये इन दोनोंके संग्राममें अधिक अन्तर था; और इसीसे राक्षसलोग संग्राममें बढ़गये ॥ ॥ ९ ॥ धूम्राक्षने उस महासंग्राममें आयकर कोपके वशहो मूसल माणिभद्रकी छातीमें मारा; परन्तु माणिभद्र उस मूसलके लगनेसे चलायमान

नहीं हुआ ॥ १० ॥ परन् माणिभद्रने गदा उठायकर धूम्राक्षके शिरपर मारी वह इस गदाके लगनेसे विह्वलहो गिरपडा ॥ ११ ॥ धूम्राक्षको ताडित और रुधि रसे रंगकर पृथ्वीपर गिरते देख रावण माणिभद्रके सन्मुख युद्ध करनेकेलिये दौडा ॥ १२ ॥ तब यक्षोंमें श्रेष्ठ माणिभद्रने क्रोधके वशहो सन्मुख दौडकर आते हुए रावणके तीन शक्तियें मारीं ॥ १३ ॥ राक्षसराज रावणने उन शक्तियोंके प्रहारसे ताडित हो माणिभद्रके मुकुटपर प्रहार किया; उस प्रहारसे माणिभद्रका मुकुट शिरसहित आप बगलमें हो रहा ॥ १४ ॥ हे राजन् ! तबसे यह यक्ष " पार्श्व मौलि " हुआ अर्थात् वह मुकुट सहित शिर उसकी बगलमें स्थित हुआ, फिर शिरके स्थानपर स्थित हुआ, जब महात्मा माणिभद्रजी भागे तब राक्षसलोगोंका बडाभारी शब्द उसपर्वतपर बढने लगा ॥ १५ ॥ इसके उपरान्त गदाधारी कुबे

ततोगदांसमाविध्यमाणिभद्रेणराक्षसः॥ धूम्राक्षस्ताडितोमूर्ध्निविह्वलःसपपातह ॥११॥ धूम्राक्षंताडितंदृष्ट्वापतितंशोणितोक्षितम् ॥ अभ्यधावत संग्राममेमाणिभद्रंदशाननः ॥१२॥ संक्रुद्धमभिधावंतंमाणिभद्रोदशाननम् ॥ शक्तिभिस्ताडयामासतिसृभिर्यक्षपुंगवः ॥ १३ ॥ ताडितोमाणिभद्र स्यमुकुटेप्राहरद्रणे ॥ तस्यतेनप्रहारेणमुकुटंपार्श्वमागतम् ॥१४॥ ततःप्रभृतियक्षोसौपार्श्वमौलिरभूत्किल ॥ तस्मिंस्तुविमुखीभूतेमाणिभद्रेमहा त्मनि॥ सन्नादःसुमहान्राजंस्तस्मिञ्शैलेव्यवर्धत ॥१५॥ ततोदूरात्प्रददृशेधनाध्यक्षोगदाधरः ॥ शुक्रप्रौष्ठपदाभ्यांचपद्मशंखसमावृतः ॥१६॥ सदृष्ट्वाभ्रातरंसंख्येशापाद्विभ्रष्टगौरवम् ॥ उवाचवचनंधीमान्युक्तंपैतामहेकुले ॥ १७ ॥ यन्मयावार्यमाणस्त्वंनावगच्छसिदुर्मते ॥ पश्चादस्यफ लंप्राप्यज्ञास्यसेनिरयंगतः ॥ १८ ॥ योहिमोहाद्विषंपीत्वानावगच्छतिदुर्मतिः ॥ सतस्यपरिणामंतेजानीतेकर्मणःफलम् ॥ १९ ॥ दैवतानिन नंदंतिधर्मयुक्तेनकेनचित् ॥ येनत्वमीदृशंभावंनीतस्तच्चनबुद्ध्यसे ॥ २० ॥

रजी, पद्म व शंख नामक निधिके अधिष्ठाता देवताके साथहो शुक्र और प्रौष्ठपद नामक दो मंत्रियोंके साथ दूरसे ॥१६॥ अपने भ्राताको देखते हुए. विश्रवाके शापके मारे गौरवहीन भ्राताको संग्राममें देखकर वह कुबेरजी उससे ब्रह्माजीके कुलके योग्य वचन कहने लगे ॥१७॥ रे दुर्मते ! तू हम करके असत्कार्यसे निवारित होकरभी हमारे वचनोंका तात्पर्य नहीं जानता, इस कारण पीछेसे नरकमें जायकर उसके फलको जानेगा ॥ १८ ॥ विशेष करके जो दुर्मति मोहके वशहो विष पीकर उसको नहीं जान सकता, वह उसके परिणाममें कर्मके फलको जानता है ॥ १९ ॥ धर्मयुक्त किसी प्राकृत कारणके वश इस समय सब देवता तुमसे विमुख हुए. अब तुमने धर्म न करनेसे और [illegible]

ः। पुरुष माता, ता, ... करता, वह मूढ मृतक होकर अपने कर्मसे सम्पादित गति प्राप्त करके पीछेसे संतापित ोता ॥ २२ ॥ विशेष करके
शरीर धारणकर तपस्याका उपार्जन नहीं करता, वह मूढ मृतक होकर अपने कर्मसे सम्पादित गति प्राप्त करके पीछेसे संतापित ोता ॥ २२ ॥ विशेष करके
ताकी सेवा विना किसीभी पुरुषको अपनी इच्छासे सुमति नहीं होती इस कारण माता पिताकी सेवासे विहीन हो जैसा कर्म करताहै वैसाही उसको
ता है ॥२३॥ मनुष्य इस जगत्में पुण्यकार्यके करनेसेही पुत्र, धन, बल, रूप, समृद्धि और शूरताको प्राप्त होतेहैं ॥ २४ ॥ तू जो ऐसा दुष्कपट करताहै,
अवश्यही नरकमें जायगा; विशेष करके जब कि तेरी ऐसी बुद्धिहै तिससे हम तेरे साथ बातचीतभी नहीं कर सकतेहैं, क्योंकि असदाचारी पुरुषोंसे सदाचारी

तरंविप्रमाचार्यंचावमन्यते ॥ सपश्यतिफलंतस्यप्रेतराजवशंगतः ॥ २१ ॥ अध्रुवेहिशरीरेयोनकरोतितपोर्जनम् ॥ सपश्चात्तप्यतेमूढोमृ
॥त्मनोगतिम् ॥ २२ ॥ कस्यचिन्नहिदुर्बुद्धेश्छंदतोजायतेमतिः ॥ यादृशंकुरुतेकर्मतादृशंफलमश्नुते ॥ २३ ॥ ऋद्धिरूपंबलंपुत्रान्वित्तं
रत्यमेवच ॥ प्राप्नुवंतिनरालोकेनिर्जितंपुण्यकर्मभिः ॥२४॥ एवंनिरयगामीत्वंयस्यतेमतिरीदृशी ॥ नत्वांसमभिभाषिष्येऽसद्वृत्तेष्वेषनिर्णयः
॥ २५ ॥ एवमुक्तास्ततस्तेनतस्यामात्याःसमाहताः ॥ मारीचप्रमुखाःसर्वेविमुखाविप्रदुद्रुवुः ॥ २६ ॥ ततस्तेनदशग्रीवोयक्षेंद्रेणमहात्मना ॥
गदयाभिहतोमूर्ध्निनचस्थानात्प्रकंपितः ॥२७॥ ततस्तौराममनिघ्नंतौतदान्योन्यंमहामृधे ॥ नविह्वलौनचश्रांतौताबुभौयक्षराक्षसौ ॥२८॥ आग्ने
यमस्त्रंतस्मैसमुमोचधनदस्तदा ॥ राक्षसेंद्रोवारुणेनतदस्त्रंप्रत्यवारयत् ॥ २९ ॥ ततोमायांप्रविष्टोसौराक्षसींराक्षसेश्वरः ॥ रूपाणांशतसाहस्रं
विनाशायचकारच ॥ ३० ॥ व्याघ्रोवराहोजीमूतःपर्वतःसागरोद्रुमः ॥ यक्षोदैत्यस्वरूपीचसोऽदृश्यतदशाननः ॥ ३१ ॥

लोगोंको यही कर्तव्य है ॥ २५ ॥ तिसके पीछे यक्षराज कुबेरजीने रावणके मारीचादि मंत्रियोंसेभी यह कहकर उन लोगोंके ऊपर प्रहार किया, वह कुबेरजीसे घायल
होतेही संग्राममें विमुखहो भाग गये ॥ २६ ॥ जब मंत्री भागगये तब महात्मा यक्षनाथ कुबेरजीने रावणके मस्तकपर गदासे प्रहार किया, रावणके यह गदा लगी
तो सही, परन्तु वह अपने स्थानसे चलायमान नहीं हुआ ॥२७॥ हे रामचन्द्रजी ! उस कालमें यक्ष और राक्षस दोनों परस्पर चोट चलाकर न थकेही न कुछ विह्व
ल्ही हुए ॥ २८ ॥ तब कुबेरजीने रावणके ऊपर अग्निअस्त्र चलाया, राक्षसपति रावणने वरुणास्त्रसे उसको शान्तकर दिया ॥ २९ ॥ तिसके पीछे निशाचरनाथ
रावणने कुबेरजीका संहार करनेके लिये राक्षसी मायाका आश्रय ले सैकडों हजारों रूप धारण किये ॥३०॥ रावण क्रमसे वराह (शूकर) व्याघ्र, पर्वत, बादल,

नहीं हुआ ॥ १० ॥ मरन् माणिभद्रने गदा उठायकर धूम्राक्षके शिरपर मारी वह इस गदाके लगनेसे विह्वलहो गिरपडा ॥ ११ ॥ धूम्राक्षको ताडित और रुधि
रसे रंगकर पृथ्वीपर गिरते देख रावण माणिभद्रके सन्मुख युद्ध करनेकेलिये दौडा ॥ १२ ॥ तब यक्षोंमें श्रेष्ठ माणिभद्रने क्रोधके वशहो सन्मुख दौडकर आते हुए
रावणके तीन शक्तियें मारीं ॥ १३ ॥ राक्षसराज रावणने उन शक्तियोंके प्रहारसे ताडित हो माणिभद्रके मुकुटपर प्रहार किया; उस प्रहारसे माणिभद्रका मुकुट
गिरमहित आय पगलमें हो रहा ॥ १४ ॥ हे राजन् ! तबसे यह यक्ष " पार्श्व मौलि " हुआ अर्थात् वह मुकुट सहित शिर उसकी बगलमें स्थित हुआ, फिर
गिरके स्थानपर स्थित हुआ, जब महात्मा माणिभद्रजी भागे तब राक्षसलोगोंका बडाभारी शब्द उसपर्वतपर बढने लगा ॥ १५ ॥ इसके उपरान्त गदाधारी कुबे

ततोगदांसमाविध्यमाणिभद्रेणराक्षसः॥ धूम्राक्षस्ताडितोमूर्ध्निविह्वलःसपपातह ॥११॥ धूम्राक्षंताडितंदृष्ट्वापतितंशोणितोक्षितम् ॥ अभ्यधावत
संग्रामेमाणिभद्रंदशाननः ॥१२॥ संक्रुद्धमभिधावंतंमाणिभद्रोदशाननम् ॥ शक्तिभिस्ताडयामासतिसृभिर्यक्षपुंगवः ॥१३॥ ताडितोमाणिभद्र
स्यमुकुटेप्राहरद्रणे ॥ तस्यतेनप्रहारेणमुकुटंपार्श्वमागतम् ॥१४॥ ततःप्रभृतियक्षोसौपार्श्वमौलिरभूत्किल ॥ तस्मिंस्तुविमुखीभूतेमाणिभद्रेमहा
त्मनि॥ सन्नादःसुमहान्राजंस्तस्मिन्शैलेव्यवर्धत ॥१५॥ ततोदूरात्प्रददृशेधनाध्यक्षोगदाधरः ॥ शुक्रप्रौष्ठपदाभ्यांचपद्मशंखसमावृतः ॥१६॥
सदृष्ट्वाभ्रातरंसंख्येशापाद्विभ्रष्टगौरवम् ॥ उवाचवचनंधीमान्युक्तंपैतामहेकुले ॥ १७ ॥ यन्मयावार्यमाणस्त्वंनावगच्छसिदुर्मते ॥ पश्चादस्यफ
लंप्राप्यज्ञास्यसेनिरयंगतः ॥ १८ ॥ योहिमोहाद्विषंपीत्वानावगच्छतिदुर्मतिः ॥ सतस्यपरिणामांतेजानीतिकर्मणःफलम् ॥ १९ ॥ दैवतानिन
नंदंतिधर्मयुक्तेनकेनचित् ॥ येनत्वमीदृशंभावंनीतस्तच्चनबुद्ध्यसे ॥ २० ॥

रजी, पद्म व शंख नामक निधिके अधिष्ठाता देवताके साथही शुक्र और प्रौष्ठपद नामक दो मंत्रियोंके साथ दूरसे ॥१६॥ अपने भ्राताको देखते हुए. विश्रवाके शापके
मारे गौरवहीन भ्राताको संग्राममें देखकर वह कुवेरजी उससे ब्रह्माजीके कुलके योग्य वचन कहने लगे ॥१७॥ रे दुर्मते ! तू हम करके असत्कार्यसे निवारित होकरभी
हमारे वचनोंका तात्पर्य नहीं जानता, इस कारण पीछेसे नरकमें जायकर उसके फलको जानेगा ॥ १८ ॥ विशेष करके जो दुर्मति मोहके वशहो विष
पीकर उसको नहीं जान सकता, वह उसके परिणाममें कर्मके फलको जानता है ॥ १९ ॥ धर्मयुक्त किसी प्राकृत कारणके वश इस समय सब देवता
तुमसे विमुख हुए हैं, अब तुममें धर्म न रहनेसे और देवतालोगोंका अनादर होनेसे तेरा जो ऐसा क्रूर स्वभाव होगयाहै तू इसको नहीं जानताहै ॥२०॥

शरीर धारणकर तपस्याका उपार्जन नहीं करता, वह मूढ मृतक होकर अपने क पिताकी सेवासे विहीन हो जैसा कर्म करताहै वैसाही उसको
माता पिताकी सेवा विना किसीभी पुरुषको अपनी इच्छासे सुमति नहीं होती इस कारण माता
फल मिलता है ॥२३॥ मनुष्य इस जगत्में पुण्यकार्यके करनेसेही पुत्र, धन, बल, रूप, समृद्धि और शूरताको प्राप्त होतेहैं ॥ २४ ॥ तू जो ऐसा दुष्कपट करताहै,
इसलिये तू अवश्यही नरकमें जायगा; विशेष करके जब कि तेरी ऐसी बुद्धिहै तिससे हम तेरे साथ बातचीतभी नहीं कर सकतेहैं, क्योंकि असदाचारी पुरुषोंसे सदाचारी

मातरंपितरंविप्रमाचार्यंचावमन्यवे ॥ सपश्यतिफलंतस्यप्रेतराजवशंगतः ॥ २१ ॥ अध्रुवेहिशरीरेयोनकरोतितपोर्जनम् ॥ सपश्चात्तप्यतेमूढोमृ
तोगत्वात्मनोगतिम् ॥ २२ ॥ कस्यचिन्नहिदुर्बुद्धेश्छंदतोजायतेमतिः ॥ यादृशंकुरुतेकर्मतादृशंफलमश्नुते ॥ २३ ॥ ऋद्धिरूपंबलंपुत्रान्वित्तं
शूरत्वमेवच ॥ प्राप्नुवंतिनरालोकेनिर्जितंपुण्यकर्मभिः ॥२४॥ एवंनिरयगामीत्वंयस्यतेमतिरीदृशी ॥ नत्वांसमभिभाषिष्येऽसद्वृत्तेष्वेपनिर्णयः
॥ २५ ॥ एवमुक्तास्ततस्तेनतस्यामात्याःसमाहताः ॥ मारीचप्रमुखाःसर्वेविमुखाविप्रदुद्रुवुः ॥ २६ ॥ ततस्तेनदशग्रीवोयक्षेंद्रेणमहात्मना ॥
गदयाभिहतोमूर्ध्निनचस्थानात्प्रकंपितः ॥२७॥ ततस्तौरामनिघ्नंतौतदान्योन्यंमहामृधे ॥ नविह्वलौनचश्रांतौतावुभौयक्षराक्षसौ ॥२८॥ आग्ने
यमस्त्रंतस्मैसमुमोचधनदस्तदा ॥ राक्षसेंद्रोवारुणेनतदस्त्रंप्रत्यवारयत् ॥ २९ ॥ ततोमायांप्रविष्टोसौराक्षसोराक्षसेश्वरः ॥ रूपाणांशतसाहस्रं
विनाशायचकारच ॥ ३० ॥ व्याघ्रोवराहोजीमूतःपर्वतःसागरोद्रुमः ॥ यक्षोदैत्यस्वरूपीचसोऽदृश्यतदशाननः ॥ ३१ ॥

लोगोंको यही कर्तव्य है ॥ २५ ॥ तिसके पीछे यक्षराज कुबेरजीने रावणके मारीचादि मंत्रियोंसेभी यह कहकर उन लोगोंके ऊपर प्रहार किया, वह कुबेरजीसे घायल
होनेही संग्राममें विमुखहो भाग गये ॥ २६ ॥ जब मंत्री भागगये तब महात्मा यक्षनाथ कुबेरजीने रावणके मस्तकपर गदासे प्रहार किया, रावणके यह गदा लगी
तो सही, परन्तु वह अपने स्थानसे चलायमान नहीं हुआ ॥२७॥ हे रामचन्द्रजी ! उस कालमें यक्ष और राक्षस दोनों परस्पर चोट चलाकर न थकेही न कुछ विह्व
लही हुए ॥ २८ ॥ तब कुबेरजीने रावणके ऊपर अग्निअस्त्र चलाया, राक्षसपति रावणने वरुणास्त्रसे उसको शान्तकर दिया ॥ २९ ॥ तिसके पीछे निशाचरनाथ
रावणने कुबेरजीका संहार करनेके लिये राक्षसी मायाका आश्रय ले सैकडों हजारों रूप धारण किये ॥३०॥ रावण क्रमसे वराह (शूकर) व्याघ्र, पर्वत, बादल,

वृक्ष, यक्ष और दैत्यरूप धारण करके दर्शन देने लगा ॥३१॥ और बाणोंकी धारा छोडने लगा, परन्तु उसकी ओर किसीने नहीं देख पाया । हे राम ! इसके उपरान्त रावण बडाभारी अस्त्र ग्रहण करके उस गदाको विद्धकर कुबेरजीके मस्तकपर प्रहार करता हुआ ॥ ३२ ॥ रावणसे इसप्रकार घायलहो धनेश्वर कुबेरजी सब अंगोंसे रुधिर बहाते और विह्वलहो जड कटेहुए वृक्षकी समान पृथ्वीपर गिर पडे ॥ ३३ ॥ तब पद्म इत्यादि निधि देवता कुबेरजीको नंदन काननमें लाय चारों ओरसे घेर उनको चैतन्य करते हुए ॥ ३४ ॥ इस प्रकारसे धनेश्वर कुबेरजीको जीतकर राक्षसपति रावण हर्षितचित्तहो जयचिह्न स्वरूप उनका पुष्पक नाम विमान ग्रहणकर लेता हुआ ॥ ३५ ॥ इस विमानके सब स्तम्भ सुवर्णके बने हुए थे और द्वार वैदूर्यमणिसे खचितथे, मोतियोंके जालसे यह ढका हुआथा और सर्व

बहूनिचकरोतिस्मदृश्यंतेनत्वसौततः ॥ प्रतिगृह्यततोराममहदस्त्रंदशाननः ॥ जघानमूर्ध्निधनदंव्याविध्यमहतींगदाम् ॥३२॥ एवंसतेनाभिहतोविह्वलः शोणितोक्षितः॥ कृत्तमूलइवाशोकोनिपपातधनाधिपः॥३३॥ ततःपद्मादिभिस्तत्रनिधिभिःसतदावृतः ॥ धनदोच्छ्वासितस्तैस्तुवनमानीयनंदनम् ॥ ३४ ॥ निर्जित्यराक्षसेंद्रस्तंधनदंहृष्टमानसः ॥ पुष्पकंतस्यजग्राहविमानंजयलक्षणम् ॥३५॥ कांचनस्तंभसंवीतंवैदूर्यमणितोरणम् ॥ मुक्ताजालप्रतिच्छन्नंसर्वकालफलद्रुमम् ॥ ३६ ॥ मनोजवंकामगमंकामरूपंविहंगमम् ॥ मणिकांचनसोपानंतप्तकांचनवेदिकम् ॥ ३७ ॥ देवोपवाह्यमक्षय्यंसदादृष्टिमनःसुखम् ॥ बह्वाश्चर्यंभक्तिचित्रंब्रह्मणापरिनिर्मितम् ॥ ३८ ॥ निर्मितंसर्वकामैस्तुमनोहरमनुत्तमम् ॥ नतुशीतंनचोष्णंचसर्वर्तुसुखदंशुभम् ॥ ३९ ॥ सतंराजासमारुह्यकामगंवीर्यनिर्जितम् ॥ जितंत्रिभुवनंमेनेदर्पोत्सेकात्सुदुर्मतिः ॥ जित्वावैश्रवणंदेवंकैलासात्समवातरत् ॥ ४० ॥

कालमें फलदेनेवाले वृक्ष इसमें लग रहेथे ॥३६॥ मनके वेगकी समान चलनेवाला, कामनाके समान चलनेवाला कामरूपी विहंगमकी समान वेगयुक्त मणि व सुवर्णकी जिसमें सीढियें लगरहीं, तपायेहुए सुवर्णके जिसमें चबूतरे बन रहेथे ॥३७॥ अपने ऊपर सदा देवतोंकोही चढानेवाला, दृष्टि और मनको सदा सुख देनेवाला, उसपरके सब पदार्थ अक्षयथे, अनेक प्रकारकी आश्चर्ययुक्त वस्तुयें उसपर रक्खीथीं, अनेक प्रकारकी रचनाओंसे जिसे विश्वकर्माजीने बनायाथा ॥ ३८ ॥ यह विमान ऐसा बनाथा कि सर्व कामका देनेवालाथा. मनोहर और श्रेष्ठथा, न उसमें बहुत गरमीहीथी, न बहुत शीतलताथी, वरन् वह शुभ विमान, सर्व ऋतुओंमें सुखदाई था ॥ ३९ ॥ वह [illegible] ति राक्षसराज रावण अपने [illegible] गामी उस पुष्पकविमानपर सवारहो गर्वके वश हो अपने मनमें समझता हुआ कि,

बडी भारी तिरको ताप विमल किरीट और हारसे शोभायमान बने उत्तम मानपर सवारहो सभामें पधारकर

इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकाण्डे भाषाटीकायां पंचदशः सर्गः ॥ १५ ॥ हे राम ! राक्षसपति रावण अपने भाई धननाथ कुबेरजीको जीत अति शूर

स्वामिकार्तिकजीकी जन्मभूमिके बडेभारी शरपत वनमें गया ॥ १ ॥ वहां जाकर रावणने सुवर्णमय बडाभारी शरपतका वन चारों ओर किरणजाल छिट

काते हुए दूसरे सूर्यके समान प्रकाशमान देखा ॥ २ ॥ हे राम ! उस रमणीय काननयुक्त पर्वतपर चढकर रावणने देखा कि, यहाँ पुष्पकविमानकी गति रुक

धनेनमाविपुलमवाप्यतंजयमनापवान्विमलकिरीटहारवान् ॥ रराजतेपरमविमानमास्थितोनिशाचरःसदसिगतोयथानलः ॥ ४१ ॥ इत्यार्षे

श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे पंचदशः सर्गः ॥ १५ ॥ सजित्वाधनदंरामभ्रातरंराक्षसाधिपः ॥ महासेनप्रसूतिंतद्ययौ

शरवणंमहत् ॥ १ ॥ अथापश्यद्दशग्रीवोरौक्मंशरवणंमहत् ॥ गभस्तिजालसंवीतंद्वितीयमिवभास्करम् ॥ २ ॥ सपर्वतंसमारुह्यकंचिद्रम्य

वनांतरम् ॥ प्रेक्षतेपुष्पकंतत्ररामविष्टंभितंतदा ॥ ३ ॥ विष्टब्धंकिमिदंकस्मान्नागमत्कामगंकृतम् ॥ अचिंतयद्राक्षसेंद्रःसचिवैस्तैःसमावृतः ॥

॥ ४ ॥ किंनिमित्तमिच्छयामेनेदंगच्छतिपुष्पकम् ॥ पर्वतस्योपरिष्टस्यकर्मेदंकस्यचिद्भवेत् ॥ ५ ॥ ततोऽब्रवीत्तदारामममारीचोबुद्धिकोविदः ॥

नेदंनिष्कारणंराजन्पुष्पकंयन्नगच्छति ॥६॥ अथवापुष्पकमिदंधनदान्नान्यवाहनम् ॥ अतोनिस्पंदमभवद्धनाध्यक्षविनाकृतम् ॥७॥ इतिवाक्यां

तरेतस्य करालःकृष्णपिंगलः ॥ वामनोविकटोमुंडीनंदीह्रस्वभुजोबली ॥ ८ ॥ ततःपार्श्वमुपागम्यभवस्यानुचरोऽब्रवीत् ॥ नंदीश्वरोवचश्चेदंराक्ष

सेंद्रमशंकितः ॥ ९ ॥

गई है ॥ ३ ॥ तब राक्षसराज रावण अपने मंत्रियोंके साथ चिन्ता करने लगा कि, यह विमान तो स्वभावसे कामगामीहै तथापि किसकारणसे इसकी गति रुक गई॥

॥ ४ ॥ पर्वतके ऊपर आयकर पुष्पकविमान हमारी इच्छानुसार क्यों नहीं चलताहै इसकी गतिको रोकना किसका कामहै ॥ ५ ॥ हे राम ! उसी समय बुद्धि

कोविद मारीचने कहा कि राजन ! पुष्पक जो गमन नहीं करता यह कारणरहित बात नहीं, अवश्य कोई कारण होगा ॥ ६ ॥ अथवा यह पुष्पक विमान

कुबेरजीके सिवाय और किसीको अपने ऊपर नहीं लेचलता होगा इसलिये यह कुबेरजीसे छुटकर निश्चल होगयाहै ॥ ७ ॥ इधर रावणादिक यही विचार करतेथे

कि, अति करालरूप काले पीले रंगके बहुत छोटा डील विकटरूप मूँड मुँडाये छोटे हाथवाले बलवान् नंदी ॥ ८ ॥ जोकि महादेवजीके अनुचरथे वहां आयकर

बोले, इन नन्दीश्वरने अशंकित भावसे राक्षसराज रावणसे कहा ॥ ९ ॥ हे दशग्रीव ! तुम लौट जाओ, क्योंकि इस पर्वतपर शिवजी महाराज क्रीडा करतेहैं क्या गरुड, क्या नाग, क्या गन्धर्व, क्या देवता, क्या यक्ष॥ १०॥ सब प्राणियोंकोभी इस पर्वतपर आनेकी मनाईहै, नंदीके यह वचन सुनकर क्रोधकेमारे रावणके कुंडल कंपायमान होने लगे ॥ ११ ॥ और क्रोधके मारे लाल २ नेत्र करके कौन शंकर है ? यह कह वह पुष्पक विमानसे उतर पर्वतके नीचे आया ॥ १२ ॥ रावणने देखा कि, वहां नंदी शूलको उठाये दूसरे महादेवजीकी समान हो व शंकरजीके निकटही खडे हैं ॥ १३ ॥ निशाचर रावण उन नंदीश्वरका वानरकी समान मुख देख निरादरकर सजल मेघकी समान ऊंचे शब्दसे ठठायकर हँस पडा ॥१४॥ श्रीशंकरजीके दूसरे शरीर भगवान् नंदीश्वरजी उस अत्यन्त क्रुद्ध होकर आये

निवर्तस्वदशग्रीवशैलेक्रीडतिशंकरः ॥ सुपर्णनागयक्षाणांदेवगंधर्वरक्षसाम् ॥ १० ॥ सर्वेषामेवभूतानामगम्यःपर्वतःकृतः ॥ इतिनंदिवचः श्रुत्वाक्रोधात्कंपितकुंडलः ॥ ११ ॥ रोषात्तुताम्रनयनःपुष्पकादवरुह्यसः ॥ कोयंशंकरइत्युक्त्वाशैलमूलमुपागतः ॥ १२ ॥ सोऽपश्यन्नंदिनंतत्र देवस्यादूरतःस्थितम् ॥ दीप्तंशूलमवष्टभ्यद्वितीयमिवशंकरम् ॥१३॥ तंदृष्ट्वावानरमुखमवज्ञायसराक्षसः ॥ प्रहासंमुमुचेतत्रसतोयइवतोयदः ॥ ॥ १४ ॥ तंक्रुद्धोभगवान्नंदीशंकरस्यापरातनुः ॥ अब्रवीत्तत्रतद्रक्षोदशाननमुपस्थितम् ॥ १५ ॥ यस्माद्वानररूपंमामवज्ञायदशानन ॥ अशनीपातसंकाशमपहासंप्रमुक्तवान् ॥ १६ ॥ तस्मान्मद्वीर्यसंयुक्तामद्रूपसमतेजसः ॥ उत्पत्स्यंतिवधार्थंहिकुलस्यतववानराः ॥ १७ ॥ नखदंष्ट्रायुधाःक्रूरमनःसंपातरंहसः ॥ युद्धोन्मत्ताबलोद्रिक्ताःशैलाइवविसर्पिणः ॥ १८ ॥ तेतवप्रबलंदर्पमुत्सेधंचपृथग्विधम् ॥ व्यपनेष्यंतिसंभूयसहामात्यसुतस्यच ॥ १९ ॥ किंत्विदानींमयाशक्यंहंतुंत्वांहेनिशाचर ॥ नहंतव्योहतस्त्वंहिपूर्वमेवस्वकर्मभिः ॥ २० ॥

हुए राक्षस रावणसे बोले ॥ १५ ॥ रे दशानन ! हमको वानररूपी दर्शन करके निरादर दिखाय वज्रके गिरनेकी समान गंभीर शब्दसे हँसा ॥ १६ ॥ इसलिये तेरे वंशका नाश करनेके निमित्त हमारे समान वीर्यवान् और तेजस्वी वानर हमारे वीर्यसे संयुक्त होकर उत्पन्न होंगे ॥१७॥ वह नख दांतको आयुध बनाये वानर मनकी समान शीघ्र चलनेवाले, रणमें उन्मत्त पर्वतकी समान विशाल, बलसम्पन्न और क्रूर होंगे ॥१८॥ वह यों उत्पन्न होकर पुत्र और मंत्रियोंके साथ तुम्हारा मानसिक प्रबल दर्प और अहंकार सब दूर करेंगे ॥ १९ ॥ हे निशाचर ! हम अभी तुमको मार सकते हैं परन्तु तेरे विनाश करनेके लिये चेष्टा करना वृथा है

गमे फूलोंकी वर्षा हुई ॥ २१ ॥ तब महाबलवान् दशानन नदीश्वरजीके [illegible] ॥ २३॥ किस प्रभावसे महादेवजी राजा
करके क्रीडाके लिये गमन करते २ हमारे पुष्पकविमानकी गति रुकगई है हम तुम्हारे इस पर्वतको भी उखाडे डालते हैं॥ २३॥ किस प्रभावसे महादेवजी राजा
की समान क्रीडा करतेहैं, यह जानना उचित है,विशेष करके अधिक भय उपस्थित हुआहै और वह उसको नहीं जानते हैं ॥२४॥ हे राम ! इस प्रकारसे कह रावण
पर्वतके नीचे अपने हाथ लगाय शीघ्र उस पर्वतको उठाने लगा तब उठनेसे वह पर्वत कंपायमान हुआ ॥२५॥ पर्वतके चलायमान होनेसे महादेवजीके समस्तगण कांप

इत्युदीरितवाक्येतुदेवेतस्मिन्महात्मनि ॥ देवदुंदुभयोनेदुःपुष्पवृष्टिश्चखाच्च्युता ॥ २१ ॥ अचिंतयित्वासतदानंदिवाक्यंमहाबलः ॥ पर्वतंतुस मासाद्यवाक्यमाहदशाननः ॥ २२ ॥ पुष्पकस्यगतिश्छिन्नायत्कृतेममगच्छतः ॥ तमिमंशैलमुन्मूलंकरोमितवगोपते ॥ २३ ॥ केनप्रभावेण भवोनित्यंक्रीडतिराजवत् ॥ विज्ञातव्यंनजानीतेभयस्थानमुपस्थितम् ॥ २४ ॥ एवमुक्त्वाततोरामभुजान्विक्षिप्यपर्वते ॥ तोलयामासतंशी घ्रंसशैलःसमकंपत ॥२५ ॥ चालनात्पर्वतस्यैवगणादेवस्यकंपिताः ॥ चचालपार्वतीचापितदाश्लिष्टामहेश्वरम् ॥ २६ ॥ ततोराममहादेवोदे वानांप्रवरोहरः ॥ पादांगुष्ठेनतंशैलंपीडयामासलीलया ॥ २७ ॥ पीडितास्तुततस्तस्यशैलस्तंभोपमाभुजाः ॥ विस्मिताश्चाभवंस्तत्रसचिवास्त स्यरक्षसः ॥ २८ ॥ रक्षसातेनरोषाच्चभुजानांपीडनात्तथा ॥ मुक्तोविरावःसहसात्रैलोक्यंयेनकंपितम् ॥ २९ ॥ मेनिरेवज्रनिष्पेषंतस्यामा त्यायुगक्षये ॥ तदावर्त्मसुचलितादेवाइंद्रपुरोगमाः ॥ ३० ॥ समुद्राश्चापिसंक्षुब्धाश्चलिताश्चापिपर्वताः ॥ यक्षाविद्याधराःसिद्धाःकि मेतदितिचाब्रुवन् ॥ ३१ ॥

गये, पार्वतीजीभी चंचलहोकर उसी समय महादेवजीको लिपटगई ॥ २६ ॥ इसके उपरान्त देवताओंमें श्रेष्ठ महादेवजीने पैरके अँगूठेसे इस पर्वतको जरा दाब दिया
॥ २७ ॥ महादेवजीके कुछ दबानेसेही पर्वतके थंभकी समान रावणकी बडी २ भुजा पिचनेलगीं और उसे अति व्यथा हुई तब रावणके सब मंत्री विस्मित हुए॥२८॥
रावण राक्षस क्रोधके मारे और बाँहोंकी पीडासे सहसा चिल्लाने लगा इस चिल्लानेसे त्रिलोकी कम्पायमान होगई ॥२९॥ दशाननके मंत्रियोंने इस शब्दको सुनकर
समझा कि मानो युगान्त समयमें वज्र गिरनेका शब्द हुआ; इस शब्दको श्रवण कर मार्गमें स्थित हुए इन्द्रादि देवता सबही चलायमान हुए ॥ ३० ॥ सब समुद्र

गलवलाय गये पर्वत कंपायमान होनेलगे, और यक्ष, विद्याधर व सिद्धगण यह क्या है ? ऐसे परस्पर कहने लगे ॥ ३१ ॥ इसके उपरान्त दशग्रीवके मंत्री बोले कि, हे दशानन ! आप उमाकान्त, नीलकण्ठ महादेवजीको सन्तुष्ट कीजिये, इस विपदमें उनके सिवाय और किसीको हम नहीं देख सकते ॥ ३२॥ आप उनको प्रणामकर अनेक स्तुतिसे उनकी शरणमें जाइये, देवशंकर कृपालु हैं वह सन्तुष्ट होकर अवश्यही आपपर अनुग्रह करेंगे ॥ ३३ ॥ तिसकाल मंत्रीजनोंके यह वचन सुन दशानन प्रणाम कर सामवेदके मंत्रोंसे व विविध भाँतिके स्तोत्रोंसे वृषभध्वज महादेवजीकी स्तुति करने लगा, यहांतक कि, रोदन करते २ राक्षसके वहांपर सहस्त्रवर्ष व्यतीत होगये ॥ ३४ ॥ हे राम ! तिसके पीछे शैल कैलासपर विहार करते हुए प्रभु महादेवजीने प्रसन्नहो दशग्रीवकी सब भुजा छोड उससे कहा ॥ ३५ ॥ दशानन !

तोपयस्वमहादेवंनीलकंठमुमापतिम् ॥ तमृतेशरणंनान्यंपश्यामोत्रदशानन ॥ ३२ ॥ स्तुतिभिःप्रणतोभूत्वातमेवशरणंव्रज ॥ कृपालुःशंकर स्तुष्टःप्रसादंतेविधास्यति ॥ ३३ ॥ एवमुक्तस्तदामात्यैस्तुष्टाववृषभध्वजम् ॥ सामभिर्विविधैःस्तोत्रैःप्रणम्यसदशाननः ॥ संवत्सरसहस्त्रंतुरुद तोरक्षसोगतम् ॥ ३४ ॥ ततःप्रीतोमहादेवःशैलाग्रेविष्ठितंप्रभुः ॥ मुक्त्वाचास्यभुजान्रामप्राहवाक्यंदशाननम् ॥ ३५ ॥ प्रीतोस्मितववीरस्यशौ टीर्याच्चदशानन ॥ शैलाक्रांतेनयोमुक्तस्त्वयारावःसुदारुणः ॥ ३६ ॥ यस्माल्लोकत्रयंचैतद्रावितंभयमागतम् ॥ तस्मात्त्वंरावणोनामनाम्ना राजन्भविष्यसि ॥ ३७ ॥ देवतामानुपायक्षायेचान्येजगतीतले ॥ एवंत्वामभिधास्यंतिरावणंलोकरावणम् ॥ ३८ ॥ गच्छपौलस्त्यविस्रब्धं पथायेनत्वमिच्छसि ॥ मयाचैवाभ्यनुज्ञातोराक्षसाधिपगम्यताम् ॥ ३९ ॥ एवमुक्तस्तुलंकेशःशंभुनास्वयमब्रवीत् ॥ प्रीतोयदिमहादेववरंमेदे हियाचतः ॥ ४० ॥ अवध्यत्वंमयाप्राप्तंदेवगंधर्वदानवैः ॥ राक्षसैर्गुह्यकैर्नागैर्येचान्येबलवत्तराः ॥ ४१ ॥

तुमने पर्वतसे दबकर वीर दर्पके मारे जो दारुण बडा नाद कियाहै तिससे हम तुम्हारे ऊपर प्रसन्न हुएहैं ॥ ३६ ॥ हे राजन् ! विशेष करके तीनों लोक इस समय तुम्हारे शब्दसे शङ्कित होकर भीत हुएहैं, इसलिये तुम ' रावण ' नामसे विख्यात होगे ॥ ३७ ॥ देवता मनुष्य और यक्ष; व इस समय जितने जीव हैं वह सबही तुमको इस प्रकारसे लोगोंका रुवानेवाला रावण कहकर पुकारेंगे ॥ ३८ ॥ हे पुलस्त्यनंदन ! तुमको जिस मार्गमें जानेकी इच्छाहो तुम विशुद्धभावसे उसी ... आज्ञा देतेहैं तुम पुष्पक विमानपर चढकर चले जाओ ॥ ३९ ॥ श्रीमहादेवजीके ऐसे वचन सुनकर लंकेश्वर दशाननने ... करते हैं कि, हमें यह वरदान दीजिये ॥ ४० ... यह वरदान जो पायाहै,

तो कुछ गिनतेही नहीं , क्यों के हम जा

नता गयाहै, इस समय हम प्रार्थना करते हैं कि, शेष भागभी इसी प्रकारसे अप्रतिहत और अजेय होकर इच्छानुसार वितावें आप हमें यह वर और सर्व प्राणियोंको जीतनेके लिये कोई दिव्य अस्त्रभी दीजिये ॥ ४२ ॥ रावणके यह वचन सुनकर भूतपति शंकर महादेवजीने उसको चन्द्रहास नामक विख्यात महा प्रदीप खड्ग दिया ॥ ४३ ॥ और ब्रह्माजीके देनेसे रहीहुई शेष परमायुभी दी ॥ ४४ ॥ इस प्रकारसे खड्ग और वरदान देकर श्रीमहादेवजी बोले कि, हे

मानुषाप्रगणेदेवस्वल्पास्तेममसंमताः॥ दीर्घमायुश्चमेप्राप्तंब्रह्मणस्त्रिपुरांतक ॥ वांछितंचायुषःशेषंशस्त्रंत्वंचप्रयच्छमे ॥ ४२ ॥ एवमुक्तस्ततस्तेन रावणेनसशंकरः ॥ ददौखड्गंमहादीप्तंचंद्रहासमितिश्रुतम् ॥ ४३ ॥ आयुषश्चावशेषंचददौभूतपतिस्तदा ॥ ४४ ॥ दत्त्वोवाचततःशंभुर्नाव ज्ञेयमिदंत्वया ॥ अवज्ञातंयदिहितेमामेवैष्यत्यसंशयः ॥ ४५ ॥ एवंमहेश्वरेणैवकृतनामासरावणः ॥ अभिवाद्यमहादेवमारुरोहाथपुष्पकम् ॥ ॥ ४६ ॥ ततोमहीतलंरामपर्यक्रामतरावणः ॥ क्षत्रियान्सुमहावीर्यान्बाधमानस्ततस्ततः ॥ ४७ ॥ केचित्तेजस्विनःशूराःक्षत्रियायुद्ध दुर्मदाः ॥ तच्छासनमकुर्वंतोविनेशुःसपरिच्छदाः ॥ ४८ ॥ अपरेदुर्जयंरक्षोजानंतःप्राज्ञसंमताः ॥ जिताःस्मइत्यभाषंतराक्षसंबलदर्पि तम् ॥ ४९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मीकीये आदिकाव्ये उत्तरकांडे षोडशः सर्गः ॥ १६ ॥ अथराजन्महाबाहुर्विचरन्पृथिवीतले ॥ हिमवद्वनमासाद्यपरिचक्रामरावणः ॥ १ ॥

रावण ! तुम कभी इस खड्गका निरादर मत करना, जो निरादर करोगे तो यह अस्त्र उसी समय हमारे निकट आजायगा इसमें कुछभी संशय नहीं है ॥ ४५ ॥ महादेवजी करके इस प्रकारसे नाम धराय रावण शिवजीको प्रणाम करके पुष्पकविमान पर सवार हुआ ॥४६॥ हे राम ! तिसके पीछे रावण महावीर्यवान् क्षत्रियगणोंको पीडित करताहुआ पृथ्वीपर घूमने लगा ॥ ४७ ॥ कोई २ तेजस्वी युद्धोन्मत्त क्षत्रिय शूरवीरगण रावणकी आज्ञा पालन न करके उस कालमें अपने परिवार सहित नाशको प्राप्त हुए ॥ ४८ ॥ व और दूसरे अनेक विज्ञ विचारवान् क्षत्रिय जनोंने बलगर्वित रावणको अजीत जानकर उसके निकट पराजय मान ली ॥ ४९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषाटीकायां षोडशः सर्गः ॥ १६ ॥ हे राम ! महावीर रावण पृथ्वीपर विचरण करते २ एक समय हिमालयके

निकट वनमें जाय वहां घूमने लगा ॥ १ ॥ इसी समय उसने इस वनमें मृगचर्म पहरे जटा धारण किये तप करनेमें निरत साक्षात् देव कन्याके समान दीप्तिमती एक कन्याको देखा ॥ २ ॥ सुन्दरताईसे युक्त महाव्रतवाली कन्याको देखकर कामदेवके मोहसे, मानो हँसीही करता हुआसा रावण उससे बोला ॥ ३ ॥ हे भद्रे ! यह आचरण तुम्हारे यौवनके विरुद्ध है, इसलिये क्यों इसका अनुष्ठान करती हो ? विशेष करके यह आचरण तुम्हारे ऐसे रूपके योग्य नहीं है ॥ ४ ॥ हे भीरु ! तुम्हारी उपमारहित सुन्दरताई मनुष्योंको कामका उन्माद करनेवाली है, इसलिये तुमको तप करना उचित नहीं है, ऐसा निर्णय वृद्धलोगोंने कियाहै ॥ ५ ॥ हे भद्रे ! तुम किसकी कन्या हो ? यह व्रत क्यों करती हो? हे सुन्दरमुखवाली ! तुम्हारे स्वामी कौन हैं ? हे भीरु ! जो पुरुष तुमको भोग करताहै पृथ्वीपर वही पुण्यवान्है ॥ ६ ॥ तुम किस

तत्रापश्यत्सवैकन्यांकृष्णाजिनजटाधराम् ॥ आर्षेणविधिनायुक्तांदीप्यंतींदेवतामिव ॥ २ ॥ सदृष्ट्वारूपसंपन्नांकन्यांतांसुमहाव्रताम् ॥ काममोहपरीतात्मापप्रच्छप्रहसन्निव ॥ ३ ॥ किमिदंवर्तसेभद्रेविरुद्धंयौवनस्यते ॥ नहियुक्तातवैतस्यरूपस्यैवंप्रतिक्रिया ॥ ४ ॥ रूपंतेऽनुपमंभीरुकामोन्मादकरंनृणाम् ॥ नयुक्तंतपसिस्थातुंनिर्गतोह्येषनिर्णयः ॥ ५ ॥ कस्यासिकिमिदंभद्रेकश्चभर्तावरानने ॥ येनसंभुज्यसेभीरुसनरःपुण्यभाग्भुवि ॥ ६ ॥ पृच्छतःशंसमेसर्वंकस्यहेतोःपरिश्रमः ॥ एवमुक्तातुसाकन्यारावणेनयशस्विनी ॥ ७ ॥ अब्रवीद्विधिवत्कृत्वातस्यातिथ्यंतपोधना ॥ कुशध्वजोनामपिताब्रह्मर्षिरमितप्रभः ॥ बृहस्पतिसुतःश्रीमान्बुद्ध्यातुल्योबृहस्पतेः ॥ ८ ॥ तस्याहंकुर्वतोनित्यंवेदाभ्यासंमहात्मनः ॥ संभूतावाङ्मयीकन्यानाम्नावेदवतीस्मृता ॥ ९ ॥ ततोदेवाःसगंधर्वायक्षराक्षसपन्नगाः ॥ तेचापिगत्वापितरंवरणंरोचयंतिमे ॥ १० ॥ नचमांसपितातेभ्योदत्तवान्राक्षसेश्वर ॥ कारणंतद्वदिष्यामिनिशामयमहाभुज ॥ ११ ॥

कारणसे इतना परिश्रम कररहीहो ? हम पूँछतेहैं हमसे समस्त कहो, रावणके यह वचन सुनकर यशस्विनी तपस्विनी ॥ ७ ॥ रावणका भलीविधिसे अतिथिसत्कार करके बोली बृहस्पतिजीके पुत्र बुद्धिमें बृहस्पतिजीकेही समान अमित प्रभावान् श्रीमान् कुशध्वज नामक ब्रह्मर्षि हमारे पिता हैं ॥ ८ ॥ वह महात्मा नित्यही वेदाभ्यास करतेहैं, और हम उनके वेदवाक्यसे वाङ्मयी कन्या होकर उत्पन्न हुईथीं हमारा नाम वेदवती है ॥ ९ ॥ देव, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस और नागगण सदा पिताके निकट जाकर हमको विवाह करनेकी प्रार्थना करते हैं ॥ १० ॥ परन्तु हे राक्षसेश्वर ! हमको पिताजीने उन लोगोंके साथ न विवाहा । हे महाबीर ! कारण कह

जब पिता ने हमको विष्णुजीके साथ विवाह देनेकी इच्छा की तब यह बात सुनकर
समय जब कि पिताजी सोते थे, उस दुरात्माने आकर उनको उसी समय मारडाला ॥ १४ ॥ तिसकालमें हमारी महाभागा माता शोकसे आतुरहो पिताके मृतक शरीरके साथ अग्निमें प्रवेश करगई ॥ १५ ॥ तिसके पीछे नारायणके प्रति जो हमारे पिताजीका मनोरथ था, वह सत्य करनेके कारणही हम नारायणजीको हृद यमें धारण किये हुए हैं ॥ १६ ॥ हे राक्षसश्रेष्ठ ! इसी प्रतिज्ञाके वशहो हम यह बडी भारी तपस्या करतीहैं यह समस्त वृत्तान्त हमने तुमसे कहा ॥ १७ ॥ नाराय

णस्तुममजामाताविष्णुःकिलसुरेश्वरः ॥ अभिप्रेतस्त्रिलोकेशस्तस्मान्नान्यस्यमेपिता ॥१२॥ दातुमिच्छतितस्मैतुतच्छ्रुत्वाबलदर्पितः ॥ शुम्भो नामततोराजादैत्यानांकुपितोभवत् ॥ १३ ॥ तेनरात्रौशयानोमेपितापापेनहिंसितः ॥ १४ ॥ ततोमेजननीदीनातच्छरीरंपितुर्मम ॥ परिष्व ज्यमहाभागाप्रविष्टाहव्यवाहनम् ॥ १५ ॥ ततोमनोरथंसत्यंपितुर्नारायणंप्रति ॥ करोमीतितमेवाहंहृदयेनसमुद्वहे ॥ १६ ॥ इतिप्रतिज्ञामारु ह्यचरामिविपुलंतपः ॥ एतत्तेसर्वमाख्यातंमयाराक्षसपुंगव ॥ १७ ॥ नारायणोममपतिर्नत्वन्यःपुरुषोत्तमात् ॥ आश्रयेनियमंघोरंनारायण परीप्सया ॥ १८ ॥ विज्ञातस्त्वंहिमेराजन्गच्छपौलस्त्यनंदन ॥ जानामितपसासर्वंत्रैलोक्येयद्धिवर्तते ॥ १९ ॥ सोऽब्रवीद्रावणोभूयस्तांकन्यां सुमहाव्रताम् ॥ अवरुह्यविमानाग्रात्कंदर्पशरपीडितः ॥ २० ॥ अवलिप्तासिसुश्रोणियस्यास्तेमतिरीदृशी ॥ वृद्धानांमृगशावाक्षिभ्राजतेपुण्य संचयः ॥ २१ ॥ त्वंसर्वगुणसंपन्नानार्हसेवक्तुमीदृशम् ॥ त्रैलोक्यसुंदरीभीरुयौवनंतेऽतिवर्तते ॥ २२ ॥ अहंलंकापतिर्भद्रेदशग्रीवइतिश्रुतः ॥ तस्यमेभवभार्यात्वंभुंक्ष्वभोगान्यथासुखम् ॥ २३ ॥

यही हमारे पति हैं, पुरुषोत्तम नारायणके सिवाय हम और किसीको नहीं जानती, नारायणजीको पानेके लियेही यह घोर व्रत कियाहै ॥ १८ ॥ हे पौलस्त्यनंदन ! हम तुमको जानतीहैं तुम जाओ त्रिलोकीमें जो कुछभी होताहै हम तपके बलसे वह समस्त जानतीहैं ॥१९॥ हे राम ! कामसे मोहितहुए रावणने विमानसे उतरकर उस श्रेष्ठ महाव्रतको करतीहुई कन्यासे फिर कहा ॥ २० ॥ हे श्रेष्ठ वदनवाली ! तुम गर्वित हो, जो ऐसा न होता तो तुम्हारी ऐसी प्रवृत्ति न होती । हे मृगछौना कैसे नेत्रवाली ! पुण्य उपार्जन करना वृद्ध लोगोंकोही शोभा देताहै ॥ २१ ॥ तुम सर्वगुणसम्पन्न हो, तुमको ऐसा करना उचित नहीं है. हे भीरु ! तुम त्रैलोक्यसुन्दरी हो, तुम्हारा यौवन बीताजाताहै ॥२२॥ हे भद्रे ! हम लंकाके स्वामी हैं, हमारा नाम रावण है, तुम हमारी भार्या होकर सुखसहित भोग्य वस्तुओंको

भोगी ॥२३॥ तुम जिसको विष्णु कहतीहो वह कौन हैं? । हे लावण्यवती ! तुम जिसकी कामना करती हो वह कभी वीर्य, तप, भोग, बल किसीमेंभी हमारी तुल्य नहींहै ॥ २४ ॥ जब राक्षसराज रावणने इस प्रकारसे कहा तब वह वेदवती कन्या निशाचरसे बोली, तुम विष्णुजीके संबंधमें ऐसा न कहो ॥ २५ ॥ वह तीनों लोकोंके स्वामी विष्णुजी सब लोकोंके नमस्कार करनेके योग्य हैं इसलिये हे राक्षसेन्द्र ! कौन बुद्धिमान् उनका अपमान करेगा ॥ २६ ॥ वेदवती कन्याके ऐसे वचन सुनकर निशाचर रावणने उस कन्याके बाल हाथसे पकड उसे आगेको खेंचा ॥ २७ ॥ तिसके पीछे वह वेदवती क्रोधित होकर हाथसे अपने बाल काटने लगी, अधिक क्या कहैं, उस वेदवतीके हाथनेही खड्गरूप होकर उसके केश कलाप काट डाले ॥ २८ ॥ वह कन्या मरनेके लिये शीघ्रता कर और

कश्चतावदसौयंत्वंविष्णुरित्यभिभाषसे ॥ वीर्येणतपसाचैवभोगेनचबलेनच ॥ समयानोसमोभद्रेयंत्वंकामयसेंगने ॥ २४ ॥ इत्युक्तवतितस्मिंस्तुवेदवत्यथसाब्रवीत् ॥ मामेवमितिसाकन्यातमुवाचनिशाचरम् ॥ २५ ॥ त्रैलोक्याधिपतिंविष्णुंसर्वलोकनमस्कृतम् ॥ त्वदृतेराक्षसेंद्रान्यःकोऽवमन्येतबुद्धिमान् ॥ २६ ॥ एवमुक्तस्तयातत्रवेदवत्यानिशाचरः ॥ मूर्धजेषुतदाकन्यांकराग्रेणपरामृशत् ॥ २७ ॥ ततोवेदवतीक्रुद्धाकेशान्हस्तेनसाच्छिनत् ॥ असिर्भूत्वाकरस्तस्याःकेशांश्छिन्नांस्तदाकरोत् ॥ २८ ॥ साज्वलंतीवरोषेणदहंतीवनिशाचरम् ॥ उवाचाग्निंसमाधायमरणायकृतत्वरा ॥२९॥ धर्षितायास्त्वयाऽनार्यनमेजीवितमिष्यते ॥ रक्षस्तस्मात्प्रवेक्ष्यामिपश्यतस्तेहुताशनम् ॥३०॥ यस्मात्तुधर्षिताचाहंत्वयापापात्मनावने ॥ तस्मात्तववधार्थंहिसमुत्पत्स्यत्यहंपुनः ॥ ३१ ॥ नहिशक्यःस्त्रियाहंतुंपुरुषःपापनिश्चयः ॥ शापेत्वयिमयोत्सृष्टेतपसश्चव्ययोभवेत् ॥३२॥ यदित्वस्तिमयाकिंचित्कृतंदत्तंहुतंतथा ॥ तस्मात्त्वयोनिजासाध्वीभवेयंधर्मिणःसुता ॥ ३३ ॥ एवमुक्त्वाप्रविष्टासाज्वलितंजातवेदसम् ॥ पपातचदिवोदिव्यापुष्पवृष्टिःसमंततः ॥ ३४ ॥

क्रोधसे प्रज्वलितहो मानो राक्षसको भस्मही करती हुईसी बोली ॥ २९ ॥ रे अनार्य राक्षस ! तूने हमको धर्षित किया तो सही परन्तु तू हमको जीताहुआ ग्रहण नहीं कर सकेगा इसलिये तेरे सामनेही हम अग्निमें प्रवेश करेंगी ॥ ३० ॥ तैंने पापात्मा होकर केशोंको स्पर्श कर वनमें हमको धर्षित किया, इस कारणसे तेरा वध करनेको हम फिर जन्म लेंगी ॥ ३१ ॥ जो हम तुमको शाप दें तो वृथा हमारी तपस्या क्षय होजायगी, विशेष करके दुष्टसंकल्प पुरुषको मार डालना स्त्रियोंकी वशकी बात नहीं है ॥ ३२ ॥ जो हमने कुछ थोडाभी दानकार्य या होम कियाहो तो उन सब कार्योंसे हम अयोनिजा और पतिव्रता होकर फिर किसी धर्मात्मा महाराजकी कन्या होंगी ॥ ३३ ॥ यह वचन कह वेदवती कन्या प्रज्वलित अग्निमें प्रवेश करगयी, उस समय आकाशसे चारोंओरको दिव्यपुष्पोंकी वर्षा

इसके लिए वेदवतीके कारण शत्रु तिरस्कृत किया गयाथा, अब उन वदव । न तुम्हार अमानुष का संहार किया ॥
॥ ३६ ॥ यह महाभागा वेदी के मध्यमें अग्निकी शिखाके समान, आनेवाले कल्पमें हलकी अनीसे सींचेहुए खेतमें इस प्रकारसे वारंवार उत्पन्न होगी ❀ ॥ ३७ ॥ हे महा राज ! यही पहले सतयुगमें वेदवती नाम विख्यातथी सो यह त्रेतायुगमें प्राप्त होकर राक्षसोंके कुलको संहार करनेको मैथिलिकुलमें महात्मा जनकजीके यहां उनकी कन्या होकर उत्पन्न हुई है ॥ ३८ ॥ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे भाषाटीकायां सप्तदशः सर्गः ॥ १७ ॥ ॥ जब वेदवती

सैराजनकराजस्यप्रसूताजनयाप्रभो ॥ तवभार्यामहाबाहोविष्णुस्त्वंहिसनातनः ॥ ३५ ॥ पूर्वंक्रोधहतःशत्रुर्ययासौनिहतस्तया ॥ उपाश्रयित्वा शैलाभस्तवबीर्यममानुषम् ॥ ३६ ॥ एवमेषामहाभागामर्त्येपूत्पत्स्यतेपुनः ॥ क्षेत्रेहलमुखोत्कृष्टेवेद्यामग्निशिखोपमा ॥ ३७ ॥ एषावेदवतीनाम पूर्वमासीत्कृतेयुगे ॥ त्रेतायुगमनुप्राप्यवधार्थंतस्यरक्षसः ॥ उत्पन्नामैथिलकुलेजनकस्यमहात्मनः ॥ ३८ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्ये उत्तरकांडे सप्तदशः सर्गः ॥ १७ ॥ प्रविष्टायांहुताशंतुवेदवत्यांसरावणः ॥ पुष्पकंतुसमारुह्यपरिचक्राममेदिनीम् ॥ १ ॥ ततोमरुत्तंनृपतिंयजंतंसहदैवतैः ॥ उशीरबीजमासाद्यददर्शसतुरावणः ॥ २ ॥ संवर्तोनामब्रह्मर्षिःसाक्षाद्भ्राताबृहस्पतेः ॥ याजयामासधर्मज्ञःसर्वैर्देवगणैर्वृतः ॥ ३ ॥ दृष्ट्वादेवास्तुतद्रक्षोवरदानेनदुर्जयम् ॥ तिर्यग्योनिंसमाविष्टास्तस्यधर्षणभीरवः ॥ ४ ॥ इंद्रोमयूरःसंवृत्तोधर्मराजस्तुवायसः ॥ कृकलासोधनाध्यक्षोहंसश्ववरुणोभवत् ॥ ५ ॥ अन्येष्वपिगतेष्वेवंदेवेष्वरिनिषूदन ॥ रावणःप्राविशद्यज्ञंसारमेयइवाशुचिः ॥ ६ ॥

अग्निमें प्रवेश करगई तब रावण पुष्पकविमानपर सवार होकर पृथ्वीपर घूमने लगा ॥ १ ॥ फिर उसने उशीरबीजनामक स्थानमें जायकर देखा कि मरुत्त राजा सब देवताओंके संग यज्ञ कर रहे हैं ॥ २ ॥ बृहस्पतिजीके सगे भ्राता धर्मके जाननेवाले संवर्तनामक ब्रह्मर्षि समस्त देवताओंके साथ उनका यज्ञ करा रहेथे ॥ ३ ॥ वरदान पानेसे अजित राक्षसको देख उसके सतानेके भयसे देवता पक्षियोंका रूप धारणकर उडगये ॥ ४ ॥ इन्द्रजी मोर, धर्मराज काग, कुबेरजी गिरगिट और वरुणजी हंसरूप हुए ॥ ५ ॥ हे रघुनाथजी ! और देवताभी इसी प्रकार पक्षियोंकी योनिमें प्रवेश करते हुए, तब रावणभी अपवित्र कुत्तेके समान

❀ बैशाख शुक्ल नवमीके दिन जानकीका जन्म हुआहै ॥

यज्ञके स्थानमें पैठा ॥ ६ ॥ तब राक्षसपति रावणने राजा मरुत्तके निकट पहुँचकर उनसे कहा कि "युद्ध करो" अथवा कहदो "हम हार गये" ॥७॥ तिसके पीछे मरुत्तने रावणसे कहा; तुम कौनहो ? तब रावण हँसकर बोला ॥ ८ ॥ हे राजन् ! हम धनेश्वर कुबेरजीके छोटे भाईहैं; हमारा नाम रावणहै; इसलिये इस कौतूहलरहित भावसे आपपर प्रसन्न हुएहैं ॥ ९ ॥ तुम हमारा पराक्रम नहीं जानते; ऐसा पुरुष त्रिलोकीमें कोई नहीं है हम भ्राता कुबेरको जीतकर उससे यह विमान छीन लायेहैं ॥ १० ॥ इसके उपरान्त मरुत्त राजाने रावणसे कहा—तुम्हें धन्य है । क्योंकि तुमने अपने बडे भ्राताको संग्राममें जीताहै तुम्हारे समान बडाई करनेके योग्य पुरुष तीनों लोकमें कोईभी नहीं है ॥ ११ ॥ हे मूढ ! अधर्म युक्त कर्म, या लोकनिन्दित कर्म कभी बडाईके योग्य नहीं हो सकता.

तंचराजानमासाद्यरावणोराक्षसाधिपः ॥ प्राहयुद्धंप्रयच्छेतिनिर्जितोस्मीतिवावद ॥ ७ ॥ ततोमरुत्तोनृपतिःकोभवानित्युवाचतम् ॥ अवहासंततोमुक्त्वारावणोवाक्यमब्रवीत् ॥८॥ अकुतूहलभावेनप्रीतोस्मितवपार्थिव ॥ धनदस्यानुजंयोमांनावगच्छसिरावणम् ॥ ९ ॥ त्रिषुलोकेषुकोन्योस्तियोनजानातिमेबलम् ॥ भ्रातरंयेननिर्जित्यविमानमिदमाहृतम् ॥१०॥ ततोमरुत्तःसनृपस्तंरावणमथाब्रवीत् ॥ धन्यःखलुभवान्येनज्येष्ठोभ्रातारणेजितः ॥ नत्वयासदृशःश्लाघ्यस्त्रिषुलोकेषुविद्यते ॥ ११ ॥ "नाधर्मसहितंश्लाघ्यंनलोकप्रतिसंहितम् ॥ कर्मदौरात्म्यकंकृत्वाश्लाघसेभ्रातृनिर्जयात् ॥ १ ॥" कंत्वंप्राक्केवलंधर्मंचरित्वालब्धवान्वरम् ॥ श्रुतपूर्वंहिनमयाभाषसेयादृशंस्त्वयम् ॥ १२ ॥ तिष्ठेदानींनमेजीवन्प्रतियास्यसिदुर्मते ॥ अद्यत्वांनिशितैर्बाणैःप्रेषयामियमक्षयम् ॥ १३ ॥ ततःशरासनंगृह्यसायकांश्चनराधिपः ॥ रणायनिर्ययौक्रुद्धःसंवर्तोमार्गमावृणोत् ॥ १४ ॥ सोब्रवीत्स्नेहसंयुक्तंमरुत्तंतंमहानृषिः ॥ श्रोतव्यंयदिमद्वाक्यंसंप्रहारोनतेक्षमः ॥ १५ ॥ माहेश्वरमिदंसत्रमसमाप्तंकुलंदहेत् ॥ दीक्षितस्यकुतोयुद्धंक्रोधित्वंदीक्षितेकुतः ॥ १६ ॥

तूने ज्येष्ठ भ्राताको पराजित करके दुरात्माके समान कार्य कियाहै, फिर तू क्या अपनी बडाई करताहै ? पूर्व्यापूर्व्यरहित तैने किस धर्मका आचरण करके पहले वरदान पायाहै ? कारण कि, तू जिस प्रकारसे कहताहै हमने तो पहले कभी सुना नहीं ॥ १२ ॥ रे दुर्मते ! खडारह, हमारे निकटसे तू जीता हुआ न जाय सकेगा, तीखे बाणसमूहसे आजही हम तुझको यमराजके भवनका पाहुना करेंगे ॥ १३ ॥ इसके उपरान्त राजा मरुत्त धनुष बाण ग्रहण करके क्रोधमें भरेहुए युद्ध करनेको बाहर निकले, परन्तु यज्ञ करनेको आये हुए संवर्त्त मुनिने उनका मार्ग रोका ॥ १४ ॥ महर्षि संवर्त्त स्नेहयुक्त वचनोंके द्वारा राजा मरुत्तसे बोले कि, यदि हमारे वचन श्रवण करनेके योग्यहों तबतो [illegible] यह माहेश्वर यज्ञ पूर्ण न होनेसे तुम्हारे कुलको

तुम जीते रहोगे॥२७॥और जो मनुष्य मेरे स्थानपर भूखके मारे व्याकुल होंगे उनके पुत्रादि जो तुम्हारी जातिवालोंको भोजन करावेंगे, वस तुम्हारेही भोजन करनेसे हमारे यहांके प्राणी तृप्त हो जायँगे ॥२८॥ तिसके पीछे वरुणजी गंगासलिलसंचारी हमसे बोले कि, हे पत्ररथेश्वर ! तुम हमारे प्रीतिसंयुक्त वचनोंको सुनो ॥२९॥ तुम्हारी चन्द्रमाके मण्डलके समान निर्मल फेन समान कान्ति और श्रेष्ठ मनोहर सुन्दर वर्ण होगा ॥३०॥ विशेष करके हमारे शरीर स्वरूप जलपर संचालन करके सदाही सौन्दर्य और अतुल आनंद पाओगे यही हमारा चिह्नहै॥३१॥हे राम ! पहले समयमें हंसोंका सब शरीर श्वेत वर्ण नहींथा; उनके पंखोंका अग्रभाग नीलवर्ण और छाती कोमल श्यामवर्णथी ॥ ३२ ॥ इसके उपरान्त कुवेरजी पर्वतपर स्थित गिरगिटसे बोले, हम तुमपर प्रसन्न होकर तुम्हारा रंग सुवर्णकासा किये देते हैं ॥

येचमद्विषयस्थावैमानवाःक्षुधयार्दिताः ॥ त्वयिभुक्तेसुतृप्तास्तेभविष्यंतिसवांधवाः ॥ २८ ॥ वरुणस्त्वब्रवीद्धंसंगंगातोयविचारिणम् ॥ श्रूयतां प्रीतिसंयुक्तंततःपत्ररथेश्वरम् ॥ २९ ॥ वर्णोमनोरमःसौम्यश्चंद्रमंडलसन्निभः ॥ भविष्यतितवोदग्रःशुद्धफेनसमप्रभः ॥३०॥ मच्छरीरंसमासाद्य कांतोनित्यंभविष्यसि ॥ प्राप्स्यसेचातुलांप्रीतिमेतन्मेप्रीतिलक्षणम् ॥ ३१ ॥ हंसानांहिपुरारामनवर्णःसर्वपाण्डुरः ॥ पक्षानीलाग्रसंवीताः क्रोडाःशष्पाग्रनिर्मलाः ॥३२॥ अथाब्रवीद्वैश्रवणःकृकलासंगिरौस्थितम् ॥ हैरण्यंसंप्रयच्छामिवर्णंप्रीतस्तवाप्यहम् ॥ ३३ ॥ सद्रव्यंचशिरोनित्यंभविष्यतितवाक्षयम् ॥ एषकांचनकोवर्णोमत्प्रीत्यातेभविष्यति ॥ ३४ ॥ एवंदत्त्वावरांस्तेभ्यस्तस्मिन्यज्ञोत्सवेसुराः ॥ निवृत्तेसहराज्ञातेपुनःस्वभवनंगताः ॥३५॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडेऽष्टादशःसर्गः ॥१८॥ अथजित्वामरुत्तंनप्रययौराक्षसाधिपः॥ नगराणिनरेंद्राणांयुद्धकांक्षीदशाननः ॥ १ ॥ समासाद्यतुराजेंद्रान्महेंद्रवरुणोपमान् ॥ अब्रवीद्राक्षसेंद्रस्तुयुद्धंमेदीयतामिति ॥ २ ॥ निर्जिताःस्मेतिवाब्रूतएषमेहिसुनिश्चयः ॥ अन्यथाकुर्वतामेवंमोक्षोनैवोपपद्यते ॥ ३ ॥

॥ ३३ ॥ तुम्हारा मस्तकभी सुवर्णके रंगका होजायगा, और अधिक करके हमारे प्रसन्न होनेसे तुम्हारा काञ्चन वर्ण सदा अक्षय होगा ॥ ३४ ॥ इस प्रकार देवता इन समस्त पक्षियोंको वरदान देकर यज्ञोत्सव समाप्त होनेके पीछे राजा मरुत्तके सहित फिर अपने २ भवनको चलेगये ॥ ३५ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे भाषाटीकायामष्टादशः सर्गः ॥ १८ ॥ तदनन्तर मरुत्त राजाको,जीतकर राक्षसाधिप रावण युद्धकी इच्छासे राजोंके नगर २ में घूमने लगा ॥ १ ॥ निशाचरनाथ रावण इन्द्र और वरुणजीके समान राजोंके निकट जाकर बोला कि तुम यातो हमसे युद्ध करो ॥२॥ और नहीं तोयह कहो कि हम पराजित होगये; कारण कि हमारा स्थिर निश्चयहै । जो इन दोनोंमेंसे एकका आश्रय न लेगा उसके छुटकारेका उपाय किसी प्रकारसे नहीं देखाजाता ॥ ३ ॥

हार गये" दुष्यन्त, सुरथ, गाधि, गय, राजा पुरूरवा ॥५॥ इन सब महीपालोंने कहदिया कि हम पराजित हुए   पाछ राक्षसराज रावण
अयोध्यापुरीकी रक्षा महाराजाधिराज अनरण्यजी करतेथे जैसे इन्द्रजी अमरावतीकी रक्षा करतेहैं, सिंहके समान बलवान् अनरण्यजीसे ॥७॥ रावण बोला
कि, युद्ध करो अथवा हम "हारगये" यह कह दो बस यही हमारी आज्ञाहै ॥८॥ परन्तु अयोध्याका राजा अनरण्य उस पापात्माके वचन सुनकर क्रोधितहो राक्ष
सेन्द्रसे बोला ॥ ९ ॥ हे निशाचर ! तुम एक क्षण भर ठहरो हम तुमसे द्वन्द्व युद्ध करतेहैं हम इस प्रकारकी सेना लेकर लड़ेंगे कि,तुम शीघ्रही हमारे वशमें होजा

नन्स्त्वमीरितः प्राज्ञाःपार्थिवाधर्मनिश्चयाः ॥ मंत्रयित्वाततोऽन्योन्यंराजानःसुमहाबलाः ॥४॥ निर्जिताःस्मेत्यभाषंतज्ञात्वावरबलंरिपोः ॥ दुष्यं
तःसुरथोगाधिर्गयोराजापुरूरवाः ॥ ५ ॥ एतेसर्वेऽब्रुवंस्तातनिर्जिताःस्मेतिपार्थिवाः ॥ अथायोध्यांसमासाद्यरावणोराक्षसाधिपः ॥ ६ ॥ सुगुप्ता
मनरण्येनशक्रेणेवामरावतीम् ॥ सतंपुरुषशार्दूलंपुरंदरसमंबले ॥ ७ ॥ प्राहराजानमासाद्ययुद्धंदेहीतिरावणः ॥ निर्जितोस्मीतिवाब्रूहित्वमेवंमम
शासनम् ॥८॥ अयोध्याधिपतिस्तस्यश्रुत्वापापात्मनोवचः ॥ अनरण्यस्तुसंक्रुद्धोराक्षसेंद्रमथाब्रवीत् ॥९॥ दीयतेद्वंद्वयुद्धंतेराक्षसाधिपतेमया ॥
संतिष्ठक्षिप्रमायत्तोभवचैवंभवाम्यहम् ॥ १० ॥ अथपूर्वंश्रुतार्थेननिर्जितंसुमहद्बलम् ॥ निष्क्रामत्तन्नरेंद्रस्यबलंरक्षोवधोद्यतम् ॥ ११ ॥ नागानां
दशसाहस्रंवाजिनांनियुतंतथा ॥ रथानांबहुसाहस्रंपत्तीनांचनरोत्तम ॥ १२ ॥ महींसंछाद्यनिष्क्रांतंसपदातिरथंरणे ॥ ततःप्रवृत्तंसुमहद्युद्धंयुद्धवि
शारद ॥ १३ ॥ अनरण्यस्यनृपतेराक्षसेंद्रस्यचाद्भुतम् ॥ तद्रावणबलंप्राप्यबलंतस्यमहीपतेः ॥ १४ ॥ प्राणश्यततदासर्वंहव्यंहुतमिवानले ॥
युद्ध्वाचसुचिरंकालंकृत्वाविक्रममुत्तमम् ॥ १५ ॥ प्रज्वलंतंतमासाद्यक्षिप्रमेवावशेषितम् ॥ प्राविशत्संकुलंतत्रशलभाइवपावकम् ॥ १६ ॥

ओगे ॥ १० ॥ राजा अनरण्यजीने पहलेही रावणका वृत्तान्त सुनकर युद्ध करनेके लिये प्रथमसेही अपनी बडी सेनाको सजाय रक्खीथी सो नरपतिकी वह सेना
राक्षसका वध करनेके लिये निकली ॥ ११ ॥ हे नरोत्तम ! अनरण्यकी सेनामें दश हजार हाथी, एक लाख घोडे व हजारों रथ और अगणित पैदल पृथ्वीको ढककर
युद्ध करनेके लिये पैदलों व रथोंके सहित निकले, हे युद्धविशारद ! तिसके पीछे बडाभारी युद्ध होने लगा ॥ १२ ॥ १३ ॥ राजा अनरण्यजीका राक्षसोंमें
श्रेष्ठ रावणसे अद्भुत युद्ध होने लगा तिस कालमें राजा अनरण्यजीकी सेना रावणकी सेनाको प्राप्त होकर ॥ १४ ॥ कुछ थोडेही कालतक संग्राम करसकी फिर
उसप्रकार नाश करके अग्निमें हवनहुए द्रव्यके समान नाशको प्राप्त होगई ॥ १५ ॥ जलतीहुई अग्निके निकट जायकर जिस प्रकार पतंगपक्षी फिर उस अग्निमें बैठही

आदि उन राजाकी बची हुई सेना रावणको प्राप्त होकर संग्राममें शीघ्रही नाशहोगई ॥ १६ ॥ तब राजाओंमें श्रेष्ठ उन अनरण्यजीने देखा कि जैसे सैकडों नदी समुद्रके निकट जायकर उसमें मिल जाती हैं वैसेही वह महाबलवान् वीर रावणसे मारे जा रहेथे ॥ १७ ॥ तिसके पीछे राजा अनरण्यजी क्रोधसे परिपूर्ण हो इन्द्रके धनुषके समान धनुषकी टंकारकर आपही रावणके निकट पहुँचे ॥ १८ ॥ मारीच, शुक, सारण, प्रहस्त इत्यादि रावणके समस्त मंत्री राजा अनरण्यजीके निकट न ठहरकर मृगसमूहके समान भागे ॥ १९ ॥ तिसके पीछे इक्ष्वाकुकुलनंदन अनरण्यजीने उस राक्षस रावणके शिरमें आठसौ बाण मारे ॥ २० ॥ जलकी धारा जिसप्रकार बादलसे निकल पर्वतके शिखरपर गिरती है वैसेही वह समस्त बाण रावणके मस्तक पर गिरकर कहीं भी घाव न करसके ॥ २१ ॥

सोऽपश्यत्तन्नरेंद्रस्तुनश्यमानंमहाबलम् ॥ महार्णवंसमासाद्यवनापगशतंयथा ॥ १७ ॥ ततःशक्रधनुःप्रख्यंधनुर्विस्फारयन्स्वयम् ॥ आससाद नरेंद्रस्तंरावणंक्रोधमूर्च्छितः ॥ १८ ॥ अनरण्येनतेऽमात्यामारीचशुकसारणाः ॥ प्रहस्तसहिताभग्नाव्यद्रवंतमृगाइव ॥ १९ ॥ ततोबाणशतान्यष्टौपातयामासमूर्धनि ॥ तस्यराक्षसराजस्यइक्ष्वाकुकुलनंदनः ॥ २० ॥ तस्यबाणाःपतंतस्तेचक्रिरेनक्षतंक्वचित् ॥ वारिधाराइवाभ्रेभ्यःपतंत्योगिरिमूर्धनि ॥ २१ ॥ ततोराक्षसराजेनक्रुद्धेननृपतिस्तदा ॥ तलेनाभिहतोमूर्ध्निसरथान्निपपातह ॥ २२ ॥ सराजापतितोभूमौविह्वलःप्रविवेपितः ॥ वज्रदग्धइवारण्येसालोनिपतितोयथा ॥ २३ ॥ तंप्रहस्याब्रवीद्रक्षइक्ष्वाकुंपृथिवीपतिम् ॥ किमिदानींफलंप्राप्तंत्वयामांप्रतियुद्ध्यता ॥ ॥ २४ ॥ त्रैलोक्येनास्तियोद्वंद्वंममदद्यान्नराधिपः ॥ शंकेप्रसक्तोभोगेषुनश्रृणोषिबलंमम ॥ २५ ॥ तस्यैवंब्रुवतोराजामंदासुर्वाक्यमब्रवीत् ॥ किंशक्यमिहकर्तुंवैकालोहिदुरतिक्रमः ॥ २६ ॥ नह्यहंनिर्जितोरक्षस्त्वयाचात्मप्रशंसिना ॥ कालेनैवविपन्नोऽहंहेतुभूतस्तुमेभवान् ॥ २७ ॥

तब राक्षस रावणने बड़ा क्रोधकर राजा अनरण्यजीके शिरपर एक चटकना मारा कि जिसके मारेजानेसे राजा रथसे पृथ्वीपर गिर पडे ॥ २२ ॥ शालका वृक्ष जिसप्रकार वज्रसे भस्म होकर वनमें गिर पडता है वैसेही वह राजा अनरण्यजी विह्वलहो पृथ्वीपर गिर कंपायमान होने लगे ॥ २३ ॥ तब राक्षसराज रावण उपहास करके इन इक्ष्वाकुनंदन पृथ्वीनाथ अनरण्यजीसे बोला कि, तुमने हमारे साथ युद्ध करके इस समय क्या फल पाया ॥ २४ ॥ हे नरनाथ ! त्रिलोकीमें ऐसा कोई भी नहींहै कि जो हमारे साथ द्वन्द्व युद्ध कर सके. हम जानते हैं कि, तुमने विषयभोगमें आसक्त रहकर हमारे बलका समाचार नहीं सुना होगा ॥ २५ ॥ इस प्रकार कहने पर हीनबल हुए राजा अनरण्यजीने रावणसे कहा कि तुम्हारी क्या सामर्थ्यहै, कालकी गति बडी कठिनहै ॥ २६ ॥ तुम अपनी बडाई करते हो परन्तु तुम

मक । [illegible] ... अब हम रक्षा करनेको समर्थ हैं परन्तु हम विमुख तो नहीं हुए सम्मुख संग्राममें ही तुमसे घायल हुएहैं ॥ २८ ॥ हे निशाचर ! तैंने जो इक्ष्वाकुवंशका अपमान किया है इसके अर्थ हम कहते हैं कि जो हमने प्रजाको भली भांतिसे पालन किया होतो हमारा वचन सत्य हो ॥ २९ ॥ हे राक्षस ! महात्मा इक्ष्वाकु कुलके दशरथजी श्रीरामचन्द्र होंगे वह दशरथ कुमारही तेरा प्राणसंहार करेंगे ॥ ३० ॥ जब अनरण्यजीने यह शाप दिया तो आकाशसे फूलोंकी वर्षा होने लगी और बादलके शब्दके समान गंभीर देवताओंके नगाडे बजने लगे ॥ ३१ ॥ तदनंतर राजोंमें श्रेष्ठ राजा अनरण्य स्वर्गधामको चलेगये राजाके स्वर्गको चलेजानेपर राक्षस भी वहांसे चलदिया ॥ ३२ ॥ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे भाषाटीकायामेकोनविंशः सर्गः ॥ १९ ॥ ॥

किंत्विदानीमयाशक्यंकर्तुंप्राणपरिक्षये ॥ नह्यहंविमुखोरक्षोयुध्यमानस्त्वयाहतः ॥ २८ ॥ इक्ष्वाकुपरिभावित्वाद्वचोवक्ष्यामिराक्षस ॥ यदिदत्तंयदिहुतंयदिमेसुकृतंतपः ॥ यदिगुप्ताःप्रजाःसम्यक्तदासत्यंवचोस्तुमे ॥२९॥ उत्पत्स्यतेकुलेह्यस्मिन्निक्ष्वाकूणांमहात्मनाम् ॥ रामोदाशरथिर्नाम यस्तेप्राणान्हरिष्यति ॥३०॥ ततोजलधरोदग्रस्ताडितोदेवदुंदुभिः ॥ तस्मिन्नुदाहृतेशापेपुष्पवृष्टिश्चखाच्च्युता ॥३१॥ ततःसराजाराजेंद्रगतःस्थानंत्रिविष्टपम् ॥ स्वर्गतेचनृपेतस्मिन्राक्षसःसोपसर्पत ॥३२॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांड एकोनविंशःसर्गः ॥१९॥ततोवित्रासयन्मर्त्यान्पृथिव्यांराक्षसाधिपः ॥ आससादघनेतस्मिन्नारदंमुनिपुंगवम् ॥१॥ तस्याभिवादनंकृत्वादशग्रीवोनिशाचरः ॥ अत्रवीत्कुशलंचैवहेतुमागमनस्यच ॥२॥ नारदस्तुमहातेजादेवर्षिरमितप्रभः ॥ अब्रवीन्मेघपृष्ठस्थोरावणंपुष्पकेस्थितम् ॥ ३ ॥ राक्षसाधिपतेसौम्य तिष्ठविश्रवसःसुत ॥ प्रीतोस्म्यभिजनोपेतविक्रमैरूर्जितैस्तव ॥ ४ ॥ विष्णुनादैत्यघातैश्चगंधर्वोरगधर्षणैः ॥ त्वयासमंविमर्दैश्चभृशंहिपरितोषितः ॥ ५ ॥ किंचिद्वक्ष्यामितावत्तुश्रोतव्यंश्रोष्यसेयदि ॥ तन्मेनिगदतस्तातसमाधिंश्रवणेकुरु ॥ ६ ॥

इसके उपरान्त राक्षसोंका राजा रावण पृथ्वीपर मनुष्योंको त्रास देताहुआ घूमता फिरताथा कि उसने मेघके ऊपर विराजेहुए मुनिश्रेष्ठ नारदजीको देखा ॥ १ ॥ तब निशाचर रावणने प्रणाम करके उनकी कुशल पूँछी व आनेका कारणभी पूंछा ॥ २ ॥ अमित प्रभायुक्त महातेजस्वी देवर्षि नारदजी मेघके ऊपर विराजमान पुष्पक विमानपर सवार होकर आये, रावणसे कहने लगे ॥ ३ ॥ हे विश्रवानंदन सौम्य राक्षसनाथ ! तुम हमारे वचन श्रवण करनेके लिये कुछ समय ठहरो हम तुम्हारा यह उग्र विक्रम देखकर बहुत प्रसन्न हुएहैं ॥ ४ ॥ पहले समयमेंविष्णुजीने दैत्योंका नाश करके हमें अत्यंत सन्तुष्ट कियाथा, पीछेसे तुम्हारे साथ गन्धर्व व नागोंका विनाश करनेवाला जो युद्ध होगा उसमे हम अत्यन्त प्रसन्न होंगे ॥ ५ ॥ हे तात ! जो तुम सुनो तो कुछ श्रवण करनेके योग्य बात

इस युद्धके करनेकी इच्छा करते हैं इसलिये कहते हैं, तुम श्रवण करनेके लिये अपने चित्तको लगाओ ॥ ६ ॥ हे वत्स ! यह मृत्युलोक जब कि मृत्युके वशमें पड़ा है यह आपही नाश हुआ रहताहै इसलिये तुम देवताओंसे अवध्य होकर वृथा क्यों इनका संहार करतेहो तुम, देव, दानव, दैत्य, यक्ष, राक्षस और गन्ध र्वोंसे अवध्यहो इस कारण इन मनुष्योंको क्लेश देना तुम्हें उचित नहीं है ॥ ७ ॥ ८ ॥ यह मृत्युलोक सदाही विपत्तियोंसे युक्तहै, विशेष करके अपनी भलाईका आचरण करनेमें यह अत्यन्त मूढ और जरा व्याधिसे आच्छादित हुआहै इसलिये ऐसे लोकका नाश करनेसे क्या ? ॥९॥ अनेक प्रकारके अनिष्ट सम्बन्धोंसे मनुष्य जहां तहां सदा पीडित हुआ करताहै; इसलिये युद्धसे ऐसे मनुष्यलोकका नाश करना कौन मतिमान् पुरुष चाहताहै ? ॥ १० ॥ और भूख, प्यास व जरासेभी यह नित्य क्षय होताहै; इसकारण भाग्य करके निहत, विषाद और शोकसे संतापित मनुष्यलोकको तुम मत उजाडो ॥ ११ ॥ हे महावीर ! राक्षसनाथ !

किमर्थं बाध्यतेनातत्त्वयाऽवध्येनदैवतैः ॥ हतएवह्ययंलोकोयदामृत्युवशंगतः ॥ ७ ॥ देवदानवदैत्यानांयक्षगंधर्वरक्षसाम् ॥ अवध्येनत्त्वयालोकः क्लेष्टुंयोग्योनमानुषः ॥ ८ ॥ नित्यंश्रेयसिसंमूढंमहद्भिर्व्यसनैर्वृतम् ॥ हन्यात्कस्तादृशंलोकंजराव्याधिशतैर्युतम् ॥ ९ ॥ तैस्तैरनिष्टोपगमै रजस्रंयत्रकुत्रकः ॥ मतिमान्मानुषेलोकेयुद्धेनप्रणयीभवेत् ॥ १० ॥ क्षीयमाणंदैवहतंक्षुत्पिपासाजरादिभिः ॥ विषादशोकसंमूढंलोकंत्वंक्षपय स्वमा ॥ ११ ॥ पश्यतावन्महाबाहोराक्षसेश्वरमानुषम् ॥ मूढमेवंविचित्रार्थंयस्यनज्ञायतेगतिः ॥ १२ ॥ क्वचिद्वादित्रनृत्यादिसेव्यतेमु दितैर्जनैः ॥ रुद्यतेचापरैरार्तैर्धाराश्रुनयनाननैः ॥ १३ ॥ मातापितृसुतस्नेहभार्याबंधुमनोरमैः ॥ मोहितोयंजनोध्वस्तःक्लेशंस्वंनावबुध्य ते ॥ १४ ॥ तत्किमेवंपरिक्लिश्यलोकंमोहनिराकृतम् ॥ जितएवत्वयासौम्यमर्त्यलोकोनसंशयः ॥ १५ ॥ अवश्यमेभिःसर्वैश्चगंतव्यं यमसादनम् ॥ तन्निगृह्णीष्वपौलस्त्ययमंपरपुरंजय ॥ १६ ॥

देखो मनुष्यलोक इतना मूढ़है कि, वह अपने सुख दुःख भोग करनेके कालकोभी नहीं जानता और विविधभांतिके साधारण २ पुरुषार्थमें अनुरागी हुआ करताहै ॥ १२ ॥ कहीं तो मनुष्यगण हर्षित होकर गाते बजातेहैं, और कहीं और दूसरे आर्तपुरुषके साथ आँसुओंकी धाराप्रवाहसे मुख व नेत्रोंको गीला करके रोदन कररहे हैं, ॥ १३ ॥ और मनुष्यलोक—माता, पिता, पुत्रके स्नेह और बन्धु इत्यादिके मनोरथसे मोहितहै । इसलिये नीचेको गिरताहुआ अपने परलोकके क्लेशको नहीं जान सकता ॥ १४ ॥ इस कारण हे सौम्य ! इस प्रकारके मोहसे पीडित हुए मनुष्यको क्लेश देना वृथाहै, और तिसपर तुमने इस मृत्युलोकको जीतभी लियाहै इसमें कुछ संदेह नहीं ॥ १५ ॥ यह समस्त मनुष्य अवश्यही यमराजके भवनको सिधारेंगे इससे हे परपुरको जीतने वाले ! पुलस्त्यके पौत्र ! तुम यमराजको

गरन इस प्रकारसे नारदजीके समझानेसे ॥ १७ ॥ प्रणाम करके हँसता हुआ नारदजीसे बोला—कि हे देवर्षे ! हे देव गन्धर्व लोकविहारिन् ! हे सम
नप्रिय ! ॥ १८ ॥ जयकी अभिलाषा किये हम पातालके जानेको तैयारहैं फिर त्रिलोकीको जीत देवता और नागोंको अपने वशमें लाकर अमृतके लिये हम
का मथन करेंगे ॥ १९ ॥ तब भगवान ऋषि नारदजी रावणसे बोले कि, तुम जो पातालहीको जाना चाहतेहो तो इस मार्गसे कहां जातेहो ? ॥ २० ॥
दे ! हे शत्रुनाशी ! यह अत्यन्त दुर्गम यमपुरीका मार्ग प्रेतराज नगरके सामनेको चलागया है ॥ २१ ॥ तब वह रावण "ऐसाही" करेंगे यह कह हँसकर शरद्‌क

तस्मिञ्जिते जितं सर्वं भवत्येव न संशयः ॥ एवमुक्तस्तु लंकेशो दीप्यमानं स्वतेजसा ॥ १७ ॥ अब्रवीन्नारदं तत्र संप्रहस्याभिवाद्य च ॥ महर्षे देवगंध
र्वविहारिन्समरप्रिय ॥ १८ ॥ अहं समुद्यतो गंतुं विजयार्थं रसातलम् ॥ ततो लोकत्रयं जित्वा स्थाप्य नागान्सुरान्वशे ॥ समुद्रममृतार्थं च मथिष्यामि
रसालयम् ॥ १९ ॥ अथाब्रवीद्दशग्रीवं नारदो भगवानृषिः ॥ क्व खल्विदानीं मार्गेण त्वयेहान्येन गम्यते ॥ २० ॥ अयं खलु सुदुर्गम्यः प्रेतराजपुरं
प्रति ॥ मार्गो गच्छति दुर्धर्ष यमस्यामित्रकर्शन ॥ २१ ॥ स तु शारदमेघाभं हासं मुक्त्वा दशाननः ॥ उवाच कृतमित्येव वचनं चेदमब्रवीत् ॥ २२ ॥
तस्मादहं महाब्रह्मन्वैवस्वतवधोद्यतः ॥ गच्छामि दक्षिणामाशां यत्र सूर्यात्मजो नृपः ॥ २३ ॥ मया हि भगवन्क्रोधात्प्रतिज्ञातं रणार्थिना ॥ अ
जेष्यामि चतुरो लोकपालानिति प्रभो ॥ २४ ॥ तदिह प्रस्थितोऽहं वै पितृराजपुरं प्रति ॥ प्राणिसंक्लेशकर्तारं योजयिष्यामि मृत्युना ॥ २५ ॥ एवमु
क्त्वा दशग्रीवो मुनिं तमभिवाद्य च ॥ प्रययौ दक्षिणामाशां प्रविष्टः सह मंत्रिभिः ॥ २६ ॥ नारदस्तु महातेजा मुहूर्तं ध्यानमास्थितः ॥ चिंतयामास
विप्रेन्द्रो विधूम इव पावकः ॥ २७ ॥ येन लोकास्त्रयः सेन्द्राः क्लिश्यंते सचराचराः ॥ क्षीणे चायुषि धर्मेण स कालो जेष्यते कथम् ॥ २८ ॥

मेघकी समान मुनिगणसे नारदजीसे बोला ॥ २२ ॥ कि यमपुरीके मार्गसे जानेका और यमको जीतनेका विचार हमने पक्का कर लियाहै; इससे हम दक्षिण दिशा
जायेंगे कि, जहां सूर्यके पुत्र यमराज हैं ॥ २३ ॥ हे भगवन् ! हे प्रभो ! हमने युद्धकी अभिलाषा कर क्रोधके वशहो प्रतिज्ञा कीहै कि, चारों लोकपालोंको जीत
॥ २४ ॥ इसके लिये अब हम प्रेतराजकी नगरीकी ओर जातेहैं; बहुतही शीघ्र प्राणियोंके समूहको क्लेश देनेवाले उन यमराजको हम मृत्युसे मिलाप करावेंगे ॥ २५ ॥
रावण यह कह नारद मुनिको प्रणामकर उनके निकटसे चलकर मंत्रियोंके साथ दक्षिण दिशाको गया ॥ २६ ॥ परन्तु महातेजस्वी विप्रश्रेष्ठ धुवांरहित अग्निकी
समान नारदजी एक मुहूर्तभरतक ध्यानमें रहकर स्थिरहो चिन्ता करने लगे ॥ २७ ॥ आयुके क्षीण होजानेपर जो इन्द्रादि देवता और सचराचर त्रिलोकीको क्लेश दे

उस कालको रावण किस प्रकारसे जीतेगा ॥ २८ ॥ जो प्राणियोंके दान और कर्मादिका साक्षीहै और जो दूसरा अग्निके स्वरूपहै जिस महात्माके अनुग्रहसे जीव चेतना प्राप्त होकर अपने २ कार्यमें लगतेहैं ॥ २९ ॥ त्रिलोकी जिसके भयसे व्याकुल होकर भागतीहै, यह राक्षसोंमें श्रेष्ठ रावण अपनी इच्छानुसार किस प्रकारसे उसके निकट जायसकेगा ॥ ३० ॥ जो सब लोकका धाता और विधाता पाप पुण्यके फलका दाताहै, जिसने त्रिलोकीको जीत लियाहै उस कालको रावण किस प्रकारसे जीतेगा ? कालही तो सबका विधानहै, रावण कालके सिवाय किस विधिका आश्रय लेकर कालको जीतेगा ? ॥ ३१ ॥ सो इसका हमको बडाकौतुक उत्पन्न होताहै, इस कारण हम साक्षात् यम और राक्षसका युद्ध देखनेके निमित्त यमराजकी पुरीको जायँगे ॥ ३२ ॥ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय

स्वदत्तकृतसाक्षीयोद्वितीयइवपावकः ॥ लब्धसंज्ञाविचेष्टंतेलोकायस्यमहात्मनः ॥ २९ ॥ यस्यनित्यंत्रयोलोकाविद्रवंतिभयार्दिताः ॥ तंकथं राक्षसेंद्रोसौस्वयमेवगमिष्यति ॥ ३० ॥ योविधाताचधाताचसुकृतंदुष्कृतंतथा ॥ त्रैलोक्यंविजितंयेनतंकथंविजयिष्यते ॥ अपरंकिंतुकृत्वेवंविधानंसंविधास्यति ॥ ३१ ॥ कौतूहलंसमुत्पन्नोयास्यमियमसादनम् ॥ विमर्दंद्रष्टुमनयोर्यमराक्षसयोःस्वयम् ॥ ३२ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे विंशः सर्गः ॥ २० ॥ एवंसंचिंत्याविप्रेंद्रोजगामलघुविक्रमः ॥ आख्यातुंतद्यथावृत्तंयमस्यसदनं प्रति ॥ १ ॥ अपश्यत्सयमंतत्रदेवमग्निपुरस्कृतम् ॥ विधानमनुतिष्ठंतंप्राणिनोयस्ययादृशम् ॥ २ ॥ सतुदृष्ट्वायमःप्राप्तंमहर्षिंतत्रनारदम् ॥ अब्रवीत्सुखमासीनमर्घ्यमावेद्यधर्मतः ॥ ३ ॥ कच्चित्क्षेमंनुदेवर्षेकच्चिद्धर्मोननश्यति ॥ किमागमनकृत्यंतेदेवगंधर्वसेवित ॥ ४ ॥ अब्रवीत्तदावाक्यंनारदोभगवानृषिः ॥ श्रूयतामभिधास्यामिविधानंचविधीयताम् ॥ ५ ॥ एपनाम्नादशग्रीवःपितृराजनिशाचरः ॥ उपयातिवशं नेतुंविक्रमैस्त्वांसुदुर्जयम् ॥ ६ ॥

आदिकाव्ये उत्तरकांडे भाषाटीकायां विंशः सर्गः ॥ २० ॥ ॥ अति शीघ्र चलनेवाले विप्रोंमें श्रेष्ठ नारदजी इस प्रकारसे चिन्ताकर यह समाचार यमराजको सुनानेकी अभिलाषासे यमपुरीकी ओर चले ॥ १ ॥ फिर उन्होंने यमराजजी के भवनमें जायकर देखा कि प्रेतराज अपने स्थानके सम्मुख अग्निको साक्षीकर जिस प्राणीका जैसा कर्म है, उसको वैसाही दंड और अनुग्रह कर रहे हैं ॥ २ ॥ यमराज महर्षि नारदजीको वहांपर आयाहुआ देख धर्मानुसार अर्घ्य देकर उनको विराजमान करता हुआ ॥ ३ ॥ नारदजीके सुखपूर्वक बैठनेपर बोले, हे देवगन्धर्वसेवित ! हे देवर्षे ! आप कुशल मंगलसे हैं ? धर्मका नाश तो नहीं होता ? आपके पधारनेका क्या हेतुहै ? ॥ ४ ॥ तब भगवान् नारदऋषि बोले कि, हम कहतेहैं सुनो, फिर जो कुछ कर्त्तव्य होसो [illegible]

निकट आतेहैं; नपरी आर दंडधारी हैं; दोनों आज आपके जय या पराजय हो [illegible] कुछ [illegible] ७

[illegible] समान बनावान, गगनका विमान चला आताहै ॥ ८ ॥ महा बलवान् रावण उस पुष्पकविमानकी प्रभासे वहांके अन्धकारको दूर करता हुआ आया ॥९॥ [illegible] रावणने देखा कि, सब प्राणी अपने पापपुण्यका फल पाय रहेहैं ॥१०॥ यमराजकी सेना उनके दूतोंके साथ प्रजागणोंको उनके पाप पुण्यके अनुसार [illegible] कर रहीहै और किसीको बांध रहीहै ॥११॥ रावणने फिर देखा घोररूपी भयानक उग्र २ यमदूतों करके मारे जाकर सब प्राणी दुःखके मारे आर्त

[illegible]नाश्वाग[illegible]ागतःप्रभो ॥ दंडप्रहरणस्याद्यतवकिंनुभविष्यति ॥ ७ ॥ एतस्मिन्नंतरेदूरादंशुमंतमिवोदितम् ॥ ददृशुर्दीप्तमायांतं [illegible]मानंतस्यतमः ॥ ८ ॥ तंदेशंप्रभयातस्यपुष्पकस्यमहाबलः ॥ कृत्वावितिमिरंसर्वंसमीपमभ्यवर्तत ॥ ९ ॥ सोऽपश्यत्समहाबाहुर्दशग्रीव[illegible] ॥ प्राणिनःसुकृतंचैवभुंजानांश्चैवदुष्कृतम् ॥ १० ॥ अपश्यत्सैनिकांश्चास्ययमस्यानुचरैःसह ॥ यमस्यपुरुषैरुग्रैर्घोररूपैर्भयानकैः ॥ ११ ॥ [illegible]मानांश्चक्लिश्यमानांश्चदेहिनः ॥ क्रोशतश्चमहानादंतीव्रनिष्टनतत्परान् ॥ १२ ॥ कृमिभिर्भक्ष्यमाणांश्चसारमेयैश्चदारुणैः ॥ [illegible]नोद्वेजनश्चभयावहाः ॥ १३ ॥ संतार्यमाणान्वैतरणींबहुशःशोणितोदकाम् ॥ वालुकासुचतप्तासुतप्यमानान्मुहुर्मुहुः ॥ १४ ॥ असिपत्रवनेचैवभिद्यमानानधार्मिकान् ॥ रौरवेक्षारनद्यांचक्षुरधारासुचैवहि ॥ १५ ॥ पानीयंयाचमानांश्चतृषितान्क्षुधितानपि ॥ शवभूतान्कृ[illegible]र्दीनान्विवर्णान्मुक्तमूर्धजान् ॥ १६ ॥ मलपंकधरान्दीनान्रूक्षांश्चपरिधावतः ॥ ददर्शरावणोमार्गेशतशोथसहस्रशः ॥ १७ ॥

[illegible] रहेहैं ॥ १२ ॥ कीडे व कुत्ते आदि जन्तु उन सबोंको काट रहेहैं; और सब ऐसे भयानक वचन बोलतेथे कि, सुनतेही मन व्याकुल होजाय और उन प्राणियों [illegible] ॥ १३ ॥ अनेक प्राणी रुधिररूप जलसे भरीहुई वैतरणी नदीके पार होरहेहैं कोई २ उस नदीकी तप्त २ बालूमें बारंबार संतापित होरहेहैं ॥ १४ ॥ [illegible] अधर्मी लोगोंका शरीर असिपत्र वनमें काटा जाताहै; पापी गण रौरव, क्षार नदी और छूरीकी धारपर गिरकर आर्त शब्द कर रहे हैं ॥१५॥ [illegible] मुर्दोंकी समान कृश देह होगये, वदन विवर्ण होगयाहै, बाल छूटे हुए हैं; बहुतसे पापी भूँखे प्यासे होकर "जल जल" ऐसे शब्दकर बराबर जल मांग रहेहैं ॥१६॥ [illegible] पापी मैले कुचैलेही पूरी लगाये, रूखे अंग किये इधर उधर दौडते हैं; रावणने मार्गके बीच ऐसी दुरवस्थामें पडे सैकडों हजारों पापी देखे ॥१७॥

फिर यमराजके भवनमें यहभी देखा कि, कोई २ पुण्यात्मा अपने पुण्यके प्रभावसे उत्तम स्थानोंमें गीत और बाजोंके बजनेसे आनंद कर रहेहैं ॥ १८ ॥ जिन्होंने गोदान, अन्नदान और गृहदान कियेहैं वे लोग अपने कर्मके फलानुसार गोरस अन्न और गृहभोग कररहेहैं ॥१९॥ धर्मात्मालोग सुवर्ण, मणि और मुक्तासे सज धजकर स्त्रियोंके सहित विहार कर रहेहैं ॥२०॥ व और दूसरे धर्मात्मालोग अपने तेजकेप्रभावसे प्रदीप्त हो रहे हैं; महावीर राक्षसपति रावणने वहां इस प्रकारसे देखा ॥२१॥ तिसके पीछे बलवान् रावणने विक्रम प्रकाश करके बलके सहित अपने दुष्कृत कार्यसे दंड पातेहुए उन पापियोंको छोडदिया ॥ २२ ॥ पापी प्राणिगण राक्षस दशग्रीव करके छुटाये जायकर एक मुहूर्त भरके लिये अचिन्तनीय और अतर्कित सुख प्राप्त करते हुए, जब बलवान् राक्षसोंने प्रेतोंको छोड दिया ॥ २३ ॥ तब

कांश्चिद्गृहमुख्येषुगीतवादित्रनिःस्वनैः ॥ प्रमोदमानानद्राक्षीद्रावणःसुकृतैःस्वकैः ॥ १८ ॥ गोरसंगोप्रदातारोअन्नंचैवान्नदायिनः ॥ गृहांश्च गृहदातारःस्वकर्मफलमश्नुतः ॥ १९ ॥ सुवर्णमणिमुक्ताभिःप्रमदाभिरलंकृतान् ॥ धार्मिकानपरांस्तत्रदीप्यमानान्स्वतेजसा ॥ २० ॥ ददर्श समहाबाहूरावणोराक्षसाधिपः ॥ ततस्तान्भिद्यमानांश्चकर्मभिर्दुष्कृतैःस्वकैः ॥ २१ ॥ रावणोमोचयामासविक्रमेणबलाद्बली ॥ प्राणिनोमोक्षितास्तेनदशग्रीवेणरक्षसा ॥ २२ ॥ सुखमापुर्मुहूर्तंतेह्यतर्कितमाचिंतितम् ॥ प्रेतेषुमुच्यमानेषुराक्षसेनमहीयसा ॥ २३ ॥ प्रेतगोपाः सुसंक्रुद्धा राक्षसेंद्रमभिद्रवन् ॥ ततोहलहलाशब्दःसर्वदिग्भ्यःसमुत्थितः ॥ धर्मराजस्ययोधानांशूराणांसंप्रधावताम् ॥ २४ ॥ तेप्रासैःपरिघैःशूलैर्मुसलैःशक्तितोमरैः ॥ पुष्पकंसमवर्षंतशूराःशतसहस्रशः ॥ २५ ॥ तस्यासनानिप्रासादान्वेदिकास्तोरणानिच ॥ पुष्पकस्यबभंजुस्तेशीघ्रंमधुकराइव ॥ २६ ॥ देवनिष्ठानभूतंतद्विमानंपुष्पकंमृधे ॥ भज्यमानंतथैवासीदक्षयंब्रह्मतेजसा ॥२७॥ असंख्यासुमहत्यासीत्तस्यसेनामहात्मनः ॥ शूराणामग्रयातॄणांसहस्राणिशतानिच ॥ २८ ॥

प्रेतरक्षक अत्यन्त क्रुद्धहो राक्षस रावणके सम्मुख दौडे । इसके पीछे धर्मराजके शूरवीर हल्ला करतेहुए दशों दिशाओंसे आगमन करने लगे ॥ २४ ॥ वह सैकडों हजारों शूरवीर शूल, मुशल, शक्ति, परिघ और तोमर इत्यादि अस्त्र शस्त्र पुष्पक विमानपर वर्षाने लगे ॥ २५ ॥ वह सब शहदकी मक्खियोंके समान एक साथ ही गिरकर अतिशीघ्र पुष्पक विमानके चारों तरफसे आसन, महल, चौतरे और द्वार तोडने लगे ॥ २६ ॥ परन्तु विमान देवताके अधिष्ठान और ब्रह्मतेजसे

अभिलाषाके योग्य युद्ध करने लगे ॥ २९ ॥ राजा दशानन उसके मंत्री सब [illegible]
लगे ॥ ३० ॥ महावीर यम और रावणके महाभाग मंत्री अस्त्र शस्त्र चलायकर परस्पर एक दूसरेके ऊपर प्रहार करने लगे ॥ ३१ ॥ परन्तु महावीर यम-
मंत्री महाबलवान् रावणके मंत्रीजनोंको छोडकर वह महाबलशाली वीर ॥३२॥ शूल वर्षण करते २ रावणके सन्मुखही धाये । फिर राक्षसोंका राजा उनके
जर्जरित होगया व उसके सब अंगोंसे रुधिर निकलने लगा और खिलेहुए पुष्पसमूहोंसे शोभित अशोकवृक्षकी समान वह पुष्पक विमानपर शोभायमान होने

ततोवृक्षैश्चशैलैश्चप्रासादानांशतैस्तथा ॥ ततस्तेसचिवास्तस्ययथाकामंयथाबलम् ॥ २९ ॥ अयुध्यंतमहवीराःसचराजादशाननः ॥ ते[illegible]
णितदिग्धांगाःसर्वशस्त्रसमाहताः ॥ ३० ॥ अमात्याराक्षसेद्रस्यचक्रुरायोधनंमहत् ॥ अन्योन्यंतेमहाभागाजघ्नुःप्रहरणैर्भृशम् ॥ ३१ ॥
स्यचमहाबाहोरावणस्यचमंत्रिणः ॥ अमात्यांस्तांस्तुसंत्यज्ययमयोधामहाबलाः ॥ ३२ ॥ तमेवचाभ्यधावंतशूलवर्षैर्दशाननम् ॥ ततःशो
तदिग्धांगःप्रहारैर्जर्जरीकृतः ॥ फुल्लाशोकइवाभातिपुष्पकेराक्षसाधिपः ॥ ३३ ॥ सतुशूलगदाप्रासाञ्छक्तितोमरसायकान् ॥ मुमोचचशि
क्षान्मुमोचास्त्रंबलाद्बली ॥ ३४ ॥ तरूणांचशिलानांचशस्त्राणांचातिदारुणम् ॥ यमसैन्येषुतद्वर्षंपपातधरणीतले ॥ ३५ ॥ तांस्तुसर्वान्
भित्त्वातदस्त्रमपहत्यच ॥ जघ्नुस्तेराक्षसंघोरमेकंशतसहस्रशः ॥ ३६ ॥ परिवार्यचतंसर्वेशैलंमेघोत्कराइव ॥ भिंदिपालैश्चशूलैश्चनिरुच्छ्वासम
यन् ॥ ३७ ॥ विमुक्तकवचःक्रुद्धःसिक्तःशोणितविस्रवैः ॥ ततःसपुष्पकंत्यक्त्वापृथिव्यामवतिष्ठत ॥ ३८ ॥ ततःसकार्मुकीबाणीसमरेच
वर्धत ॥ लब्धसंज्ञोमुहूर्तेनक्रुद्धस्तस्थौयथांतकः ॥ ३९ ॥

॥ ३३ ॥ उस कालमें बलवान् रावणभी अस्त्र चलानेकी निपुणतासे तोमर बाण व अस्त्रबलसे शिला और वृक्षोंको चलाने लगा ॥ ३४ ॥ यमराजकी
वृक्षशिलाकी अति दारुण वर्षा होने लगी कि, जिससे वह सेना पृथ्वीपर गिरी ॥३५॥ परन्तु यमके योद्धा सब वृक्षादिको काट और अस्त्र शस्त्रोंको हटाय एक
सैकडों हजारों यमकिंकर, रावणके ऊपर प्रहार करने लगे ॥ ३६ ॥ मेघसमूह जिस प्रकार पर्वतको घेर लेते हैं वैसेही वह सब रावणक
कर उसका श्वास रोक उसके ऊपर हजार २ भिन्दिपाल और शूल वर्षाने लगे ॥ ३७ ॥ रावणका कवच टूट गया और उसके सब अंगोंसे रुधिर
लगा; तब वह महा क्रोधितहो पुष्पकको छोड पृथ्वीपर उतरा ॥ ३८ ॥ एक मुहूर्तमें रावण भलीभांति सुस्ताय कुपितहो दूसरे यमराजकी समान

होगया फिर धनुष बाण धारणकर संग्राममें चढ़ने लगा ॥ ३९ ॥ तिसके पीछे दिव्य पाशुपत अस्त्र धनुषपर चढाय यमकिङ्करोंने " खडे रहो २ " यह कह
धनुषको खेंचने लगा ॥ ४० ॥ इस इन्द्रके शत्रु रावणने कोपके वशहो कानतक धनुषको खेंच समरमें वह बाण छोडे जैसे शिवजीने त्रिपुरासुरके ऊपर बाण छोडे
थे ॥ ४१ ॥ धूम और ज्वालामंडल सम्पन्न इन बाणोंका रूप ग्रीष्मकालमें वन दहनकारी प्रज्वलित दावानलकी समान दिखाई देने लगा ॥४२॥ ज्वालाओंकी मालासे
युक्त वह बाण छूटकर लता और वृक्षोंको भस्म करतेहुए संग्राममें दौड़े ॥४३॥ मांस खानेवाले पशुपक्षीभी उन बाणोंके तेजसे भस्म होकर इन्द्रध्वजाओंकी समान
उसी समय गिरे ॥ ४४ ॥ तिसके पीछे भयंकर विक्रमकारी राक्षस रावण अपने मंत्रियोंके साथ पृथ्वीको कंपायमान करता हुआ महानाद करने लगा ॥ ४५ ॥

ततःपाशुपतंदिव्यमस्त्रंसंधायकार्मुके ॥ तिष्ठतिष्ठेतितानुक्त्वातच्चापंव्यपकर्षत ॥४०॥ आकर्णात्सविकृष्याथचापमिन्द्रारिराहवे ॥ मुमोचतंशरंक्रुद्ध
त्रिपुरेशंकरोयथा ॥४१॥ तस्यरूपंशरस्यासीत्सधूमज्वालमंडलम् ॥ वनंदहिष्यतोघर्मेदावाग्नेरिवमूर्च्छतः ॥४२॥ ज्वालामालीसतुशरःक्रव्या
दानुगतोरणे ॥ मुक्तोगुल्मान्द्रुमांश्चापिभस्मकृत्वाप्रधावति ॥ ४३ ॥ तेतस्यतेजसादग्धाःसैन्यानिपेतुस्तत्र ॥ वलेतस्मिन्निपतितानामहेन्द्राइवके
तवः ॥ ४४॥ ततस्तुसचिवैःसार्धंराक्षसोभीमविक्रमः ॥ ननादसुमहानादंकंपयन्निवमेदिनीम् ॥४५॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदि
काव्य उत्तरकांड एकविंशःसर्गः ॥२१॥ सतस्यतुमहानादंश्रुत्वावैवस्वतःप्रभुः ॥ शत्रुंविजयिनंमेनेस्वबलस्यचसंक्षयम् ॥१॥ सहियोधान्हतान्म
त्वाक्रोधसंरक्तलोचनः॥ अब्रवीत्त्वरितःसूतंरथोमेउपनीयताम् ॥२॥ तस्यसूतस्तदादिव्यमुपस्थाप्यमहारथम् ॥ स्थितःसचमहातेजाअध्यारोहत
तंरथम् ॥३॥ प्रासमुद्गरहस्तस्यमृत्युस्तस्याग्रतःस्थितः ॥ येनसंक्षिप्यतेसर्वंत्रैलोक्यमिदमव्ययम् ॥ ४॥ कालदंडस्तुपार्श्वस्थोमूर्तिमानस्यचाभ
वत् ॥ यमप्रहरणंदिव्यंतेजसाज्वलदग्निवत् ॥ ५ ॥ ततोलोकत्रयंक्षुब्धमकंपतदिवौकसः ॥ कालंदृष्ट्वातथाक्रुद्धंसर्वलोकभयावहम् ॥ ६ ॥

इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषाटीकायामेकविंशः सर्गः॥२१॥ वह सूर्यनंदन पराक्रमी यमराज रावणका महानाद श्रवण करके अपनी सेनाका
क्षय होना और शत्रुका विजय पाना जानते हुए ॥१॥ यमराज योद्धाओंका नाश जान क्रोधके मारे लाल २ नेत्र कर सारथीसे बोले कि, "शीघ्र हमारा रथ लेआओ"
॥२॥ सारथीभी शीघ्रतासे उनका महारथ लायकर खडा होगया, तब महातेजस्वी यमराजजी उस रथपर सवार हुए ॥ ३ ॥ जो इस चराचर नित्य त्रैलोक्यका नाश करते
[illegible] आगे बैठा ॥ ४ ॥ [illegible]

...समान इन घोड़ान एक मुहूर्तभरम
नया ॥ ८॥ अधिक क्या कहैं वह ...की समान वगगा ... इन्द्रक घोड़ा
वह ... विकराल रथको देखकर राक्षसपति रावणके मन्त्री एकाएकी भागने लगे ॥ ९ ॥ बलहीनताके मारे भयसे कातरहो और अचेतहो ...
" हम इस स्थानमें अब युद्ध नहीं कर सकते" यह कहकर दशों दिशाओंको भागे ॥ १० ॥ परन्तु सब लोगोंको भय पहुँचानेवाले यमरा...
रथको देखकर वह रावण कुछ भी चलायमान नहीं हुआ और न इसने कुछ भय पाया ॥ ११ ॥ फिर यमराज रावणके निकट जाय कोपके वश...

नमस्तानोद्दृश्यमूनस्तानधात्रुनिरस्रभान् ॥ प्रययौभीमसन्नादोयत्ररक्षःपतिःस्थितः ॥ ७ ॥ मुहूर्तेनयमंतेतुहयाहरिहयोपमाः ॥ प्रापयन्... स्तुल्याश्चनान्तस्तुनंरणम् ॥ ८ ॥ दृष्ट्वातथैवविकृतंरथंमृत्युसमन्वितम् ॥ सचिवाराक्षसेंद्रस्यसहसाविप्रदुद्रुवुः ॥९॥ लघुसत्त्वतयातेहिन... भयार्दिताः ॥ नेहयुद्धंसमर्थाःस्मइत्युक्त्वाप्रययुर्दिशः ॥१०॥ सतुतंतादृशंदृष्ट्वारथंलोकभयावहम् ॥ नाक्षुभ्यतदशग्रीवोनचापिभयमावि... ॥ ॥ ११ ॥ सतुरावणमासाद्यव्यसृजच्छक्तितोमरान् ॥ यमोमर्माणिसंक्रुद्धोरावणस्यन्यकृंतत ॥ १२ ॥ रावणस्तुततःस्वस्थःशरवर्षंमुमो... ॥ तस्मिन्वैवस्वतरथेतोयवर्षमिवांबुदः ॥ १३ ॥ ततोमहाशक्तिशतैःपात्यमानैर्महोरसि ॥ नाशक्नोत्प्रतिकर्तुंसराक्षसःस्वल्पपीडितः ॥ १४ ॥ एवंनानाप्रहरणैर्यमेनामित्रकर्षिणा ॥ सप्तरात्रंकृतःसंख्येविसंज्ञोविमुखोरिपुः ॥ १५ ॥ तदासीत्तुमुलंयुद्धंयमराक्षसयोर्द्वयोः ॥ जयमा... ...मनिवर्तिनोः ॥ १६ ॥ ततोदेवाःसगंधर्वाःसिद्धाश्चपरमर्षयः ॥ प्रजापतिंपुरस्कृत्यसमेतास्तद्रणाजिरे ॥ १७ ॥ संवर्तइवलोकानां ...सीत्तदा ॥ राक्षसानांचमुख्यस्यप्रेतानामीश्वरस्यच ॥ १८ ॥

और तोमर चलाय उसके मर्मस्थानोंको काटने लगे ॥ १२ ॥ तब रावण सावधान होकर जल वर्षाते हुए बादलकी समान यमराजके उस रथपर बाण...
करने लगा ॥ १३ ॥ सैकड़ों महाशक्तियोंके छातीमें लगनेसे वह राक्षस रावण कुछ पीड़ित हुआ; परन्तु उन शक्तियोंके निवारणका कुछ उपाय न कर ...
॥ १४ ॥ शत्रुओंके मारनेवाले यमराजने इस प्रकारसे अनेक अस्त्र शस्त्रोंके द्वारा सात दिन रात संग्राम करके शत्रुको चेतनाहीन और संग्रामसे विमुख ...
॥ १५ ॥ परन्तु हे वीर ! इन सात रात्रियोंके बीचमें संग्रामको किसीने नहीं छोड़ा परस्पर जयकी अभिलाषा कियेहुए यमराज और राक्षसराजका ...
होगया ॥ १६ ॥ उसकाल देवगण, गन्धर्वगण, सिद्धगण और परमर्षिगण ब्रह्माजीको आगे करके उस रणभूमिमें आये ॥ १७ ॥ प्रेतोंके स्वामी यम...

गाससमान गत्नके पुत्र कालमें मानों प्रलय आय पहुँचीथी ॥ १८ ॥ तिसके पीछे राक्षसोंमें श्रेष्ठ रावणभी इन्द्रके वज्रकी समान घोर नादकर धनुषपर टंकारदे
भासमान मृत्युलोकमेंही गुंजार करता हुआ बाणोंके समूहको छोडने लगा ॥ १९ ॥ रावणने चार बाणोंसे मृत्युको और सात बाणोंसे सारथीको पीडित
करके सैकडों हजारों बाण अति शीघ्रवाले यमराजके मर्मस्थानमें मारे ॥ २० ॥ तब क्रोधके वश होनेके कारण यमराजके मुखमंडलसे श्वासके साथ धुआं सहित
ज्वालामाली कोपरूप पावक उत्पन्न हुआ ॥ २१ ॥ यह आश्चर्य देख देवता व दानवोंके समीप मृत्युकाल दोनों बहुत हर्षित व क्रोधित हुए ॥ २२ ॥ फि
मृत्युने अत्यन्त कोधित होकर वैवस्वत यमराजसे कहा; आप हमको आज्ञा दीजिये; हम संग्राममें इस भयंकर पापी राक्षसको मार डालतेहैं ॥ २३ ॥ हमारी स्वभा

राक्षसेंद्रोऽपिविस्फार्यचापमिंद्राशनिप्रभम् ॥ निरंतरमिवाकाशंकुर्वन्बाणांस्ततोऽसृजत् ॥ १९ ॥ मृत्युंचतुर्भिर्विशिखैःसूतंसप्तभिरार्दयत ॥
यमंशतसहस्रेणशीघ्रंमर्मस्वताडयत् ॥ २० ॥ ततःक्रुद्धस्यवदनाद्यमस्यसमजायत ॥ ज्वालामालीसनिःश्वासःसधूमःकोपपावकः ॥ २१ ॥
तदाश्चर्यमथोदृष्ट्वादेवदानवसन्निधौ ॥ प्रहर्षितौसुसंरब्धौमृत्युकालौबभूवतुः ॥ २२ ॥ ततोमृत्युःक्रुद्धतरोवैवस्वतमभाषत ॥ मुंचमांसमरेयाव
द्धन्मीमंपापराक्षसम् ॥२३॥ नैषारक्षोभवेदद्यमर्यादाहिनिसर्गतः ॥ हिरण्यकशिपुःश्रीमान्नमुचिःशंबरस्तथा ॥२४॥ निसंदिर्धूमकेतुश्चबलिर्वै
रनोपिच ॥ शंभुर्दैत्योमहाराजोवृत्रोबाणस्तथैवच ॥२५॥ राजर्षयःशास्त्रविदोगंधर्वाःसमहोरगाः॥ ऋषयःपन्नगादैत्यायक्षाश्चह्यप्सरोगणाः॥२६॥
युगांतपरिवर्तेनपृथिवीसमहार्णवा ॥ क्षयंनीतामहाराजसपर्वतसरिद्द्रुमा ॥ २७ ॥ एतेचान्येचबहवोबलवंतोदुरासदाः ॥ विनिपन्नामयादृष्टाः
मुतायंनिशाचरः ॥ २८ ॥ मुंचमांसाधुधर्मज्ञयावदेनंनिहन्म्यहम् ॥ नहिकश्चिन्मयादृष्टोबलवानपिजीवति ॥ २९ ॥

यही यह मर्यादाहै कि, जिनके ऊपर हम छूटतेहैं वह फिर जीवित नहीं रहता, सो जब हमको आप छोडेंगे तब यह राक्षस जीताहुआ न बचेगा. हिरण्य
भीनामनुचि, शंबर ॥ २४ ॥ निसंदी, धूम्रकेतु, विरोचनका पुत्र बलि महाराज, शुंभ दैत्य, वृत्रासुर और बाणासुर ॥२५॥ शास्त्र जाननेवाले सैकडों राजर्षि
महोरग, ऋषि, पन्नग, दैत्य, यक्ष, व अप्सरायें इनको ॥२६॥ और युगान्त बदलनेके समय हम पर्वत, नदी, वृक्षोंके सहित सागरसहित सब पृथ्वीको विध्वंस क
॥२७॥ इनको व और सब महाबलवानोंको जो अतिदुर्दर्प थे देखतेही हम लोगोंने विनाश कियाहै, यह निशाचर तो एक साधारण बातहै ॥ २८ ॥ इस कारण
हे महाभाग, आप हमको छोड दीजिये हम इसको मार डालेंगे, क्योंकि जिसनाही कोई बलवान् क्यों न हो हमारे दृष्टिके आगे पडकर कोईभी जीता हुआ नहीं
[illegible] इसका निजका बल नहीहै, परन्तु स्वभावसे हमारा स्वरूप ऐसाहै, हे यमराज ! हम करके देखेजातेही यह निशाचर फिर एक क्षणभरभी जीता न
[illegible] उसके ऐसे वचन सुनकर उससे कहा—तुम ठहरो हमही इसका नाश करतेहैं ॥ ३१ ॥ तिसके पीछे प्रभु वैवस्वत यमराजजीने
[illegible] उठाया ॥ ३२ ॥ जिस दण्डके निकटही सदा

बचेगा॥ ३०॥तब प्रतापवान धर्मराजने इस मृत्युके ऐसे वचन सुनकर उससे कहा—तुम ठहरो हमही इसका नाश करत ॥ ३१॥ सक · प्रभु वैवस्वत यमराजजान
क्रोधके मारे लाल २ नेत्र करके हाथमें अमोघ व्यर्थ न होनेवाला कालदंड उठाया ॥ ३२ ॥ जिस दण्डके निकटही सदा कालपाश रक्खा रहताहै और पावक
व वज्रकी समान मुद्गरभी मूर्तिमान होकर जिसके निकट रहताहै ॥ ३३ ॥ जो देखतेही प्राणियोंके प्राण निकालताहै वह यदि किसीको पाशसे पीस डाले या दंडसे
गिरादे तो इसमें बातही क्याहै ॥ ३४ ॥ अधिक क्या कहैं वह अग्निकी लपटसे युक्त महाशस्त्र उन बलशाली यमराज करके उठायाहुआ राक्षस रावणको भस्म

बलंममनखल्वेतन्मर्यादेपानिसर्गतः ॥ सदृष्टोनमयाकालमुहूर्तमपिजीवति ॥ ३० ॥ तस्यैवंवचनंश्रुत्वाधर्मराजःप्रतापवान् ॥ अब्रवीत्तत्रतंमृ
त्युंत्वंतिष्ठेनंनिहन्म्यहम् ॥ ३१ ॥ ततःसंरक्तनयनःक्रुद्धोवैवस्वतःप्रभुः ॥ कालदंडममोघंतुतोलयामासपाणिना ॥ ३२ ॥ यस्यपार्श्वेषुनि
हिताःकालपाशाःप्रतिष्ठिताः ॥ पावकाशनिसंकाशोमुद्गरोमूर्तिमान्स्थितः ॥ ३३ ॥ दर्शनादेवयःप्राणान्प्राणिनामपकर्षति ॥ किंपुनःस्पृश
मानस्यपात्यमानस्यवापुनः ॥ ३४ ॥ सज्वालापरिवारस्तुनिर्दहन्निवराक्षसम् ॥ तेनस्पृष्टोबलवतामहाप्रहरणोस्फुरत् ॥ ३५ ॥ ततोविदुद्रुवुः
सर्वेतस्मात्रस्तारणाजिरे ॥ सुराश्चक्षुभिताःसर्वेदृष्ट्वादंडोद्यतंयमम् ॥ ३६ ॥ तस्मिन्प्रहर्तुकामेतुयमदंडेनरावणम् ॥ यमंपितामहःसाक्षाद्दर्श
यित्वेदमब्रवीत् ॥ ३७ ॥ वैवस्वतमहाबाहोनखल्वमितविक्रम ॥ नहंतव्यस्त्वयैतेनदंडेनैषनिशाचरः ॥ ३८ ॥ वरःखलुमयैतस्मैदत्तस्त्रिदश
पुंगव ॥ सत्वयानानृतःकार्योयन्मयाव्याहृतंवचः ॥ ३९ ॥ योहिमामनृतंकुर्याद्देवोवामानुषोपिवा ॥ त्रैलोक्यमनृतंतेनकृतंस्यान्नात्रसंशयः ॥
॥ ४० ॥ क्रुद्धेनविप्रमुक्तोयंनिर्विशेषंप्रियाप्रिये ॥ प्रजाःसंहरतेरौद्रोलोकत्रयभयावहः ॥ ४१ ॥

करनेके लियेही मानो एकाएकी प्रज्वलित हो उठा ॥ ३५ ॥ तब रणमें खडे हुए सबही प्राणी दण्डके भयसे त्रासितहो भागने लगे और यमराजका दंड उठा हुआ
देखकर देवतालोगभी चलायमान हुए ॥ ३६ ॥ इस प्रकार जब यमराजजी दंड रावणके ऊपर चलानेको तैयार हुए तब ब्रह्माजी उनके निकट आयकर बोले ॥
॥ ३७ ॥ हे अमित विक्रमकारी महावीर ! (यमराज) तुम यह दंड चलाकर इस निशाचरको न मारो ॥ ३८ ॥ हे देवश्रेष्ठ ! हमने इसको बरदान दियाहै इसलिये हम
जो कहतेहैं वह तुमको मिथ्या न करना चाहिये ॥ ३९ ॥ और देवता या मनुष्य जो कोईभी हमारे वचन उल्लंघन करेंगे वह त्रिलोकीको झूंठा करेंगे इसमें शंसय नहीं ॥
॥ ४० ॥ तुम जो हमारे प्रिय वा अप्रिय प्राणीके ऊपर क्रोधित होकर त्रिभुवनका भयदायी घोर दंड छोडोगे तो यह दण्ड प्रिय अप्रिय आदि समस्त प्राणियोंको संहार

स्वशासेना ॥ ४१ ॥ विशेष करके सबकी मृत्युके कारणही अमित प्रभावाला अमोघ कालदण्ड अपनी सृष्टिके विनाशको हमने उत्पन्न कियाहै ॥ ४२ ॥ इस कारण हे सौम्य ! यह दण्ड रावणके मस्तकपर गिराना तुमको उचित नहीं है, कारण कि इस दंडके गिरनेसे कोई पुरुष एक मुहूर्त भरतकभी नहीं जी सकता ॥४३॥ इस दंडके लगनेसे जो रावण मृतक न हुआ अथवा मृतक होगया; तो दोनोंही प्रकारसे हमारा वचन मिथ्या होगा ॥ ४४ ॥ इस कारणसे यह उठाया हुआ दंड रावणके ऊपरसे हटालो, और जो इस त्रिलोकीके रक्षा करनेकी वासना हो तो हमारे वचनोंको सत्य करो ॥ ४५ ॥ यह वचन सुनकर धर्मात्मा यमराजने उत्तर दिया कि, आप हमारे स्वामी हैं इस कारण आपकी आज्ञासे दंड निवृत्त किया गया ॥ ४६ ॥ परंतु जो इस वरदान पाये हुए राक्षसको संहार करनेमें हम समर्थ

अमोघोह्येषसर्वेषांप्राणिनाममितप्रभः ॥ कालदंडोमयासृष्टःसर्वमृत्युपुरस्कृतः ॥ ४२ ॥ तन्नखल्वेषतेसौम्यपात्योरावणमूर्धनि ॥ नह्यस्मिन्पतितेकश्चिन्मुहूर्तमपिजीवति ॥ ४३ ॥ यदिह्यस्मिन्निपतितेनम्रियेतैषराक्षसः ॥ म्रियतेवादशग्रीवस्तदाप्युभयतोऽनृतम् ॥ ४४ ॥ तन्निवर्तयलंकेशाद्दंडमेतंसमुद्यतम् ॥ सत्यंचमांकुरुष्वाद्यलोकांस्त्वंयद्यवेक्षसे ॥ ४५ ॥ एवमुक्तस्तुधर्मात्माप्रत्युवाचयमस्तदा ॥ एषव्यावर्तितोदण्डःप्रभविष्णुर्हिनोभवान् ॥ ४६ ॥ किंत्विदानींमयाशक्यंकर्तुंरणगतेनहि ॥ नमयाययंशक्योहंतुंवरपुरस्कृतः ॥ ४७ ॥ एषतस्मात्प्रणश्यामिदर्शनादस्यरक्षसः ॥ इत्युक्त्वासरथःसाश्वःतत्रैवांतरधीयत ॥ ४८ ॥ दशग्रीवस्तुतंजित्वानामविश्राव्यचात्मनः ॥ आरुह्यपुष्पकंभूयोनिष्क्रांतोयमसादनात् ॥ ४९ ॥ सतुवैवस्वतोदेवैःसहब्रह्मपुरोगमैः ॥ जगामत्रिदिवंहृष्टोनारदश्चमहामुनिः ॥ ५० ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे द्वाविंशःसर्गः ॥ २२ ॥ ततोजित्वादशग्रीवोयमंत्रिदशपुंगवम् ॥ रावणस्तुरणश्लाघीस्वसहायान्ददर्श ह ॥ १ ॥ ततोरुधिरसिक्तांगंप्रहारैर्जर्जरीकृतम् ॥ रावणंराक्षसादृष्ट्वाविस्मयंसमुपागमन् ॥ २ ॥

न हुए तो फिर समरमें रहकर हम क्या करनेको समर्थ होंगे॥४७॥ इसलिये इस राक्षसकी दृष्टिसे हम अंतर्द्धान हुए जाते हैं, यह कहकर यमराजजी वहांसे रथ व अश्वोंके सहित अन्तर्द्धान होगये ॥४८॥ ब्रह्माजीकी कृपासे रावण यमराजको पराजित करके अपना नाम सबको सुनाय पुष्पक विमानपर सवार हो यमराजकी पुरीसे निकला ॥४९॥ तिसके पीछे वैवस्वत यमराजजी ब्रह्मादि सब देवता लोगोंके संग स्वर्गको गये और महामुनि नारदजी भी हर्षित होकरचले गये ॥५०॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषाटीकायां द्वाविंशः सर्गः ॥२२॥ इसके उपरान्त समरमें बडाई पाये दशानन रावण देवश्रेष्ठ यमराजको जीतकर [illegible]

...सुझाया ॥३॥ फिर राक्षसराज रावण पातालमें जानेके अभिलापसे दैत्य और उरगगण करके अधिष्ठित वरुणजीसे रक्षित समुद्रमें प्रवेश करता हुआ ॥४॥ वह रावण वासुकी नागसे पाली जातीहुई भोगपुरीमें जाय नागोंको अपने वशमें लाय हर्षित हो मणिमयी पुरीमें गया ॥५॥ वरदान पाये हुये निवातकवच दैत्य वहां वसते थे, राक्षस रावणने वहां जाय उनको युद्ध करनेके लिये पुकारा ॥६॥ वह बलवान् दैत्य गण सबही अतिविक्रमीथे वह सबही सन्तुष्ट संग्राममें उन्मत्त और अनेक अ... ...गी थे ॥७॥ वह दैत्यगण और राक्षसगण क्रोधित होकर शूल, त्रिशूल, कुलिश, पटा, असि, फरसासे एक दूसरेको मारने लगे ॥ ८ ॥ उन दैत्य और रा...

जयेनवर्धयित्वाचमारीचप्रमुखास्ततः ॥ पुष्पकंभेजिरेसर्वेसांत्वितारावणेनतु ॥ ३ ॥ ततोरसातलंरक्षःप्रविष्टःपयसांनिधिम् ॥ दैत्योरगगण... ...र्वरुणेनसुरक्षितम् ॥ ४ ॥ सतुभोगवतींगत्वापुरींवासुकिपालिताम् ॥ कृत्वानागान्वशेहृष्टोययौमणिमयींपुरीम् ॥ ५ ॥ निवातकवचास्... ...त्यालब्धवरावसन् ॥ राक्षसस्तान्समागम्ययुद्धायसमुपाह्वयत् ॥ ६ ॥ तेतुसर्वेसुविक्रांतादैतेयाबलशालिनः ॥ नानाप्रहरणास्तत्रप्रहृष्टा... ...मंदाः ॥ ७ ॥ शूलैस्त्रिशूलैःकुलिशैःपट्टिशासिपरश्वधैः ॥ अन्योन्यंबिभिदुःक्रुद्धाराक्षसादानवास्तथा ॥ ८ ॥ तेषांतुयुध्यमानानांसाग्रःसं... ...रोगतः ॥ नचान्यतरतस्तत्रविजयोवाक्षयोपिवा ॥९॥ ततःपितामहस्तत्रत्रैलोक्यगतिरव्ययः ॥ आजगामद्रुतंदेवोविमानवरमास्थितः ॥१०॥ निवातकवचानांतुनिवार्यरणकर्मतत् ॥ वृद्धःपितामहोवाक्यमुवाचविदितार्थवत् ॥ ११ ॥ नह्ययंरावणोयुद्धेशक्योजेतुंसुरासुरैः ॥ नभवंत... ...नेतुमपिसामरदानवैः ॥ १२ ॥ राक्षसस्यसखित्वंचभवद्भिःसहरोचते ॥ अविभक्ताश्चसर्वार्थाःसुहृदांनात्रसंशयः ॥ १३ ॥ ततोग्निसाक्षिकंस... ...कृतवांस्तत्ररावणः ॥ निवातकवचैःसार्धंप्रीतिमानभवत्तदा ॥ १४ ॥

...उनके २ युग एक संवत् बीतगया तो भी संग्राममें किसी पक्षकी जीत अथवा हार न हुई ॥९॥ तब त्रिभुवनके गति अविनाशी देव पितामह ब्रह्माजी विमानपर होकर अतिशीघ्र वहां आये ॥ १० ॥ और संग्राम करतेहुए निवातकवचोंको रोक सर्वज्ञताके योग्य सार्थक वचन ब्रह्माजी बोले ॥ ११ ॥ सुर या संग्राममें कोई भी इस रावणको पराजित करनेमें समर्थ नहीं है और देव, दानव कोईभी तुम लोग क्षय नहीं कर सकते ॥ १२ ॥ इस कारण इस र... साथ तुम लोगोंको मित्रता करना चाहिये इसमें कुछ संदेह नहीं कि, मित्रोंका सब बातोंमें परस्पर समान अधिकार होताहै ॥ १३ ॥ इसके उपरान्त रावण ...

साशी बनाय निवातकवच दानवोंके संग मित्रता करके अत्यन्त प्रसन्न हुआ॥१४॥निवात कवच दानवोंनेभी रावणका अत्यन्त सत्कार किया । इस प्रकारसे आदर पाय रावण वहां अपने स्थानहीके समान परमसुखसे एक वर्षतक रहा ॥ १५ ॥ और दैत्योंके स्थानमें मित्रताके वशसे दैत्योंको वशमें कर रावणने एक माया सीखी। वहांसे विदाहो लंकेश्वर रावण जलराज वरुणजीकी पुरीको ढूँढनेका अभिलाषी होकर उन निवातकवच दैत्योंसे विदाहो पातालमें घूमने लगा ॥१६॥ तिसके पीछे कालकेय दैत्योंसे अधिष्ठित अश्मनामक नगरमें रावण गया; वहां उसही मायाके प्रभावसे बलवान् कालकेय दैत्योंको रावणने मारडाला ॥ १७ ॥ अधिक क्या कहैं, उसकालमें रावणने अपने बहनोई शूर्पणखाके स्वामी शक्तिसे दुःसह बलवान् विद्युज्जिह्वकोभी खड्गसे काटडाला ॥ १८ ॥ तब जीभसे रावण वंशीय राक्षसोंको भक्षण करनेवाले, राक्षस विद्युज्जिह्वको संग्राममें पराजितकर रावणने एक मुहूर्तभरमें चार शत दैत्योंका संहार किया ॥ १९ ॥ इसके उपरान्त

अर्चितस्तैर्यथान्यायंसंवत्सरमथोषितः ॥ स्वपुरान्निर्विशेषंचप्रियंप्रातोदशाननः ॥ १५ ॥ तत्रोपधार्यमायानांशतमेकंसमाप्तवान् ॥ सलिलेंद्रपुरान्वेषीभ्रमतिस्मरसातलम् ॥१६॥ ततोश्मनगरंनामकालकेयैरधिष्ठितम् ॥ गत्वातुकालकेयांश्चहत्वातत्रबलोत्कटान्॥१७॥शूर्पणख्याश्चभर्तारमसिनाप्राच्छिनत्तदा ॥ श्यालंचबलवंतंचविद्युज्जिह्वंबलोत्कटम् ॥ १८ ॥ जिह्वयासंलिहंतंचराक्षसंसमरेतदा ॥ तंविजित्यमुहूर्तेनजघ्नेदैत्यांश्चतुःशतम् ॥ १९ ॥ ततःपांडुरमेघाभंकैलासमिवभास्वरम् ॥ वरुणस्यालयंदिव्यमपश्यद्राक्षसाधिपः ॥२०॥ क्षरतींचपयस्तत्रसुरभिंगामवस्थिताम्॥ यस्याःपयोभिनिष्यंदात्क्षीरोदोनामसागरः ॥२१॥ ददर्शरावणस्तत्रगोवृषेंद्रवरारणिम् ॥ यस्माच्चंद्रःप्रभवतिशीतरश्मिर्निशाकरः॥२२॥ यंसमाश्रित्यजीवंतिफेनपाःपरमर्षयः ॥ अमृतंयत्रचोत्पन्नंस्वधाचस्वधभोजिनाम् ॥२३॥ यांब्रुवंतिनरालोकेसुरभिंनामनामतः ॥ प्रदक्षिणंतुतांकृत्वारावणःपरमाद्भुताम् ॥ प्रविवेशमहाघोरंगुप्तंबहुविधैर्बलैः ॥२४॥ ततोधाराशताकीर्णंशारदाभ्रनिभंतदा ॥ नित्यप्रहृष्टंददृशेवरुणस्यगृहोत्तमम्॥२५॥

राक्षसपति रावणने कैलास पर्वतके शिखरकी समान चमकता हुआ उज्ज्वल मेघकी समान दिव्य वरुणजीका स्थान देखा ॥२०॥ उस स्थानमें वह गायभी विराजमान थी कि, जिसके थनोंसे सदाही दूधकी धारा निकला करती है, और इस धारासेही क्षीरोदनामक सागर उत्पन्न हुआहे ॥ २१ ॥ उस क्षीरोद समुद्रसेही शीतल किरणवाले निशाचर चन्द्रमाजी उत्पन्न हुएहैं, रावणने महावृषकी साक्षात् जननी उस सुरभीको वहां देखा ॥ २२ ॥ कि, जिसको आश्रय करके फेनपायी परमर्षि लोग जीवित रहतेहैं और जिससे देवतोंका अमृत और स्वधा भोजन करनेवाले पितृलोगोंका भोजन कव्य उत्पन्न हुआहै ॥ २३ ॥ मनुष्य जिसको सुरभीके नामसे पुकारा करतेहैं. रावणने उस परम अद्भुत गौकी प्रदक्षिणा करके अनेक प्रकारकी सेनासे रक्षित उस महाघोर पुरीमें प्रवेश किया ॥ २४ ॥ तिस

राजामे निवेदन करो ॥ २६ ॥ कि, रावण युद्ध करनेके लिये यहां आयाहै; इसलिये उसको युद्धदान दीजिये,
यह कहनेपर आपको किसी प्रकारका कुछ भय नहीं होगा ॥२७॥ इसी अवसरमें महात्मा वरुणजीके पुत्रपौत्रगण, व उनके गौ और पुष्कर नामक सेनापति
कोप करके आये ॥२८ ॥ वह गुणसम्पन्न वरुणजीके सब पुत्र अपनी सेनाको साथ लेकर उदयहुए सूर्यकी समान प्रभावाले मनकी समान वेगगामी रथोंपर च
आये ॥२९॥ फिर बुद्धिमान् रावण और जलराज वरुणजीके पुत्रोंमें अत्यन्त दारुण युद्ध होने लगा ॥ ३० ॥ राक्षस रावणके महावीर्यवान् मंत्रियोंने जलराज वरुण

ततोहत्वाबलाध्यक्षान्समरेतैश्चताडितः ॥ अब्रवीचततोयोधाब्राजाशीघ्रंनिवेद्यताम् ॥ २६ ॥ युद्धार्थीरावणःप्राप्तस्तस्ययुद्धंप्रदीयताम् ॥ वदव
भयंतेऽस्तिनिर्जितोस्मीतिसांजलिः॥ २७ ॥ एतस्मिन्नंतरेक्रुद्धावरुणस्यमहात्मनः ॥ पुत्राःपौत्राश्चनिष्क्रामन्गौश्चपुष्करएवच ॥२८॥ तेतुतः
णोपेताबलैःपरिवृताःस्वकैः ॥ युक्त्वारथान्कामगमानुद्यद्भास्करवर्चसः ॥२९॥ ततोयुद्धंसमभवद्दारुणंरोमहर्षणम् ॥ सलिलेंद्रस्यपुत्राणांरावणः
मतः ॥३०॥ अमात्यैश्चमहावीर्यैर्दशग्रीवस्यरक्षसः ॥ वारुणंतद्बलंसर्वंक्षणेनविनिपातितम् ॥ ३१ ॥ समीक्ष्यस्वबलंसंख्येवरुणस्यसु
ता ॥ अर्दिताःशरजालेननिवृत्तारणकर्मणः॥३२॥ महीतलगतास्तेतुरावणंदृश्यपुष्पके ॥ आकाशमाशुविविशुःस्यंदनैःशीघ्रगामिभिः॥३३
दासीत्ततस्तेषांतुल्यंस्थानमवाप्यतत् ॥ आकाशयुद्धंतुमुलंदेवदानवयोरिव ॥३४॥ ततस्तेरावणंयुद्धेशरैःपावकसन्निभैः ॥ विमुखीकृत्यसंह
दुर्विविधान्रवान् ॥ ३५ ॥ ततोमहोदरःक्रुद्धोराजानंवीक्ष्यधर्षितम् ॥ त्यक्त्वामृत्युभयंक्रुद्धोयुद्धाकांक्षीव्यलोकयत् ॥ ३६ ॥ तेनतेवारुणा
मगाःपवनोपमाः ॥ महोदरेणगदयाहतास्तेप्रययुःक्षितिम् ॥ ३७ ॥

समस्त सेना एक क्षणमें नाश करदी ॥ ३१ ॥ तब संग्राममें अपनी सेनाका नाश देखकरके और शरजालसे पीडित हो वरुणजीके पुत्र क्षणभ-
विमुख होते हुए ॥ ३२ ॥ वह अबतक पृथ्वीपर रहकर युद्ध करतेथे, और रावणके मंत्री पुष्पक विमानपर बैठेहुए बाण वर्षाय रहेथे इस
देखकर वहभी शीघ्रगामी रथपर सवारहो आकाशको उठे ॥ ३३ ॥ तिसके पीछे समतुल्य स्थान प्राप्त होकर देवता और दानवोंकी समान उन लोगोंक
तुमुल संग्राम आकाशमें होने लगा ॥ ३४ ॥ तिसके पीछे वह लोग अग्निकी समान बाणोंसे रावणको विमुख करके हर्षित चित्तसे अनेक प्रकारके श
चिल्लाने लगे ॥ ३५ ॥ तिसके पीछे शूर महोदर अपने स्वामीको पराजित देख मृत्युका भय छोड वरुणजीकी सेनाको देखने लगा ॥ ३६ ॥ फिर उस मह

संग्राममें पवनकी समान वेगसे चलनेवाले वरुणके पुत्रोंके घोडोंको गदासे मारा, गदासे घायलहो घोडे पृथ्वीपर गिरपडे ॥ ३७ ॥ वरुणजीके पुत्रोंके अश्व और योधाओंका नाश देकर और विना रथके खडाहुआ पृथ्वीपर निहार महोदरने शीघ्रही सिंहनाद किया ॥ ३८ ॥ उस समय उनके वह समस्त रथ महोदरने चूर्ण करडाले, और घोडेभी उत्तम सारथी लोगोंके सहित पृथ्वीपर गिरपडे ॥ ३९ ॥ महात्मा वरुणजीके वीर पुत्रगण रथ गँवाय आकाशके तलेही विराजमान होने लगे, वे लोग केवल अपने प्रभावके वशसे पृथ्वीपर नहीं गिरे ॥ ४० ॥ उन सबोंने कोप करके समरमें धनुषपर रोदा चढायकर बाणोंसे महोदरको विदीर्ण करके फिर सबोंने मिलकर संग्राममें रावणको रोका ॥ ४१ ॥ वह सब अत्यन्त क्रोधके वशहो पर्वतपर मेघकी समान धनुषसे छूटे हुए वज्रकी समान दारुण बाणसमूहोंसे

तेषांवरुणसूनूनांहत्वायोधान्हयांश्चतान् ॥ मुमोचाशुमहानादंविरथान्प्रेक्ष्यतान्स्थितान् ॥ ३८ ॥ तेतुतेषांरथाःसाश्वाःसहसारथिभिर्वरैः ॥ महोदरेणनिहताःपतिताःपृथिवीतले ॥ ३९ ॥ तेतुत्यक्त्वारथान्पुत्रावरुणस्यमहात्मनः ॥ आकाशेविष्ठिताःशूराःस्वप्रभावान्नविव्यथुः ॥ ४० ॥ धनूंषिकृत्वासज्जानिविनिर्भिद्यमहोदरम् ॥ रावणंसमरेक्रुद्धाःसंहिताःसमवारयन् ॥ ४१ ॥ सायकैश्चापविभ्रष्टैर्वज्रकल्पैःसुदारुणैः ॥ दारयंतिस्मसंक्रुद्धामेघाइवमहागिरिम् ॥ ४२ ॥ ततःक्रुद्धोदशग्रीवःकालाग्निरिवमूर्च्छितः ॥ शरवर्षंमहाघोरंतेषांमर्मस्वपातयत् ॥ ४३ ॥ मुसलानिविचित्राणिततोभल्लशतानिच ॥ पट्टिशांश्चैवशक्तीश्चशतघ्नीर्महतीरपि ॥ पातयामासदुर्धर्षस्तेषामुपरिविष्ठितः ॥ ४४ ॥ ततस्तेनैवसहसासीदंतिस्मपदातयः ॥ महापंकमिवासाद्यकुंजराःषष्टिहायनाः ॥ ४५ ॥ सीदमानान्सुतान्दृष्ट्वाविह्वलान्समहाबलः ॥ ननादरावणोहर्षान्महानंबुधरोयथा ॥ ४६ ॥ ततोरक्षोमहानादान्मुक्त्वाहंतिस्मवारुणान् ॥ नानाप्रहरणोपेतैर्धारापातैरिवांबुदः ॥४७॥ ततस्तेविमुखाःसर्वेपतिताधरणीतले ॥ रणात्स्वपुरुषैःशीघ्रंगृहाण्येवप्रवेशिताः ॥ ४८ ॥

रावणको घायल करने लगे ॥ ४२ ॥ तिसके पीछे दशवदन रावण क्रोधके मारे कालाग्निकी समान बढकर वरुणपुत्रोंके मर्मस्थानोंमें घोर बाण मारने लगा ॥ ४३ ॥ वह दुर्दर्ष रावण स्थिर होकर विचित्र मूसल, पटा, शक्ति, बडी शतघ्नी और सैकडों भाले व बाणसमूहोंको वरुणपुत्रोंके ऊपर छोडने लगा ॥ ॥ ४४ ॥ साठ वर्षकी उमरवाले हाथी जिसप्रकार दलदलमें फँसकर पीडित होते हैं, वैसेही पाँव पयादे वरुणजीके सब पुत्र रावणके बाण वर्षानेसे एकाएकी व्याकुल होगये ॥ ४५ ॥ तब वह महाबलवान् रावण वरुणजीके पुत्रोंको विह्वल और व्याकुल देख हर्षित हो महामेघकी समान गंभीर [illegible] लगा ॥ ४६ ॥ [illegible] के पीछे

इन मेढक लोगोंने कहा कि "अब तुम वरुणजीके समाचार कहो" तब प्रहास नामक वरुणके ... ने रावणसे कहा ॥४९॥ कि, जिनको तुम युद्ध करनेके लिये ... वह गांधर्वराज महाराज वरुणजी संगीत श्रवण करनेको ब्रह्मलोकमें गये हैं ॥ ५० ॥ हे वीर ! अधिक करके जो वीर कुमार लोगोंके निकट थे, वह सबही पराजित हुईं, इस कारण राजाके न रहनेसे तुम्हें वृथा परिश्रम करनेसे क्या लाभ ? ॥ ५१ ॥ राक्षसपति रावण यह सुन अपना नाम सबको सुनाय डंके मारे गर्जता हुआ वरुणजीके स्थानसे निकला ॥ ५२ ॥ वह राक्षस रावण जिस मार्गका अवलंबन करके आयाथा उसीसे निवृत्तहो आकाशमंडलमें गमनकर लंकाकी ओर चला ॥ ५३ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये उत्तरकांडे भाषाटीकायां त्रयोविंशः सर्गः ॥ २३ ॥

मानयरीत्तनोराओरणायनिवेदनाम् ॥ रावणंत्वब्रवीन्मंत्रीप्रहासोनामवारुणः ॥ ४९ ॥ गतःखलुमहाराजोब्रह्मलोकंजलेश्वरः ॥ गांधर्वंवरुणः श्रोतुंसंग्रामाद्यनेयुधि ॥ ५० ॥ तत्किंतवयथावीरपरिश्रम्यगतेनृपे ॥ येतुसन्निहितावीराःकुमारास्तेपराजिताः ॥ ५१ ॥ राक्षसेंद्रस्तुतच्छ्रुत्वा नामविश्राव्यचात्मनः ॥ हर्षान्नादंविमुंचन्वैनिष्क्रांतोवरुणालयात् ॥ ५२ ॥ आगतस्तुपथायेनतेनैवविनिवृत्यसः ॥ लंकामभिमुखोरक्षो नभस्थलगतोययौ ॥ ५३ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वा० आ० उत्तरकांडे त्रयोविंशः सर्गः ॥ २३ ॥ ततोऽश्मनगरंभूयोविचेरुर्युद्धदुर्मदाः ॥ तत्रापश्यद्दशग्रीवोगृहंपरमभास्वरम् ॥ १ ॥ वैदूर्यतोरणाकीर्णंमुक्ताजालविभूषितम् ॥ सुवर्णस्तंभगहनंवेदिकाभिःसमंततः ॥ २ ॥ वज्रस्फटिकसोपानंकिंकिणीजालसंवृतम् ॥ वह्वासनयुतंरम्यंमहेंद्रभवनोपमम् ॥ ३ ॥ दृष्ट्वागृहवरंरम्यंदशग्रीवः प्रतापवान् ॥ कस्येदंभवनंरम्यंमेरुमंदरसन्निभम् ॥ ४ ॥ गच्छप्रहस्तशीघ्रंत्वंजानीष्वभवनोत्तमम् ॥ एवमुक्तःप्रहस्तस्तुप्रविवेशगृहोत्तमम् ॥ ५ ॥

(यह ... सर्ग क्षेपक है) इसके उपरान्त दशानन युद्धोन्मत्त राक्षसोंके साथ फिर अश्म नगरमें घूमने लगा, रावणने उस स्थानमें एक परमरमणीय उज्ज्वल गृह देख पाया ॥ १ ॥ इस स्थानके समस्त द्वार वैदूर्यमणिसे बनेहुए और मोतियोंकी जालीसे विभूषितथे, सुवर्णके खंभ लगे हुएथे, उनमें सब जगहही ... ॥ २ ॥ इसमें चढनेकी जो सीढियें बनी हुईथीं, उनमें हीरा व स्फटिकमणि लगी हुईथीं, और किंकिणियोंका जाल जिनपर लगा हुआथा, वह ... सुन्दर स्थान इन्द्रके भवनकी समान था ॥ ३ ॥ उस रमणीक श्रेष्ठ गृहको देखकर प्रतापवान् रावणने विचारा कि, मेरुपर्वतकी तुल्य यह रमणीक गृह किसका है ? ॥ ४ ॥ और बोला कि, हे प्रहस्त ! तुम शीघ्र जायकर जान तो आओ कि, यह भवन किसका है. यह वार्त्ता सुनकर प्रहस्त उस उत्तम गृहमें प्रवेश करता

हुआ ॥ ५ ॥ उस गृहका द्वार सूना देखकर प्रहस्त एक दूसरी कोठरीमें गया, क्रमसे सात कोठरियोंमें जायकर वहां उसने एक ज्वाला देखी और उसमें एक पुरुषभी देखा ॥ ६ ॥ वह पुरुष हर्षित होकर हँसने लगा, तिस कालमें प्रहस्त उस ऊंची हँसीको सुनकर कांप गया और उसके रुयें खडे होगये ॥ ७ ॥ प्रह स्तने यहभी देखा कि, अग्निकी शिखाके बीचमें सुवर्णके फूलोंकी माला पहरे एक पुरुष सूर्यकी समान अतिकठिनतासे देखे जानेके योग्य होकर साक्षात् यमकी समान विमोहित भावसे बैठाहै ॥ ८ ॥ निशाचर प्रहस्तने यह सब बात देखकर अति शीघ्रतासे निकल रावणसे यह सब समाचार कह सुनाया ॥ ९ ॥ हे राम ! तिसके पीछे दूसरे अंजनकी समान कृष्णवर्ण रावणने पुष्पक विमानसे उतरकर उस गृहमें प्रवेश करनेकी इच्छा की ॥१०॥ जैसेही रावणने उसमें प्रवेश करना चाहा

निःशून्यंप्रेक्षतद्वारंपुनःकक्ष्यांतरेययौ ॥ सप्तकक्ष्यांतरंगत्वाततोज्वालामपश्यत ॥ ६ ॥ ततोदृष्टः पुमांस्तत्रहृष्टोहासंमुमोचसः ॥ श्रुत्वासतुमहा हासमूर्ध्वरोमाभवत्तदा ॥ ७ ॥ ज्वालामध्येस्थितस्तत्रहेममालीविमोहितः ॥ आदित्यइवदुष्प्रेक्ष्यःसाक्षादिवयमःस्थितः ॥ ८ ॥ तथादृष्ट्वातुवृ त्तांतंत्वरमाणोविनिर्गतः ॥ विनिर्गम्याब्रवीत्सर्वंरावणायनिशाचरः ॥ ९ ॥ अथरामदशग्रीवःपुष्पकादवरुह्यसः ॥ प्रवेष्टुमिच्छन्वेश्माथभिन्नां जनचयोपमः ॥ १० ॥ चंद्रमौलिर्वपुष्मांश्चपुरुषोस्याग्रतःस्थितः ॥ द्वारमावृत्यसहसाज्वालाजिह्वोभयानकः ॥ ११ ॥ रक्ताक्षश्चारुदशनो बिंबोष्ठश्चारुदर्शनः ॥ महाभीषणनासश्चकंबुग्रीवोमहाहनुः ॥ १२ ॥ रूढश्मश्रुर्निगूढास्थिर्दंष्ट्रालोलोमहर्षणः ॥ गृहीत्वालोहमुसलंद्वारंविष्ट भ्यतिष्ठति ॥ १३ ॥ अथसंपर्शनात्तस्यऊर्ध्वरोमावभूवसः ॥ हृदयंकंपतेचास्यवेपथुश्चव्यजायत ॥ १४ ॥ निमित्तान्यमनोज्ञानि दृष्ट्वाराममव्यचिंतयत् ॥ अथचिंतयतस्तस्यसएवपुरुषोब्रवीत ॥ १५ ॥ किंत्वंचिन्तयसेरक्षोब्रूहिविस्रब्धमानसः ॥ युद्धातिथ्यमहंवीर करिष्येरजनीचर ॥ १६ ॥

वैसेही चन्द्रमा शिरपर धारण किये बडे शरीरवाला एक भयंकर पुरुष एकाएकी द्वारको रोकता हुआ रावणके सन्मुख खडा हुआ, उस पुरुषकी जीभ आगके लपटके समानथी ॥११॥ उसके नेत्र लाल, दांतोंकी पांति सुन्दर, अधर बिम्बाफलकी समान, गठन मनोहर, नासिका अत्यन्त भीषण, गर्दन शंखकी समान, ठोढी बहुत बडी ॥ १२ ॥ उसकी डाढी मोछें घनीथीं, अस्थियें मांसलथीं, डाढें बडी, और आकार सब प्रकारसे रोमहर्षणकारीथा । वह लोहेका मुद्गर धारण करके द्वार रोककर खडा होगया ॥ १३ ॥ उसको देखतेही भयके मारे रावणके रोम खडे होगये, हृदय व देह कम्पायमान होने लगा ॥ १४ ॥ राम ! रावण बुरे निमित्त देखकर चिन्ता करने लगा; इसी अवसरमें वह पुरुष चिंता करते हुए रावणसे बोला ॥ १५ ॥ हे राक्षस ! तुम क्या चिन्ता करतेहो ?

करते लगा ॥ १८ ॥ हे वचन बोलनेवालोंमें श्रेष्ठ! इस गृहमें कौन पुरुष विरा जमानहै? सो बताइये हम उनके सहित युद्ध करेंगे अथवा वह करेंगे जो आपकी इच्छाहो ॥ १९ ॥ उस पुरुषने फिर रावणसे कहा. अत्यन्त उदारस्वभाव, सत्यपराक्रम, शूर, दानवपति बलि इस स्थानमें विराजमानहैं ॥ २० ॥ यह वीर अनेक प्रकारके गुनग्राममे विभूषितहैं, प्रभातकालके सूर्यकी समान तेजस्वीहैं; फांसी हाथमें लिये यमराजकी समान संग्रामसे न लौटनेवाले हैं ॥ २१ ॥ क्रोधी, अजित औरोंको विजय करनेवाले, गुनसागर, प्रिय वचन कहनेवाले; आश्रितका पालन करनेवाले, सदा गुरु व ब्राह्मणोंके प्यारे ॥२२॥ समयको देखनेवाले, महासत्त्व,

एवमुक्तासतन्त्रःपुनर्वचनमब्रवीत् ॥ योत्स्यसेबलिनासार्धमथवामन्यसेकथम् ॥ १७ ॥ रावणोभिहतोभूयऊर्ध्वरोमाव्यजायत ॥ अथधैर्यंस मालम्ब्यरावणोवाक्यमब्रवीत ॥ १८ ॥ गृहेपुतिष्ठतेकोहितद्ब्रूहिवदतांवर ॥ तेनैवसार्धंयोत्स्यामियथावामन्यतेभवान् ॥ १९ ॥ सएनंपुनरप्याह दानवेन्द्रोत्रतिष्ठति ॥ एषवैपरमोदारःशूरःसत्यपराक्रमः ॥२०॥ वीरोबहुगणोपेतःपाशहस्तइवांतकः॥ बालार्कइवतेजस्वीसमरेष्वनिवर्तकः ॥२१॥ अमर्षीदुर्जयोजेताबलवान्गुणसागरः ॥ प्रियंवदः संविभागीगुरुविप्रप्रियःसदा ॥ २२ ॥ कालाकांक्षीमहासत्त्वःसत्यवाक्सौम्यदर्शनः ॥ दक्षःसर्व गुणोपेतःशूरःस्वाध्यायतत्परः ॥ २३ ॥ एषगच्छतिवात्येषज्वलतेतपतेतथा ॥ देवैश्चभूतसंघैश्चपन्नगैश्चपतत्रिभिः ॥ २४ ॥ भयंयोनाभिजाना तितेनत्वंयोद्धुमिच्छसि ॥ बलिनायदितेयोद्धुंरोचतेराक्षसेश्वर ॥ २५ ॥ प्रविशत्वंमहासत्त्वसंग्रामंकुरुमाचिरम् ॥ एवमुक्तोदशग्रीवःप्रविवेशयतो बलिः ॥ २६ ॥ सविलोक्याथलंकेशंजहासदहनोपमः ॥ आदित्यइवदुष्प्रेक्ष्यःस्थितोदानवसत्तमः ॥ २७ ॥ अथसंदर्शनादेवबलिर्विश्वरूपवा न् ॥ प्रगृह्यतान्तदश उत्संगेस्थाप्यचाब्रवीत् ॥ २८ ॥ दशग्रीवमहाबाहोकंतेकामंकरोम्यहम् ॥ किमागमनकृत्यंतेब्रूहित्वंराक्षसेश्वर ॥ २९ ॥

सत्यवादी, प्रियदर्शन, चतुर, सर्वगुणसम्पन्न, वेदपाठ करनेमें निरत ॥ २३ ॥ व पैदलही घूमतेहैं; तिसपर वायुकी समान चलतेहैं, अग्निकी समान प्रज्वलित होतेहैं और सूर्यकी समान ताप देतेहैं ॥ २४ ॥ वह यह नहीं जानतेहैं, कि भय किसको कहतेहैं. हे राक्षसराज ! तुमने इसी राजा बलिके साथ युद्ध करनेकी वासना कीहै ॥ २५ ॥ हे महाराज ! यदि राजा बलिके साथ संग्राम करनेकी तुम्हारी इच्छा हो तो अतिशीघ्र प्रवेश करके युद्ध करो, रावण यह वचन सुनकर बलिके निकट प्रवेश करता हुआ ॥ २६ ॥ इसके उपरान्त वहां विराजमान सूर्यकी समान देखनेके अयोग्य अग्निकी नाईं वह दानवश्रेष्ठ बलि रावणको देखतेही हँस दिये॥ ॥ २७ ॥ फिर विश्वरूप राजा बलि राक्षस रावणको देखतेही पकड अपनी गोदमें बैठाय बोले ॥ २८ ॥ हे महावीर दशानन ! हम तुम्हारी कौन वासना पूर्ण

करें ? । हे राक्षसेश्वर ! तुम्हारे आनेका क्या प्रयोजन है ? सो कहो ॥ २९ ॥ राजा बलिके यह वचन सुनकर रावणने कहा कि, हे महाभाग ! हमने सुनाहैं कि, पूर्वकालमें विष्णुजीने आपको बांधाहै ॥ ३० ॥ हम आपको बंधनसे छुडानेके लिये निःसंदेह समर्थहैं, यह बात सुन राजा बलि हँसकर बोले ॥ ३१ ॥ हे रावण ! तुमने जो कुछ पूछा वह हम वर्णन करतेहैं तुम सुनो, वह जो श्याम रंगके पुरुष द्वारपर सदा विराजमान रहतेहैं ॥ ३२ ॥ पहले जो समस्त दानवेन्द्र और दूसरे बलवान् पुरुषथे, वह बलपूर्वक उन सबको प्रथम अपने वशमें लायेथे ॥ ३३ ॥ हे रावण ! इस पुरुषनेही हमको बांधाहै; यह यमराजकी समान दुर्द्धर्षहैं, इसकारण इस लोकमें कौन पुरुष इनको ठग सकता है ॥ ३४ ॥ जो हमारे द्वारपर रहतेहैं, यही सब प्राणियोंकी सृष्टि, स्थिति, संहार करतेहैं; यही त्रिभुवनके

एवमुक्तस्तुबलिनारावणोवाक्यमब्रवीत् ॥ श्रुतंमयामहाभागबद्धस्त्वंविष्णुनापुरा ॥ ३० ॥ सोहंमोक्षयितुंशक्तोबंधनात्त्वांनसंशयः ॥ एवमुक्ते ततोहासंबलिर्मुक्तेनमब्रवीत् ॥ ३१ ॥ श्रूयतामभिधास्यामियत्त्वंपृच्छसिरावण ॥ यएषपुरुषःश्यामोद्वारेतिष्ठतिनित्यदा ॥ ३२ ॥ एतेनदानवेंद्राश्चतथान्येबलवत्तराः ॥ वशंनीताबलवतापूर्वंपूर्वतराश्चये ॥३३॥ बद्धःसोहमनेनैवंकृतांतोदुरतिक्रमः ॥ कएनंपुरुषोलोकेवंचयिष्यतिमानवः ॥ ॥ ३४ ॥ सर्वभूतापहर्तावैयएषद्वारितिष्ठति ॥ कर्ताकारयिताचैवधाताचभुवनेश्वरः ॥ ३५ ॥ नत्वंवेदनचैवाहंभूतभव्यभवत्प्रभुः ॥ कलिश्चैवेपकालश्चसर्वभूतापहारकः ॥ ३६ ॥ लोकत्रयस्यसर्वस्यहर्तास्रष्टातथैवच ॥ संहरत्येषभूतानिस्थावराणिचराणिच ॥ ३७ ॥ पुनश्चसृजतेसर्वमनाद्यंतमहेश्वरः ॥ इष्टंचैवहिदत्तंचहुतंचैवनिशाचर ॥३८॥ सर्वमेवहिलोकेशोधातागोतानसंशयः ॥ नैवंविधंमहद्भूतंविद्यतेभुवनत्रये ॥ ३९ ॥ अहंत्वंचैवपौलस्त्ययेचान्येपूर्ववत्तराः ॥ नेताह्येषांमहद्भूतंपशुंरशनयायथा ॥ ४० ॥ वृत्रोदनुःशुकःशंभुर्निशुम्भःशुम्भएवच ॥ कालनेमिश्चप्रह्लादिःकूटोवैरोचनोमृदुः ॥ ४१ ॥ यमलार्जुनौचकंसश्चकैटभोमधुनासह ॥ एतेतपंतिद्योतंतिवांतिवर्षंतिचैवहि ॥ ४२ ॥

स्वामीहैं ॥ ३५ ॥ यही प्रभु सर्व प्राणियोंके हरण करनेवाले कालहैं और भूत, भविष्य, वर्तमान स्वरूपहैं न इनको तुम जानते हो न हम जानतेहैं ॥ ३६ ॥ यही तीनों लोकोंकी उत्पत्ति करतेहैं और संहार करतेहैं और यही चराचर सर्व भूतोंके संहारकारी हैं ॥ ३७ ॥ यह महेश्वर आदि अन्त रहितहैं, यही सबको फिर उत्पन्न करतेहैं. हे निशाचर ! दान, यज्ञ, होम यह सबके विधानकारी हैं ॥ ३८ ॥ और यही सबके धाता विधाता रक्षा करतेहैं इसमें कुछ संदेह नहीं, इस प्रकारका महाप्राणी कोई त्रिभुवनमें नहीं है ॥ ३९ ॥ हे पौलस्त्य ! जैसे रस्सीमें बांधकर पशुको चलातेहैं, वैसेही इन महाप्राणीने समस्त दानवोंको चलाया और हम तुमकोभी चलावेंगे ॥ ४० ॥ वृत्र, दनु, शुक, शंभु, निशुम्भ, शुम्भ, कालनेमि, प्रह्लाद, कूट, वैरोचन, मृदु, ॥ ४१ ॥ यमल, अर्ज्जुन, कंस, कैटभ व मधु यह सब सूर्यकी

यागधारी थे ॥ ४३ ॥ सबही पुण्यका नाश होकर [illegible] ॥
जनोंका प्रतिपालन करनेवाले और शत्रुसंहारकारीथे,देवताओंके सहित त्रिलोकीके बीच उनके समान कोई नहीं था ॥ ४५ ॥ यह सबही शास्त्रविशारद थे; समस्त शास्त्र और शस्त्रोंमें भलीभांति निपुण थे, शूरथे,:बडे कुलमें उत्पन्न हुएथे, और संग्रामसे न लौटनेवाले थे ॥ ४६ ॥ सबही महात्मा इन्द्रकी समान थे और युद्धमें सबनेही सब देवताओंको सहस्र २ बार जीता था ॥ ४७ ॥ सबही देवतोंका अप्रिय कार्य करनेमें सदा अनुरागी होकर अपने जनोंका प्रतिपालन करतेथे,

सर्वैःक्रतुशतैरिष्टंसर्वैस्तप्तंमहत्तपः ॥ सर्वेतेसुमहात्मानःसर्वेवेयोगधर्मिणः ॥ ४३ ॥ सर्वैरैश्वर्यमासाद्यभुक्तंभोगैर्महत्तरैः ॥ दत्तमिष्टमधीतंचप्रजाश्चपरिपालिताः ॥ ४४ ॥ स्वपक्षेष्वनुगोप्तारःप्रहर्तारःपरेष्वपि ॥ सामरेष्वपिलोकेषुनैतेषांविद्यतेसमम् ॥ ४५ ॥ शूरास्त्वभिजनोपेताःसर्वेशास्त्रार्थपारगाः ॥ सर्वविद्याप्रवेत्तारःसंग्रामेष्वनिवर्तकाः ॥ ४६ ॥ सर्वैस्त्रिदशराज्यानिकारितानिमहात्मभिः ॥ युद्धेसुरगणाःसर्वेनिर्जिताश्चसहस्रशः ॥ ४७ ॥ देवानामप्रियेसक्ताःस्वपक्षपरिपालकाः ॥ प्रमत्ताश्चोपसक्ताश्चबालार्कसमतेजसः ॥ ४८ ॥ यस्तुदेवान्प्रधर्षेततदेषांविष्णुरीश्वरः ॥ उपायपूर्वंनाशंसवेत्ताभगवान्हरिः ॥ ४९ ॥ प्रादुर्भावंविकुरुतेयेनैतन्निधनंनयेत् ॥ पुनरेवात्मनात्मानमधिष्ठायसतिष्ठति ॥ ५० ॥ परमेतेनदेवेनदानवेंद्रामहात्मना ॥ तेहिसर्वेक्षयंनीताबलिनःकामरूपिणः ॥ ५१ ॥ समरेचदुराधर्षाःश्रूयंतेयेऽपराजिताः ॥ तेपिनीतामहद्भूताः कृतांतबलचोदिताः ॥ ५२ ॥ एवमुक्त्वाथप्रोवाचराक्षसंदानवेश्वरः ॥ यदेतदृश्यतेवीरचक्रंदीप्तानलोपमम् ॥ ५३ ॥ एतद्गृहीत्वागच्छत्वंममपार्श्वं महाबल ॥ ततोहंतवव्याख्यास्येमुक्तिकारणमव्ययम् ॥ ५४ ॥

सबही सदा प्रमत्त रहते थे, सबही दम्भी और बाल सूर्यकी समान तेजस्वी थे ॥ ४८ ॥ जो पुरुष देवतोंको सताताहै, उसके ध्वंस करनेका पाप देवतोंके अधीश्वर भगवान् विष्णुजीही जानतेहैं ॥ ४९ ॥ वही इन सबको उत्पन्न करतेहैं, वही सबको संहार कर डालतेहैं, और फिर संहार करनेके कालमें आत्मामें आत्मासे अधिष्ठित होकर विराजमान रहतेहैं ॥ ५० ॥ वह कामरूपी महाबलवान् महात्मा दानवश्रेष्ठ लोग सबही उन महात्मा देवता करके क्षयको प्राप्त हुएहैं ॥ ५१ ॥ हमने सुनाहै कि, दानव समरमें किसीसे न जीते जातेथे और अति दुर्द्धर्ष वह समस्त अति प्रबल दानवगणभी इन कृतांतरूपी हरिसेही संहार किये गये हैं ॥ ५२ ॥ दानवोंके राजा बलि इस प्रकारसे कहकर फिर रावणसे बोले—प्रदीप्त अग्निकी समान जो चक्र तुम देखतेहो ॥ ५३ ॥ इसको ग्रहण करके तुम हमारे निकट

आओ, हे महाबलवान्! फिर हम तुमसे अव्ययमुक्तिके कारणकी व्याख्या करेंगे ॥५४॥ हे महावीर रावण ! हम जो कुछ कहें वह पूरा करो, विलम्ब न करो, यह सुन प हँसकर महाबलवान राक्षस चला गया ॥ ५५ ॥ हे रघुनंदन ! जिस स्थानमें वह महादिव्य कुंडल था, वहां पहुँचकर बलदर्पित रावणने लीलापूर्वक उस कुंडल को उठाना चाहा ॥ ५६ ॥ परन्तु रावण किसी प्रकारसेभी उस कुंडलके चलानेको समर्थ न हुआ, अधिक करके लाजके मारे रावण फिर २ यत्न करने लगा ॥ ॥ ५७ ॥ और उस दिव्य कुंडलको जैसेही उठाया कि, वैसेही जड कटेहुए शाल वृक्षकी समान रुधिरसे भीगकर रावण पृथ्वीपर गिरगया ॥ ५८ ॥ इसी अवसरमें पुष्पक संभूत शब्द हुआ और राक्षसराजके मंत्रीभी महा हाहाकार शब्द कर उठे ॥५९॥ इसके उपरान्त निशाचर रावण एक मुहूर्तमेंही चेतना प्राप्त करके उठाऔर लाजसे

तत्कुरुष्वमहाबाहोमाविलंबस्वरावण ॥ एतच्छ्रुत्वागतोरक्षः प्रहसंश्चमहाबलः ॥५५॥ यत्रस्थितंमहादिव्यंकुंडलंरघुनंदन ॥ लीलयोत्पाटनंचक्रे रावणोबलदर्पितः ॥ ५६ ॥ नचचालयितुंशक्तोरावणोभूत्कथंचन ॥ लज्जयासपुनर्भूयोयत्नंचक्रेमहाबलः ॥ ५७ ॥ उत्क्षिप्तमात्रेदिव्येचपपातभुविराक्षसः ॥ छिन्नमूलोयथाशालोरुधिरौघपरिप्लुतः ॥ ५८ ॥ एतस्मिन्नंतरेजज्ञेशब्दःपुष्पकसंभवः ॥ राक्षसेंद्रस्यसचिवैर्मुक्तोहाहाकृतो महान् ॥ ५९ ॥ ततोरक्षोमुहूर्तेनचेतनांलभ्यचोत्थितम् ॥ लज्जयावनतीभूतंवलिर्वाक्यमुवाचह ॥ ६० ॥ आगच्छराक्षसश्रेष्ठवाक्यंशृणुमयोदितम् ॥ यत्त्वयाचोद्यतंवीरकुंडलंमणिभूषितम् ॥ ६१ ॥ एतद्धिपूर्वजस्यासीत्कर्णाभरणमीक्ष्यताम् ॥ एतत्पतितवच्चैवमत्रभूमौमहाबल ॥ ६२ ॥ अन्यत्पर्वतसानौहिपतितंकुंडलादनु ॥ मुकुटंवेदिसामीप्येपतितंयुद्ध्यतोभुवि ॥ ६३ ॥ हिरण्यकशिपोःपूर्वंममपूर्वपितामहाव ॥ नतस्यकालो मृत्युर्वानव्याधिर्नविहिंसकाः ॥ ६४ ॥ नदिवामरणंतस्यनरात्रौसंध्ययोर्नहि ॥ नशुष्केणनचार्द्रेणनचशस्त्रेणकेनचित् ॥ ६५ ॥ विद्यतेराक्षसश्रेष्ठतस्यनास्त्रेणकेनचित् ॥ प्रह्लादेनसमंचक्रेवादंपरमदारुणम् ॥ ६६ ॥

अपना मुख नीचा करलिया तब राजा बलिने उससे कहा ॥६०॥ हे राक्षसश्रेष्ठ ! यहां आयकर हमारे कहे हुए वचन सुनो, मणिभूषित जिस कुंडलके उठानेको तुम तैयार हुएहो ॥ ६१ ॥ यह तो हमारे पहले पुरुष हिरण्यकशिपुके कानका गहना था, हे महाबलवान् ! देखो यह इस प्रकारसेंही इस स्थानमें गिराथा ॥ ६२ ॥ व और दूसरा कुंडल इस पर्वतके शिखरपर गिराथा इस कुंडलके सिवाय मुकुटभी उनका युद्धकालमें वेदीके समीप पृथ्वीपर गिरा था ॥ ६३ ॥ पूर्व कालमें हमारे पूर्व पितामह जो हिरण्यकशिपु थे, उनको काल मृत्यु या रोग किसीसे भी भय नहीं था, न सूखी अथवा गीली वस्तुसे उनकी मृत्यु होतीथी ॥ ६४ ॥ किसी शस्त्रसे

झगड़ा हुआ तब नृसिंहके आकारकी समान रूपधारी, सब लोगोंको भय देनेवाले भयंकर वीर पुरुष उत्पन्न हुए ॥ ६७ ॥ वह गभीर मू दारुण ९ [illegible]
होकर चारों ओरको निहारने लगे कि, जिससे सब जगत् चलायमान हुआ ॥ ६८ ॥ इसके उपरान्त नृसिंहजीने हिरण्यकशिपुको दोनों बाहोंसे उठायकर [illegible]
प्रकारमें पेट फाड़ उसके जीवनका नाश किया, जो पुरुष द्वारपर विराजमान है, यह वही निरंजन वासुदेव हैं ॥ ६९ ॥ हम उन्हीं देवाधिदेवके वचन कहते [illegible]
तुम्हारे हृदयमें परम भावका उदय हुआहो तो भक्तिसहित सुनो ॥ ७० ॥ वह सहस्र वत्सरमें सहस्र इन्द्र, लक्ष देवता और शत २ महर्षियोंको ॥ ७१ ॥

तस्यपादेसमुत्पन्नेधीरोलोकभयंकरः ॥ सर्वबर्यस्यवीरस्यप्रह्लादस्यमहात्मनः ॥ ६७ ॥ उत्पन्नोराक्षसश्रेष्ठनृसिंहाकृतिरूपधृक् ॥ दृष्टंच[illegible]
[illegible]णधृष्यंसर्वमशेषतः ॥ ६८ ॥ ततउद्धृत्यबाहुभ्यांनखैर्निन्येयमक्षयम् ॥ एषतिष्ठतिद्वारस्थोवासुदेवोनिरंजनः ॥ ६९ ॥ तस्यदेवाधिदे[illegible]
गदतोमेशृणुष्वह ॥ वाक्यंपरमभावेनयदितेवर्ततेहृदि ॥ ७० ॥ इंद्राणांचसहस्राणिसुराणामयुतानिच ॥ ऋषीणांचैवमुख्यानांशतान्य[illegible]
यशः ॥ ७१ ॥ वशंनीतानिसर्वाणियएषद्वारितिष्ठति ॥ तस्यतद्वचनंश्रुत्वारावणोवाक्यमब्रवीत् ॥ ७२ ॥ मयाप्रेतेश्वरोदृष्टःकृतांतःसहमृत्युना ॥
पाशहस्तोमहाज्वालऊर्ध्वरोमाभयानकः ॥ ७३ ॥ दंष्ट्रालोविद्युज्जिह्वश्चसर्पवृश्चिकरोमवान् ॥ रक्ताक्षोभीमवेगश्चसर्वसत्त्वभयंकरः ॥ ७४ ॥
आदित्यइवदुष्प्रेक्ष्यःसमरेष्वनिवर्तकः ॥ पापानांशासिताचैवसमयायुधिनिर्जितः ॥ ७५ ॥ नचमेतत्रभीःकाचिद्यथावादानवेश्वर ॥ एनं[illegible]
भिजानामितद्भवान्वक्तुमर्हति ॥ ७६ ॥ रावणस्यवचःश्रुत्वाबलिर्वैरोचनोऽब्रवीत् ॥ एषत्रैलोक्यधाताचहरिर्नारायणःप्रभुः ॥ ७७ ॥

अपने वशमें कर रक्खे हैं कि जो द्वारपर विराजमान हैं। राजा बलिके यह वचन सुन रावणने कहा, अतिशय ज्वालायुक्त पाश हाथमें लिये, रोम [illegible]
भयानक प्रेताधिपति यमराजको हमने मृत्युके सहित देखाहै ॥ ७२ ॥ ७३ ॥ जिनकी डाढें बडीहैं, सर्प बिच्छुही जिनके रुवे हैं, जिनकी आंखें लालहैं, [illegible]
समान जिह्वा अतिभयानक है, जो सर्व प्राणियोंको भयके देनेवाले हैं ॥ ७४ ॥ जो सूर्यके समान अतिकठिनतासे देखे जानेके योग्यहैं, जो संग्रामसे कभी [illegible]
नहीं होते, पापके नाशक हैं, प्राणियोंके शासन करनेवाले हैं उन्हीं यमराजको हमने युद्धमें जीताहै ॥ ७५ ॥ हे दानवराज ! उस काल हमको भय या [illegible]
कुछभी नहीं हुई, आप जिस पुरुषका वृत्तान्त कहतेहैं हम उसको नहीं जानते, इस कारण आप इनका वृत्तान्त विस्तारसे कहिये ॥ ७६ ॥ रावणके वचन सुनकर

आओ, हे महावलवान् ! फिर हम तुमसे अव्ययमुक्तिके कारणकी व्याख्या करेंगे ॥५४॥ हे महावीर रावण ! हम जो कुछ कहें वह पूरा करो, विलम्ब न करो, यह सुन य हँसकर महावलवान् राक्षस चला गया ॥ ५५ ॥ हे रघुनंदन ! जिस स्थानमें वह महादिव्य कुंडल था, वहां पहुँचकर वलदर्पित रावणने लीलापूर्वक उस कुंडल को उठाना चाहा ॥ ५६ ॥ परन्तु रावण किसी प्रकारसेभी उस कुंडलके चलानेको समर्थ न हुआ, अधिक करके लाजके मारे रावण फिर २ यत्न करने लगा ॥ ॥ ५७ ॥ और उस दिव्य कुंडलको जैसेही उठाया कि, वैसेही जड कटेहुए शाल वृक्षकी समान रुधिरसे भीगकर रावण पृथ्वीपर गिरगया ॥ ५८ ॥ इसी अवसरमें पुष्पक संभूत शब्द हुआ और राक्षसराजके मंत्रीभी महा हाहाकार शब्द कर उठे ॥५९॥ इसके उपरान्त निशाचर रावण एक मुहूर्तमेंही चेतना प्राप्त करके उठाऔर लाजसे

तत्कुरुष्वमहाबाहोमाविलंबस्वरावण ॥ एतच्छ्रुत्वागतोरक्षः प्रहसंश्चमहावलः ॥५५॥ यत्रस्थितंमहादिव्यंकुंडलंरघुनंदन ॥ लीलयोत्पाटनंचक्रे रावणोवलदर्पितः ॥ ५६ ॥ नचचालयितुंशक्तोरावणोभूत्कथंचन ॥ लज्जयासपुनर्भूयोयत्नंचक्रेमहावलः ॥ ५७ ॥ उत्क्षिप्तमात्रेदिव्येचपपा तभुविराक्षसः ॥ छिन्नमूलोयथाशालोरुधिरौघपरिप्लुतः ॥ ५८ ॥ एतस्मिन्नंतरेजज्ञेशब्दःपुष्पकसंभवः ॥ राक्षसेंद्रस्यसचिवैर्मुक्तोहाहाकृतो महान् ॥ ५९ ॥ ततोरक्षोमुहूर्तेनचेतनांलब्ध्वचोत्थितम् ॥ लज्जयावनतीभूतंवालिर्वाक्यमुवाचह ॥ ६० ॥ आगच्छराक्षसश्रेष्ठवाक्यंशृणुमयोदि तम् ॥ यत्त्वयाचोद्यतंवीरकुंडलंमणिभूषितम् ॥ ६१ ॥ एतद्धिपूर्वजस्यासीत्कर्णाभरणमीक्ष्यताम् ॥ एतत्पतितवच्चैवमत्रभूमौमहावल ॥ ६२ ॥ अन्यत्पर्वतसानौहिपतितंकुंडलादनु ॥ मुकुटंवेदिसामीप्येपतितंयुद्ध्यतोभुवि ॥ ६३ ॥ हिरण्यकशिपोःपूर्वंममपूर्वपितामहात ॥ नतस्यकालो मृत्युर्वानव्याधिर्नविहिंसकाः ॥ ६४ ॥ नदिवामरणंतस्यनरात्रौसंध्ययोर्नहि ॥ नशुष्केणनचार्द्रेणनचशस्त्रेणकेनचित् ॥ ६५ ॥ विद्यतेरास सश्रेष्ठतस्यनास्त्रेणकेनचित् ॥ प्रह्लादेनसमंचक्रेवादंपरमदारुणम् ॥ ६६ ॥

अपना मुख नीचा करलिया तब राजा वालिने उससे कहा ॥६०॥ हे राक्षसश्रेष्ठ ! यहां आयकर हमारे कहे हुए वचन सुनो, मणिभूषित जिस कुंडलके उठानेको तुम तैयार हुएहो ॥ ६१ ॥ यह तो हमारे पहले पुरुष हिरण्यकशिपुके कानका गहना था, हे महावलवान् ! देखो यह इस प्रकारसे इस स्थानमें गिराथा ॥ ६२ ॥ व और दूसरा कुंडल इस पर्वतके शिखरपर गिराथा इस कुंडलके सिवाय मुकुटभी उनका युद्धकालमें वेदीके समीप पृथ्वीपर गिरा था ॥ ६३ ॥ पूर्व कालमें हमारे पूर्व पितामह जो हिरण्यकशिपु थे, उनको काल मृत्यु या रोग किसीसे भी भय नहीं था, न सूखी अथवा गीली वस्तुसे उनकी मृत्यु होतीथी ॥ ६४ ॥ किसी राक्षसे उनकी मृत्यु नहींथी और दिनमें, रात्रिकालमें या दोनों संध्याके समयभी उनका मरण नहीं हो सकताथा ॥ ६५ ॥ हे राक्षस ! [illegible]

झगडा हुआ तब नृसिंहके आकारकी समान रूपधारी, सब लोगों का भय द वाल' कर र पुरुष उत्पन्न हुए ॥ ६७ ॥ वह ग र मू दारुण नृ जी उत्प
झगडा हुआ तब नृसिंहके आकारकी समान रूपधारी, सब लोगों का भय देनेवाले कर र पुरुष उत्पन्न हुए ॥ ६७ ॥ वह ग र मू दारुण नृ जी उत्प
होकर चारों ओरको निहारने लगे कि, जिससे सब जगत् चलायमान हुआ ॥ ६८ ॥ इसके उपरान्त नृसिंहजीने हिरण्यकशिपुको दोनों बाहोंसे उठायकर नखों
प्रहारसे पेट फाड उसके जीवनका नाश किया, जो पुरुष द्वारपर विराजमान है, यह वही निरंजन वासुदेव हैं ॥ ६९ ॥ हम उन्हीं देवाधिदेवके वचन कहते हैं, ज
तुम्हारे हृदयमें परम भावका उदय हुआहो तो भक्तिसहित सुनो ॥ ७० ॥ वह सहस्र वत्सरमें सहस्र इन्द्र, लक्ष देवता और शत २ महर्षियोंको ॥ ७१

तस्ययादेसमुत्पन्नेयोगेलोकभयंकरः ॥ सर्ववर्यस्यवीरस्यप्रह्लादस्यमहात्मनः ॥ ६७ ॥ उत्पन्नोराक्षसश्रेष्ठनृसिंहाकृतिरूपधृक् ॥ दृष्टंचतेनरं
द्रेणक्षुब्धंसर्वमशेषतः ॥ ६८ ॥ ततउद्धृत्यबाहुभ्यांनखैर्निन्येयमक्षयम् ॥ एषतिष्ठतिद्वारस्थोवासुदेवोनिरंजनः ॥ ६९ ॥ तस्यदेवाधिदेवस्य
गदतोमेशृणुष्वह ॥ यस्यपरमभावेनयदितेवर्ततेहृदि ॥ ७० ॥ इंद्राणांचसहस्राणिसुराणामयुतानिच ॥ ऋषीणांचैवमुख्यानांशतान्यब्दसह
स्रशः ॥ ७१ ॥ वशंनीतानिसर्वाणियएषद्वारितिष्ठति ॥ तस्यतद्वचनंश्रुत्वारावणोवाक्यमब्रवीत् ॥ ७२ ॥ मयाप्रेतेश्वरोदृष्टःकृतांतःसहमृत्युना ॥
पाशहस्तोमहाज्वालऊर्ध्वरोमाभयानकः ॥ ७३ ॥ दंष्ट्रालोविद्युज्जिह्वश्चसर्पवृश्चिकरोमवान् ॥ रक्ताक्षोभीमवेगश्चसर्वसत्त्वभयंकरः ॥ ७४ ॥
आदित्यइवदुष्प्रेक्ष्यःसमरेष्वनिवर्तकः ॥ पापानांशासिताचैवसमयायुधिनिर्जितः ॥ ७५ ॥ नचमेतत्रभीःकाचिद्व्यथावादानवेश्वर ॥ एनंतुन
भिजानामितद्भवान्वक्तुमर्हति ॥ ७६ ॥ रावणस्यवचःश्रुत्वाबलिर्वैरोचनोऽब्रवीत् ॥ एषत्रैलोक्यधाताचहरिर्नारायणःप्रभुः ॥ ७७ ॥

अपने वशमें कर रखते हैं कि जो द्वारपर विराजमान हैं। राजा बलिके यह वचन सुन रावणने कहा, अतिशय ज्वालायुक्त पाश हाथमें लिये, रोम फुल-
भयानक प्रेताधिपति यमराजको हमने मृत्युके सहित देखाहै ॥ ७२ ॥ ७३ ॥ जिनकी डाढें बडीहैं, सर्प बिच्छुही जिनके रुवे हैं, जिनकी आंखें लालहैं, बिजली
समान जिह्वा अतिभयानक है, जो सर्व प्राणियोंको भयके देनेवाले हैं ॥ ७४ ॥ जो सूर्यके समान अतिकठिनतासे देखे जानेके योग्यहैं, जो संग्रामसे कभी विमु-
नहीं होते, पापके नाशक हैं, प्राणियोंके शासन करनेवाले हैं उन्हीं यमराजको हमने युद्धमें जीताहै ॥ ७५ ॥ हे दानवराज ! उस काल हमको भय या व्य-
कुछभी नहीं हुई, आप जिस पुरुषका वृत्तान्त कहतेहैं हम उसको नहीं जानते, इस कारण आप इनका वृत्तान्त विस्तारसे कहिये ॥ ७६ ॥ रावणके वचन सुन-

वैरोचनके पुत्र राजा बलिने कहा, यही पुरुष त्रिलोकीके विधानकर्त्ता नारायण हरि हैं ॥ ७७ ॥ यह अनन्त, कपिल, विष्णु और महाद्युति नृसिंहजी हैं, यही यज्ञके आश्रय, यही पाशहस्त, भयानक, और उत्तम आश्रयहैं ॥ ७८ ॥ और यही द्वादश आदित्यकी समान पुराण और पुरुषोत्तम हैं, यह सुरनाथ हैं, और देवताओंमें श्रेष्ठहैं, इनकी, द्युति नीले बादरकी समानहै ॥ ७९ ॥ हे महावीर ! यह भक्तजनोंके प्यारे हैं, योगी और ज्वालाकी किरणोंसे युक्तहैं. इन्हीं प्रभुने सब लोकोंको सर्जन कियाहै और यही फिर पालन करतेहैं ॥८०॥ यही महाबलवान् काल होकर सबका संहार करते हैं, यही यज्ञहैं, और यही चक्रायुधधारी हरि हैं ॥ ८१ ॥ यही हरि सर्व देवतामयहैं, सर्व भूतमय हैं समस्त लोकमय और ज्ञानमयहैं ॥ ८२ ॥ हे वीर ! महारूप सर्वरूपमय हरिही वीर

अनंतःकपिलोजिष्णुर्नरसिंहोमहाद्युतिः ॥ क्रतुधामासुधामाचपाशहस्तोभयानकः ॥ ७८ ॥ द्वादशादित्यसदृशःपुराणपुरुषोत्तमः ॥ नील जीमूतसंकाशःसुरनाथःसुरोत्तमः ॥ ७९ ॥ ज्वालामालीमहाबाहोयोगीभक्तजनप्रियः ॥ एषधारयतेलोकानेषवैसृजतेप्रभुः ॥ ८० ॥ एषसंहर तेचैवकालोभूत्वामहाबलः ॥ एषयज्ञश्चयाज्यश्चचक्रायुधधरोहरिः ॥ ८१ ॥ सर्वदेवमयश्चैवसर्वभूतमयस्तथा ॥ सर्वलोकमयश्चैवसर्वज्ञानम यस्तथा ॥ ८२ ॥ सर्वरूपीमहारूपीबलदेवोमहाभुजः ॥ वीरहावीरचक्षुष्मांस्त्रैलोक्यगुरुरव्ययः ॥ ८३ ॥ एनंमुनिगणाःसर्वेचिंतयंतीहमो क्षिणः ॥ यएनंवेत्तिपुरुषंनचपापैर्विलिप्यते ॥ ८४ ॥ स्मृत्वास्तुत्वातथेष्ट्वाचसर्वमस्मादवाप्यते ॥ एतच्छ्रुत्वातुवचनंरावणोनिर्ययौतदा ॥८५॥ क्रोधसंरक्तनयनउद्यतास्त्रोमहाबलः ॥ तथाभूतंचतंदृष्ट्वाहरिर्मुसलधृक्प्रभुः ॥ ८६ ॥ नैनंहन्म्यधुनापापंचिंतयित्वेतिरूपधृक् ॥ अंतर्धानंगतो रामब्रह्मणःप्रियकाम्यया ॥ ८७ ॥ नचतंपुरुषंतत्रपश्यतेरजनीचरः ॥ हर्षान्नादंविमुंचन्वैनिष्क्रामन्वरुणालयात् ॥ ८८ ॥

घाती महाभुज बलदेवहैं, यही चक्षुष्मान् हरिहैं, त्रिलोकीके गुरु और अव्ययहैं ॥ ८३ ॥ समस्त मोक्षाभिलाषी मुनिगण इस लोकमें इनका ध्यान धरते हैं; अधिक करके जो पुरुष इन पुरुषको जान जाताहै, वह पापमें नहीं लिप्त होताहै ॥८४॥ इनका स्मरण, इनका श्रवण और इनकी आराधना करनेपर इन्हींसे सब कुछ प्राप्त होजाताहै । राजा बलिके ऐसे वचन सुनकर रावण वहांसे निकला ॥ ८५ ॥ उसके नेत्र क्रोधके मारे लाल होगये; और उस महाबलवान्ने अस्त्र उठाया, मूसलधारी नारायण प्रभु उसकी ऐसी अवस्था देखकर ॥८६॥ मनही मन विचार करते हुए कि, ब्रह्माजीकी प्रिय कामनासे इस पापात्माका नाश नहीं करूंगे, पर रूपधारी इस प्रकार चिन्ता करके अन्तर्धान हुए ॥ ८७ ॥ रजनीचर रावणने वहां उस पुरुषको नहीं देख पाया, तब वह अतिहर्षसे सिंहनाद

शिखरपर जाय रात्रि व्यतीत करता हुआ ॥ १ ॥ फिर सूर्यके घोडोंकी समान शीघ्र चलनेवाले पुष्पक विमानपर सवार होकर अनेक भाँतिकी गतिसे सूर्यके सम्मुख चला ॥ २ ॥ रावणने देखा कि, वहांपर दिव्य कांचनके केयूरधारी; रत्नांबरविभूषित सबको पावन करनेवाले, सर्व तेजोंसे युक्त सूर्य भगवान विराजमानहैं ॥ ३ ॥ दिव्य कुंडल युगल उनके मुखमंडलपर विराजमान है, उनका शरीर केयूर और लाल वस्त्रोंसे विभूषित है और कमलके फूलोंकी मालासे

येनैवसंप्रविष्टःसपथातेनैवनिर्ययौ ॥ ८९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे प्रक्षिप्तः प्रथमः सर्गः ॥ १ ॥ अथ संचिंत्यलंकेशःसूर्यलोकंजगामह ॥ मेरुशृंगेवरेरम्येउषित्वातत्रशर्वरीम् ॥ १ ॥ पुष्पकंतत्समारुह्यरवेस्तुरगसन्निभम् ॥ नानापातगतिर्दिव्यंवि द्राक्षियतिस्थितम् ॥ २ ॥ यत्रापश्यद्रविंदेवंसर्वतेजोमयंशुभम् ॥ वरकांचनकेयूररत्नांबरविभूषितम् ॥ ३ ॥ कुंडलाभ्यांशुभाभ्यांतुभ्राजन्मुख विकासितम् ॥ केयूरनिष्काभरणंरक्तमालावलंबिनम् ॥ ४ ॥ रक्तचंदनदिग्धांगंसहस्रकिरणोज्ज्वलम् ॥ तमादिदेवमादित्यमुच्चैःश्रवसवाह नम् ॥ ५ ॥ अनाद्यंतममध्यंचलोकसाक्षिणमीश्वरम् ॥ तंदृष्ट्वाप्रवरंदेवंरावणोरक्षसांवरः ॥ ६ ॥ सप्रहस्तमुवाचाथरवितेजोबलार्दितः ॥ गच्छा मात्यवदस्वैनंनिदेशान्ममशासनम् ॥ ७ ॥ युद्धार्थरावणःप्राप्तोयुद्धंतस्यप्रदीयताम् ॥ निर्जितोस्मीतिवाब्रूहिपक्षमेकतरंकुरु ॥ ८ ॥ तस्यतद्व चनाद्रक्षःसूर्यस्यांतिकमागमत् ॥ पिंगलंदंडिनंचैवसोऽपश्यद्द्वारपालकौ ॥ ९ ॥ ताभ्यामाख्यायतत्सर्वंरावणस्यविनिश्चयम् ॥ तूष्णी मास्तेप्रहस्तस्तुतत्रतेजोंशदीपितः ॥ १० ॥

सजाहुआ है ॥ ४ ॥ उनके सब अंगोंमें लाल चन्दन लगाहुआहै, और हजारों किरणोंकी मालासे वह अंग उज्वलहै वह आदिदेव सूर्यनारायण उच्चैःश्रवा वाहनपर चढेहुए हैं ॥ ५ ॥ आदि अन्त, मध्य रहित लोकसाक्षी जगत्पति देवश्रेष्ठको राक्षसोंमें श्रेष्ठ रावणने देखा ॥ ६ ॥ सूर्यनारायणके तेजबलसे पीडित होकर रावणने प्रहस्तसे कहा, हे मंत्री ! तुम हमारी आज्ञासे जायकर सूर्यसे हमारी यह आज्ञा कहो ॥ ७ ॥ कि रावण युद्धके अभिलाषसे यहांपर आयाहै, यातो युद्ध करो, और या यह कहो कि "हम हार गये" दोनोंमेंसे एक पक्षका आश्रय लो ॥८॥ रावणकी आज्ञानुसार राक्षस प्रहस्तने सूर्यके निकट जायकर देखा कि वहां पिंगल और दंडी नामक दो द्वारपाल खडे हैं ॥ ९ ॥ फिर प्रहस्त उन दोनोंसे रावणकी बल प्रतिज्ञा बतलायकर अपने तेजके प्रभावसे प्रदीनहो चुप चाप द्वारपर

मरा रहा ॥ १० ॥ दंडी, सूर्यभगवान्‌के निकट जाय प्रणाम करके उनसे सब समाचार कहता हुआ, धीमान् सूर्यनारायण दंडीके मुखसे यह समस्त वृत्तान्त सुन॥ ॥ ११ ॥ यह विचारपूर्वक बोले, सूर्य बोले, हे दंडी ! तुम जाओ उसको पराजय करो अथवा कह दो कि, "हम हार गये" ॥१२॥ यह जो तुम्हारी अभिलाषाहो उससे कह दो, सूर्यकी आज्ञा पाय दंडीने कुछ देरके पीछे निशाचरके निकट जाय उस महात्मा राक्षससे ॥ १३ ॥ सूर्य नारायणके कहेहुए समस्त वचन कहे राक्षसराज रावण दंडीके समस्त वचन सुनकर अपनी विजय पुकार वहांसे चलागया ॥१४॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा०वाल्मी०आदि०उत्तरकांडे भाषाटीकायांप्रक्षिप्तद्वितीयः सर्गः ॥२॥ इसके उपरान्त लंकापति रावण रमणीक मेरुपर्वतके शिखरपर रात्रि विताय चन्द्रलोकमें गया ॥ १ ॥ उसने जानेके समय देखा कि, एक दिव्यमाला, दिव्यानु

दंडीगतोरवेःपार्श्वंप्रणम्याख्यातवान्रवेः ॥ श्रुत्वातुसूर्यस्तद्वृत्तंदंडिनोरावणस्यह ॥ ११ ॥ उवाचवचनंधीमान्बुद्धिपूर्वंक्षपापहः ॥ गच्छदंडिञ्ज यस्वैनंनिर्जितोस्मीतिवावद ॥ १२ ॥ यत्तेऽभिकांक्षितंकार्षीःकंचित्कालंक्षपाचरन् ॥ सगत्वावचनात्तस्यराक्षसस्यमहात्मनः ॥ १३ ॥ कथ यामासतत्सर्वंसूर्योक्तवचनंतदा ॥ सश्रुत्वावचनंतस्यदंडिनोराक्षसेश्वरः ॥ घोषयित्वाजगामाथस्वजयंराक्षसाधिपः ॥ १४ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा मायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे प्रक्षिप्तः द्वितीयः सर्गः ॥ २ ॥ ॥ अथसंचिंत्यलंकेशःसोमलोकंजगामह ॥ मेरुशृंगवरेरम्येरजनी मुष्यवीर्यवान् ॥ १ ॥ अथस्यंदनमारूढोदिव्यस्रगनुलेपनः ॥ अप्सरोगणमुख्येनसेव्यमानस्तुगच्छति ॥ २ ॥ रतिश्रांतोप्सरोंकेषुचुंबितः प्रविबुध्यते ॥ दृष्ट्वातुपुरुषस्तेनदृष्ट्वाकौतूहलान्वितः ॥ ३ ॥ अथापश्यदृर्षिंतत्रदृष्ट्वाचैवमुवाचतम् ॥ स्वागतंतवदेवर्षेकालेनैवागतोह्यसि ॥४॥ कोयंस्यंदनमारूढोह्यप्सरोगणसेवितः ॥ निर्लज्जइवसंयातिभयस्थानंनावेदति ॥ ५ ॥ रावणेनैवमुक्तस्तुपर्वतोवाक्यमब्रवीत् ॥ शृणुवत्सयथा तत्त्वंवक्ष्येनाहंमहामते ॥ ६ ॥ अनेननिर्जितालोकाब्रह्माचैवाभितोषितः ॥ एषगच्छतिमोक्षायसुसुखंस्थानमुत्तमम् ॥ ७ ॥ तपसानिर्जितास्त्व द्भवताराक्षसाधिप ॥ प्रयातिपुण्यकृत्तद्वत्सोमंपीत्वानसंशयः ॥ ८ ॥

लेपनभूषित दिव्यपुरुष मुख्य २ अप्सराओंसे सेवितहो रथपर चढकर जाय रहाहै ॥ २ ॥ वह पुरुष रतिसे थककर अप्सराओंके अंकमें सोय रहकर उनके चूम लेनेसे जागतेहैं, यह देखकर रावण कौतूहल वश हुआ ॥ ३॥ इसी अवसरमें पर्वत नामक एक ऋषिको वहां देखकर रावणने कहा, हे देवर्षे ! आपका मंगलहो आप यथासमयमें यहांपर आयेहैं ॥ ४ ॥ अप्सराओंसे सेवित होकर रथपर सवारहो निर्लज्जकी समान जाताहै; यह पुरुष कौन है ? भयके स्थानको यह नहीं जानता? ॥५॥ पर्वतऋषि, रावणके ऐसे वचन सुनकर बोले, हे वत्स महामते ! ठीक २ विवरण वर्णन करताहूं सुनो ॥६॥ इसने तपोबलसे सब लोकोंको जीत लियाहै; और ब्रह्माकोभी

राक्षसाधिप ! जैसे तुमने तप करके सब लोकोंको

पराक्रमहो, इसलिये बलवान् पुरुष एम धमचार
नीही सभामे चमक दमक रहाथा, और गीत व बाजेके शब्दसे परिपूर्ण था ॥ १० ॥ तब रावणने कहा,—हे देवर्षे ! यह महाद्युतिमान् पुरुष किन्नरोंसे शोभायमान होकर उनका मनोहर नाच देखता हुआ, और गीत सुनता हुआ कहांको चला जाताहै ॥ ११ ॥ इसके उपरान्त मुनिश्रेष्ठ पर्वत यह सुनकर रावणसे बोले, यह शूर योद्धाहै, और संग्राममें कभी विमुख नहीं हुआ ॥१२॥ इस कारण विजयी कार्य करनेमें चतुर श्रेष्ठवीर पुरुषने स्वामीके लिये युद्धकर विविध प्रकारके प्रहारोंसे

त्वंतुगजसशार्दूलशूरःसत्यपराक्रमः ॥ नैवेदृशेषुकुध्यंतिवलिनोधर्मचारिषु ॥९॥ अथापश्यद्रथवरंमहाकायंमहौजसम् ॥ जाज्वल्यमानंवपुषागी तवादित्रनिस्वनैः ॥ १० ॥ क्वैषगच्छतिदेवर्षेभ्राजमानोमहाद्युतिः ॥ किन्नरैश्चप्रगायद्भिर्नृत्यद्भिश्चमनोरमम् ॥ ११ ॥ श्रुत्वाचैनमुवाचाथपर्व तोमुनिसत्तमः ॥ एषशूरोरणेयोद्धासंग्रामेष्वनिवर्तकः ॥ १२ ॥ युद्ध्यमानस्तथैवेषप्रहारैर्जर्जरीकृतः ॥ कृतीशूरोरणेजेतास्वाम्यर्थेत्यक्तजीवि तः ॥ १३ ॥ संग्रामेनिहतोऽमित्रैर्हत्वाचसमरेबहून् ॥ इंद्रस्यातिथिरेवैषअथवायत्रगच्छति ॥ १४ ॥ नृत्यगीतपरैर्लोकैःसेव्यतेनरसत्तमः ॥ पप्र च्छरावणोभूयःकोयंयात्यर्कसन्निभः ॥ १५ ॥ रावणस्यवचःश्रुत्वापर्वतोवाक्यमब्रवीत् ॥ यएषदृश्यतेराजन्विमानेसर्वकांचने ॥ १६ ॥ अप्सरो गणसंयुक्तःपूर्णचंद्रनिभाननः ॥ सुवर्णदोमहाराजविचित्राभरणांबरः ॥ १७ ॥ एषगच्छतिशीघ्रेणयानेनतुमहाद्युतिः ॥ पर्वतस्यवचःश्रुत्वारावणो वाक्यमब्रवीत् ॥ १८ ॥ एतेवैयांतिराजानोब्रूहित्वमृषिसत्तम ॥ कोह्यत्रयाचितोदद्याद्युद्धातिथ्यंममाद्यवै ॥ १९ ॥

जर्जरित हो शत्रुओंका प्राणसंहार कियाहै ॥ १३ ॥ फिर बहुत शत्रुओंको मारकर और पीछेसे आप शत्रुके हाथसे मरकर इन्द्रलोकमें या और किसी पुण्य लोकमें जाताहै ॥१४॥ किन्नर लोग नाच गायकर इस नरश्रेष्ठकी सेवा करतेहैं तब रावणने फिर पूछा कि, सूर्यकी समान द्युतिमान् यह कौन पुरुष जाताहै? ॥१५॥ रावणके ऐसे वचन सुनकर पर्वतमुनि बोले कि, हे राजन् ! जिनके सब अंग सुवर्णके बनेहैं, ऐसे विमानपर् जो दिखाई देते हैं ॥ १६ ॥ चंद्रमुखी अप्सराओंके जो संगहैं, जो विचित्र वस्त्र आभूषण धारण किये हैं इन महाराजने सुवर्ण दान कियाहै ॥ १७ ॥ यह इस समय महाद्युति धारण करके वेगगामी विमानपर चढ़कर जाय रहे हैं, पर्वतमुनिके वचन सुनकर रावणने कहा ॥ १८ ॥ हे ऋषिश्रेष्ठ ! यह सब राजा जो जाय रहेहैं; इनमेंसे कौन राजा प्रार्थना करनेपर

हमको युद्धकी पहुनई दे सकेगा ॥ १९ ॥ हे धर्मज्ञ ! आप धर्मके अनुसार हमारे पिताहैं, इसलिये आप हमें ऐसे पुरुषको बताइये, रावणके यह वचन सुनकर पर्वत मुनिने उत्तर दिया ॥ २० ॥ हे महाराज ! यह सब राजा स्वर्गकी अभिलाषा किये हुएहैं युद्धके अभिलाषी नहीं, जो पुरुष तुमसे युद्ध करेगा उसको बतातेहैं सुनो ॥ २१ ॥ सात द्वीपके अधीश्वर अतितेजस्वी मान्धाता नाम विख्यात एक महाराजहैं, यही तुमसे युद्ध करेंगे ॥ २२ ॥ पर्वतमुनिके वचन सुनकर रावणने कहा यह राजा कहां रहता है ? आप विस्तारसहित हमसे यह सब कहिये ॥ २३ ॥ सो हम वहीं जायँगे कि जहां वह नरश्रेष्ठ रहताहै. पर्वतमुनि रावणके वचन सुनकर बोले ॥ २४ ॥ यौवनाश्वका पुत्र नृपश्रेष्ठ मान्धाता समुद्रांतक सब द्वीपोंके सहित पृथ्वीको जीत इसी स्थानमें आवेंगे ॥ २५ ॥ इसी अवसरमें त्रिलोकीमें

तंममाख्याहिधर्मज्ञपितामेत्वंहिधर्मतः ॥ एवमुक्तःप्रत्युवाचरावणंपर्वतस्तदा ॥ २० ॥ स्वर्गार्थिनोमहाराजनैतेयुद्धार्थिनोनृपाः ॥ वक्ष्यामितेमहाभागयस्तेयुद्धंप्रदास्यति ॥ २१ ॥ सतुराजामहातेजाःसप्तद्वीपेश्वरोमहान् ॥ मांधातेत्यभिविख्यातःसतेयुद्धंप्रदास्यति ॥ २२ ॥ पर्वतस्यवचः श्रुत्वारावणोवाक्यमब्रवीत् ॥ कुतोसौतिष्ठतेराजातत्समाचक्ष्वसुव्रत ॥ २३ ॥ सोहंयास्यामितत्रैवयत्रासौनरपुंगवः ॥ रावणस्यवचःश्रुत्वामुनिर्वचनमब्रवीत् ॥२४॥ युवनाश्वसुतोराजामांधाताराजसत्तमः ॥ सप्तद्वीपसमुद्रांतांजित्वेहाभ्यागमिष्यति ॥ २५ ॥ अथापश्यन्महाबाहुस्त्रैलोक्येवरदर्पितः ॥ अयोध्यायाःपतिंवीरंमांधातारंनृपोत्तमम् ॥ २६ ॥ सप्तद्वीपाधिपंयांतंस्यन्दनेनविराजता ॥ कांचनेनविचित्रेणमाहेंद्राभेणभास्वता ॥२७॥ जाज्वल्यमानंरूपेणदिव्यगंधानुलेपनम् ॥ तमुवाचदशग्रीवोयुद्धंमेदीयतामिति ॥२८॥ एवमुक्तोदशग्रीवंप्रहस्येदमुवाचह ॥ यदितेजीवितंनेष्टंततोयुध्यस्वराक्षस ॥२९॥ मांधातुर्वचनंश्रुत्वारावणोवाक्यमब्रवीत् ॥ वरुणस्यकुबेरस्ययमस्यापिनविव्यथे ॥३०॥ किंपुनर्मानुषात्त्वत्तोरावणोभयमाविशेत् ॥ एवमुक्त्वाराक्षसेंद्रःक्रोधात्संप्रज्वलन्निव॥३१॥आज्ञापयामासतदाराक्षसान्युद्धदुर्मदान्॥ अथक्रुद्धास्तुसचिवारावणस्यदुरात्मनः ॥३२॥

विख्यात वरगर्वित महावीर रावणने देखा कि, अयोध्याके महाराज वीर नृपश्रेष्ठ मान्धाता ॥ २६ ॥ सात द्वीपोंके अधीश्वर दिव्य गन्धवाली माला पहरे चंदन लगाये, दीप्तिमान् इन्द्रके रथकी समान चित्रित काञ्चनमय रथपर बैठेहुए आय रहे हैं ॥ २७ ॥ प्रकाशमान रूप किये, दिव्य सुगन्धियुक्त अनुलेपन लगाये वह आये तब रावणने उनसे कहा कि, हमसे युद्ध करो ॥ २८ ॥ यह सुनकर राजा मान्धाताने हँसकर रावणसे कहा, हे राक्षस ! जो तुमको अपना जीना न भाता हो तो युद्ध करो ॥ २९ ॥ मान्धाताके वचन सुनकर रावणने यह कहा कि, यह रावण—वरुण, कुबेर और यमराजके साथ संग्राम करनेमें व्यथित नहीं हुआ ॥ ॥ ३० ॥ वह, फिर कारण मनुष्यदेहधारी तुमसे भय करेगा ! यह कहकर राक्षसराज रावणने क्रोधसे प्रज्वलित होकर [illegible] युद्ध करनेकी आज्ञा दी,

कंकपत्र लगेहुए तीख बाणोंसे ॥ ३३ ॥ प्रहस्त, शुक, सारण [illegible] ... ... अपने निकट पहुँचनेसे पहलेही काट डाला ॥ ३५ ॥ अग्नि जिस प्रकार तिनकोंको बर्षायकर राजाको छाय दिया, परन्तु उन सब बाणोंको उत्तम राजाने अपने निकट पहुँचनेसे पहलेही काट डाला ॥ ३५ ॥ अग्नि जिस प्रकार तिनकोंको जलातीहै, नरराज मान्धाता वैसेही राक्षसोंकी सेनाको सैकडों भुशुण्डी, भाले, भिन्दिपाल और तोमरसे दग्ध करने लगे ॥ ३६ ॥ अग्निके पुत्र स्वामिकार्तिकने जिस प्रकार बाणोंसे क्रौञ्च पर्वतको भेद डालाथा वैसेही मान्धाताने कुपित होकर पाँच अतिवेगवाले तोमरोंसे विदारण किया ॥ ३७ ॥ फिर यमराजकी

ववर्षुःशरजालानिक्रुद्धायुद्धविशारदाः ॥ अथराज्ञाबलवताकंकपत्रैःशिलाशितैः ॥ ३३ ॥ इषुभिस्ताडिताःसर्वेप्रहस्तशुकसारणाः ॥ महोदरवि रूपाक्षाकंपनपुरोगमाः ॥ ३४ ॥ अथप्रहस्तस्तुनृपमिषुवर्षैरवाकिरत् ॥ अप्राप्तानेवतान्सर्वान्प्रचिच्छेदनृपोत्तमः ॥ ३५ ॥ भुशुंडीभिश्च भल्लैश्चभिंदिपालैश्चतोमरैः ॥ नरराजेनदग्धंतेतृणभाराइवाग्निना ॥ ३६ ॥ ततोनृपवरःक्रुद्धःपंचभिःप्रबिभेदतम् ॥ तोमरैश्चमहावेगैःपुनःक्रौंचमि वाग्निजः ॥ ३७ ॥ ततोमुहुर्भ्रामयित्वामुद्गरंयमसन्निभम् ॥ प्राहरत्सोऽतिवेगेनराक्षसस्यरथंप्रति ॥ ३८ ॥ सपपातमहावेगोमुद्गरोवज्रसन्निभः ॥ सतूर्णंपातितस्तेनरावणःशक्रकेतुवत् ॥ ३९ ॥ तदासनृपतिःप्रीत्याहर्षोद्गतबलोबभौ ॥ सकलेंदुकलाःस्पृष्ट्वायथांबुलवणांभसः ॥ ४० ॥ ततो रक्षोबलंसर्वंहाहाभूतमचेतनम् ॥ परिवार्याथतंतस्थौराक्षसेंद्रंसमंततः ॥ ४१ ॥ ततश्चिरात्समाश्वस्यरावणोलोकरावणः ॥ मांधातुःपीडयामास देहंलंकेश्वरोभृशम् ॥ ४२ ॥ मूर्च्छितंतुनृपंदृष्ट्वाप्रहृष्टास्तेनिशाचराः ॥ चुक्रुशुःसिंहनादांश्चप्रक्ष्वेलंतोमहाबलाः ॥ ४३ ॥

समान मुद्गर बारंबार घुमायकर अतिवेगसे रावणके रथके ऊपर प्रहार किया ॥ ३८ ॥ वह वज्रके समान मुद्गर महावेगसे रावणके रथपर गिरकर अतिशीघ्र रावणको गिराता हुआ, जैसे इन्द्रकी ध्वजा गिरे ॥ ३९ ॥ क्षार समुद्रका जल जिस प्रकार सम्पूर्ण चन्द्रमाके छूनेको उछलता है, वैसेही उस कालमें वह राजा मान्धाता प्रसन्नताके मारे हर्षसे फूलगये और शोभायमान हुए ॥ ४० ॥ तब समस्त राक्षसोंकी सेना हाहाकार करके मूर्च्छित हुए राक्षसराजको चारों ओरसे घेरकर खडी होगई ॥ ४१ ॥ बहुत देरके पीछे चेतना पायकर, लंकापति, लोकोंको रुवानेवाला रावण राजा मान्धाताकी देहको पीडित करने लगा ॥ ॥ ४२ ॥ तब पीडाके मारे राजाभी मूर्च्छित होगया, उनको मूर्च्छित देखकर महाबलवान् निशाचर रावण हर्षित मनसे आस्फालन करतेहुए सिंहनाद करने

लगे ॥ ४३ ॥ अयोध्याके राजा मान्धाताने एक क्षणमें मूर्च्छासे जागकर देखा कि, मंत्री निशाचर शत्रुकी पूजा करते हैं ॥४४॥ यह देखकर वह अति क्रोधित हुए, और सूर्य, चन्द्रमाकी समान कान्ति धारण करके बाणोंकी अत्यन्त वर्षाकर राक्षसोंकी सेनाका प्राणसंहार करने लगे ॥ ४५ ॥ फिर समस्त राक्षसोंकी सेना उछलतेहुए समुद्रकी समान राजाके धनुषके शब्द और बाणके शब्दसे सर्व प्रकार चलायमान होगई ॥ ४६ ॥ इस प्रकारसे नर और राक्षसका घोर संग्राम होने लगा इसके उपरान्त महात्मा नरराज मान्धाता और राक्षसश्रेष्ठ रावण ॥४७॥ चाप और खड्ग धारणकरके संग्राम करने लगे; और वीरासनपर विराजमान हुए मान्धाताजीने रावणको और रावणने इन नरपतिको विद्ध किया ॥ ४८ ॥ दोनोंही महाक्रोधसे परस्पर एक दूसरेके ऊपर बाण वर्षाने लगे, परस्पर क्षोभके मारे दोनोहीके शरीर

लब्धसंज्ञोमुहूर्तेनअयोध्याधिपतिस्तदा ॥ दृष्ट्वातंमंत्रिभिःशत्रुंपूज्यमानंनिशाचरैः ॥४४॥ जातकोपोदुराधर्षश्चंद्रार्कसदृशद्युतिः॥ महताशरवर्षेण पातयद्राक्षसंबलम् ॥ ४५ ॥ चापस्यैवनिनादेनतस्यबाणरवेणच ॥ संचचालततःसैन्यमुद्धूतइवसागरः ॥ ४६ ॥ तद्युद्धमभवद्घोरंनरराक्षससं कुलम् ॥ अथाविष्टौमहात्मानौनरराक्षससत्तमौ ॥ ४७ ॥ कार्मुकासिधरौवीरौवीरासनगतौतदा ॥ मांधातारावणंचैवरावणश्चैवतंनृपम् ॥ ४८ ॥ क्रोधेनमहताविष्टौशरवर्षंमुमोचतुः ॥ तौपरस्परसंक्षोभात्प्रहारैःक्षतविक्षतौ ॥ ४९ ॥ कार्मुकेऽस्त्रंसमाधायरौद्रमस्त्रममुंचत ॥ आग्नेयेनतुमांधाता तदस्त्रंपर्यवारयत् ॥५०॥ गांधर्वेणदशग्रीवोवारुणेनचराजराट् ॥ गृहीत्वासतुब्रह्मास्त्रंसर्वभूतभयावहम् ॥५१॥ चेदयामासमांधातादिव्यंपाशुपतं महत् ॥ तदस्त्रंघोररूपंतुत्रैलोक्यभयवर्धनम् ॥ ५२ ॥ दृष्ट्वात्रस्तानिभूतानिस्थावराणिचराणिच ॥ वरदानात्तुरुद्रस्यतपसाराधितंमहत् ॥ ५३ ॥ ततःसंकंपतेसर्वंत्रैलोक्यंसचराचरम् ॥ देवाःसंकंपिताःसर्वेलयंनागाश्चसंगताः ॥ ५४ ॥

घायल होगये ॥४९॥ रावणने धनुषपर रौद्र अस्त्र चढायकर छोडा, राजा मान्धाताने आग्नेयास्त्रसे उसको निवारण किया ॥५०॥ रावणने गन्धर्वास्त्र लिया, तब राजाने उसको वरुणास्त्रसे निवारण किया। परन्तु रावणने सर्वप्राणियोंको भय उपजानेवाला ब्रह्मास्त्र लिया ॥५१॥ तब मान्धाताजीने दिव्य पाशुपत महास्त्रको प्रेरण किया। वह त्रिलोकीका भय बढानेवाला घोररूप अस्त्र ॥ ५२ ॥ देखकर सब चराचर प्राणी त्रासित हुए। यह महास्त्र तप करके आराधना कर रुद्रदेवको वरदानसे प्राप्त हुआ था ॥ ५३ ॥ उस समय [illegible] चर सहित समस्त त्रिभुवन कंपायमान होनेलगा, अधिक क्या कहैं, देवताभी कंपायमान [illegible] [illegible] नागगणभी लय हुए ॥ ५४ ॥

तिरस्कारके वचनोंसे रावणकोभी रोका तव मान्धाता और रावणने परस्पर ॥ । दोनों ब्राह्मणोंके चले जानेपर राक्षसोंका राजा रावण दशहजार योजनप्रमाण
इत्यार्षे श्रीमद्वा॰ वाल्मी॰आदि॰ उत्तरकांडे भाषाटीकायां प्रक्षिप्तः तृतीयः सर्गः ॥३॥ दोनों ब्राह्मणोंके चले जानेपर राक्षसोंका राजा रावण दशहजार योजनप्रमाण
वाले पवनके मार्गमें चलागया ॥ १ ॥ इस स्थानमें सर्व गुणोंसे विभूषित हंस सदा उडा करतेहैं इससेभी ऊँचे दूसरे पवनके मार्गमें रावण चढगया ॥ २ ॥ इस मार्गका
परिमाणभी दश हजार योजनका गिना जाता है इस स्थानमें तीन प्रकारके मेघ नित्य एकत्र रहा करतेहैं ॥ ३ ॥ यह अग्निज, पक्षज और ब्राह्मज * यहां

अथतौमुनिशार्दूलौध्यानयोगादपश्यताम् ॥ पुलस्त्योगालवश्चैववारयामासतंनृपम् ॥ ५५ ॥ सोपालंभैश्चविविधैर्वाक्यैराक्षससत्तमम् ॥ तौतु कृत्वातदाप्रीतिंनरराक्षसयोस्तदा ॥ संप्रस्थितौसुसंहृष्टौपथायेनैवचागतौ ॥ ५६ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तर कांडे प्रक्षिप्तः तृतीयः सर्गः ॥ ३ ॥ गताभ्यामथविप्राभ्यांरावणोराक्षसाधिपः ॥ दशयोजनसाहस्रंप्रथमंतुमरुत्पथम् ॥१॥ यत्रतिष्ठंतिनित्यंहि हंसाःसर्वगुणान्विताः ॥ अथऊर्ध्वंतुगत्वावैमरुत्पथमनुत्तमम् ॥ २ ॥ दशयोजनसाहस्रंतदेवपरिगण्यते ॥ तत्रसन्निहितामेघास्त्रिविधानित्यशः स्थिताः ॥ ३ ॥ आग्नेयाःपक्षिणोब्राह्मास्त्रिविधास्तत्रतेस्थिताः ॥ अथगत्वातृतीयंतुवायोःपंथानमुत्तमम् ॥ ४ ॥ नित्यंयत्रस्थिताःसिद्धाश्चार णाश्चमनस्विनः ॥ दशैवतुसहस्राणियोजनानांतथैवच ॥ ५ ॥ चतुर्थंवायुमार्गंतुशीघ्रंगत्वापरंतप ॥ वसंतियत्रनित्यस्थाभूताश्चसविनायकाः ॥ ॥ ६ ॥ अथगत्वासवैशीघ्रंपंचमंवायुगोचरम् ॥ दशैवचसहस्राणियोजनानांतथैवच ॥ ७ ॥ गंगायत्रसरिच्छ्रेष्ठानागावैकुमुदादयः ॥ कुंजरास्त त्रतिष्ठंतियेतुमुंचंतिसीकरम् ॥ ८ ॥ गंगातोयेषुक्रीडंतिपुन्यंवर्षंतिसर्वशः ॥ ततोरविकरभ्रष्टंवायुनापेशलीकृतम् ॥ ९ ॥

पर सदा विराजते हैं; इसके उपरान्त रावण दूसरेसे तीसरे पवन मार्गमें चढगया जो कि अति उत्तम था ॥ ४ ॥ जहांपर नित्य मनस्वी, सिद्ध, चारणगण वास करतेहैं इसका परिमाणभी दश सहस्र योजन है ॥ ५ ॥ शत्रुविनाशी राक्षसराज रावण चौथे वायुके मार्गमें शीघ्रही चढगया, भूत और विनायकगण इस मार्गमें नित्य बसतेहैं ॥ ६ ॥ इसके उपरान्त रावण शीघ्रही पवनके पांचवें मार्गमें चढगया; इसका परिमाणभी दश सहस्र योजन था ॥ ७ ॥ इस मार्गमें नदियोंमें श्रेष्ठ गंगाजी और कुमुदादि कुंजरगण विराजमानहैं ॥ ८ ॥ यह कुंजरगणही गंगाजीमें विहार करके पुण्यजल वर्षाया करतेहैं । वहां सूर्यकी किरणसे छूटा हुआ

* अग्निसे उत्पन्न हुई भापसे जो मेघ बनतेहैं यह अग्निज, इन्द्रजीने जब पर्वतोंके पंख काटे उन पंखोंसे जो मेघ उत्पन्न हुए वह पक्षज और जो ब्रह्माजीके श्वास लेनेसे जन्मे वह ब्राह्मज मेघहैं ।

और पवन करके निर्मल हुआ ॥ ९ ॥ जल पुण्यरूप हो गिरताहै; हे राम ! वहां हिमकीभी वर्षा होतीहै, हे महाद्युति ! फिर रावण छठे वायुके मार्गमें गया ॥ १० ॥
इस मार्गका परिमाण दश हजार योजनका है; इसमेंभी वह राक्षस गया जिस मार्गमें नित्य गरुडजी जातिवाले बन्धु बान्धवोंसे सत्कार किये जाकर टिके हैं ॥ ११ ॥
इन दश हजार योजनके पीछे इसकेभी ऊपर सातवें वायु मार्गमें जहां सप्तर्षिगण वास करते हैं ॥ १२ ॥ तिसके पीछे दश हजार योजन ऊंचेपर रावण अग्निमार्गको
प्राप्त हुआ कि जहांपर गंगाजी विराजमानहैं ॥ १३ ॥ उन महावेगवाली महाशब्द करनेवाली विख्यात आकाशगंगाको पवन सूर्यमार्गमें धारण किये हुएहैं ॥
॥ १४ ॥ आठवें मार्गके ऊपर चन्द्रमाजी विराजमानहैं, इसका अस्सी हजार योजनका परिमाणहै ॥ १५ ॥ भगवान् चन्द्रमाजी ग्रह व नक्षत्रोंके समूहोंसे युक्त

जलंपुण्यंप्रपततिहिमंवर्षतिराघव ॥ ततोजगामषष्ठंसवायुमार्गंमहाद्युते ॥ १० ॥ योजनानांसहस्राणिदशैवतुसराक्षसः ॥ यत्रास्तेगरुडोनित्यंज्ञा
तिबांधवसत्कृतः ॥ ११ ॥ दशैवतुसहस्राणियोजनानांतथोपरि ॥ सप्तमेवायुमार्गेचयत्रैतेऋषयःस्मृताः ॥ १२ ॥ अतऊर्ध्वंतुगत्वाबेसहस्राणि
दशैवतु ॥ अष्टमंवायुमार्गंतुयत्रगंगाप्रतिष्ठिता ॥ १३ ॥ आकाशगंगाविख्याताआदित्यपथसंस्थिता ॥ वायुनाधार्यमाणासामहावेगामहा
स्वना ॥ १४ ॥ अतऊर्ध्वंप्रवक्ष्यामिचंद्रमायत्रतिष्ठति ॥ अशीतिंतुसहस्राणियोजनानांप्रमाणतः ॥ १५ ॥ चंद्रमास्तिष्ठतेयत्रनक्षत्रग्रहसंयुतः ॥
शतंशतसहस्राणिरश्मयश्चंद्रमंडलात् ॥ १६ ॥ प्रकाशयंतिलोकांस्तुसर्वसत्त्वसुखावहाः ॥ ततोदृष्ट्वादशग्रीवंचंद्रमानिर्दहन्निव ॥ १७ ॥ सतु
शीताग्निनाशीघ्रंप्रादहद्रावणंतदा ॥ नासहंस्तस्यसचिवाःशीताग्निभयपीडिताः ॥ १८ ॥ रावणंजयशब्देनप्रहस्तोऽथैनमब्रवीत् ॥ राजञ्शीते
नवध्यामोनिवर्तामहतोवयम् ॥ १९ ॥ चंद्रर्श्मिप्रतापेनरक्षसांभयमाविशत् ॥ स्वभावएपराजेंद्रशीतांशोर्दहनात्मकः ॥ २० ॥ एतच्छ्रुत्वा
प्रहस्तस्यरावणःक्रोधमूर्च्छितः ॥ विस्फार्यधनुरुद्यम्यनाराचैस्तमपीडयत् ॥ २१ ॥

होकर यहांपर स्थितहैं, सैकडों हजारों किरण चन्द्रमाके मंडलसे निकलकर ॥ १६ ॥ सर्व लोकोंको सुखकी देनेवाली वह त्रिभुवनको प्रकाशमान करती हैं; फिर चन्द्रमा
जीने देखतेही मानो रावणको जलाया ॥ १७ ॥ बस वह शीतकी आगसे अति शीघ्र सर्व प्रकारसे जलतेहुए रावणके मंत्री उसको न सहकर शीतकी
अग्निके भयसे पीडितहो वहां न टिक सके ॥ १८ ॥ तब जयशब्द उच्चारण करके प्रहस्तने रावणसे कहा, हम शीतसे मरे जाते हैं इसलिये हम लोगोंको इस
स्थानसे लौटना पडेगा ॥ १९ ॥ हे राजन् ! चन्द्रमाकी किरणोंके प्रभावसे राक्षस भीत होगयेहैं, चन्द्रमाका स्वभावही ... बाणसमूहोंसे ... त किया ॥

रावणसे वो ; राक्ष . विश्रवाके पुत्र महावार दशग्राव ! ॥२२॥ तुम आतशाघ्र इस स्थानस चले जाओ, हे सौम्य ! चन्द्रमाको पीडित न करो, ... वह ...
मान् द्विजराज सदा सब लोकोंका हित चाहनेवालेहैं ॥२३॥ हम तुमको एक मंत्र देते हैं, प्राण त्याग होनेके समय जो पुरुष इसमंत्रको सदा स्मरण करेगा उस ...
नहीं होगी ॥ २४ ॥ यह वचन सुन रावणने हाथ जोडकर देव कमलयोनि ब्रह्माजीसे कहा हे लोकनाथ ! हे महाव्रत देव ! जो आप मुझपर प्रसन्नहैं ॥२५॥ ...
जो आप हमको मंत्र देना चाहते हैं वो वह मुझको देदीजिये । हे महाभाग ! धार्मिक ! जिस मंत्रको जपकर सर्व देवतोंसे निर्भय होजावें ॥ २६ ॥ हे ...

अथब्रह्मातदागच्छत्सोमलोकंत्वरान्वितः ॥ दशग्रीवमहाबाहोसाक्षाद्विश्रवसःसुत ॥ २२ ॥ गच्छशीघ्रमितःसौम्यमाचंद्रंपीडयस्ववै ॥ लो... हितकामोवैद्विजराजोमहाद्युतिः॥ २३ ॥ मंत्रंचसंप्रदास्यामिप्राणात्ययगतिर्यदा ॥ यस्त्वेतंसंस्मरेन्मंत्रंनासौमृत्युमवाप्नुयात् ॥ २४ ॥ एवमु... दशग्रीवःप्रांजलिर्देवमब्रवीत् ॥ यदितुष्टोसिमेदेवलोकनाथमहाव्रत ॥ २५ ॥ यदिमंत्रश्चमेदेयोदीयतांममधार्मिक ॥ यंजप्त्वाहंमहाभागसर्वे... निर्भयः॥२६॥ असुरेषुचसर्वेषुदानवेषुपतत्रिषु ॥ त्वत्प्रसादात्तुदेवेशस्यामजेयोनसंशयः॥२७॥ एवमुक्तोदशग्रीवंब्रह्मावचनमब्रवीत् ॥ प्राणान्ते... पुजत्तव्योननित्यंराक्षसाधिप ॥ २८ ॥ अक्षसूत्रंगृहीत्वातुजपेन्मंत्रमिमंशुभम् ॥ जप्त्वातुराक्षसपतेत्वमजेयोभविष्यसि ॥ २९ ॥ अजप्त्वार... पतेनतेसिद्धिर्भविष्यति ॥ शृणुमंत्रंप्रवक्ष्यामियेनराक्षसपुंगव ॥ ३० ॥ मंत्रस्यकीर्तनादेवप्राप्स्यसेसमरेजयम् ॥ नमस्तेदेवदेवेशसुरा... नमस्कृत ॥ ३१ ॥ भूतभव्यमहादेवहरिपिंगललोचन ॥ बालस्त्वंवृद्धरूपीचवैयाघ्रवसनच्छद ॥ ३२ ॥ अर्चनीयोसिदेवत्वंत्रैलोक्यप्रभुरीश्वरः ॥ हरोहरितनेमीचयुगांतदहनोबलः ॥ ३३ ॥

हम आपके प्रसादसे समस्त असुर, दानव और पतंगोंसेभी निःसंदेह अजेय होवेंगे॥२७॥यह वचन सुनकर ब्रह्माजीने रावणसे कहा—हे राक्षसनाथ! प्राणोंका ...
होनेहीके समय इस मंत्रका जपना उचितहै, नित्य जप करना ठीक नहीं ॥२८॥ हे राक्षसराज। अक्षकी माला ग्रहण करके इस शुभ मंत्रका जप करना प...
इसका जप करनेसे तुम निश्चय अजीत होओगे ॥ २९ ॥ हे राक्षसराज ! विना इस मंत्रका जप किये तुम्हें सिद्धि प्राप्त नहीं होगी इसलिये हे राक्षस श्रेष्ठ ! ह... ...
मंत्रको कहते हैं तुम सुनो ॥ ३० ॥ इस मंत्रका संकीर्तन करतेही तुम संग्राममें विजयको प्राप्त करोगे । हे देवदेवेश ! हे सुरासुरनमस्कृत ! तुमको नमस्कारहै ॥३१॥
हे भूत भविष्यत् ! हे महादेव ! हे हरिपिङ्गलनेत्र ! तुम बालकहो और वृद्धरूपीहो तुम व्याघ्रचर्मधारी हो ॥ ३२ ॥ हे देव ! तुम त्रिभुवनके ईश्वर और प्रभुहो इन...

तुम पूजा करनेके योग्यहो, तुम हर, हरितनेमी, युगान्त दहन और बलदेव हो ॥ ३३ ॥ तुम गणेश, तुम लोकशम्भु तुम लोकपाल तुम महाभुजहो, तुम महाभाग महाशूली, महादंष्ट्र और महेश्वरहो ॥ ३४ ॥ तुम काल, बलरूपी, नीलग्रीव और महोदरहो। तुम देवान्तक, तपस्यामें पारगामी, अव्यय, पशुपति हो सो आपको नमस्कारहै ॥ ३५ ॥ तुम शूलपाणि, वृषकेतु, नेता, गोप्ता, हर, हरि, जटी, मुंडी, शिखंडी, महायश और मुकुटी हो तुम्हें नमस्कारहै ॥ ३६ ॥ तुम भूतेश्वर, गणाध्यक्ष, सर्वात्मा, सर्वभावन, सर्वज्ञ, सर्वहारी, स्रष्टा, अव्यय, गुरुहो, तुमको नमस्कारहै ॥ ३७ ॥ तुम कमंडलुधर, देवता, पिनाकी, धूर्जटी, माननीय, ओंकार, वरिष्ठ, ज्येष्ठ, सामग, मृत्यु, मृत्युभूत, पारियात्र और सुव्रतहो, तुम्हें नमस्कारहै ॥ ३८ ॥ तुम ब्रह्मचारी, गुहावासी, वीणापणवतूणवान्, बाल सूर्यके

गणेशोलोकशंभुश्चलोकपालोमहाभुजः ॥ महाभागोमहाशालीमहादंष्ट्रीमहेश्वर ॥ ३४ ॥ कालश्चबलरूपीचनीलग्रीवोमहोदरः ॥ देवांतगस्तपोंतश्चपशूनांपतिरव्ययः ॥ ३५ ॥ शूलपाणिर्वृषःकेतुर्नेतागोप्ताहरोहरिः ॥ जटीमुंडीशिखंडीचलकुटीचमहायशाः ॥ ३६ ॥ भूतेश्वरोगणाध्यक्षःसर्वात्मासर्वभावनः ॥ सर्वगःसर्वहारीसस्त्रष्टाचगुरुरव्ययः ॥ ३७ ॥ कमंडलुधरोदेवःपिनाकीधूर्जटिस्तथा ॥ माननीयश्चओंकारोवरिष्ठोज्येष्ठसामगः ॥ मृत्युश्चमृत्युभूतश्चपारियात्रश्चसुव्रतः ॥ ३८ ॥ ब्रह्मचारीगुहावासीवीणापणवतूणवान् ॥ अमरोदर्शनीयश्चबालसूर्यनिभस्तथा ॥ ३९ ॥ श्मशानवासीभगवानुमापतिरनिंदितः ॥ भगस्याक्षिनिपातीचपूष्णोदशननाशनः ॥ ४० ॥ ज्वरहर्तापाशहस्तःप्रलयःकालएवच ॥ उल्कामुखोग्निकेतुश्चमुनिर्दीप्तोविशांपतिः ॥ ४१ ॥ उन्मादोवेपनकरश्चतुर्थोलोकसत्तमः ॥ वामनोवामदेवश्चप्राक्प्रदक्षिणवामनः ॥ ॥ ४२ ॥ भिक्षुश्चभिक्षुरूपीचत्रिजटीकुटिलःस्वयम् ॥ शक्रहस्तप्रतिष्टंभीवसूनांस्तंभनस्तथा ॥४३॥ ऋतुर्ऋतुकरःकालोमधुर्मधुकलोचनः ॥ वानस्पत्योवाजसनोनित्यमाश्रमपूजितः ॥ ४४ ॥

समान दर्शन करनेके योग्य और अमरहो सो तुमको नमस्कारहै ॥ ३९ ॥ तुम श्मशानवासी, भगवान्, अनिन्दित, उमापति, भगनयन, निपाती और पूषाके दांत तोडनेवालेहो, तुम्हें नमस्कारहै ॥ ४० ॥ तुम ज्वरहारी, पाश हाथमें लिये प्रलयरूप काल, उल्कामुख, अग्निकेतु, प्रदीप्त, विशाम्पति मुनिहो, तुमको नमस्कारहै ॥ ॥ ४१ ॥ तुम चतुर्थ लोकश्रेष्ठहो, वेपनकर, उन्मादी, वामन, वामदेव, प्राक्, प्रदक्षिण वामनहो सो तुमको नमस्कारहै ॥ ४२ ॥ तुम भिक्षु, भिक्षुरूपी, त्रिजटी,

राम, विराम और भूतभावनहो; इसमें आपको नमस्कारहै ॥ ४५ ॥ तुम त्रिनेत्र, बहुरूप ... ... सर्वजीवमयहो इससे तुमको नमस्कारहै॥४७॥
... ... तुमको नमस्कारहै ॥४६॥ नर्तक, लासक, पूर्णमासीके चन्द्रमाकी समान मुखवाले, ब्रह्मण्य, शरण्य और सर्वजीवमयहो इससे तुमको नमस्कारहै॥४७॥
... सर्वतूर्यनिनादी, सब बन्धनोंसे छुटानेवाले, मोहन, बन्धन और सदा निधनोत्तम हो सो तुमको नमस्कारहै ॥ ४८ ॥ तुम पुष्पदन्त, विभाग, मुख्य, सर्वहर,
हरिश्मश्रु, धनुर्धारी, भीम, भीमपराक्रमहो, तुमको नमस्कार है ॥ ४९ ॥ हमारे कहेहुए पुण्यमय यह १०८ नाम समस्त पापके हरनेवालेहैं, शरण चाहनेवालोंको

जगद्धाताचकर्ताचपुरुषःशाश्वतोध्रुवः ॥ धर्माध्यक्षोविरूपाक्षस्त्रिधर्माभूतभावनः ॥ ४५ ॥ त्रिनेत्रोबहुरूपश्चसूर्यायुतसमप्रभः ॥ देवदेवोति
देवश्चचंद्राङ्कितजटस्तथा ॥ ४६ ॥ नर्तकोलासकश्चैवपूर्णेंदुसदृशाननः ॥ ब्रह्मण्यश्चशरण्यश्चसर्वजीवमयस्तथा ॥ ४७ ॥ सर्वतूर्यनिनादीचस
र्वबंधविमोचकः ॥ मोहनोबंधनश्चैवसर्वदानिधनोत्तमः ॥ ४८ ॥ पुष्पदंतोविभागश्चमुख्यःसर्वहरस्तथा ॥ हरिश्मश्रुर्धनुर्धारीभीमोभीमपराक्रमः
॥ ४९ ॥ मयाप्रोक्तमिदंपुण्यंनामाष्टशतमुत्तमम् ॥ सर्वपापहरंपुण्यंशरण्यंशरणार्थिनाम् ॥५०॥ जप्तमेतद्दशग्रीवकुर्याच्छत्रुविनाशनम् ॥५१॥
इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये उत्तरकांडे प्रक्षितः चतुर्थःसर्गः॥ ४ ॥ दत्त्वातुरावणस्यैवंवरंसकमलोद्भवः ॥ पुनरेवागमत्क्षिप्रं
ब्रह्मलोकंपितामहः ॥ १ ॥ रावणोपिवरंलब्ध्वापुनरेवागमत्तथा ॥ केनचित्त्वथकालेनरावणोलोकरावणः ॥ २ ॥ पश्चिमार्णवमागच्छत्सचिवैः
सहराक्षसः॥ द्वीपस्थोदृश्यतेनत्रपुरुषःपावकप्रभः ॥३॥ महाजांबूनदप्रख्यएकएवव्यवस्थितः ॥ दृश्यतेभीषणाकारोयुगांतानलसन्निभः ॥ ४ ॥
देवानामिवदेवेशोग्रहाणामिवभास्करः ॥ शरभाणांयथासिंहोहस्तिष्वैरावतोयथा ॥ ५ ॥

प्राप्त देनेवाले और पुण्यजनक हैं ॥ ५० ॥ हे रावण ! यह नाम जपनेसे सब शत्रुओंका नाश होताहै ॥ ५१ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे
वाल्मीकीय आदिकाव्ये उत्तरकांडे भाषाटीकायां चतुर्थः सर्गः ॥ ४ ॥ लोकपितामह कमलसे उत्पन्न ब्रह्माजी रावणको इस प्रकारका वरदान देकर अतिशीघ्र
ब्रह्मलोकको चलेगये ॥ १ ॥ रावणभी वर पाय वहांसे लौटा; कुछ कालके पीछे लोकोंका रुवानेवाला रावण ॥ २ ॥ अपने मंत्रिगणोंके साथ पश्चिमके
समुद्रपर आया। इस समय दशानन रावण वहां एक द्वीपमें अग्निके समान पुरुषको देखता हुआ ॥ ३ ॥ वह विमल सुवर्णकी कान्तिकी समान कान्तिवाला पुरुष
वहां इकला विराजमानथा। उस पुरुषका आकार देखनेमें कालकी अग्निके समान भयंकर था ॥४॥ देवतोंमें जिसप्रकार महादेवजीहैं,ग्रहोंमें जिसप्रकार भास्करहैं, शरभ

पर्वतानांयथामेरुःपारिजातश्चशाखिनाम् ॥ तथातंपुरुषंदृष्ट्वास्थितंमध्येमहाबलम् ॥ ६ ॥ अब्रवीच्चदशग्रीवोयुद्धंमेदीयतामिति ॥ अभवत्तस्य
सार्द्दृष्टिर्ग्रहमालाइवाकुला ॥ ७ ॥ दंतान्संदशतःशब्दोयंत्रस्येवाभिभिद्यतः ॥ जगर्जोच्चैःसबलवान्सहामात्योदशाननः ॥ ८ ॥ सगर्जन्विविधे
र्नादैर्लंबहस्तंभयानकम् ॥ दंष्ट्रालंविकटंचवकंबुग्रीवंमहोरसम् ॥ ९ ॥ मंडूककुक्षिंसिंहास्यंकैलासशिखरोपमम् ॥ पद्मपादतलंभीमंरक्तताल्वक
रांबुजम् ॥ १० ॥ महानादंमहाकायंमनोनिलसमंजवे ॥ भीममाबद्धतूणीरंसघंटंबद्धचामरम् ॥ ११ ॥ ज्वालामालापरिक्षिप्तंकिंकिणीजालनि
स्वनम् ॥ मालयास्वर्णपद्मानांकंठदेशेऽवलंबया ॥ १२ ॥ ऋग्वेदमिवशोभंतंपद्ममालाविभूषितम् ॥ सांजनाचलसंकाशंकांचनाचलसन्निभम्
॥ १३ ॥ प्राहरद्राक्षसपतिःशूलशक्त्यृष्टिपट्टिशैः ॥ द्वीपिनासिंहइवऋषभेणेवकुंजरः ॥ १४ ॥ सुमेरुरिवनागेंद्रैर्नदीवेगैरिवार्णवः ॥ अकं
पमानःपुरुषोराक्षसंवाक्यमब्रवीत् ॥ १५ ॥ युद्धश्रद्धांहितेरक्षोनाशयिष्यामिदुर्मतेः ॥ रावणस्यचयोवेगःसर्वलोकभयंकरः ॥ १६ ॥ तथावेग
सहस्राणिसंश्रितानितमेवहि ॥ धर्मस्तस्यतपश्चैवजगतःसिद्धिहेतुकौ ॥ १७ ॥

समूहमें जिस प्रकार सिंहहै, हाथियोंमें जिस प्रकार ऐरावतहै ॥ ५ ॥ समस्त पर्वतोंमें जिसप्रकार सुमेरुहै और वनमें जिसप्रकार कल्पवृक्ष मुख्यहै, समस्त पुरुषोंमें वैसेही इस महाबलवान् पुरुषको देखकर ॥ ६ ॥ रावणने उससे कहा कि, मुझसे युद्धकर, तब उसके सब नेत्र ग्रहमालाकी समान चलायमान होगये ॥ ७ ॥ और दांतोंके किट किटानेका शब्द वज्रके शब्दकी समान हुआ, उस समय महाबलवान् रावण अपने सब मंत्रियोंके सहित गर्जने लगा ॥ ८ ॥ वह अनेक प्रकार शब्दकर गर्जने लगा, गर्जते २ यह लम्बहस्त, भयंकराकार, दाढयुक्त, विकटाकार, कम्बुग्रीव, चौडी छातीवाला ॥ ९ ॥ मेंडककी समान उदरवाला, सिंहवदन, कैलास शिखरकी समान चरणवाला, लाल तालूवाला, लाल हाथवाला; भयंकर ॥ १० ॥ महाकायवाला, महानाद करनेवाला, मन और वायुकी समान वेगवाला, भीम, बद्ध तूणीर, घण्टा चामर समन्वित ॥ ११ ॥ ज्वालाकी मालासे शोभायमान, किंकिणीजालकी समान मधुर शब्द करनेवाला, जिसके गलेमें सुवर्णके कमलफूलोंकी माला पडीथी ॥ १२ ॥ ऋग्वेदकी समान शोभायमान, कमलकी समान द्युतिसम्पन्न ॥ १३ ॥ महापुरुषके ऊपर राक्षसपति शूल, शक्ति, ऋष्टि, और पटेकी वर्षा करने लगा । चीतेके आक्रमणसे सिंह, बैलके आक्रमणसे हाथी ॥ १४ ॥ हस्तिराजके आक्रमणसे सुमेरु, और नदीके वेगसे महासागर जिस प्रकार चलायमान नहीं होता वैसेही उस महापुरुषने प्रहारसे कंपायमान न होकर रावणसे कहा ॥ १५ ॥ रे दुर्मति निशाचर ! हम तेरी युद्धलालसा दूर करेंगे । [illegible]

॥ १९ ॥ पितृगण उनकी पीठमें और ब्रह्माजी उनके हृदयमें विराजमान होरहेथे ॥ २० ॥ विमल भूमिदान, गोदान और सुवर्णदान इत्यादि सब पुण्यकर्म उनकी कोखके रोम थे ॥ २१ ॥ और हिमालय, हेमकूट, मन्दर और मेरुपर्वत यह सब उनके अस्थिस्वरूपथे ॥ २२ ॥ वज्र उनकी हथेली और स्वर्ग उनका शरीरथा सन्ध्या और जल वर्षानेवाले मेघसमूह उनकी ग्रीवामेंथे ॥ २३ ॥ धाता, विधाता और विद्याधर इत्यादि उनकी दोनों बाँहोंमें विराजमानथे, अनन्त

ऊरूह्याश्रित्यतस्थातेमन्मथःशिश्नमाश्रितः ॥ विश्वेदेवाःकटीभागेमरुतोबस्तिपार्श्वयोः ॥ १८ ॥ मध्येष्टौवसवस्तस्यसमुद्राःकुक्षितःस्थिताः ॥ पार्श्वादिषुदिशःसर्वाःसर्वसंधिषुमारुतः ॥१९ पृष्ठंचभगवान्रुद्रोहृदयंचपितामहः ॥ पितरश्चाश्रिताःपृष्ठंहृदयंचपितामहाः ॥२०॥ गोदानानिपवित्राणिभूमिदानानियानिच ॥ सुवर्णवरदानानिकक्षलोमानुगानिच ॥२१॥ हिमवान्हेमकूटश्चमंदरोमेरुरेवच ॥ नरंतुतंसमाश्रित्यअस्थिभूताव्यवस्थिताः ॥२२॥ पाणिर्वज्रोभवत्तस्यशरीरेद्यौरवस्थिता ॥ कुकाटिकायांसंध्याचजलवाहाश्चयेघनाः ॥२३॥ बाहूधाताविधाताचतथाविद्याधरादयः ॥ शेषश्चवासुकिश्चैवविशालाक्षइरावतः ॥२४॥ कंबलाश्वतरौचोभौकर्कोटकधनंजयौ ॥ सचघोरविषोनागस्तक्षकःसोपतक्षकः ॥२५॥ करजानाश्रिताश्चैवविषवीर्यंमुमुक्षवः ॥ अग्निरास्यमभूत्तस्यस्कंधौरुद्रैरधिष्ठितौ ॥२६॥ पक्षमासर्तवश्चैवदंष्ट्रयोरुभयोःस्थिताः ॥ नासेकुहूरमावास्याछिद्रेषुवायवःस्थिताः ॥२७॥ ग्रीवातस्याभवद्देवीवाणीचापिसरस्वती ॥ नासत्यौश्रवणेचोभौनेत्रेचशशिभास्करौ ॥२८॥ वेदांगानिचयज्ञाश्चतारारूपाणियानिच ॥ सुवृत्तानिचवाक्यानितेजांसिचतपांसिच ॥२९॥ एतानिनररूपस्यतस्यदेहाश्रितानिवै ॥ तेनवज्रप्रहारेणलब्धमात्रेणलीलया ॥३०॥ पाणिनापीडितंरक्षोनिपपातमहीतले ॥ पतितंराक्षसंज्ञात्वाविद्राव्यसनिशाचरान् ॥ ३१ ॥

वासुकि, विशालाक्ष, ऐरावत ॥२४॥ कम्बल, अश्वतर, कर्कोट, धनञ्जय, घोरविष, तक्षक और उपतक्षक ॥२५॥ यह सब विषवीर्य उगलनेके लिये उनके हाथोंमें, नखोंमें बसतेहैं; अग्नि उनके मुखमें, रुद्र उनके कन्धोंमें ॥ २६ ॥ और पक्ष, मास, संवत्सर, व षड्ऋतु उनकी दाँतोंकी पंक्तिमें, पूर्णिमा और अमावस उनके नाकके छेदोंमें और समस्तवायु उनके शरीरके छेदोंमें वर्तमानहैं ॥ २७ ॥ देवी वाणी; सरस्वती उनकी गर्दन, दोनों अश्विनीकुमार उनके कान, सूर्य चन्द्रमा उनके दोनों नयन ॥ २८ ॥ हे राम ! समस्त वेदाङ्ग यज्ञ, तारागण, सुवृत्तवचन, तेज और तप, यह समस्तही उन नर रूपीकी देहका आश्रय किये हुएहैं ॥२९॥ इसके उपरान्त उस पुरुषने लीलापूर्वक रावणके एक वज्रकी समान तमाचा मारा ॥ ३० ॥ उस तमाचेके लगनेसे रावण पृथ्वीपर

गिरपडा राक्षसको गिरा हुआ देख उसके मंत्री सब राक्षस भाग गये ॥ ३१ ॥ ऋग्वेदकी समान, पर्वतकी समान कमल फूलोंकी मालासे भूषित यह महापुरुष इन राक्षसोंको भगाय स्वयं पातालमें प्रवेश कर गये ॥३२॥ इसके उपरान्त रावणने अतिशीघ्र उठकर मंत्रियोंको बुलायकर कहा हे प्रहस्त ! हे शुक सारण इत्यादि मंत्रीगण ! वह पुरुष सहसा कहां चले गये सो बताओ ? ॥ ३३ ॥ रावणके यह वचन सुनकर राक्षसोंने कहा देव दानवोंका दर्प हरनेवाला वह इसी स्थानमें प्रवेश करगया ॥ ३४ ॥ गरुड जिसप्रकार सांपको पकडकर वेगसे गमन करता है वैसेही दुर्मति रावण पराक्रम प्रकाश करके अतिवेगसे बिलके द्वारपर पहुँचा और निर्भय हो उसमें घुस गया ॥३५॥ जब रावण निर्भय होकर उस बिलके द्वारमें घुसा तब प्रवेश करते हुए वह नीले अंजनके ढेरकी समान देखा गया॥ ॥ ३६ ॥ बाजू पहरे लाल मालासे विभूषित लालही अनुलेपनसे रँगेहुए विविध सुवर्ण और रत्नभूषित अलंकृत ॥३७॥ बहुत पुरुषोंको रावणने वहांपर देखा कि

ऋगतःन ऋग्वेदप्रतिमःसोथपद्ममालाविभूषितः ॥ प्रविवेशचपातालंनिजंपर्वतसन्निभः ॥ ३२ ॥ उत्थायचदशग्रीवआहूयसचिवान्स्वयम् ॥ इसाऋतप्रहस्तशुकसारणाः ॥ ३३ ॥ एवमुक्तारावणेनराक्षसास्तेतदाब्रुवन् ॥ प्रविष्टःसनरोत्रैवदेवदानवदर्पहा ॥ ३४ ॥ अथसंगृह्यवेगेनगरुत्मा निवपन्नगम् ॥ सतुशीघ्रंबिलद्वारंसंप्रविश्यचदुर्मतिः ॥३५॥ प्रविवेशचतद्द्वारंरावणोनिर्भयस्तदा ॥ सम्प्रविश्यचपश्यद्वैनीलांजनचयोपमान् ॥ ॥ ३६ ॥ केयूरधारिणःशूरान्रक्तमाल्यानुलेपनान् ॥ वरहाटकरत्नाद्यैर्विविधैश्वविभूषितान् ॥३७॥ ददृशंतेतत्रनृत्यंत्यस्तिस्रःकोट्योमहात्मनाम् ॥ नृत्योत्सवावीतभयाविमलाःपावकप्रभाः ॥ ३८ ॥ नृत्यंत्यःपश्यतेतांस्तुरावणोभीमविक्रमः ॥ द्वारस्थोरावणस्तत्रतासुकोटिपुनिर्भयः ॥३९॥ यथादृष्टःसतुनरस्तुल्यांस्तानपिसर्वशः ॥ एकवर्णानेकवेषानेकरूपान्महौजसः ॥ ४० ॥ चतुर्भुजान्महोत्साहांस्तत्रापश्यत्सरानसः ॥ तांस्तु दृष्ट्वादशग्रीवऊर्ध्वरोमाबभूवह ॥ ४१ ॥ स्वयंभुवादत्तवरस्ततःशीघ्रंविनिर्ययौ ॥ अथापश्यत्परंतत्रपुरुषंशयनेस्थितम् ॥ ४२ ॥ पांडुरेणमहार्हे णशयनासनवेश्मना ॥ शेतेसपुरुषस्तत्रपावकेनावगुंठितः ॥ ४३ ॥

इसप्रकार तीन करोड भयरहित विमल-पावककी समान महात्मा पुरुष बराबर उत्सवमें मन लगाये नाच रहे हैं ॥ ३८ ॥ भयंकर विक्रमकारी रावणने उनको देखकर कुछ भय नहीं किया न डरा परन्तु द्वारपर खडा होकर उनका नाच देखने लगा ॥ ३९ ॥ रावणने इससे पहले जिस पुरुषको देखाथा यह सब पुरुषभी सम्पूर्णतः वैसेही थे एक रंगवाले एक वेषवाले एक रूपवाले महासुन्दर अति तेजस्वी ॥ ४० ॥ चार भुजावाले महा उत्साहसे युक्त ऐसे पुरुषोंको राक्षसने देखा उन पुरुषोंको देखकर रावणके रोम खडे होगये ॥४१॥ ब्रह्माजीके वरदानके प्रभावसे रावण शीघ्र इस स्थानसे निकल आया । इसके उपरान्त रावणने देखा कि, एक ॥४२॥ उसका गृह, सेज और आसन श्वेतवर्ण थे और महा मोलके थे, यह पुरुष अग्निसे गुप्त ढककर सोरहाथा ॥४३॥ और,

राक्षसपति रावण उस श्रेष्ठ हँसनेवालीको देखकर सिंहासनपर बैठी हुई साध्वीजीको ग्रहण करनेका अभिलाप करता हुआ ॥ ४६ ॥ मंत्रियामेंसे कोई भी रावणके साथ न था तथापि दुर्मति रावण उस समय कामदेवके वशहो हाथसे उनके ग्रहण करनेकी इच्छा करता हुआ ॥४७॥ कोई पुरुप जैसे कालका भेजा हुआ होकर सोतेहुए भयंकर विषधर सर्पको जगावै, इसके उपरान्त अग्निसे ढकेहुए उस सोते हुए महावीर पुरुपने ॥ ४८ ॥ रावणके मनकी अभिलाषा जान

दिव्यस्रगनुलेपाचदिव्याभरणभूपिता ॥ दिव्यांबरधरासाध्वीत्रैलोक्यस्यैकभूपणम् ॥ ४४ ॥ वालव्यजनहस्ताचदेवीतत्रव्यवस्थिता ॥ लक्ष्मी देवीसपद्मविभ्राजतेलोकसुन्दरी ॥ ४५ ॥ प्रविष्टःसतुलंकेशोदृष्ट्वातांचारुहासिनीम् ॥ जिघृक्षुःसहसासाध्वींसिंहासनसमास्थिताम् ॥ ४६ ॥ विनापिसचिवैस्तत्ररावणोदुर्मतिस्तदा ॥ हस्तेग्रहीतुमन्विच्छन्मन्मथेनवशीकृतः ॥ ४७ ॥ सुप्तमाशीविषंयद्वद्रावणःकालनोदितः ॥ अथसुप्तोमहाबाहुःपावकेनावगुंठितः ॥ ग्रहीतुकामंतंज्ञात्वाव्यपविद्धपटंतदा ॥ ४८ जहासोच्चैर्भृशंदेवस्तंदृष्ट्वाराक्षसाधिपम् ॥ ४९ ॥ तेजसासहसा दीप्तोरावणोलोकरावणः ॥ कृत्तमूलोयथाशाखीनिपपातमहीतले ॥ ५० ॥ पतितंराक्षसंज्ञात्वावचनंचेदमब्रवीत् ॥ उत्तिष्ठराक्षसश्रेष्ठ मृत्युस्तेनाद्यविद्यते ॥ ५१ ॥ प्रजापतिवरोरक्ष्यस्तेनजीवसिराक्षस ॥ गच्छरावणविस्रब्धोनाधुनामरणंतव ॥ ५२ ॥ लब्धसंज्ञोमुहूर्तेनरावणोभयमाविशत् ॥ एवमुक्तस्तदोत्थायरावणोदेवकंटकः ॥ ५३ ॥ लोमहर्पणमापन्नोह्यब्रवीत्तंमहाद्युतिम् ॥ कोभवान्वीर्यसंपन्नो युगांतानलसन्निभः ॥ ५४ ॥

गले हुए वस्त्र धारण किये राक्षसोंके पति रावणकी ओर देख हँस पडे ॥ ४९ ॥ वह देख सब लोकोंका रुवानेवाला रावण तेजसे प्रदीप्त हो जड कटेहुए वृक्षकी समान एकाएकी पृथ्वीपर गिरपडा ॥ ५० ॥ रावणको गिराहुआ जानकर परमपुरुपने कहा हे राक्षसश्रेष्ठ ! उठो अभी तुम्हारी मृत्यु नहीं होगी ॥ ५१ ॥ हे राक्षस ! ब्रह्माजीका दियाहुआ वरदानही तुम्हारा रक्षक है इसी कारण तुम जीवित रहे हो । हे रावण ! इस समय तुम्हारी मृत्यु नहीं होगी सो तुम विश्वास करके चलेजाओ ॥५२॥ रावण एक क्षणभरमें चेतना प्राप्त करके भयभीत हुआ, इतना कहे जानेपर देवकण्टक रावण उठा ॥ ५३ ॥ रावणके शरीरमें रोमाञ्च होआया और वह उस महाद्युतिमान् पुरुपसे बोला, हे वीर्यवान् ! आप कौन हैं ? हम देखते हैं कि, आप युगान्तकालकी अग्निकी समान हैं॥५४॥

हे देव ! कहिये आप कौन हैं ? आप कहांसे आयकर इस स्थानपर विराजमान हो, दुरात्मा रावण करके इसप्रकार कहे जाकर ॥ ५५ ॥ वह देवता हँसकर मेघकी समान गंभीर स्वरसे उत्तर देते हुए कि, हे दशग्रीव ! तुम हमैं जानकर क्या करोगे ॥ ५६ ॥ यह वचन सुन फिर रावण हाथ जोडकर बोला कि ब्रह्माजीसे वरदान पानेके कारण हम नहीं मरे ॥ ५७ ॥ औरकी तो बातही क्याहै देवतोंके बीचमेंभी ऐसा कोई नहीं उत्पन्न हुआ और होगाभी नहीं कि, जो अपने वीर्यके बलसे ब्रह्माजीके वरको उलांघसके ॥ ५८ ॥ ब्रह्माजीका वचन झूठा नहीं होसकता इसविषयमें हमारा आदरभी नहींहै और यत्नभी नाचारण है जो हमारे वरको झूंठा करसके ऐसा कोई त्रिलोकीमें नहीं है ॥५९॥ हे सुरश्रेष्ठ ! हम अमर हैं इससे हमैं आपका कुछ भय नहीं है जो कुछभी हो प्रभो जो हमारी मृत्युही हो जाय तो आपके सिवाय किसी दूसरेके हाथसे न हो ॥ ६० ॥ आपके हाथसे मरनाही मेरेलिये यशका देनेवाला और बडाईका करनेवाला है फिर भयंकर

ब्रूहित्वंकोभवान्देवकुतोभूत्वाऽव्यवस्थितः ॥ एवमुक्तस्ततोदेवोरावणेनदुरात्मना॥५५॥ प्रत्युवाचहसन्देवोमेघगंभीरयागिरा ॥ किंतेमयादशग्रीवज्ञ ध्योसिनचिरान्मम॥५६॥एवमुक्तोदशग्रीवःप्राञ्जलिर्वाक्यमब्रवीत्॥प्रजापतेस्तुवचनान्नाहंमृत्युपथंगतः ॥ ५७ ॥ नसजातोजनिष्योवामममतुल्यः सुरेष्वपि॥प्रजापतिवरंयोहिलंघयेद्वीर्यमाश्रितः॥५८॥नतत्रपरिहारोस्तिप्रयत्नश्चापिदुर्बलः॥ त्रैलोक्येतंनपश्यामियोमेकुर्याद्वरंवृथा ॥५९॥ अमरो ऽहंसुरश्रेष्ठतेनमांनाविशङ्कयम् ॥ अथापिचभवेन्मृत्युस्त्वद्धस्तान्नान्यतःप्रभो॥६०॥यशस्यंश्लाघनीयंचत्वद्धस्तान्मरणंमम॥अथास्यगात्रेसंपश्य द्रावणोभीमविक्रमः॥६१॥तस्यदेवस्यसकलंत्रैलोक्यंसचराचरम्॥आदित्यामरुतःसाध्यावसवोथाश्विनावपि॥६२॥ रुद्राश्चपितरश्चैवयमोवैश्रवण स्तथा॥समुद्रागिरयोनद्योवेदाविद्यास्त्रयोग्नयः ॥ ६३ ॥ ग्रहास्तारागणाव्योमसिद्धागंधर्वचारणाः ॥ महर्षयोवेदविदोगरुडोथभुजंगमाः ॥ ६४ ॥ येचान्येदेवतासंघाःसंस्थितादैत्यराक्षसाः ॥ गात्रेषुशयनस्थस्यदृश्यंतेसूक्ष्ममूर्तयः ॥६५॥ आह रामोथधर्मात्माह्यगस्त्यंमुनिसत्तमम् ॥ द्वीपस्थः पुरुषःकोसौतिस्त्रःकोव्यस्तुकाश्चताः ॥ ६६ ॥ शयानःपुरुषःकोसौदैत्यदानवदर्पहा ॥ रामस्यवचनंश्रुत्वाह्यगस्त्योवाक्यमब्रवीत् ॥ ६७ ॥

विक्रमकारी रावण उन महापुरुषके शरीरको देखता ॥ ६१ ॥ इन देवताके शरीरमें रावणने सब त्रिलोकीको देखा—आदित्यगण, मरुद्गण, साध्यगण, दोनों अश्विनीकुमार ॥६२॥ रुद्रगण, पितृगण, यम, कुबेर, सब समुद्र, सब पर्वत, सब नदी, समस्त वेद, समस्त विद्या, तीनों अग्नि॥६३॥ ग्रहगण, तारागण, आकाश, सिद्धगण, गन्धर्वगण, वेद जाननेवाले महर्षि, गरुड, सर्पगण ॥ ६४ ॥ व और दूसरे देवता यक्ष दैत्य और राक्षसगण समस्तही उस शयन करते हुए परमपुरुषके शरीरमें सूक्ष्ममूर्तिसे विराजमानथे ॥ ६५ ॥ यह कथा सुनकर धर्मात्मा श्रीरामचन्द्रजीने अगस्त्यजीसे पूंछा कि, आपने जो द्वीपमें विराजमान हुए उन [illegible]

परन्तु जो समस्त देवता वहांपर नृत्य करतेहैं वह सबही उन बुद्धिमान् नरदेव कपिलजीके समान तेज और प्रभावसे युक्त ॥ ६९ ॥ हे राम ! उन पापनिश्चय रावणको क्रोधकी दृष्टिसे नहीं निहारा इसलिये उस कालमें रावण भस्म नहीं हुआ ॥ ७० ॥ पर्वतकी समान रावण खिन्नशरीरहो पृथ्वीपर गिर पडाथा, पिशुन पुरुष जैसे शीघ्रही किसीके भेदको जान जाताहै, परम पुरुषनेभी वैसेही रावणको केवल वचनबाणोंसे भेद डाला ॥ ७१ ॥ जोभी हो तेजस्वी निशाचर रावण बहुत देरके पीछे चेतना पाय अपने मंत्रियोंके साथ जहां विराजमान था उसी स्थानमें आया ॥ ७२ ॥ (यहां क्षेपकके सर्ग समाप्त

श्रूयतामभिधास्यामिदेवदेवसनातन ॥ भगवान्कपिलोनामद्वीपस्थोनरउच्यते ॥ ६८ ॥ येतुनृत्यंतिवैतत्रसुरास्तेतस्यधीमतः ॥ तुल्यतेजःप्रभावास्तेकपिलस्यनरस्यवै ॥ ६९ ॥ नासौक्रुद्धेनदृष्टस्तुराक्षसःपापनिश्चयः ॥ नबभूवतदातेनभस्मसाद्रामरावणः ॥ ७० ॥ खिन्नगात्रो॰ ग्रख्योरावणःपतितोभुवि ॥ वाक्छरैस्तंविभेदाशुरहस्यंपिशुनोयथा ॥ ७१ ॥ अथदीर्घेणकालेनलब्धसंज्ञःसराक्षसः ॥ आजगाममहातेजा॰ तेसचिवाःस्थिताः ॥७२॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे प्रक्षितः पंचमः सर्गः ॥ ५ ॥ निवर्तमानःसंहृष्टोराव॰ सदुरात्मवान् ॥ जह्रेपथिनरेंद्रर्षिदेवदानवकन्यकाः ॥ १ ॥ दर्शनीयांहियांरक्षःकन्यांस्त्रींवाथपश्यति ॥ हत्वाबंधुजनंतस्याविमानेतांरुरोधसः ॥ २ ॥ एवंपन्नगकन्याश्चराक्षसासुरमानुषीः ॥ यक्षदानवकन्याश्चविमानेसोध्यरोपयत् ॥ ३ ॥ ताहिसर्वाःसमंदुःखान्मुमुचुर्बाष्पजंजलम् ॥ तुल्यमग्न्यर्चिषांतत्रशोकाग्निभयसंभवम् ॥ ४ ॥ ताभिःसर्वानवद्याभिर्नदीभिरिवसागरः ॥ आपूरितंविमानंतद्भयशोकाशिवाश्रुभिः ॥ ५ ॥

इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषाटीकायां पंचमः सर्गः ॥ ५ ॥ इसके उपरान्त जब दुरात्मा रावण लंकाको लौटा तब उस काल हर्षितचित्तसे राजर्षि और देव दानवोंकी कन्याओंको हरण करने लगा ॥ १ ॥ विवाहिता या अविवाहिता जिस किसीकी कन्या व रावणने रूपवती देखा उसीके बन्धु बान्धवोंका नाशकर रावणने उसको पुष्पक विमानमें रोक रक्खा ॥ २ ॥ इसप्रकारसे राक्षसकन्या, असुरकन्या, कन्या, पन्नगकन्या, यक्षकन्या और दानवोंकी पुत्रियोंको रावण विमानपर चढाने लगा ॥ ३ ॥ वह सब कन्यागण शोकसे आर्त होकर महा शो और भयसे उत्पन्न हुए अग्निकी लपट समान गरम आंसुओंका जल त्यागन करने लगीं ॥ ४ ॥ जिस प्रकार नदियोंसे समुद्र भर जाताहै वैसेही भय और शोकसे

अमंगलसूचक आंसू छोडती हुई सर्वाङ्गसुन्दरी कन्यागणोंसे वह विमान पूर्ण होगया ॥ ५ ॥ विमानमें सैकडों नागकन्या, गन्धर्वकन्या महर्षिकन्या, दैत्यकन्या और दानवोंकी पुत्रियें रोने लगीं ॥ ६ ॥ यह सब वडे २ केशवाली, सुन्दर देहवाली, पूर्णमासीके चन्द्रमाके समान मुखवाली, कठोर स्तनवाली, भ्रमरकी समान क्षीण कमरवाली ॥ ७ ॥ दोनों नितम्ब रथके दो गुम्मजकी समान मनोहर देवकन्याओंकी समान तपाये हुए सुवर्णकी समान रंग वाली ॥ ८ ॥ शोक दुःख और भयसे त्रासित, विह्वल, श्रेष्ठ कमरवाली कामिनियोंकी श्वास वायुसे पुष्पकविमान मानो सब जगह प्रदीप्त होगया ॥ ९ ॥ वह पुष्पकविमान अग्निसे विराजमान अग्निहोत्रकी समान प्रकाशित होने लगा । रावणको प्राप्त होकर वह शोकाकुल स्त्रियें ॥ १० ॥ दीनमुख होगईं, उन श्यामा

नागगंधर्वकन्याश्चमहर्षितनयाश्चयाः ॥ दैत्यदानवकन्याश्चविमानेशतशोऽरुदन् ॥ ६ ॥ दीर्घकेश्यःसुचार्वंग्यःपूर्णचंद्रनिभाननाः ॥ पीनस्तनतटामध्येवज्रवेदिसमप्रभाः ॥ ७ ॥ रथकूबरसंकाशैःश्रोणीदेशैर्मनोहराः ॥ स्त्रियःसुरांगनाप्रख्यानिष्टप्तकनकप्रभाः ॥ ८ ॥ शोकदुःखभयत्रस्ताविह्वलाश्चसुमध्यमाः ॥ तासांनिःश्वासवातेनसर्वतःसंप्रदीपितम् ॥ ९ ॥ अग्निहोत्रमिवाभातिसन्निरुद्धाग्निपुष्पकम् ॥ दशग्रीववशंप्राप्तास्तास्तुशोकाकुलाःस्त्रियः ॥ १० ॥ दीनवक्त्रेक्षणाःश्यामामृग्यःसिंहवशाइव ॥ काचिच्चिंतयतीतत्रकिंनुमांभक्षयिष्यति ॥ ११ ॥ काचिद्दध्यौसुदुःखार्ताअपिमांमारयेदयम् ॥ इतिमातॄःपितॄन्स्मृत्वाभर्तॄन्भ्रातॄंस्तथैवच ॥ १२ ॥ दुःखशोकसमाविष्टाविलेपुःसहिताःस्त्रियः ॥ कथंनुखलुमेपुत्रोभविष्यतिमयाविना ॥१३॥ कथंमाताकथंभ्रातानिमग्नाःशोकसागरे ॥ हाकथंनुकरिष्यामिभर्तुस्तस्मादहंविना ॥१४॥ मृत्योप्रसादयामित्वांनयमांदुःखभागिनीम् ॥ किंनुतद्दुष्कृतंकर्मपुरादेहांतरेकृतम् ॥ १५ ॥ एवंस्मदुःखिताःसर्वाःपतिताःशोकसागरे ॥ नखल्विदानींपश्यामोदुःखस्यास्यांतमात्मनः ॥ १६ ॥

स्त्रियोंके नेत्रभी सिंहसे सताई मृगीके समान होगये । उनमेंसे कोई २ तो चिन्ता करने लगीं कि, राक्षस हमको भक्षण कर लेगा ॥ ११ ॥ और कोई २ दुःखसे आर्त होकर विचारने लगीं कि, रावण हमारा नाश कर डालेगा; इस प्रकार माता, पिता, भ्राता और स्वामीका स्मरण करके ॥ १२ ॥ समस्त कामिनियें दुःख और शोकसे सताई जाकर विलाप करने लगीं. कोई २ कहने लगीं कि, हाय ! हमारे विना हमारे पुत्रकी क्या दशा होगी ? ॥ १३ ॥ कोई २ कहने लगीं हाय ! हमारे भइया और अम्मा न जाने हमारे विना कैसे शोकसमुद्रमें डूबे होंगे ? कोई २ कहने लगीं कि स्वामीका वियोगहै ॥ १४ ॥ इसलिये हे मौत ! हम तुमको [illegible], तुम हम दुःखभागिनियोंको ग्रहण करो. पहले जन्ममें हमारे शरीरसे हमने कोई दुष्कर कार्य कियाथा ॥ १५ ॥ इसीलिये हम सब दुःखित होकर

रह सकतीहै, इसी कारण यह इच्छानुसार गमनागमन करता हुआ घूमताहै ॥ १८ ॥ कैसी भयंकर बातहै ऐसे दुष्कर्ममें रत होकरभी वह निशाचर अपनेको निन्दित नहीं समझता जैसा यह दुरात्माहै, इसका विक्रमभी वैसाहीहै ॥ १९ ॥ परस्त्री गमन करना यह इसके लिये बडा अयोग्य कर्म है, क्योंकि यह राक्षस परस्त्रियोंके साथ रमण करताहै ॥ २० ॥ इस कारण इस दुर्मति राक्षसका स्त्रीके कार्यसेही वध होगा। जैसेही उन पतिव्रता स्त्रियोंने यह वचन उच्चारण किया कि ॥ २१ ॥

अहोधिङ्मानुषंलोकंनास्तिखल्वधमःपरः ॥ यद्दुर्बलाबलवताभर्तारोरावणेनन: ॥ १७ ॥ सूर्येणोदयताकालेनक्षत्राणीवनाशिताः ॥ अहोसुव न्सदृशोरक्षांपापंयुज्यते ॥ १८ ॥ अहोदुर्वृत्तमास्थायनात्मानंवैजुगुप्सते ॥ सर्वथासदृशस्तावद्विक्रमोस्यदुरात्मनः ॥ १९ ॥ इदंत्वसदृशंकर्म परदाराभिमर्शनम् ॥ यस्माद्देषपरक्र्यासुरमतेराक्षसाधमः ॥ २० ॥ तस्माद्वैस्त्रीकृतेनैववधंप्राप्स्यतिदुर्मतिः ॥ सतीभिर्वरनारीभिरेवंवाक्येभ्यु दीरिते ॥ २१ ॥ नेदुर्दुन्दुभयःस्वस्थाःपुष्पवृष्टिःपपातच ॥ शप्तःस्त्रीभिःसतुसमंहतौजाइवनिष्प्रभः ॥ २२ ॥ पतिव्रताभिःसाध्वीभिर्बभूवविम नाइव ॥ एवंविलपितंतासांशृण्वन्राक्षसपुंगवः ॥२३॥ प्रविवेशपुरींलंकांपूज्यमानोनिशाचरैः ॥ एतस्मिन्नंतरेघोराराक्षसीकामरूपिणी ॥२४॥ सहसापतिताभूमौभगिनीरावणस्यसा ॥ तांस्वसारंसमुत्थाप्यरावणःपरिसांत्वयन् ॥ २५ ॥ अब्रवीत्किमिदंभद्रेवक्तुकामासिमांद्रुतम् ॥ सावा ष्पपरिरुद्धाक्षीरक्ताक्षीवाक्यमब्रवीत् ॥ २६ ॥ कृतास्मिविधवाराजंस्त्वयाबलवताबलात् ॥ एतेराजंस्त्वयावीर्याद्दैत्याविनिहतारणे ॥ २७ ॥

स्वर्गमें देवताओंके नगाडे बजने लगे, और फूलोंकी वर्षा होने लगी। पतिव्रता स्त्रियोंके शाप देनेसे रावणका पराक्रम हतसा होगया ॥ २२ ॥ और वह उदासभी होगया क्योंकि रावणने समझ लिया कि इन पतिव्रता स्त्रियोंका शाप मिथ्या न होगा। इस प्रकार उनका विलपना कलपना सुन राक्षसश्रेष्ठ ॥ २३ ॥ निशाचरोंसे पूजित होता लंका नगरीमें प्रवेश करता हुआ इसी अवसरमें घोर राक्षसरूपिणी ॥ २४ ॥ रावणकी बहन उनके सम्मुखही एकाएकी पृथ्वीपर गिर पडी । रावणने उसको धमकार पुचकार कहा ॥ २५ ॥ हे भद्रे ! तुम्हारे मनका क्या अभिप्रायहै? अति शीघ्र हमसे कहो। फिर वह लाल २ नेत्रवाली निशाचरी आंखोंमें आंसू भरकर कहने लगी हुई ॥ २६ ॥ हे राजन् ! आप बलवानहैं, इसलिये बलपूर्वक आपने हमको विधवा कियाहै, हे राजन् ! अपने वीर्यके प्रभावसे संग्राममें दैत्योंका संहार

काल्केयाइतिख्याताःसहस्राणिचतुर्दश ॥ प्राणेभ्योपिगरीयान्मेतत्रभर्तामहाबलः ॥ २८ ॥ सोपित्वयाहतस्तातरिपुणाभ्रातृगंधिना ॥ त्वया स्मिनिहताराजन्स्वयमेवहिबंधुना ॥ २९ ॥ राजन्वैधव्यशब्दंचभोक्ष्यामित्वत्कृतंह्यहम् ॥ ननुनामत्वयारक्ष्योजामातासमरेष्वपि ॥ ३० ॥ सत्वयानिहतोयुद्धेस्वयमेवनलज्जसे ॥ एवमुक्तोदशग्रीवोभगिन्याक्रोशमानया ॥ ३१ ॥ अब्रवीत्सांत्वयित्वातांसामपूर्वमिदंवचः ॥ अलंवत्से रुदित्वातेनभेतव्यंचसर्वशः ॥ ३२ ॥ दानमानप्रसादैस्त्वांतोषयिष्यामियत्नतः ॥ युद्धप्रमत्तोव्याक्षिप्तोजयकांक्षीक्षिपञ्शरान् ॥ ३३ ॥ नाहम ज्ञासिषंयुध्यन्स्वान्परान्वापिसंयुगे ॥ जामातरंनजानेस्मप्रहरन्युद्धदुर्मदः ॥ ३४ ॥ तेनासौनिहतःसंख्येमयाभर्तातवस्वसः ॥ अस्मिन्कालेतुय त्प्राप्तंतत्करिष्यामितेहितम् ॥ ३५ ॥ भ्रातुरैश्वर्ययुक्तस्यखरस्यवसपार्श्वतः ॥ चतुर्दशानांभ्रातातेसहस्राणांभविष्यति ॥ ३६ ॥ प्रभुः प्रयाणेदानेचराक्षसानांमहाबलः ॥ तत्रमातृष्वसेयस्तेभ्रातायंवैखरःप्रभुः ॥ ३७ ॥ भविष्यतितवादेशंसदाकुर्वन्निशाचरः ॥ शीघ्रंगच्छ त्वयंवीरोदंडकान्परिरक्षितुम् ॥ ३८॥

किया ॥ २७ ॥ आपने उन चौदह हजार दैत्योंको मारा जोकि कालकेयके नामसे विख्यातथे । तिनमें हमारे प्राणोंसेभी अधिक प्यारे महाबलवान् स्वामीथे ॥ ॥ २८ ॥ हे भइया ! आपने शत्रु होकर उनकाभी संहार कियाहै; इसलिये आप हमारे नाममात्रके भाई हैं, हे भइया ! आपने भइया होकर आपही हमको मार डाला॥ ॥ २९ ॥ सो आपके कारण अब हमको सदा विधवापनकी पीडा भोगनी पडेगी । हे राजन् ! बहनोईको अर्थात् हमारे स्वामीको संग्राममें रक्षा करना आपको उचित था ॥ ३० ॥ परन्तु आप स्वयं उसका नाश करकेभी नहीं लजाते हैं. जब बहनने विलाप करते २ यह वचन कहे ॥ ३१ ॥ तब रावणने चिकने चुपडे वचनोंसे उसे समझाकर कहा, वत्से ! तुम्हारे रोनेका कुछ काम नहीं तुम बन्धु बान्धव इत्यादि किसीका भय न करो ॥ ३२ ॥ हम दान मान और प्रसन्नतासे यत्नसहित सदा तुम्हें संतोषित किया करेंगे । हे भद्रे ! हमने मतवालेपनसे और विक्षिप्त चित्तसे विजयकी अभिलाषा कर बाणोंके जाल छोडेथे ॥ ३३ ॥ इसलिये उस समय युद्ध करते २ हमने संग्राममें अपना पराया कुछभी नहीं जाना । हे बहन ! हमारा ज्ञान इतना जाता रहाथा कि, हमको कुछभी ज्ञान नहीं था कि, यह बहनोई है. क्योंकि हम युद्धमें उन्मत्तथे ॥ ३४ ॥ इसी कारणसे तुम्हारा स्वामी हमसे मारागया । जो हो इस समय जो तुम्हारा अभिमतहै इसकारण हम वही सिद्ध करेंगे ॥ ॥ ३५ ॥ इस कारण तुम ऐश्वर्यवान् भ्राता खरके निकट सदा वास करो । तुम्हारा महाबलवान् भ्राता खर चौदह हजार राक्षसोंका स्वामी होगा ॥ ३६ ॥ उसका [illegible] ॥ ३७ ॥ [illegible]

माना करेगा ॥ ३९ ॥ और यही कामरूपी राक्षस अधीश्वर होगा, इतना कह रावणने सेनाको खरके संग रहनेकी आज्ञा दी ॥ ४० ॥ चौदह ह...
बलवीर्ययुक्त घोर सब राक्षसोंके संग करके जानेको आज्ञा हुई ॥ ४१ ॥ खर शीघ्रही भयविहीन होकर दंडकारण्यमें आगया; और वहांपर निष्कंटक र...
स्थापित करता हुआ और शूर्पणखाभी दंडकारण्यमें वास करने लगी ॥ ४२ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० उत्तरकांडे भाषाटीकायां चतुर्विंशः सर्गः ॥२४॥
खरको वह भयंकर सेना देकर और बहनको समझाय बुझाय रावण हर्षित चित्तहो अत्यन्त सावधान हुआ ॥ १ ॥ फिर वह बलवान् राक्षस रावण ...

दूषणोस्यबलाध्यक्षोभविष्यतिमहाबलः ॥ तत्रतेवचनंशूरःकरिष्यतितदाखरः ॥ ३९ ॥ रक्षसांकामरूपाणांप्रभुरेषभविष्यति ॥ एवमुक्त्वादशग्रीवः सैन्यमस्यादिदेशह ॥ ४० ॥ चतुर्दशसहस्राणिरक्षसांवीर्यशालिनाम् ॥ सतैःपरिवृतःसर्वैराक्षसैर्घोरदर्शनैः ॥ ४१ ॥ आगच्छतखरःशीघ्रंदंडका नकुतोभयः ॥ सतत्रकारयामासराज्यंनिहतकंटकम् ॥ साचशूर्पणखातत्रन्यवसद्दंडकेवने ॥ ४२ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्ये उत्तरकांडे चतुर्विंशःसर्गः ॥ २४ ॥ सतुदत्त्वादशग्रीवोबलंघोरंखरस्यतत् ॥ भगिनींचसमाश्वास्यहृष्टःस्वस्थतरोभवत् ॥१॥ ततोनिकुंभिलानाम लंकोपवनमुत्तमम् ॥ तद्राक्षसेंद्रोबलवान्प्रविवेशसहानुगः ॥२॥ ततोयूपशताकीर्णंसौम्यचैत्योपशोभितम् ॥ददर्शविष्ठितंयज्ञंश्रियासंप्रज्वलन्नि ॥ ३ ॥ ततःकृष्णाजिनधरंकमंडलुशिखाध्वजम् ॥ ददर्शस्वसुतंतत्रमेघनादंभयावहम् ॥ ४ ॥ तंसमासाद्यलंकेशःपरिष्वज्याथबाहुभिः ॥ अब्रवी त्किमिदंवत्सवर्तसेब्रूहितत्त्वतः ॥ ५ ॥ उशनात्वब्रवीत्तत्रयज्ञसंपत्समृद्धये ॥ रावणंराक्षसश्रेष्ठंद्विजश्रेष्ठोमहातपाः ॥ ६ ॥ अहमाख्यामितेराजन्श्रू यतांसर्वमेवतत् ॥यज्ञास्तेसप्तपुत्रेणप्राप्तास्तेबहुविस्तराः ॥७॥ अग्निष्टोमोश्वमेधश्चयज्ञोबहुसुवर्णकः ॥ राजसूयस्तथायज्ञोगोमेधोवैष्णवस्तथा ॥८॥

मंत्रियोंके साथ निकुम्भिलानामक लंकाके उत्तम उपवनमें गया ॥ २ ॥ रावणने शोभासे शोभितहो वहां जायकर देखा कि, सुन्दर देवग्रहसे शोभायमान स...
भोंमें युक्त मंडपमें अति प्रकाशित यज्ञ होरहाथा ॥ ३ ॥ फिर मृगचर्म धारण किये दंड कमंडलु लिये भयंकर अपने पुत्र मेघनादकोभी रावणने वहां देखा ॥
॥ ४ ॥ लंकापति रावणने बीसों भुजा फैलाय मेघनादको हृदयसे लगाकर कहा; हे वत्स ! तुमने यह कौन कार्य आरंभ कियाहै ? सो हमसे कहो ॥ ५ ॥
तब महातपस्वी द्विजश्रेष्ठ शुक्राचार्यजी यज्ञकी सम्पत्ति बढानेके लिये राक्षसराज रावणसे बोले ॥ ६ ॥ हे राजन् ! हम यह समस्त वृत्तान्त वर्णन कर...
आप श्रवण करें, आपका पुत्र बहुत विस्तारित प्रसिद्ध सात यज्ञोंके फलको प्राप्त हुआ है ॥ ७ ॥ उनमें अग्निष्टोम, अश्वमेध बहुसुवर्णक, राजसूय, गोमेध ...

वैष्णव यज्ञ समाप्त होगयाहै ॥ ८ ॥ और समस्त पुरुषोंको अतिदुर्लभ इस महेश्वर यज्ञका अनुष्ठान समय होरहाहै इसके पूरा होनेसे आपके पुत्रने इसी स्थानमें साक्षात् पशुपति महादेवजीसे बहुतवर प्राप्त कियेहैं ॥ ९ ॥ हे रावण ! आकाशमें चलनेवाला अविनाशी कामगामी दिव्य रथ और तामसीनाम माया इसने पाई है जिस मायासे अन्धकार हो आता है ॥ १० ॥ हे राक्षसेश्वर ! यह माया संग्राममें छोडदेनेसे सुर या असुर कोईभी इसकी गतिको जाननेमें समर्थ न होंगे ॥ ॥ ११ ॥ हे राजन् ! इसके सिवाय मेघनादने बाणोंसे भराहुआ अक्षय तरकश, अजीत धनुष और संग्राममें शत्रुओंका नाश करनेवाला बलवान् अस्त्रभी पायाहै ॥ ॥ १२ ॥ हे दशानन ! तुम्हारे इस पुत्रने आज यज्ञकी समाप्तिके समय यह समस्त वरदान पायेहैं तिसके पीछे हम और यह दोनोंही आपका दर्शन करनेके

माहेश्वरेप्रवृत्तेतुयज्ञेपुंभिःसुदुर्लभे ॥ वरांस्तेलब्धवान्पुत्रःसाक्षात्पशुपतेरिह ॥ ९ ॥ कामगंस्यंदनंदिव्यमंतरिक्षचरंध्रुवम् ॥ मायांचतामसींनामय यासंपद्यतेतमः ॥ १० ॥ एतयाकिलसंग्रामेमाययाराक्षसेश्वर ॥ प्रयुक्तयागतिःशक्यानहिज्ञातुंसुरासुरैः ॥ ११ ॥ अक्षयाविषुधीबाणैश्चापंचापि सुदुर्जयम् ॥ अस्त्रंचबलवद्राजन्छत्रुविध्वंसनंरणे ॥१२॥ एतान्सर्वान्वराँल्लब्ध्वापुत्रस्तेऽयंदशानन ॥ अद्ययज्ञसमाप्तौचत्वांदिदृक्षन्स्थितोह्यहम् ॥ १३ ॥ ततोब्रवीद्दशग्रीवोनशोभनमिदंकृतम् ॥ पूजिताःशत्रवोयस्माद्द्रव्यैरिंद्रपुरोगमाः ॥ १४ ॥ एहीदानींकृतंयद्धिसुकृतंतन्नसंशयः ॥ आगच्छसौम्यगच्छामःस्वमेवभवनंप्रति ॥ १५ ॥ ततोगत्वादशग्रीवःसपुत्रःसविभीषणः ॥ स्त्रियोवतारयामाससर्वास्ताबाष्पगद्गदाः ॥ १६ ॥ लक्षिण्योरत्नभूताश्चदेवदानवरक्षसाम् ॥ तस्यतासुमतिंज्ञात्वाधर्मात्मावाक्यमब्रवीत् ॥ १७ ॥ ईदृशैस्त्वंसमाचारैर्यशोर्थकुलनाशनैः ॥ धर्षणंप्राणिनांज्ञात्वास्वमतेनविचेष्टसे ॥ १८ ॥ ज्ञातींस्तान्धर्षयित्वेमास्त्वयानीतावरांगनाः ॥ त्वामतिक्रम्यमधुनाराजन्कुंभीनसीहृता ॥ १९ ॥

लिये यहां ठहरे हुए हैं ॥ १३ ॥ यह वचन सुन रावणने कहा पुत्र ! इस प्रकारका कार्य करना तुमको शोभा नहीं देता कारण कि तुमने विविध उपकार द्वारा हमारे शत्रु इंद्रादि देवताओंकीभी पूजाकीहै॥ १४ ॥अच्छा जो किया सो अच्छा किया इसमें कुछ संदेह नहीं; कि इस कार्यके करनेसे पुण्यही होगा. हे सौम्य ! आओ इस समय हम अपने गृहमें चलें ॥१५॥ फिर रावण, विभीषण और अपने पुत्रके सहित अपने स्थानमें जाय उन रोदन करती हुई स्त्रियोंको पुष्पक विमानपरसे उतारता हुआ ॥ ॥ १६ ॥ वह सुलक्षणवाली स्त्रियें देव, दानव और राक्षसोंकी रत्न स्वरूपथीं; उन सब स्त्रियोंपर रावणका बुरा अभिप्राय जान धर्मात्मा विभीषणजीने कहा ॥ ॥ १७ ॥ इस कार्यके करनेसे पाप होताहै यह सब आप जानकरभी इच्छानुसार क्यों ऐसे आचारसे यश, अर्थ, कुल नाशकर कार्य करके प्राणियोंको सताते फिरते हो ॥ १८ ॥ [illegible] लिये हो परन्तु हे राजन् ! आपको कुछ न [illegible]

लीके बडे भ्राता माल्यवान् नाम विख्यात पंडित एक वृद्ध निशाचरहैं ॥ २२ ॥ वह हमारी माताके बडे तात. और हमारे नानाहैं उनकी बेटीका नाम अनला और उस अनलाकी बेटीका नाम कुम्भीनसी हुआ ॥२३॥ वह कुम्भीनसी हमारी मौसीकी बेटीहै; यह अनलाकी पुत्री धर्मानुसार हम सब भ्राताओंकी बहन है॥ २४॥ इसमें हे राजन् ! आपका पुत्र मेघनाद तो यज्ञ कर रहाथा और हम तप करनेके लिये जलमें स्थितथे उस समय वह बलवान् राक्षस उस कुम्भीनसीको हरण करके

रावणस्त्वब्रवीद्वाक्यंनावगच्छामिकिंत्विदम् ॥ कोयंयस्तुत्वयाख्यातोमधुरित्येवनामतः ॥ २० ॥ विभीषणस्तुसंक्रुद्धोभ्रातरंवाक्यमब्रवीत् ॥ श्रूयतामस्यपापस्यकर्मणःफलमागतम् ॥ २१ ॥ मातामहस्ययोस्माकंज्येष्ठोभ्रातासुमालिनः ॥ माल्यवानितिविख्यातोवृद्धःप्राज्ञोनिशाचरः॥ ॥ २२ ॥ पिताज्येष्ठोजनन्यानोह्यस्माकंचार्यकोभवत् ॥ तस्यकुंभीनसीनामदुहितुर्दुहिताऽभवत् ॥२३॥ मातृष्वसुरथास्माकंसाचकन्यानलोद्भवा ॥ भवत्यस्माकमेवैषाभ्रातृणांधर्मतःस्वसा ॥ २४ ॥ साहृतामधुनाराजन्राक्षसेनबलीयसा ॥ यज्ञप्रवृत्तेपुत्रेतुमयिचांतर्जलोषिते ॥ २५ ॥ कुंभकर्णोमहाराजनिद्रामनुभवत्यथ ॥ निहत्यराक्षसश्रेष्ठानमात्यानिहसंमतान् ॥ २६ ॥ धर्षयित्वाहृताराजन्गुप्ताप्यंतःपुरेतव ॥ श्रुत्वापितन्महाराजक्षांतमेवहतोनसः ॥ २७ ॥ यस्मादवश्यंदातव्याकन्याभर्तृभिर्भ्रातृभिः ॥ तदेतत्कर्मणोह्यस्यफलंपापस्यदुर्मतेः ॥ २८ ॥ अस्मिन्नेवाभिसंप्राप्तंलोकेविदितमस्तुते ॥ विभीषणवचःश्रुत्वाराक्षसेंद्रःसरावणः ॥ २९ ॥ दौरात्म्येनात्मनोद्भूतस्तप्तांभाइवसागरः ॥ ततोब्रवीद्दशग्रीवःक्रुद्धःसंरक्तलोचनः ॥ ३० ॥ कल्प्यतांमेरथःशीघ्रंशूराःसज्जीभवंतुनः ॥ भ्रातामेकुंभकर्णश्चयेचमुख्यानिशाचराः ॥ ३१ ॥

लेगया ॥ २५ ॥ हे महाराज ! विशेष करके कुंभकर्णभी उस समय सोय रहाथा. सो प्रसिद्ध राक्षसश्रेष्ठ मंत्रियोंको मारकर ॥ २६ ॥ आपके अंतःपुरमें रक्षित हुई कुंभीनसीको बलपूर्वक हरण करके लेगया. हे महाराज ! यह समाचार सुनकरभी उसको न मारकर हमने उसे क्षमाही किया ॥ २७ ॥ क्योंकि कुमारी वहनको अवश्य ब्याह देना भ्राताओंका कर्तव्यहै सो नहीं हुआ। हे दुर्मते ! यह बात इन तुम्हारेही दुष्कर्मोंसे हुई ॥ २८ ॥ सो तुमको इसी लोकमें इस कन्याहरणरूप पापका फल मिलगया सो इसको आप जाने. वह राक्षसोंका राजा रावण विभीषणजीके ऐसे वचन सुन ॥ २९ ॥ गरम जलसे पूर्ण समुद्रके खलबलानेकी समान अपने किये दौरात्म्यसे पीडितहो अत्यन्त संतापित हुआ. फिर रावणने क्रोधके मारे लाल २ नेत्र कर कहा ॥ ३० ॥ हमारा रथ शीघ्र तैयार करो और

हमारी सेनाके शूर भी सजाये जायँ, हमारा भ्राता कुम्भकर्ण व मुख्य २ निशाचरगण ॥ ३१ ॥ अनेक प्रकारके अस्त्र शस्त्र लेकर सवारियोंपर चढ, आप संग्राममें रावणसे निर्भय उस मधुको मार डालेंगे ॥ ३२ ॥ और फिर हम बन्धु बान्धवोंके साथ जयकी अभिलाषासे देवलोकको जायँगे, प्रधान २ चार हः अक्षौहिणी राक्षस आगे २ ॥ ३३ ॥ अनेक प्रकारके हथियार लिये युद्ध करनेकी कांक्षासे चले, मेघनाद सब सेनापतियोंको संगले आगे चला, ॥ ३४ ॥ रा. बीचमें और कुम्भकर्ण पीछे २ हुआ, जो उस दिन जाग उठाथा. केवल वह धर्मात्मा विभीषणजीही लंकामें रहकर धर्माचरण करने लगे ॥ ३५ ॥ और बाकी बचाये सब महाभाग राक्षस, नाग, गधे, शिशुमार, ऊँट और द्युतिमान् घोडोंपर सवार होकर मधुपुरकी ओर चले ॥ ३६ ॥ अधिक क्या कहें वह समस्त रा

वाहनान्यधिरोहंतुनानाप्रहरणायुधाः ॥ अद्यतंसमरेहत्वामधुंरावणनिर्भयम् ॥ ३२ ॥ सुरलोकंगमिष्यामियुद्धाकांक्षीसुहृद्धृतः ॥ अक्षौहिणीस हस्राणिचत्वार्यग्र्याणिरक्षसाम् ॥ ३३ ॥ नानाप्रहरणान्याशुनिर्ययुर्युद्धकांक्षिणाम् ॥ इंद्रजित्त्वग्रतःसैन्यात्सैनिकान्परिगृह्यच ॥ ३४ ॥ जग मरावणोमध्येकुंभकर्णश्चपृष्ठतः ॥ विभीषणश्चधर्मात्मालंकायांधर्ममाचरन् ॥ ३५ ॥ शेषाःसर्वेमहाभागायर्युर्मधुपुरंप्रति ॥ खरैरुष्ट्रैर्हयैर्दीप्तैःशि शुमारैर्महोरगैः ॥ ३६ ॥ राक्षसाप्रययुःसर्वेकृत्वाकाशंनिरंतरम् ॥ दैत्याश्चशतशस्तत्रकृतवैराश्चदैवतैः ॥ ३७ ॥ रावणंप्रेक्ष्यगच्छंतमन्वगच्छ न्हिपृष्ठतः ॥ सतुगत्वामधुपुरंप्रविश्यचदशाननः ॥ ३८ ॥ नददर्शमधुंतत्रभगिनींतत्रदृष्टवान् ॥ साचप्रह्वांजलिर्भूत्वाशिरसाचरणौगता ॥३९॥ तस्यराक्षसराजस्यत्रस्ताकुंभीनसीतदा ॥ तांसमुत्थापयामासनभेतव्यमितिब्रुवन् ॥४०॥रा वणोराक्षसश्रेष्ठःकिंचापिकरवाणिते ॥ सात्रवीद्यदि मेराजन्प्रसन्नस्त्वंमहाभुज ॥ ४१ ॥ भर्तारंनममेहाद्यहंतुमर्हसिमानद ॥ नहीदृशंभयंकिंचित्कुलस्त्रीणामिहोच्यते ॥ ४२ ॥ भयानामपिसर्वेषां वैधव्यंव्यसनंमहत् ॥ सत्यवाग्भवराजेंद्रमामवेक्षस्वयाचतीम् ॥ ४३ ॥

आकाशको संपूर्णतःही ढककर जाने लगे, उनमें सैकडों राक्षस देवताओंसे वैर किये हुए ॥३७॥ रावणको युद्धमें जाता हुआ देखकर उसके पीछे२ गमन कर लगे, तब रावण जायकर मधुपुरमें पहुँचा ॥ ३८ ॥ परन्तु उसने वहां मधुको न देखकर अपनी बहनको देखा, वह हाथ जोड कांपती हुई शीश नवाय चरणोंपर गिरी ॥ ३९ ॥ वह कुम्भीनसी जब इस प्रकार राक्षसराजके चरणोंपर गिरी, तब रावणने उसे उठाकर कहा कि, तुमको कुछ भय नहींहै ॥ ४० ॥ हम राक्षसश्रेष्ठ रावणहैं, अधिक करके बताओ कि हम तुम्हारा क्या करें ? वह बोली, हे महाराज [illegible]

[illegible]

उसके साथ सुरलोकको जायँगे ॥ ४५ ॥ तुम्हारे प्रति करुणाके मारे और तुम्हारी सुहृदताके वश हो हमने मधुके मारनेकी इच्छाको छोड दिया, यह वचन सुनकर कुम्भीनसीने अपने सोतेहुए स्वामीको जगाय ॥ ४६ ॥ हर्षितहो उससे कहा; हमारे भइया महाबलवान् रावण यहांपर आयेहैं ॥ ४७ ॥ वह सुरलोकके जीतनेकी अभिलाषा करके तुमको अपनी सहायता करनेके निमित्त वरण करतेहैं, सो हे स्वामी ! तुम बन्धु बान्धवोंके साथ उनकी सहायता करनेको जाओ ॥ ४८ ॥

सहते त्वयाप्युक्तंमहाराजनभेतव्यमितिस्वयम् ॥ रावणस्त्वब्रवीद्धृष्टःस्वसारंतत्रसंस्थिताम् ॥ ४४ ॥ क्वासौतवभर्तावैममशीघ्रंनिवेद्यताम् ॥ अत्र नगमिष्यामिसुरलोकंजयायहि ॥ ४५ ॥ तवकारुण्यसौहार्दान्निवृत्तोस्मिमधोर्वधात् ॥ इत्युक्तासासमुत्थाप्यप्रसुप्तंतंनिशाचरम् ॥ ४६ ॥ तदस्य प्रीत्संप्रहृष्टेवराक्षसीसापतिंवचः ॥ एषप्राप्तोदशग्रीवोममभ्रातामहाबलः ॥ ४७ ॥ सुरलोकजयाकांक्षीसाहाय्येत्वांवृणोतिच ॥ तदस्य हेसहायार्थंसबंधुर्गच्छराक्षस ॥ ४८ ॥ स्निग्धस्यभजमानस्ययुक्तमर्थायकल्पितुम् ॥ तस्यास्तद्वचनंश्रुत्वातथेत्याहमधुर्वचः ॥ ४९ ॥ तत्रचैकांनि ददर्शराक्षसश्रेष्ठंयथान्यायमुपेत्यसः ॥ पूजयामासधर्मेणरावणंराक्षसाधिपम् ॥ ५० ॥ प्राप्यपूजांदशग्रीवोमधुवेश्मनिवीर्यवान् ॥ शामुष्यगमनायोपचक्रमे ॥ ५१ ॥ ततःकैलासमासाद्यशैलंवैश्रवणालयम् ॥ राक्षसेंद्रोमहेंद्राभःसेनामुपनिवेशयत् ॥ ५२ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे पंचविंशः सर्गः ॥ २५ ॥ सतुतत्रदशग्रीवःसहसैन्येनवीर्यवान् ॥ अस्तंप्राप्तेदिनकरे निवासंसमरोचयत् ॥ १ ॥

हमको देखतेही स्नेहके वशहो उन्होंने तुमको अपना बहनोई मानलियाहै, इसलिये उनका कार्य सिद्ध करनेके लिये सहायता करना उचित है उसके यह वचन सुन निशाचर मधुने कहा कि, हम अवश्यही उनकी सहायता करेंगे ॥ ४९ ॥ तिसके पीछे मधुने राक्षसश्रेष्ठ रावणके दर्शनकर उपचारके सहित निकट जाय धर्मानुसार राक्षसोंके स्वामी रावणकी पूजाकी ॥ ५० ॥ वीर्यवान् रावण मधुके स्थानमें सम्मान पाय वहां एक रात्रि रहजानेकी इच्छा करताहुआ ॥ ५१ ॥ फिर इन्द्रके समान राक्षसोंका राजा रावण कुबेरके वासस्थान कैलास पर्वतके शिखरपर जाय वहां सेनाकी छावनी डालता हुआ ॥ ५२ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे भाषाटीकायां पंचविंशः सर्गः ॥ २५ ॥ ॥ जब सूर्यभगवान् छिप गये तब वीर्यवान् रावण सेनाके सहित वहांपर बसता

उदितेविमलेचंद्रेतुल्यपर्वतवर्चसि ॥ प्रसुतंसुमहत्सैन्यंनानाप्रहरणायुधम् ॥ २ ॥ रावणस्तुमहावीर्योनिषण्णःशैलमूर्धनि ॥ सददर्शगुणांस्त
त्रचंद्रपादपशोभितान् ॥ ३ ॥ कर्णिकारवनैर्दीप्तैःकदंबबकुलैस्तथा ॥ पद्मिनीभिश्चफुल्लाभिर्मंदाकिन्याजलैरपि ॥ ४ ॥ चंपकाशोकपुन्नागमंदा
रतरुभिस्तथा ॥ चूतपाटललोध्रैश्चप्रियंग्वर्जुनकेतकैः ॥ ५ ॥ तगरैर्नारिकेरैश्चप्रियालपनसैस्तथा ॥ एतैरन्यैश्चतरुभिरुद्भासितवनांतरे ॥ ६ ॥
किन्नरामदनेनार्तारक्तामधुरकंठिनः ॥ समंसंप्रजगुर्यत्रमनस्तुष्टिविवर्धनम् ॥ ७ ॥ विद्याधरामदक्षीवामदरक्तांतलोचनाः ॥ योषिद्भिःसहसंक्रांता
श्चिक्रीडुर्जहृषुश्चवै ॥ ८ ॥ घंटानामिवसन्नादःशुश्रुवेमधुरस्वनः ॥ अप्सरोगणसंघानांगायतांधनदालये ॥ ९ ॥ पुष्पवर्षाणिमुंचंतोनगाःप
वनताडिताः ॥ शैलंतंवासयंतीवमधुमाधवगंधिनः ॥ १० ॥ मधुपुष्परजःपृक्तंगंधमादायपुष्कलम् ॥ प्रववौवर्धयन्कामंरावणस्यसुखोऽनिलः ॥
॥ ११ ॥ गेयात्पुष्पसमृद्ध्याचशैत्याद्वायोर्गिरेर्गुणात् ॥ प्रवृत्तायांरजन्यांचचंद्रस्योदयनेनच ॥ १२ ॥ रावणःसमहावीर्यःकामस्यवशमागतः॥
विनिःश्वस्यविनिःश्वस्यशशिनंसमवैक्षत ॥ १३ ॥

हुआ ॥ १ ॥ इसके पीछे जब इसी कैलासपर्वतकी समान श्वेतवर्णके विमल निशानाथ (चन्द्रमा) उदय हुए, तब अनेक प्रकारके अस्त्र शस्त्र धारण किये हुए
यह बडी भारी सेना सोयगई ॥ २ ॥ उस समय महावीर्यवान् रावण पर्वतके शिखरपर शयन करके चन्द्रमाके किरणोंके जालमे शोभायमान कामनियोंकी भोगने
योग्य पहाडी शोभा देखने लगा ॥ ३ ॥ दीप्तिमान् कर्णिकारके वन, कदम्ब और बकुलके वृक्षोंकी कतार, खिलेहुए कमल फूलोंका वन और मन्दाकिनीका जल ॥ ४ ॥
चंपा, अशोक, पुन्नाग, मन्दार, आम, पाटल, लोध, प्रियंगु, अर्ज्जुन, केतकी ॥ ५ ॥ तगर, नारियल, चिरोंजी, पनस इत्यादिकोंसे वह वन शोभायमान हो रहा
था ॥ ६ ॥ ऐसे शोभायमान वनमें मधुर शब्द करनेवाले किन्नर कामदेवकी व्यथासे व्यथितहो अनुरागके वशहो अपने २ जोडेके साथ अपनी प्रसन्नताको
बढानेवाला गाना कर रहेहैं ॥ ७ ॥ और मदके वश होनेके कारण जिनके नेत्रोंके कोये लाल होगयेहैं ऐसे मदोन्मत्त विद्याधरलोगभी अपनी २ स्त्रियोंके
साथ मिलकर हर्षितहो क्रीडा कर रहेहैं ॥ ८ ॥ कुबेरके मंदिरमें जाती हुई अप्सराओंके झुण्डका मधुर स्वर घंटेके नादकी समान सुनाई आने लगा ॥
॥ ९ ॥ वृक्ष पवनके झोंकोंसे चलायमानहो पुष्प वर्षण करते हुए वसन्तसमयके सब जातिवाले पुष्पोंकी सुगन्धिसे उस पर्वतको सुगन्धित करने लगे ॥
॥ १० ॥ सुख देनेवाला समीर, मधु और परागसे मिलीहुई सुगन्धिको ग्रहणकर रावणके कामको बढाय सुन्दर रूपसे बहने लगा ॥ ११ ॥ रात्रिके होनेपर चंद्रमा
[illegible] बढती होनेसे पवनकी शीतलता व पर्वतके गुणसे ॥ १२ ॥ महावीर्यवान् राक्षसराज रावण कामदेवके वशहो वारंवार लम्बे

माय रहीयं इस मन अंगाम चन्दन लग रहाथा, उसके बालों कल्पवृक्षके फूल गुंथ रहथे, दिव्य उत्सवके ले २ मतासे जाय र २ ॥ १५ ॥ म हिर नेत्र, कठोर कुच, पायजेब पहरे, सुन्दर जांघोंके ऊपरका अंग व मनोहर जांघें धारण किये ॥ १६ ॥ और छहों ऋतुके उत्पन्न हुए फूलोंसे बनेहुए अनेक गहने पहने रम्भा कान्ति, श्री, और कीर्तिमें दूसरी लक्ष्मीकी समान प्रकाशमान थी ॥ १७ ॥ और सजल जलधरकी नाईं नील वस्त्र धारण कियेथी, उसका वदन चन्द्रमाकी समान, दोनों भौंहें सुन्दर धनुषकी समानथीं ॥ १८ ॥ जांघें हाथीकी शुण्डके समान और दोनों हाथ पत्तोंसेभी अधिक कोमलथे, ऐसी रम्भा सेनाके

एतस्मिन्नंतरेतत्रदिव्याभरणभूषिता ॥ सर्वाप्सरोवरारंभापूर्णचंद्रनिभानना ॥ १४ ॥ दिव्यचंदनलिप्तांगीमंदारकृतमूर्धजा ॥ दिव्योत्सवकृतारंभादिव्यपुष्पविभूषिता ॥ १५ ॥ चक्षुर्मनोहरंपीनंमेखलादामभूषितम् ॥ समुद्वहंतीजघनंरतिप्राभृतमुत्तमम ॥ १६ ॥ कृतैर्विशेषकैरार्द्रैःषडतुकुसुमोद्भवैः ॥ बभावन्यतमेवश्रीःकांतिश्रीद्युतिकीर्तिभिः ॥ १७ ॥ नीलंसतोयमेघाभंवस्त्रंसमवगुंठिता ॥ यस्यावक्त्रंशशिनिभंभ्रुवौचापनिभेशुभे ॥ १८ ॥ ऊरूकरिकराकारौकरौपल्लवकोमलौ ॥ सैन्यमध्येनगच्छंतीरावणेनोपलक्षिता ॥ १९ ॥ तांसमुत्थायगच्छंतींकामबाणवशंगतः॥ करेगृहीत्वालज्जंतींस्मयमानोऽभ्यभाषत ॥ २० ॥ क्वगच्छसिवरारोहेकांसिद्धिंभजसेस्वयम ॥ कस्याभ्युदयकालोयंयस्त्वांसमुपभोक्ष्यते ॥२१॥ वदनाननरसस्याद्यपद्मोत्पलसुगंधिनः ॥ सुधामृतरसस्येवकोद्यतृप्तिंगमिष्यति ॥ २२ ॥ स्वर्णकुंभनिभौपीनौशुभौभीरुनिरंतरौ ॥ कस्योरस्थलसंस्पर्शंदास्यतस्तेकुचाविमौ ॥ २३ ॥ सुवर्णचक्रप्रतिमंस्वर्णदामचितंपृथु ॥ अध्यारोक्ष्यतिकस्तेऽद्यजघनंस्वर्गरूपिणम् ॥ २४ ॥

बीचमें होकर जा रहीथी कि, उसको रावणने देखा ॥ १९ ॥ तब रावण कामके वशहो उठ शरमाई हुई रम्भाका हाथ पकड कुछ एक हँसकर बोला॥ ॥ २० ॥ हे सुन्दरि ! तुम कहां जातीहो ? तुम किसकी भोगवासना सिद्ध करोगी, किस पुरुषका अभ्युदय समय आय पहुँचाहै, कि जो तुम्हारे साथ भोग करेगा ? ॥ २१ ॥ कमलकी समान सुगन्धियुक्त, अमृत और मधुकी समान तुम्हारे अधरामृतसे आज कौन तृप्त होगा ? ॥ २२ ॥ हे भीरु ! तुम्हारे सुन्दर बडे २ दोनों कुच सुवर्णके कलशोंकी समान मोटे होकर परस्पर ऐसे सट गयेहैं कि, उनमें कुछभी अंतर नहीं है सो वह दोनों कुच आज किसके हृदयसे लगेंगे ? ॥ २३ ॥ तुम्हारे जघन सुवर्णके चक्रकी समान गोल और बडे हैं; विशेष करके इनमें सुवर्णकी तगडी पडी है, इस कारण स्वर्गके समान अत्यन्त

सुखके हेतु इस तुम्हारे श्रोणीतट (पेड) पर आज कौन चढेगा ? ॥ २४ ॥ हे भीरु ! इन्द्र, विष्णु या अश्विनीकुमार कोईभी हो आजकल कोई पुरुषभी हमसे श्रेष्ठ नहीं है तोभी तुम हमको छोडे जातीहो यह अच्छा नहीं करती ॥ २५ ॥ हे बडे नितम्बवाली ! आओ शोभायमान शिलापर विश्राम करो, हमारे सिवाय त्रिलोकीमें और कोई स्वामी विद्यमान नहीं है ॥ २६ ॥ जो त्रिलोकीका स्वामीहै मैं रावण उसकाही स्वामी और विधाताहूं तोभी हम विनतीकर हाथ जोड तुमसे यह प्रार्थना करते हैं सो तुम हमसे मिलो ॥२७॥ यह वचन सुन रम्भा कम्पायमानहो हाथ जोडकर बोली, हे राक्षसराज ! आप हमारे बडे हैं इस कारण ऐसा कहना आपको उचित नहीं है ॥ २८ ॥ वरन् और कोईभी जो हमारा अपमान करे तो आपको उससेभी हमारी रक्षा करना उचित है धर्मके अनुसार हम

मद्विशिष्टःपुमान्कोद्यशक्रोविष्णुरथाश्विनौ ॥ मामतीत्यहियच्चत्वंयासिभीरुनशोभनम् ॥ २५ ॥ विश्रमत्वंपृथुश्रोणिशिलातलमिदंशुभम् ॥ त्रैलोक्येयःप्रभुश्चैवमदन्योनैवविद्यते ॥ २६ ॥ तदेवंप्रांजलिःप्रह्वोयाचतेत्वांदशाननः ॥ भर्तुर्भर्ताविधाताचत्रैलोक्यस्यभजस्वमाम् ॥ २७ ॥ एवमुक्ताऽब्रवीद्रंभावेपमानाकृतांजलिः ॥ प्रसीदनार्हसेवक्तुमीदृशंत्वंहिमेगुरुः ॥ २८ ॥ अन्येभ्योपित्वयारक्ष्याप्राप्नुयांधर्षणंयदि ॥ तद्धर्मतः स्नुषातेहंतत्त्वमेतद्ब्रवीमिते ॥२९॥ अथाब्रवीद्दशग्रीवश्चरणाधोमुखींस्थिताम् ॥ रोमहर्षमनुप्राप्तांदृष्टमात्रेणतांतदा ॥ ३० ॥ सुतस्ययदिमेभार्या ततस्त्वंहिस्नुषाभवेः ॥ बाढमित्येवसारंभाप्राहरावणमुत्तरम् ॥ ३१ ॥ धर्मतस्तेसुतस्याहंभार्याराक्षसपुंगव ॥ पुत्रःप्रियतरःप्राणैर्भ्रातुर्वैश्रवण स्यते ॥ ३२ ॥ विख्यातस्त्रिषुलोकेषुनलकूबरइत्ययम् ॥ धर्मतोयोभवेद्विप्रःक्षत्रियोवीर्यतोभवेत् ॥ ३३ ॥ क्रोधाद्यश्चभवेदग्निःक्षांत्याचवसुधा समः ॥ तस्यास्मिकृतसंकेतालोकपालसुतस्यवै ॥३४॥ तमुद्दिश्यतुमेसर्वंविभूषणमिदंकृतम् ॥ यथातस्यहिनान्यस्यभावोमांप्रतितिष्ठति॥३५॥

आपकी पुत्रवधूहैं हम आपसे सत्यही कहती हैं ॥ २९ ॥ यह कह रम्भा नीचेको मुखकर अपने चरणोंको देखती हुई खडी रही, रावणको देखतेही उसका सब शरीर कांपगया ॥ ३० ॥ इसके उपरान्त रावणने रंभासे कहा कि, जो तुम हमारे पुत्रकी भार्याहो तो हमारी पुत्रवधू हो रंभाने कहा ऐसाही है ॥ ३१ ॥ हे राक्षसश्रेष्ठ ! सङ्केतधर्मके अनुसार हम आपके पुत्रकी भार्या हैं, आपके भ्राता कुबेरजीके प्राणोंसेभी अधिक प्यारे ॥ ३२ ॥ नलकूबर नाम त्रिलोक विख्यात एक पुत्रहै, वह धर्मका पालन करनेमें ब्राह्मणकी समान, पराक्रममें क्षत्रियकी समान ॥ ३३ ॥ क्रोधमें अग्निकी नाईं, क्षमामें पृथ्वीकी तुल्यहै, उन लोकपाल कुमारके किये संकेतके अनुसार ॥ ३४ ॥ आज हम उनके पासको जातीहैं, उनकेही पास जानेको हमने यह समस्त भूषण धारण किये हैं [illegible] रे ऊपर उनकी

दमन ! विशेष करके वह महात्मा हमारी बाट उत्सुकहुए बठे ह ॥ ३६ ॥ सो अब आपको · करना · ० नहीं है, हे राक्षसश्रेष्ठ ! साधुजनोके आचरण कियेहुए मार्गके अनुसार आपभी उसी मार्गपर चलकर हमको छोड दीजिये ॥ ३७ ॥ जिस प्रकार आप हमारे मान देने योग्यहैं वैसेही आपको हमारा पालन करना उचितहै; इस प्रकारसे कहे जाकर विनीतभावसे रावणने कहा ॥ ३८ ॥ " हम तुम्हारी स्नुषाहैं " यह जो वचन तुमने कहा, यह निर्णय उन स्त्रियोंके लियेहै जिनका एक पति होताहै, यह बात यहाँपर नहीं लग सकती क्योंकि बहुत दिनोंसे देवलोककी यह व्यवस्था चली आती है कि, उनके कोई नियत एक स्त्री नहीं होती ॥ ३९ ॥ न तो अप्सराओंको कोई एक पतिही होता, और न देवताओंके कोई एक स्त्रीही होती। यह कह उस राक्षसने रंभाको शिला

तेनसत्येनमांराजन्मोक्तुमर्हस्यरिंदम ॥ सहितिष्ठतिधर्मात्मामांप्रतीक्ष्यसमुत्सुकः ॥ ३६ ॥ तत्रविघ्नंतुतस्येहकर्तुंनार्हसिमुंचमाम् ॥ सद्भिराचरितंमार्गंगच्छराक्षसपुंगव ॥ ३७ ॥ माननीयोममत्वंहिपालनीयातथास्मिते ॥ एवमुक्तोदशग्रीवःप्रत्युवाचविनीतवत् ॥ ३८ ॥ स्नुषास्मियदवोचस्त्वमेकपत्नीष्वयंक्रमः ॥ देवलोकस्थितिरियंसुराणांशाश्वतीमता ॥ ३९ ॥ पतिरप्सरसांनास्तिनचैकस्त्रीपरिग्रहः ॥ एवमुक्त्वासतांरक्षोनिवेश्यचशिलातले ॥ ४० ॥ कामभोगाभिसंरक्तोमैथुनायोपचक्रमे ॥ साविमुक्ताततोरंभाभ्रष्टमाल्यविभूषणा ॥ ४१ ॥ गजेंद्राक्रीडमथितानदीवाकुलतांगता ॥ लुलिताकुलकेशांताकरवेपितपल्लवा ॥ ४२ ॥ पवनेनावधूतेवलताकुसुमशालिनी ॥ सावेपमानालज्जंतीभीताकरकृतांजलिः ॥ ४३ ॥ नलकूबरमासाद्यपादयोर्निपपातह ॥ तदवस्थांचतांदृष्ट्वामहात्मानलकूबरः ॥ ४४ ॥ अब्रवीत्किमिदंभद्रेपादयोःपतितासिमे ॥ सावेनिःश्वसमानातुवेपमानाकृतांजलिः ॥ ४५ ॥

पर लिटाय ॥ ४० ॥ कामभोगमें आसक्तहो उसके साथ विहार करना आरंभ किया। भोगी जानेके उपरान्त छूटकर रंभा जो माला पहरेथी वह मलगेजी होगई और गहनेभी नष्ट भ्रष्ट होगये ॥ ४१ ॥ और वह रंभा गजराजकी क्रीडा करनेसे मथीहुई नदीके समान व्याकुल होगई, उसके बाल खुलगये, अलकें चलायमान हुईं; हाथ कंपायमान हुए ॥ ४२ ॥ उस समय ऐसा जान पडा मानो फूलयुक्त वेल पवनके बलसे चलायमान हुई है; इसके उपरान्त रंभा लाज और भयसे कंपित हो हाथ जोडे हुए ॥ ४३ ॥ नलकूबरके निकट पहुँच उनके चरणोंपर गिरपडी; उसकी यह अवस्था देखकर महात्मा नलकूबरजी ॥ ४४ ॥ बोले, हे भद्रे ! यह क्या ? तुम हमारे चरणोंपर क्यों गिरी, तब रंभा कांपकर लम्बे २ श्वासले हाथजोड ॥ ४५ ॥

यथातथ्य समस्त वृत्तान्त कहने लगी, हे देव ! रावण स्वर्गलोकमें जानेके लिये बाहर ह... सपर आयाहै ॥ ४६ ॥ वह सब सेनाके साथ आज यह रात्रि उ...
स्थानमें बिताय रहाथा; हे शत्रुनाशी ! उस रावणने हमको आपके पास आती हुई देख ॥ ४७ ॥ उस राक्षसने हमको पकडकर पूँछा कि, तुम किसके निकट जाती
हो ? सो हमने समस्त वृत्तान्त उससे सत्य २ कह दिया ॥ ४८ ॥ और हे देव ! हम आपकी पुत्रवधू होती हैं, यह कहकर हमने वारंवार उसके निकट प्रार्थनाकी,
परन्तु उसने काममोहसे ज्ञान खो ॥ ४९ ॥ एक बात न सुनी हमारी विनय न मानकर उसने बलात्कार हमारे साथ विहार किया। इसलिये हे सुव्रत ! आप
हमारा यह अपराध क्षमा कीजिये ॥ ५० ॥ स्त्रीका बल कभीभी पुरुषके बलकी समान नहींहै, यह वृत्तान्त सुनकर कुबेरके पुत्रको क्रोध आगया ॥ ५१ ॥ और

तस्मैसर्वंयथातत्त्वमाख्यातुमुपचक्रमे ॥ एषदेवदशग्रीवःप्राप्तोगंतुंत्रिविष्टपम् ॥४६॥ तेनसैन्यसहायेननिशेयंपरिणामिता॥ आयांतीतेनदृष्टास्मि
स्त्वत्सकाशमरिंदम॥४७॥गृहीतातेनपृष्टास्मिकस्यत्वमितिरक्षसा ॥ मयातुसर्वंयत्सत्यंतस्मैसर्वंनिवेदितम् ॥४८॥ काममोहाभिभूतात्मानाश्रौषी
द्वचोमम ॥ याच्यमानोमयादेवस्नुषातेहमितिप्रभो ॥४९॥ तत्सर्वंपृष्ठतःकृत्वाबलात्तेनास्मिधर्षिता ॥ एवंत्वमपराधंमेक्षंतुमर्हसिसुव्रत ॥५०॥
नहितुल्यं बलंसौम्यस्त्रियाश्चपुरुषस्यहि ॥ एतच्छ्रुत्वातुसंक्रुद्धस्तदावैश्रवणात्मजः ॥ ५१ ॥ धर्षणांतांपरांश्रुत्वाध्यानंसंप्रविवेशह॥तस्यतत्कर्म
विज्ञायतदावैश्रवणात्मजः ॥५२॥ मुहूर्तात्क्रोधताम्राक्षस्तोयंजग्राहपाणिना ॥ गृहीत्वासलिलंसर्वमुपस्पृश्ययथाविधि॥५३॥उत्ससर्जतदाशापंरा
क्षसेंद्रायदारुणम् ॥ अकामातेनयस्मात्त्वंबलाद्भद्रेप्रधर्षिता ॥५४॥ तस्मात्सयुवतीमन्यांनाकामामुपयास्यति ॥ यदाह्यकामांकामार्तोधर्षयिष्य
तियोषितम् ॥ ५५ ॥ मूर्धातुसप्तधातस्यशकलीभवितातदा ॥ तस्मिन्नुदाहृतेशापेज्वलिताग्निसमप्रभे ॥५६ ॥ देवदुंदुभयोनेदुःपुष्पवृष्टिश्चखा
च्च्युता ॥ पितामहमुखाश्चैवसर्वेदेवाःप्रहर्षिताः ॥ ५७ ॥ ज्ञात्वालोकगतिंसर्वांतस्यमृत्युंचरक्षसः ॥ श्रुत्वातुसदशग्रीवस्तंशापंरोमहर्षणम् ॥५८॥

सत्य मिथ्या जाननेके लिये ध्यान धरकर देखा तो ध्यानसे रावणका यह कर्म जान ॥ ५२ ॥ क्रोधसे नेत्र लाल २ कर उन्होंने उसी समय हाथमें जल ...
लिया और सब इन्द्रियोंको छू विधिपूर्वक आचमनकर ॥ ५३ ॥ राक्षसपति रावणको अति दारुण शाप दिया कि, हे भद्रे ! तुम्हारी इच्छा न होनेपरभी ज...
उसने बलपूर्वक तुमसे मैथुन किया ॥ ५४ ॥ सो इस कारण अब वह किसी स्त्रीको विना उसकी इच्छाके न भोगसकेगा, और जो वह कामके वशहो किसी
स्त्रीकी इच्छाके विरुद्ध बलपूर्वक उसको पकडेगा ॥ ५५ ॥ तो उसके शिरके सात टुकडे होजाँयगे प्रकाशमान अग्निके प्रभाके समान जब यह शाप उच्चारण किया ॥
॥ ५६ ॥ तब उस समय फूलोंकी वर्षा हुई, आकाशमें देवताओंके नगाडे बजनेलगे ... हर्षित हुए ॥ ५७ ॥ क्योंकि इन सब
... जानी, रावणने उस रोमहर्ष...

नारीपुमैथुनीभावंनाकामास्त्वभ्यरोचयत्॥ तेननीताःस्त्रियःप्रीतिमापुःसर्वाःपतिव्रताः॥ नलकूवरनिर्मुक्तंशापंश्रुत्वामनःप्रियम्॥५९॥इत्यार्षे श्रीम
द्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडेपड्विंशःसर्गः॥२६॥ कैलासंलंघयित्वातुससैन्यबलवाहनः॥ आससादमहातेजाइंद्रलोकंदशाननः॥१॥
तस्यराक्षसमैन्यस्यसमंतादुपयास्यतः॥ देवलोकेवभौशब्दोभिद्यमानार्णवोपमः॥२॥ श्रुत्वातुरावणंप्राप्तमिंद्रश्चलितआसनात् ॥ देवानथाब्रवीत्तत्र
सर्वानेवसमागतान् ॥३॥ आदित्यांश्चवसून्रुद्रान्साध्यांश्चसमरुद्गणान् ॥ सज्जाभवतयुद्धार्थंरावणस्यदुरात्मनः ॥४॥ एवमुक्तास्तुशक्रेणदेवाःशक्रस
मायुधि ॥ सन्नह्यसुमहासत्त्वायुद्धश्रद्धासमन्विताः॥५॥ सतुदीनःपरित्रस्तोमहेंद्रोरावणंप्रति॥ विष्णोःसमीपमागत्यवाक्यमेतदुवाचह ॥६॥विष्णो
कथंकरिष्यामिरावणंराक्षसंप्रति ॥ अहोतिबलवद्रक्षोयुद्धार्थमभिवर्तते ॥ ७ ॥ वरप्रदानाद्बलवान्नखल्वन्येनहेतुना ॥ तत्तुसत्यंवचःकार्यंयदुक्तंपद्म
योनिना ॥८॥ तद्यथानमुचिर्वृत्रोबलिर्नरकशंबरौ ॥ त्वद्बलंसमवष्टभ्यमयादग्धास्तथाकुरु ॥ ९ ॥ नह्यन्योदेवदेवेशत्वदृतेमधुसूदन ॥ गतिः
परायणंवापित्रैलोक्येसचराचरे ॥ १० ॥ त्वंहिनारायणःश्रीमान्पद्मनाभःसनातनः ॥ त्वयेमेस्थापितालोकाःशक्रश्चाहंसुरेश्वरः ॥ ११ ॥

[illegible] कर [illegible] जिन पतिव्रता [illegible] को पहले अपने रनवास [illegible] कूवरका [illegible] या हुआ मन प्रसन्नकार शाप [illegible] कर परमप्रसन्न हुईं॥५९॥ इत्यार्षे श्रीमद्वा॰ वाल्मी॰ आदि॰ उत्तरकांडे भाषाटीकायां षड्विंशः सर्गः ॥ २६ ॥ महातेजस्वी रावण सेना, सेनापति और सवारियोंके साथ कैलासपर्वतके शिखरमें चलकर इन्द्रलोकमें पहुँचा ॥ १ ॥ देवलोकमें जाती हुई उस राक्षसोंकी सेनाका शब्द उछलते हुए समुद्रकी समान चारों ओर टकराने लगा ॥ २ ॥ रावणके आनेका वृत्तान्त सुन इन्द्र अपने आसनसे चलायमान हुआ और उसने सब इकट्ठे बैठे देवतों ॥ ३ ॥ बारह आदित्य, आठ वसु, ग्यारह रुद्र, साध्यगण व उनचास मरुद्गणोंसे कहा, आप दुरात्मा रावणके साथ युद्ध करनेके लिये तैयारहो ॥ ४ ॥ संग्राममें इन्द्रहीकी समान प्रभावाले महाबलवान् समस्त देवतागण इन्द्रके ऐसे वचन सुन युद्धकी अभिलाषासे बख्तर पहरने लगे ॥ ५ ॥ वह इन्द्रजी रावणके भयसे सब प्रकार त्रासितहो विष्णुजीके समीप आय उनसे यह बोले ॥ ६ ॥ हे भगवन् ! हम किस प्रकारसे राक्षस रावणको रोकें ? हा ! अत्यन्त बलवान् राक्षस युद्ध करनेके निमित्त चला आता है ॥७॥ और कोई कारण नहीहै, केवल वरदान पानेके प्रभावसेही यह बलवान्है, सो कमलसे उत्पन्न ब्रह्माजीने जो कुछ कहाहै वह आपको सत्य करना उचित है ॥ ८ ॥ सो आपके भक्त [illegible] आश्रय करके जैसे हमने बलि, नमुचि, नरकासुर व शम्बर असुरको दग्ध कियाहै, सो वैसेही आप कोई रावणके वधका उपायभी खोजदें ॥ ९ ॥ हे देवदेवेश ! मधुसूदन ! चराचर त्रिलोकीके बीचमें आपके सिवाय और कोई आश्रय देनेवाला या रक्षक नहीं है ॥ १० ॥ आपही सनातन पद्मनाभ

राक्षस बढती पाय परस्पर एक दूसरे [illegible] संग्राम [illegible] राजमान होनेलगे ॥ २४ ॥ तेस [illegible] संग्रामके सन्मुख उस अक्षय महासेनाको देखकर [illegible] ओंकी सेनामें खलबलाहट हुई ॥ २५ ॥ इसके उपरान्त विविध शस्त्रधारी देव राक्षस और दानवोंके शब्दसे युक्त भयानक संग्राम होना आरंभ हुआ ॥ २६ ॥ उसी अवसरमें घोरदर्शन वीर रावणके मंत्रिगण युद्ध करनेके लिये आये ॥ २७ ॥ मारीच प्रहस्त, महापार्श्व, महोदर, अकंपन, निकुंभ, शुक, सारण ॥ २८ ॥ संह्लाद, धूमकेतु, महोदर, जम्बुमाली, महाह्लाद, विरूपाक्ष राक्षस ॥२९॥ सुतघ्न, यज्ञकोप, दुर्मुख, खर, त्रिशिरा, करवीराक्ष, सूर्यशत्रु राक्षस ॥ ३० ॥ महाकाय,

एतस्मिन्नंतरेनादःशुश्रावरजनीक्षये ॥ तस्यरावणसैन्यस्यप्रयुद्धस्यसमंततः ॥ २३ ॥ तेप्रयुद्धामहावीर्याअन्योन्यमभिवीक्ष्यवै ॥ संग्राममेवाभिमुखाअभ्यवर्तंतहृष्टवत् ॥२४॥ ततोदैवतसैन्यानांसंक्षोभःसमजायत॥तदक्षयंमहासैन्यंदृष्ट्वासमरमूर्धनि॥२५॥ततोयुद्धंसमभवद्देवदानवरक्षसाम् ॥ घोरंतुमुलनिर्ह्रादंनानाप्रहरणोद्यतम् ॥ २६ ॥ एतस्मिन्नंतरेशूराराक्षसाघोरदर्शनाः ॥ युद्धार्थंसमवर्तंतसचिवारावणस्यते ॥ २७ ॥ मारीचश्चप्रहस्तश्चमहापार्श्वमहोदरौ ॥ अकंपनोनिकुंभश्चशुकःसारणएवच ॥ २८ ॥ संह्रादोधूमकेतुश्चमहादंष्ट्रोघटोदरः ॥ जंबुमालीमहाह्रादोविरूपाक्षश्चराक्षसः ॥ २९ ॥ सुप्तघ्नोयज्ञकोपश्चदुर्मुखोदूषणःखरः ॥ त्रिशिराकरवीराक्षःसूर्यशत्रुश्चराक्षसः ॥३०॥ महाकायोतिकायश्चदेवांतकनरांतकौ ॥ एतैःसर्वैःपरिवृतोमहावीर्यैर्महाबलः ॥ ३१ ॥ रावणस्यार्यकःसैन्यंसुमालीप्रविवेशह ॥ सदैवतगणान्सर्वान्नानाप्रहरणैःशितैः ॥ ३२ ॥ व्यध्वंसयत्समंक्रुद्धोवायुर्जलधरानिव ॥ तद्दैवतबलंरामहन्यमानंनिशाचरैः ॥ ३३ ॥ प्रणुन्नंसर्वतोदिग्भ्यःसिंहनुन्नामृगाइव ॥ एतस्मिन्नंतरेशूरोवसूनामष्टमोवसुः ॥ सावित्रइतिविख्यातःप्रविवेशरणाजिरम् ॥ ३४ ॥ सैन्यैःपरिवृतोहृष्टैर्नानाप्रहरणोद्यतैः ॥ त्रासयञ्छत्रुसैन्यानिप्रविवेशरणाजिरम् ॥३५॥

देवान्तक नरान्तक, इन सब महावीर्ययुक्त राक्षसोंको संग लेकर महाबलवान् ॥ ३१ ॥ सुमाली, जो कि रावणका नाना था, सेनामें प्रवेश करताहुआ और सर्व देवताओंको अनेक प्रकारके तीखे अस्त्र शस्त्रोंसे ॥ ३२ ॥ क्रुद्ध होकर विध्वंस करने लगा, जैसे पवन बादलोंको छिन्न भिन्न करताहै । हे राम ! वह देवसेना निशाचर करके हनी जाकर ॥३३॥ सिंहसे त्रासित मृगोंकी श्रेणीकी समान दशों दिशाओंको भागी । इसी समय शूर महावीर सावित्र नामक विख्यात अष्टमवसु संग्राममें आया ॥३४॥ वह हर्षितहो बहुतसी सेनाको संग लिये अनेक प्रकारके अस्त्र शस्त्र चलाय शत्रुओंकी सेनाको त्रासित करताहुआ संग्राममें आया ॥ ३५ ॥

भीमन्नारायण हैं; आपही करके यह समस्त लोक स्थापित हुएहैं और आपनेही हमको सुरपति कियाहै ॥ ११ ॥ हे भगवन् ! यह चराचर समस्त जगत् आप
नेही बनायाहै; युगक्षय होनेके समय फिर यह समस्त आपहीमें लीन होजायगा ॥ १२ ॥ इस कारण हे विभो ! हे देवदेव ! जिस प्रकारसे हमारी जयहो, आप
हमें वही उपाय बतादीजिये, या खड्ग व चक्र धारण करके आप स्वयंही युद्ध कीजिये ॥ १३ ॥ वह देव प्रभु नारायणजी इन्द्रके ऐसे वचन सुनकर बोले
अत्यन्त भय करना उचित नहीं, जो कुछ हम कहतेहैं वह सुनो ॥ १४ ॥ यह दुष्टस्वभाववाला रावण वरदानके प्रभावसे अजीत होगयाहै, इस कारण सुर या
असुरगण संग्राममें इसको कोईभी नहीं जीतसकेगा ॥१५॥ परन्तु हम यहभी देखतेहैं कि, यह रावण अतिबलवान होनेके कारण अपने पुत्रके सहित बडा क
करेगा॥१६॥ हे सुरेश्वर ! तुमने यह जो कहा कि "आप युद्ध कीजिये" सो इस समय हम रावणके साथ संग्राम न करेंगे ॥ १७ ॥ कारण कि, संग्राममें वि

त्वयासृष्टमिदंसर्वंत्रैलोक्यंसचराचरम् ॥ त्वामेवभगवन्सर्वंप्रविशंतियुगक्षये ॥ १२ ॥ तदाचक्ष्वयथातत्त्वंदेवदेवममस्वयम् ॥ असिचक्रसहाय
स्त्वंयोत्स्यसेरावणंप्रति ॥ १३ ॥ एवमुक्तःसशक्रेणदेवोनारायणःप्रभुः ॥ अब्रवीन्नपरित्रासःकर्तव्यःश्रूयतांचमे ॥ १४ ॥ नतावदेषदुष्टात्माश
क्योजेतुंसुरासुरैः ॥ हंतुंचापिसमासाद्यवरदानेनदुर्जयः ॥ १५ ॥ सर्वथातुमहत्कर्मकरिष्यतिबलोत्कटः ॥ राक्षसःपुत्रसहितोदृष्टमेतन्निसर्गतः
॥ १६ ॥ यत्तुमांत्वमभाषिष्ठायुध्यस्वेतिसुरेश्वर ॥ नाहंतंप्रतियोत्स्यामिरावणंराक्षसंयुधि ॥ १७ ॥ नाहत्वासमरेशत्रुंविष्णुःप्रतिनिवर्तते ॥
दुर्लभश्चैषकामोद्यवरगुप्ताद्धिरावणात् ॥ १८ ॥ प्रतिजानेचदेवेंद्रत्वत्समीपेशतक्रतो ॥ भवितास्मियथास्याहंरक्षसोमृत्युकारणम् ॥ १९ ॥ अह
मेवनिहंतास्मिरावणंसपुरःसरम् ॥ देवतानंदयिष्यामिज्ञात्वाकालमुपागतम् ॥ २० एतत्तेकथितंतत्त्वंदेवराजशचीपते ॥ युध्यस्वविगतज्वरः
सुरैःसार्धंमहाबल ॥ २१ ॥ ततोरुद्राःसहादित्यावसवोमरुतोऽश्विनौ ॥ सन्नद्धानिर्ययुस्तूर्णंराक्षसानभितःपुरात् ॥ २२ ॥

शत्रुका वध किये हम नहीं लौटते, और रावण वरदानके प्रभावसे रक्षितहै; सो आज उसके निकटसे कामना पूर्ण करना कठिनहै ॥ १८ ॥ हे श
कारी सुरपति ! हम जिस प्रकारसे इस राक्षसकी मृत्युके कारण होंगे, हम तुम्हारे निकट यह प्रतिज्ञा करतेहैं ॥ १९ ॥ आगे २ चल
मुख्य २ राक्षसोंके साथ रावणका हमही संहार करेंगे; जब जानेंगे कि समय आगया, तबहीं देवतोंको आनंदित करेंगे ॥ २० ॥ हे देवराज !
समस्त वृत्तान्त हमने तुमसे कहा, हे महाबलवान् शचीनाथ ! तुम त्रासरहितहो देवतोंको साथले युद्ध करो ॥ २१ ॥ इसके उपरान्त
ग्यारह रुद्र, बारह आदित्य, आठ वसु, उनचास मरुद्गण और दो अश्विनीकुमार बख्तर पहर पुरीसे निकल राक्षसोंके ऊपर दौडे ॥ २२ ॥

राक्षस बढती पाय परस्पर एक दूसरेको देख हर्षितहो संग्राममें विराजमान होनेलगे ॥ २४ ॥ तिसके पीछे संग्रामके सन्मुख उस अक्षय महासेनाको देखकर देवता ओंकी सेनामें खलबलाहट हुई ॥ २५ ॥ इसके उपरान्त विविध शस्त्रधारी देव राक्षस और दानवोंके शब्दसे युक्त भयानक संग्राम होना आरंभ हुआ ॥ २६ ॥ उसी अवसरमें घोरदर्शन वीर रावणके मंत्रिगण युद्ध करनेके लिये आये ॥ २७ ॥ मारीच प्रहस्त, महापार्श्व, महोदर, अकंपन, निकुंभ, शुक, सारण ॥ २८ ॥ संह्लाद, धूमकेतु, महोदर, जम्बुमाली, महाह्राद, विरूपाक्ष राक्षस ॥२९॥ सुतघ्न, यज्ञकोप, दुर्मुख, खर, त्रिशिरा, करवीराक्ष, सूर्यशत्रु राक्षस ॥ ३० ॥ महाकाय,

एतस्मिन्नंतरेनादःशुश्रावरजनीक्षये ॥ तस्यरावणसैन्यस्यप्रयुद्धस्यसमंततः ॥ २३ ॥ तेप्रवुद्धामहावीर्याअन्योन्यमभिवीक्ष्यवै ॥ संग्राममेवाभिमुखाअभ्यवर्ततहृष्टवत् ॥२४॥ ततोदेवतसैन्यानांसंक्षोभःसमजायत॥तदक्षयंमहासैन्यंदृष्ट्वासमरमूर्धनि॥२५॥ततोयुद्धंसमभवद्देवदानवरक्षसाम् ॥ घोरंतुमुलनिर्ह्रादंनानाप्रहरणोद्यतम् ॥ २६ ॥ एतस्मिन्नंतरेशूराराक्षसाघोरदर्शनाः ॥ युद्धार्थंसमवर्ततसचिवारावणस्यते ॥ २७ ॥ मारीचश्चप्रहस्तश्चमहापार्श्वमहोदरौ ॥ अकंपनोनिकुंभश्चशुकःसारणएवच ॥ २८ ॥ संह्लादोधूमकेतुश्चमहादंष्ट्रोघटोदरः ॥ जंबुमालीमहाह्लादोविरूपाक्षश्चराक्षसः ॥ २९ ॥ सुप्तघ्नोयज्ञकोपश्चदुर्मुखोदूषणःखरः ॥ त्रिशिराकरवीराक्षःसूर्यशत्रुश्चराक्षसः ॥३०॥ महाकायोतिकायश्चदेवांतकनरांतकौ ॥ एतैःसर्वैःपरिवृतोमहावीर्यैर्महाबलः ॥ ३१ ॥ रावणस्यार्यकःसैन्यंसुमालीप्रविवेशह ॥ सदैवतगणान्सर्वान्नानाप्रहरणैःशितैः ॥ ३२ ॥ व्यध्वंसयत्समंक्रुद्धोवायुर्जलधरानिव ॥ तद्देवतबलंरामहन्यमानंनिशाचरैः ॥ ३३ ॥ प्रणुन्नंसर्वतोदिग्भ्यःसिंहनुन्नामृगाइव ॥ एतस्मिन्नंतरेशूरोवसूनामष्टमोवसुः ॥ सावित्रइतिविख्यातःप्रविवेशरणाजिरम् ॥ ३४ ॥ सैन्यैःपरिवृतोहृष्टैर्नानाप्रहरणोद्यतैः ॥ त्रासयञ्छत्रुसैन्यानिप्रविवेशरणाजिरम् ॥३५॥

देवान्तक नारान्तक, इन सब महावीर्ययुक्त राक्षसोंको संग लेकर महाबलवान ॥ ३१ ॥ सुमाली, जो कि रावणका नाना था, सेनामें प्रवेश करताहुआ और सर्व देवताओंको अनेक प्रकारके तीखे अस्त्र शस्त्रोंसे ॥ ३२ ॥ क्रुद्ध होकर विध्वंस करने लगा, जैसे पवन बादलोंको छिन्न भिन्न करताहै । हे राम ! वह देवसेना निशाचर करके हनी जाकर ॥३३॥ सिंहसे त्रासित मृगोंकी श्रेणीकी समान दशों दिशाओंको भागी । इसी समय शूर महावीर सुचित्र नामक विख्यात अष्टमवसु संग्राममें आया ॥३४॥ वह हर्षितहो बहुतसी सेनाको संग लिये अनेक प्रकारके अस्त्र शस्त्र चलाय शत्रुओंकी सेनाको त्रासित करताहुआ संग्राममें आया ॥ ३५ ॥

और त्वष्टा व पूषा नामक महावीर्यवान् दो आदित्य निर्भयहो सेनाके सहित रणभूमिमें आये ॥ ३६ ॥ इसके उपरान्त देवता राक्षसोंकी कीर्तिको न सहन करके
रणसे विमुख न हो फिर उठकर संग्राम करने लगे ॥३७॥ तब राक्षसभी अनेक घोर अस्त्र शस्त्र चलाय २ संग्राममें स्थित हुए सैकड़ों हजारों देवताओंका संहार
करने लगे ॥ ३८ ॥ देवतालोगभी संग्राममें महावलवान् पराक्रमी राक्षसोंको विमल अस्त्रोंके घातसे यमराजके भवनको भेजने लगे ॥ ३९ ॥ हे राम ! इस अवसरमें
राक्षस सुमाली कोपकर अनेक प्रकारके अस्त्र शस्त्रसे सन्मुख धाया ॥ ४० ॥ पवन जिस प्रकार बादलोंके समूहको दूर कर देता है, वैसेही सुमालीभी गर्जनकारके
क्रोधके वशहो अनेक प्रकारके तीखे आयुधोंसे उस समस्त देवसेनाका विध्वंस करने लगा ॥ ४१ ॥ सब देव मिलकरभी महावाण वर्षाय, शूल, प्रास इत्यादि

ततोयुद्धंसमभवत्सुराणांसहराक्षसैः ॥ क्रुद्धानां रक्षसांकीर्तिसमरेष्वनिवर्तिनाम् ॥३७॥ ततस्तेराक्षसाःसर्वेविबुधान्समरेस्थितान् ॥ नानाप्रहरणैर्घोरैर्जघ्नुःशतसहस्रशः ॥ ३८ ॥ देवाश्चराक्षसा न्घोरान्महावलपराक्रमान् ॥ समरेविमलैःशस्त्रैरुपनिन्युर्यमक्षयम् ॥ ३९ ॥ एतस्मिन्नंतरेरामसुमालीनामराक्षसः ॥ नानाप्रहरणैःक्रुद्धस्तत्सैन्यं सोभ्यवर्तत ॥ ४० ॥ सदैवतवलंसर्वंनानाप्रहरणैःशितैः ॥ व्यध्वंसयतसंक्रुद्धोवायुर्जलधरंयथा ॥ ४१ ॥ तेमहावाणवर्षैश्चशूलप्रासैःसुदारुणैः ॥ हन्यमानाःसुराः सर्वेनव्यतिष्ठंतसंहताः ॥ ४२ ॥ ततोविद्राव्यमाणेषुदेवतेषुसुमालिना ॥ वसूनामष्टमःक्रुद्धःसावित्रोवैव्यवस्थितः ॥ ४३ ॥ संवृतःस्वैरथानीकैःप्रहरंतंनिशाचरम् ॥ विक्रमेणमहातेजावारयामाससंयुगे ॥ ४४ ॥ ततस्तयोर्महद्युद्धमभवल्लोमहर्षणम् ॥ सुमालिनोवसो श्चैवसमरेष्वनिवर्तिनोः ॥ ४५ ॥ ततस्तस्यमहावाणैर्वसुनासुमहात्मना ॥ निहतःपन्नगरथःक्षणेनविनिपातितः ॥ ४६ ॥ हत्वातुसंयुगेतस्य रथंवाणशतैश्चितम् ॥ गदांतस्यवधार्थायवसुर्जग्राहपाणिना ॥ ४७ ॥ ततःप्रगृह्यदीप्ताग्रांकालदंडोपमांगदाम् ॥ तांमूर्ध्निपातयामाससावित्रो वैसुमालिनः ॥ ४८ ॥

दारुण आयुधोंसे मार खाय संग्राममें ठहर न सके ॥ ४२ ॥ तब सुमालीने देवताओंकी सेनाको भगादिया; तब महातेजस्वी अष्टम वसु सावित्र कुपित हुए ॥४३॥
वह सावित्र सावधान और अपनी रथी सेनाको साथ ले पराक्रम प्रकाशकर राक्षस सुमालीके ऊपर प्रहार करते २ संग्राममें रोक देते हुए ॥४४॥ तब संग्राममें न लौटने
[illegible] और वसुका रोमहर्षण बडाभारी संग्राम होने लगा ॥ ४५ ॥ [illegible] बाण समूहको चलाकर उसका सर्प रथ नाशकर क्षणमात्रमें तोड
[illegible] रथका नाशकर उस राक्षसको [illegible] गदा ग्रहण की ॥ ४७ ॥ उस सावित्रने

गिरतेही वह उल्काकी समान प्रभायुक्त गदा राक्षसके मस्तकपर गिरकर दीप्तिमान् होने लगी ॥ ४९ ॥ गदाके लगनेसे उसका शरीर भस्म होगया; उस काल संग्राममें बीच उसकी अस्थि, मांस या मस्तक कुछभी दृष्टि नहीं आया ॥ ५० ॥ वे राक्षस उसको संग्राममें निहत देखकर सबही परस्पर गर्ज २ चारोंओरको भाग गये, अधिक क्या कहें वह वसुके प्रतापसे इधर उधर भाग गये और फिर वहाँपर नहीं ठहर सके ॥ ५१ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये उत्तरकांडे भाषाटीकायां सप्तविंशः सर्गः ॥ २७ ॥ सावित्र वसुके अस्त्रबलसे सुमालीको नष्ट और भस्म देखकर राक्षसोंकी सब

मानस्योपरिगोल्काभापतंतीविबभौगदा ॥ इंद्रप्रमुक्तागर्जंतीगिराविवमहाशनिः ॥ ४९ ॥ तस्यनैवास्थिनशिरोनमांसंददृशेतदा ॥ गदयाभस्मतांनीतंनिहतस्यरणाजिरे ॥ ५० ॥ तंदृष्ट्वानिहतंसंख्येराक्षसास्तेसमंततः ॥ व्यद्रवन्सहिताःसर्वेक्रोशमानाःपरस्परम् ॥ विद्राव्यमाणावसुनागक्षमानावतस्थिरे ॥५१॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी०आदि० उत्तरकांडे सप्तविंशः सर्गः ॥२७॥ सुमालिनंहतंदृष्ट्वावसुनाभस्मसात्कृतम् ॥ स्वसैन्यंविद्रुतंचापिलक्षयित्वार्दितंसुरैः ॥ १ ॥ ततःस्वबलवान्क्रुद्धोरावणस्यसुतस्तदा ॥ निवर्त्यराक्षसान्सर्वान्मेघनादोव्यवस्थितः ॥ २ ॥ सरथेनमहार्हेणकामगेनमहारथः ॥ अभिदुद्रावसेनांतांवनान्यग्निरिवज्वलन् ॥ ३ ॥ ततःप्रविशतस्तस्यविविधायुधधारिणः ॥ विदुद्रुवुर्दिशःसर्वादर्शनादेवदेवताः ॥ ४ ॥ नबभूवतदाकश्चिद्युयुत्सोरस्यसंमुखे ॥ सर्वानाविध्यवित्रस्तांस्ततःशक्रोब्रवीत्सुरान् ॥ ५ ॥ नभेतव्यंनगंतव्यंनिवर्तध्वंरणेसुराः ॥ एषगच्छतिपुत्रोमेयुद्धार्थमपराजितः ॥ ६ ॥ ततःशक्रसुतोदेवोजयंतइतिविश्रुतः ॥ रथेनाद्भुतकल्पेनसंग्राममभ्यवर्तत ॥ ७ ॥

सेना देवताओंसे पीडित होकर भाग गई ॥ १ ॥ रावणका पुत्र बलवान् मेघनाद यह देखकर कुपितहो समस्त राक्षसोंको लौटाय आप युद्ध करनेको उद्यत हुआ ॥ २ ॥ अग्नि प्रज्वलित होकर जिसप्रकार वनकी ओर चलती है वैसेही वह महारथी मेघनाद कामगामी बडेभारी रथपर सवार होकर उस सेनाके सन्मुख दौड़ा ॥ ३ ॥ विविध प्रकारके अस्त्र शस्त्र धारण किये राक्षसोंको प्रवेशित होते देखकर सब देवता चारोंओरको भागने लगे ॥ ४ ॥ अधिक कहांतक कहें उस समय संग्राम करते हुए उस मेघनादके सामने कोईभी नहीं टिक सका। जब सब देवता विद्ध होकर त्रासित होगये तब इन्द्रजीने उनसे कहा ॥ ५ ॥ हे सब देवगण! डरो मत नहीं तुम लोग लौटो भागो मत कभी न हारनेवाला हमारा पुत्र संग्राम करनेके लिये जाताहै ॥ ६ ॥ फिर वह इन्द्रकुमार देव जयन्त अद्भुत रथपर सवार होकर

संग्रामके सन्मुख चला ॥ ७ ॥ तब वह समस्त देवता इन्द्रके पुत्रको साथ लेकर रावणकुमार मेघनादके निकट जाय उसपर प्रहार करनेलगे ॥ ८ ॥ इन्द्रकुमार जयन्त और राक्षसकुमार मेघनादका देवता व राक्षसोंका बल वीर्य अनुरूप संग्राम होने लगा ॥ ९ ॥ फिर वह रावणका पुत्र मेघनाद जयन्तके सारथी मातलिपुत्र गोमुखके ऊपर सुवर्ण भूषित बाण छोडने लगा ॥ १० ॥ शचीका पुत्र जयन्तभी क्रोध करके रावण पुत्रके सारथीको बाणोंसे विद्ध करने लगा ॥ ११ ॥ रावणिभी क्रोधसे परिपूर्णहो आँखें निकाल बाणोंकी वर्षा कर इन्द्रके पुत्रको पीडित करने लगा ॥१२॥ फिर मेघनाद अत्यन्त कोपकर अनेक प्रकारके तीखे हजारों अस्त्र शस्त्र देवताओंकी सेनाके ऊपर चलाने लगा ॥ १३ ॥ शतघ्नी, मूशल, प्रास, गदा, खड्ग, फरशा और बडे २ पर्वतोंके शिखरभी उस सेनाके ऊपर छोडे ॥

ततस्तेत्रिदशाःसर्वेपरिवार्यशचीसुतम् ॥ रावणस्यसुतंयुद्धेसमासाद्यप्रजघ्निरे ॥ ८ ॥ तेषांयुद्धंसमभवत्सदृशंदेवरक्षसाम् ॥ महेंद्रस्यचपुत्रस्य राक्षसेंद्रसुतस्यच ॥ ९ ॥ ततोमातलिपुत्रस्यगोमुखस्यसरावणिः ॥ सारथेःपातयामासशरान्कनकभूषणान् ॥ १० ॥ शचीसुतश्चापितथाज यंतस्तस्यसारथिम् ॥ तंचापिरावणिःक्रुद्धःसमंतात्प्रत्यविध्यत ॥ ११ ॥ सहिक्रोधसमाविष्टोबलीविस्फारितेक्षणः ॥ रावणिःशक्रतनयंशरवर्षै रवाकिरत् ॥ १२ ॥ ततोनानाप्रहरणाञ्छितधारान्सहस्रशः ॥ पातयामाससक्रुद्धःसुरसैन्येपुरावणिः ॥ १३ ॥ शतघ्नीमुसलप्रासगदाखड्गपरश्व धान् ॥ महांतिगिरिशृंगाणिपातयामासरावणिः ॥ १४ ॥ ततःप्रव्यथितालोकाःसंजज्ञेचतमस्ततः ॥ तस्यरावणपुत्रस्यशत्रुसैन्यानिनिघ्नतः ॥ ॥ १५ ॥ ततस्तद्दैवतबलंसमंतात्तंशचीसुतम् ॥ वहुप्रकारमस्वस्थमभवच्छरपीडितम् ॥ १६ ॥ नाभ्यजानंतचान्योन्यंरक्षोवादेवताथवा ॥ तत्र तत्रविपर्यस्तंसमंतात्परिधावत ॥ १७ ॥ देवादेवान्निजघ्नुस्तेराक्षसान्राक्षसास्तथा ॥ संमूढास्तमसाच्छन्नाव्यद्रवन्नपरेतथा ॥ १८ ॥ एतस्मिन्नं तरेवीरःपुलोमानामवीर्यवान् ॥ दैत्येंद्रस्तेनसंगृह्यशचीपुत्रोपवाहितः ॥ १९ ॥

॥ १४ ॥ वह रावणका पुत्र मेघनाद इस प्रकारसे शत्रुओंकी सेनाके ऊपर प्रहार कर रहाथा उसी अवसरमें उसकी मायासे अंधकार हो आया कि, जिससे त्रिलोक वासी समस्त प्रजा अति घबड़ाई ॥ १५ ॥ तब देवताओंकी सेना चारोंओरसे पीडितहो इन्द्रके पुत्र जयन्तको छोड व्याकुल होगई ॥ १६ ॥ राक्षस या देवता परस्पर कोईभी किसीको उस समय नहीं जानसके वह घबडाते हुए चारोंओर घूमने लगे ॥१७॥ वरन् देवता देवतोंको राक्षस राक्षसोंको मारने लगे व और वीरलोग अन्धकारसे घबडाय अत्यन्त मूढहो भागगये ॥ १८ ॥ इसी अवसरमें वीर्यवान और [illegible] के पुत्र जयन्तको ग्रहणकर भाग गया ॥ १९ ॥

हुए ३ र ी र व्यथा पाय सबही भाग खडे हुए ॥ २१ ॥ फिर रावणका पुत्र मेघनाद अपनी सेनाको साथ ले क्रोधके वशहो घोर शब्द करता हुआ देवतोंके पीछे दौडा ॥ २२ ॥ पुत्रके न देखनेसे और देवतोंको भागता हुआ देखकर देवराज इन्द्रने मातलिसे कहा, कि हमारा रथ लाओ ॥ २३ ॥ यह दिव्य महारथ सजाया जारहाथा, इस समय देवराज इन्द्रजीकी आज्ञासे मातलि वह महाभयंकर रथ शीघ्र ले आया ॥२४॥ जब महाबलवान् इन्द्र रथपर चढा तब बिजलीसे शोभायमान महाबलवान् मेघगण पवनके आश्रयसे आगे २ चलकर घोर शोरसे उस रथपर शब्द करने लगे ॥ २५ ॥ जब इन्द्रजी पुरीसे बाहर निकले तब

संगृह्यतंतुदौहित्रंप्रविष्टःसागरंतदा ॥ आर्यकःसहितस्यासीत्पुलोमायेनसाशची ॥२०॥ ज्ञात्वाप्रणाशंतुतदाजयंतस्याथदेवताः ॥ अप्रहृष्टास्ततः सर्वाव्यथिताःसंप्रदुद्रुवुः ॥ २१ ॥ रावणिस्त्वथसंक्रुद्धोबलैःपरिवृतःस्वकैः ॥ अभ्यधावतदेवांस्तान्मुमोचचमहास्वनम् ॥ २२ ॥ दृष्ट्वाप्रणाशंपुत्रस्यदेवतेषुचविद्रुतम ॥ मातलिंचाहदेवेशोरथःसमुपनीयताम् ॥२३॥ सतुदिव्योमहाभीमःसज्जएवमहारथः ॥ उपस्थितोमातलिनावाह्यमानोमहाजवः ॥२४॥ ततोमेघारथेतस्मिंस्तडित्वंतोमहाबलाः ॥ अग्रतोवायुचपलानेदुःपरमनिस्वनाः ॥२५॥ नानावाद्यानिवाद्यंतगंधर्वाश्चसमाहिताः ॥ ननृतुश्चाप्सरःसंघानिर्यातेत्रिदशेश्वरे ॥२६॥ रुद्रैर्वसुभिरादित्यैरश्विभ्यांसमरुद्गणैः ॥ वृतोनानाप्रहरणैर्निययौत्रिदशाधिपः ॥२७॥ निर्गच्छतस्तु शक्रस्यपरुषःपवनोववौ ॥ भास्करोनिष्प्रभश्चैवमहोल्काश्चप्रपेदिरे ॥२८॥ एतस्मिन्नंतरेशूरोदशग्रीवःप्रतापवान् ॥ आरुरोहरथंदिव्यंनिर्मितंविश्वकर्मणा ॥ २९ ॥ पन्नगैःसुमहाकायैर्वेष्टितंलोमहर्षणैः ॥ येषांनिःश्वासवातेनप्रदीप्तमिवसंयुगे ॥ ३० ॥ दैत्यैर्निशाचरैश्चैवसरथःपरिवारितः ॥ समराभिमुखोदिव्योमहेंद्रंसोभ्यवर्तत ॥ ३१ ॥ पुत्रंतंवारयित्वातुस्वयमेवव्यवस्थितः ॥ सोपियुद्धाद्विनिष्क्रम्यरावणिःसमुपाविशत् ॥ ३२ ॥

गन्धर्वगण अनेक प्रकारके बाजे बजाने लगे और अप्सरायें नाचने लगीं ॥२६॥ तब स्वर्गके पति इन्द्रजी, रुद्रगण, वसुगण, आदित्यगण, मरुद्गण और दोनों अश्विनीकुमारोंके साथ विविध प्रकारके अस्त्र शस्त्र ग्रहणकर युद्ध करनेके लिये निकले ॥ २७ ॥ जब रावणसे इन्द्रजी युद्ध करनेके लिये निकले तब पवन कठोरतासे चलने लगा, सूर्यकी प्रभा जाती रही और बडी २ उल्का गिरने लगीं ॥२८॥ इसी अवसरमें प्रतापवान् शूर रावण विश्वकर्माके बनाये दिव्य रथपर सवार हुआ ॥२९॥ उस रथके चारोंओर रोमहर्षण बडे २ सर्प लिपटेथे इसीलिये वह रथ युद्धके समय उनके श्वासकी पवनसे प्रदीप्त हो गया ॥ ३० ॥ दैत्य और राक्षसोंकी सेनाके साथ दिव्य रथपर सवारहो इन्द्रजीके सन्मुख धाया ॥३१॥ और अपने पुत्र मेघनादको रोककर आपही संग्राम करने लगा, रावणका पुत्रभी युद्धसे निकलकर

चुप हो अलग वैठ गया ॥ ३२ ॥ इसके उपरान्त मेघ जिसप्रकार जल बर्षाया करते हैं वैसेही अस्त्र शस्त्र वर्षायकर राक्षस और देवता युद्ध करने लगे ॥ ३३ ॥ हे राजन् ! दुरात्मा कुम्भकर्ण भी बहुत कालतक निद्रित रह संग्रामभूमिमें आया, उसको उस समय यह नहीं ज्ञात होता था कि, किसके साथ युद्ध हो रहाथा वह जिसको निकट पाने लगा विविध भाँतिके आयुध उठाय उसीसे युद्ध करने लगा ॥ ३४ ॥ कुम्भकर्ण अत्यन्त क्रोधकर दांत, चरण, भुजा, हस्त, शक्ति, तोमर, मुद्गर और जिस आयुधको पाया उसीसे देवतोंको भगाने लगा ॥३५॥ परन्तु वह निशाचर कुम्भकर्ण महाघोर ग्यारह रुद्रोंके निकट जाय उनके साथ घोर संग्राम करने लगा परन्तु रुद्रोंने निरन्तर बाणोंकी वर्षा करके कुम्भकर्णके सर्वाङ्गमें घावकर डाले ॥ ३६ ॥ फिर मरुद्गणोंके साथ उस राक्षसी सेनाका घोर संग्राम आरंभ हुआ, उन मरुद्गणोंने अनेक प्रकारके अस्त्र शस्त्रोंसे समस्त राक्षसोंकी सेनाको भगादिया ॥ ३७ ॥ कोई २ राक्षस मरगये कोई २ अंग कटाय २ पृथ्वीपर पडे तड

ततोयुद्धंप्रवृत्तंतुसुराणांराक्षसैःसह ॥ शस्त्राणिवर्षतांतेपांमेघानामिवसंयुगे॥३३॥ कुंभकर्णस्तुदुष्टात्मानानाप्रहरणोद्यतः॥ नाज्ञायततदाराजन्युद्धंके नाभ्यपद्यत ॥३४॥ दंतैःपादैर्भुजैर्हस्तैःशक्तितोमरमुद्गरैः॥ येनतेनैवसंक्रुद्धस्ताडयामासदेवताः॥३५॥ सतुरुद्रैर्महाघोरैःसंगम्याथनिशाचरः॥प्रयुद्ध स्तैश्चसंग्रामेक्षतःशस्त्रैर्निरंतरम्॥३६॥ ततस्तद्राक्षसंसैन्यंप्रयुद्धंसमरुद्गणैः॥रणेविद्रावितंसर्वंनानाप्रहरणैस्तदा॥३७॥ केचिद्विनिहताःकृत्ताश्चेष्टंति स्ममहीतले॥ वाहनेष्ववसक्ताश्चस्थिताएवापरेरणे॥३८॥रथान्नागान्खरानुष्ट्रान्पन्नगांस्तुरगांस्तथा॥ शिशुमारान्वराहांश्चपिशाचवदनानपि॥३९॥ तान्समालिंग्यबाहुभ्यांविष्टब्धाःकेचिदुत्थिताः ॥ देवैस्तुशस्त्रसंभिन्नाममिरेचनिशाचराः ॥४०॥ चित्रकर्मइवाभातिसर्वेषांरणसंप्लवः ॥ निहतानां प्रसुतानांराक्षसानांमहीतले ॥४१॥ शोणितोदकनिष्पंदाकाकगृध्रसमाकुला॥प्रवृत्तासंयुगमुखेशस्त्रग्राहवतीनदी॥४२॥ एतस्मिन्नंतरेक्रुद्धोदशग्रीवः प्रतापवान्॥ निरीक्ष्यतुबलंसर्वंदैवतैर्विनिपातितम् ॥४३॥ सतंप्रतिविगाह्याशुप्रवृद्धंसैन्यसागरम् ॥ त्रिदशान्समरेनिघ्नञ्शक्रमेवाभ्यवर्तत ॥४४॥

फडाने लगे और कोई २ मूर्च्छाके वशहो सवारियोंसे गिरकर भी उन्हींमें लिपटे रहे ॥ ३८ ॥ कोई रथ, कोई हाथी, कोई गधे, कोई ऊंट, कोई सर्प, कोई घोडे, कोई शिशुमार, कोई वराह, कोई पिशाच वदनोंको ॥ ३९ ॥ बाहोंसे पकड २ लिपटाय २ पडे रहे और कोई २ अर्द्ध मूर्च्छितहोकर पडे रहे व और निशाचर देवताओंसे देह कटाय २ प्राण त्याग करते हुए ॥ ४० ॥ वह राक्षसगण जब मरकर पृथ्वीपर गिर पडे तब संग्राममें उनका यह मारा जाना चित्रकार्यकी समान प्रकाशित होने लगा ॥४१॥ उस काल संग्राममें काग और गिद्धोंसे शोभायमान नदी बहने लगी, सब शस्त्रही तो उसमें ग्राह थे और रुधिरही उसका जल था उसही जलकी तरंगमें मृत उछलने डूबने लगे ॥ ४२ ॥ अत्यन्त प्रतापशाली रावण देवतोंसे अपनी सेनाका नाश देख ॥ ४३ ॥ अति शीघ्रतासे उस बढते हुए देव

बाण रावणके मस्तकपर मारने लगे ॥ ४६ ॥ महावीर दशग्रीव निशाचरभी इसी भाँतिसे अपने धनुषपर बाण चढाय छोडकर इन्द्रको ढाकता हुआ ॥ ४७ ॥ घोर बाण वर्षाय जब दोनों इस प्रकारसे निरन्तर युद्ध करते रहे तब चारोंओर अन्धकार छायगया इस कारण उस समय कुछभी दृष्टि न आया ॥ ४८ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा०वाल्मी आदि० उत्तरकांडे भाषाटीकायामष्टाविंशः सर्गः ॥ २८ ॥ जब अन्धकार छाया तो वह समस्त देवता और राक्षस बलसे मतवाले हो

ततःशक्रोमहच्चापंविस्फार्यसुमहास्वनम् ॥ यस्यविस्फारनिर्घोषैःस्तनंतिस्मदिशोदश ॥ ४५ ॥ तद्विकृष्यमहच्चापमिंद्रोरावणमूर्धनि ॥ पातयामाससशरान्पावकादित्यवर्चसः ॥ ४६ ॥ तथैवचमहाबाहुर्दशग्रीवोनिशाचरः ॥ शक्रंकार्मुकविभ्रष्टैःशरवर्षैरवाकिरत् ॥ ४७ ॥ प्रयुध्यतोरथतयोर्बाणवर्षैःसमंततः ॥ नाज्ञायततदाकिंचित्सर्वंहितमसावृतम् ॥४८॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे अष्टाविंशः सर्गः ॥ २८ ॥ ततस्तमसिसंजातेसर्वेतेदेवराक्षसाः ॥ आयुध्यंतबलोन्मत्ताःसूदयंतःपरस्परम् ॥ १ ॥ इंद्रश्चरावणश्चैवरावणिश्चमहाबलः ॥ तस्मिंस्तमोजालवृतेमोहमीयुर्नतेत्रयः ॥ २ ॥ सतुदृष्ट्वाबलंसर्वंरावणोनिहतंक्षणात् ॥ क्रोधमभ्यगमत्तीव्रंमहानादंचमुक्तवान् ॥ ३ ॥ क्रोधात्सूतंचदुर्धर्षःस्यंदनस्थमुवाचह ॥ परसैन्यस्यमध्येनयावदंतोनयस्वमाम् ॥४॥ अद्यैतान्त्रिदशान्सर्वान्विक्रमैःसमरेस्वयम् ॥ नानाशस्त्रमहासारैर्नयामियमसादनम् ॥ ५ ॥ अहमिंद्रंवधिष्यामिधनदंवरुणंयमम् ॥ त्रिदशान्विनिहत्याशुस्वयंस्थास्याम्यथोपरि ॥ ६ ॥ विषादोनैवकर्तव्यःशीघ्रंवाहयमेरथम् ॥ द्विःखलुत्वांब्रवीम्यद्ययावदंतंनयस्वमाम् ॥ ७ ॥

परस्पर एक दूसरेको पीडित करते हुए कठोर संग्राम करने लगे ॥१॥ उस महाघोर अन्धकारसे केवल इन्द्र, रावण और मेघनाद यह तीनों जने ही मोहको प्राप्त नहीं हुए ॥ २ ॥ एक क्षणभरमेंही अपनी समस्त सेनाका नाश देखकर रावण अत्यन्त क्रोधित हुआ और अति ऊँचे शब्दसे सिंहनाद करने लगा ॥ ३ ॥ तब रावण अधिक क्रोधके मारे रथ हांकते हुए सूतसे बोला कि, जबतक शत्रुकी सेनाका अंत न आवै तबतक इस सेनाके बीचके मार्गसे तू हमको ले चल ॥ ४ ॥ हम इसी समय अनेक प्रकारके सब अस्त्र शस्त्र वर्षायकर सब देवताओंको यमराजके यहां भेजेंगे ॥ ५ ॥ हम इन्द्र, कुबेर; वरुण और यमको मार डालेंगे, अधिक क्या कहें, हम अतिशीघ्र देवतोंका विनाश करके स्वयं सबके ऊपर स्वामी हो विराजेंगे ॥ ६ ॥ विषाद न करके शीघ्र हमारा रथ चलाओ, हमने तुमसे दो

वार कहा कि तुम हमको शत्रुकी सेनाके सबसे पीछे ले चलो ॥ ७ ॥ इस समय हम जिस स्थानमें टिके हुएहैं यह नन्दनका एक देश है, जिस स्थानमें उदय पर्वत है हमको तुम वहीं ले चलो ॥ ८ ॥ निशाचरराज रावणके यह वचन सुनकर सारथीने शत्रुओंके बीचमेंको मनके वेगके समान चलनेवाले घोडोंको हांका ॥ ॥ ९ ॥ तब समरभूमिमें विराजमान हुए देवराज इन्द्रजीने रावणके इस अभिप्रायको जान रथमें बैठेहुए ही देवतोंसे कहा ॥ १० ॥ हे देवताओ ! तुम हमारे वचन सुनो कि, तुम सब मिलकर राक्षस रावणको जीता हुआही पकडलो, हमें यही बात रुचतीहै ॥ ११ ॥ कारण कि, अधिक सेनाके रहनेसे यह राक्षस अति बलवानहै सो पर्वके समय जिसप्रकार समुद्र उछलताहै वैसेही पवनकी समान चलने वाले रथपर सवार होकर यह आय रहाहै ॥ १२ ॥ विशेष करके यह राक्षस वरदान पानेसे निर्भय होगयाहै सो इसका मारडालना सामर्थ्यसे बाहरहै इस निमित्त तुम संग्राममें यत्नपरायणहो ऐसा करनेसे हम इस राक्षसको बंदी करदेंगे ॥ १३ ॥ बल्कि बंधजानेपर जिसप्रकार हमने त्रिभुवनका भोग कियाहै, वैसेही त्रिभुवनकी रक्षाके लिये इस पापमति रावणका बंदी करना हमको रुचताहै ॥ १४ ॥ हे महाराज ! यह कह देवराज इन्द्र रावणको छोडकर और स्थानमें जाय राक्षसोंको त्रासित करतेहुए युद्ध करने लगे ॥ १५ ॥ न लौटनेवाला रावण देवताओंकी सेनाको उत्तर बगलमें रखकर चला और इन्द्रजीभी उसकी दाहिं ओरका आश्रय लेकर सेनामें प्रवेश करतेहुए ॥ १६ ॥ तिसके उपरान्त निशाचरनाथ रावण उस सेनामें सौ योजनतक पैठगया और वहां उसने बाण वर्षायकर समस्त देवताओंकी सेनाको छाय दिया ॥ १७ ॥ तब इन्द्रजीने अपनी सेनाका विनाश देख तुरंत लौटकर सावधान चित्तसे रावणको रोका ॥ १८ ॥ एक क्षणभरमेंही इन्द्रजीने रावणको घेर लिया यह देखकर दानव और राक्षस लोग हा ! "हम मारे गये" यह कह महा चिल्लाहट करने लगे ॥ १९ ॥

अयंसनंदनोदेशोयत्रवर्तामहेवयम् ॥ नयमामद्यतत्रत्वमुदयोयत्रपर्वतः ॥ ८ ॥ तस्यतद्वचनंश्रुत्वातुरगान्समनोजवान् ॥ आदिदेशाथशत्रूणांमध्येनैवचसारथिः ॥ ९ ॥ तस्यतंनिश्चयंज्ञात्वाशक्रोदेवेश्वरस्तदा ॥ रथस्थःसमरस्थस्तान्देवान्वाक्यमथाब्रवीत् ॥ १० ॥ सुराःशृणुतमद्वाक्यंयत्तावन्ममरोचते ॥ जीवन्नेवदशग्रीवःसाधुरक्षोनिगृह्यताम् ॥ ११ ॥ एषह्यतिबलःसैन्येरथेनपवनोजसा ॥ गमिष्यतिप्रवृद्धोर्मिःसमुद्रइवपर्वणि ॥ १२ ॥ नह्येषहंतुंशक्योद्यवरदानात्सुनिर्भयः ॥ तद्ग्रहीष्यामहेरक्षोयत्ताभवतसंयुगे ॥ १३ ॥ यथाबलौनिरुद्धेचत्रैलोक्यंभुज्यतेमया ॥ एवमेतस्यपापस्यनिरोधोममरोचते ॥ १४ ॥ ततोन्यंदेशमास्थायशक्रःसंत्यज्यरावणम् ॥ अयुध्यतमहाराजराक्षसांस्त्रासयन्रणे ॥ १५ ॥ उत्तरेणदशग्रीवःप्रविवेशानिवर्तकः ॥ दक्षिणेनतुपार्श्वेनप्रविवेशशतक्रतुः ॥ १६ ॥ ततःसयोजनशतंप्रविष्टोराक्षसाधिपः ॥ देवतानांबलंसर्वंशरवर्षैरवाकिरत् ॥ १७ ॥ ततःशक्रोनिरीक्ष्याथप्रनष्टंतुस्वकंबलम् ॥ न्यवर्तयदसंभ्रांतःसमावृत्यदशाननम् ॥ १८ ॥ एतस्मिन्नंतरेनादोमुक्तोदानवराक्षसैः ॥ हाहताःस्मइतिग्रस्तंदृष्ट्वाशक्रेणरावणम् ॥ १९ ॥

पाईथी वह उसी मायाको प्रगटकर देवताओंकी अनीमें पैठ उसको पीडित करनेलगा ॥ २१ ॥ अधिक क्या कहैं वह समस्त देवताओंको छोडकर एक इ
हीके पीछे दौडा, परन्तु महातेजस्वी इन्द्रजीने उस शत्रुके पुत्रको देखाभी नहीं ॥ २२ ॥ मेघनाद उस समय कवच नहीं पहरे रहाथा देवता उसके ऊपर
प्रकारके अस्त्र शस्त्र चलाने लगे, परन्तु किसी प्रकारसे मेघनादको भय नहीं हुआ ॥ २३ ॥ प्रथमतो उस मेघनादने उत्तम बाणोंसे रथ हाँकतेहुए मातलिको
और फिर बाण वर्षायकर इन्द्रको पीडित किया ॥ २४ ॥ इसके पीछे इन्द्र रथ और सारथिको छोडकर ऐरावतपर सवारहो रावणके पुत्रको ढूँढने लगा ॥ २५ ॥
उस समयमें वह महाबलवान मेघनाद आकाशमें अदृश्यहो मायासे ढकेहुए इन्द्रको बाणोंसे व्याकुल करने लगा ॥ २६ ॥ जब रावणके पुत्रने इन्द्रको थका

ततोरथंसमास्थायरावणिःक्रोधमूर्च्छितः ॥ तत्सैन्यमतिसंक्रुद्धःप्रविवेशसुदारुणम् ॥२०॥ तांप्रविश्यमहामायांप्रातांपशुपतेःपुरा ॥ प्रविवेशसु
रथस्तत्सैन्यंसमभिद्रवत् ॥२१॥ ससर्वादेवतास्त्यक्त्वाशक्रमेवाभ्यधावत ॥ महेंद्रश्चमहातेजानापश्यच्चसुतंरिपोः ॥ २२ ॥ विमुक्तकवचस्तत्र
ध्यमानोपिरावणिः ॥ त्रिदशैःसुमहावीर्यैर्नचकारचकिंचन ॥ २३ ॥ समातलिंसमायांतंताडयित्वाशरोत्तमैः ॥ महेंद्रंबाणवर्षेणभूयएवाभ्य
किरत् ॥२४॥ ततस्त्यक्त्वारथंशक्रोविससर्जचसारथिम् ॥ ऐरावतंसमारुह्यमृगयामासरावणिम् ॥२५॥ सतत्रमायाबलवानदृश्योऽथांतरिक्षगः ॥
इंद्रंमायापरिक्षिप्तंकृत्वासप्राद्रवच्छरैः ॥२६॥ सतंयदापरिश्रांतमिंद्रंजज्ञेथरावणिः ॥ तदेनंमाययाबद्ध्वास्वसैन्यमभितोनयत् ॥ २७ ॥ तंतुदृष्ट्वा
बलात्तेननीयमानंमहारणात् ॥ महेंद्रममराःसर्वेकिंनुस्यादित्यचिंतयन् ॥२८॥ दृश्यतेनसमायावीशक्रजित्समितिंजयः ॥ विद्यावानपियेनेंद्रः
माययाऽपहृतोबलात्॥२९॥एतस्मिन्नंतरेक्रुद्धाःसर्वेसुरगणास्तदा ॥ रावणंविमुखीकृत्यशरवर्षैरवाकिरन् ॥३०॥ रावणस्तुसमासाद्यआदित्यांश्च
सूंस्तदा ॥ नशशाकससंग्रामेयोद्धुंशत्रुभिरर्दितः॥३१॥सतंदृष्ट्वापरिम्लानंप्रहारैर्जर्जरीकृतम् ॥ रावणिःपितरंयुद्धेऽदर्शनस्थोब्रवीदिदम् ॥ ३२ ॥

जाना तब उनको अपनी मायाके प्रभावसे बांधकर अपनी सेनाके निकट ले आया ॥ २७ ॥ जब बलपूर्वक महासंग्रामसे मेघनाद इन्द्रको बांधकर ले चला तब
देखकर देवता "यह क्या हुआ" यह कहकर चिन्ता करने लगे ॥ २८ ॥ रणविजयी मायाका जाननेवाला मेघनाद किसीकी दृष्टि न आया. यद्यपि इन्द्र
अनेक प्रकारकी माया जानतेथे तथापि इन्द्रजीत उनको बलपूर्वक हरण करके लेगया ॥ २९ ॥ इसी अवसरमें समस्त देवताओंने कुपितहो बाणोंकी व
रावणको व्याकुल कर उसको रणसे विमुख करदिया ॥ ३० ॥ तिस कालमें शत्रुओं करके संग्राममें पीडित होकर रावण वसुगण और आदित्योंके साथ युद्ध
नेको समर्थ नहीं हुआ ॥ ३१ ॥ रावण मारे प्रहारोंके जर्जरतनुहो संग्राममें अत्यन्त थकगया; तब रावणका पुत्र मेघनाद पिताकी यह दशा देख अन्तर्धा

रहकर बोला कि ॥ ३२ ॥ हे तात! हम लोगोंकी जय हुई है आप यह जान करके क्लेशको छोड सावधान हूजिये, अब रण समाप्त हुआ चलो गृहको चलें ॥ ॥ ३३ ॥ विशेष करके जो देवताओंकी सेनाके, वरन् त्रिलोकीके स्वामीहैं उनको हमने देवताओंकी सेनासे पकड रक्खाहै, सो अब देवताओंका गर्व सर्व होगया ॥ ॥ ३४ ॥ तेजके बलसे शत्रुको जीतकर आप अभिलापानुसार त्रिभुवनके सुखोंको भोगिये अब युद्ध करना निष्फलहै सो अब आपको वृथा परिश्रम करनेका क्या प्रयोजन है? ॥ ३५ ॥ तब गणदेवता और देवता रावणके पुत्रके यह वचन सुन इन्द्रसे रहित हो चले गये ॥ ३६ ॥ अत्यन्त बलवान् इन्द्रशत्रु विख्यात निशाचरपति रावण अपने पुत्रके ऐसे प्रिय वचन सुन रणसे लौट आदरसहित पुत्रसे बोला ॥ ३७ ॥ हे बेटा! अतिबली पुरुषकी समान पराक्रम प्रगट करके इस अतु

आगच्छताततगच्छामोरणकर्मनिवर्तताम् ॥ जितंनोविदितंतेऽस्तुस्वस्थोभवगतज्वरः ॥ ३३ ॥ अयंहिसुरसैन्यस्यत्रैलोक्यस्यचयःप्रभुः ॥ सगृहीतोदेवबलाद्भग्नदर्पाःसुराःकृताः ॥ ३४ ॥ यथेष्टंभुंक्ष्वलोकांस्त्रीन्निगृह्यारातिमोजसा ॥ वृथाकिंतेश्रमेणेहयुद्धमद्यतुनिष्फलम् ॥ ३५ ॥ ततस्तेदैवतगणानिवृत्तारणकर्मणः ॥ तच्छ्रुत्वारावणेर्वाक्यंशक्रहीनाःसुरागताः ॥ ३६ ॥ अथसरणविगतमुत्तमोजास्त्रिदशरिपुःप्रथितोनिशाचरेंद्रः ॥ स्वसुतवचनमादृतःप्रियंतत्समनुनिशम्यजगादचैवसूनुम् ॥ ३७ ॥ अतिबलसदृशैःपराक्रमैस्त्वंममकुलवंशविवर्धनःप्रभो ॥ यदयमतुलबलस्त्वयाद्यनैत्रिदशपतिस्त्रिदशाश्चनिर्जिताः ॥ ३८ ॥ नयरथमधिरोप्यवासवंनगरमितोव्रजसेनयावृतस्त्वम् ॥ अहमपितवपृष्ठतोद्रुतंसहसचिवैरनुयामिहृष्टवत् ॥ ३९ ॥ अथसबलवृतःसवाहनस्त्रिदशपतिंपरिगृह्यरावणिः ॥ स्वभवनमधिगम्यवीर्यवान्कृतसमरान्विससर्जराक्षसान् ॥ ॥४० इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांड एकोनत्रिंशःसर्गः ॥ २९ ॥ जितेमहेंद्रेऽतिबलेरावणस्यसुतेनवै ॥ प्रजापतिंपुरस्कृत्यययुर्लंकांसुरास्तदा ॥ १ ॥ तत्ररावणमासाद्यपुत्रभ्रातृभिरावृतम् ॥ अब्रवीद्गगनेतिष्ठन्सामपूर्वंप्रजापतिः ॥ २ ॥

लबलशाली स्वर्गपति इन्द्रको और देवताओंको तुमने आज पराजित किया है, इस कारण तुमहीं हमारे वंशके बढानेवाले और कुलके बढानेवाले हो ॥ ३८ ॥ तुम सेनाके साथ इस स्थानसे अपने नगरको चलेजाओ और इंद्रको रथपर चढाय लेजाओ, हमभी हर्षित हो मंत्रियोंके साथ अति शीघ्र तुम्हारे पीछे २ आते हैं॥ ॥ ३९ ॥ इसके उपरान्त वीर्यवान् रावणका पुत्र मेघनाद स्वर्गपति इन्द्रको ग्रहणकर सेना और वाहनोंके सहित अपने गृहमें जाय संग्राम करनेवाले राक्षसोंको अपने गृहमें जानेके लिये बिदा देता हुआ ॥ ४० ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्ये उत्तरकांडे भाषाटीकायामेकोनत्रिंशः सर्गः ॥ २९ ॥ जब रावणके पुत्र मेघनादसे अति बलवान इन्द्रजी पराजित हुए तब देवता ब्रह्माजीको आगे करके लंकाको गये ॥ १ ॥ उस कालमें ब्रह्माजी पुत्र और

प्रसन्न हुएहैं. अहो ! इसने कैसे आश्चर्यका विक्रम किया है ! ! इसको कैसा बल है, इसका बल तुम्हारी समान वा तुमसे भी अधिक होगा ! ! ॥ ३ ॥ तुमने भी तेजके प्रभावसे समस्त त्रिभुवनको जीतलिया है तुम्हारी प्रतिज्ञाभी सफल हुई है, इस लिये हम, तुम दोनों पिता पुत्रके ऊपर प्रसन्न हुएहैं ॥ ४ ॥ हे रावण ! यह तुम्हारा पुत्र अतिबलवान् है इसलिये संसारमें एक इसका इन्द्रजित नाम होगा ॥५॥ हे राजन् ! तुमने जिसका आश्रय लेकर देवतोंको अपने वशमें कर लियाहै सो तुम्हारा यह राक्षस पुत्र बलवान् और अजीत होगा इसमें कुछ संदेह नहीं॥६॥इसलिये हे महावीर ! तुम पाकशासन इन्द्रको छोडदो और इनके छोडनेमें देवता तुमको क्या

वत्सरावणतुष्टोस्मिपुत्रस्यतवसंयुगे ॥ अहोस्यविक्रमोदार्यंतवतुल्योधिकोपिवा ॥ ३ ॥ जितंहिभवतासर्वंत्रैलोक्यंस्वेनतेजसा ॥ कृताप्रतिज्ञासफलाप्रीतोस्मिससुतस्यते ॥ ४ ॥ अयंचपुत्रोतिबलस्तवरावणवीर्यवान् ॥ जगतींद्रजिदित्येवपरिख्यातोभविष्यति ॥५॥ बलवान्दुर्जयश्चैवभविष्यत्येषराक्षसः ॥ यंसमाश्रित्यतेराजन्स्थापितास्त्रिदशावशे ॥ ६ ॥ तन्मुच्यतांमहाबाहोमहेंद्रःपाकशासनः ॥ किंचास्यमोक्षणार्थायप्रयच्छंतुदिवौकसः ॥ ७ ॥ अथाब्रवीन्महातेजाइंद्रजित्समितिंजयः ॥ अमरत्वमहंदेववृणेयद्येषमुच्यते ॥ ८ ॥ ततोब्रवीन्महातेजामेघनादंप्रजापतिः ॥ नास्तिसर्वामरत्वंहिकस्यचित्प्राणिनोभुवि ॥ ९ ॥ पक्षिणश्चतुष्पदोवाभूतानांवामहौजसाम् ॥ श्रुत्वापितामहेनोक्तमिंद्रजित्प्रभुणाव्ययम ॥ १० ॥ अथाब्रवीत्सतत्रस्थंमेघनादोमहाबलः ॥ श्रूयतांवाभवेत्सिद्धिःशतक्रतुविमोक्षणे ॥ ११ ॥ ममेष्टंनित्यशोहव्यैर्मंत्रैःसंपूज्यपावकम् ॥ संग्राममवतर्तुंचशत्रुनिर्जयकांक्षिणः ॥ १२ ॥

दें सोभी तुम कहो ॥ ७ ॥ इसके उपरान्त समरविजयी महाबलवान् इन्द्रजीत बोला, जो आप इन इन्द्रको छुडवाना चाहतेहैं तो हमको अमर वर दीजिये ॥ ॥ ८ ॥ तब महातेजस्वी ब्रह्माजी इन्द्रजीतसे बोले कि, मेरे उत्पन्न किये कोईभी प्राणी किसीभी कालमें सर्व निमित्तसे अमर नहीं हो सकते ॥ ९ ॥ जैसे पक्षी अथवा चौपाया पशु या महातेजस्वी भूत अर्थात् मनुष्य अमर नहीं हैं. ब्रह्माजीके वचन सुन इन्द्रजीत ॥ १० ॥ जो कि महाबलवान् था ब्रह्माजीसे बोला, कि, इन्द्रके छोडनेसे हमको जो सिद्धियें प्राप्त हों वह तुम सुनो ॥ ११ ॥ विजयके लिये युद्ध करनेकी इच्छा करके जब हम विधिपूर्वक अग्निमें होम

करें ॥ १२ ॥ वहीं हमारे लिये घोडे जुताहुआ रथ अग्निसे निकले, सो जबतक उस रथपर हम चढे रहें तबतक अमर रहें बस यही हमारा निश्चित वर है ॥ ॥ १३ ॥ हे देव! जो वह संग्रामका यज्ञ विनाही समाप्तकिये हम युद्ध करें तब उसी समय संग्राममें हमारा नाश हो ॥ १४ ॥ हे देव ! सबही पुरुष तप करके अमरताको प्राप्त करतेहैं परन्तु हमने विक्रम प्रकाश करके अमरताको पाया ॥ १५ ॥ तब देवपितामह ब्रह्माजी मेघनादसे बोले कि" ऐसाही होगा " तब इन्द्रजीतने इन्द्रको छोड दिया, और देवतागी स्वर्गको चले गये ॥ १६ ॥ हे राम ! इसके उपरान्त इन्द्र अत्यन्त व्याकुल हुए, उनकी देहका लावण्य नष्ट होगया, यह चिन्ता युक्त होकर विचारने लगे ॥ १७ ॥ तब इन्द्रको चिन्ता करताहुआ देख ब्रह्माजी बोले कि, हे इन्द्र ! अब चिन्ता तो करते हो परन्तु ऐसा कुकार्य क्यों किया ?

अश्वयुक्तोरथोमह्यमुत्तिष्ठेत्तुविभावसोः ॥ तत्स्थस्यामरतास्यान्मेएषमेनिश्चितोवरः ॥ १३ ॥ तस्मिन्यद्यसमाप्तेचजप्यहोमेविभावसौ ॥ युद्ध्येयंदेवसंग्रामेतदामेस्याद्विनाशनम् ॥ १४ ॥ सर्वोहितपसादेववृणोत्यमरतांपुमान् ॥ विक्रमेणमयात्वेतदमरत्वंप्रवर्तितम् ॥ १५ ॥ एवमस्त्वितितंचाहवाक्यंदेवःपितामहः ॥ मुक्तश्चेंद्रजिताशक्रोगताश्चत्रिदिवंसुराः ॥ १६ ॥ एतस्मिन्नंतरेरामदीनोभ्रष्टामरद्युतिः ॥ इंद्रश्चिंतापरीतात्माध्यानतत्परतांगतः ॥१७॥ तंतुदृष्ट्वातथाभूतंप्राहदेवःपितामहः ॥ शतक्रतोकिमुपुराकरोतिस्मसुदुष्कृतम् ॥१८॥ अमरेंद्रमयाबुद्ध्याप्रजाःसृष्टास्तथाप्रभो ॥ एकवर्णाःसमाभाषाएकरूपाश्चसर्वशः॥१९॥ तासांनास्तिविशेषोहिदर्शनेलक्षणेपिवा ॥ ततोहमेकाग्रमनास्ताःप्रजाःसमचिंतयम् ॥२०॥ सोहंतासांविशेषार्थंस्त्रियमेकांविनिर्ममे ॥ यद्यत्प्रजानांप्रत्यंगंविशिष्टंतत्तदुद्धृतम् ॥ २१ ॥ ततोमयारूपगुणैरहल्यास्त्रीविनिर्मिता ॥ हलंनामेहवैरूप्यंहल्यंतत्प्रभवंभवेत् ॥ २२ ॥ यस्यानविद्यतेहल्यंतेनाहल्येतिविश्रुता ॥ अहल्येत्येवचमयातस्यानामप्रकीर्तितम् ॥ २३ ॥ निर्मितायांचदेवेंद्रतस्यांनार्यांसुरर्षभ ॥ भविष्यतीतिकस्यैषाममचिंताततोभवत् ॥ २४ ॥

॥ १८ ॥ हे देवराज ! हमने संकल्पसे कुछ एक प्रजाओंको उत्पन्न कियाथा उनका वर्ण, वाक्य, रूप सब एक प्रकारका था ॥ १९ ॥ उनके आकारमें या लक्षणमें कोई भेद नहीं था; फिर हम एक मनसे उन सब प्रजाके विषयमें चिन्ता करने लगे ॥ २० ॥ फिर सोच विचार हमने उनमें विशेष होनेके लिये एक स्त्री बनाई, उस स्त्रीके बनानेमें यह युक्ति की कि, सब प्रजाके उत्तम २ अंगोंमेंसे सार भाग निकाल २ ॥ २१ ॥ अति रूपवती महागुणवती अहल्या नाम स्त्री बनाई ! "हल शब्दका अर्थ विरूपता, उस विरूपतामें जो निन्दा जन्मती है; उसका नाम हल्य" है ॥ २२ ॥ जिसमें हल्य अर्थात् विरूपता विद्यमान नहीं है; यह अहल्या कहलाई जाती है, इस कारण हमने उस स्त्रीका अहल्या नाम प्रकाशित किया ॥ २३ ॥ हे देवश्रेष्ठ ! हे इन्द्र ! उस नारीके उत्पन्न होनेपर

॥ २५ ॥ तब हमने उसको महात्मा गौतमजीके पास धरोहरकी भाँति रखदिया, गौतमजीने बहुत दिनोंके पीछे उसको हमारे हाथमें सौंप दिया ॥२६॥
हमने उन महामुनि गौतमजीकी इंद्रियोंका जीतना और तपकी सिद्धिको विचार अहल्याको उनकी भार्या बनानेको देदिया ॥ २७ ॥ इसके उपरान्त अहल
महर्षि गौतमजी सुखसे काल बितानेलगे, इसप्रकारसे जब हमने अहल्याको गौतमजीकी स्त्री बनाया तब सब देवता निराश होगये ॥ २८ ॥ परन्तु कामके वश
क्रोधित होकर तुमने मुनि गौतमजीके आश्रममें जायकर देखा कि, अहल्या अग्निकी चिताके समान दीप्ति पाय रहीहै ॥२९॥ तब तुमने कामदेवसे उन्मत्तहो

त्वंतुशक्रतदानारींजानीषेमनसाप्रभो ॥ स्थानाधिकतयापत्नींममेषेतिपुरंदर ॥२५॥ सामयान्यासभूतातुगौतमस्यमहात्मनः॥ न्यस्ताव
णितेननिर्यातिताचह ॥ २६ ॥ ततस्तस्यपरिज्ञायमहास्थैर्यंमहामुनेः ॥ ज्ञात्वातपसिसिद्धिंचपत्न्यर्थंस्पर्शितातदा ॥२७॥ सतयासह
रमतेस्ममहामुनिः ॥ आसन्निराशादेवास्तुगौतमेदत्तयातया ॥ २८ ॥ त्वंक्रुद्धस्त्विहकामात्मागत्वातस्याश्रमंमुनेः ॥ दृष्टवांश्चतदातांस्त्री
ग्निशिखामिव ॥ २९ ॥ सात्वयाधर्षिताशक्रकामार्तेनसमन्युना ॥ दृष्टस्त्वंसतदातेनआश्रमेपरमर्षिणा ॥ ३० ॥ ततःक्रुद्धेनतेनासि
मतेजसा ॥ गतोसियेनदेवेंद्रदशाभागविपर्ययम् ॥ ३१ ॥ यस्मान्मेधर्षितापत्नीत्वयावासवनिर्भयात् ॥ तस्मात्त्वंसमरेशक्रशत्रुहस्तंग
॥ ३२ ॥ अयंतुभावोदुर्बुद्धेयस्त्वयेहप्रवर्तितः ॥ मानुषेष्वपिलोकेषुभविष्यतिनसंशयः ॥ ३३ ॥ तत्रार्धंतस्ययःकर्तात्वय्यर्धंनिपति
॥ नचतेस्थावरंस्थानंभविष्यतिनसंशयः ॥ ३४ ॥ यश्चयश्चसुरेंद्रःस्याद्ध्रुवःसनभविष्यति ॥ एषशापोमयामुक्तइत्यसौत्वांतदाब्रवीत् ॥ ३५ ॥

उसके सतीधर्मको हरण किया, जिसकाल गौतमजीने आश्रममें तुमको देखपाया ॥ ३० ॥ तुमको देखकर महामुनि गौतमजीने क्रोधित हो तुमको यह
कि, तुम्हारी विपरीत दशा होजायगी ॥ ३१ ॥ तुमने भयरहित होकर हमारी स्त्रीका सतीधर्म हरण कियाहै इसलिये तुम युद्धमें शत्रुकरके बांधे जाओगे ॥ ३२ ॥
दुर्बुद्धे ! तुमने इस लोकमें जो यह दुर्नीति चलाई तो तुम्हारे दोषसे मनुष्यलोकमेंभी यह जारपन चलेगा; इसमें कुछ संशय नहीं है ॥ ३३ ॥ जो पुरु
करेगा, तो उस पापका आधा अंश तो उस पुरुषको होगा, और आधा अंश तुम्हारे ऊपर पडेगा, और तुम्हारा स्थान स्थिर नहीं रहेगा ॥ ३४ ॥ और
इन्द्र होगा वह स्थिर नहीं रहेगा । और हमनेभी तुमको यही शाप दिया है; जब प्रजापति ब्रह्माजीने इन्द्रजीसे ऐसा कहा ॥ ३५ ॥

जिसके पीछे वह महातपस्वी गौतमजी अपनी स्त्रीकी अत्यन्त निन्दा करते हुए बोले कि, हे दुर्विनीते ! हमारे आश्रमके समीपही तुम स्वरूपविहीन होकर रहोगी ॥ ३६ ॥ तुम रूप यौवन सम्पन्न होनेके कारणभी स्थिर नहीं रही असन्मार्गको अवलंबन किया अधिक करके तुम इसलोकमें केवल अकेलीही रूपवती थी परन्तु अब ऐसा न होगा ॥ ३७ ॥ इस एक जगह टिकेहुए रूपको आश्रय करकेही इन्द्रको यह शरीरविकार उत्पन्न हुआहै इस कारण तुम्हारा रूप सब प्रजाओंको प्राप्त होगा इसमें कुछ संदेह नहीं ॥ ३८ ॥ तबसेही प्रजा अधिक रूपवती होतीहै, तब अहल्या महर्षि गौतमजी मुनिको प्रसन्न करने लगी ॥ ३९ ॥ हे विप्रश्रेष्ठ ! स्वर्गवासी इन्द्रने तुम्हारा रूप धारण करके अज्ञानके वशहो हमसे बलात्कार कियाहै. कुछ हमारी कामेच्छासे ऐसा नहीं हुआ है सो हे विप्रश्रेष्ठ ! आप प्रसन्न होइये

तांतुभार्यांसुनिर्भर्त्स्यसोऽब्रवीत्सुमहातपाः ॥ दुर्विनीतेविनिध्वंसममाश्रमसमीपतः ॥ ३६ ॥ रूपयौवनसंपन्नायस्मात्त्वमनवस्थिता ॥ तस्माद्रूपवतीलोकेनत्वमेकाभविष्यति ॥ ३७ ॥ रूपंचतेप्रजाःसर्वागमिष्यतिनसंशयः ॥ यत्तदेकंसमाश्रित्यविभ्रमोयमुपस्थितः ॥ ॥ ३८ ॥ तदाप्रभृतिभूयिष्ठंप्रजारूपसमन्विता ॥ सातंप्रसादयामासमहर्षिंगौतमंतदा ॥ ३९ ॥ अज्ञानाद्धर्षिताविप्रत्वद्रूपेणदिवौकसा ॥ नकामकाराद्विप्रर्षेप्रसादंकर्तुमर्हसि ॥ ४० ॥ अहल्ययात्वेवमुक्तःप्रत्युवाचसगौतमः ॥ उत्पत्स्यतिमहातेजाइक्ष्वाकूणांमहारथः ॥ ४१ ॥ रामोनामश्रुतोलोकेवनंचाप्युपयास्यति ॥ ब्राह्मणार्थेमहाबाहुर्विष्णुर्मानुषविग्रहः ॥ ४२ ॥ तंद्रक्ष्यसितदाभद्रेततःपूताभविष्यसि ॥ सहि पावयितुंशक्तस्त्वयायद्दुष्कृतंकृतम् ॥ ४३ ॥ तस्यातिथ्यंचकृत्वावैमत्समीपंगमिष्यसि ॥ वत्स्यसित्वंमयासार्धंतदाहिवरवर्णिनि ॥ ४४ ॥ एवमुक्त्वासविप्रर्षिराजगामस्वमाश्रमम् ॥ तपश्चचारसुमहत्सापत्नीब्रह्मवादिनः ॥ ४५ ॥ पापोत्सर्गाद्धितस्येदंमुनेःसर्वमुपस्थितम् ॥ तत्स्त्वंमहाबाहोदुष्कृतंयत्त्वयाकृतम् ॥ ४६ ॥

॥ ४० ॥ वह गौतमजी अहल्याके ऐसे वचन सुनकर बोले कि, महावीर विष्णुजी मनुष्य देह धारण करके इक्ष्वाकुवंशमें उत्पन्न होंगे वह महातेजस्वी महारथी लोकमें रामनामसे विख्यात होंगे और विश्वामित्रजीका कार्य सिद्ध करनेको वह वनमें आवेंगे ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ हे भद्रे ! उनका दर्शन पानेसे तुम्हारे पाप दूर होंगे वह श्रीरामचन्द्रजीही तुम्हारा किया हुआ पाप दूर कर सकेंगे ॥ ४३ ॥ हे श्रेष्ठ वर्णवाली ! उनकी पहुनई करके तुम जब हमारे निकट आओगी फिर तुम हमारे संग रहसकोगी ॥ ४४ ॥ यह कहकर फिर वह ब्रह्मर्षि अपने आश्रमको चले गये । तबसे इन ब्रह्मवादीकी स्त्री अहल्यानेभी बडा तप करना आरंभ किया ॥ ४५ ॥ हे इन्द्र ! उन मुनिके शाप देनेसेही तुम्हारी यह दशा हुईहै । [illegible] किये कुकार्यको अब

याद करो ॥ ४६ ॥ हे इन्द्र ! . शापके कारण शत्रुने तुमको बाधा और कोई कारण नहीं है, इस समय तुम शीघ्र नियमके साथ वैष्णवयज्ञका आरंभ करो ॥ ॥ ४७ ॥ उस यज्ञके करनेपर शुद्ध होकर तुम फिर देवलोकमें जासकोगे. हे देवराज ! युद्धमें तुम्हारा पुत्र जयन्त मारा नहीं गयाहै ॥ ४८ ॥ वरन् पुलोमा उसका नाना उसको लेकर महासमुद्रमें चलागयाहै, यह सुन इन्द्र यथाविधिसे वैष्णवयज्ञ कर ॥ ४९ ॥ फिर स्वर्गको चलेगये और फिर देवराज होकर राज्य करनेलगे. इन्द्र जितके बलकी कथा हमने तुमसे कही ॥ ५० ॥ और प्राणीकी तो बातही क्याहै उसने तो देवराज इन्द्रकोभी जीतलिया था तब राम लक्ष्मणजीने कहा कि यह तो बडे आश्चर्यकी बातहै ॥ ५१ ॥ अगस्त्यजीके वचन सुनकर वानर, राक्षसगण व विभीषणजीभी श्रीरामचन्द्रजीके निकट आय यह बोले कि ॥ ५२ ॥

तेनत्वंग्रणंहशत्रोर्यातोनान्येनवासव ॥ शीघ्रंवैयजयज्ञंत्वंवैष्णवंसुसमाहितः ॥ ४७ ॥ पावितस्तेनयज्ञेनयास्यसेत्रिदिवंततः ॥ पुत्रश्चतवदेवेंद्र नविनष्टोमहारणे ॥ ४८ ॥ नीतःसन्निहितश्चैवआर्यकेणमहोदधौ ॥ एतच्छ्रुत्वामहेंद्रस्तुयज्ञमिष्ट्वाचवैष्णवम् ॥ ४९ ॥ पुनस्त्रिदिवमाक्रामदन्व शासच्चदेवराट् ॥ एतदिंद्रजितोनामबलंयत्कीर्तितंमया ॥ ५० ॥ निर्जितस्तेनदेवेंद्रःप्राणिनोन्येतुकिंपुनः ॥ आश्चर्यमितिरामश्चलक्ष्मणश्चाब्रवी त्तदा ॥ ५१ ॥ अगस्त्यवचनंश्रुत्वावानरराक्षसास्तदा ॥ विभीषणस्तुरामस्यपार्श्वस्थोवाक्यमब्रवीत् ॥ ५२ ॥ आश्चर्यंस्मारितोस्म्यद्ययत्तद्दृष्टं पुरातनम् ॥ अगस्त्यंत्वब्रवीद्रामःसत्यमेतच्छ्रुतंचमे ॥ ५३ ॥ एवंरामसमुद्भूतोरावणोलोककंटकः ॥ सपुत्रोयेनसंग्रामेजितःशक्रःसुरेश्वरः ॥ ॥ ५४ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे त्रिंशः सर्गः ॥ ३० ॥ ततोरामोमहातेजाविस्मयात्पुनरेवहि ॥ उवाच प्रणतोवाक्यमगस्त्यमृषिसत्तमम् ॥ १ ॥ भगवन्राक्षसःक्रूरोयदाप्रभृतिमेदिनीम् ॥ पर्यटत्किंतदालोकाःशून्याआसन्द्विजोत्तम ॥ २ ॥ राजा वाराजपुत्रोवाकिंतदानात्रकश्चन ॥ धर्षणंयत्रनप्राप्तोरावणोराक्षसेश्वरः ॥ ३ ॥

आश्चर्य है, फिर विभीषणजी बोले कि, बहुत कालके पीछे आज हमको फिर पुरानी बातें याद आगईं, तब श्रीरामचन्द्रजीने अगस्त्यजीसे कहा कि आपने जो कहा यह सत्यहै विभीषणजीके निकट हमने यह सब वृत्तान्त सुना था ॥५३॥ अगस्त्यजीने कहा, हे राम ! जिस रावणने सुरपति इन्द्रजीको उनके पुत्र जयन्तके साथ संग्राममें हरा दिया, वह लोककण्टक रावण इस प्रकारसे उत्पन्न हुआ था ॥५४॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषाटीकायां त्रिंशः सर्गः ॥३०॥ इसके उपरान्त महातेजस्वी श्रीरामचन्द्रजी प्रणामकर विस्मययुक्तहो फिर ऋषिश्रेष्ठ अगस्त्यजीसे बोले ॥ १ ॥ हे ब्राह्मणश्रेष्ठ ! हे भगवन् ! क्रूर स्वभाववाला राक्षस रावण जिस कालमें पृथ्वीपर घूमताथा तब क्या पृथ्वीपर कोई वीर नहींथा ? ॥२॥ राक्षसराज रावणको दंड देनेके लायक क्या कोई राजा या राजपुत्र उस

उत्ताहोद्धतवीर्यास्तेवभूवुःपृथिवीक्षितः ॥ वहिष्कृतावरास्त्रैश्चवहवोनिर्जितानृपाः ॥ ४ ॥ राघवस्यवचःश्रुत्वाअगस्त्योभगवानृषिः ॥ उवाचरामंप्रहसन्पितामहइवेश्वरम् ॥ ५ ॥ इत्येवंबाधमानस्तुपार्थिवान्पार्थिवर्षभ ॥ चचाररावणोरामपृथिवींपृथिवीपते ॥६॥ ततोमाहिष्मतींनामपुरींस्वर्गपुरीप्रभाम् ॥ संप्राप्तोयत्रसान्निध्यंसदासीद्वसुरेतसः ॥७॥ तुल्यआसीन्नृपस्तस्यप्रभावाद्वसुरेतसः ॥ अर्जुनोनामयत्राग्निःशरकुंडेशयःसदा ॥८॥ तमेवदिवसंसोथहैहयाधिपतिर्वली ॥ अर्जुनोनर्मदांरंतुंगतःस्त्रीभिःसहेश्वरः ॥९॥ तमेवदिवसंसोथरावणस्तत्रआगतः ॥ रावणोराक्षसेंद्रस्तुतस्यामात्यानपृच्छत ॥१०॥ क्वार्जुनोनृपतिःशीघ्रंसम्यगाख्यातुमर्हथ ॥ रावणोहमनुप्राप्तोयुद्धेप्सुर्नृवरेणह ॥११॥ ममागमनमप्यग्रेयुष्माभिःसन्निवेद्यताम् ॥ इत्येवंरावणेनोक्तास्तेमात्याःसुविपश्चितः ॥१२॥ अब्रुवन्राक्षसपतिमसान्निध्यंमहीपतेः ॥ श्रुत्वाविश्रवसःपुत्रःपौराणामर्जुनंगतम् ॥१३॥ अपसृत्यागतोविंध्यंहिमवत्सन्निभंगिरिम् ॥ सतमभ्रमिवाविष्टमुद्भ्रांतमिवमेदिनीम् ॥१४॥ अपश्यद्रावणोविंध्यमालिखंतमिवांबरम् ॥ सहस्रशिखरोपेतंसिंहाध्युषितकंदरम् ॥ १५ ॥ प्रपातपतितैःशीतैःसाट्टहासमिवांबुभिः ॥ देवदानवगंधर्वैःसाप्सरोभिःसकिन्नरैः ॥ १६ ॥

समय पृथ्वीपर नहीं था ॥ ३ ॥ क्या उस समय सब महीपालोंका तेज बल जाता रहाथा ? हमने सुनाहै कि, श्रेष्ठ अस्त्रोंके प्रभावसे रावणने स्वर्गको राजाओंको निकाल दियाथा ॥ ४ ॥ भगवान् अगस्त्यजी श्रीरामचन्द्रजीके वचन सुन रामचन्द्रजीसे बोले कि, जैसे ब्रह्माजी हँसकर ईश्वरसे बोलते हैं ॥ ५ ॥ हे पृथ्वीनाथ! राजश्रेष्ठ राम! इसप्रकार राजाओंको पीडित करताहुआ रावण पृथ्वीपर घूमने लगा ॥ ६ ॥ स्वर्गपुरीकी समान प्रभावाली एक माहिष्मती नाम पुरी है, इस पुरीमें सदा अग्निदेवता वास करते हैं ॥ ७ ॥ इस पुरीके राजाका नाम अर्जुनथा, यह अर्जुन अग्निके समान तेजस्वी था, स्थापित अग्नि सदा नगरीमें पलता रहता था ॥ ८ ॥ हैहयाधिपति बलवान् राजा अर्ज्जुन स्त्रियोंके सहित जिस दिन नर्मदा नदीमें जलविहार करनेको गयाथा ॥ ९ ॥ उसी दिन राक्षसोंका राजा रावण वहांपर जाय उन महाराजके मंत्रियोंसे पूछता हुआ कि ॥ १० ॥ " नरनाथ अर्ज्जुन कहांहै ? " तुम अतिशीघ्र उससे जायकर कहो कि, मैं " रावण राजाके साथ संग्राम करनेकी वासनासे आया हूं " ॥ ११ ॥ तुम सबसे पहले हमारे आनेका समाचार उससे कहो; राजाके मंत्रियोंने रावणके यह वचन सुन ॥ १२ ॥ रावणसे कहा कि, इस समय महाराज पुरीमें नहीं हैं । विश्रवाका पुत्र रावण पुरवासियोंसे अर्ज्जुनका जाना सुन ॥ १३ ॥ पुरीमें बाहर निकल हिमालयकी समान विन्ध्याचलपर आया उस पर्वतको मेघकी समान पृथ्वीपर टिकारक्खा रावण देखता हुआ ॥ १४ ॥ वह हजार शृंगवाला विन्ध्याचल मानों आकाशको स्पर्शही करना चाहता था, उसकी कंदरामें सिंह वास करते थे ॥ १५ ॥ सैकडों श्वेतवर्णके झरने उस पर्वतसे गिर रहे थे मानो

१ त २ तल जलके शब्द ' ठठायकर हँस रहा है । व, दानव, गन्ध , अप्सरा, केन्नर ॥ १६ ॥ अपनी २ स्त्रियोंके संग क्रीडा कर रहे थे, कि जिसमे वह स्थानभी स्वर्गकी समान शोभायमान हो रहा था. स्फटिककी समान निर्मल जलवाली नदियें वहां वह रही थीं ॥ १७ ॥ तिनके वहनेसे वह पर्वत चंचल जीभ वाले हजार सर्पराजोंकी समान शोभायमान हो रहा था, हिमालयपर्वतकी समान ऊंचा, गुफायुक्त पर्वत ॥ १८ ॥ विन्ध्याचलको देखते २ राक्षसराज रावण नर्म दाको चला गया इस पुण्यजलवाली पश्चिमसागरमें गिरती हुई नर्मदाका जल पत्थरके टुकडोंपर अतितेजीसे वह रहा था ॥ १९ ॥ ग्रीष्मके सताये महिष, मृग, सिंह, व्याघ्र, रीछ और गजराज सबही घुसकर उस नर्मदाके जलको मथ रहेथे ॥ २० ॥ चकवे, कारण्डव, हंस, जलमुरगा और सारस सब इस नदीको ढकेहुए सदा मतवालेपनसे शब्द कर रहे थे ॥ ॥ २१ ॥ मनमोहिनी नर्मदा नदी मानो वरवर्णिनी कामिनीकी समान कान्ति धारण किये हुएथी. खिलेहुए वृक्षही

स्वस्त्रीभिःक्रीडमानैश्चस्वर्गभूतंमहोच्छ्रयम् ॥ नदीभिःस्यंदमानाभिःस्फटिकप्रतिमंजलम् ॥ १७ ॥ फणाभिश्चलजिह्वाभिरनंतमिवविष्ठितम् ॥ उत्क्रामंतंदरीवंतंहिमवत्सन्निभंगिरिम् ॥ १८ ॥ पश्यमानस्ततोविंध्यंरावणोनर्मदांययौ ॥ चलोपलजलांपुण्यांपश्चिमोदधिगामिनीम् ॥ १९ ॥ महिषैःसृमरैःसिंहैःशार्दूलर्क्षगजोत्तमैः ॥ ऊष्माभितप्तैस्तृषितैःसंक्षोभितजलाशयाम् ॥२०॥ चक्रवाकैःसकारंडैःसहंसजलकुक्कुटैः ॥ सारसैश्चस दामत्तैःकूजद्भिःसुसमावृताम् ॥ २१ ॥ फुल्लद्रुमकृतोत्तंसांचक्रवाकयुगस्तनीम् ॥ विस्तीर्णपुलिनश्रोणींहंसावलिसुमेखलाम् ॥ २२ ॥ पुष्परेणवनु लिप्तांगींजलफेनामलांशुकाम् ॥ जलावगाहसुस्पर्शांफुल्लोत्पलशुभेक्षणाम् ॥ २३ ॥ पुष्पकादवरुह्याशुनर्मदांसरितांवराम् ॥ इष्टामिववरांनारीम वगाह्यदशाननः ॥ २४ ॥ सतस्याःपुलिनेरम्येनानामुनिनिषेविते ॥ उपोपविष्टःसचिवैःसार्धंराक्षसपुंगवः ॥ २५ ॥ प्रख्यायनर्मदांसोथगंगेयमि तिरावणः ॥ नर्मदादर्शनेहर्षमाप्तवान्सदशाननः ॥ २६ ॥ उवाचसचिवांस्तत्रसलीलंशुकसारणौ ॥ एषरश्मिसहस्रेणजगत्कृत्वेवकांचनम् ॥२७॥

उसके गहने, चक्रवाकोंके जोडेही उसके स्तन, विस्तारित मैदानही उसके नितम्ब, और हंसोंकी कतारही उस नदीकी मेखला थी ॥ २२ ॥ फूलोंका पराग उसके शरीरका अंगराग था; जलमेंके झागही उसके श्वेत वस्त्र थे; स्नानका सुख इसके लिये स्पर्शसुख था, फूलेहुए कमल इसके शोभायमान नेत्र थे ॥ २३ ॥ रावण पुष्पकविमानसे उतरकर उत्तमा प्रियतमा स्त्रीकी समान सरितश्रेष्ठ नर्मदा नदीमें अति शीघ्र स्नान करता हुआ ॥ २४ ॥ इसके उपरान्त राक्षसश्रेष्ठ रावण अपने मंत्रियोंके साथ अनेक मुनिजनोंसे सेवित; उस नदीकी रमणीक रेतीमें बैठा ॥ २५ ॥ दशानन रावण गंगाकी समान कह नदीकी प्रशंसा करके व उसके दर्शनसे हर्ष प्राप्त करता हुआ ॥ २६ ॥ तिसकालमें लीलापूर्वक हँसकर मारीच, शुक, सारण मंत्रियोंसे रावण बोला कि देखो आपनी ...

तीक्ष्ण ताप देनेवाले सूर्य आकाशमें विराजमान होरहेहैं परन्तु देखो हमको यहां बैठा हुआ जान मानो, चन्द्रमाकी समान शीतल किरणवाले होगये ॥ २८ ॥ यह पवन नर्मदाका जल छूकर शीतल और सुगन्धि होनेके कारण सबका श्रम हरण करताहै परन्तु हमारे भयके मारे इस समय यहभी सावधान होकर चल रहाहै ॥ ॥ २९ ॥ नाके, मछलियें और तरंगोंसे व्याप्त यह श्रेष्ठ नर्मदा नदी हमारे सुखकी बढोतरी करती हुई डरीहुई स्त्रीकी समान जान पडती है ॥ ३० ॥ इन्द्रके समान पराक्रमी राजाओंके प्रहारोंसे तुम लोग घायल हुए हो; इससे चंदनके रसकी समान रुधिरकी धारा तुम्हारे सब अंगोंमें लगीहुई है ॥ ३१ ॥ अतएव सार्वभौम इन्द्रादि मतवाले महागज जैसे गंगाजीमें स्नान करतेहैं वैसेही तुम सुखकी देनेवाली कल्याणकारिणी नर्मदा नदीमें स्नान करो ॥ ३२ ॥ और इस महानदीमेंनहायकर पापोंको

तीक्ष्णतापकरःसूर्योनभसोमध्यमास्थितः ॥ मामासीनंविदित्वैवचंद्रायतिदिवाकरः ॥२८॥ नर्मदाजलशीतश्चसुगंधिःश्रमनाशनः ॥ मद्भयादनिलोह्येपवात्यसौसुसमाहितः ॥२९॥ इयंवापिसरिच्छ्रेष्ठानर्मदाशर्मवर्धिनी ॥ नक्रमीनविहंगोर्मिःसभयेवांगनास्थिता ॥ ३० ॥ तद्भवंतःक्षताःशस्त्रैर्नृपैरिंद्रसमैर्युधि ॥ चंदनस्यरसेनेवरुधिरेणसमुक्षिताः ॥ ३१ ॥ तेयूयमवगाहध्वंनर्मदांशर्मदांशुभाम् ॥ सार्वभौममुखामत्तागंगामिवमहागजाः ॥ ॥३२॥ अस्यांस्नात्वामहानद्यांपाप्मनोविप्रमोक्ष्यथ ॥ अहमप्यत्रपुलिनेशरदिंदुसमप्रभे ॥ ३३ ॥ पुष्पोपहारंशनकैःकरिष्यामिकपर्दिनः॥ रावणेनैवमुक्तास्तुप्रहस्तशुकसारणाः ॥ ३४ ॥ समहोदरधूम्राक्षानर्मदांविजगाहिरे ॥ राक्षसेंद्रगजैस्तैस्तुक्षोभितानर्मदानदी ॥ ३५ ॥ वामनजनांपद्मायैर्गंगाइवमहागजैः ॥ ततस्तेराक्षसाःस्नात्वानर्मदायांमहाबलाः ॥३६॥ उत्तीर्यपुष्पाण्याजह्रुर्बल्यर्थंरावणस्यतु ॥ नर्मदापुलिनेहृद्येशुभ्राभ्रसदृशप्रभे ॥ ३७ ॥ राक्षसैस्तुमुहूर्तेनकृतःपुष्पमयोगिरिः ॥ पुष्पेपूपहृतेष्वेवंरावणोराक्षसेश्वरः ॥ ३८ ॥ अवतीर्णोनदींस्नातुंगंगामिवमहागजः ॥ तत्रस्नात्वाचविधिवज्जप्त्वाजप्यमनुत्तमम् ॥ ३९ ॥ नर्मदासलिलात्तस्मादुत्ततारसरावणः ॥ ततःक्लिन्नांबरंत्यक्त्वाशुक्लवस्त्रसमावृतः ॥ ४० ॥

दूर करो और हमभी अब शरद्ऋतुके चंद्रमाकी समान प्रभायुक्त रेतीमें ॥ ३३ ॥ कपर्दी महादेवजीकी पूजा करनेके अर्थ फूलोंकी भेंटको सजाते हैं. रावणके यह वचन सुनकर, प्रहस्त, शुक, सारण, ॥३४॥ महोदर, धूम्राक्ष इत्यादि मंत्रिगण नर्मदाके जलमें स्नान करतेहुए राक्षसपतिरूप हाथियोंने नर्मदा नदीको सलबला डाला ॥ ३५ ॥ जैसे वामन, अंजन और पद्म नामक महादिग्गज गंगाजीको चलायमान करतेहैं, फिर वह महाबलवान् राक्षसगण नर्मदा नदीमें स्नान करके ॥ ॥ ३६ ॥ किनारेपर आय रावणकी पूजा करनेके अर्थ फूल बीननेलगे. श्वेत बादलकी समान श्वेतवर्णवाली नर्मदा नदीकी रेतीमें ॥ ३७ ॥ राक्षसोंने एक मुहूर्त भरके बीचमें फूलोंका ढेर पर्वतकी समान करदिया जब फूल आगये तब राक्षसपति रावण ॥ ३८ ॥ स्नान करनेके लिये नर्मदा नदीमें उतरा जैसे गंगाजीके जलमें महागज स्नान करता है तब वह रावण स्नान करके अतिश्रेष्ठ जपने योग्य मंत्रका जपकरके जलसे निकला ॥ ३९ ॥ रावण नर्मदा नदीके जलसे निकल भीगे वस्त्रोंको

सुवर्णका शिवलिंग लिये जाते थे ॥ ४२ ॥ इसके उपरान्त रावण रेतीकी वेदी पर इस शिवलिंगको स्थापनकर अमृतके समान सुगन्धियुक्त गन्ध, और फूलोंसे महादेवजीकी पूजा करने लगा ॥ ४३ ॥ साधु लोगोंके क्लेशका नाश करनेवाले, वरदाई, चन्द्रभूषण प्रभु महादेवजीकी सर्वप्रकारसे पूजा कर वह निशाचर रावण सब हाथ फैलाय नृत्य और गान करने लगा ॥ ४४ ॥ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषाटीकायामेकत्रिंशः सर्गः ॥ ३१ ॥ ॥ राक्षसश्रेष्ठ रावणने पुण्यजलवाली नर्मदा नदीके तीर जिस स्थानमें भेंट देनेके लिये फूलोंका ढेर इकट्ठा कियाथा ॥ १ ॥ उसकेही निकटमें माहिष्मतीका राजा

रावणंप्रांजलिंयांतमन्वयुःसर्वराक्षसाः ॥ तद्गतीवशमापन्नामूर्तिमंतइवाचलाः ॥४१॥ यत्रयत्रचयातिस्मरावणोराक्षसेश्वरः॥ जांबूनदमयंलिंगंतत्रत त्रस्मनीयते ॥ ४२ ॥ वालुकावेदिमध्येतुतल्लिंगंस्थाप्यरावणः ॥ अर्चयामासगंधैश्चपुष्पैश्चामृतगंधिभिः ॥ ४३ ॥ ततःसतामार्तिहरंपरंवरंवरप्रदं चंद्रमयूखभूषणम् ॥ समर्चयित्वासनिशाचरोजगौप्रसार्यहस्तान्प्रणनर्तचाग्रतः॥४४॥इत्यार्षे श्रीमद्रामायणेवाल्मीकीयआदिकाव्यउत्तरकांडएक त्रिंशःसर्गः॥३१॥ नर्मदापुलिनेयत्रराक्षसेंद्रःसदारुणः॥पुष्पोपहारंकुरुतेतस्माद्देशाददूरतः ॥१॥ अर्जुनोजयतांश्रेष्ठोमाहिष्मत्याःपतिःप्रभुः॥क्रीड तेसहनारीभिर्नर्मदातोयमाश्रितः॥२॥ तासांमध्यगतोराजारराजचतदार्जुनः॥ करेणूनांसहस्रस्यमध्यस्थइवकुंजरः॥३॥ जिज्ञासुःसतुबाहूनांसहस्र स्योत्तमंबलम् ॥ रुरोधनर्मदावेगंबाहुभिर्बहुभिर्वृतः ॥४॥ कार्तवीर्यभुजासक्तंतज्जलंप्राप्यनिर्मलम् ॥ कूलोपहारंकुर्वाणंप्रतिस्रोतःप्रधावति ॥५॥

विजयिश्रेष्ठ भाग्यवान नरश्रेष्ठ अर्जुन बहुतसारी स्त्रियोंके साथ नर्मदाके जलमें विहार करता था ॥२॥ उस कालमें राजा अर्जुन उन स्त्रियोंके मध्यमें कैसा शोभायमान होरहा, कि मानों हजार हथिनियोंमें एक गजराज शोभित हो ॥ ३ ॥ वह राजा अपनी हजार भुजाओंका उत्तम बल जाननेका अभिलाषीहो बहुत बांहोंसे रूंधकर नर्मदाके वेगको रोकने लगा ॥ ४ ॥ कार्तवीर्य अर्जुनने जब बांहोंके समूहसे नर्मदाके जलको रोका तब वह जल किनारेपर उफलता हुआ उलटा बहने

❀ भैरवी ॥ भज रे मन भूतनाथ भव भव भय वारण । आदि देव शूलपाणि त्रिपुरासुर मारण ॥१॥ पहरे दृढ वाघ छाल, लट पट जट जूट जाल, कालरूप काल काल, भक्तन जन तारण ॥ २ ॥ भजरे०॥ गङ्गाधर चन्द्रभाल, लोकनाथ लोकपाल, दीन शरण शिव दयाल, व्याल माल धारण ॥ ३ ॥ भजरे०॥ डिम डिम डिम डमरू बोल, श्रवणन कुंडल अमोल, राजत छवि अति अतोल " मिश्र " काज सारण ॥ ॥ ४ ॥ भजरे मन भूतनाथ भव भव भय वारण ॥

लगा ॥ ५ ॥ मच्छ, नाके, फूल, व कुशोंसे शोभित नर्मदाके जलका वेग वर्षाकालकी समान प्रकाशित होनेलगा ॥ ६ ॥ उस जलके वेगने कार्तवीर्य ... मानों भेजाही जायकर रावणके उन सब फूलोंको बहाय दिया जिनको उसने शिवजीकी पूजाके लिये इकट्ठा किया था ॥ ७ ॥ तिस कालमें रावणकी ... समाप्त नहीं हुईथी तब रावणने अधबिचसेही पूजाको छोड दिया, और वह प्रतिकूल कामनीकी समान नर्मदा नदीको देखने लगा ॥ ८ ॥ उसने देखा कि ... नदी पश्चिमकी ओरको ज्वारकी समान बढकर पूर्वकी ओरको बही आतीहै ॥ ९ ॥ विकार रहित कामनीकी समान नर्मदा नदी अत्यन्त स्थिरभावसे विराजमान ... इसकारण पक्षिगण वहां विना उद्वेगके शोभायमान थे ॥ १० ॥ वह रावण मुखसे शब्द न करके नर्मदा नदीके वेगका कारण जाननेके लिये दाहिनी हाथकी उंगली ...

समीननक्रमकरःसपुष्पकुशसंस्तरः ॥ सनर्मदांभसोवेगःप्रावृट्कालइवाबभौ ॥ ६ ॥ सवेगःकार्तवीर्येणसंप्रेपितइवांभसः ॥ पुष्पोपहारंस... लंरावणस्यजहारह ॥ ७ ॥ रावणोर्धसमाप्तंतमुत्सृज्यनियमंतदा ॥ नर्मदांपश्यतेकांतांप्रतिकूलांयथाप्रियाम् ॥ ८ ॥ पश्चिमेनतुतंदृष्ट्वासागरो... रसन्निभम् ॥ वर्धंतमंभसोवेगंपूर्वामाशांप्रविश्यतु ॥ ९ ॥ ततोनुद्भ्रांतशकुनांस्वभावेपरमेस्थिताम् ॥ निर्विकारांगनाभासामपश्यद्रावणोन... दीम् ॥ १० ॥ सव्येतरकरांगुल्याह्यशब्दास्योदशाननः ॥ वेगप्रभवमन्वेष्टुंसोदिशच्छुकसारणौ ॥ ११ ॥ तौतुरावणसंदिष्टौभ्रातरौशुक... सारणौ ॥ व्योमांतरगतौवीरौप्रस्थितौपश्चिमामुखौ ॥ १२ ॥ अर्धयोजनमात्रंतुगत्वातौरजनीचरौ ॥ पश्येतांपुरुषंतोयेक्रीडंतंसहयोषितम् ॥ १३ ॥ बृहत्सालप्रतीकाशंतोयव्याकुलमूर्धजम् ॥ मदरक्तांतनयनंमदव्याकुलचेतसम् ॥ १४ ॥ नदींबाहुसहस्रेणरुंधंतमरिमर्दनम् ॥ गिरिं... पादसहस्रेणरुंधंतमिवमेदिनीम् ॥ १५ ॥ बालानांवरनारीणांसहस्रेणसमावृतम् ॥ समदानांकरेणूनांसहस्रेणेवकुंजरम् ॥ १६ ॥ तमद्भुततरंदृष्ट्वा राक्षसौशुकसारणौ ॥ सन्निवृत्तावुपागम्यरावणांतमथोचतुः ॥ १७ ॥

शुक सारणको संकेत करता हुआ ॥ ११ ॥ वीरश्रेष्ठ दोनों भ्राता वह शुक और सारण रावणकी आज्ञाके अनुसार पश्चिमकी ओरको चले गये ॥ १२ ॥ इन दुष्ट दोनों निशाचरोंने दो कोश मार्ग चलकर देखा कि, एक पुरुष कुछ एक स्त्रियोंको लेकर जलविहार कर रहा है ॥ १३ ॥ वह पुरुष बडेभारी शालवृक्षकी समान ऊंचा ... मोरा था मदिराके पीनेसे मतवाला हो रहाथा, उसके केश जलमें भीग रहे थे, उसके दोनों नेत्र कुछ लाल होरहे थे ॥ १४ ॥ सुमेरु पर्वत जिस प्रकार स... चरणोंसे पृथ्वीको धारण किये हुएहै वैसेही यह पुरुष अपनी सहस्र बांहोंसे नदीके वेगको रोक रहाथा ॥ १५ ॥ सहस्र २ शोभायमान युवतियें उनको घेर रहीहैं मानों हजारों मदमाती हथिनियें गजराजको पकडे हुएहैं ॥ १६ ॥ राक्षस शुक और सारण उस अद्भुत पुरुषको देख लौटकर रावणके पास आय ... को

[illegible]

रहाहै ॥ १८ ॥ उसकी बाँहोंके द्वारा नर्मदाका जल रुक जानेसे यह नदी वारंवार बढती है जैसे पूर्वकालमें समुद्र बढा था ॥ १९ ॥ शुक, सारणके मुखसे यह वचन सुनकर रावण यह कह संग्राम करनेकी लालसासे गया कि, बस "यही अर्जुनहै" ॥ २० ॥ राक्षसराज रावणने जब कार्त्तवीर्य अर्जुनके विरुद्ध युद्धयात्रा की, तब धूरिसे मिलाहुआ पवन अतिप्रचंड करके बडे वेगसे चलने लगा ॥ २१ ॥ मेघ समस्त रक्त वर्षा करके एकाएकी गर्ज उठे, राक्षसराज रावण महोदर, महापार्श्व, धूम्राक्ष और शुक सारणके सहित अर्जुनकी ओरको गया ॥ २२ ॥ वह इन सबोंके सहित बलवान् राक्षस अतिशीघ्र वहां आय पहुँचा

बृहत्सालप्रतीकाशःकोप्यसौराक्षसेश्वर ॥ नर्मदांरोधवद्बुद्धाक्रीडापयतियोषितः ॥ १८ ॥ तेनबाहुसहस्रेणसन्निरुद्धजलानदी ॥ सागरोद्गारसंकाशानुद्गारान्सृजतेमुहुः ॥ १९ ॥ इत्येवंभाषमाणौतौनिशम्यशुकसारणौ ॥ रावणोर्जुनइत्युक्त्वासययौयुद्धलालसः ॥ २० ॥ अर्जुनाभिमुखेतस्मिन्रावणेराक्षसाधिपे ॥ चंडःप्रवातिपवनःसनादःसरजास्तथा ॥ २१ ॥ सरक्तंचकृतोरावःसकृत्पपतोघनैः ॥ महोदरमहापार्श्वधूम्राक्षशुकसारणैः ॥ २२ ॥ संवृतोराक्षसेंद्रस्तुतत्रागाद्यत्रचार्जुनः ॥ अदीर्घेणैवकालेनसतदाराक्षसोबली ॥ २३ ॥ तंनर्मदाह्रदंभीममाजगामांजनप्रभः ॥ सतत्रस्त्रीपरिवृतंवासिताभिरिवद्विपम् ॥२४॥ नरेंद्रंपश्यतेराजाराक्षसानांतदार्जुनम् ॥ सरोषाद्रक्तनयनोराक्षसेंद्रोबलोद्धतः ॥ २५ ॥ इत्येवमर्जुनामात्यानाहगंभीरयागिरा ॥ अमात्याःक्षिप्रमाख्यातहैहयस्यनृपस्यवै ॥ २६ ॥ युद्धार्थंसमनुप्राप्तोरावणोनामनामतः ॥ रावणस्यवचःश्रुत्वामंत्रिणोथार्जुनस्यते ॥ २७ ॥ उत्तस्थुःसायुधास्तंचरावणंवाक्यमब्रुवन् ॥ युद्धस्यकालोविज्ञातःसाधुभोःसाधुरावण ॥ २८ ॥ यःक्षीबंस्त्रीगतंचैवयोद्धुमुत्सहसेनृपम् ॥ स्त्रीसमक्षगतंयत्त्वंयोद्धुमुत्सहसेनृपम् ॥ २९ ॥

जहां अर्जुन विहार कर रहा था ॥ २३ ॥ अंजनकी समान काली प्रभावाला रावण जब उस कुंडके पास पहुँचा, तो सुगन्धित स्त्रियोंके संग क्रीडा करते हुए हाथीकी समान ॥ २४ ॥ राजा अर्जुनको उस राक्षसपतिने देखा और देखतेही मारे क्रोधके लाल नेत्रकर ॥ २५ ॥ अर्जुनके मंत्रियोंसे गंभीर शब्दकर यह बोला, हे मंत्रियो ! तुम लोग हैहयनृपति अर्जुनसे अति शीघ्र कहो कि, ॥ २६ ॥ रावण नाम राक्षसपति आपके साथ युद्ध करनेको आयाहै, रावणके यह वचन सुन अर्जुनके मंत्री ॥ २७ ॥ सब शस्त्र उठाकर रावणसे यह वचन बोले, हे साधु रावण ! तुमने युद्धके लिये अच्छा समय छांटाहै ॥ २८ ॥ इस समय मद पीकर

मत वालेहो हमारा राजा स्त्रियोंके साथ जलविहार कररहाहै; और तुम इस समय उनके साथ युद्ध करनेकी इच्छा करतेहो ॥ २९ ॥ इसलिये हे रावण ! तुम इस समय क्षमा करके आज रात्रिको इसी स्थानमें वास करो; अथवा जो तुमको राजा अर्जुनके साथ युद्ध करनेकी अधिक इच्छाहो ॥ ३० ॥ और युद्धकी अभिलाषासे तुम्हें अतितलावेली पडीहो तो पहले तुम युद्ध करके हमारा विनाश करो फिर राजा अर्जुनके साथ युद्ध करना ॥ ३१ ॥ उसके उपरान्त रावणके क्षुधित मंत्रियोंने राजाके कुछ मंत्रियोंको मार डाला, और कुछको भक्षण करना आरंभ किया ॥ ३२ ॥ इसके पीछे अर्जुनके सेवकोंका और रावणके मंत्रियोंका "हलहला" शब्द नर्मदाके किनारे गुंजारने लगा ॥ ३३ ॥ अर्जुनके मंत्रिगण बाण, तोमर, प्रास, त्रिशूल और वज्रादि आयुधोंको मार मंत्रियोंके सहित रावणको पीडित करते हुए चारोंओरसे धाये ॥ ३४ ॥ नाके, मीन और मच्छ सहित सागरमें जिस प्रकार शब्द हुआ करताहै वैसेही हैहयाधिपति अर्जुनके वीर लोगोंका दारुण वेग हुआ ॥ ३५ ॥ इसके उपरान्त प्रहस्त और शुक, सारण इत्यादि रावणके मंत्रियोंने अतिक्रोधित हो अपना विक्रम प्रकाश करते हुए अर्जुनकी सेनाका विनाश करना आरंभ किया ॥ ३६ ॥ तब दूतोंने भयके मारे चकितहो विहार करते हुए राजा अर्जुनके निकट जायकर उससे रावणका और रावणके मंत्रियोंका यह कार्य सुनाया ॥ ३७ ॥ तब वह राजा अर्जुन स्त्रियोंको "कुछ भय नहीं है" कहकर गंगाजीके जलसे निकलते हुए अंजननामक दिग्गजकी समान नर्मदाके जलसे निकला ॥ ३८ ॥ युगान्त कालकी अग्निके समान अर्जुनरूपपावक क्रोधसे नेत्र लाल कर प्रज्वलित हुआ ॥ ...

क्षमस्वाद्यदशग्रीवउष्यतांरजनीत्वया ॥ युद्धश्रद्धातुयद्यस्तिश्वस्तातसमरेर्जुनम् ॥ ३० ॥ यदिवापित्वरातुभ्यंयुद्धतृष्णासमावृत ॥ निपात्यास्मानणेयुद्धमर्जुनेनोपयास्यसि ॥ ३१ ॥ ततस्तेरावणामात्यैरमात्यास्तेनृपस्यतु ॥ सूदिताश्चापितेयुद्धेभक्षिताश्चबुभुक्षितैः ॥ ३२ ॥ ततोहलहलाशब्दोनर्मदातीरगोबभौ ॥ अर्जुनस्यानुयात्राणांरावणस्यचमंत्रिणाम् ॥३३॥ इषुभिस्तोमरैःप्रासैस्त्रिशूलैर्वज्रकर्षणैः॥ सरावणानर्दयंतःसमंतात्समभिद्रुताः ॥ ३४ ॥ हैहयाधिपयोधानांवेगआसीत्सुदारुणः ॥ सनक्रमीनमकरसमुद्रस्येवनिस्वनः ॥ ३५ ॥ रावणस्यतुतेमात्याःप्रहस्तशुकसारणाः ॥ कार्तवीर्यबलंक्रुद्धानिर्दहंतिस्मस्वतेजसा ॥ ३६॥ अर्जुनायतुतत्कर्मरावणस्यसमंत्रिणः ॥ क्रीडमानायकथितंपुरुषैर्भयविह्वलैः ॥३७॥ श्रुत्वानभेतव्यमितिस्त्रीजनंसतदार्जुनः ॥ उत्ततारजलात्तस्माद्गंगातोयादिवांजनः ॥ ३८ ॥ क्रोधदूषितनेत्रस्तुसतदार्जुनपावकः ॥ प्रजज्वालमहाघोरोयुगांतइवपावकः ॥ ३९ ॥ सतूर्णतरमादायवरहेमांगदोगदाम् ॥ अभिदुद्रावरक्षांसितमांसीवदिवाकरः ॥ ४० ॥

अति वेगसे आय पहुँचा ॥४१॥ कि, विंध्याचल पर्वत जिसप्रकार सूर्य भगवान्के मार्गको रोकेहुए था वैसेही प्रहस्त मूसल हाथमें लेकर राजा अर्जुनका मार्ग रोक विंध्याचलकी समान अटलभावसे विराजमान होगया ॥४२॥ फिर मदसे उद्धत हुए प्रहस्तने क्रोध कर लोहेके बंदोंसे बँधा हुआ घोर मूसल राजाके मारनेको छोड यमराजकी समान शब्द किया ॥ ४३ ॥ मानों सब दिशाओंको भस्म करनेहीके लिये अशोकके फूलकी चोटीके समान अग्नि प्रहस्तके हाथसे छूटे मूसलसे राजाके सन्मुख उत्पन्न हुई ॥ ४४ ॥ तब कार्त्तवीर्य अर्जुनने विकलताविहीन हो उस अपने ऊपर आते हुए मूसलको अपनी गदासे अति सावधानतापूर्वक रोका॥४५॥

बाहुविक्षेपकरणांसमुद्यम्यमहागदाम् ॥ गारुडंवेगमास्थायआपपातैवसोर्जुनः ॥ ४१ ॥ तस्यमार्गंसमारुध्यविंध्योर्कस्येवपर्वतः ॥ स्थितोविंध्यइवाकंप्यःप्रहस्तोमुसलायुधः ॥ ४२ ॥ ततोस्यमुसलंघोरंलोहबद्धंमदोद्धतः ॥ प्रहस्तःप्रेषयन्क्रुद्धोररासचयथांतकः॥ ४३ ॥ तस्याग्रेमुसलस्याग्निरशोकापीडसन्निभः ॥ प्रहस्तकरमुक्तस्यबभूवप्रदहन्निव ॥ ४४ ॥ आधावमानंमुसलंकार्तवीर्यस्तदार्जुनः ॥ निपुणंवंचयामासगदयागतविक्लवः ॥४५॥ ततस्तमभिदुद्रावसगदोहैहयाधिपः ॥ भ्रामयाणोगदांगुर्वींपंचबाहुशतोच्छ्रयाम् ॥ ४६ ॥ ततोहतोतिवेगेनप्रहस्तोगदयातदा ॥ निपपातस्थितःशैलोवज्रिवज्रहतोयथा ॥ ४७ ॥ प्रहस्तंपतितंदृष्ट्वामारीचशुकसारणाः ॥ समहोदरधूम्राक्षाअपसृप्तारणाजिरात ॥४८॥ अपक्रांतेष्वमात्येषुप्रहस्तेचनिपातिते ॥ रावणोभ्यद्रवत्तूर्णमर्जुनंनृपसत्तमम् ॥ ४९ ॥ सहस्रबाहोस्तद्युद्धंविंशद्बाहोश्चदारुणम् ॥ नृपराक्षसयोस्तत्रआरब्धंरोमहर्षणम् ॥५०॥ सागराविवसंक्षुब्धौचलमूलाविवाचलौ ॥ तेजोयुक्ताविवादित्यौप्रदहंताविवानलौ ॥५१॥ बलोद्धतौयथानागौवासितार्थेयथावृषौ ॥ मेघाविवविनर्दंतौसिंहाविवबलोत्कटौ ॥ ५२ ॥

इसके पीछे गदाधारी हैहयपति अर्जुन अपनी पांचसौ बांहोंसे उस भारी गदाको उठाय घुमाते २ प्रहस्तके सन्मुख धाया ॥ ४६ ॥ तिस काल अतिवेगवान उस गदासे घायलहो प्रहस्त कुछ काल खडा रहकर फिर गिरपडा जैसे इन्द्रजीका वज्र लगनेसे पर्वतका शिखर गिरे ॥ ४७ ॥ प्रहस्तको गिरा हुआ देख मारीच, शुक, सारण, महोदर और धूम्राक्ष रणभूमिमे भाग गये ॥ ४८ ॥ प्रहस्तके गिरजाने और मंत्रियोंके भाग जानेपर रावण अति शीघ्र नृप अर्जुनके ऊपर धावमान हुआ ॥ ४९ ॥ सहस्रबाहु नरपति अर्जुन और बीस बांहोंवाले राक्षस रावणका घोर रोमहर्षण दारुण संग्राम होने लगा ॥ ५० ॥ खलबलाते हुए दो समुद्र, गमन करनेवाले दो पर्वत, तेज युक्त दो दिवाकर, दहन करने वाले दो अग्नि ॥ ५१ ॥ हथिनीके लिये युद्ध करते हुए दो बलवान् हस्तियोंकी समान, गर्जते

हुए दो मेघोंकी समान और बलगर्वित दो सिंहोंकी समान ॥ ५२ ॥ रुद्र व कालकी नाईं वह राक्षस रावण और अर्जुन दोनों गदा ग्रहण करके एक दूसरेको अत्यन्त ताडन करने लगे ॥ ५३ ॥ जिसप्रकार पर्वत घोर प्रहारकोभी सहन कर लेतेहैं; वैसेही वह नर और राक्षस गदाघावको सहन करने लगे ॥ ५४ ॥ जैसे वज्रके गिरनेका शब्द सुनाई आताहै; वैसेही उनके गदाप्रहारका शब्द दशों दिशामें गूँजने लगा ॥५५॥ अर्जुनकी उस गदाने शत्रुकी छातीमें गिरकर बिजलीकी समान आकाशमंडलको सुवर्णके रंगका करदिया ॥ ५६ ॥ वैसेही रावणकी गदाभी वारंवार अर्जुनकी छातीपर गिरकर महापर्वतके ऊपर गिरीहुई उल्काकी समान प्रकाशित होने लगी ॥ ५७ ॥अ ्न या राक्षसपति किसीकोभी कुछ क्लेश नहीं हुआ, वरन् बलि और इन्द्रकी नाईं उन दोनोंका समान संग्राम होनेलगा ॥ ५८ ॥

रुद्रकालाविवक्रुद्धौतौतदाराक्षसार्जुनौ ॥ परस्परंगदांगृह्यताडयामासतुर्भृशम् ॥ ५३ ॥ वज्रप्रहारानचलायथाघोरान्विषेहिरे ॥ गदाप्रहारांस्तौ तत्रसेहातेनरराक्षसौ ॥ ५४ ॥ यथाशनिरवेभ्यस्तुजायतेथप्रतिश्रुतिः ॥ तथातयोर्गदापोथैर्दिशःसर्वाःप्रतिश्रुताः ॥ ५५ ॥ अर्जुनस्यगदासा तुपात्यमानाऽहितोरसि ॥ कांचनाभंनभश्चक्रेविद्युत्सौदामनीयथा ॥५६॥ तथैवरावणेनापिपात्यमानामुहुर्मुहुः ॥ अर्जुनोरसिनिर्भातिगदोल्केवम हागिरौ ॥५७॥ नार्जुनःखेदमायातिनराक्षसगणेश्वरः ॥ सममासीत्तयोर्युद्धंयथापूर्वंबलींद्रयोः ॥ ५८ ॥ शृंगैरिववृषायुध्यन्दंताग्रैरिवकुंजरौ ॥ परस्परंविनिघ्नंतौनरराक्षससत्तमौ ॥ ५९ ॥ ततोर्जुनेनक्रुद्धेनसर्वप्राणेनसागदा ॥ स्तनयोरंतरेमुक्तारावणस्यमहोरसि ॥ ६० ॥ वरदानकृतत्रा णेसागदारावणोरसि ॥ दुर्बलेवयथावेगंद्विधाभूतापतत्क्षितौ ॥ ६१ ॥ सत्वर्जुनप्रयुक्तेनगदाघातेनरावणः ॥ अपासर्पद्धनुर्मात्रंनिषसादचनिष्ट नन् ॥ ६२ ॥सविह्वलंतदालक्ष्यदशग्रीवंततोऽर्जुनः ॥ सहसोत्पत्यजग्राहगरुत्मानिवपन्नगम् ॥ ६३ ॥

जैसे दो बैल सींगोंसे लडतेहों और जैसे दो कुंजर परस्पर संग्राम करतेहों वैसेही नरश्रेष्ठ अर्जुन और राक्षसश्रेष्ठ रावण परस्पर चोट चलानेलगे ॥ ५९ ॥ इसके पीछे अर्जुनने कोप कर अति बलके साथ वह गदा रावणकी विशाल छातीमें मारी ॥ ६० ॥ रावणकी छाती वरदानके प्रभावसे रक्षितथी इस कारण वह गदा बलहीनकी समान अपने वेग अनुसार प्रहार करनेको असमर्थ हो और स्वयं दो टुकडेहो पृथ्वीपर गिरपडी ॥ ६१ ॥ तथापि रावण अर्जुनकी चलाई हुई गदासे घायलहो धनुष्[illegible] हाथ दूर पीछेको हटकर पृथ्वीपर बैठगया ॥६२॥ तब अर्जुनने रावणको विह्वल देखकर सहसा कूद रावणको ऐसा पकड लिया

रावणको पकडकर बांध लिया ॥६४॥ जब रावण बँधगया तब सिद्ध चारण और देवता "बहुत अच्छा ! बहुत अच्छा !!" कह राजा अर्जुनके ऊपर फूलोंकी वर्षा करने लगे ॥६५॥ व्याघ्र जिसप्रकार मृगको, सिंह जिसप्रकार हाथीको ग्रहण करे वैसेही हैहयराज अर्जुन रावणको पकड करके हर्षके मारे मेघकी समान गंभीर शब्दसे गर्जने लगे ॥ ६६ ॥ इस ओर राक्षस प्रहस्त सावधानहो रावणको बँधाहुआ देख एकाएकी हैहयपति अर्जुनके सन्मुख धावमान हुआ ॥ ६७ ॥ तब उस राक्षसोंकी सेनाका आगमनवेग वर्षाकालके समय समुद्रमें जाती हुई नदियोंके समान जान पडने लगा ॥ ६८ ॥ जब राक्षस खडे रहो २ छोडदो छोडदो यह वचन

सतुबाहुसहस्रेणबलाद्गृह्यदशाननम् ॥ बबंधबलवान्राजाबलिंनारायणोयथा ॥ ६४ ॥ बध्यमानेदशग्रीवेसिद्धचारणदेवताः ॥ साध्वीतिवादिनः पुष्पैःकिरंत्यर्जुनमूर्धनि ॥ ६५ ॥ व्याघ्रोमृगमिवादायमृगराडिवकुंजरम् ॥ ररासहैहयोराजाहर्षादंबुदवन्मुहुः ॥ ६६ ॥ प्रहस्तस्तुसमाश्वस्तो दृष्ट्वाबद्धंदशाननम् ॥ सहसाराक्षसःक्रुद्धअभिदुद्रावहैहयम् ॥६७॥ नक्तंचराणांवेगस्तुतेषामापततांबभौ ॥ उद्धूतआतपापायेपयोदानामिवांबुधौ ॥६८॥ मुंचमुंचेतिभाषंतस्तिष्ठतिष्ठेतिचासकृत् ॥ मुसलानिचशूलानिसोत्ससर्जतदारणे ॥ ६९ ॥ अप्राप्तान्येवतान्याशुअसंभ्रांतस्तदार्जुनः ॥ आयुधान्यमरारीणांजग्राहारिनिषूदनः ॥ ७० ॥ ततस्तान्येवरक्षांसिदुर्धरैःप्रवरायुधैः ॥ भित्त्वाविद्रावयामासवायुरंबुधरानिव ॥ ७१ ॥ राक्षसांस्त्रासयामासकार्तवीर्यार्जुनस्तदा ॥ रावणंगृह्यनगरंप्रविवेशसुहृद्वृतः ॥ ७२ ॥ सकीर्यमाणःकुसुमाक्षतोत्करैर्द्विजैःसपौरैःपुरुहूतसन्निभः ॥ ततोर्जुनःस्वांप्रविवेशतांपुरींबलिंनिगृह्येवसहस्रलोचनः ॥ ७३ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे द्वात्रिंशः सर्गः ॥ ३२ ॥

कहते हुए शूल इत्यादि शस्त्र वारंवार संग्राममें चलाने लगे ॥ ६९ ॥ तब शत्रुसंहारी राजा अर्जुन शत्रु राक्षसोंके उन आयुधोंको अपने शरीरमें लगनेसे पहले शीघ्रतापूर्वक ग्रहण करलेते हुए ॥ ७० ॥ वायु जिसप्रकार मेघसमूहका नाश करता है वैसेही अर्जुनने दुर्द्धर्ष व उत्तम आयुधोंसे उन राक्षसोंको बाँध कर ताडित किया ॥ ७१ ॥ तब कार्तवीर्य अर्जुन राक्षसोंको त्रासित करताहुआ सुहृद्गणोंके साथ रावणको पकड नगरमें पैठा ॥ ७२ ॥ तब पुरवासी और ब्राह्मण इस इन्द्रकी समान पराक्रमी राजा अर्जुनके मस्तकपर अक्षत और फूलोंकी वर्षा करने लगे, सहस्रलोचन इन्द्र जिसप्रकार बलिपर विजय पाय अपनी नगरी अमरावतीमें आयेथे वैसेही अर्जुन रावणको लेकर अपनी उस पुरीमें पैठे ॥ ७३ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषाटीकायां द्वात्रिंशः सर्गः ॥ ३२ ॥

रावणग्रहणंतत्तुवायुग्रहणसन्निभम् ॥ ततःपुलस्त्यःशुश्रावकथितंदिविदैवतैः ॥ १ ॥ ततःपुत्रकृतस्नेहात्कंप्यमानोमहाधृतिः ॥ माहिष्मतीप तिंद्रष्टुमाजगाममहानृपिः ॥ २ ॥ सवायुमार्गमास्थायवायुतुल्यगतिर्द्विजः ॥ पुरींमाहिष्मतींप्राप्तोमनःसंपातविक्रमः ॥ ३ ॥ सोमरावतिसंका शांहृष्टपुष्टजनावृताम् ॥ प्रविवेशपुरींब्रह्माइंद्रस्येवामरावतीम् ॥ ४ ॥ पादचारमिवादित्यंनिष्पतंतंसुदुर्दशम् ॥ ततस्तेप्रत्यभिज्ञायअर्जुनाय न्यवेदयन् ॥ ५ ॥ पुलस्त्यइतिविज्ञायवचनाद्धैहयाधिपः ॥ शिरस्यंजलिमाधायप्रत्युद्गच्छत्तपस्विनम् ॥ ६ ॥ पुरोहितोस्यगृह्यार्घ्यंमधुपर्कं तथैवच ॥ पुरस्तात्प्रययौराज्ञःशक्रस्येवबृहस्पतिः ॥ ७ ॥ ततस्तमृपिमायांतमुद्यंतमिवभास्करम् ॥ अर्जुनोदृश्यसंभ्रांतोववंदेंद्रइवेश्वरम् ॥ ८ ॥ सतस्यमधुपर्कंगांपाद्यमर्घ्यंनिवेद्यच ॥ पुलस्त्यमाहराजेंद्रोहर्पगद्गदयागिरा ॥ ९ ॥ अद्यैवममरावत्यातुल्यामाहिष्मतीकृता ॥ अद्याहंतुद्विजेंद्र त्वांयस्मात्पश्यामिदुर्दशम् ॥ १० ॥ अद्यमेकुशलंदेवअद्यमेकुशलंव्रतम् ॥ अद्यमेसफलंजन्मअद्यमेसफलंतपः ॥ ११ ॥ यत्तेदेवगणैर्वंद्यौवंदेऽहंच रणौतव ॥ इदंराज्यमिमेपुत्राइमेदाराइमेवयम् ॥ ब्रह्मन्किंकुर्मिकिंकार्यमाज्ञापयतुनोभवान् ॥ १२ ॥

तब पुत्रके स्नेहके मारे महाधीरजवान् महाऋषि पुलस्त्य माहिष्मती नगरीके पति राजा अर्जुनके पास गये ॥ १ ॥ सुरलोकमें देवतोंके निकट, पवनके पकडे जानेके समान असंभव रावणके पकडनेका वृत्तान्त ऋषि पुलस्त्यजीने सुना ॥ २ ॥ तब पवनकी समान गतिवाले ब्राह्मणश्रेष्ठ पुलस्त्यजी पवनके मार्गका आश्रय ले मनकी समान वेगसे माहिष्मती पुरीमें आये ॥ ३ ॥ ब्रह्माजी जिसप्रकार इन्द्रजीकी अमरावती पुरीमें प्रवेश करते हैं वैसेही हृष्ट पुष्ट जनोंसे भरी पुरी अमरावतीकी समान माहिष्मती नगरीमें पुलस्त्यजी प्रवेश करते हुए ॥ ४ ॥ आकाशसे आये हुए सूर्यकी समान अति कठिनतासे देखने योग्य पैदल आते हुए मुनिको जाकर द्वारपालोंने राजा अर्जुनसे उनके आनेका समाचार निवेदन किया ॥५॥ राजा अर्जुन दूतोंके कहनेसे पुलस्त्यजी ऋषिको आया जान शिरसे हाथ जोड उन तपस्वीकी अगवानी करनेको चला ॥ ६ ॥ इन्द्रजीके आगे २ साक्षात् बृहस्पतिजीकी समान राजा अर्जुनके आगे २ अर्घ्य और मधुपर्क लेकर राजपुरोहित चला ॥ ७ ॥ फिर उदय हुए सूर्यभगवान्की समान उन ऋषिको आया हुआ देखकर सहस्रबाहुने प्रणाम किया जैसे ब्रह्माजीको देखकर इन्द्रजी प्रणाम करते हैं ॥ ८ ॥ तब राजाने उनके लिये अर्घ्य मधुपर्क गो पाद्य समर्पण करके हर्षके मारे गद्गद वचनोंसे मुनि पुलस्त्यजीसे कहा ॥ ९ ॥ हे महाराज ! आपका दर्शन अत्यन्त दुर्लभ है तो भी आज आपके दर्शन किये, आपने माहिष्मती नगरीको अमरावतीकी समान किया ॥ १० ॥ आज हमारी तपस्या सिद्ध हुई, यज्ञ सुफल और व्रत पूरा हुआ अधिक क्या कहैं आज हमारी सबही प्रकारसे कुशल है ॥ ११ ॥ हे देव ! देवताओंके वंदन करने योग्य आपके चरण हमने वंदन किये । हे भगवन् ! हम राज्यकी समस्त प्रजा स्त्री पुत्र इत्यादि हम सबही उपस्थित हैं सो आज्ञा दीजिये कि, आपका कौन [illegible] ॥ १२ ॥

तुम रावणको त याहै,इस कारण तुम्ह तु । ह स रणम अ

पोतेको तुमने संग्राममें हरायाहै ॥ १५ ॥ हे वत्स ! तुमने हमारे पोतेका यश छीन लियाहै और तुमने अपना नाम "रावणविजयी" विख्यात कियाहै, इसलिये हमारे वचनोंके अनुसार प्रार्थना करनेपर तुम रावणको छोड दो ॥ १६ ॥ राजाओंमें श्रेष्ठ अर्जुनने पुलस्त्य ऋषिकी आज्ञा सुनकर कुछभी उत्तर न दिया वरन्र हर्षितहो राक्षसपति रावणको छोडदिया ॥ १७ ॥ अधिक करके अर्जुनने देवताओंके शत्रु रावणको छोड दिव्य आभूषण, माला और वस्त्र देकर उसको सम्मानित

तंधर्मेऽग्निपुत्रेपुशिवंपृष्ट्वाचपार्थिवम् ॥ पुलस्त्योवाचराजानंहैहयानांतथार्जुनम् ॥ १३ ॥ नरेंद्रांबुजपत्राक्षपूर्णचंद्रनिभानन ॥ अतुलंतेबलंयेनदशग्रीवस्त्वयाजितः ॥ १४ ॥ भयाद्यस्योपतिष्ठेतांनिष्पंदौसागरानिलौ ॥ सोयंमृधेत्वयाबद्धःपौत्रोमेरणदुर्जयः ॥ १५ ॥ पुत्रकस्ययशःपीतंनामविश्रावितंत्वया ॥ मद्वाक्याद्याच्यमानोद्यमुंचवत्सदशाननम् ॥ १६ ॥ पुलस्त्याज्ञांप्रगृह्याथनाकिंचनवचोर्जुनः ॥ मुमोचैवपार्थिवेंद्रोराक्षसेंद्रंप्रहृष्टवत् ॥ १७ ॥ सतंप्रमुच्यत्रिदशारिमर्जुनः प्रपूज्यदिव्याभरणस्रगंवरैः ॥ अहिंसकंसख्यमुपेत्यसाग्निकंप्रणम्यतंब्रह्मसुतंगृहंययौ ॥१८॥ पुलस्त्येनापिसंत्यक्तोराक्षसेंद्रःप्रतापवान् ॥ परिष्वक्तःकृतातिथ्योलज्जमानोविनिर्जितः ॥१९॥ पितामहसुतश्चापिपुलस्त्योमुनिपुंगवः ॥ मोचयित्वादशग्रीवंब्रह्मलोकंजगामह ॥ २० ॥ एवंसरावणःप्राप्तःकार्तवीर्यात्प्रधर्षणम् ॥ पुलस्त्यवचनाच्चापिपुनर्मुक्तोमहाबलः ॥ २१ ॥ एवंबलिभ्योबलिनःसंतिराघवनंदन ॥ नावज्ञाहिपरेकार्यायइच्छेच्छ्रेयआत्मनः ॥ २२ ॥

किया और अग्निके सामने हिंसाहीन मित्रता स्थापन की. तब अर्जुन ब्रह्माजीके पुत्र पुलस्त्यजीको प्रणाम करके अपने गृहको चलागया ॥१८॥ पुलस्त्यजीके प्रभावसे छूटकर प्रतापशाली राक्षसराज रावणने राजा अर्जुनकी पहुनई ग्रहण की और उस करके भेंटा जायकर चित्तमें लाज किये वहांसे चलागया ॥ १९ ॥ ब्रह्माजीके पुत्र मुनियोंमें श्रेष्ठ पुलस्त्य मुनि रावणको छुडाय ब्रह्मलोकको चले गये ॥ २० ॥ महाबलवान् रावण कार्तवीर्यके निकट इस प्रकारसे हारकर बँधाथा और फिर पुलस्त्यजीके वचनोंसे छूटाथा ॥ २१ ॥ हे रघुनंदनजी ! बलवान्सेभी इसप्रकार और अनेक बलवान् हैं इससे जो कोई अपना भला होनेकी इच्छा करे तो उसको दूसरेका

आघात करना उचित नहीं है ॥२२॥ इसके पीछे वह निशाचरराज रावण सहस्रबाहु अर्जुनसे मित्रता स्थापितकर गर्वके मारे नृपालोंका विनाश करते २ पृथ्वीमें घूमने लगा ॥२३॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मी०आदि०उत्तरकांडे भाषाटीकायां त्रयस्त्रिंशः सर्गः ॥३३॥ राक्षसपति रावण जब अर्जुनसे छूटगया और उनकी मित्रताभी होगई, तब वह वेदनारहितहो समस्त पृथ्वीपर घूमने लगा ॥१॥ अधिक क्या कहैं मनुष्य या राक्षस जिसको रावण अधिक बलवान् सुनता उसीके द्वार जाय उसको युद्ध करनेके लिये पुकारता ॥२॥ किसी समय रावणने वालिपालित किष्किन्धा नगरीमें जाय वहां हेममाली वालिको युद्ध करनेके लिये पुकारा ॥ ३ ॥ तब युवराज सुग्रीव ताराका पिता सुषेण और तार इत्यादि वानर मंत्रियोंने युद्धकी अभिलाषा करके आये हुए रावणसे कहा ॥ ४ ॥ कि, हे राक्षसेन्द्र!

ततःसमराजापिशिताशनानांसहस्रबाहोरुपलभ्यमैत्रीम् ॥ पुनर्नृपाणांकदनंचकारचचारसर्वांपृथिवींचदर्पात् ॥२३॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये उत्तरकांडे त्रयस्त्रिंशःसर्गः ॥३३॥ अर्जुनेनविमुक्तस्तुरावणोराक्षसाधिपः॥ चचारपृथिवींसर्वामनिर्विण्णस्तथाकृतः ॥१॥ राक्षसंवामनुष्यंवाशृणुतेयंबलाधिकम् ॥ रावणस्तंसमासाद्ययुद्धेह्वयतिदर्पितः॥२॥ ततःकदाचित्किष्किंधांनगरींवालिपालिताम् ॥ गत्वाह्वयतियुद्धाय वालिनंहेममालिनम् ॥३॥ ततस्तुवानरामात्यास्तारस्तारापिताप्रभुः ॥ उवाचवानरोवाक्यंयुद्धप्रेप्सुमुपागतम् ॥४॥ राक्षसेंद्रगतोवालीयस्तेप्रतिबलोभवेत् ॥ कोन्यःप्रमुखतःस्थातुंतवशक्तःप्लवंगमः ॥५॥ चतुर्भ्योपिसमुद्रेभ्यःसंध्यामन्वास्यरावण ॥ इमंमुहूर्तमायातिवालीतिष्ठमुहूर्तकम् ॥ ६ ॥ एतानस्थिचयान्पश्ययएतेशंखपांडुराः ॥ युद्धार्थिनामिमेराजन्वानराधिपतेजसा ॥ ७ ॥ यद्यामृतरसःपीतस्त्वयारावणराक्षस ॥ तदा वालिनमासाद्यतदंतंतवजीवितम् ॥ ८ ॥ पश्येदानींजगच्चित्रमिमंविश्रवसःसुत ॥ इदंमुहूर्तंतिष्ठस्वदुर्लभंतेभविष्यति ॥ ९ ॥

जो तुमसे युद्ध करेंगे वह वालि सन्ध्या करनेको गये हैं, इसके अतिरिक्त और कोई वानर तुम्हारे सामने युद्धमें ठहर नहीं सकताहै ॥ ५ ॥ इसकारण हे रावण ! एक मुहूर्त मात्र ठहरो, वाली चारों समुद्रोंपर सन्ध्या कर अब आयाही चाहताहै॥६॥हे राजन् ! शंखकी समान श्वेत हड्डियोंका ढेर जो आप देखते हैं, यह वानराधिपति वालिके तेज प्रभावसे पराजित युद्धगामी वीरोंके कंकाल हैं ॥७॥ हे राक्षस रावण ! जो तुमने अमृत रसभी पिया होगा तो भी वालीके निकट जानेसे तुम्हारे जीवनका अन्त होजायगा ॥ ८ ॥ हे रावण ! एक मुहूर्तमात्र ठहरनेसे तुम्हारा जीना दुर्लभ हो जायगा, इससे इस जगत्को [illegible] ॥ ९ ॥

॥१०॥ यह सुनकर त्रिलोकीमें उपद्रव करनेवाला रावण तारका निरादर करके पुष्पक विमान पर सवारहो दक्षिण समुद्रके किनारेपर गया॥११॥ तरुण अरुण की समान मुखवाले सुवर्णके पर्वतकी नाईं वाली वहांपर संध्या कर रहाथा ॥१२॥ वह अंजनके रंगकी समान काला रावण यह देख वालीको पकडनेके लिये विमानसे उतर दबे पैरोंसे चला॥१३॥तब वालीनेभी इच्छानुसार नेत्र फिराय रावणको देखलिया परन्तु उसका बुरा अभिप्राय जानकरभी वाली चलायमान नहीं हुआ॥१४॥ सिंह जिसप्रकार सरहेको और गरुड जिसप्रकार सर्पको देखकर नहीं घबडाते हैं वैसेही मनमें पापका संकल्प किये हुए रावणको देखकर वालीने कुछभी न...

अथगात्वरसेमतुंगच्छद्दक्षिणसागरम्॥वालिनंददृश्यसेतत्रभूमिष्ठमिवपावकम्॥१०॥सतुतारंविनिर्भर्त्स्यरावणोलोकरावणः॥ पुष्पकंतत्समारुह्यप्रययौदक्षिणार्णवम् ॥११॥ तत्रहेमगिरिप्रख्यंतरुणार्कनिभाननम् ॥ रावणोवालिनंदृष्ट्वासंध्योपासनतत्परम् ॥ १२ ॥ पुष्पकादवरुह्याथरावणोंजनसन्निभः ॥ ग्रहीतुंवालिनंतूर्णंनिःशब्दपदमव्रजत् ॥१३॥ यदृच्छयातदादृष्टोवालिनापिसरावणः ॥ पापाभिप्रायकंदृष्ट्वाचकारनतुसंभ्रमम् ॥१४॥ शशमालक्ष्यसिंहोवापन्नगंगरुडोयथा ॥ नचिंतयतितंवालीरावणंपापनिश्चयम् ॥ १५ ॥ जिघृक्षमाणमायांतंरावणंपापचेतसम् ॥ कक्षावलंबिनंकृत्वागमिष्येत्रीन्महार्णवान् ॥ १६ ॥ द्रक्ष्यंत्यरिंममांकस्थंस्रंसदूरुकरांबरम् ॥ लंबमानंदशग्रीवंगरुडस्येवपन्नगम् ॥ १७ ॥ इत्येवंमतिमास्थायवालीमौनमुपास्थितः ॥ जपन्वैनैगमान्मंत्रांस्तस्थौपर्वतराडिव ॥ १८ ॥ तावन्योन्यंजिघृक्षंतौहरिराक्षसपार्थिवौ ॥ प्रयत्नवंतौतत्कर्मईहतुर्बलदर्पितौ ॥ १९ ॥ हस्तग्राह्यंतुतंमत्वापादशब्देनरावणम् ॥ पराङ्मुखोपिजग्राहवालीसर्पमिवांडजः ॥ २० ॥

समझा ॥१५॥ वालीने मनहीमन विचार किया कि यह पापी हमारे पकडनेको आताहै; इसकारण इसको काँखमें दबायकर हम तीन महासमुद्रोंपर घूमेंगे ॥१६॥ सबही देखेंगे कि, शत्रु रावण हमारी कांखमें गरुडजीसे पकडे हुए सर्पकी समान लटकता हुआ जाताहै और इसकी जांघें हाथभी आकाशमें लटकतीहुई दीखेंगी ॥ १७ ॥ वाली मनहीमन ऐसा विचारकर चुप होरहा और वेदके मंत्रोंका पाठ करताहुआ पर्वतराजकी समान विराजमान होनेलगा ॥१८॥ बलसे गर्वित वानरराज और राक्षसराज पकडनेके अभिलाषी हो दोनों एक दूसरेको अति यत्नसे पकडनेकी चेष्टा करने लगे ॥ १९ ॥ परन्तु वालीने साधारण पगाहटसे जान लिया कि, रावण अब ऐसे स्थानमें आगया कि अब हम उसको हाथसे पकडलेंगे बस उसने चटसे वैसेही रावणको पकडलिया कि, जैसे गरुडजी सर्पको

पकडलियाहै ॥२०॥ ग्रहण करनेकी अभिलाषा किये राक्षसनाथ रावणको वानरश्रेष्ठ वालीने पकड लिया और उसको कांखमें लगाय दृढतासे पकड अतिवेगसे आकाशमार्गको वाली कूदगया ॥ २१ ॥ तिसके पीछे वाली वारंवार पीडित करते और नोंचते हुए रावणको इस प्रकारसे लेगया जैसे पवन मेघोंको भगादेताहै ॥ २२ ॥ जब रावण पकडगया तब रावणके सब मंत्री उसके छुडानेकी अभिलाषा किये चिंघाड करतेहुए आकाशमार्गमें अतिवेगसे जातेहुए वालीके पीछे २ धाये ॥ २३ ॥ साथ चलते हुए मेघोंसे आकाशमें विराजमान सूर्यभगवान् जिसप्रकार शोभायमान होतेहैं; आकाशके बीचमें स्थित हुआ वालीभी पीछे दौडते हुए राक्षसोंसे वैसेही दीप्तिमान् होने लगा ॥ २४ ॥ तब राक्षसगण वालीके पकडनेको समर्थ न होसके, वरन् वालीकी जांघें और बाँहोंके वेगके मारे थककर

ग्रहीतुकामंतंगृह्यरक्षसामीश्वरंहरिः ॥ खमुत्पपातवेगेनकृत्वाकक्षावलंबिनम् ॥२१॥ तंचपीडयमानंतुवितुदंतंनखैर्मुहुः ॥ जहाररावणंवालीपवनस्तोयदंयथा ॥२२॥ अथतेराक्षसामात्याह्रियमाणेदशानने ॥ मुमोक्षयिषवोवालिंरवमाणाअभिद्रुताः ॥२३॥ अन्वीयमानस्तैर्वालीभ्राजतेऽम्बरमध्यगः॥अन्वीयमानोमेघौघैरंबरस्थइवांशुमान्॥२४॥ तेऽशक्नुवंतःसंप्राप्तुंवालिनंराक्षसोत्तमाः॥ तस्यबाहूरुवेगेनपरिश्रांताव्यवस्थिताः॥२५॥ वालिमार्गादपाक्रामन्पर्वतेंद्राहिगच्छतः॥ किंपुनर्जीवनप्रेप्सुर्बिभ्रद्वैमांसशोणितम् ॥२६॥ अपक्षिगणसंपातान्वानरेंद्रोमहाजवः॥ क्रमशःसागरान्सर्वान्संध्याकालमवंदत ॥२७॥ संपूज्यमानोयातस्तुखचरैःखचरोत्तमः ॥ पश्चिमंसागरंवालीआजगामसरावणः॥२८॥ तस्मिन्संध्यामुपासित्वास्नात्वाजप्त्वाचवानरः ॥ उत्तरंसागरंप्रायाद्वहमानोदशाननम् ॥ २९ ॥ बहुयोजनसाहस्रंवहमानोमहाहरिः ॥ वायुवच्चमनोवच्चजगामसहशत्रुणा ॥ ३० ॥ उत्तरेसागरेसंध्यामुपासित्वादशाननम् ॥ वहमानोगमद्वालीपूर्ववैसमहोदधिम् ॥ ३१ ॥

एक जगह स्थित होगये ॥ २५ ॥ पर्वतश्रेष्ठ गणभी गमन करते हुए वालीके मार्गसे हट जातेथे फिर मांस और शोणितधारी प्राणियोंकी तो बातही क्याहै॥२६॥ अति शीघ्रतासे गमन करने वाला वाली इतने ऊंचेमे उडकर जाताथा कि जहांपर पक्षियोंके उडनेकीभी गति नहीं थी, इसप्रकार क्रम २ से वाली सब समुद्रोंपर जाय प्रातःकालीन सन्ध्याके वन्दन करने योग्यका ध्यान करने लगा ॥ २७ ॥ आकाशचारियोंमें श्रेष्ठ वाली रावणको साथ लिये आकाशचारियोंसे पूजितहो पश्चिमके समुद्रपर गमन करनेलगा ॥२८॥ वहां स्नान व सन्ध्याकर और जप करता हुआ वाली रावणको लेकर उत्तरके समुद्रपर गया ॥ २९ ॥ वह महावानर वाली [illegible] वायु और मनकी समान शीघ्रतासे चला ॥ ३० ॥ उत्तरके समुद्रपर संध्या करके वाली रावणको

चला ॥ ३२ ॥ चारों समुद्रोंपर सन्ध्यावन्दन करनेसे और रावणका बोझा उठानेसे वाली थककर किष्किन्धापुरीके उपवनमें कूदा ॥३३॥ फिर कपिश्रेष्ठ वालीने अपनी कांखसे रावणको छोड दिया और बारम्बार हँसकर रावणसे कहा कि, "तुम कहाँसे चले आतेहो" ॥ ३३ ॥ तब परम विस्मितहो राक्षस रावण श्रमके मारे चंचलनेत्रहो उस वानरोंके राजासे यह बोला ॥ ३५ ॥ कि, हे महेन्द्रकी समान वानरेन्द्र ! हम राक्षसपति रावण युद्धकी अभिलाषासे तुम्हारे निकट आयेथे परन्तु आज हम तुमसे हारगये क्योंकि तुमने हमको कांखमें रख लिया ॥ ३६ ॥ हे वीर ! आपने हमको पशुकी समान पकडकर चारों समुद्रोंपर घुमायाहै इस

तत्रापिसंध्यामन्वास्यवासविःसहरीश्वरः ॥ किष्किंधामभितोगृह्यरावणंपुनरागमत् ॥ ३२ ॥ चतुर्ष्वपिसमुद्रेषुसंध्यामन्वास्यवानरः ॥ रावणोद्वहनश्रांतःकिष्किंधोपवनेपतत् ॥ ३३ ॥ रावणंतुमुमोचाथस्वकक्षात्कपिसत्तमः ॥ कुतस्त्वमितिचोवाचप्रहसन्रावणंमुहुः ॥ ३४ ॥ विस्मयंतुमहद्गत्वाश्रमलोलनिरीक्षणः ॥ राक्षसेंद्रोहरींद्रंतमिदंवचनमब्रवीत् ॥ ३५ ॥ वानरेंद्रमहेंद्राभराक्षसेंद्रोस्मिरावणः ॥ युद्धेप्सुरिहसंप्राप्तः सचाद्यासादितस्त्वया ॥ ३६ ॥ अहोबलमहोवीर्यमहोगांभीर्यमेवच ॥ येनाहंपशुवद्गृह्यभ्रामितश्चतुरोर्णवान् ॥ ३७ ॥ एवमश्रांतवद्वीरशीघ्रमेव चवानर ॥ मांचैवोद्वहमानस्तुकोन्योवीरभविष्यति ॥ ३८ ॥ त्रयाणामेवभूतानांगतिरेषाप्लवंगम ॥ मनोनिलसुपर्णानांतवचात्रनसंशयः ॥३९॥ सोहंदृष्टबलस्तुभ्यमिच्छामिहरिपुंगव ॥ त्वयासहचिरंसख्यंसुस्निग्धंपावकाग्रतः ॥ ४० ॥ दाराःपुत्राःपुरंराष्ट्रंभोगाच्छादनभोजनम् ॥ सर्वमेवा विभक्तंनोभविष्यतिहरीश्वर ॥ ४१ ॥ ततःप्रज्वालयित्वाग्निंतावुभौहरिराक्षसौ ॥ भ्रातृत्वमुपसंपन्नौपरिष्वज्यपरस्परम् ॥ ४२ ॥

कारण आपका गंभीरपन, वीर्य और बल, सबही विचित्रहै ॥ ३७ ॥ हे वीर वानर ! आप हमको इसप्रकार शीघ्रतापूर्वक ले चलते हुएभी नहीं थके हैं; परन्तु इसप्रकार हमें ले चलनेको और कौन समर्थ होगा ? ॥ ३८ ॥ हे वानर ! मन, पवन और गरुड इन तीन प्राणियोंमें ही ऐसी गतिहै सो आपमें भी वैसेही गमन शक्तिहै इसमें कुछ संदेह नहीं ॥३९॥ हे वानरश्रेष्ठ ! हमने आपका बल प्रत्यक्ष देखा; इस कारण अग्निके सन्मुख हम आपके साथ निष्कपट चिरस्थायिनी मित्रता करना चाहतेहैं ॥ ४० ॥ हे वानरेश्वर ! आजसे स्त्री, पुत्र, पुर, राज्य, भोग, आच्छादन और भोजन समस्तही हम तुम दोनोंका एक रहेगा इसमें कुछ अन्तर न होगा ॥ ४१ ॥ इसके उपरान्त वानरराज और राक्षस दोनों अग्नि जलाय परस्पर भेंटकर भ्रातृपन लाभ करते हुए ॥ ४२ ॥

फिर वह वानर और राक्षस हर्षितहो एक दूसरेका हाथ पकडे हुए पर्वतकी गुहामें दो सिंहोंकी समान किष्किन्धामें प्रवेश करते हुए ॥४३॥ इसके पीछे त्रिभुवनके नाश करनेकी अभिलाषा किये वहांपर आये हुए मंत्रियोंके साथ मिलकर रावणने सुग्रीवकी समान किष्किन्धापुरीमें एक मास विताया । [सुग्रीवकी समान कहनेका यह तात्पर्यहै कि, वालिने रावणको अपने लघु भ्राता सुग्रीवकी समान रक्खा] ॥४४॥ हे प्रभो ! वालिने रावणको इस प्रकारसे पीडित करके फिर अग्निको स्थापन करके इस प्रकारसे मित्रता की थी, सो हमने आपसे यह समस्त वृत्तान्त कहा ॥४५॥ हे राम ! वालिमें अनुपम उत्तम वलथा परन्तु अग्नि जिस प्रकार पतंगेको जला देतीहै वैसेही आपने उस वालीको दग्ध किया ॥ ४६ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्ये उत्तरकांडे भाषाटीकायां चतुस्त्रिंशः सर्गः ॥ ३४ ॥ तब जिज्ञासु श्रीरामचन्द्रजी विनीत हो हाथ जोड दक्षिण दिशामें वास करनेवाले अगस्त्य मुनिसे अर्थयुक्त वचन बोले ॥ १ ॥ श्रीरामचन्द्रजी बोले कि, वाली

अन्योन्यंलंबितकरौततस्तौहरिराक्षसौ॥किष्किंधांविशतुर्हृष्टौसिंहौगिरिगुहामिव॥४३॥सतत्रमासमुषितःसुग्रीवइवरावणः॥अमात्यैरागतैर्नीतस्त्रैलोक्योत्सादनार्थिभिः॥४४॥एवमेतत्पुरावृत्तंवालिनारावणःप्रभो॥धर्षितश्चकृतश्चापिभ्रातापावकसन्निधौ॥४५॥वलमप्रतिमंरामवालिनोऽभवदुत्तमम्॥सोपित्वयाविनिर्दग्धःशलभोवह्निनायथा॥४६॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे चतुस्त्रिंशःसर्गः ॥३४॥ अपृच्छततदारामोदक्षिणाशाश्रयंमुनिम्॥ प्रांजलिर्विनयोपेतइदमाहवचोर्थवत् ॥१॥ अतुलंबलमेतद्वैवालिनोरावणस्यच ॥ नत्वेताभ्यांहनुमतासमंत्विति मतिर्मम॥२॥शौर्यंदाक्ष्यंबलंधैर्यंप्राज्ञतानयसाधनम्॥विक्रमश्चप्रभावश्चहनूमतिकृतालयाः॥३॥दृष्ट्वैवसागरंवीक्ष्यसीदंतींकपिवाहिनीम् ॥ समाश्वास्यमहाबाहुर्योजनानांशतंप्लुतः॥४॥ धर्षयित्वापुरींलंकांरावणांतःपुरंतदा ॥ दृष्टासंभाषिताचापिसीताह्याश्वासितातथा ॥५॥ सेनाग्रगामंत्रिसुताःकिंकराराव‌णात्मजः॥एतेहनुमतातत्रएकेनविनिपातिताः॥६॥भूयोबंधाद्विमुक्तेनभाषयित्वादशाननम्॥लंकाभस्मीकृतायेनपावकेनेवमेदिनी॥७॥

और रावणके इस बलकी उपमा नहीं परन्तु हम जानतेहैं कि, उनका बल हनुमान्की समान नहीं था ॥ २ ॥ विशेष करके शूरता, धीरता, बल, शीघ्र करना, प्राज्ञता, नीति, उपाय, विक्रम और प्रभाव यह सबही हनुमान्में प्रतिष्ठित हैं ॥ ३ ॥ जब समुद्रको देखकर वानरोंकी सेना घवडागई तब महावीर हनुमान् यह देखकर उस सेनाको ढाढस बँधाय समझाय बुझाय् शत योजनके फांटवाले समुद्रको कूद गये ॥४॥ तब लंकापुरीको अधिष्ठिता देवताको प्रहार करके रावणके अंतःपुरमें सीताका दर्शन पाय उनसे वार्ता कर उनको अनेक भाँतिसे समझाया ॥ ५ ॥ अधिक क्या कहें अकेले हनुमाननेही रावणके सेनापतियोंको, मंत्रीके पुत्रोंको, किङ्करोंको और एक रावणके पुत्रकोभी मार डालाथा ॥६॥ फिर हनुमानने ब्रह्मास्त्रके बंधनसे छूट संभाषणमें रावणका निरादरकर अग्निसे लंका नगरीको भस्मकर दिया, जैसे पावक पृथ्वीको

॥ ८ ॥ हमने पवनकुमारके भुजवीर्य द्वारा राज्य, जय, मित्र, बान्धव, लक्ष्मण और सीताको प्राप्त किया व लंकाभी हमारे वशमें हुई ॥ ९ ॥ अधिक क्या कहें, वानरनायकके सखा हनुमान् जो हमारे सहायक न होते तो जानकीके खोजनेको कौन समर्थ होता? ॥ १० ॥ जब वालीके साथ सुग्रीवका वैर हुआथा तब इन हनुमानने ऐसे बलवान् होकरभी सुग्रीवकी प्रिय कामनासे लतासमूहकी समान वालीको भस्म क्यों नहीं किया ॥ ११ ॥ सो हम जानतेहैं कि उसकाल हनुमान् अपने बलको नहीं जानतेथे, इस कारण जीवसेभी अधिक प्रियतम वानरराज सुग्रीवका क्लेश देखाथा ॥ १२ ॥ हे अमरपूजित भगवन् महामुने! हमने हनुमान्जीका

नकालस्यनशक्रस्यनविष्णोर्वित्तपस्यच ॥ कर्माणितानिश्रूयंतेयानियुद्धेहनूमतः ॥ ८ ॥ एतस्यबाहुवीर्येणलंकासीताचलक्ष्मणः ॥ प्राप्तामयाजयश्चैवराज्यंमित्राणिबांधवाः ॥ ९ ॥ हनुमान्यदिमेनस्याद्वानराधिपतेःसखा ॥ प्रवृत्तिमपिकोवेत्तुंजानक्याःशक्तिमान्भवेत् ॥ १० ॥ किमर्थंवाल्यनेनैवसुग्रीवप्रियकाम्यया ॥ तदावैरेसमुत्पन्नेनदग्धोवीरुधोयथा ॥ ११ ॥ नहिवेदितवान्मन्येहनूमानात्मनोबलम् ॥ यद्दृष्टवान्जीवितेष्टंक्लिश्यंतंवानराधिपम् ॥ १२ ॥ एतन्मेभगवन्सर्वंहनूमतिमहामुने ॥ विस्तरेणयथातत्त्वंकथयामरपूजित ॥ १३ ॥ राघवस्यवचःश्रुत्वाहेतुयुक्तमृषिस्ततः ॥ हनूमतःसमक्षंतमिदंवचनमब्रवीत् ॥ १४ ॥ सत्यमेतद्रघुश्रेष्ठयद्ब्रवीपिहनूमति ॥ नबलेविद्यतेतुल्योनगतौनमतौपरः ॥ ॥ १५ ॥ अमोघशापैःशापस्तुदत्तोस्यमुनिभिःपुरा ॥ नवेत्ताहिबलंसर्वंबलीसन्नरिमर्दन ॥ १६ ॥ बाल्येप्येतेनयत्कर्मकृतंराममहाबल ॥ तन्नवर्णयितुंशक्यमितिबाल्यतयास्यते ॥ १७ ॥ यदिवास्तित्वभिप्रायःसंश्रोतुंतवराघव ॥ समाधायमतिंरामनिशामयवदाम्यहम् ॥ १८ ॥

जो कुछ वृत्तान्त पूछा आप उस समस्त वृत्तान्तको विस्तारपूर्वक यथार्थही कहिये ॥ १३ ॥ अगस्त्य मुनि श्रीरामचन्द्रजीके यह हेतुयुक्त वचन सुनकर हनुमानजीके सामनेही उनसे यह वचन बोले ॥ १४ ॥ हे रघुवर! आपने हनुमानजीके संबंधमें जो कुछ कहा वह सब सत्यहै, बल, गति या बुद्धिमें हनुमान्की समान कोई विद्यमान नहींहै ॥ १५ ॥ हे शत्रुनाशन अमोघवाक्य! मुनि लोगोंने पूर्वकालमें इनको शाप दियाहै, इसी निमित्त यह हनुमान् बलवान् होकरभी अपने समस्त बलको नहीं जानते ॥ १६ ॥ बाल्य कालमें हनुमान्ने बालकपनकी चंचलताके वश हो जो दुष्कर कार्य कियाहै, सो हम आपके निकट इनके उस कार्यका वर्णन करनेकी सामर्थ्य नहीं रखतेहैं ॥ १७ ॥ अथवा हे राघव! जो आपको श्रवण करनेकी अभिलाषा हुई हो तो आप बुद्धि स्थिर करके श्रवण कीजिये, हम कहतेहैं ॥ १८ ॥

सूर्यके वरदानप्रभावसे सुवर्णरूपी सुमेरु नाम एक पर्वत है, इन हनुमान्के पिता केसरी वहांका राज्य करतेहैं ॥ १९ ॥ अंजनी नामक विख्यात उनकी प्यारी एक भार्या थी पवनने उसके गर्भसे एक औरस उत्तम पुत्र उत्पन्न किया ॥ २० ॥ उस कालमें रूपवती वह अंजनी शाल वृक्षकी फुलंचीके समान कांतिवाले इन पुत्रको उत्पन्नकर फल लेनेकी इच्छासे वनमें गई ॥ २१ ॥ यह बालक भूखके मारे और माताका दर्शन न पानेसे अति पीडितहो अत्यन्त रोदन करने लगे जैसे शरके वनमें देवसेनापति रोतेथे ॥ २२ ॥ उस कालमें जब सूर्य भगवान् कुसुमकी समान उदय होरहेथे; यह बालक उनको देखकर फलकी लालसासे सूर्यके सन्मुख कूदते हुए ॥ २३ ॥ तब मूर्तिमान् दिवाकरकी समान यह बालक बालसूर्यके ग्रहण करनेकी इच्छा करके बालप्रभाकरके सम्मुख आकाश मंडलके मध्यम मार्गको आश्रय

सूर्यदत्तवरस्वर्णःसुमेरुर्नामपर्वतः ॥ यत्रराज्यंप्रशास्त्यस्यकेसरीनामवैपिता ॥ १९ ॥ तस्यभार्याबभूवेष्टाह्यंजनेतिपरिश्रुता ॥ जनयामासतस्यांवैवायुरात्मजमुत्तमम् ॥ २० ॥ शालिशूकनिभाभासंप्रासूतेमंतदांजना ॥ फलान्याहर्तुकामावैनिष्क्रांतागहनेचरा ॥ २१ ॥ एपमातुर्वियोगाच्चक्षुधयाचभृशार्दितः ॥ रुरोदशिशुरत्यर्थंशिशुःशरवणेयथा ॥ २२ ॥ तदोद्यंतंविवस्वंतंजपापुष्पोत्करोपमम् ॥ ददर्शफललोभाच्चह्युत्पपातरविंप्रति ॥ २३ ॥ बालार्काभिमुखोबालोबालार्कइवमूर्तिमान् ॥ ग्रहीतुकामोबालार्कंप्लवतेंवरमध्यगः ॥ २४ ॥ एतस्मिन्प्लवमानेतुशिशुभावेहनूमति ॥ देवदानवयक्षाणांविस्मयःसुमहानभूत् ॥ २५ ॥ नाप्येवंवेगवान्वायुर्गरुडोनमनस्तथा ॥ यथायंवायुपुत्रस्तुक्रमतेंवरमुत्तमम् ॥ ॥ २६ ॥ यदितावच्छिशोरस्यईदृशोगतिविक्रमः ॥ यौवनंबलमासाद्यकथंवेगोभविष्यति ॥ २७ ॥ तमनुप्लवतेवायुःप्लवंतंपुत्रमात्मनः ॥ सूर्यदाहभयाद्रक्षंस्तुपारचयशीतलः ॥ २८ ॥ बहुयोजनसाहस्रंक्रामन्नेवगतोंबरम् ॥ पितुर्बलाच्चबाल्याच्चभास्कराभ्याशमागतः ॥ २९ ॥ शिशुरेपत्वदोपज्ञइतिमत्वादिवाकरः ॥ कार्यंचास्मिन्समायत्तमित्येवंनददाहसः ॥ ३० ॥

करके कूदे ॥ २४ ॥ जब यह हनुमान् बालकपनकी अवस्थामें कूदे तब क्या देवता क्या दानव क्या यक्ष सबही अत्यन्त विस्मित होकर कहने लगे ॥ २५ ॥ यह पवनपुत्र उत्तम आकाशमार्गको जिस प्रकारसे अतिक्रम कर रहेहैं, वायु, गरुड या मनका भी ऐसा वेग नहीं है ॥ २६ ॥ जब कि बालकपनमें इस बालककी ऐसी गति और वेग है तब युवा अवस्थामें बलवान् होकर यह कैसा होगा ॥ २७ ॥ अपने पुत्रके कूदनेपर पवन तुषारराशिसंयोगसे शीतलहो सूर्यका तेज कहीं पुत्रको दग्ध न करदे इसी निमित्त आकाशगामी पुत्रके पीछे चलने लगे ॥ २८ ॥ हनुमान् बालकपनकी चंचलताके वश हो आकाशमें उडकर पिताकी सहायतासे हजारों योजन आकाशमें चढकर सूर्यके निकट पहुँचे ॥ २९ ॥ परन्तु यह बालक है दोषको नहीं जानता विशेष करके आगेको इससे देवताओंका

उसी दिन राहुभी सूर्य नारायणके ग्रास करनेको चला ॥ ३१ ॥ परन्तु इन हनुमान्‌ने सूर्य भगवान्‌के रथके ऊपर राहुको स्पर्श किया, इससे चंद्रमा, सूर्यका मर्दन करनेवाला राहु शंकित होकर सूर्यमंडलसे भाग गया ॥ ३२ ॥ सिंहिकापुत्र राहु क्रोधके मारे इन्द्रके भवनमें जाय भौंहें टेढीकर देवतोंके साथ बैठेहुए इन्द्रजीसे बोला ॥ ३३ ॥ हे वासव ! हमारी क्षुधा निवृत्त करनेके निमित्त आपने हमें चंद्र, सूर्यको दियाथा, हे बलवृत्रहन् ! अब आपने उन्हें दूसरेको क्यों देदिया ॥ ३४ ॥ पर्वका समय आय जानेसे आज ग्रहण करनेकी अभिलाषाकर हम सूर्यके निकट गयेथे, परन्तु अचानक एक दूसरे राहुने आनकर सूर्यको ग्रास

यस्मिन्दिनेप्लवगराजसुतोभास्करंमुनः ॥ तमेवदिवसंराहुर्जिघृक्षतिदिवाकरम् ॥ ३१ ॥ अनेनचपरामृष्टोराहुःसूर्यरथोपरि ॥ अपक्रांतस्ततस्त्रस्तोराहुश्चंद्रार्कमर्दनः ॥ ३२ ॥ इंद्रस्यभवनंगत्वासरोषःसिंहिकासुतः ॥ अब्रवीद्भ्रुकुटिंकृत्वादेवंदेवगणैर्वृतम् ॥ ३३ ॥ बुभुक्षापनयंदत्त्वाचंद्रार्कौममवासव ॥ किमिदंतत्त्वयादत्तमन्यस्यबलवृत्रहन् ॥३४॥ अद्याहंपर्वकालेतुजिघृक्षुःसूर्यमागतः ॥ अथान्योराहुरासाद्यजग्राहसहसारविम् ॥३५॥ सराहोर्वचनंश्रुत्वावासवःसंभ्रमान्वितः ॥ उत्पपातासनंहित्वाउद्वहन्कांचनींस्रजम् ॥ ३६ ॥ ततःकैलासकूटाभंचतुर्दंतंमदस्रवम् ॥ शृंगारधारिणंप्रांशुंस्वर्णघंटाट्टहासिनम् ॥ ३७ ॥ इंद्रःकरींसमारुह्यराहुंकृत्वापुरःसरम् ॥ प्रायाद्यत्राभवत्सूर्यःसहानेनहनूमता ॥ ३८ ॥ अथातिरभसेनागाद्राहुरुत्सृज्यवासवम् ॥ अनेनचसदृष्टःप्रधावञ्छैलकूटवत् ॥ ३९ ॥ ततःसूर्यंसमुत्सृज्यराहुंफलमवेक्ष्यच ॥ उत्पपातपुनर्व्योमग्रहीतुंसिंहिकासुतम् ॥ ४० ॥ उत्सृज्यार्कमिमंरामप्रधावंतंप्लवंगमम् ॥ अवेक्ष्यैवंपरावृत्तोमुखशेषःपरांमुखः ॥ ४१ ॥

कर लिया ॥ ३५ ॥ राहुके वचन सुनकर वह कांचनमालाधारी इन्द्र घबडाय आसन छोडकर उठे ॥ ३६ ॥ फिर कैलास पर्वतके शिखरकी समान ऊंचे चार दांतांके मदधारी शृङ्गारधारी सुवर्णघण्टा रूपसे अट्टहास समन्वित ॥ ३७ ॥ हस्तियोंमें श्रेष्ठ ऐरावत हाथीपर सवारहो राहुको आगेकर इन्द्रजी वहीं गये जहां सूर्यके साथ हनुमान विराजमान् थे ॥ ३८ ॥ इन्द्रको पीछे छोड राहु उनसे पहलेही जाय अतिवेगसे वहाँ पहुँचा परन्तु विशालशरीर शृङ्गधार हनुमानको देखतेही भागगया ॥ ३९ ॥ फिर राहुकोही फल समझ सूर्यको छोड सिंहिकाके पुत्र राहुके पकडनेकी अभिलाषासे हनुमान्‌जी फिर आकाशको उछले ॥ ४० ॥ हे राम ! जब वानरश्रेष्ठ हनुमान्‌जी सूर्यको छोडकर धाये तब केवल मुखमात्रके आकारवाला राहु, इनका बडाभारी शरीर देख विमुखहो भागा ॥ ४१ ॥
(१)

राहु सिंहिकापुत्र राहु परित्राण करनेवाले इन्द्रने यह वृत्तान्त कहनेको अभिलाष किये डरके मारे वारंवार " इन्द्र इन्द्र " कहनेलगा ॥ ४२ ॥ राहु की आर्तवाणी सुनकर और उसका बोल पहँचानकर इन्द्रजीने कहा "कुछ भय नहीं है" हम इसको संहार करते हैं ॥ ४३ ॥ फिर पवनकुमार हनुमान् ऐरावत हाथीको देख " यह बड़ाभारी फल है" ऐसा विचारकर उस गजराजके सम्मुख धाये ॥ ४४ ॥ हे राघव ! जब हनुमान्जी ऐरावत हाथीको ग्रहण कर नेके लिये धाये, तो एक मुहूर्तमें इनका रूप कालानलकी समान घोर होगया ॥ ४५ ॥ परन्तु शचीनाथ इन्द्रने अत्यन्त क्रोध करके हनुमान्जीके ऊपर अपने हाथसे वज्र मारा ॥ ४६ ॥ इन्द्रका वज्र लगनेसे ताडितहो यह हनुमान् पर्वतपर गिरे और गिरनेसे इनकी बाँई हनु (ठोडी) टूटगई ॥ ४७ ॥ जब यह हनुमान्जी

इंद्रमाशंसमानस्तुत्रातारंसिंहिकासुतः ॥ इंद्रइंद्रेतिसंत्रासान्मुहुर्मुहुरभाषत ॥४२॥ राहोर्विक्रोशमानस्यप्रागेवालक्षितंस्वरम् ॥ श्रुत्वेंद्रोवाचमाभैषीरहमेनंनिषूदये ॥ ४३ ॥ ऐरावतंततोदृष्ट्वामहत्तदिदमित्यपि ॥ फलंतंहस्तिराजानमभिदुद्रावमारुतिः ॥ ४४ ॥ तथास्यधावतोरूपमैरावतजिघृक्षया ॥ मुहूर्तमभवद्घोरमिंद्राग्न्युपरिभास्वरम् ॥ ४५ ॥ एवमाधावमानंतुनातिक्रुद्धःशचीपतिः ॥ हस्तांतादतिमुक्तेनकुलिशेनाभ्यताडयत् ॥ ४६ ॥ ततोगिरौपपातैषइंद्रवज्राभिताडितः ॥ पतमानस्यचैतस्यवामाहनुरभज्यत ॥ ४७ ॥ तस्मिंस्तुपतितेचापिवज्रताडनविह्वले ॥ चुक्रोधेंद्रायपवनःप्रजानामहितायसः ॥ ४८ ॥ प्रचारंसतुसंगृह्यप्रजास्वंतर्गतःप्रभुः ॥ गुहांप्रविष्टःस्वसुतंशिशुमादायमारुतः ॥४९॥ विण्मूत्राशयमावृत्यप्रजानांपरमार्तिकृत् ॥ रुरोधसर्वभूतानियथावर्षाणिवासवः ॥५०॥ वायुप्रकोपाद्भूतानिनिरुच्छ्वासानिसर्वतः ॥ संधिभिर्भिद्यमानैश्चकाष्ठभूतानिजज्ञिरे ॥ ५१ ॥ निस्स्वाध्यायवषट्कारंनिष्क्रियंधर्मवर्जितम् ॥ वायुप्रकोपात्त्रैलोक्यंनिरयस्थमिवाभवत् ॥ ५२ ॥ ततःप्रजाःसगंधर्वाःसदेवासुरमानुषाः ॥ प्रजापतिंसमाधावन्दुःखिताश्चसुखेच्छया ॥ ५३ ॥

विकल हो वज्रके प्रहारसे गिरपडे तब पवन देवता प्रजागणोंका अहित करनेकी वासनासे इन्द्रके ऊपर कुपित हुए ॥४८॥ तब सबके शरीरमें रहनेवाले वायु अपना संचार बंद करके अपने बालक पुत्रको ले गुफामें पैठ गये ॥४९॥ अधिक क्या कहें वर्षाको रोककर इन्द्रजी जिसप्रकार सर्व प्राणियोंको पीडा देतेहैं वैसेही पवन सर्व प्राणियोंके मल मूत्राशय रोककर महाके असाध्य पीडा देने लगे ॥५०॥ पवनके कोप करनेसे सब प्राणियोंका श्वास सब भाँतिसे बंद होगया और देहके सब जोड काष्ठकी समान ... होगये ॥ ५१ ॥ पवनके कोपसे त्रिलोकीमें स्वाध्याय, वषट्कार, क्रियाकलाप और समस्त धर्म लोप होगये ... ॥ ५२ ॥ ... देवता, गन्धर्व, असुर और मनुष्य इत्यादि सबप्रजा दुःखित होकर ...

॥ ५४ ॥ मनम ! आपने पवनको हमारी आयुका अधिपति कर दियाहै, परन्तु वही वायु प्राणेश्वर होकर आज सहसा ॥५५॥ क्लेश देतेहुए हमको रुंध रहेहैं जैसे कोई अन्तःपुरमें स्त्रियोंको रोक कर रक्खे इस कारण हम वायुकरके उपहत हो आपकी शरणमें आये ॥ ५६ ॥ हे दुःखहारी ! आप हमारा पवनके रुकजानेका यह दुःख दूर कीजिये, प्रजाके ऐसे वचन सुनकर प्रजानाथ प्रजापति ॥ ५७ ॥ इसमें कोई कारणहै, यह कहकर फिर कहने लगे, जिस कारण वायुने क्रोधकर पवनको रोका है ॥ ॥ ५८ ॥ हे सर्व प्रजागण ! वह हमको कहना उचित और तुमको श्रवण करना उचित है सो तुम उसको श्रवण करो । आज सुरपति

ऊचुःप्रांजलयोदेवामहोदरनिभोदराः ॥ त्वयातुभगवन्सृष्टाःप्रजानाथचतुर्विधाः ॥ ५४ ॥ त्वयादत्तोयमस्माकमायुषःपवनःपतिः ॥ सोस्मान्प्राणेश्वरोभूत्वाकस्मादेषोद्यसत्तम ॥ ५५ ॥ रुरोधदुःखंजनयन्नंतःपुरइवस्त्रियः ॥ तस्मात्त्वांशरणंप्राप्तावायुनोपहतावयम् ॥ ५६ ॥ वायुसंरोधजं दुःखमिदंनोनुदंदुःखहन् ॥ एतत्प्रजानां श्रुत्वा तु प्रजानाथः प्रजापतिः ॥५७॥ कारणादितिचोक्त्वासोप्रजाःपुनरभाषत ॥ यस्मिंश्चकारणेवायुश्चुक्रोधचरुरोधच ॥ ५८ ॥ प्रजाःशृणुध्वंतत्सर्वंश्रोतव्यंचात्मनःक्षमम् ॥ पुत्रस्तस्यामरेशेनइन्द्रेणाद्यनिपातितः ॥ ५९ ॥ राहोर्वचनमास्थायततःप्रकुपितोऽनिलः ॥ अशरीरःशरीरेषुवायुश्चरतिपालयन् ॥ ६० ॥ शरीरंहिविनावायुंसमतांयातिदारुभिः ॥ वायुःप्राणःसुखंवायुर्वायुःसर्वमिदंजगत् ॥ ६१ ॥ वायुनासंपरित्यक्तनसुखावदतजगत् ॥ अद्येवचपरित्यक्तंवायुनाजगदायुषा ॥ ६२ ॥ अद्येवतेनिरुच्छ्वासाःकाष्ठकुड्योपमाःस्थिताः ॥ तद्यामस्तत्रयत्रास्तेमारुतोरुक्प्रदोहिनः ॥ माविनाशंगमिष्यामअप्रसाद्यादितेःसुतम् ॥ ६३ ॥

इन्द्रने पवनके पुत्रको मारा है ॥ ५९ ॥ और उन्होंने राहुके वचनोंका विश्वास ऐसा किया उसीसे पवनने कोप कियाहै, अशरीरी पवन देहधारियोंका पालन करते हुए उनके अंगमें विचरण करते हैं ॥ ६० ॥ विशेष करके वायुके विना शरीर काठके तुल्यहै इसलिये पवनही प्राण, पवनही सुख और पवनही सब जगत् है ॥ ६१ ॥ आयुरूप वायुने अभी जगतको छोड दियाहै, इस कारण वायुकरके त्यागे जाकर जगतके सब जीव सुख प्राप्त करनेको समर्थ नहीं हैं ॥ ६२ ॥ वायुने जो गृहागार भाम रुकगयाहै सो आजही तुम काष्ठ और भीत (दीवार) की समान होगये हो इसनिमित्त हम लोगोंको पीडा देनेवाले मारुत जिस स्थानमेंहैं;

...पवनजीको प्रसन्न किये नाशहीहै ॥६३॥ इसके उपरान्त ब्रह्माजी, देवता, गन्धर्व, भुजंग, गुह्यक इत्यादि प्रजाओंके साथ जहां इन्द्रसे मारेहुए ... को लिये पवन बैठेथे वहां गये ॥६४॥ तब आदित्य, अनल और सुवर्णकी समान द्युतिमान् पुत्र हनुमान्‌को सदागति पवनजीकी उछंगमें देखकर ब्रह्माजी देव... ... ऋषि, यक्ष और राक्षसोंके सहित उनपर कृपा करते हुए ॥ ६५ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषाटीकायां पंचत्रिंशः सर्गः ॥ ३५ ॥ पुत्रका वध होजानेसे शोकसे संतापित हुए पवन देवता ब्रह्माजीको देख उस बालकको ले शीघ्रतासे खडे होगये ॥ १ ॥ सुवर्णमय भूषणोंके पहरनेसे शोभा... मान पवन देवता तीन बार साष्टाङ्ग प्रणाम करके ब्रह्माजीके चरणोंमें गिरे, तब उनके कुण्डल, माला और शिरके भूषण हिलने लगे ॥ २ ॥ तब अनादि ...

ततःप्रजाभिःसहितःप्रजापतिःसदेवगंधर्वभुजंगगुह्यकैः ॥ जगामयत्रास्यतितत्रमारुतःसुतंसुरेंद्राभिहतंप्रगृह्यसः ॥ ६४ ॥ ततोर्कवैश्वानरकांचनप्रभंसुतंतदोत्संगगतंसदागतेः ॥ चतुर्मुखोवीक्ष्यकृपामथाकरोत्सदेवगंधर्वऋषियक्षराक्षसः ॥ ६५ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे पंचत्रिंशः सर्गः ॥ ३५ ॥ ततःपितामहंदृष्ट्वावायुपुत्रवधार्दितः ॥ शिशुकंतंसमादायउत्तस्थौधातुरग्रतः ॥ १ ॥ चलत्कुंडलमौलिस्रक्तपनीयविभूषणः ॥ पादयोन्यपतद्वायुस्त्रिरुपस्थायवेधसे ॥ २ ॥ तंतुवेदविदातेनलंबाभरणशोभिना ॥ वायुमुत्थाप्यहस्तेनशिशुंतंपरिमृष्टवान् ॥ ३ ॥ स्पृष्टमात्रस्ततःसोथसलीलंपद्मजन्मना ॥ जलसिक्तंयथासस्यंपुनर्जीवितमाप्तवान् ॥ ४ ॥ प्राणवंतमिमंदृष्ट्वाप्राणोगंधवहोमुदा ॥ चचारसर्वभूतेषुसन्निरुद्धंयथापुरा ॥ ५ ॥ मरुद्रोधाद्विनिर्मुक्तास्ताःप्रजामुदिताभवन् ॥ शीतवातविनिर्मुक्ताःपद्मिन्यइवसांबुजाः ॥ ६ ॥ ततस्त्रियुग्मस्त्रिककुत्रिधामात्रिदशार्चितः ॥ उवाचदेवताब्रह्मामारुतप्रियकाम्यया ॥ ७ ॥ भोमहेंद्राग्निवरुणामहेश्वरधनेश्वराः ॥ जानतामपिवःसर्वंवक्ष्यामिश्रूयतांहितम् ॥ ८ ॥

वेदार्थ जाननेवाले ब्रह्माजीने अलंकारोंसे शोभित अपने हाथसे वायु देवको उठाय उस बालक हनुमान्‌जीको स्पर्श किया ॥ ३ ॥ उसकाल वह बालक कमलयोनि ब्रह्माजीने लीलापूर्वक छुआ जावाही जलसे सींचेहुए धानकी समान फिर जीवित होगया ॥ ४ ॥ गन्ध बहनेवाले प्राणभूत वायु अपने पुत्रको जीवित देखकर हर्ष... मारे अपनी रोक छोड पहलेकी समान सब प्राणियोंमें विचरण करने लगे ॥ ५ ॥ कमलके साथ कमलिनी जिसप्रकार शीत वातसे छुटकारा पाय प्रफुल्ल हो जाती वैसेही समस्त प्रजा पवनके रोकनेसे छूट प्रफुल्ल हुई ॥ ६ ॥ यश, वीर्य, ऐश्वर्य श्री, ज्ञान और वैराग्यसमन्वित त्रिमूर्ति देवताओंसे पूजित त्रिलोकधाम ब्रह्मा... पवनजीका प्रिय करनेकी कामनासे बोले ॥ ७ ॥ महेन्द्र, अग्नि, वरुण, महेश्वर, धनेश्वर इत्यादि देवगण ! तुम लोग जानते हो ...

तब प्रसन्नवदन सहस्रनयन इन्द्रजीने प्रसन्न हो सुवर्णके कमल फूलोंकी माला देकर यह कहा ॥ १० ॥ हमारे हाथसे छूटे वज्र करके इनकी हनु टूट गईहै, इस कारण यह कपिशार्दूल "हनुमान्" नामसे विख्यात होंगे ॥ ११॥ इनको हम एक औरभी अद्भुत वरदान देतेहैं कि, अबसे यह हनुमान् हमारे वज्रसे भी अवध्य होंगे ॥ १२ ॥ तब तिमिरनाशक ज्योतिःप्रकाशक भगवान् सूर्य बोले, हमने अपने तेजका सौवाँ अंश इनको दिया ॥ १३ ॥ जिस समय यह शास्त्र पढनेमें समर्थ होंगे उस समयमें हम इनको शास्त्र पढावेंगे तिससे यह हनुमान् वाग्मी होंगे ॥ १४ ॥ वरुणजीने यह वर दिया कि, हमारी फांसीसे या जलसे दश

अनेनशिशुनाकार्यंकर्तव्यंवोभविष्यति ॥ तद्ददध्वंवरान्सर्वेमारुतस्यास्यतुष्टये ॥ ९ ॥ ततःसहस्रनयनःप्रीतियुक्तःशुभाननः ॥ कुशेशयमयींमालामुत्क्षिप्येदंवचोब्रवीत् ॥ १० ॥ मत्करोत्सृष्टवज्रेणहनुरस्ययथाहतः ॥ नाम्नावैकपिशार्दूलोभविताहनुमानिति ॥११॥ अहमस्यप्रदास्यामि परमंवरमद्भुतम् ॥ इतःप्रभृतिवज्रस्यममावध्योभविष्यति ॥१२॥ मार्तंडस्त्वब्रवीत्तत्रभगवांस्तिमिरापहः ॥ तेजसोस्यमदीयस्यददामिशतिकां कलाम् ॥ १३ ॥ यदाचशास्त्राण्यध्येतुंशक्तिरस्यभविष्यति ॥ तदास्यशास्त्रंदास्यामियेनवाग्मीभविष्यति ॥ १४ ॥ वरुणश्चवरंप्रादान्नास्यमृत्युर्भविष्यति ॥ वर्षायुतशतेनापिमत्पाशादुदकादपि ॥ १५ ॥ यमोदंडादवध्यत्वमरोगत्वंचदत्तवान् ॥ वरंददामिसंतुष्टअविषादंचसंयुगे ॥ १६ ॥ गदेयंमामिकानैनंसंयुगेषुवधिष्यति ॥ इत्येवंधनदःप्राहतदाह्येकाक्षिपिंगलः ॥ १७ ॥ मत्तोमदायुधानांचअवध्योयंभविष्यति ॥ इत्येवंशंकरेणापिदत्तोस्यपरमोवरः ॥ १८ ॥ विश्वकर्माचदृष्ट्वेमंबालंप्रतिमहारथः ॥ मत्कृतानिचशस्त्राणियानिदिव्यानितानिच ॥ तैरवध्यत्वमापन्नश्चिरजीवीभविष्यति ॥ १९ ॥ दीर्घायुश्चमहात्माचब्रह्मातंप्राब्रवीद्वचः ॥ सर्वेषांब्रह्मदंडानामवध्यत्वंभविष्यति ॥ २० ॥

हजार वर्षतक भी इनकी मृत्यु नहीं होगी ॥ १५ ॥ यमने सन्तुष्ट होकर इनको वरदान दिया कि यह हमारे दंडसे न मारे जायँगे, सदा निरोगी रहेंगे; इनको युद्धमें कभी विषाद न होगा ॥ १६ ॥ एकाक्षी पिंगल धनद कुबेरजीने उस कालमें यह वरदान दिया कि, यह हनुमान् हमसे व हमारी गदासे न मारे जायँगे ॥ १७ ॥ यह हनुमान हमारे भी सब अस्त्र शस्त्रोंसे अवध्य होंगे, शिवजीने भी इनको इसप्रकारका परम वर दिया ॥ १८ ॥ महारथी विश्वकर्माजीने ऐसा देखकर बालकसे कहा कि हमारे बनाये हुए जो दिव्य अस्त्र शस्त्र हैं यह बालक उन सबसे अवध्य होकर सदा जीवित रहेगा ॥ १९ ॥ ब्रह्माजीने उनसे कहा

तुम सबके जाननेवाले और दीर्घायु होगे, ब्रह्मास्त्रसे व ब्रह्मशापसेभी तुम अवध्य होगे ॥ २० ॥ इसके पीछे जगद्गुरु चतुरानन ब्रह्माजी देवताओंके वरसे इनको अलंकृत देख सन्तुष्टचित्तहो पवन देवतासे बोले ॥ २१ ॥ हे मारुत ! तुम्हारा पुत्र मारुति शत्रुओंको भय देनेवाला, मित्रोंको अभय देनेवाला और अजीत होगा ॥ २२ ॥ अधिक करके यह कपिवर इच्छानुसार रूप धारणकर; गमन और भक्षण करसकेगा, अधिक क्या कहें, यह बालक कीर्तिमान् होगा और इसकी गति किसीसे नहीं रुकेगी ॥ २३ ॥ और रावणको नाश करनेवाले श्रीरामचंद्रजीको प्रसन्नता उपजाने वाले रोमहर्षण कार्य संग्राममें सिद्ध करेगा ॥ ॥ २४ ॥ ब्रह्मादि सब देवता ऐसा कहकर पवन देवताको प्रसन्नकर अपने २ परिवारोंके साथ जैसे आयेथे वैसेही चले गये ॥ २५ ॥ गन्धवह पवन भी पुत्रको

ततः सुरगणांतुवरैर्दृष्ट्वाह्येनमलंकृतम् ॥ चतुर्मुखस्तुष्टमनावायुमाहजगद्गुरुः ॥ २१ ॥ अमित्राणांभयकरोमित्राणामभयंकरः ॥ अजेयोभविता पुत्रस्तवमारुतमारुतिः ॥ २२ ॥ कामरूपःकामचारीकामगःप्लवतांवरः ॥ भवत्यव्याहतगतिःकीर्तिमांश्चभविष्यति ॥ २३ ॥ रावणोत्साद नार्थानिरामप्रीतिकराणिच ॥ रोमहर्षकराण्येवकर्ताकर्माणिसंयुगे ॥ २४ ॥ एवमुक्तातमामंत्र्यमारुतंत्वमरैःसह॥ यथागतंययुःसर्वेपितामहपुरो गमाः ॥ २५ ॥ सोपिगंधवहःपुत्रंप्रगृह्यगृहमानयत् ॥ अंजनायास्तमाख्यायवरंदत्त्वाविनिर्गतः ॥ २६ ॥ प्राप्यरामवरानेषवरदानबलान्वितः ॥ जवेनात्मनिसंस्थेनसोऽसौपूर्णइवार्णवः ॥ २७ ॥ तरसापूर्यमाणोपितदावानरपुंगवः ॥ आश्रमेषुमहर्षीणामपराध्यतिनिर्भयः ॥ २८ ॥ स्रुग्भां डान्यग्निहोत्राणिवल्कलानांचसंचयान् ॥ भग्नविच्छिन्नविध्वस्तान्सुशांतानांकरोत्ययम् ॥ २९ ॥ एवंविधानिकर्माणिप्रावर्ततमहाबलः ॥ सर्वेषांब्रह्मदंडानामवध्यःशंभुनाकृतः ॥ ३० ॥ जानंतऋषयःसर्वेसहंतेतस्यशक्तितः ॥ तथाकेसरिणात्वेषवायुनासोंजनीसुतः ॥ ३१ ॥

लेकर घर आये और अंजनाके निकट वरदानका वृत्तान्त वर्णन करके वहांसे चलेगये ॥ २६ ॥ हे राम ! वरदानके वश यह बलवान् हनुमान् समस्त वर पाय समुद्रकी समान देहिक बलमें परिपूर्ण हुए ॥ २७ ॥ यह वानरश्रेष्ठ उसकाल वेगमें परिपूर्णहो निर्भय चित्तसे ऋषिगणोंके आश्रमोंमें उपद्रव मचाने लगे ॥ २८ ॥ यह हनुमान् शान्त [illegible] मुनिजनोंके स्रुक, भाण्ड इत्यादि यज्ञके उपकरण तोड़ने लगे, अग्निहोत्रकी अग्निको बिथराय देते और वल्कलोंको विध्वंस करने लगे ॥ २९ ॥ [illegible] करने लगे ॥ ३० ॥ [illegible]

इनको यह शाप दिया कि, हे वानर ! तुम जिस बलका आश्रय करके हमको पीडित करते हो ॥३३॥ सो तुम हमारे शापसे मोहित हो बहुत कालतक इस बलको नहीं जान सकोगे परन्तु जब कोई तुम्हारी कीर्तिको तुमको याद दिलादिया करेगा; तब तुम्हारा बल बढेगा ॥ ३४ ॥ तिसके पीछे यह हनुमान ऋषियोंके वचनप्रभावसे बलवीर्य विहीनहो मृदुभावसे आश्रमोंमें घूमने लगे ॥ ३५ ॥ सूर्यके समान तेजस्वी ऋक्षराज वानरोंके राजाने वह वालि और सुग्रीवके पिता थे ॥ ३६ ॥ वह वानराधिपति ऋक्षराज बहुत दिन तक राज्य करके फिर कालके वश हुए ॥ ३७ ॥ जब वह ऋक्षराज

प्रतिषिद्धोपिमर्यादांलंघयत्येववानरः ॥ ततोमहर्षयःक्रुद्धाभृग्वंगिरसवंशजाः ॥ ३२ ॥ शेपुरेनंरघुश्रेष्ठनातिक्रुद्धातिमन्यवः ॥ बाधसेयत्समाश्रित्यबलमस्मान्प्लवंगम ॥ ३३ ॥ तद्दीर्घकालंवेत्तासिनास्माकंशापमोहितः ॥ यदातेस्मार्यतेकीर्तिस्तदातेवर्धतेबलम् ॥ ३४ ॥ ततस्तुहततेजौजामहर्षिवचनौजसा ॥ एषोश्रमाणितान्येवमृदुभावंगतोचरत् ॥ ३५ ॥ अथर्क्षरजसोनामवालिसुग्रीवयोःपिता ॥ सर्ववानरराजासीत्तेजसाइवभास्करः ॥ ३६ ॥ सतुराज्यंचिरंकृत्वावानराणांमहेश्वरः ॥ ततस्त्वर्क्षरजानामकालधर्मेणयोजितः ॥ ३७ ॥ तस्मिन्नस्तमितेचाथमंत्रिभिर्मत्रकोविदैः ॥ पित्र्येपदेकृतोवालीसुग्रीवोवालिनःपदे ॥ ३८ ॥ सुग्रीवेणसमंत्वस्यअद्वैधंछिद्रवर्जितम् ॥ आबाल्यंसख्यमभवदनिलस्याग्निना यथा ॥ ३९ ॥ एषशापवशादेवनवेदबलमात्मनः ॥ वालिसुग्रीवयोर्वैरंयदारामसमुत्थितम् ॥ ४० ॥ नह्येषरामसुग्रीवोभ्राम्यमाणोपिवालिना ॥ देवजानातिनह्येषबलमात्मनिमारुतिः ॥ ४१ ॥ ऋषिशापाहृतबलस्तदैवकपिसत्तमः ॥ सिंहःकुंजररुद्धोवाआस्थितःसहितोरणे ॥ ४२ ॥ पराक्रमोत्साहमतिप्रतापसौशील्यमाधुर्यनयानयैश्च ॥ गांभीर्यचातुर्यसुवीर्यधैर्यैर्हनूमतःकोप्यधिकोस्तिलोके ॥ ४३ ॥

मृत्युको प्राप्त हुए तब मंत्र जाननेवाले मंत्रियोंने वालीको पिताके पदपर और वालीके पदपर सुग्रीवको अभिषेकित किया ॥ ३८ ॥ अग्निके साथ पवनकी नाई वालीका बालकपनसे ही सुग्रीवके साथ दोषरहित अद्वितीय मित्रभाव होगया ॥ ३९ ॥ परंतु हे राम ! जिस समय वाली और सुग्रीवमें विरोध उत्पन्न हुआ उस कालमें यह हनुमानजी शाप लगजानेसे अपने बलको नहीं जानतेथे ॥ ४० ॥ हे देव राम ! सुग्रीवजीभी इस समाचारको नहीं जानतेथे कि, पवनकुमार हनुमान् अपनी सामर्थ्यको नहीं जानते ॥ ४१ ॥ जो कुछ भी हो ऋषियोंके शापसे बल गमाये वह कपिश्रेष्ठ हनुमान् सुग्रीवजी विपदके समयमें हाथीसे घिरे हुए सिंहकी समान सुग्रीवजीके साथ रहतेथे ॥ ४२ ॥ पराक्रम, उत्साह, बुद्धि, प्रताप, सुशीलता, मधुरता, नीति, ज्ञान, गंभीरता, चतुरता

धैर्य और धीरता इत्यादि गुणोंमें हनुमान्‌जीसे अधिक इस लोकमें कोई भी नहींथा ॥ ४३ ॥ और यह वानरश्रेष्ठ व्याकरण सीखनेके लिये सूर्यके सन्मुख ह्वै उठ २ उदयगिरिसे अस्ताचलतक चले जातेथे ॥ ४४ ॥ अधिक क्या कहें इन अप्रमेय वानरेन्द्रसे सूत्र, वृत्ति, महाभाष्य और संग्रहके सहित महाअर्थयुक्त महत्‌ग्रंथअर्थके सहित ग्रहण करके उनमें सिद्धि प्राप्त की थी ॥ ४५ ॥ वरन् इनकी समान शास्त्रविशारद और कोई भी नहींहै, यह समस्त विद्या, क्या छन्द, क्या तप विधान, सब बातोंमेंही बृहस्पतिजीकी समान हैं, प्रलयकालके समय उफनते हुए समुद्र दहनाभिलाषी पावक और यमराजके सम्मुख कोई जैसे खडा नहीं होसकताहै वैसेही इन हनुमान्‌के सम्मुख कोईभी खडे होनेकी सामर्थ्य नहीं रखता ॥ ४६ ॥ हे राम ! इनकीही समान तुम्हारी सहायताके अर्थ देवगणोंने

असौपुनर्व्याकरणंग्रहीष्यन्सूर्योन्मुखःप्रष्टुमनाःकपींद्रः ॥ उद्यद्गिरेरस्तगिरिंजगामग्रंथंमहद्धारयनप्रमेयः ॥ ४४ ॥ससूत्रवृत्त्यर्थपदंमहार्थंससंग्रहंसिद्ध्यतिवैकपींद्रः ॥ नह्यस्यकश्चित्सदृशोस्तिशास्त्रेवैशारदेछंदगतौतथैव ॥ ४५ ॥ सर्वासुविद्यासुतपोविधानेप्रस्पर्धतेऽयंहिगुरुंसुराणाम् ॥ प्रवीविविक्षोरिवसागरस्यलोकान्दिधक्षोरिवपावकस्य ॥ लोकक्षयेष्वेवयथांतकस्यहनूमतःस्थास्यतिकःपुरस्तात् ॥ ४६ ॥ एषेवचान्येचमहाकपींद्राःसुग्रीवमैंदद्विविदाः सनीलाः ॥ सतारतारेयनलाःसरंभास्त्वत्कारणाद्रामसुरैर्हिसृष्टाः ॥ ४७ ॥ गजोगवाक्षोगवयःसुदंष्ट्रोमैंदःप्रभोज्योतिर्मुखोनलश्च ॥ एतेचऋक्षाःसहवानरेंद्रैस्त्वत्कारणाद्रामसुरैर्हिसृष्टाः ॥ ४८ ॥ तदेतत्कथितंसर्वंयन्मांत्वंपरिपृच्छसि ॥ हनूमतोबालभावेकर्मैतत्कथितंमया ॥ ४९ ॥ श्रुत्वागस्त्यस्यकथितंरामःसौमित्रिरेवच ॥ विस्मयंपरमंजग्मुर्वानराराक्षसैःसह ॥ ५० ॥ अगस्त्यस्त्वब्रवीद्रामंसर्वमेतच्छ्रुतंत्वया ॥ दृष्टःसंभाषितश्चासिरामगच्छामहेवयम् ॥ ५१ ॥ श्रुत्वैतद्राघवोवाक्यमगस्त्यस्योग्रतेजसः ॥ प्रांजलिःप्रणतश्चापिमहर्षिमिदमब्रवीत् ॥ ५२ ॥

सुग्रीव, अंगद, मैन्द, द्विविद, नल, नील, तार और रंभादि महा २ वानरोंको उत्पन्न कियाहै ॥ ४७ ॥ हे प्रभो ! गज, गवाक्ष, गवय, सुदंष्ट्र, ज्योतिर्मुख इन वानरश्रेष्ठ और ऋक्षोंको भी तुम्हारी सहायताके अर्थ उत्पन्न कियाहै ॥ ४८ ॥ हे राम ! हनुमान्‌ने बालकपनमें जो जो कर्म कियेथे वह सब हमने आपसे कहे अधिक कहनेसे क्या, आपने जो कुछभी हमसे पूछा वही हमने निवेदन किया ॥ ४९ ॥ श्रीरामचन्द्रजी व लक्ष्मणजी अगस्त्यजीके वचन सुनकर राक्षस और वानरोंके सहित अत्यन्त विस्मित हुए ॥ ५० ॥ परंतु अगस्त्यजी श्रीरामचन्द्रजीसे बोले कि, आपने सब कुछ सुना और हमने भी दर्शन पाय [illegible] ॥ तब श्रीरामचन्द्रजी उन तेजस्वी अगस्त्यजी ऋषिसे [illegible]

परन्तु आपकी सेवामें हमारा यह निवेदनहै; कि हम वांछारहित होकर जो कुछ कहें आप हमारेऊपर दया करके उसको सिद्धकरें॥५४॥ इस समय हम वनवाससे लौट आयेहैं फिर पुरवासी और जनपदवासियोंको अपने २ कार्यमें प्रतिष्ठित करके आपके प्रतापसे हम समस्त यज्ञोंका अनुष्ठान करेंगे ॥ ५५ ॥ आप हमपर अनुग्रहकी इच्छा करतेहैं विशेष करके महत् तप वीर्य समन्वित साधुशीलवान् आप हैं इस कारण आप हमारे यज्ञमें सदाही सदस्य (विधि बतानेवाले) का कार्य करें॥५६॥ आप तप करके पापविहीन हुएहैं, इस निमित्त आपको सदा आश्रय करनेसे पितृगण हमपर सदा अनुग्रह करेंगे और परम सन्तुष्ट होंगे ॥ ५७ ॥ उस

अद्यमेदेवतास्तुष्टाःपितरःप्रपितामहाः ॥ युष्माकंदर्शनादेवनित्यंतुष्टाःसबांधवाः ॥ ५३ ॥ विज्ञाप्यंतुममैतद्धियद्वदाम्यागतस्पृहः ॥ तद्भवद्भिर्मम कृतेकर्तव्यमनुकंपया ॥ ५४ ॥ पौरजानपदान्स्थाप्यस्वकार्येष्वहमागतः ॥ क्रतूनहंकरिष्यामिप्रभावाद्भवतांसताम् ॥ ५५ ॥ सदस्यामम यज्ञेषुभवंतोनित्यमेवतु ॥ भविष्यथमहावीर्याममानुग्रहकांक्षिणः ॥ ५६ ॥ अहंयुष्मान्समाश्रित्यतपोनिर्धूतकल्मषान् ॥ अनुगृहीतःपितृभिर्भविष्यामिसुनिर्वृतः ॥ तदागंतव्यमनिशंभवद्भिरिहसंगतैः ॥ अगस्त्याद्यास्तुतच्छ्रुत्वाऋषभःसंशितव्रताः ॥ ५८ ॥ एवमस्त्वितितंप्रोच्यप्रयातुमुपचक्रमुः ॥ एवमुक्त्वागताःसर्वेऋषयस्तेयथागतम् ॥ ५९ ॥ राघवश्चतमेवार्थंचिंतयामासविस्मितः ॥ ततोऽस्तंभास्करेयातेविसृज्यनृपवानरान् ॥ ६० ॥ संध्यामुपास्यविधिवत्तदानरवरोत्तमः ॥ प्रवृत्तायांरजन्यांतुसोंतःपुरचरोभवत् ॥ ६१ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वा० आ० उत्तरकांडे षट्त्रिंशः सर्गः ॥ ३६ ॥ अभिषिक्तेतुकाकुत्स्थेधर्मेणविदितात्मनि ॥ व्यतीतायानिशापूर्वापौराणांहर्षवर्धिनी ॥ १ ॥ तस्यांरजन्यांव्युष्टायांप्रातर्नृपतिबोधकाः ॥ वंदिनःसमुपातिष्ठन्सौम्यानृपतिवेश्मनि ॥ २ ॥

कालमें सब लोगोंके साथ मिलकर आप लोगोंको इस स्थानमें आना पडेगा व्रत धारण कियेहुए अगस्त्यादि ऋषि यह सुनकर ॥५८॥ "ऐसाही होगा" रामचन्द्रजी से यह कह, जानेके लिये तैयार हुए ॥ ५९ ॥ श्रीरामचन्द्रजीभी विस्मितहो यज्ञके लिये चिन्ता करने लगे । इसके पीछे सूर्यके छिपजानेसे रामचन्द्रजीने नृप और वानरोंको विदा किया ॥ ६० ॥ तदनन्तर नरश्रेष्ठ श्रीरामचन्द्रजीने विधिविधानसे सन्ध्या की और रात्रिका सुख प्राप्त करनेके लिये अन्तःपुरमें गये ॥ ६१ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा०वाल्मी०आदि०उत्तरकांडे भाषाटीकायां षट्त्रिंशः सर्गः ॥ ३६ ॥ ब्रह्मज्ञानसम्पन्न काकुत्स्थ श्रीरामचन्द्रजीका जब अभिषेक धर्मानुसार होगया

अति सौम्यमूर्तिसे आयकर उपस्थित हुए ॥ २ ॥ किन्नरोंकी समान शिक्षित और मधुर कण्ठवाले वह गायक वीर श्रेष्ठ राजाका हर्ष बढायकर स्तुति करनेलगे ॥ ३ ॥ हे सौम्यस्वभाव नरनाथ ! आपके निद्रित रहनेसे सब जगत निद्रामें मग्न रहताहै; इसलिये हे कौशल्यानन्दवर्द्धन वीर ! आप निद्राका परित्याग कीजिये ॥ ४ ॥ आप विष्णुजीकी समान विक्रमकारी, अश्विनीकुमारकी समान रूपवान्, बृहस्पतिजीकी नाईं बुद्धिमान् और प्रजापालनमें ब्रह्माजीकी समान हैं ॥ ५ ॥ आप समुद्रकी समान गंभीर स्वभाववाले हैं, पृथ्वीकी समान क्षमागुणशाली हैं, सूर्यकी नाईं तेजस्वी और पवनसम वेगवान्हैं ॥ ६ ॥ शिवजीकी समान आपका सौम्य गुण कभी कंपायमान होनेवाला नहीं ऐसा सौम्यगुण चन्द्रमामेंही विराजमानहै और कहीं नहीं, आपकी समान न कोई राजा हुआ न

तेरक्तकंठिनःसर्वेकिन्नराइवशिक्षिताः ॥ तुष्टुवुर्नृपतिंवीरंयथावत्संप्रहर्षिणः ॥ ३ ॥ वीरसौम्यप्रबुध्यस्वकौसल्याप्रीतिवर्धन ॥ जगद्धिसर्वंस्वपितित्वयिसुप्तेनराधिप ॥ ४ ॥ विक्रमस्तेयथाविष्णोरूपंचैवाश्विनोरिव ॥ बुद्ध्याबृहस्पतेस्तुल्यःप्रजापतिसमोह्यसि ॥ ५ ॥ क्षमातेपृथिवीतुल्यातेजसाभास्करोपमः ॥ वेगस्तेवायुनातुल्योगांभीर्यमुदधेरिव ॥ ६ ॥ अप्रकंप्योयथास्थाणुश्चंद्रेसौम्यत्वमीदृशम् ॥ नेदृशाःपार्थिवाःपूर्वंभवितारोनराधिप ॥७॥ यथात्वमसिदुर्धर्षोधर्मनित्यःप्रजाहितः ॥ नत्वांजहातिकीर्तिश्चलक्ष्मीश्चपुरुषर्षभ ॥८॥ श्रीश्चधर्मश्चकाकुत्स्थत्वयिनित्यंप्रतिष्ठितौ॥एताश्चान्याश्चमधुरावंदिभिःपरिकीर्तिताः ॥९॥ सूताश्चसंस्तवैर्दिव्यैर्बोधयंतिस्मराघवम्॥ स्तुतिभिःस्तूयमानाभिःप्रत्यबुध्यतराघवः ॥ १० ॥ सतद्विहायशयनंपांडुराच्छादनास्तृतम् ॥ उत्तस्थौनागशयनाद्धरिर्नारायणोयथा ॥११॥ समुत्थितंमहात्मानंप्रह्वाःप्रांजलयोनराः ॥ सलिलंभाजनैःशुभ्रैरुपतस्थुःसहस्रशः ॥ १२ ॥ कृतोदकःशुचिर्भूत्वाकालेहुतहुताशनः ॥ देवागारंजगामाशुपुण्यमिक्ष्वाकुसेवितम् ॥ १३ ॥

आगेको होगा ॥ ७ ॥ हे पुरुषश्रेष्ठ ! आप जैसे दुर्धर्ष हैं वैसेही सदा धर्मपरायण होकर आप प्रजाके कार्यभी किया करते हैं इससे कीर्ति और लक्ष्मी आपका त्याग नहीं करेगी ॥८॥ हे काकुत्स्थ ! धर्म और लक्ष्मी सदा आपमेंही स्थित हैं, वंदी लोगोंने इस प्रकार व औरभी बहुत स्तुति मधुर वचनोंसे की ॥ ९ ॥ सूतगण दिव्य स्तुति कर करके रघुनंदन श्रीरामचन्द्रजीको जगाने लगे । रामचन्द्रजी इसप्रकार सब भाँति स्तुति कियेजानेपर जागे ॥ १० ॥ नारायणजी जिसप्रकार शेषनागकी शय्यापरसे उठतेहैं वैसेही श्रीरामचन्द्रजी श्वेत चादर बिछीहुई शय्या परसे उठे ॥ ११ ॥ सहस्र २ विनीत सेवक श्वेतवर्णके पात्रमें जललिये हाथ जोड कर श्रीरामचन्द्रजीके समीप आये ॥१२॥ श्रीरामचन्द्रजी यथा अवसरमें जलके कार्यसे पवित्रहो अग्निमें होम करने २, देवालयमें प्रवेश करते हुए, जो कि—पुण्यमय था

श्रीरामचन्द्रजी आये ॥ १४ ॥ वसिष्ठादि पुरोहित और महात्मा मंत्रिजनभी आये यह सबही तीन अग्नियोंकी समान मूर्तिमानथे ॥ १५ ॥ उस कालमें अनेक जनपदोंके अधीश्वर महात्मा क्षत्रिय इन्द्रके पार्श्वमें देवताओंकी समान श्रीरामचन्द्रजीकी बगलमें खडे होगये ॥ १६ ॥ तीन वेद जिसप्रकार अग्निकी उपासना करें वैसेही महायशस्वी भरत, लक्ष्मण और शत्रुघ्नजी श्रीरामचन्द्रजीकी सेवा करने लगे ॥ १७ ॥ मुदित हुए सेवकगण प्रसन्नमुख हो हाथ जोड श्रीरामचंद्रजीके पार्श्वमें खडे होगये ॥ १८ ॥ महातेजस्वी कामरूपी सुग्रीव इत्यादि असंख्य वानर श्रीरामचंद्रजीकी उपासना करने लगे ॥ १९ ॥ धननाथ कुबेर

गतंध्यानिगृनिशानर्चयित्वायथाविधि ॥ बाह्यकक्षांतरंरामोनिर्जगामजनैर्वृतः ॥ १४ ॥ उपतस्थुर्महात्मानोमंत्रिणःसपुरोहिताः ॥ वसिष्ठप्रमुखाःसंदीप्यमानाइवाग्नयः ॥ १५ ॥ क्षत्रियाश्चमहात्मानोनानाजनपदेश्वराः ॥ रामस्योपाविशन्पार्श्वेशक्रस्येवयथामराः ॥ १६ ॥ भरतोलक्ष्मणश्चात्रशत्रुघ्नश्चमहायशाः ॥ उपासांचक्रिरेहृष्टावेदास्त्रयइवाध्वरम् ॥ १७ ॥ याताःप्रांजलयोभूत्वाकिंकरामुदिताननाः ॥ मुदितानामपार्श्वस्थानदराः समुपाविशन् ॥ १८ ॥ वानराश्चमहावीर्याविंशतिःकामरूपिणः ॥ सुग्रीवप्रमुखारामसुपासंतेमहौजसः ॥ १९ ॥ विभीषणश्चरक्षोभिश्चतुर्भिःपरिवारितः ॥ उपासतेमहात्मानंधनेशमिवगुह्यकः ॥ २० ॥ तथानिगमवृद्धाश्चकुलीनायेचमानवाः ॥ शिरसावंद्यराजानमुपासंते विचक्षणाः ॥ २१ ॥ तथापरिवृतोराजाश्रीमद्भिर्ऋषिभिर्वृतः ॥ राजभिश्चमहावीर्यैर्वानरैश्चसराक्षसैः ॥ २२ ॥ यथादेवेश्वरोनित्यमृषिभिः समुपास्यते ॥ अधिकंतेनरूपेणसहस्राक्षाद्विरोचते ॥ २३ ॥ तेषांसमुपविष्टानांतास्ताः सुमधुराःकथाः ॥ कथ्यंतेधर्मसंयुक्ताः पुराणज्ञैर्महात्मभिः ॥ २४ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे सप्तत्रिंशः सर्गः ॥ ३७ ॥

कीभी उपासना जिस प्रकार गुह्यक करतेहैं वैसेही विभीषणजी अपने चार राक्षसोंके साथ महात्मा श्रीरामचन्द्रजीकी उपासना करने लगे ॥ २० ॥ जो कि वेदज्ञ और जो कुलीनथे वह विचक्षण मनुष्य मस्तक झुकाय श्रीरामचंद्रजीको प्रणामकर उनकी उपासना करने लगे ॥ २१ ॥ देवराज इन्द्रजी जिस प्रकार ऋषियोंके साथ रहकर उनसे पूजित होतेहैं वैसेही रामचंद्र श्रीमान ऋषिगण, महावीर राजागण, वानरगण और राक्षसोंसे पूजित होनेलगे, अधिक क्या कहैं श्रीरामचन्द्रजी उन गुणगणोंके द्वारा हजार नेत्रवाले इन्द्रसेभी अधिक शोभायमान होनेलगे ॥ २२ ॥ २३ ॥ पुराण जाननेवाले महात्मा उन बैठेहुए महात्माओंके सन्मुख धर्मयुक्त मधुर कथा कहने लगे ॥ २४ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषाटीकायां सप्तत्रिंशः सर्गः ॥ ३७ ॥

(आगे ५ सर्ग क्षेपक हैं) रघुनंदन श्रीरामचन्द्रजी यह सब वृत्तान्त सुनकर फिरभी अगस्त्यजीसे बोले कि, हे भगवन् ! आपने वाली, सुग्रीवके पिताका नाम ऋक्षराज बताया ॥ १ ॥ परन्तु आपने इनकी माताका नाम नहीं बताया सो इनकी माता कहां ? घर कहां ? और इनके नाम ऐसे क्यों हुए ॥ २ ॥ यह समस्त वृत्तान्त जाननेके लिये हमको बडा कौतूहल हुआहै सो हे ब्रह्मन् ! आप अनुग्रहपूर्वक बताइये, श्रीरामचन्द्रजीके इसप्रकार कहनेपर अगस्त्यजी बोले ॥ ३ ॥ हे राम ! पहले नारदजीने हमारे आश्रममें आयकर जैसा कहाथा वैसेही संक्षेपसे यह वृत्तान्त श्रवण कीजिये ॥ ४ ॥ वह अतिधर्मपरायण देवर्षि नारदजी किसी समय घूमते २ हमारे आश्रममें आये हमनेभी विधि विधानसे न्यायानुसार उनकी पूजा की ॥ ५ ॥ इसके उपरान्त हमने कौतूहलके वशहो पूछा तब उन्होंने सुखसे बैठकर कहा हे धार्मिकश्रेष्ठ महर्षे ! श्रवण करो ॥ ६ ॥ मेरु नाम एक पर्वत है यह पर्वतश्रेष्ठ परम सुन्दर सुवर्णमय और अत्यन्त सुन्दरताकी खानि है इसका मध्यम शृङ्ग सब देवतोंसे पूजित है ॥ ७ ॥ उस शिखरपर ब्रह्माजीकी शतयोजन विस्तारवाली रमणीय दिव्य सभा स्थापित है, चतुर्मुख ब्रह्माजी इस रमणीक दिव्य सभामें सदा विराजमान रहते हैं ॥ ८ ॥ एक समय योगाभ्यास करते २ इनके दोनों नेत्रोंसे आँसुओंकी बूँदे गिरीं भगवान्ने करकमलसे उनको ग्रहणकर अपने शरीरमें लगालीं ॥ ९ ॥ और फिर जो शरीरमें लगाय ब्रह्माजीने हाथ झटका तो उन लोककर्त्ताके हाथसे आँसुओंकी बूँदके गिरतेही उससे एक वानर उत्पन्न हुआ ॥ १० ॥ हे नरश्रेष्ठ ! उस वानरके उत्पन्न होतेही महात्मा पितामह ब्रह्माजीने प्रियवचनोंसे उसको समझाय बुझायकर कहा ॥ ११ ॥

एतच्छ्रुत्वातुनिखिलंराघवोऽगस्त्यमब्रवीत् ॥ यएपर्क्षरजानामवालिसुग्रीवयोःपिता ॥ १ ॥ जननीकाचभवनंसात्वयापरिकीर्तिता ॥ वालिसुग्रीवयोश्चापिनामनीकेनहेतुना ॥ २ ॥ एतद्ब्रह्मन्समाचक्ष्वकौतूहलमिदंहिनः ॥ सप्रोक्तोराघवेणैवमगस्त्योवाक्यमब्रवीत् ॥ ३ ॥ शृणुरामकथामेतांयथापूर्वंसमासतः ॥ नारदःकथयामासममाश्रममुपागतः ॥ ४ ॥ कदाचिदटमानोसावतिधर्ममुपागतः ॥ अर्चितस्तुयथान्यायंविधिदृष्टेनकर्मणा ॥ ५ ॥ सुखासीनःकथामेनांमयापृष्टःसकौतुकात् ॥ कथयामासधर्मात्मामहर्षेश्रूयतामिति ॥ ६ ॥ मेरुर्नगवरःश्रीमाञ्जांबूनदमयःशुभः ॥ तस्ययन्मध्यमंशृंगंसर्वदेवतपूजितम् ॥ ७ ॥ तस्मिन्दिव्यासभारम्याब्रह्मणःशतयोजना ॥ तस्यामास्तेसदादेवःपद्मयोनिश्चतुर्मुखः ॥ ८ ॥ योगमभ्यसतस्तस्यनेत्राभ्यांयदसुस्रुवत् ॥ तद्गृहीतंभगवतापाणिनाचर्चितंतुतत् ॥ ९ ॥ निक्षिप्तमात्रंतद्भूमौब्रह्मणालोककर्तृणा ॥ तस्मिन्नश्रुकणेरामवानरःसंबभूवह ॥ १० ॥ उत्पन्नमात्रस्तुतदावानरश्चनरोत्तम ॥ समाश्वास्यप्रियैर्वाक्यैरुक्तःकिलमहात्मना ॥ ११ ॥

वास करो, इस स्थानमें कुछ कालतक वास करनेपर फिर तुम्हारा कल्याण होगा ॥ १३ ॥ हे राघव ! जब ब्रह्माजीने इस प्रकारसे कहा तब उस वानरश्रे ष्ठने मस्तक झुकाय उन देवदेवके चरणोंकी वंदना करके ॥ १४ ॥ आदिदेव जगत्पति लोककर्ता ब्रह्माजीसे कहा, हे देव ! हम अपनेको आपकी आज्ञाके अधीन करते हैं जैसा आपने कहा, हम वैसाही करेंगे ॥१५॥ वह वानर हृष्टचित्तहो उसकाल देव ब्रह्माजीसे ऐसा कह फल पुष्प युक्त द्रुमखंडमें चलागया ॥ १६ ॥ वह वानर उस वनमें फूलोंको खाया करता, श्रेष्ठ मधु और अनेक प्रकारके फूलोंको इकट्ठा किया करता ॥१७॥ वह वानर प्रतिदिन संध्याके समय आया करता. हे राम ! इस प्रकार वह श्रेष्ठ

पश्यशैलंसुविस्तीर्णसुरैरध्युषितंसदा॥ तस्मिन्नम्येगिरिवरेबहुमूलफलाशनः॥१२॥ ममांतिकचरोनित्यंभववानरपुंगव ॥ कंचित्कालमिहास्स्वत्वं ततश्रेयोभविष्यति ॥ १३ ॥ एवमुक्तःसचैतेनब्रह्मणावानरोत्तमः ॥ प्रणम्यशिरसापादौदेवदेवस्यराघव ॥ १४ ॥ उक्तवाँल्लोककर्तारमादिदेवंजगत्पतिम्॥ यथाज्ञापयसेदेवस्थितोहंतवशासने ॥ १५ ॥ एवमुक्त्वाहरिर्देवंययौहृष्टमनास्तदा ॥ सतदाद्रुमखंडेषुफलपुष्पघनेषुच ॥ १६ ॥ ब्रह्मन्प्रतिबलःशीघ्रंवनेफलकृताशनः ॥ चिन्वन्मधूनिमुख्यानिचिन्वन्पुष्पाण्यनेकशः ॥ १७ ॥ दिनेदिनेचसायाह्नेब्रह्मणोंतिकमागमत् ॥ गृहीत्वाराममुख्यानिपुष्पाणिचफलानिच ॥ १८ ॥ ब्रह्मणोदेवदेवस्यपादमूलेन्यवेदयत् ॥ एवंतस्यगतःकालोबहुपर्यटतोगिरिम् ॥ १९ ॥ कस्यचित्त्वथकालस्यसमतीतस्यराघव ॥ ऋक्षराड्वानरश्रेष्ठस्तृषयापरिपीडितः ॥ २० ॥ उत्तरंमेरुशिखरंगतस्तत्रचदृष्टवान् ॥ नानाविहगसंघुष्टंप्रसन्नसलिलंसरः ॥२१॥ चलत्केशरमात्मानंकृत्वातस्यतटेस्थितः ॥ ददर्शतस्मिन्सरसिवक्रच्छायामथात्मनः ॥२२॥ कोयमस्मिन्ममारिपुर्वसत्यंतर्जलेमहान्॥ रूपंचांतर्गतंतत्रवीक्ष्यतत्पश्यतोहरिः ॥२३॥ क्रोधाविष्टमनाह्येपनियतंमावमन्यते ॥ तदस्यदुष्टभावस्यपुष्कलंकुमतेर्गृहम्॥२४॥

फल व पुष्प ग्रहण करके ॥ १८ ॥ देवदेव ब्रह्माजीके चरणकमलमें आनकर निवेदन करता हुआ, इस प्रकारसे पर्वतपर घूमते २ उसको बहुत काल बीत गया ॥ १९ ॥ हे राघव ! इसके उपरान्त कुछ काल बीतनेपर वानरश्रेष्ठ ऋक्षराज प्यासके मारे अतिव्याकुल होकर ॥ २० ॥ उत्तर मेरुके शिखरपर चलागया वहांपर अनेक प्रकारके शब्दोंसे शब्दायमान निर्मल जलयुक्त सरोवर विराजमानहै ॥ २१ ॥ ऋक्षराजने हर्षितचित्तहो अपने केशरको चलायमान कर उस सरोवरमें अपने मुखकी परछांईको देखा ॥ २२ ॥ यह जलमें जो वसताहै यह हमारा महाशत्रु कौन है इस प्रकार वानरश्रेष्ठने जलमें वह रूप देखकर ॥ २३ ॥ मनमें कहा कि

यह चित्तमें कोपकिये सदा हमारा अपमान करता है इसलिये इस दुरात्मा दुर्मतिका हम सुन्दर गृह विनाश करेंगे ॥ २४ ॥ मनही मन इस प्रकारकी चिन्ता करके यह वानर चंचलताके वश छलांग मार उस कुंडमें कूद पडा ॥ २५ ॥ और फिर एक छलांग मारकर उस ह्रदसे बाहर निकल आया। हे राम ! निकलनेके समय यह वानरश्रेष्ठ स्त्रीके रूपको प्राप्त हुआ ॥ २६ ॥ उस ऋक्षराज वानरकी यह स्त्री परमसुन्दर मनोहर और लावण्य ललित बनी, उसकी जांघें बडी २, भौंहें सुन्दर, शिखाके केश नीले ॥ २७ ॥ वदनमंडल सुन्दर, भाव और हास्य चिह्नयुक्त दोनों स्तन मोटे कडे और अनुपम शोभायमान थे. उस कुण्डके तीरपर यह स्त्री लताकी समान प्रकाशमान होतीथी ॥ २८ ॥ त्रिलोकसुन्दरी यह रमणी सबके चित्तको मथित करनेवाली कमलरहित लक्ष्मीकी समान निर्मल

एवंसंचिंत्यमनसासवैवानरचापलात् ॥ आप्लुत्यचापतत्तस्मिन्ह्रदेवानरसत्तमः ॥ २५ ॥ उत्प्लुत्यतस्मात्सह्रदादुत्थितःप्लवगःपुनः ॥ तस्मिन्नेवक्षणेरामस्त्रीत्वंप्रापसवानरः ॥ २६ ॥ मनोज्ञरूपासानारीलावण्यललिताशुभा ॥ विस्तीर्णजघनासुभ्रूर्नीलकुंतलमूर्धजा ॥ २७ ॥ मुग्धस्मितवक्त्राचपीनस्तनतटाशुभा ॥ ह्रदतीरेचसाभातिऋजुयष्टिर्लतायथा ॥२८॥ त्रैलोक्यसुंदरीकांतासर्वचित्तप्रमाथिनी ॥ लक्ष्मीवपद्मरहिता चंद्रज्योत्स्नेवनिर्मला ॥ ॥ २९ ॥ रूपेणाभ्यभवत्सातुश्रियंदेवीमुमायथा ॥ द्योतयंतीदिशःसर्वास्तत्राभूत्सावरांगना ॥३०॥ एतस्मिन्नंतरेदेवो निवृत्तःसुरनायकः ॥ पादावुपास्यदेवस्यब्रह्मणस्तेनवैपथा ॥३१॥ तस्यामेवचवेलायामादित्योपिपरिभ्रमन् ॥ तस्मिन्नेवपदेसोभूद्यस्मिन्सातनुमध्यमा ॥ ३२ ॥ युगपत्सातदादृष्टादेवाभ्यांसुरसुंदरी ॥ कंदर्पवशगौतौतुदृष्ट्वातांसंबभूवतुः ॥३३॥ ततःक्षुभितसर्वांगौसुरेंद्रौपन्नगाविव ॥ तद्रूपमद्भुतंदृष्ट्वात्याजितौधैर्यमात्मनः ॥३४॥ ततस्तस्यांसुरेंद्रेणस्कन्नंशिरसिपातितम् ॥ अनासाद्यैवतांनारींसन्निवृत्तमथाभवत् ॥ ३५ ॥

चांदनीकी समान ॥ २९ ॥ अथवा लक्ष्मीसे भी अधिक असीम सौन्दर्यविभूषिता देवी पार्वतीजीकी समान सब दिशाओंमें उजाला करती हुई यह शोभायमान होने लगी ॥ ३० ॥ इसी समयमें सुरनायक देव इन्द्रजी बृहस्पतिजीके चरणोंकी वंदना करके इसी मार्गसे लौट रहेथे ॥ ३१ ॥ इसी समयमें सूर्य नारायणजीभी घूमते २ जिस स्थानमें तनुमध्यमा वह वामा खडीथी वहींपर आये ॥ ३२॥ उस कालमें वह सुरसुन्दरी दो देवताओंकी दृष्टिमें पडी परन्तु इंद्रजी व सूर्य उसको देखतेही दोनों कामदेवके वश हुए ॥ ३३ ॥ इसके पीछे दोनों देवताश्रेष्ठ इस सुन्दरीका अद्भुतरूप निहारकर अपना धीरज त्याग देतेहुये; इनके सब अंग क्षुभित होगये और सर्पके समान श्वास इन दोनोंने लिये ॥ ३४ ॥ इसके पीछे उस स्त्रीको न पायकर उसके मस्तकपरही अपना स्खलित वीर्य गिरानेके लिये इन्द्र

॥ ३३ ॥ बालोंमें इन्द्रजीका वीर्य गिराथा इस कारण उससे उत्पन्न हुए पुत्रका नाम बाली हुआ। इसी समय सूर्य भी कामके वश हो ॥ ३७ ॥ इस वानरके गर्दनपर अपना वीर्य गिराया परन्तु उस श्रेष्ठ शरीरवाली स्त्रीने ऐसा होनेसेभी कुछ शुभ वचन नहीं कहे ॥ ३८ ॥ सूर्य भगवान्नेभी कामदेवकी व्यथासे छुटकारा पाया और उस गर्दनपर गिरेहुए वीर्यसे सुग्रीवजीकी उत्पत्ति हुई ॥ ३९ ॥ इस प्रकारसे महाबलवान् वीर वानरश्रेष्ठ वालीको उत्पन्न करके और उसको कांचन की माला दे ॥ ४० ॥ इन्द्रजी तो स्वर्गको चले गये। यह माला सब गुणोंसे पूर्ण और अक्षय थी और सूर्यनारायणभी इसप्रकार महाबलवान् वीर सुग्रीवको

ततःसावानररूपंनिजजलेवानरमीश्वरम् ॥ अमोघरेतसस्तस्यवासवस्यमहात्मनः ॥ ३६ ॥ वालेषुपतितंबीजंवालीनामबभूवसः ॥ भास्करेणापि तस्यनिकंदर्पवशवर्तिना ॥३७॥ बीजंनिषिक्तंग्रीवायांविधानमनुवर्तत ॥ तेनापिसावरतनुर्नोक्ताकिंचिद्वचःशुभम् ॥३८॥ निवृत्तमदनश्चाथसूर्यो पिसमपद्यत ॥ ग्रीवायांपतितंबीजंसुग्रीवःसमजायत ॥ ३९ ॥ एवमुत्पाद्यतौवीरौवानरेंद्रौमहाबलौ ॥ दत्त्वातुकांचनींमालांवानरेंद्रस्य वालिनः ॥ ४० ॥ अक्षय्यांगुणसंपूर्णांशक्रस्तुत्रिदिवंययौ ॥ सूर्योपिस्वसुतस्यैवनिरूप्यपवनात्मजम् ॥४१॥ कृत्येषुव्यवसायेषुजगामसविताऽ म्बरम् ॥ तस्यांनिशायांव्युष्टायामुदितेचदिवाकरे ॥ ४२ ॥ सतद्वानररूपंतुप्रतिपेदेपुनर्नृप ॥ सएववानरोभूत्वापुत्रौस्वस्यप्लवंगमौ ॥ ४३ ॥ पिंगवर्णौदारौवलिनौकामरूपिणौ ॥ मधून्यमृतकल्पानिपाययित्वातेनर्ततदा ॥४४॥ गृह्यऋक्षरजास्तौतुब्रह्मणोंतिकमागमत् ॥ दृष्ट्वर्क्षरजसंपुत्रं ब्रह्मालोकपितामहः ॥ ४५ ॥ बहुशःसांत्वयामासपुत्राभ्यांसहितंहरिम् ॥ सांत्वयित्वाततःपश्चाद्देवदूतमथादिशत् ॥४६॥ गच्छमद्वचनाद्दूत किष्किंधांनामवैशुभाम् ॥ साह्यस्यगुणसंपन्नामहतीचपुरीशुभा ॥ ४७ ॥

उत्पन्न करके और पवनकुमार हनुमानजीको ॥ ४१ ॥ अपने पुत्रके कार्य और व्यवसायमें नियुक्तकर सूर्यलोकको आकाशमार्गमें होकर चले गये. हे राजन्! उस रात्रिके बीत जाने और सूर्य भगवान्के उदय होनेपर ॥४२॥ हे नृप! ऋक्षराज फिर वानररूपको प्राप्त हुए, इस प्रकारसे यह वानर होकर अपने दो वानर पुत्रोंको॥ ॥ ४३ ॥ जो कि पीले नेत्रवाले महाबली कामरूपी थे, वानरश्रेष्ठ वाली और सुग्रीवको अमृतकी समान मधु पिलाते हुए ॥ ४४ ॥ वह ऋक्षराज वानरपनको पाकर अपने पुत्र उन दो वानरोंको ले ब्रह्माजीके निकट गये। लोकपितामह ब्रह्माजीनेभी अपने पुत्र ऋक्षराजको देख ॥ ४५ ॥ दोनों पुत्रोंके साथ उस वानरको अनेक प्रकारसे समझाया, समझाने बुझानेके पीछे फिर देवदूतको यह आज्ञा दी ॥ ४६ ॥ कि हे दूत! हमारी आज्ञासे तुम शुभ किष्किन्धापुरीमें जाओ, यह

सुवर्णसम्पन्न अतिरमणीय पुरी इन ऋक्षराजके योग्यहै ॥ ४७ ॥ वहांपर वानरोंके अनेक यूथ वास करतेहैं, व इनके सिवाय औरभी कामरूपी वानरगन इनमें निवास करतेहैं ॥ ४८ ॥ यह नगरी अनेक रत्नोंसे परिपूर्ण और दुर्गमहै चारों वर्ण इसमें रहते हैं, यह परम पवित्र और वाणिज्यकी खानिहै। हमारी आज्ञाने विश्वकर्माने यह दिव्य सुन्दरपुरी बनाई है ॥ ४९ ॥ तुम उस पुरीमें इन ऋक्षराजको इनके पुत्रोंके सहित स्थापित करो व यूथपाल वानरोंको पुकार और नारा ण वानरोंकोभी बुलाय ॥ ५० ॥ उन सबके साथ अति आदर मान करके इनको तुम सिंहासनपर बैठाय राज्याभिषेक करो ॥ ५१ ॥ इन बुद्धिमान् वानर श्रेष्ठको देखतेही वह सब वानर सदाके निमित्त हमारे वश होजायँगे ॥ ५२ ॥ जब ब्रह्माजीने इस प्रकार वचन कहे तब दूत ऋक्षराजको आगेकर परम रमनीय किष्कि न्धा पुरीको गया ॥ ५३ ॥ वह दूत पवनकी समान वेगगतिसे गुहामें बसीहुई किष्किन्धा नगरीमें पहुँचकर वानरश्रेष्ठको ब्रह्माजीकी आज्ञाके अनुसार राज्यपर स्थापित करताहुआ ॥ ५४ ॥ श्रीमान् ऋक्षराज मुकुट धारणकर और उत्तम गहनोंसे भूषित हो राज्याभिषेककी विधिके अनुसार स्नान करके अभिषिक्त हुए ॥ ५५ ॥ अधिक क्या कहें, ऋक्षरज सब प्रकारसे अर्चित होकर सन्तुष्ट मनसे समुद्रके सहित सात द्वीपोंकी पृथ्वीपर जितने वानर थे वह सब वानर इनकी आज्ञाके वश हुए॥ ॥ ५६ ॥ यह ऋक्षरजही वाली सुग्रीवके पिता और यही इनकी माता हुए, बस यही इनका वृत्तान्त है तुम्हारा मंगल हो ॥ ५७ ॥ जो विद्वान् पुरुष इसको श्रवण करावे या श्रवण करे, उसके मनका हर्ष बढे और उसके सब कार्य सिद्ध हों ॥ ५८ ॥ हे प्रभो! राक्षस और वानरोंकी उत्पत्तिका प्रकार मैंने विस्तार सहित यथार्थ २ वर्णन किया ॥ ५९ ॥ [illegible]

तत्रवानरयूथानिसुबहूनिवसंतिच॥बहुरत्नसमाकीर्णावानरैःकामरूपिभिः ॥ ४८ ॥ पुण्यापण्यवतीदुर्गाचातुर्वर्ण्यपुरस्कृता॥विश्वकर्मकृतादिव्यामन्नियोगाच्चशोभना॥४९॥तत्रर्क्षरजसंहृष्टंसपुत्रंवानरर्षभम् ॥यूथपालान्समाहूयश्चान्यान्प्राकृतान्हरीन् ॥५०॥ तेषांसंभाव्यसर्वेषांमदीयंजनसंसदि॥अभिषेचयराजानमारोप्यमहदासने॥५१॥दृष्टमात्राश्चतेसर्वेवानरेणचधीमता॥अस्यर्क्षरजसोनित्यंभविष्यंतिवशानुगाः ॥५२॥ इत्येवमुक्तेवचनेब्रह्मणातंहरीश्वरम् ॥ पुरतःकृत्यदूतोसौप्रययौतांपुरींशुभाम् ॥५३॥ सप्रविश्यानिलगतिस्तांगुहांवानरोत्तमः॥ स्थापयामासराजानंपितामहन्नियोगतः॥५४॥ राज्याभिषेकविधिनास्नातोथाभ्यर्चितस्तथा ॥ सबद्धमुकुटःश्रीमानभिषिक्तःस्वलंकृतः ॥ ५५ ॥ आज्ञापयामासहरीन्सर्वान्मुदितमानसः॥सप्तद्वीपसमुद्रायांपृथिव्यांयेप्लवंगमाः ॥ ५६ ॥ वालिसुग्रीवयोरेषएषचर्क्षरजाःपिता ॥ जननीचेपतुक्षरिरित्येतद्वन्द्वमस्तुते ॥ ५७॥ यश्चैतच्छ्रावयेद्विद्वान्यश्चैतच्छृणुयान्नरः ॥ सिध्यंतितस्यकार्यार्थामनसोहर्षवर्धनाः॥५८॥ एतत्तसर्वंकथितंमयाविभोप्रविस्तरेणेदयथार्थतस्तत् ॥ उत्पत्तिरेषारजनीचराणामुक्तातथैवेहहरीश्वराणाम् ॥ ५९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे प्रथमःसर्गः ॥ १ ॥

आपके प्रसादसे हमने यह पवित्र कथा सुनी ॥ २ ॥ हे मुनिश्रेष्ठ ! यह विस्तारितकौतूहल वाली और सुग्रीवकी उत्पत्तिका वृत्तान्त जैसे दिव्यहै वैसाही सम्म
तहै ॥ ३ ॥ हे ब्रह्मर्षे ! वानरशार्दूल वाली देवनाथ इन्द्रका पुत्र और कपिश्रेष्ठ सुग्रीव सूर्यके पुत्र हुए; फिर दोनोंही समस्त बलवानोंमें श्रेष्ठ हों इसमें आश्चर्यही
क्याहै ? ॥ ४ ॥ जब श्रीरामचन्द्रजीने यह कहा तब कुम्भसंभव (घडेसे उत्पन्न हुए) अगस्त्यजी बोले, हे महावीर ! प्राचीन कालमें ऐसेही घटना हुईथी ॥ ५ ॥
हे राजन् ! और एक पुरातन इतिहास सुनो । हे राम ! रावणने जिस निमित्त पूर्वकालमें वैदेहीको हरण कियाथा ॥ ६ ॥ हम वही वृत्तान्त आपसे कहतेहैं आप

एतांश्रुत्वाकथांदिव्यांपौराणींराघवस्तदा ॥ भ्रातृभिःसहितोवीरोविस्मयंपरमंययौ ॥ १ ॥ राघवोथऋषेर्वाक्यंश्रुत्वावचनमब्रवीत् ॥ कथे
यंमहतीपुण्यात्वत्प्रसादाच्छ्रुतामया ॥ २ ॥ वृहत्कौतूहलेचास्मिन्संवृतोमुनिपुंगव ॥ उत्पत्तिर्यादृशीदिव्यावालिसुग्रीवयोर्द्विज ॥ ३ ॥ किंचि
त्रंममब्रह्मर्षेसुरेंद्रतपनात्मजौ ॥ जातौवानरशार्दूलौबलेनबलिनांवरौ ॥ ४ ॥ एवमुक्तेतुरामेणकुंभयोनिरभाषत ॥ एवमेतन्महाबाहोवृत्तमासीत्पुरा
किल ॥ ५ ॥ अथापरांकथांदिव्यांशृणुराजन्सनातनीम् ॥ यदर्थंरामवैदेहीरावणेनपुराहृता ॥ ६ ॥ तत्तेहंकीर्तयिष्यामिसमाधिंश्रवणेकुरु ॥
पुराकृतयुगेरामप्रजापतिसुतंप्रभुम् ॥ ७ ॥ सनत्कुमारमासीनंरावणोराक्षसाधिपः ॥ वपुषासूर्यसंकाशंज्वलंतमिवतेजसा ॥ ८ ॥ विनयावनतो
भूत्वाह्यभिवाद्यकृतांजलिः ॥ उक्तवान्रावणोरामतमृषिंसत्यवादिनम् ॥ ९ ॥ कोह्यस्मिन्प्रवरोलोकेदेवानांबलवत्तरः॥ यंसमाश्रित्यविबुधाजयंति
समरेरिपून् ॥ १० ॥ कंयजंतिद्विजानित्यंकंध्यायंतिचयोगिनः ॥ एतन्मेशंसभगवन्विस्तरेणतपोधन ॥ ११ ॥ विदित्वाहृद्गतंतस्यध्यानदृष्टि
र्महायशाः॥ उवाचरावणंप्रेम्णाश्रूयतामितिपुत्रक॥१२॥ योवैभर्ताजगत्कृत्स्नंयस्योत्पत्तिंनविद्महे॥ सुरासुरैर्नतोनित्यंहरिर्नारायणःप्रभुः ॥१३॥

मन लगायकर सुनें । हे राम ! पूर्व सत्ययुगमें प्रजापतिके पुत्र ॥ ७ ॥ सूर्यकी समान शरीर धारण किये अपने तेजसे जाज्वल्यमान बैठेहुए सनत्कुमारजीसे राक्ष
सपति रावण ॥८॥ विनय सहित हाथ जोडकर (वह रावण उन सत्यवादी ऋषिसे) बोला ॥ ९ ॥ इस लोकके मध्य देवतोंके बीच कौन पुरुष ऐसा प्रबल और बल
वाली है जिसको आश्रय करके देवता युद्धमें शत्रुओंको पराजित करतेहैं ॥ १० ॥और ब्राह्मण जिसकी सदा पूजा करते, योगी सदा ध्यान करतेहैं । हे भगवन् !
हे तपोधन ! यह वृत्तांत विस्तारपूर्वक हमसे कहिये ॥ ११ ॥ महायशस्वी ऋषि सनत्कुमारजी ध्यानके नेत्रोंसे रावणके हृदयका अभिप्राय जान उससे प्रीतिसहित
बोले, हे पुत्र ! सुनो ॥ १२ ॥ जो समस्त जगत्का भरण पोषण करते हैं और जिसकी उत्पत्ति हमभी नहीं जानतेहैं, सुर और असुरगण उस नारायण प्रभु

हरिकोही सदा नमस्कार किया करतेहैं ॥ १३ ॥ विश्वजगत्पति ब्रह्माजी जिसकी नाभिकमलसे उत्पन्न हुएहैं और जिन्होंने यह समस्त चराचर विश्व स्थावरं जंगमपर निर्माण किया है ॥ १४ ॥ देवता उसी हरिका सर्व प्रकारसे आश्रय ग्रहण करके विधिपूर्वक अमृत पिया करते और सन्मानसहित उस हीकी पूजा किया करतेहैं ॥ १५ ॥ अधिक क्या कहें, वेद, पुराण, पंचरात्र इत्यादि ग्रंथोंसे योगी लोग नित्य उसकाही ध्यान धरते और यज्ञ कर २ के उस हीकी पूजा किया करतेहैं ॥ १६ ॥ और दैत्य, दानव, राक्षस और दूसरे देवताओंके द्वेषीहैं, तिन सबको जीतताहै; और सबसे संग्राममें पूजा जाताहै ॥ १७ ॥ राक्षसनाथ रावण महामुनि सनत्कुमारजीके यह वचन सुनकर प्रणामकर फिर उन महामुनिसे बोला ॥ १८ ॥ दैत्य, दानव और राक्षसादि जो कि, अपने

यस्यनाभ्युद्भवोब्रह्माविश्वस्यजगतःपतिः ॥ येनसर्वमिदंसृष्टंविश्वंस्थावरजंगमम् ॥ १४ ॥ तंसमाश्रित्यविबुधाविधिनाहरिमध्वरे ॥ पिबंतिह्यमृतंनेवमानिताश्चयजंतितम् ॥ १५ ॥ पुराणैश्चैववेदैश्चपंचरात्रैस्तथैवच ॥ ध्यायंतियोगिनोनित्यंक्रतुभिश्चयजंतितम् ॥ १६ ॥ दैत्यदानवरक्षांसियेचान्येचामरद्विषः ॥ सर्वाञ्जयतिसंग्रामेसदासर्वैःसपूज्यते ॥ १७ ॥ श्रुत्वामहर्षेस्तद्वाक्यंरावणोराक्षसाधिपः ॥ उवाचप्रणतोभूत्वापुनरेवमहामुनिम् ॥१८॥ दैत्यदानवरक्षांसियेहताःसमरेऽरयः ॥ कांगतिंप्रतिपद्यंतेकिंचतेहरिणाहताः ॥१९॥ रावणस्यवचःश्रुत्वाप्रत्युवाचमहामुनिः ॥ दैवतैर्निहतानित्यंप्राप्नुवंतिदिवःस्थलम् ॥ २० ॥ पुनस्तस्मात्परिभ्रष्टाजायंतेवसुधातले ॥ पूर्वार्जितैःसुखैर्दुःखैर्जायंतेचम्रियंतिच ॥ २१ ॥ येयेहताश्चक्रधरेणराजंस्त्रैलोक्यनाथेनजनार्दनेन ॥ तेतेगतास्तन्निलयंनरेन्द्राःक्रोधोपिदेवस्यवरेणतुल्यः ॥ २२ ॥ श्रुत्वाततस्तद्वचनंनिशाचरःसनत्कुमारस्यमुखाद्विनिर्गतम् ॥ तथाप्रहृष्टःसबभूवविस्मितःकथंनुयास्यामिहरिंमहाहवे ॥ २३ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे द्वितीयःसर्गः ॥ २ ॥

शत्रु देवतोंने मारे गये हैं इनकी क्या गति होगी और जो हरिसे मारे गये वह किस गतिको पहुँचेंगे ? ॥ १९ ॥ महामुनि सनत्कुमारजी रावणके वचन सुनकर बोले कि, जिनको देवता मारतेहैं, वह लोग नित्य स्वर्गको प्राप्त होतेहैं ॥ २० ॥ और फिर स्वर्गसे भ्रष्ट होकर पृथ्वीपर जन्म ग्रहण करतेहैं, इसप्रकार पूर्वजन्मोपार्जित सुख दुःखसे उन लोगोंकी जन्ममृत्यु हुआ करतीहै ॥ २१ ॥ हे राजन् ! जो कि त्रिलोकनाथ चक्रधारी जनार्दन करके मरेहैं वह श्रेष्ठ उनमेंही लयको प्राप्त होगये हैं इस निमित्त उन नारायणका कोपभी वरके समानहै ॥ २२ ॥ निशाचर दशानन सनत्कुमार मुनिके मुखसे निकले हुए यह वचन सुनकर सन्तुष्ट हुआ और विस्मित होकर विचार करने लगा कि, किस प्रकार हम हरिको समरमें प्राप्त होंगे ॥ २३ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे सेतु० भाषाटीकायां द्वितीयः सर्गः ॥ २ ॥

कालतक ठहरा ज बाला, उनक लक्षण क

सो आप विस्तारसहित समस्त हमसे वर्णन कीजिये ॥ ३ ॥ महामुनि सनत्कुमारजी राक्षसपतिके वचन सुनकर बोले, हे राक्षसनाथ! सुनो हम तुमसे समस्तही कहतेहैं ॥ ४ ॥ यह सनातन देव अव्यक्तहैं, सूक्ष्म और स्वर्गगामी हैं; वह इस चराचर समस्त त्रिलोकीमें व्यापही रहे हैं ॥ ५ ॥ वह भूमिमें, स्वर्गमें, पातालमें, वनोंमें, पर्वतोंमें, समस्त स्थावरोंमें, नदियोंमें, नगरियोंमें वर्तमानहैं ॥ ६ ॥ वह ॐकारस्वरूप, सत्यस्वरूप, सावित्रीस्वरूप और पृथ्वीस्वरूप हैं. अधिक क्या कहें

एवंचिंतयतस्तस्यरावणस्यदुरात्मनः ॥ पुनरेवापरंवाक्यंव्याजहारमहामुनिः ॥ १ ॥ मनसश्चेप्सितंयत्तद्भविष्यतिमहाहवे ॥ सुखीभवमहाबाहो कंचित्कालमुदीक्षय ॥ २ ॥ एवंश्रुत्वामहाबाहुस्तमृषिंप्रत्युवाचसः ॥ कीदृशंलक्षणंतस्यब्रूहिसर्वमशेषतः ॥ ३ ॥ राक्षसेशवचःश्रुत्वासमुनिःप्रत्यभाषत ॥ श्रूयतांसर्वमाख्यास्येतवराक्षसपुंगव ॥ ४ ॥ सहिसर्वगतोदेवःसूक्ष्मोऽव्यक्तःसनातनः ॥ तेनसर्वमिदंव्याप्तंत्रैलोक्यंसचराचरम् ॥ ५ ॥ सभूमौदिविपातालेपर्वतेषुवनेषुच ॥ स्थावरेषुचसर्वेषुनदीषुनगरीषुच ॥ ६ ॥ ओंकारश्चैवसत्यश्चसावित्रीपृथिवीचसः ॥ धराधरधरोदेवोह्यनंत इतिविश्रुतः ॥ ७ ॥ अहश्चरात्रिश्चउभेचसंध्येदिवाकरश्चैवयमश्चसोमः ॥ सएवकालोह्यनिलोनलश्चसब्रह्मरुद्रेंद्रसएवचापः ॥ ८ ॥ विद्योतति ज्वलतिभातिचकास्तिलोकान्सृजत्ययंसंहरतिप्रशास्ति ॥ क्रीडांकरोत्यव्ययलोकनाथोविष्णुःपुराणोभवनाशकैकः ॥ ९ ॥ अथवाबहुनाऽनेन किमुक्तेनदशानन ॥ तेनसर्वमिदंव्याप्तंत्रैलोक्यंसचराचरम् ॥ १० ॥ नीलोत्पलदलश्यामःकिंजल्कारुणवाससा ॥ प्रावृट्कालेयथाव्योम्निस तडित्तोयदोयथा ॥ ११ ॥ श्रीमान्मेघवपुःश्यामःशुभःपंकजलोचनः ॥ श्रीवत्सेनोरसायुक्तःशशांककृतलक्षणः ॥ १२ ॥

वह धराधरधारी अनन्तके नामसे विख्यात हैं ॥ ७ ॥ वही दिन, रात, दोनों सन्ध्या; सूर्य, चन्द्रमा, यम—काल, पवन, अनल, ब्रह्मा, रुद्र, इन्द्र और जल हैं ॥ ॥ ८ ॥ यह अनल रूप धारणकर सब लोकोंको प्रज्वलित करतेहैं, चन्द्रमारूपसे सब जगत्में प्रकाश करते हैं और सूर्यरूपसे सब लोकोंको ताप देते हैं वरन् यही उत्पत्ति, पालन और संहार किया करते हैं; एकमात्र संसारनाशक अव्यय लोकनाथ पुराण विष्णुजीही यह क्रीडा किया करते हैं ॥ ९ ॥ हे दशानन ! अब अधिक कहनेका क्या प्रयोजनहै ? वह चराचरमय इस समय त्रिलोकीमें व्याप रहे हैं ॥ १० ॥ नीले कमलकी समान श्याम वर्ण देव, केशर तुल्य अरुण द्युतिवाले वस्त्र धारण कर वर्षा कालमें सौदामिनीशोभित आकाशमें टिकेहुए मेघकी समान शोभायमान होतेहैं ॥ ११ ॥ उनके हृदयमें श्रीवत्सका चिह्नहै;

लोचनयुगल श्रीमान् कमलकी समानहैं और शरीर उनका मेघकी समान श्याम वर्णहै ॥ १२ ॥ उनकी शोभाका पारावार नहीं, संग्रामरूपिणी लक्ष्मी उनकी
देह इसप्रकार मेघमें विराजमान दामिनीकी समान उनके शरीरमें स्थान किये हुएहैं ॥ १३ ॥ सुरगण या असुरगण या नागगण कोईभी उनके देखनेकी सामर्थ्य
नहीं रखता, परन्तु जिसपर वह अनुग्रह करते हैं वही उनके देखनेको समर्थ होताहै ॥ १४ ॥ हे वत्स ! क्या यज्ञफल, क्या संयम, क्या दान, क्या यज्ञ
इन किसीकेभी करनेसे उन भगवान्के दर्शन नहीं पाये जाते ॥ १५ ॥ जो लोग उनके भक्त हैं और उनको मन प्राण समर्पण करके केवल उनकाही आश्रय लिः
हुएहैं और ज्ञानके बलसे जिनके समस्त पाप एकवारही दग्ध होगये हैं वह लोग उनको देख सकते हैं ॥ १६ ॥ उनके देखनेकी इच्छा जो तुमव

तस्यनित्यंशरीरस्थामेघस्येवशतह्रदाः ॥ संग्रामरूपिणीलक्ष्मीर्देहमावृत्यतिष्ठति ॥ १३ ॥ नशक्यःससुरैर्द्रष्टुंनासुरैर्नचपन्नगैः ॥ यस्यप्रसादं
कुरुतेसवैतंद्रष्टुमर्हति ॥ १४ ॥ नहियज्ञफलैस्तातनतपोभिस्तुसंचितैः ॥ शक्यतेभगवान्द्रष्टुंनदानेननचेज्यया ॥ १५ ॥ तद्भक्तैस्तद्गतप्राणैस्त
च्चित्तैस्तत्परायणैः॥ शक्यतेभगवान्द्रष्टुंज्ञाननिर्दग्धकिल्बिषैः॥१६॥ अथवापृच्छ्यरक्षेंद्रयदितंद्रष्टुमिच्छसि॥ कथयिष्यामितेसर्वंश्रूयतांयदिरोचते
॥ १७ ॥ कृतेयुगेव्यतीतेवैमुखेत्रेतायुगस्यतु ॥ हितार्थंदेवमर्त्यानांभवितानृपविग्रहः ॥ १८॥ इक्ष्वाकूणांचयोराजाभाव्योदशरथोभुवि ॥ तस्य
सूनुर्महातेजारामोनामभविष्यति ॥ १९ ॥ महातेजामहाबुद्धिर्महाबलपराक्रमः ॥ महाबाहुर्महासत्त्वःक्षमयापृथिवीसमः ॥ २० ॥ आदित्यइ
वदुष्प्रेक्ष्यःसमरेशत्रुभिस्सदा ॥ भवितास्तिदारामोनरोनारायणःप्रभुः ॥२१॥ पितुर्नियोगात्सविभुर्दंडकेविविधेवने ॥ विचरिष्यतिधर्मात्माभ्रा
त्रासहमहामनाः ॥ २२ ॥ तस्यपत्नीमहाभागालक्ष्मीःसीतेतिविश्रुता ॥ दुहिताजनकस्यैषाउत्थितावसुधातलात् ॥ २३ ॥

हुईहो तो हम विस्तारसहित सब कहतेहैं जो रुचि हो तो श्रवण करो ॥ १७ ॥ सतयुगके अंतमें, त्रेतायुगके प्रारंभमें देवता और मनुष्योंके हितार्थ वह देव नारायण
मनुष्यराज शरीर धारण करेंगे ॥ १८ ॥ पृथ्वीके बीच इक्ष्वाकुवंशमें एक दशरथ नामके राजा होंगे उनके रामनाम एक महातेजस्वी पुत्र जन्म ग्रहण करेंगे ॥
॥ १९ ॥ वह महाबलवान् पराक्रमी श्रीरामचन्द्रजी क्षमागुणमें पृथ्वीकी समान अत्यन्त तेजस्वी, अति बुद्धिमान्, विशालबाहु और महात्मा होंगे ॥ २० ॥ वह
संग्राममें सूर्यकी समान शत्रुओंसे देखनेके अयोग्य होंगे, अधिक क्या कहे वह प्रभु नारायणही रामनामक मनुष्य होंगे ॥ २१ ॥ महामनस्वी विभु

माके साथ रहतीहै वह भी वैसेही श्रीरामचन्द्रजीकी अनुगामिनी ह ॥ २४ ॥ वह शीलाचारसम्पन्न साध्वी ' , और सूर्य नारायणकी कि समान सीता–राम मानों एक मूर्तिमान् विराजमान होंगे ॥ २५ ॥ हे रावण ! देवदेव शाश्वत, अव्यय, महान् नारायणका यह समस्त वृत्तान्त विस्तार पूर्वक हमने तुमसे कहा ॥ २६ ॥ हे रामचन्द्रजी ! महावीर प्रतापवान् राक्षसपति रावण यह सुनकर उनके साथ विरोध करनेकी इच्छासे चिन्ता करने लगा ॥ ॥ २७ ॥ श्रीमान् रावण सनत्कुमारजीके उन वचनोंको वारंवार स्मरण करता हुआ हर्षसंयुक्तहो संग्राम करनेके लिये भ्रमण करनेलगा ॥ २८ ॥ श्रीरामचंद्रजी

रूपेणाप्रतिमालोकेसर्वलक्षणलक्षिता ॥ छायेवानुगतारामंनिशाकरमिवप्रभा ॥२४॥ शीलाचारगुणोपेतासाध्वीधैर्यसमन्विता ॥ सहस्रांशोरश्मिरिवह्येकामूर्तिरिवस्थिता ॥ २५ ॥ एवंतेसर्वमाख्यातंमयारावणविस्तरात् ॥ महतोदेवदेवस्यशाश्वतस्याव्ययस्यच ॥ २६ ॥ एवंश्रुत्वामहाबाहू राक्षसेंद्रःप्रतापवान् ॥ त्वयासहविरोधेच्छुश्चिंतयामासराघव ॥२७॥ सनत्कुमारात्तद्वाक्यंचिंतयानोमुहुर्मुहुः॥ रावणोमुमुदेश्रीमान्युद्धार्थंविचचारह ॥ २८ ॥ श्रुत्वाचतांकथांरामोविस्मयोत्फुल्ललोचनः ॥ शिरसश्चालनंकृत्वाविस्मयंपरमंगतः ॥ २९ ॥ श्रुत्वातुवाक्यंसनरेश्वरस्तदामुदायुतोविस्मयमानचक्षुः ॥ पुनश्चतंज्ञानवतांप्रधानमुवाचवाक्यंवदमेपुरातनम् ॥ ३० ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे तृतीयःसर्गः ॥ ३ ॥ ततःपुनर्महातेजाःकुंभयोनिर्महायशाः ॥ उवाचरामंप्रणतंपितामहइवेश्वरम् ॥ १ ॥ श्रूयतामितिचोवाचरामंसत्यपराक्रमम् ॥ कथाशेषंमहातेजाःकथयामाससप्रभुः ॥ २ ॥ यथाख्यानंश्रुतंचैवयथावृत्तंयथातथा ॥ प्रीतात्माकथयामासराघवायमहामतिः ॥ ३ ॥

यह कथा सुनकर विस्मयोत्फुल्ल नेत्रोंसे शिर हिलाय अत्यन्त विस्मयको प्राप्त हुए ॥ २९ ॥ अधिक क्या कहें वह नरश्रेष्ठ राम उस समय यह वचन सुन विस्मययुक्त नेत्रोंसे हर्षके वश ज्ञानियोंमें श्रेष्ठ उन मुनिसे फिर बोले कि, आप हमसे पुरातन कथा कहिये ॥ ३० ॥ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे भाषाटीकायां तृतीयः सर्गः ॥ ३ ॥ इसके उपरान्त महायशस्वी कुम्भसम्भव महातेजस्वी अगस्त्यजी प्रणाम करतेहुए श्रीरामचन्द्रजीसे फिर बोले, जिसप्रकार ब्रह्माजी ईश्वरसे बोलते हैं ॥ १ ॥ वह सत्यपराक्रम श्रीरामचन्द्रजीसे बोले कि, श्रवण करो यह कहकर महातेजस्वी प्रभु अगस्त्यजी कथाका शेषभाग कहने लगे ॥ २ ॥ वह महामति अगस्त्यजी प्रीतियुक्त चित्तसे यथाख्यान यथाश्रुत और यथावृत्त श्रीरामचन्द्रजीसे कहने लगे ॥ ३ ॥

हे महावीर ! महामति श्रीरामचन्द्रजी ! दुष्टात्मा रावणने इसीलिये जनकनंदिनी जानकीको हरण कियाथा ॥ ४ ॥ हे महावीर ! हे महाकीर्ते ! हे अजीत ! नारदजीने गिरिराज मेरुके शिखरपर हमसे यह वृत्तान्त कथन कियाथा ॥ ५ ॥ हे राघव ! देव, गन्धर्व, सिद्ध, ऋषि व और दूसरे महानुभाव जनोंके सामने हँसते हुए फिर इस कथाके शेष भागको वर्णन कियाथा ॥६॥ हे मानद ! हे राजेन्द्र ! महातेजस्वी नारदजीने हँसते २ यह वर्णन कियाथा सो तुम इस महापातक हारिणी कथाको श्रवण करो ॥७॥ हे महावीर श्रीरामचंद्रजी ! यह कथा सुनकर देवता और ऋषियोंने हर्षयुक्तनेत्रहो नारदजीसे कहा ॥ ॥८॥ कि, जो भक्तिपूर्वक यह कथा सुनै या सुनावेगा; वह पुत्र पौत्र युक्त होकर स्वर्गलोकमें सन्मानित होगा ॥९॥इत्यार्षे श्रीमद्रा०वाल्मी०आदि०उत्तरकांडे भाषाटीकायां चतुर्थः सर्गः॥४॥

एतदर्थंमहाबाहोरावणेनदुरात्मना ॥ सुताजनकराजस्यहृतारामममहामते ॥ ४ ॥ एतांकथांमहाबाहोनारदःसुमहायशाः ॥ कथयामासदुर्धर्षे मेरौगिरिवरोत्तमे ॥ ५ ॥ देवगंधर्वसिद्धानामृषीणांचमहात्मनाम् ॥ कथाशेषंपुनःसोथकथयामासराघव ॥६॥ नारदःसुमहातेजाःप्रहसन्निवमानद ॥ तांकथांशृणुराजेंद्रमहापापप्रणाशनीम् ॥ ७ ॥ यांतुश्रुत्वामहाबाहोऋषयोदेवतैःसह ॥ ऊचुस्तंनारदंसर्वेहर्षपर्याकुलेक्षणम् ॥ ८ ॥ यश्चेमांश्रावयेन्नित्यंशृणुयाद्वापिभक्तितः ॥ सपुत्रपौत्रवान्रामस्वर्गलोकेमहीयते ॥ ९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे चतुर्थःसर्गः ॥ ४ ॥ ततःसराक्षसोरामपर्यटन्पृथिवीतले ॥ विजयार्थीमहाशूरैराक्षसैःपरिवारितः ॥ १ ॥ दैत्यदानवरक्षस्सुयंशृणोति बलाधिकम् ॥ तमाह्वयतियुद्धार्थीरावणोबलदर्पितः॥ २ ॥ एवंसपर्यटन्सर्वांपृथिवींपृथिवीपते ॥ ब्रह्मलोकान्निवर्ततंसमासाद्याथरावणः ॥ ३ ॥ व्रजंतंमेघपृष्ठस्थमंशुमंतमिवापरम् ॥ तमभिसृत्यप्रीतात्माह्यभिवाद्यकृतांजलिः ॥ ४ ॥ उवाचहृष्टमनसानारदंरावणस्तदा ॥ आब्रह्मभवनंलोकास्त्वयादृष्टाह्यनेकशः ॥ ५ ॥ कस्मिँल्लोकेमहाभागमानवाबलवत्तराः ॥ योद्धुमिच्छामितैःसार्धंयथाकामंयदृच्छया ॥ ६ ॥

इसके उपरान्त वह राक्षसराज रावण महाशूरवीर राक्षसोंको साथ लेकर विजयकी अभिलाषासे पृथ्वीपर घूमने लगा ॥ १ ॥ दैत्य, दानव या राक्षसोंमेंसे जिस किसीकोभी अधिक बलवान् सुना बलदर्पित रावण उसकोही युद्ध करनेके लिये जायकर पुकारता ॥ २ ॥ हे महीपाल ! रावण इस प्रकार सब पृथ्वीपर विचरकर ब्रह्मलोकसे लौटनेके समय नारदजीका दर्शन पाता हुआ ॥ ३ ॥ नारदजी दूसरे सूर्यहीकी समान मेघके ऊपर होकर गमन कररहेथे रावणने प्रसन्नतासे निकट पहुँच हाथ जोडकर उनको प्रणाम किया ॥ ४ ॥ तब रावण हर्षितहो श्रीनारदजीसे बोला कि, हे भगवन् ! आपने ब्रह्माजीसे लेकर और सबही लोक अनेक प्रकार दर्शन किये हैं ॥ ५ ॥ हे महाभाग ! उनमें किस लोकके मनुष्य अधिक बलवान्हैं, हम उनके साथ [illegible]

पर जो मनुष्य वास करतेहैं वह सबही अति बलवान्, चंद्रमाके समान दीर्घकाय, महावीर्य युक्त और मेघकी समान गंभीर शब्दवालेहैं ॥८॥ वह सबही महाश्रीमान् धैर्यशाली हैं उनकी बांहें बडे २ परिघकी समान हैं। हे राक्षसराज! इस लोकमें तुम बल वीर्यसम्पन्न जैसे पुरुषोंकी इच्छा करतेहो, वैसे मनुष्य हमने श्वेतद्वीपमें देखेहैं, नारदजीके वचन सुनकर रावणने कहा ॥ ९ ॥ १० ॥ कि; हे महाराज! श्वेतद्वीपके मनुष्य किस कारणसे बलवान्हैं और वह समस्त महात्मा वहां किस प्रकारसे जायकर वसे ॥११॥ हे प्रभो! नारदजी! आप हस्तामलककी समान समस्त जगत् सदा देखतेहैं, इस कारण यह समस्त वृत्तान्त यथार्थ२ वर्णन कीजिये ॥

चिंतयित्वामुहूर्तंतुनारदःप्रत्युवाचतम् ॥ अस्तिराजन्महाद्वीपंक्षीरोदस्यसमीपतः ॥ ७ ॥ तत्रतेचंद्रसंकाशामानवाःसुमहाबलाः ॥ महाकायाम हावीर्यामेघस्तनितनिस्वनाः ॥ ८ ॥ महामात्राधैर्यवंतोमहापरिघबाहवः ॥ श्वेतद्वीपेमयादृष्टामानवाराक्षसाधिप ॥ ९ ॥ बलवीर्यसमोपेतान्या दृशांस्त्वमिहेच्छसि ॥ नारदस्यवचःश्रुत्वारावणःप्रत्युवाचह ॥ १० ॥ कथंनारदजायंतेतस्मिन्द्वीपेमहाबलाः ॥ श्वेतद्वीपेकथंवासःप्राप्तस्ते स्तुमहात्मभिः ॥ ११ ॥ एतन्मेसर्वमाख्याहिप्रभोनारदतत्त्वतः ॥ त्वयादृष्टंजगत्सर्वंहस्तामलकवत्सदा ॥ १२ ॥ रावणस्यवचःश्रुत्वानारदः प्रत्युवाचह ॥ अनन्यमनसोनित्यंनारायणपरायणाः ॥ १३ ॥ तदाराधनसक्ताश्चतच्चित्तास्तत्परायणाः ॥ एकांतभावानुगतास्तेनराराक्षसाधिप ॥ ॥१४॥ तच्चित्तास्तद्गतप्राणानरानारायणंसदा ॥ श्वेतद्वीपेतुतैर्वासअर्जितःसुमहात्मभिः ॥१५॥ येहतालोकनाथेनशार्ङ्गमानम्यसंयुगे ॥ चक्रायुधे नदेवेनतेषांवासस्त्रिविष्टपे ॥ १६ ॥ नहियज्ञफलैस्तातनतपोभिर्नसंयमैः ॥ नचदानफलैर्मुख्यैःसलोकःप्राप्यतेसुखम् ॥ १७ ॥ नारदस्यवचः श्रुत्वादशग्रीवःसुविस्मितः ॥ ध्यात्वा तु सुचिरंकालंतेनयोत्स्यामिसंयुगे ॥ १८ ॥

॥ १२ ॥ रावणके वचन सुनकर देवर्षि नारदजी बोले कि, वह श्वेतद्वीपवासी समस्त मनुष्य नित्य अनन्यचित्तसे नारायणपरायणहैं ॥ १३ ॥ और उनमेंही चित्त लगाय तत्परहो एकान्त भावसे नारायणजीकी आराधना करतेहैं, हे राक्षसनाथ! वह सदाही नारायणको चित्त समर्पण कियेहैं ॥ १४ ॥ उनमेंही प्राण लगाये हैं, यह सब अतिमहात्मा नारायणजीमें लीनहैं इसी कारणसे वह सब महात्मा श्वेतद्वीपमें वसेहैं ॥ १५ ॥ चक्रधारी, लोकनाथ, देव नारायण शार्ङ्गधनुष झुकाय जिनका संग्राममें संहार करते हैं उनका स्वर्गमें और वहां वास होता है ॥ १६ ॥ हे तात! क्या यज्ञफल, क्या तपस्या, क्या समस्त प्रधान २ दानफल किसीसेभी सालोक्यफलकी प्राप्ति नहीं होती ॥१७॥ नारदजीके वचन सुन रावण विस्मितहो कुछ विलम्बतक चिन्ताकर बोला कि, हमें उनकेही साथ संग्राम करेंगे ॥१८॥

इसके उपरान्त रावण नारदजीसे कहकर श्वेतद्वीपको चला गया, नारदजीभी अनेक क्षण चिन्ताकर कौतूहलान्वितहो ॥ १९ ॥ परमाश्चर्य युक्त संग्राम देखनेकी वासनासे शीघ्रही श्वेतद्वीपको गये क्योंकि वह सदा संग्राम चाहनेवाले और तमाशा देखनेवाले हैं ॥ २० ॥ हे राघव ! रावणभी घोर सिंहनाद कर २ के दशों दिशाओंको विदारण करता हुआ राक्षसोंके साथ वहां गया ॥ २१ ॥ जब नारदजी वहां पहुँचे तब महायशस्वी रावण देवतोंकोभी दुर्लभ श्वेत नामक एक महाद्वीपमें पहुंचा ॥ २२ ॥ परन्तु उस द्वीपके तेजप्रभावसे बलवान् रावणका पुष्पकविमान वायुके वेगसे टकराकर ॥ २३ ॥ पवनसे टकराये हुए बादलकी समान टिके रहनेको समर्थ न हुआ । राक्षसपति रावणके मंत्रीभी कठिनतासे देखनेके योग्य द्वीपमें पहुँचकर ॥ २४ ॥ भयसहित रावणसे कहनेलगे कि,

आपृच्छ्यनारदंप्रायाच्छ्वेतद्वीपायरावणः ॥ नारदोपिचिरंध्यात्वाकौतूहलसमन्वितः ॥ १९ ॥ दिदृक्षुःपरमाश्चर्यंतत्रैवत्वारितंययौ ॥ सहिकेलिकरोविप्रोनित्यंचसमरप्रियः ॥ २० ॥ रावणोपिययौतत्रराक्षसैः सह राघव ॥ महतासिंहनादेनदारयन्सदिशोदश ॥ २१ ॥ गतेतुनारदेतत्र रावणोपिमहायशाः ॥ प्राप्यश्वेतंमहाद्वीपंदुर्लभंयत्सुरैरपि ॥ २२ ॥ तेजसातस्यद्वीपस्यरावणस्यबलीयसः ॥ तत्तस्यपुष्पकंयानंवातवेगसमाहतम् ॥ २३ ॥ अवस्थातुंनशक्नोतिवाताहतइवांबुदः ॥ सचिवाराक्षसेंद्रस्यद्वीपमासाद्यदुर्दृशम् ॥ २४ ॥ अब्रुवन्रावणंभीताराक्षसाजातसाध्वसाः ॥ राक्षसेंद्रवयंमूढाभ्रष्टसंज्ञाविचेतसः ॥ २५ ॥ अवस्थातुंनशक्ष्यामोयुद्धंकर्तुंकथंचन ॥ एवमुक्त्वादुद्रुवुस्तेसर्वएवनिशाचराः ॥ २६ ॥ रावणोपिहितद्यानंपुष्पकंहेमभूषितम् ॥ विसर्जयामासतदासहतैःक्षणदाचरैः ॥ २७ ॥ गतंतुपुष्पकंरामरावणोराक्षसाधिपः ॥ कृत्वारूपंमहाभीमंसर्वराक्षसवर्जितः ॥ २८ ॥ प्रविवेशतदातस्मिञ्छ्वेतद्वीपेसरावणः ॥ प्रविशन्नेवतत्राशुनारीभिरुपलक्षितः ॥ २९ ॥ एकयासस्मितंकृत्वाहस्तेगृह्यदशाननम् ॥ पृष्टश्चागमनंब्रूहिकिमर्थमिहचागतः ॥ ३० ॥

हे निशाचरनाथ ! हम सब त्रासके मारे जडकी समान संज्ञाहीन होगये हैं ॥२५॥ इसकारण हम यहां किसी प्रकारसेभी नहीं ठहरसकते, यह कहकर समस्त राक्षसगण दशों दिशाओंको भागने लगे ॥ २६ ॥ तब रावणने इन सब राक्षसोंके साथ सुवर्णभूषित पुष्पकविमानको बिदा कर दिया ॥ २७ ॥ इसके उपरान्त जब पुष्पकविमान बिदा होगया तब राक्षसराज रावण महाभयंकर मूर्ति धारणकर सब राक्षसोंको छोड॥२८॥ अकेलाही श्वेतद्वीपमें प्रवेश करता हुआ । जब रावणने श्वेतद्वीपमें प्रवेश किया तब वहांकी स्त्रियोंने उसे देखा ॥२९॥ उन स्त्रियोंमेंसे किसी एक स्त्रीने रावणका हाथ पकड मुसकुराय कर पूछा कि, यहांपर किस कारणसे

पुन क्रोधित होकर कहा ॥ ३१ ॥ हम विश्रवामुनिके पुत्रहैं, हमारा रावण नामहै; हम संग्रामक हाकर यहांपर आयेहैं, परन्तु यहां तो हमको कोई दीख पाती नहीं ॥ ३२ ॥ जब दुरात्मा रावणने इस प्रकारसे कहा तब सब स्त्रियें मधुर स्वरसे हँसने लगीं ॥ ३३ ॥ इसके उपरान्त उनमेंसे एक स्त्रीने कोपकर एक मंजहीमें रावणको बालककी समान पकड लिया और उसकी कमर पकड उसको सब सखियोंके बीचमें घुमाने लगी ॥ ३४ ॥ और एक सखीको पुकारकर कहा कि, देखो आली ! हमने एक छोटे कीडेकी समान यह अञ्जनवर्ण दशमुख और बीसबाहुका एक जीव पकडाहै ॥ ३५ ॥ तब घुमाये जानेसे थकाहुआ रावण

कोगतंकस्यगपुत्रःकेनवाप्रहितोवद ॥ इत्युक्तोरावणोराजन्क्रुद्धोवचनमब्रवीत् ॥ ३१ ॥ अहंविश्रवसःपुत्रोरावणोनामराक्षसः ॥ युद्धार्थमिह संप्राप्तोनचपश्यामिकंचन ॥ ३२ ॥ एवंकथयतस्तस्यरावणस्यदुरात्मनः ॥ प्राहसंस्तेततःसर्वेसुस्वनंयुवतीजनाः ॥ ३३ ॥ तासामेकाततःक्रुद्धाबालवद्ध्यलीलया ॥ भ्रामितस्तुसखीमध्येमध्येगृह्यदशाननम् ॥ ३४ ॥ सखीमन्यांसमाहूयपश्यत्वंकीटकंधृतम् ॥ दशास्यंविंशतिभुजं कृष्णांजनसमप्रभम् ॥ ३५ ॥ हस्ताद्धस्तंसचक्षिप्तोभ्राम्यतेभ्रमलालसः ॥ भ्राम्यमाणेनबलिनाराक्षसेनविपश्चिता ॥ ३६ ॥ पाणावेकाथसंदष्टा गंगरानिताशुभा ॥ मुक्तस्तयाशुभःकीटोधुन्वंत्याहस्तवेदनात् ॥ ३७ ॥ गृहीत्वान्यातुरक्षेंद्रमुत्पपातविहायसा ॥ ततस्तामपिसंक्रुद्धोविददार नखैर्भृशम् ॥ ३८ ॥ तयासहविनिर्धूतःसहसैवनिशाचरः ॥ पपातसोंभसोमध्येसागरस्यभयातुरः ॥ ३९ ॥ पर्वतस्येवशिखरंयथावज्रविदारितम् ॥ पपातसागरजलेतथासौविनिपातितः ॥ ४० ॥ एवंसरावणोरामश्वेतद्वीपनिवासिभिः ॥ युवतीभिर्विगृह्याशुभ्रामितश्चततस्ततः ॥ ४१ ॥

एक हाथमें दूसरे हाथमें पकडा जायकर घूमने लगा । इस प्रकारसे जब बलवान् विद्वान् रावण घुमायेजाने लगे ॥ ३६ ॥ तब इसने बडा कोप कर उस सुन्दरी स्त्रीके हाथमें बडे जोरसे काट खाया, वैसेही उस स्त्रीने हाथकी पीडासे व्याकुल हो इस शुभ कीडेको छोड दिया ॥ ३७ ॥ यह देखकर एक और स्त्री राक्षस रावणको पकडकर आकाशमार्गमें उड गई, वैसेही रावणने अति कोपकर उसकोभी नोंचकर विदारण किया ॥ ३८ ॥ भयातुर रावणको जब उस स्त्रीने छोड दिया तब रावण अति जोरसे समुद्रके जलमें गिरा ॥ ३९ ॥ वज्रसे टूटाहुआ पर्वतका शिखर जिसप्रकार समुद्रमें गिरपडताहै वैसेही रावणभी छूटकर समुद्रमें गिरा ॥ ४० ॥ हे राम ! श्वेतद्वीपकी रहनेवाली स्त्रियें अति शीघ्र रावणको पकडकर इस प्रकारसे वारंवार घुमाय रहीथीं ॥ ४१ ॥

महातेजस्वी नारदजी रावणको पीडित देखकर विस्मय सहित हँसे और नाचनेलगे ॥ ४२ ॥ हे महावीर ! दुरात्मा रावणने यह वृत्तान्त जानकरही तुम्हारे ...
मृत्युकी कामना करके सीताजीको हरण कियाथा ॥ ४३ ॥ तुम शंख चक्रगदाधारी देव नारायणहो; तुम्हारे हाथमें शार्ङ्ग धनुष पद्म और वज्रादि आयुध विरा
जमान हैं तुम्हें समस्त देवता नमस्कार करतेहैं ॥ ४४ ॥ तुम सर्व देवताओंसे पूजेजातेहो, श्रीवत्सांकित हृषीकेशहो; तुम महायोगी पद्मनाभ और भक्त जनोंको
अभय देनेवालेहो ॥ ४५ ॥ आपने रावणका वध करनेके लिये मनुष्य अवतार धारण कियाहै; अधिक क्या कहें, क्या आप अपनेको नारायण नहीं जानते हैं ॥
॥ ४६ ॥ हे महाभाग ! मोहको प्राप्त न हो, आत्मज्ञानसे अपनेको स्मरण करो तुम गुप्तसेभी अधिक गुप्त हो ऐसा पितामह ब्रह्माजीने कहाहै ॥ ४७ ॥ हे राघव ! तुम

नारदोपिमहातेजारावणंप्राप्यधर्षितम् ॥ विस्मयंसुचिरंकृत्वाप्रजहासननर्तच ॥ ४२ ॥ एतदर्थंमहाबाहोरावणेनदुरात्मना ॥ विज्ञायापहृतासीता
त्वत्तोमरणकांक्षया ॥ ४३ ॥ भवान्नारायणोदेवःशंखचक्रगदाधरः ॥ शार्ङ्गपद्मायुधोवज्रीसर्वदेवनमस्कृतः ॥ ४४ ॥ श्रीवत्सांकोहृषीकेशःसर्वैः
वाभिपूजितः ॥ पद्मनाभोमहायोगीभक्तानामभयप्रदः ॥ ४५ ॥ वधार्थंरावणस्यत्वंप्रविष्टोमानुषींतनुम् ॥ किंनवेत्सित्वमात्मानंयथानारायणः
ह्यहम् ॥ ४६ ॥ मामुह्यस्वमहाभागस्मरचात्मानमात्मना ॥ गुह्याद्गुह्यतरस्त्वंहिह्येवमाहपितामहः ॥ ४७ ॥ त्रिगुणश्चत्रिवेदीचत्रिधामाचा...
राघव ॥ त्रिकालकर्मत्रैविद्यत्रिदशारिप्रमर्दन ॥ ४८ ॥ भयाक्रांतास्त्रयोलोकाःपुराणेविक्रमैस्त्रिभिः ॥ त्वमहेंद्रानुजःश्रीमान्वलिबंधनकार
णात् ॥ ४९ ॥ अदित्यागर्भसंभूतोविष्णुस्त्वंहिसनातनः ॥ लोकाननुगृहीतुंवैप्रविष्टोमानुषींतनुम् ॥ ५० ॥ तदिदंसाधितंकार्यंसुराणांसुरस
त्तम ॥ निहतोरावणःपापःसपुत्रगणबांधवः ॥ ५१ ॥ प्रहृष्टाश्चसुराःसर्वेऋषयश्चतपोधनाः ॥ प्रशांतंचजगत्सर्वंत्वत्प्रसादात्सुरेश्वर ॥ ५२ ॥

सत्त्व,रज और तमोगुण स्वरूपहो। तुम ऋक्,यजुः,साम,यह तीन वेदहो, तुम स्वर्ग, मृत्यु,पाताल इन तीनों लोकोंके वासी हो,भूत,भविष्य, वर्त्तमान इन तीन कालोंमें तुम कार्य
किया करतेहो, तुम धनुर्वेद, गान्धर्ववेद,आयुर्वेद इन तीन वेदोंमें पारदर्शी हो, तुम देवताओंसे शत्रुओंका संहार करनेवाले हो ॥ ४८ ॥ तुम इन्द्रके छोटे भाईहो, तुमने
वामन होकर बलिको बांधा और पुरातन त्रिविक्रम त्रिलोकीको नाप लिया था ॥ ४९ ॥ तुम अदितिके गर्भसे उत्पन्नहो, तुम वही सनातन विष्णुहो केवल सबपर
अनुग्रह करनेके लियेही आपने मनुष्य अवतार धारण कियाहै ॥५०॥ हे सुरश्रेष्ठ ! आपने पुत्र बान्धव और सेनाके सहित पापी रावणको संग्राममें मारकर देवताओंका
कार्य पूरा किया है ॥ ५१ ॥ हे सुरेश्वर ! आपके प्रसादसे समस्त देवता और तपोधन ऋषिगण सन्तुष्ट हुएहैं और सब जगत्की शान्तिको प्राप्त हुआहै ॥ ५२ ॥

अति

...निमिनही राजा जनकजीके गृहमें उत्पन्न हुईं ॥ ५३ ॥ रा
...यह समस्त वृत्तान्त हमने आपके निकट वर्णन किया । ५०

पत्नसहित माताके समान सदा उनकी रक्षाकी थी, हे महायशस्वी राम ! यह समस्त वृत्तान्त हमने आपके निकट वर्णन किया ॥५४॥ दीर्घजीवी नारदजीने ऋषि सनत्कुमारजीके मुखसे श्रवण करके हमारे निकट इस प्रकार वर्णन कियाथा, सनत्कुमारजीने रावणसे जिसप्रकार कहाथा ॥५५॥ रावणने सर्वभाँतिसे वैसाही किया, जो विद्वान् श्राद्धके समय ब्राह्मणके निकट यह उपाख्यान श्रवण करें ॥ ५६ ॥ उसका दिया हुआ अन्न पितृलोगोंके निकट पहुँचता है, यह दिव्य कथा सुनकर राजीवलोचन श्रीरामचन्द्रजी ॥ ५७ ॥ अपने भ्राताओंके सहित परमविस्मयको प्राप्त हुए, वानरोंके सहित सुग्रीवजी, राक्षसोंके सहित विभीषणजी॥५८॥मंत्रियोंके सहित राजा व औरभी आये

सीतालक्ष्मीर्महाभागासंभूतावसुधातलात् ॥ त्वदर्थमिहचोत्पन्नाजनकस्यगृहेप्रभो ॥ ५३ ॥ लंकामानीययत्नेनमातेवपरिरक्षिता ॥ एवमेतत्समाख्यातंतवराममहायशः ॥ ५४ ॥ ममापिनारदेनोक्तमृषिणादीर्घजीविना ॥ यथासनत्कुमारेणव्याख्यातंतस्यरक्षसः ॥५५॥ तेनापिचतदेवाशुकृतंसर्वमशेषतः ॥ यश्चैतच्छ्रावयेच्छ्राद्धेविद्वान्ब्राह्मणसन्निधौ ॥५६॥ अन्नंतदक्षयंदत्तंपितॄणामुपतिष्ठति ॥ एतांश्रुत्वाकथांदिव्यांरामोराजीवलोचनः ॥ ५७ ॥ परंविस्मयमापन्नोभ्रातृभिःसहराघवः ॥ वानराःसहसुग्रीवाराक्षसाःसविभीषणाः ॥ ५८ ॥ राजानश्चसहामात्यायेचान्येपिसमागताः ॥ ब्राह्मणाःक्षत्रियावैश्याःशूद्राधर्मसमन्विताः॥५९॥ सर्वेचोत्फुल्लनयनाःसर्वेहर्षसमन्विताः॥ राममेवानुपश्यंतिभृशमत्यंतहर्षिताः ॥६०॥ ततोगस्त्योमहातेजाराघवंचेदमब्रवीत् ॥ दृष्टाःसभाजिताश्चापिरामयास्यामहेवयम् ॥ एवमुक्त्वागताःसर्वेपूजितास्तेयथागतम् ॥६१॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडेऽगस्त्यवाक्यं नाम पञ्चमः सर्गः ॥ ५ ॥ क्षेपकाःसमाप्ताः ॥ एवमास्तेमहाबाहुरहन्यहनिराघवः॥ अशासत्सर्वकार्याणिपौरजानपदेषुच ॥ १ ॥ ततःकतिपयाहस्सुवैदेहंमिथिलाधिपम् ॥ राघवःप्रांजलिर्भूत्वावाक्यमेतदुवाचह ॥ २ ॥

हुए धार्मिक ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र॥५९॥सबही हर्षितहो नेत्र फैलाय२ अति प्रसन्नतासे श्रीरामचन्द्रजीको वारंवार निहार बलिहार होनेलगे ॥ ६० ॥ इसके उपरान्त महातेजस्वी अगस्त्यजी श्रीरामचन्द्रजीसे बोले कि, हे रामचन्द्रजी ! हमने आपके दर्शनभी किये और हम संमानितभी हुए इसकारण अब हम जायँगे । वह सब ऋषि इसप्रकारसे पूजितहो जो जिस ओरसे आयेथे वह उसी ओरको चलेगये ॥ ६१ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे भाषाटीकायामगस्त्यवाक्यं नाम पंचमः सर्गः ॥ ५ ॥ क्षेपक समाप्त ॥ ॥ रघुनन्दन महावीर श्रीरामचन्द्रजी इसप्रकार सर्वपूजितहो पौर और जनपदसम्बन्धी कार्य शासन करते हुए समय बितानेलगे ॥ १ ॥ कुछदिन बीत जानेपर श्रीरामचन्द्रजी हाथ जोडकर वैदेहमिथिलाधिपति जनकजीसे बोले ॥ २ ॥

कि, आपही केवल हमारे गतिहैं; हम आपकरकेही पालितहैं; और हमने आपकेही उग्र तपवीर्यकी सहायतासे रावणको माराहै ॥ ३ ॥ हे राजन् ! समस्त इक्ष्वा...
...णोंके और समस्त मैथिल लोगोंकी प्रीतिकी उपमा नहीं और सम्बन्धभी अनुपमहै ॥४॥ हे महीपाल!आप अपने गृहको गमन कीजिये, भरतजीभी हमारे दिये ...
...के सहायताके निमित्त आपके पीछे २ गमन करेंगे ॥ ५ ॥ जनकराज श्रीरामचन्द्रजीके वचन स्वीकारकर उनसे बोले कि, हे राजन् ! आपकी नीति और आ...
...दर्शनकर हम प्रसन्न हुएहैं ॥ ६ ॥ परन्तु आपने हमारे लिये जो रत्नसंचय कियेहैं हमने वह समस्त रत्न दोनों बेटियोंको देदिये ॥७॥ जब राजा जनकजी ...
...गये, तब श्रीरामचन्द्रजीने हाथ जोड विनीतहो केकयराजपुत्र अपने मामा युधाजितसे कहा कि, ॥ ८ ॥ हे पुरुषश्रेष्ठ ! केकयराजपुत्र ! हम, भरत, लक्ष्मण, ...

भवान्हिगतिरव्यग्राभवतापालितावयम् ॥ भवतस्तेजसोग्रेणरावणोनिहतोमया ॥ ३ ॥ इक्ष्वाकूणांचसर्वेषांमैथिलानांचसर्वशः ॥ अतुलाःप्री...
...योराजन्संबंधकपुरोगमाः ॥ ४ ॥ तद्भवान्स्वपुरंयातुरत्नान्यादायपार्थिव ॥ भरतश्चसहायार्थंपृष्ठतश्चानुयास्यति ॥ ५ ॥ सतथेतिततः कृत्वा...
...घवंवाक्यमब्रवीत् ॥प्रीतोस्मिभवताराजन्दर्शनेननयेनच ॥ ६ ॥ यान्येतानितुरत्नानिमदर्थंसंचितानिवै ॥ दुहित्रोस्तान्यहंराजन्सर्वाण्यक्षया...
...मिवै ॥ ७ ॥ ततःप्रयातेजनकेकेकयंमातुलंप्रभुम् ॥ राघवःप्रांजलिर्भूत्वाविनयाद्वाक्यमब्रवीत् ॥ ८ ॥ इदंराज्यमहंचैवभरतश्चसलक्ष्मणः ॥
आयत्तास्त्वंहिनोराजन्गतिश्चपुरुषर्षभ ॥ ९ ॥ राजाहिवृद्धःसंतापंत्वदर्थमुपयास्यति ॥ तस्माद्गमनमद्यैवरोचतेतवपार्थिव ॥ १० ॥ लक्ष्मण...
...नानुयात्रेणपृष्ठतोनुगमिष्यते ॥ धनमादायबहुलंरत्नानिविविधानिच ॥ ११ ॥ युधाजित्तुतथेत्याहगमनंप्रतिराघव ॥ रत्नानिचधनंचैवत्वय्य...
...व्यमस्त्विति ॥ १२ ॥ प्रदक्षिणंचराजानंकृत्वाकेकयवर्धनः ॥ रामेणचकृतःपूर्वमभिवाद्यप्रदक्षिणम् ॥ १३ ॥ लक्ष्मणेनसहायेनप्रयातः...
...श्वरः ॥ हतेऽसुरेयथावृत्रेविष्णुनासहवासवः ॥ १४ ॥

और यह अयोध्याका राज्य सबही आपका है अधिक क्या कहैं, आपही निरापद कालमें हमारे एक मात्र गतिहैं ॥९॥ केकयराज वृद्धहैं, इस कारण आपके लिये
संतापित होते होंगे हे नृपति!इस कारण हम आजही आपका जाना अच्छा समझतेहैं ॥१०॥ बहुत सारा धन और विविधभाँतिके रत्न ले लक्ष्मणजी अनुयायी हो आपके
पीछे पीछे जायँगे ॥ ११ ॥ तब युधाजितने जाना स्वीकार करके कहा कि, हे रामचन्द्र ! तुम्हारा धन और रत्न अक्षय होवे ॥१२॥ प्रथम रामचन्द्रजीने प्रद
...क्षिणा करके उनको प्रणाम किया फिर केकयराजकुमार युधाजित श्रीरामचन्द्रजीकी प्रदक्षिणाकर और प्रणाम करके ॥ १३ ॥ लक्ष्मणजीको सहायक बनाय अपने
... श्रीरामचन्द्रजी उनको बिदाकर मित्र काशिन... भेंटकर
... साथ गयेथे ॥ १४ ॥ ... भरतजीके साथ उद्योग कियाथा, इस कारण अ...

बोले ॥ १५ ॥ हे राजन् ! आपने संग्राममें सहायता करनेके लिये भरतजीके साथ उद्योग कियाथा, इस कारण आपने हमारे प्रति परम सुहृदता और प्रीति दिखाई ॥ १६ ॥ अब इस समय आप रमणीक काशीपुरीको जाय, विशेष करके सुन्दर धवरहरोंसे युक्त तोरण समन्वित यह वाराणसी नगरी आपसेही रक्षित होतीहै ॥ १७ ॥ धर्मात्मा काकुत्स्थ श्रीरामचन्द्रजीने यह कह उत्तम आसनपरसे जब इन धर्मात्मा राजाको अतिप्यारपूर्वक हृदयसे लगाया ॥ ॥ १८ ॥ फिर कौशल्याकी प्रीतिके बढानेवाले श्रीरामचन्द्रजीने उनको विदा किया, वह निडर काशिराजभी रामचन्द्रजीकी आज्ञा पाय ॥ १९ ॥

तंविसृज्यननोरामोवयस्यमकुतोभयम् ॥ प्रतर्दनंकाशिपतिंपरिष्वज्येदमब्रवीत ॥ १५ ॥ दर्शिताभवताप्रीतिर्दर्शितंसौहृदंपरम् ॥ उद्योगश्चत्वया राजन्भरतेनकृतःसह ॥ १६ ॥ तद्भवानद्यकाशेयपुरींवाराणसींव्रज ॥ रमणीयांत्वयागुप्तांसुप्राकारांसुतोरणाम् ॥ १७ ॥ एतावदुक्त्वाचोत्थाय काकुत्स्थःपरमासनात् ॥ पर्यष्वजतधर्मात्मानिरंतरमुरोगतम् ॥ १८ ॥ विसर्जयामासतदाकौसल्याप्रीतिवर्धनः ॥ राघवेणकृतानुज्ञःकाशेयो ह्यकुतोभयः ॥ १९ ॥ वाराणसींययौतूर्णंराघवेणविसर्जितः ॥ विसृज्यतंकाशिपतिंत्रिशतंपृथिवीपतीन् ॥ २० ॥ प्रहसन्राघवोवाक्यमुवाच मधुराक्षरम् ॥ भवतांप्रीतिरव्यग्रातेजसापरिरक्षिता ॥ २१ ॥ धर्मश्चनियतोनित्यंसत्यंचभवतांसदा ॥ युष्माकंचानुभावेनतेजसाचमहात्म नाम् ॥ २२ ॥ हतोदुरात्मादुर्बुद्धीरावणोराक्षसाधमः ॥ हेतुमात्रमहंतत्रभवतांतेजसाहतः ॥ २३ ॥ रावणःसगणोयुद्धेसपुत्रामात्यबांधवः ॥ भवंतश्चसमानीताभरतेनमहात्मना ॥ २४ ॥ श्रुत्वाजनकराजस्यकाननात्तनयांहृताम् ॥ उद्युक्तानांचसर्वेषांपार्थिवानांमहात्मनाम् ॥ २५ ॥

श्रीरामचन्द्रजीको छोड अतिशीघ्र वाराणसी (आज कलकी बनारस) को चले गये. काशिनाथको विदाकर तीनशत (३००) राजाओंसे ॥२०॥ हँसकर मधुर वचनोंसे श्रीरामचन्द्रजी बोले कि, आप लोगोंने योग्यताके अनुसारही अचंचलहो प्रीतिकी रक्षा कीहै ॥ २१ ॥ आप लोगोंकी सदा धर्ममें निश्चयता; सर्वदा सत्य व्यवहार अनुभव और तेजके प्रभावसेही दुष्टस्वभाववाला मन्दबुद्धि राक्षसोंमें नीच रावण मारागयाहै हम तो उसका वध करनेमें केवल हेतुमात्रहैं. मारा तो वह आपहीके तेज प्रभावसे गयाहै ॥ २२ ॥ २३ ॥ यह रावण सेना, मंत्री, व अपने बंधु बान्धवों सहित मारागया । महात्मा भरतजीने आप लोगोंको यहां बुलाया ॥ २४ ॥ सो उन्होंने इस कारण बुलाया कि, इन्होंने जनक राजकुमारी सीताजीका वनमें हरण होना सुना, सो सहायता करनेके लिये इन्होंने

कियाथा ॥ आपको परिश्रम दिया परन्तु वडे भाग्यकी वातहै कि, आप लोगोंको क्लेश नहीं जान पडा, महानुभाव आप सब राजोंने इस कारण उद्योग कियाथा ॥
॥ २५ ॥ आपको यहांपर आये हुए वहुत दिन होगयेहैं, सो इस समय हमारी यह रुचि होतीहै कि, आप अपने २ स्थानको जायँ, तब राजोंने परम प्रसन्न
होकर कहा ॥ २६ ॥ हे श्रीरामचन्द्रजी ! वडे भाग्यवलसे आपने राज्य पाया है और भाग्यसेही सीताजी फिर मिलीहैं और यहभी वडे भाग्यकी वातहै कि
शत्रु रावण पराजित हुआहै ॥ २७ ॥ हे महाराज रामचन्द्रजी ! हम देखा कि, आपने शत्रुकुलका संहार करके जय पाईहै इससेही हमारी वासना अति सिद्ध
हुई और हम परम प्रसन्न हुएहैं ॥ २८ ॥ आप जो हमारी प्रशंसा करतेहैं यह तो आपका स्वभावही है; आप लोकाभिराम रामहैं, आपकी प्रशंसा हमको
करनी चाहिये परन्तु हम ऐसे वाक्य नहीं जानते कि, जिनसे आपकी प्रशंसा कीजाय ॥ २९ ॥ हे महावीर ! आप हमारे हृदयमें सदा विराजमान रहतेहैं, इन

कालोप्यतीतःसुमहान्गमनंरोचयाम्यतः ॥ प्रत्यूचुस्तंचराजानोहर्षेणमहतावृताः ॥ २६ ॥ दिष्ट्यात्वंविजयीरामराज्यंचापिप्रतिष्ठितम् ॥
दिष्ट्याप्रत्याहृतासीतादिष्ट्याशत्रुःपराजितः ॥ २७ ॥ एपनःपरमःकामएपानःप्रीतिरुत्तमा ॥ यत्त्वांविजयिनंरामपश्यामोहतशात्रवम् ॥ २८ ॥
एतत्त्वय्युपपन्नंचयदस्मांस्त्वंप्रशंससे ॥ प्रशंसार्हंनजानीमःप्रशंसांवक्तुमीदृशीम् ॥ २९ ॥ आपृच्छामोगमिष्यामोहृदिस्थोनःसदाभवान् ॥ वर्ता
महेमहावाहोप्रीत्यात्रमहतावृताः ॥ ३० ॥ भवेच्चतेमहाराजप्रीतिरस्मासुनित्यदा ॥ वाढमित्येवराजानोहर्षेणपरमान्विताः ॥ ३१ ॥ ऊचुःप्रांजल
यःसर्वेराघवंगमनोत्सुकाः॥ पूजितास्तेचरामेणजग्मुर्देशान्स्वकान्स्वकान् ॥ ३२ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरका-
ऽष्टत्रिंशःसर्गः ॥ ३८ ॥ तेप्रयातामहात्मानःपार्थिवास्तेप्रहृष्टवत् ॥ गजवाजिसहस्रौघैःकंपयंतोवसुंधराम् ॥ १ ॥ अक्षौहिण्योहितत्रासन्राघ
वार्थंसमुद्यताः ॥ भरतस्याज्ञयानेकाःप्रहृष्टवलवाहनाः ॥ २ ॥

कारण उस विषयकी वडी प्रीतिके वश होकर हम अपने हृदयमें जैसा व्यवहार करेंगे ॥ ३० ॥ सो हे महाराज ! हम चाहतेहैं कि, हमारे सबके ऊपरभी
आपकी वैसीही प्रीति रहे, फिर राजा अत्यन्त प्रफुल्लहो ॥ ३१ ॥ हाथ जोड रघुनंदन श्रीरामचन्द्रजीसे बोले कि, हम अपने २ राज्योंमें गमन करेंगे; सो यह
आपसे निवेदन करतेहैं; तब श्रीरामचन्द्रजीने उन राजाओंको आज्ञा दी और वह सब राजा सम्मानित होकर अपने २ देशोंको चले गये ॥ ३२ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा
॥ महात्मा राजगण हजारों हाथी घोडोंके समूहसे पृथ्वीको कंपायमान करते
[illegible] आदि० उत्तरकांडे भाषाटीकायामष्टत्रिंशः सर्गः ॥ ३८ ॥
[illegible] अक्षौहिणी सेना हर्षित होकर श्रीरामचन्द्रजीकी सहायता करनेके लिये [illegible]

संग्राममें नहीं देखपाया॥ ३॥इसलिये रावणका वध होजानेपर भरतजीने वृथा हमको बुलाया, यदि पहले हमको बुलाते तो हम अतिशीघ्र रावणको निःसन्देह संहारही करडालते ॥ ४ ॥ हमलोग राम और लक्ष्मणके बाहुवीर्यसे रक्षित और क्लेश विहीनहो समुद्रके पार सुखसे संग्राम करते ॥ ५ ॥ राजा उसकालमें हर्षयुक्त हो इस प्रकारके हजारों वचन कहते २ अपने २ राज्योंमें चलेगये ॥ ६ ॥ वह प्रसिद्ध समस्त साम्राज्य, महारत्न, धन और धान्यसे समृद्धिसम्पन्न और हर्षित जनोंसे परिपूर्ण थे ॥ ७ ॥ राजा अपने २ स्थानोंमें अक्षत शरीरसे गमन करके श्रीरामचन्द्रजीकी प्रियकामनासे विविध भांतिके रत्नोंको उपहार देनेलगे ॥ ८ ॥ इसके

ऊचुस्तेचमहीपालाबलदर्पसमन्विताः ॥ नरामरावणंयुद्धेपश्यामःपुरतःस्थितम् ॥ ३ ॥ भरतेनवयंपश्चात्समानीतानिरर्थकम् ॥ हताहिराक्षसाः क्षिप्रंपार्थिवैःस्युर्नसंशयः ॥ ४ ॥ रामस्यबाहुवीर्येणरक्षितालक्ष्मणस्यच ॥ सुखंपारेसमुद्रस्ययुध्येमविगतज्वराः ॥ ५ ॥ एताश्चान्याश्चरा जानःकथास्तत्रसहस्रशः ॥ कथयंतःस्वराज्यानिजग्मुर्हर्षसमन्विताः ॥ ६ ॥ स्वानिराज्यानिमुख्यानिऋद्धानिमुदितानिच ॥ समृद्धधनधा न्यानिपूर्णानिवसुमंतिच ॥ ७ ॥ यथापुराणितेगत्वारत्नानिविविधान्यथ ॥ रामस्यप्रियकामार्थमुपहारंनृपाददुः ॥ ८ ॥ अश्वान्यानानिरत्ना निहस्तिनश्चमदोत्कटान् ॥ चंदनानिचमुख्यानिदिव्यान्याभरणानिच ॥ ९ ॥ मणिमुक्ताप्रवालांस्तुदास्योरूपसमन्विताः ॥ अजाविकंचवि विधंरथांस्तुविविधान्बहून् ॥ १० ॥भरतोलक्ष्मणश्चैवशत्रुघ्नश्चमहाबलः ॥ आदायतानिरत्नानिस्वांपुरींपुनरागताः ॥ ११ ॥ आगम्यच पुरींरम्यामयोध्यांपुरुषर्षभाः ॥ तानिरत्नानिचित्राणिरामायसमुपानयन् ॥१२॥ प्रतिगृह्यचतत्सर्वंरामःप्रीतिसमन्वितः ॥ सुग्रीवायददौराज्ञेमहा त्माकृतकर्मणे ॥ १३ ॥ विभीषणायचददौतथान्येभ्योपिराघवः ॥ राक्षसेभ्यःकपिभ्यश्चयैर्वृतोजयमाप्तवान् ॥ १४ ॥

सिवाय अश्व, यान, मदमत्त हाथी, उत्तम चन्दन, दिव्य आभरण ॥९॥ मणि, मुक्ता, प्रवाल, रूपवती दासी, विविध भांतिके श्रेष्ठ चमडे, और अनेक रथ ॥१०॥ इन सब अनुयायियोंने भरत, लक्ष्मण, और शत्रुघ्नजीकोउपहार दिये, महा बलवान लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्नजी वह सब रत्न लेकर अपनी पुरीको लौट आये ॥११॥ उन पुरुषश्रेष्ठोंने रमणीक अयोध्यापुरीमें आयकर वह सब विचित्र रत्न श्रीरामचन्द्रजीको भेंटदिये ॥ १२ ॥ महात्मा श्रीरामचन्द्रजीने अत्यन्त प्रीति सहित उन सब रत्नोंको लेकर कार्य सिद्ध करके आयेहुए राजा सुग्रीवको देदिये ॥ १३ ॥ और राक्षसराज विभीषणजीकोभी दिये। जिन वानरगण व निशाचरगणोंके साथ

लंकामें श्रीरामचन्द्रजीने जय पाईथी ॥ १४ ॥ इन सब बलवान् राक्षसगणोंने श्रीरामचन्द्रजीके दियेहुए रत्न शिरपर और हाथोंपर धारण किये ॥ १५ ॥ फिर कमलदलके समान इक्ष्वाकु नरपति महारथी वीर्यवान् श्रीरामचन्द्रजीने महावीर अंगदजी व हनुमान्‌जीको बालककी समान अपनी गोदीमें लेलिया ॥ १६ ॥ फिर कमलदलके समान नेत्रवाले श्रीरामचन्द्रजी सुग्रीवजीसे बोले, यह अंगदजी तुम्हारे सुपुत्र और यह पवनकुमार हनुमान् तुम्हारे सुमंत्रीहैं ॥ १७ ॥ हे सुग्रीव ! यह दोनोंही तुम्हारी मन्त्रणामें निपुण और विशेष करके हमारे हितकारी कार्यमें निरत हैं इस कारणसे हे हरीश्वर ! इनका आदर सन्मान अनेक प्रकारसे करना चाहिये ॥ १८ ॥ महा यशस्वी श्रीरामचन्द्रजीने यह वचन कहकर महामोलके गहने अपने शरीरसे निकालकर अंगद व हनुमान्‌जीको पहरादिये ॥ १९ ॥ तब श्रीरामचन्द्रजीने महा

तेसर्वेरामदत्तानिरत्नानिकपिराक्षसाः ॥ शिरोभिर्धारयामासुर्भुजेषुचमहाबलाः ॥ १५ ॥ हनूमंतंचनृपतिरिक्ष्वाकूणांमहारथः ॥ अंगदंचम हानाहुमंकमारोप्यवीर्यवान् ॥ १६ ॥ रामःकमलपत्राक्षःसुग्रीवमिदमब्रवीत् ॥ अंगदस्तेसुपुत्रोयंमंत्रीचाप्यनिलात्मजः ॥ १७ ॥ सुग्रीवमंत्रि तेयुक्तौममचापिहितेरतौ ॥ अर्हतोविविधांपूजांत्वत्कृतेवैहरीश्वर ॥ १८ ॥ इत्युक्त्वाव्यपमुच्यांगाद्भूषणानिमहायशाः ॥ सबबंधमहार्हाणितदांग दहनूमतोः ॥ १९ ॥ आभाष्यचमहावीर्यान्राघवोयूथपर्षभान् ॥ नीलंनलंकेसरिणंकुमुदंगंधमादनम् ॥ २० ॥ सुषेणंपनसंवीरंमैंदंद्विविदमेवच ॥ जांबवंतंगवाक्षंचविनतंधूम्रमेवच ॥ २१ ॥ वलीमुखंप्रजंघंचसन्नादंचमहाबलम् ॥ दरीमुखंदधिमुखमिंद्रजानुंचयूथपम् ॥ २२ ॥ मधुरंश्लक्ष्णया वाचानेत्राभ्यामापिबन्निव ॥ सुहृदोमेभवंतश्चशरीरंभ्रातरस्तथा ॥ २३ ॥ युष्माभिरुद्धृतश्चाहंव्यसनात्काननौकसः ॥ धन्योराजाचसुग्रीवोभ वद्भिःसुहृदांवरैः ॥ २४ ॥ एवमुक्त्वाददौतेभ्योभूषणानियथार्हतः ॥ वज्राणिचमहार्हाणिसस्वजेचनरर्षभः ॥ २५ ॥ तेपिबंतःसुगंधीनिमधू निमधुपिंगलाः ॥ मांसानिचसुमृष्टानिमूलानिचफलानिच ॥ २६ ॥

वीर्यवान् वानरयूथपोंसे संभाषण किया नील, नल, केशरी, कुमुद, गन्धमादन ॥ २० ॥ सुषेण, पनस, वीरमैन्द, व द्विविद, जाम्बवन्त, गवाक्ष, विनत, धूम्र ॥ २१ ॥ वली मुख, प्रजंघ, महापलवान् सन्नाद, दरीमुख, दधिमुख व इन्द्रजानु इत्यादि यूथपोंसे ॥ २२ ॥ श्रीरामचन्द्रजीने मधुरवचन कहे । श्रीरामचन्द्रजी दोनों नेत्रोंसे पानही करते हुए उनसे मनोहर वचन कहनेलगे कि, तुम सबही हमारे सुहृदहो, देह और भ्राताओंकी समानहो ॥ २३ ॥ हे वनवासीगण ! तुम लोगोंनेही हमको विपदके समुद्रसे उद्धार कियाहै । राजा सुग्रीवही धन्यहैं और तुम्हारी समान श्रेष्ठ बन्धुही धन्यहैं ॥ २४ ॥ नरश्रेष्ठ श्रीरामचन्द्रजीने यह कहकर उन लोगोंको यथायोग्य बडे २ मोलके वस्त्र व हीरामणि भूषण दिये और उनसे मिले ॥ २५ ॥ यह मधुपिंगल समस्त वानरगण सुगंधियुक्त मधु पीनेलगे और मीठे फल व मूल भक्षण करने लगे ॥ २६ ॥

श्रीरामचन्द्रजीके प्रति भक्ति होनेसे उनको यह

गीर्वाके संग क्रीडा करने लगे ॥ २८ ॥ रा

राक्षस और महाबलवान् ... परम सन्मान पाय प्रसन्नताको प्राप्त कर

इस प्रकारसे रहते २ उनको [illegible]
चन्द्रजीभी उन कामरूपी वानर वीर्यवान् राक्षस और महाबलवान रीछोंके संग क्रीडा करने लगे ॥ २८ ॥ सन्तुष्टचित्त वानर और राक्षसोंको इस प्रकारसे दूसरा शिशिर मासभी बीत गया ॥ २९ ॥ श्रीरामचन्द्रजीसे परम सन्मान पाय प्रसन्नताको प्राप्त करते २ रमणीक इक्ष्वाकु नगरीमें उन वानरोंका सुखसे समय व्यतीत होने लगा ॥ ३० ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा०वाल्मी०आदि०उत्तरकांडे भाषाटीकायामेकोनचत्वारिंशः सर्गः ॥ ३९ ॥ इसप्रकारसे रीछ वानर और राक्षस गण अयोध्याजीमें समय बिताने लगे इसके उपरान्त महातेजस्वी श्रीरामचन्द्रजीने सुग्रीवजीसे कहा ॥ १ ॥ हे सौम्य ! सुर असुरोंसे दुर्द्धर्ष किष्किन्धानगरीमें जायकर वहां अपने मंत्रियोंके साथ

एवंतेषांनिवसतांमासःसाग्रोययौतदा ॥ मुहूर्तमिवतेसर्वेरामभक्त्याचमेनिरे ॥२७॥ रामोपिरेमेतैःसार्धंवानरैःकामरूपिभिः ॥ राक्षसैश्चमहावीर्यैर्ऋक्षैश्चैवमहाबलैः ॥ २८ ॥ एवंतेषांययौमासोद्वितीयःशिशिरःसुखम् ॥ वानराणांप्रहृष्टानांराक्षसानांचसर्वशः ॥ २९ ॥ इक्ष्वाकुनगरेरम्येपरांप्रीतिमुपासताम् ॥ रामस्यप्रीतिकरणैःकालस्तेषांसुखंययौ ॥ ३० ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांड एकोनचत्वारिंशःसर्गः ॥ ३९ ॥ तथास्मतेषांवसतामृक्षवानररक्षसाम् ॥ राघवस्तुमहातेजाःसुग्रीवमिदमब्रवीत् ॥ १ ॥ गम्यतांसौम्यकिष्किंधांदुराधर्षांसुरासुरैः ॥ पालयस्वसहामात्यैराज्यंनिहतकंटकम् ॥ २ ॥ अंगदंचमहाबाहोप्रीत्यापरमयायुतः ॥ पश्यत्वंहनुमंतंचनलंचसुमहाबलम् ॥ ३ ॥ सुषेणंश्वशुरंवीरंतारंचबलिनांवरम् ॥ कुमुदंचैवदुर्धर्षंनीलंचैवमहाबलम् ॥ ४ ॥ वीरंशतबलिंचैवमैंदंद्विविदमेवच ॥ गजंगवाक्षंगवयंशरभंचमहाबलम् ॥ ५ ॥ ऋक्षराजंचदुर्धर्षंजांबवंतंमहाबलम् ॥ पश्यप्रीतिसमायुक्तोगंधमादनमेवच ॥ ६ ॥ ऋषभंचसुविक्रांतंप्लवंगंचसुपाटलम् ॥ केसरिंशरभंशुंभंशंखचूडंमहाबलम् ॥ ७ ॥ येयेमेसुमहात्मानोमदर्थेत्यक्तजीविताः ॥ पश्यत्वंप्रीतिसंयुक्तोमाचैषांविप्रियंकृथाः ॥ ८ ॥

निष्कंटक राज्य भोगो ॥ २ ॥ हे महावीर ! तुम परम प्रीतियुक्त होकर महाबलवान् अंगदजी, हनुमान् और नलको देखा करना ॥ ३ ॥ श्वशुर सुषेण, बलवानोंमें श्रेष्ठ वीर तार, दुर्द्धर्ष कुमुद, महाबलवान नील ॥ ४ ॥ वीर शतबलि, मैन्द, द्विविद, गज, गवाक्ष, गवय, महाबलवान् शरभ ॥ ५ ॥ महाबलवान् दुर्द्धर्ष ऋक्षराज जाम्बवान इन सबको आप प्रीतियुक्त चित्तसे देखिये. इनके अतिरिक्त गन्धमादन ॥६॥ विक्रमकारी ऋषभ, सुपाटल केशरी, शरभ, शुम्भ, महाबलवान् शंखचूड ॥ ॥ ७ ॥ ये और जिन वानरवीरोंने हमारे लिये अपना जीवन वार दियाहै, हे सुग्रीव ! तुम इन सबको प्रेम सहित पालन करना, देखो इनके साथ ऐसा न करना

…ो इनको पुग लगे ॥८॥ सुग्रीवने वारंवार भेटकर श्रीरामचन्द्रजीने मधुर वचन विभीषणसे कहे ॥ ९ ॥ हम जानतेहैं कि आप धर्मज्ञहैं, पुरवासी जन, मंत्री राक्षसगण. और तुम्हारे भ्राता कुवेरजी तुममें स्नेह करतेहैं; इस निमित्त जाओ अब धर्मसहित लंकाका राज्य करो ॥ १० ॥ हे राजन् ! बुद्धिमान् राजा सदा पृथ्वीमंडलको भोग किया करते हैं, इस कारण तुम कभी अपनी मति अधर्ममें मत करना ॥ ११ ॥ हे राजन् ! तुम हमारी और सुग्रीवजीकी सदा याद करते रहना. अब रोग रहित हो परम प्रसन्नतापूर्वक तुम यहांसे जाओ ॥ १२ ॥ श्रीरामचन्द्रजीके वचन सुनकर रीछ, वानर और राक्षसगण धन्य २ कह वारंवार श्रीरामचन्द्रजीकी बडाई करनेलगे ॥ १३ ॥ यह कहने लगे, हे श्रीरामचन्द्रजी, ! आपकी बुद्धि स्वयं ब्रह्माजीकी समानहै, वैसाही सर्व श्रेष्ठ माधुर्य आपमें है ॥

परिगुह्यचसुग्रीवमाश्लिष्यचपुनःपुनः ॥ विभीषणमुवाचाथरामोमधुरयागिरा ॥ ९ ॥ लंकांप्रशाधिधर्मेणधर्मज्ञस्त्वंमतोमम ॥ पुरस्यराक्षसानांचभ्रातुर्वैश्रवणस्यच ॥ १० ॥ माचबुद्धिमधर्मेत्वंकुर्याराजन्कथंचन ॥ बुद्धिमंतोहिराजानोध्रुवमश्नंतिमेदिनीम् ॥ ११ ॥ अहंचनित्यशोराजन्सुग्रीवसहितस्त्वया ॥ स्मर्तव्यःपरयाप्रीत्यागच्छत्वंविगतज्वरः ॥ १२ ॥ रामस्यभाषितंश्रुत्वाऋक्षवानरराक्षसाः ॥ साधुसाध्वितिकाकुत्स्थंप्रशशंसुःपुनःपुनः ॥ १३ ॥ तवबुद्धिर्महाबाहोवीर्यमद्भुतमेवच ॥ माधुर्यंपरमंरामस्वयंभोरिवनित्यदा ॥ १४ ॥ तेषामेवंब्रुवाणानांवानराणांचरक्षसाम् ॥ हनूमान्प्रणतोभूत्वाराघवंवाक्यमब्रवीत् ॥ १५ ॥ स्नेहोमेपरमोराजंस्त्वयितिष्ठतुनित्यदा ॥ भक्तिश्चनियतावीरभावोनान्यत्रगच्छतु॥१६॥ यावद्रामकथावीरचरिष्यतिमहीतले ॥ तावच्छरीरेवत्स्यंतुप्राणाममनसंशयः ॥ १७ ॥ यच्चैतच्चरितंदिव्यंकथातेरघुनंदन ॥ तन्ममाप्सरसोरामश्रावयेयुर्नरर्षभ ॥ १८ ॥ तच्छ्रुत्वाहंततोवीरतवचर्यामृतंप्रभो ॥ उत्कंठांतांहरिष्यामिमेघलेखामिवानिलः ॥ १९ ॥

॥ १४ ॥ जब वानर और निशाचर ऐसा कहने लगे तब हनुमान्जी प्रणामकर श्रीरामचंद्रजीसे बोले ॥ १५ ॥ हे वीर राजन् ! आपमें हमारी परमभक्ति रहे और स्नेहभी लगा रहे, व हमारा मन आपको छोडकर और किसीमें अनुरागी न हो ॥ १६ ॥ हे वीर ! जबतक रामकथा पृथ्वीपर गाई जावे तबतक हमारे प्राण हमारी देहको न छोडें इसमें संदेह न हो ॥ १७ ॥ हे रघुनंदन ! आपका कथारूप जो यह दिव्य चरित्रहै, सो हे पुरुषश्रेष्ठ राम ! यह चरित्र सदाही हमको अप्सरा… सुनाया करें ॥ १८ ॥ हे प्रभो वीर ! आपका चरितामृत श्रवण करके हम आपके दर्शन मिलनेसे उत्पन्न हुई उत्कंठाको दूर करेंगे, जैसे पवन मेघोंको भगाय… उठ स्नेहके मारे उन्हें भेटकर क… ॥ २० ॥ हे क… …छ मने…

…जबतक हमारी कथा इस लोकमें होती रहेगी ॥ २१ ॥ तबतक तुम्हारी कीर्ति…
…धारण करके वास करोगे अधिक क्या कहें जबतक यह सब लोक रहेंगे तबहीतक…

प्रार्थनाकी वही होगा इसमें संशय नहीं; जबतक हमारी कथा इस लोकमें होती रहेगी ॥ २१ ॥ तबतक तुम्हारी कीर्तिभी यहां विद्यमान रहेगी, और तबहींतक तुमभी शरीर धारण करके वास करोगे अधिक क्या कहें जबतक यह सब लोक रहेंगे तबहींतक हमारी कथा रहेगी ॥ २२ ॥ हे वानर ! जो उपकार तुमने हमारे किये हैं, उन उपकारोंमेंसे एक उपकारके लिये प्राणदान करकेभी हम ऋणसे नहीं छूटसकतेहैं, परन्तु तुम्हारे उपकार और जो बाकी बचेहैं उनके हम सदाही ऋणी रहेंगे ॥ २३ ॥ हे वानर ! तुमने जो उपकार कियेहें वह हमारे अंगमें जीर्ण होजायँ कारण कि, आपदकाल आपडनेपर मनुष्य प्रत्युपकारके पात्र हुआ करते हैं ॥ २४ ॥ यह कहकर श्रीरामचन्द्रजीने बीच २ में वैदूर्यमणियोंसे शोभित, चंद्रमाकी प्रभातुल्य दमकताहुआ हार कंठसे निकाल हनुमा

एवंब्रुवाणंरामस्तुहनूमन्तंवरासनात् ॥ उत्थायसस्वजेस्नेहाद्वाक्यमेतदुवाचह ॥ २० ॥ एवमेतत्कपिश्रेष्ठभवितानात्रसंशयः ॥ चरिष्यतिकथा यावदेषालोकेचमामिका ॥२१॥ तावत्तेभविताकीर्तिःशरीरेप्यसवस्तथा ॥ लोकाह्यियावत्स्थास्यंतितावत्स्थास्यन्तिमेकथाः॥२२॥ एकैकस्यो पकारस्यप्राणान्दास्यामितेकपे ॥ शेषस्येहोपकाराणांभवामऋणिनोवयम् ॥२३॥ मदंगेजीर्णतांयातुयत्त्वयोपकृतंकपे ॥ नरःप्रत्युपकाराणामा पत्स्वायातिपात्रताम् ॥ २४ ॥ ततोस्यहारंचंद्राभंमुच्यकंठात्सराघवः ॥ वैदूर्यतरलंकंठेबबंधचहनूमतः ॥ २५ ॥ तेनोरसिनिबद्धेनहारेणमहता कपिः ॥ रराजहेमशैलेंद्रश्चंद्रेणाक्रांतमस्तकः ॥ २६ ॥ श्रुत्वातुराघवस्यैतदुत्थायोत्थायवानराः ॥ प्रणम्यशिरसापादौनिर्जग्मुस्तेमहाबलाः ॥ ॥ २७ ॥ सुग्रीवःसचरामेणनिरंतरमुरोगतः ॥ विभीषणश्चधर्मात्मासर्वेतेबाष्पविक्लवाः ॥ २८ ॥ सर्वेचतेबाष्पकलाःसाश्रुनेत्राविचेतसः ॥ संमू ढाइवदुःखेनत्यजंतोराघवंतदा ॥ २९ ॥

नजीके गलेमें पहराय दिया ॥ २५ ॥ सुवर्णशैलराज सुमेरु अपने ऊपर पडीहुई चन्द्रमाकी किरणोंसे जिस प्रकार शोभित होताहै; वैसेही हनुमान्जीकी छातीमें पडाहुआ वह हार शोभा विस्तार करने लगा ॥ २६ ॥ श्रीरामचन्द्रजीके पहले कहेहुए यह वचन सुनकर महाबलवान् वानर एक २ करके उठे; और श्रीरामचं द्रजीके चरणोंमें मस्तक रख प्रणाम करके चले ॥ २७ ॥ सुग्रीव धर्मात्मा विभीषणजी श्रीरामचन्द्रजीसे भलीभाँति भेंट करते हुए, और राम, सुग्रीव, विभीषण, इन तीनोंके नेत्रोंसे आंसुओंकी धारा चलनेलगी और यह विह्वल होगये ॥ २८ ॥ वानर जब श्रीरामचन्द्रजीको छोडकर चले तब दुःखके मारे उनके नेत्रोंसे आंसू निकलने लगे वरन् बाफसे उनका कंठ रुकगया, इससे कुछ बात चीत न करसके और चेतनारहित होकर वह सबके सब मूर्च्छित होगये ॥२९॥

इस प्रकारसे महात्मा श्रीरामचन्द्रजीका प्रसाद पाय समस्त वानरादि देहत्यागी जीवकी समान अपने २ घरोंको चले ॥३०॥ इसके उपरान्त राक्षस, रीछ और वानरगण; रामवियोगसे उत्पन्न आंसुओंसे नेत्र गीले कर रघुवंशके बढानेवाले श्रीरामचन्द्रजीको प्रणाम जताय जो जिस देशसे आये थे वह उसी देशको गये ॥३१॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषाटीकायां चत्वारिंशः सर्गः ॥ ४० ॥ वानर, राक्षस और रीछोंको विदा देकर महावीर श्रीरामचन्द्रजी अपने भ्राताओंके सहित सुखीहो हर्ष प्राप्त करने लगे ॥ १ ॥ कुछ काल बीते महाविभु श्रीरामचन्द्रजीने अपने भ्राताओंके सहित अपराह्णके समय आकाशसे निकले हुए यह वचन सुने ॥ २ ॥ " हे सौम्य राम ! आप हमको प्रसन्नवदनसे निहारिये; हे प्रभो ! हम पुष्पक कुबेरजीके भवनसे आयेहैं ॥ ३ ॥ हे नरश्रेष्ठ! आपकी आज्ञा

कृतप्रसादास्तेनेवंराघवेणमहात्मना ॥ जग्मुःस्वंस्वंगृहंसर्वेदेहीदेहमिवत्यजन् ॥ ३० ॥ ततस्तुतेराक्षसऋक्षवानराःप्रणम्यरामंरघुवंशवर्धनम् ॥ वियोगजाश्रुप्रतिपूर्णलोचनाःप्रतिप्रयातास्तुयथानिवासिनः ॥ ३१ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे चत्वारिंशः सर्गः ॥ ४० ॥ विसृज्यचमहाबाहुर्ऋक्षवानरराक्षसान् ॥ भ्रातृभिःसहितोरामःप्रमुमोदसुखंसुखी ॥ १ ॥ अथापराह्णसमयेभ्रातृभिःसहराघवः॥ शुश्रावमधुरांवाणीमंतरिक्षान्महाप्रभुः ॥ २ ॥ सौम्यरामनिरीक्षस्वसौम्येनवदनेनमाम् ॥ कुबेरभवनात्प्राप्तंविद्धिमांपुष्पकंप्रभो ॥ ३ ॥ तवशासनमाज्ञायगतोस्मिभवनंप्रति ॥ उपस्थातुंनरश्रेष्ठसचमांप्रत्यभाषत ॥ ४ ॥ निर्जितस्त्वंनरेंद्रेणराघवेणमहात्मना ॥ निहत्ययुधिदुर्धर्षंरावणंराक्षसेश्वरम् ॥ ५ ॥ ममापिपरमाप्रीतिर्हतेतस्मिन्दुरात्मनि ॥ रावणेसगणेचैवसपुत्रेसहबांधवे ॥ ६ ॥ सत्वंरामेणलंकायांनिर्जितःपरमात्मना॥ वहसौम्यतमेवत्वमहमाज्ञापयामिते ॥ ७ ॥ परमोह्येषमेकामोयत्त्वंराघवनंदनम् ॥ वहेर्लोकस्यसंयानंगच्छस्वविगतज्वरः ॥ ८ ॥ सोऽहंशासनमाज्ञायधनदस्यमहात्मनः ॥ त्वत्सकाशमनुप्राप्तोनिर्विशंकःप्रतीच्छमाम् ॥ ९ ॥

पायकर धनद कुबेरजीके निकट हम उनकी उपासना करने गयेथे; परन्तु उन्होंने हमसे यह कहा ॥ ४ ॥ महात्मा रघुनंदन नृपति श्रीरामचन्द्रजीने राक्षसपति दुर्धर्ष रावणको समरमें संहारकर तुमको जीत लियाहै ॥ ५ ॥ वह दुरात्मा रावण पुत्र, बान्धव और अपने इष्ट मित्रोंके सहित मारागया इसीसे हम अत्यन्त प्रसन्न हुए हैं ॥ ६ ॥ हे सौम्य ! परमात्मा श्रीरामचन्द्रजी लंकासे तुमको जीतकर लायेहैं इसलिये हम तुमको आज्ञा देतेहैं कि, तुम उन्हीं श्रीरामचन्द्रजीको अपने ऊपर चढाओ ॥ ७ ॥ तुम भूरादि समस्त लोकोंमें लेजानेको समर्थहो इस कारण तुम श्रीरामचन्द्रजीको अपने ऊपर चढाये फिरो यही हमारी अभिलाषाहै इसे तुम किसी प्रकारका दुःख न मानकर उनके निकट चले जाओ ॥ ८ ॥ सो महात्मा कुबेरजीकी आज्ञाके अनुसार हम आपके निकट आयेहैं [illegible]

करेंगे " १० ॥ महाबलवान् श्रीरामचन्द्रजी पुष्पकके ऐसे वचन सुनकर फिर आये और आकाशमें टिके हुए पुष्पकको देखकर बोले ॥ ११ ॥ हे वाहनश्रेष्ठ पुष्पक ! यदि ऐसाही हुआहो तो तुम्हारा आना सुखकारीहो अब कुबेरजीकी अनुकूलतासे हमको सद्व्यवहारके उल्लंघन करनेका दोष नहीं होगा ॥ १२ ॥ तब महावीर श्रीरामचन्द्रजीने पुष्प, खीलें, और सुगंध व धूपसे पुष्पक विमानकी पूजा कर उससे कहा ॥ १३ ॥ अब तुम गमन करो, हे विभु सौम्य ! जब हम तुमको याद करें, तब तुम सिद्धलोगोंके दिखाये हुए शून्य मार्गमें आना; हमारे वियोगका तुम कुछ दुःख न करना ॥ १४ ॥ तुम चाहे जिस दिशाको जाओ

अधृष्यःसर्वभूतानांसर्वेषांधनदाज्ञया ॥ चराम्यहंप्रभावेणतवाज्ञांपरिपालयन् ॥ १० ॥ एवमुक्तस्तदारामःपुष्पकेणमहाबलः ॥ उवाचपुष्पकंदृष्ट्वाविमानंपुनरागतम् ॥ ११ ॥ यद्येवंस्वागतंतेस्तुविमानवरपुष्पक ॥ आनुकूल्याद्धनेशस्यवृत्तदोषोननोभवेत् ॥१२॥ लाजैश्चैवतथापुष्पैर्धूपैश्चैवसुगंधिभिः ॥ पूजयित्वामहाबाहूराघवःपुष्पकंतदा ॥१३॥ गम्यतामितिचोवाचआगच्छत्वंस्मरेयदा ॥ सिद्धानांचगतौसौम्यमाविषादेनयोजय ॥ १४ ॥ प्रतिघातश्चतेमाभूद्यथेष्टंगच्छतोदिशः ॥ एवमस्त्वितिरामेणपूजयित्वाविसर्जितम् ॥ १५ ॥ अभिप्रेतांदिशंतस्मात्प्रायात्तत्पुष्पकंतदा ॥ एवमंतर्हितेतस्मिन्पुष्पकेसुकृतात्मनि ॥ १६ ॥ भरतःप्रांजलिर्वाक्यमुवाचरघुनन्दनम् ॥ विबुधात्मनिदृश्यंतेत्वयिवीरप्रशासति ॥ १७ ॥ अमानुषाणिसत्त्वानिव्याहृतानिमुहुर्मुहुः ॥ अनामयाश्चमर्त्यानांसाग्रोमासोगतोह्ययम् ॥ १८ ॥ जीर्णानामपिसत्त्वानांमृत्युर्नायातिराघव ॥ अरोगप्रसवानार्योवपुष्मंतोहिमानवाः ॥ १९ ॥

तुमको कोईभी नहीं रोक सकेगा, इसकारण तुम अभिलाषानुरूप गमन करो, यह कह पूजा करके श्रीरामचन्द्रजीने उसको विदा किया ॥ १५ ॥ तब पुष्पक विमान "ऐसाही होगा" यह कह जिस ओरकी उसने इच्छा की उस ओरको चलागया. जब पुष्पक विमान कृतार्थ होकर इस प्रकारसे अंतर्धान होगया ॥ १६ ॥ तब भरतजीने हाथ जोड़कर श्रीरामचन्द्रजीसे कहा, हे वीर ! आप देवतास्वरूपहैं, सो आपके राज्यसमयमें ॥ १७ ॥ हम लोगोंने कितनीही बार अमनुष्य प्राणी और पदार्थोंको मनुष्योंकी समान आपसमें बात चीत करते देखा, आपको राजा हुए कई महीने बीते परन्तु इस समयमें प्रजालोगोंको कोईभी रोग नहीं हुआ ॥

हे राजन ! पुरवासी व जनपदवासियोंको अतिहर्ष उत्पन्न हुआहै, बादलभी यथा अवसरमें अमृतकी समान जल वर्षातेहैं ॥२०॥ मंगलमय वायुभी सदा सुख स्पर्श होकर सब प्रकारसे प्रवाहित होरहाहै । ऐसे नरेश्वर हमारे बहुत दिनोंतक राजा रहें ॥ २१ ॥ हे राजन् ! ऐसे वचन पुरवासी और जनपदवासी गली गली में कहते हैं। नृपश्रेष्ठ श्रीरामचंद्रजी भरतजीके कहेहुए ऐसे मधुर वचन सुन हर्षितहुए॥२२॥इत्यार्षे श्रीमद्रा०वा०आदि०उत्तरकांडे भाषाटीकायामेकचत्वारिंशः सर्गः॥४१॥ उस महावीर श्रीरामचंद्रजी भरतके कहेहुए ऐसे मधुर वचन सुनकर पुष्पकको विदादे अशोकवनमें प्रवेश करते हुए ॥ १ ॥ वह वन चन्दन, अगर, आम, तुंग, कालेयक और देवदारुके वृक्षोंसे सम्पूर्ण शोभायमान था ॥ २ ॥ चम्पा, काला अगर, पुन्नाग, मधूक, पनस, असन, धुवाँरहित अग्निके समान शोभायमान पारिजात ॥ ३ ॥ लोध, नीप, अर्जुन, नागकेशर, शतावरी, तिनिश, मन्दार, केला, विविध भाँतिकी लता व झाडियोंसे युक्त था ॥ ४ ॥ और प्रियंगु, कदम्ब, बकुल, जामन, दाडमी, कोविदारसे शोभित ॥ ५ ॥ सब कालमें फूलनेवाले फूलोंसे युक्त मनोहर कान्ति, फलवान, रमणीक, दिव्य रस गन्धयुक्त नये पत्ते व कोंपलके सहित वृक्षोंसे शोभितथा ॥ ६ ॥ वृक्ष लगानेमें चतुर शिल्पियोंने इन दिव्य वृक्षोंको अतिसुन्दर भाँतिसे लगाया था वह मधुर सुन्दर ७. पत्ते और पुष्पोंसे परिपूर्ण थे । उनके ऊपर मतवाले भौंरे गुंजार करते थे ॥ ७ ॥

दर्पश्चाभ्यधिकोराजञ्जनस्यपुरवासिनः ॥ कालेवर्षतिपर्जन्यःपातयन्नमृतंपयः ॥ २० ॥ वाताश्चापिप्रवांत्येतेस्पर्शयुक्ताःसुखाःशिवाः ॥ ईदृशो नश्चिरंराजाभवेदितिनरेश्वरः ॥ २१ ॥ कथयंतिपुरेराजन्पौरजानपदास्तथा ॥ एतावाचःसुमधुराभरतेनसमीरिताः ॥ श्रुत्वारामोमुदायुक्तोबभूवनृपसत्तमः ॥ २२ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे एकचत्वारिंशः सर्गः ॥ ४१ ॥ सविसृज्यततोरामःपुष्पकंहेमभूषितम् ॥ प्रविवेशमहाबाहुरशोकवनिकांतदा ॥ १ ॥ चंदनागुरुचूतैश्चतुंगकालेयकैरपि ॥ देवदारुवनैश्चापिसमंतादुपशोभितम् ॥ २ ॥ चंपकागुरुपुन्नागमधूकपनसासनैः ॥ शोभितांपारिजातैश्चविधूमज्वलनप्रभैः ॥३॥ लोध्रनीपार्जुनैर्नागैःसप्तपर्णातिमुक्तकैः ॥ मंदारकदलीगुल्मलताजालसमावृतान् ॥ ४ ॥ प्रियंगुभिःकदंबैश्चतथाचवकुलैरपि ॥ जंबूभिर्दाडिमैश्चैवकोविदारैश्चशोभिताम् ॥ ५ ॥ सर्वदाकुसुमैरम्यैःफलवद्भिर्मनोरमैः ॥ दिव्यगंधरसोपेतैस्तरुणांकुरपल्लवैः॥६॥ तथैवतरुभिर्दिव्यैःशिल्पिभिःपरिकल्पितैः॥चारुपल्लवपुष्पाढ्यैर्मत्तभ्रमरसंकुलैः॥७॥

लकुल, भम

अधिक क्या कहें, वहांका कोई वृक्ष श्वेतवर्ण था, कोई २ तरु अग्निकी शिखाके समान लाल था, कोई पेड नीले अंजनकी समान रंगवालाथा, ऐसे पादप व औरभी अनेक प्रकारके तरुवर वहां थे ॥ ९ ॥ जो कि सुगंधि विस्तार कर रहेथे अनेक प्रकारके फूल हार गुहेहुए थे और भांति २ की तलैयें वहांथीं जिनमें सुन्दर निर्मल जल भर रहाथा ॥ १० ॥ इन सब तलैयोंमें उतरनेके लिये मूंगेकी सीढियें बनीहुईथीं और इन तलैयोंके भीतरकी पृथ्वी स्फटिकसे बनीहुईथी सब तलैयोंमें कमल व उत्पलके वन शोभायमान होरहेथे ॥११॥ चक्रवाक, दात्यूह, तोते, हंस व सारसगण वहां शब्द कर रहेथे, इन सबके किनारोंपर फूलेहुए वृक्षोंकी

कोकिलैर्भृंगराजैश्चनानावर्णैश्चपक्षिभिः ॥ शोभितांशतशश्चित्रांचूतवृक्षावतंसकैः ॥ ८ ॥ शातकुंभनिभाःकेचित्केचिदग्निशिखोपमाः ॥ नीलांजननिभाश्चान्येभांतितत्रस्मपादपाः ॥ ९ ॥ सुरभीणिचपुष्पाणिमाल्यानिविविधानिच ॥ दीर्घिकाविविधाकाराःपूर्णाःपरमवारिणा ॥ १० ॥ माणिक्यकृतसोपानाःस्फाटिकांतरकुट्टिमाः ॥ फुल्लपद्मोत्पलवनाश्चक्रवाकोपशोभिताः ॥ ११ ॥ दात्यूहशुकसंघुष्टाहंससारसनादिताः ॥ तरुभिःपुष्पशबलैस्तीरजैरुपशोभिताः ॥१२॥ प्राकारैर्विविधाकारैःशोभिताश्चशिलातलैः ॥ तत्रैवचवनोद्देशेवैदूर्यमणिसन्निभैः ॥१३॥ शाद्वलैःपरमोपेतांपुष्पितद्रुमकाननाम् ॥ तत्रसंघर्षजातानांवृक्षाणांपुष्पशालिनाम् ॥१४॥ प्रस्तराःपुष्पशबलानभस्तारागणैरिव ॥ नंदनंहियथेंद्रस्य ब्राह्मंचैत्ररथंयथा ॥ १५ ॥ तथाभूतंहिरामस्यकाननंसन्निवेशनम् ॥ बह्वासनगृहोपेतांलतासनसमावृताम् ॥ १६ ॥ अशोकवनिकांस्फीतांप्रविश्यरघुनंदनः ॥ आसनेचशुभाकारेपुष्पप्रकरभूषिते ॥ १७ ॥ कुशास्तरणसंस्तीर्णेरामःसन्निषसादह ॥ सीतामादायहस्तेनमधुमैरेयकंशुचि ॥ १८ ॥ पाययामासकाकुत्स्थःशचीमिवपुरंदरः ॥ मांसानिचसुमृष्टानिफलानिविविधानिच ॥ १९ ॥

लगरहे शोभायमान होतीथीं ॥ १२ ॥ विविध भांतिके धवरहरे और शिलाओंसे तलैयोंकी सुन्दरताई बहुत बढी हुईहै इसकेही वनोंमें वैडूर्यमणिकी समान ॥ १३ ॥ असंख्य शार्दूल पक्षी इस वनमें वास करतेथे जिसमें कि फले हुए वृक्ष लगरहेथे एक दूसरेकी रगडसे फूलेहुए वृक्ष ॥ १४ ॥ अनेक प्रकारके फूलबिछौने वहांपरकी शिलाओंपर बिछादेतेथे इन्द्रके नंदनवनकी समान कुबेरजीके ब्रह्मरचित चैत्ररथ वनकी समान ॥ १५ ॥ श्रीरामचन्द्रजीका यह अशोकवन बनाहुआ था । बहुतसे आसन, गृह, व लताओंके आसनसे युक्त ॥ १६ ॥ ऐसे बडेभारी अशोकवनमें श्रीरामचन्द्रजीने प्रवेश किया शुभ आकारसे जटित आसनपर जो कि फलोंसे भूषित था ॥१७॥ और कुशोंका बनाहुआथा, श्रीरामचन्द्रजी बैठे सीताजीको बांये हाथसे ग्रहणकर पवित्र मैरेय व मधु ॥ १८ ॥ (काकुत्स्थ श्रीरामचन्द्रजीने) पिलाया

ऐसे शचीको इन्द्रजी पिलावेहैं भाँति २ के मांस व विविधभाँतिके मीठे २ फल ॥ ॥ १९ ॥ श्रीरामचन्द्रजीके व्यवहारार्थ सेवक लोग अति शीघ्र लाये । श्रीरामचन्द्रजीके सामने नाच होनेलगा, यह नाच नृत्यगीतविशारद ॥ २० ॥ अप्सराओंने किन्नरियोंके साथ मिलकर कियाथा । इसके उपरान्त उदार स्वभाववाली दासी स्त्रियोंने मद्य पानकर ॥ २१ ॥ जो कि, नाचने गानेमें अति चतुरथीं श्रीरामचन्द्रजीके सम्मुख नाचने लगीं मनको आराम देनेवाली स्त्रियोंको श्रीरामचंद्रजीने जो कि रमण करनेवालोंमें श्रेष्ठ ॥ २२ ॥ और धर्मात्मा थे सुन्दर गहने पहने इन स्त्रियोंको संतुष्ट किया । फिर धर्मात्मा श्रीरामचंद्रजी सीताजीके साथ विराजमान हो ॥ २३ ॥ ऐसे बैठे जैसे तेजस्वी वसिष्ठजी अरुन्धतीके साथ बैठते हैं. इस प्रकारसे श्रीरामचंद्रजी देवकन्याकी समान सीता

रामस्याभ्यवहारार्थंकिंकरास्तूर्णमाहरन् ॥ उपानृत्यंश्चराजानंनृत्यगीतविशारदाः ॥ २० ॥ अप्सरोरगसंघाश्चकिन्नरीपरिवारिताः ॥ दक्षिणारूपवत्यश्चस्त्रियःपानवशंगताः ॥ २१ ॥ उपानृत्यंतकाकुत्स्थंनृत्यगीतविशारदाः ॥ मनोभिरामारामास्तारामोरमयतांवरः ॥ २२ ॥ रमयामासधर्मात्मानित्यंपरमभूषिताः ॥ सतयासीतयासार्धमासीनोविरराजह ॥ २३ ॥ अरुंधत्याइवासीनोवसिष्ठइवतेजसा ॥ एवंरामोमुदायुक्तःसीतांसुरसुतोपमाम् ॥ २४ ॥ रमयामासवैदेहीमहन्यहनिदेववत् ॥ तथातयोर्विहरतोःसीताराघवयोश्चिरम् ॥ २५ ॥ अत्यक्रामच्छुभःकालःशैशिरोभोगदःसदा ॥ दशवर्षसहस्राणिगतानिसुमहात्मनोः ॥ प्राप्तयोर्विविधान्भोगानतीतःशिशिरागमः ॥ २६ ॥ पूर्वाह्णेधर्मकार्याणिकृत्वाधर्मेणधर्मवित् ॥ शेषंदिवसभागार्धमंतःपुरगतोभवत् ॥ २७ ॥ सीतापिदेवकार्याणिकृत्वापौर्वाह्णिकानिवै ॥ श्वश्रूणामकरोत्पूजांसर्वासामविशेषतः ॥ २८ ॥ अभ्यगच्छत्ततोरामंविचित्राभरणांवरा ॥ त्रिविष्टपेसहस्राक्षमुपविष्टंयथाशची ॥ २९ ॥

जीको ॥ २४ ॥ जो कि विदेहराजकुमारी थीं प्रतिदिन देवताकी समान उनको सन्तुष्ट करने लगे इसप्रकारसे बहुत दिन विहार करते रामचंद्र व सीताजीको ॥ ॥ २५ ॥ सदाही भोगका देनेवाला शिशिरकाल व्यतीत होगया (विविध भांतिके भोग भोगते हुए महात्मा रामचंद्रजी व जानकीजीने दशहजार वर्षतक विहार किया) विविध भोगोंको प्राप्त करते हुए शिशिरका आगमन बीतगया ॥ २६ ॥ एक दिन धर्मात्मा श्रीरामचंद्रजी सवेरेके समय धर्मानुसार धर्मकार्य समाप्त करके दिनके बचेहुए भागको अंतःपुरमें विताते हुए ॥ २७ ॥ देवी सीताजीभी प्रभातके समय करनेके योग्य कार्य पूरे करके विशेष श्रद्धाभक्ति युक्तहो सब सासुओंकी सेवा करती ॥ २८ ॥ फिर एक समय दिव्य पुतिवाले विचित्र वस्त्र पहर करके भाँति २ के गहने पहन श्रीरामचंद्रजीके निकट ऐसे बैठी जैसे स्वर्गमें इन्द्रजीके [illegible]

श्रीरामचंद्रजी देवबालासमान वरवर्णिनी सीताजीसे बोले, हे वैदेही ! तुम्हारे गर्भलक्षण स्पष्टही देखे जातेहैं ॥ ३० ॥ ३१ ॥ हे नितम्बिनी ! तुम्हारी क्या इच्छा है, सो कहो हम तुम्हारी कौन इच्छा पूर्ण करें ? तब जानकी मुस्करायकर श्रीरामचंद्रजीसे बोलीं ॥ ३२ ॥ अब पवित्र तपोवनोंके देखनेकी हमारी इच्छाहुई है, गंगाजीके किनारेपर विराजमान उग्रतेजस्वी ऋषियोंको ॥ ३३ ॥ जो कि फलमूलाहारीहैं उनके चरणोंकी वंदना हम करना चाहतीहैं. हे देव ! यही हमारी परम कामनाहै कि फल मूल भोजन करनेवाले ॥ ३४ ॥ मुनियोंके निकट तपोवनमें हम एक रात वसें. काकुत्स्थ, अक्लेशकर्मकारी श्रीरामचंद्रजी "ऐसाही होगा" यह प्रतिज्ञा करके

दृष्ट्वातुराघवःपत्नींकल्याणेनसमन्विताम् ॥ प्रहर्षमतुलंलेभेसाधुसाध्वितिचाब्रवीत् ॥ ३० ॥ अब्रवीच्चवरारोहांसीतांसुरसुतोपमाम् ॥ अपत्यलाभोवैदेहित्वय्ययंसमुपस्थितः ॥ ३१ ॥ किमिच्छसिवरारोहेकामःकिंक्रियतांतव ॥ स्मितंकृत्वातुवैदेहीरामंवाक्यमथाब्रवीत् ॥ ३२ ॥ तपोवनानिपुण्यानिद्रष्टुमिच्छामिराघव ॥ गंगातीरोपविष्टानामृषीणामुग्रतेजसाम् ॥ ३३ ॥ फलमूलाशिनांदेवपादमूलेषुवर्तितुम् ॥ एषमेपरमःकामोयन्मूलफलभोजिनाम् ॥ ३४ ॥ अप्येकरात्रिंकाकुत्स्थनिवसेयंतपोवने ॥ तथेतिचप्रतिज्ञातंरामेणाक्लिष्टकर्मणा ॥ विस्रब्धाभववैदेहिश्वोगमिष्यस्यसंशयम् ॥ ३५ ॥ एवमुक्त्वातुकाकुत्स्थोमैथिलींजनकात्मजाम् ॥ मध्यकक्षांतरंरामोनिर्जगामसुहृद्वृतः ॥ ३६ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्ये उत्तरकांडे द्विचत्वारिंशः सर्गः ॥ ४२ ॥ तत्रोपविष्टंराजानमुपासंतेविचक्षणाः ॥ कथानांबहुरूपाणांहास्यकाराःसमंततः ॥ १ ॥ विजयोमधुमत्तश्चकाश्यपोमंगलःकुलः ॥ सुराजिःकालियोभद्रोदंतवक्रःसुमागधः ॥ २ ॥ एतेकथाबहुविधाःपरिहाससमन्विताः ॥ कथयंतिस्मसंहृष्टाराघवस्यमहात्मनः ॥ ३ ॥

जानकीजीसे बोले, हे वैदेही ! तुम तैयार होरहो, कल निश्चय गमन करेंगे, इसमें संशय नहीं ॥ ३५ ॥ काकुत्स्थनंदन श्रीरामचंद्रजी जनककुमारी सीताजीसे ऐसा कहकर, अपने अंतःपुरमें गमन करके अपने सुहृदोंके साथ बीचके गृहमें आये ॥ ३६ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषाटीकायां द्विचत्वारिंशः सर्गः ॥ ४२ ॥

जब श्रीरामचंद्रजी इस स्थानपर आयकर बैठे तो चतुर सभ्य उनके चारोंओर बैठकर अनेक प्रकारके हास्य प्रसंग (हँसी दिल्लगी) कहने व करने लगे ॥ १ ॥ विजय, मधुमत्त, काश्यप, मंगल, कुल, सुराजी, कालिय, भद्र, दंतवक्र और सुमागध ॥ २ ॥ यह सब हर्षित चित्तसे महात्मा श्रीरामचन्द्रजीके निकट

हास्ययुक विविधभाँतिकी कथायें कहनेलगे॥ ३॥ किसी कथाके प्रसंगमें रघुनंदन श्रीरामचंद्रजी बोले, हे भद्र! इस विषयमें नगरके लोग क्या कहते हैं॥ ४॥हमारे आ...
पुरजन लोग क्या कहतेहैं? सीताके विषयमें, भरतके विषयमें,लक्ष्मणजीके सम्बन्धमें ॥ ५ ॥ शत्रुघ्नजीके वर्तावमें व माता कैकेयीके विषयमें वह सब कौन २...
कथा करतेहैं; क्योंकि तपस्वियोंके आश्रममें या राज्यमें राजाको विचारहीन होनेपर सर्वजनोंके सम्मुख निन्दाका पात्र होना पडताहै ॥ ६ ॥ जब श्रीरामचंद्र...
यह कहा तब भद्र हाथ जोडकर बोला, हे राजन्! पुरवासी अनेक शुभ कथाही कहा करतेहैं ॥७॥ हे पुरुषश्रेष्ठ! रावणके वधद्वारा प्राप्त हुई इस विजयको ...
करके पुरवासीलोग अपने २ घरोंमें अनेक बातें किया करते हैं ॥ ८ ॥ भद्रके इस प्रकार कहनेपर श्रीरामचन्द्रजीने कहा उसका आदिसे अन्ततक यथार्थ२ ...

ततःकथायांकस्यांचिद्राघवःसमभाषत ॥ काःकथानगरेभद्रवर्ततेविषयेषुच ॥४॥ मामाश्रितानिकान्याहुःपौरजानपदाजनाः॥ किंचसीतांसमा श्रित्यभरतंकिंचलक्ष्मणम् ॥ ५ ॥ किंनुशत्रुघ्नमुद्दिश्यकैकेयींकिंनुमातरम् ॥ वक्तव्यतांचराजानोवनेराज्येव्रजंतिच ॥६॥ एवमुक्तेतुरामेणभद्रः प्रांजलिरब्रवीत् ॥ स्थिताःशुभाःकथाराजन्वर्ततेपुरवासिनाम् ॥ ७ ॥ अमुंतुविजयंसौम्यदशग्रीववधार्जितम् ॥ भूयिष्ठंस्वपुरेपौरैःकथ्यंतेपुरुष... भ ॥८॥ एवमुक्तस्तुभद्रेणराघवोवाक्यमब्रवीत् ॥ कथयस्वयथातत्त्वंसर्वंनिरवशेषतः ॥९॥ शुभाशुभानिवाक्यानिकान्याहुःपुरवासिनः ॥ श्रुत्वे... दानींशुभंकुर्यांनकुर्यामशुभानिच ॥ १० ॥ कथयस्वचविस्रब्धोनिर्भयंविगतज्वरः ॥ कथयंतियथापौराःपापाजनपदेषुच ॥ ११ ॥ राघवे... वमुक्तस्तुभद्रःसुरुचिरंवचः ॥ प्रत्युवाचमहाबाहुंप्रांजलिःसुसमाहितः ॥ १२ ॥ शृणुराजन्यथापौराःकथयंतिशुभाशुभम् ॥ चत्वरापणरथ्यासुवने... पूपवनेषुच ॥ १३ ॥ दुष्करंकृतवान्रामःसमुद्रेसेतुबंधनम् ॥ अश्रुतंपूर्वकैःकैश्चिद्देवैरपिसदानवैः ॥ १४ ॥ रावणश्चदुराधर्षोहतःसबलवाहनः ॥ वानराश्चवशंनीतानृक्षाश्चसहराक्षसैः ॥ १५ ॥

वृत्तान्त कहो ॥९॥ कि पुरवासी लोग क्या २ शुभ अशुभ वाक्य किया करतेहैं पुरवासियोंके भले बुरे वचन सुनकर हम अशुभ कार्य न करके शुभ कार्यही करेंगे ॥ १० ॥ तुम सन्तापशून्य और विश्वासितहो निर्भय चित्तसे सब कहो कि पुरवासी और जनपदवासी लोग किस प्रकारकी पापकथा कहा करतेहैं ॥ ११ ॥ श्रीरामचन्द्रजीके यह वचन सुनकर भद्र सावधान चित्तहो हाथ जोड़कर बोला ॥ १२ ॥ " हे राजन्! वन, उपवन, दूकान, चौराहे और मार्गोंमें पुरवासी लोग जो शुभ अशुभ वचन कहा करते हैं सो मैं आपसे कहताहूं श्रवण कीजिये ॥ १३ ॥ श्रीरामचन्द्रजीने अतिदुष्कर कार्य कियाहै समुद्रमें पुलका बांधना, हमारे पूर्व पुरुषोंमें तो ...
...४ ॥ श्रीरामचन्द्रजीने दुर्द्धर्ष रावणको सेना और ...
१ वानर, रीछ,

लिये उन्होंने कुछ कोप न करके यह स्वच्छ जानकीजीको अपनी पुरीमें ले आये ॥ १६ ॥ जो रावण सीताजीको बलपूर्वक ग्रहणकर अपनी गो
लिये हुए गयाथा फिर किस कारण उन रामका हृदय सीतासम्भोगजनित सुख प्राप्त करताहै ॥ १७ ॥ रावणने सीताजीको लंकापुरीमें लेजाय वहांपर अ
वाटिकामें रक्खाथा; और सीताजी वहांपर राक्षसके वशमेंथीं; तथापि सीताजीके प्रति रामचंद्रको घृणा क्यों नहीं हुई ॥ १८ ॥ अबसे लेकर हमकोभी स्त्री
अपराध सहन करना पडेगा, क्योंकि जिसप्रकार राजा करतेहैं प्रजाभी उसकी देखादेखी वैसाही किया करतीहै ॥ १९ ॥ हे राजन् ! समस्त नगरों व जना

हत्वाचरावणंसंख्येसीतामाहृत्यराघवः॥ अमर्षंपृष्ठतःकृत्वास्ववेश्मपुनरानयत् ॥१६॥कीदृशंहृदयेतस्यसीतासंभोगजंसुखम् ॥ अंकमारोप्यतुपु
रावणेनबलाद्धृताम् ॥१७॥ लंकामपिपुरानीतामशोकवनिकांगताम् ॥ रक्षसांवशमापन्नांकथंरामोनकुत्स्यति ॥१८॥ अस्माकमपिदारेषुसहनीयं
भविष्यति ॥ यथाहिकुरुतेराजाप्रजास्तमनुवर्तते ॥ १९ ॥ एवंबहुविधावाचोवदंतिपुरवासिनः ॥ नगरेषुचसर्वेषुराजञ्जनपदेषुच ॥ २० ॥
तस्यैवंभाषितंश्रुत्वाराघवःपरमार्तवत् ॥ उवाचसुहृदःसर्वान्कथमेतद्वदंतुमाम् ॥ २१ ॥ सर्वेतुशिरसाभूमावभिवाद्यप्रणम्यच ॥ प्रत्यूचूराघवं
दीनमेवमेतन्नसंशयः ॥ २२ ॥ श्रुत्वातुवाक्यंकाकुत्स्थःसर्वेषांसमुदीरितम् ॥ विसर्जयामासतदावयस्याञ्छत्रुसूदनः ॥ २३ ॥ इ० श्रीमद्रा०
वाल्मी० आ० उत्तरकांडे त्रिचत्वारिंशःसर्गः ॥ ४३ ॥ विसृज्यतुसुहृद्वर्गंबुद्ध्यानिश्चित्यराघवः ॥ समीपेद्वाःस्थमासीनमिदंवचनमब्रवीत् ॥
॥ १ ॥ शीघ्रमानयसौमित्रिंलक्ष्मणंशुभलक्षणम् ॥ भरतंचमहाभागंशत्रुघ्नमपराजितम् ॥ २ ॥ रामस्यवचनंश्रुत्वाद्वाःस्थोमूर्ध्निकृतांजलिः ॥
लक्ष्मणस्यगृहंगत्वाप्रविवेशानिवारितः ॥ ३ ॥

पुरवासी लोग यही अनेक कथावार्ता कहा करतेहैं ॥२०॥ " इसप्रकार भद्रके वचन सुनकर श्रीरामचन्द्रजी परम व्याकुलहो समस्त सुहृदोंसे पूछतेहुए, क्या
लोग हमारे संबन्धमें ऐसीही वार्ता कहा करतेहैं ॥ २१ ॥ तब सुहृज्जनोंने मस्तक झुकाय प्रणाम व अभिवादन कर दीनचित्त हुए श्रीरामचन्द्रजीसे कहा, "भद्रने
कुछ कहा वह सब सत्यहै" ॥२२॥ तब शत्रुसंहारी काकुत्स्थ श्रीरामचन्द्रजी सबहीके मुखसे यह वचन श्रवण करके अपने सखाओंको विदा देतेहुए ॥ २३ ॥
इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषाटीकायां त्रिचत्वारिंशः सर्गः ॥४३॥ रघुनंदन श्रीरामचन्द्रजी सुहृदोंको विदा दे कर्तव्य निश्चयकर समीपही बैठे
द्वारपालसे बोले ॥ १ ॥ तुम सुमित्रानंदन शुभलक्षणसम्पन्न लक्ष्मण, महाभाग भरत और अपराजित शत्रुघ्नकोभी शीघ्र लिवा लाओ ॥ २ ॥ द्वारपाल श्रीरामचंद्रजी

वचन सुनकर गिरते हाथ जोड अति शीघ्रकी चालसे लक्ष्मणजीके गृहमें प्रवेश करता हुआ ॥ ३ ॥ फिर हाथ जोडेहुए आदरपूर्वक महात्मा लक्ष्मणजीसे बोला कि, महाराजने आपके देखनेकी इच्छा कीहै, इस कारण आप अतिशीघ्र वहांपर चलें ॥ ४ ॥ तब लक्ष्मणजी श्रीरामचंद्रजीकी आज्ञा सुन "बहुत अच्छा" कह रथपर सवार हो अतिशीघ्रतासे श्रीरामचंद्रजीके गृहकी ओर चले ॥ ५ ॥ लक्ष्मणजीको जाते हुए देख द्वारपालने विनीतभावसे भरतजीके निकट जाय हाथ जोड आशीर्वादके वचनोंमें भरतजीका आदर कर उनसे कहा ॥ ६ ॥ उनसे विनययुक्त हो कहा कि "महाराज आपको देखा चाहतेहैं" भरतजी द्वारपालसे श्रीरामचंद्रजीकी यह आज्ञा सुन ॥ ७ ॥ वह महाबलवान् उसी समय आसनपरसे उठ शीघ्रताके मारे पैदल ही चलदिये । भरतजीको जाते हुए देखकर द्वारपालने अति

उवाचसुमहात्मानंवर्धयित्वाकृतांजलिः ॥ द्रष्टुमिच्छतिराजात्वांगम्यतांतत्रमाचिरम् ॥ ४ ॥ बाढमित्येवसौमित्रिःकृत्वाराघवशासनम् ॥ प्राद्रवद्रथमारुह्यराघवस्यनिवेशनम् ॥ ५ ॥ प्रयांतंलक्ष्मणंदृष्ट्वाद्वाःस्थोभरतमंतिकात् ॥ उवाचभरतंतत्रवर्धयित्वाकृतांजलिः ॥ ६ ॥ विनयावनतोभूत्वाराजात्वांद्रष्टुमिच्छति ॥ भरतस्तुवचःश्रुत्वाद्वाःस्थाद्रामसमीरितम् ॥७॥ उत्पपातासनात्तूर्णंपद्भ्यामेवमहाबलः ॥ दृष्ट्वाप्रयांतंभरतंत्वरमाणःकृतांजलिः ॥ ८ ॥ शत्रुघ्नभवनंगत्वाततोवाक्यमुवाचह ॥ एह्यागच्छरघुश्रेष्ठराजात्वांद्रष्टुमिच्छति ॥ ९ ॥ गतोहिलक्ष्मणःपूर्वंभरतश्चमहायशाः ॥ श्रुत्वातुवचनंतस्यशत्रुघ्नःपरमासनात् ॥१०॥ शिरसावंद्यधरणींप्रययौयत्रराघवः ॥ द्वाःस्थस्त्वागम्यरामायसर्वानेवकृतांजलिः ॥११॥ निवेदयामासतथाभ्रातॄन्स्वान्समुपस्थितान् ॥ कुमारानागताञ्छ्रुत्वाचिंताव्याकुलितेंद्रियः ॥ १२ ॥ अवाङ्मुखोदीनमनाद्वाःस्थंवचनमब्रवीत् ॥ प्रवेशयकुमारांस्त्वंमत्समीपंत्वरान्वितः ॥ १३ ॥ एतेपुजीवितंमह्यमेतेप्राणाःप्रियामम ॥ आज्ञप्तास्तुनरेंद्रेणकुमाराःशुक्लवाससः ॥१४॥

शीघ्रतासे हाथ जोड ॥ ८ ॥ शत्रुघ्नजीके स्थानमें जाय, उनसे कहा, हे रघुश्रेष्ठ ! चलिये, महाराज आपके देखनेकी इच्छा करतेहैं ॥९॥ महायशस्वी भरत और लक्ष्मणजी पहलेही जाय चुकेहैं, तब शत्रुघ्नजी द्वारपालके वचन सुन उत्तम आसनसे उठ पृथ्वीपर मस्तक झुकाय श्रीरामचंद्रजीकी वंदना करते हुए जिस स्थानमें रघुवीर विराजमान थे वहांको चले । द्वारपालने लौटकर व हाथ जोड श्रीरामचंद्रजीके पास आय सब ॥ १० ॥ ११ ॥ भ्राताओंके आनेका वृत्तान्त उनसे निवेदन किया । कुमारोंका आना सुन चिन्तामें युक्त व्याकुलेन्द्रिय ॥ १२ ॥ नीचेको मुख किये दीन मनहए श्रीरामचन्द्रजी द्वारपालसे बोले, तुम शीघ्रही कुमारोंको हमारे निकट ले आओ ॥ १३ ॥ क्योंकि यह कुमार लोग हमको प्राणोंकी [illegible] कहें हमारा जीवन इनहीसे है [illegible]

गाग भोगाम यहरे हुए कुमारगण ॥ १४ ॥ हाथ जोडे हुए सावधान चित्तहो विनीतभावसे वहां प्रवेश करते हुए, उन्होंने वहां आयकर देखा कि श्रीरामचंद्रजी
मुख राहुसे ग्रसेहुए चंद्रमाके समान॥ १५॥ सन्ध्याके समय अस्त होतेहुए प्रभाहीन सूर्य भगवान्के समान नेत्रोंमें आंसू भरे हुए उन बुद्धिमानोंने श्रीरामचन्द्रजीको देखा,
समय श्रीरामचन्द्रजीका मुख ऐसा दृष्टि आया मानों शोभाहीन कमलका फूलहै॥ १६॥ यह देखकर वह कुमार अतिशीघ्रतासे शिर झुकाय श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें
मकर सावधान चित्तसे वहां बैठे, परन्तु श्रीरामचन्द्रजी केवल आंसू बहानेलगे ॥ १७ ॥ फिर महावीर श्रीरामचन्द्रजी उन कुमारोंको भेंटकर व उठाय "
नार बैठो" यह वचन कह फिर बोले ॥ १८ ॥ हे नरश्रेष्ठगण ! तुमही हमारे सर्वस्वहो, तुम लोगही हमारे जीवनहो; तुम लोगोंकाही सम्पादित कियाहुआ रा

प्रह्वाःप्रांजलयोभूत्वाविविशुस्तेसमाहिताः ॥ तेतुदृष्ट्वामुखंतस्यसग्रहंशशिनंयथा ॥१५॥ संध्यागतमिवादित्यंप्रभयापरिवर्जितम् ॥ बाष्पपूर्णे
नयनेदृष्ट्वारामस्यधीमतः ॥ हतशोभंयथापद्मंमुखंवीक्ष्यचतस्यते ॥ १६ ॥ ततोभिवाद्यत्वरिताःपादौरामस्यमूर्धभिः ॥ तस्थुःसमाहिताःसर्वेरा
मस्त्वश्रूण्यवर्तयत् ॥ १७ ॥ तान्परिष्वज्यबाहुभ्यामुत्थाप्यचमहाबलः ॥ आसनेष्वासतेत्युक्त्वाततोवाक्यंजगादह ॥ १८ ॥ भवंतोममस
र्वस्वंभवंतोजीवितंमम ॥ भवद्भिश्चकृतंराज्यंपालयामिनरेश्वराः ॥१९॥ भवंतःकृतशास्त्रार्थाबुद्ध्याचपरिनिष्ठिताः ॥ संभूयचमदर्थोयमन्वेष्टव्योन
रेश्वराः ॥ २० ॥ तथावदतिकाकुत्स्थेअवधानपरायणाः ॥ उद्विग्नमनसःसर्वेकिंनुराजाभिधास्यति ॥ २१ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मी
कीये आदिकाव्ये उत्तरकांडे चतुश्चत्वारिंशःसर्गः ॥ ४४ ॥ तेषांसमुपविष्टानांसर्वेषांदीनचेतसाम् ॥ उवाचवाक्यंकाकुत्स्थोमुखेनपरिशु
ष्यता ॥ १ ॥ सर्वेशृणुतभद्रंवोमाकुरुध्वंमनोन्यथा ॥ पौराणांममसीतायांयादृशीवर्ततेकथा ॥ २ ॥

पुरवासियोंमें हमारा बड़ा अपवाद हुआ करताहै; और जनपदवासी भी हमारी अत्यन्त निन्दा किया करते हैं; इस अपवाद और निन्दाके मारे हमारे मर्मस्थान टूकरे २ हुए जातेहैं ॥ ३ ॥ हमने महात्मा इक्ष्वाकुके विख्यात कुलमें और विख्यात वंशमें जन्म ग्रहण कियाहै । और सीताभी महामति जनकजीके पवित्र वंशमें उत्पन्न हुई हैं ॥ ४ ॥ हे सौम्य ! जनरहित दंडकवनमें रावणने जिस प्रकार सीताको हरण कियाथा और फिर जिसप्रकार हमने उसका संहार किया वह तो तुम जानतेही हो ॥ ५ ॥ उसी समय सीताके सम्बन्धमें हमने विचाराथा कि यह राक्षसके गृहमें रही हैं सो हम किस प्रकार इनको अपने गृहमें लेजायँगे ॥ ६ ॥ हे लक्ष्मण ! इस कारणमें सीताजी पतिव्रतधर्मका विश्वास दिलानेके लिये तुम्हारे सम्मुखही अग्निमें प्रवेश कर गईथी; तव हव्यवाहन अग्निने प्रगट होकर ॥ ७ ॥ व आकाशमें

पौरापवादःसुमहांस्तथाजनपदस्य च ॥ वर्ततेमयिबीभत्सासामेमर्माणिकृंतति ॥ २ ॥ अहंकिलकुलेजातइक्ष्वाकूणांमहात्मनाम् ॥ सीतापिसत्कुलेजाताजनकानांमहात्मनाम् ॥४॥ जानासित्वंयथासौम्यदंडकेविजनेवने ॥ रावणेनहृतासीतासचविध्वंसितोमया ॥५॥ तत्रमेबुद्धिरुत्पन्नाजनकस्यसुतांप्रति ॥ अत्रोषितामिमांसीतामानयेयंकथंपुरीम् ॥ ६ ॥ प्रत्ययार्थंततःसीताविवेशज्वलनंतदा ॥ प्रत्यक्षंतवसौमित्रेदेवानांहव्यवाहनः ॥ ॥ ७ ॥ अपापांमैथिलीमाहवायुश्चाकाशगोचरः ॥ चंद्रादित्यौचशंसेतेसुराणांसन्निधौपुरा ॥ ८ ॥ ऋषीणांचैवसर्वेषामपापांजनकात्मजाम् ॥ एवंशुद्धसमाचारादेवगंधर्वसन्निधौ ॥ ९ ॥ लंकाद्वीपेमहेंद्रेणममहस्तेनिवेदिता ॥ अंतरात्माचमेवेत्तिसीतांशुद्धांयशस्विनीम् ॥१०॥ ततोगृहीत्वावैदेहीमयोध्यामहमागतः ॥ अयंतुमेमहान्वादःशोकश्चहृदिवर्तते ॥११॥ पौरापवादःसुमहांस्तथाजनपदस्य च ॥ अकीर्तिर्यस्यगीयेतलोकेभूतस्यकस्यचित् ॥ १२ ॥ पतत्येवाधमाँल्लोकान्यावच्छब्दःप्रकीर्त्यते ॥ अकीर्तिर्निंद्यतेदेवैःकीर्तिर्लोकेषुपूज्यते ॥ १३ ॥

शिखर वायुने कहाथा; कि यह सीताजी पापरहित हैं अधिक क्या कहें चन्द्र सूर्यनेभी पहले सब देवताओंके साथ ॥ ८ ॥ और सब ऋषियोंनेभी सीताजीको पापरहित कराया इस प्रकारसे पवित्रचरित्र सीताजीको देवता गन्धर्वोंके निकट ॥ ९ ॥ सुरपति इन्द्रजीने लंकाद्वीपके मध्य हमारे हाथमें समर्पण किया और हमारी अंतरात्माभी यही कहती है कि यशस्विनी सीताजी शुद्ध हैं ॥ १० ॥ इसी कारणसे हम वैदेहीजीको ग्रहण करके अयोध्याजीमें आये । परन्तु अब इस महाअपवादसे हमारे हृदयमें शोक वर्त्ताहै॥११॥यह यही महाअपवादहै कि जो पुरवासी और जनपदवासी हमारी निंदा करतेहैं. जिस संसारमें जिस प्राणीकी अकीर्ति फैलजाती है॥१२॥

हम कारणसे महात्मा लोग कीर्तिके लिये सर्व प्रकारसे यत्न किया करतेहैं. हे पुरुषश्रेष्ठगण ! अपने जीवनको व तुम लोगोंकोभी ॥ १४ ॥ हम अपवादके भयसे भीत होकर परित्याग कर सकतेहैं, फिर जानकीजीकी तो बातही क्याहै इससे तुमही देखो कि, हम अकीर्तिके कैसे शोकसागरमें पडेहैं ॥ १५ ॥ विशेष करके इससे अधिक कुछ और दुःख किसी जीवमेंभी हम अवलोकन नहीं करते । हे लक्ष्मण ! प्रभातको कल तुम सारथि सुमंत्रसे रथ जुडवाय ॥ १६ ॥ उसपर जानकीजीको चढाय और देशमें जायकर छोडआओ ! गंगाजीकी दूसरी पार महात्मा वाल्मीकिजीका ॥ १७ ॥ तमसानदीके किनारे दिव्य आश्रमहै हे रघुनंदन ! तुम उसी जनरहित वनमें सीताको छोडकर ॥ १८ ॥ शीघ्र चले आओ । हे लक्ष्मण ! तुम हमारे यह वचन पूरे करो । सीताके परित्यागके विषयमें

कीर्त्यर्थंतुसमारंभःसर्वेषांसुमहात्मनाम् ॥ अप्यहंजीवितंजह्यांयुष्मान्वापुरुषर्षभाः ॥ १४ ॥ अपवादभयाद्भीतःकिंपुनर्जनकात्मजाम् ॥ तस्माद्भवंतःपश्यंतुपतितंशोकसागरे ॥ १५ ॥ नहिपश्याम्यहंभूतंकिंचिद्दुःखमतोधिकम् ॥ श्वस्त्वंप्रभातेसौमित्रेसुमंत्राधिष्ठितंरथम् ॥ १६ ॥ आरुह्यसीतामारोप्यविषयांतेसमुत्सृज ॥ गंगायास्तुपरेपारेवाल्मीकेस्तुमहात्मनः ॥ १७ ॥ आश्रमोदिव्यसंकाशस्तमसातीरमाश्रितः ॥ तत्रैनां विजनेदेशेविसृज्यरघुनंदन ॥ १८ ॥ शीघ्रमागच्छसौमित्रेकुरुष्ववचनंमम ॥ नचास्मिप्रतिवक्तव्यःसीतांप्रतिकथंचन ॥ १९ ॥ तस्मात्त्वंगच्छसौमित्रेनात्रकार्याविचारणा ॥ अप्रीतिर्हिपरामह्यंत्वयैतत्प्रतिवारिते ॥ २० ॥ शापिताहिमयायूयंपादाभ्यांजीवितेनच ॥ येमांवाक्यांतरेब्रूयुरनुनेतुंकथंचन ॥ अहितानामतेनित्यंमदभीष्टविघातनात् ॥ २१ ॥ मानयंतुभवंतोमांयदिमच्छासनेस्थिताः ॥ इतोद्यनीयतांसीताकुरुष्ववचनंमम ॥ २२ ॥ पूर्वमुक्तोहमनयागंगातीरेऽहमाश्रमान् ॥ पश्येयमितितस्याश्चकामःसंवर्त्यतामयम् ॥ २३ ॥

तुम हमसे कभी कोई बात न कहना ॥ १९ ॥ हे लक्ष्मण ! इस सम्बन्धमें कार्य अकार्यका विचार न करके तुम चले जाओ। कारण कि इसको निवारण करनेसे मानो तुम हमारे प्रति अप्रीति दिखाओगे ॥ २० ॥ हम तुम्हें अपनी दोनों पावोंकी और जीवनकी शपथ दिलातेहैं कि तुम इस सम्बन्धमें हमसे कुछभी अनुनय मत करना ! यदि करोगे तो हमारे इष्ट कार्यमें विघ्न करोगे, तिससे हम तुमको सदा अपना अहितकारी समझेंगे ॥ २१ ॥ जो तुम हमारी आज्ञापर चलतेहो, तो तुम हमारे वचनोंमें सम्मान दिखाओ कि सीताजीको इस स्थानसे दूर करो ॥ २२ ॥ सीताने हमसे पहले कह रक्खाहै कि " हम गंगातीरपर मुनियोंके आश्रम

रोंगी " सो इस समय उनका यह अभिलाष पूरा करो ॥ २३ ॥ वह धर्मात्मा श्रीरामचन्द्रजी यह वचन कह सब भ्राताओंके साथ अपने २ गृह आये, श्रीरामचन्द्रजीके दोनों नेत्र बाफसे रुकगये, आगेको दृष्टि नहीं चली, उनका हृदय शोकसे संतापित होगया और वह हाथीके समान श्वास लेनेलगे ॥ २४ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषाटीकायां पञ्चचत्वारिंशः सर्गः ॥४५॥ जब रात बीतकर प्रभात हुआ, तब लक्ष्मणजीने दुःखितहो विवर्ण वदनसे सुमंत्रसे कहा ॥ १ ॥ हे सारथे ! श्रीमहाराजकी आज्ञासे शीघ्रतापूर्वक श्रेष्ठ रथमें तुम घोडे जोतो और सीताजीके बैठने योग्य शुभ आसन रथपर बिछाओ ॥ २ ॥ हम महाराजकी आज्ञानुसार सीताजीको पुण्यकर्मकारी महर्षियोंके आश्रममें ले जायँगे, इस कारण

एवमुक्त्वातुकाकुत्स्थोबाष्पेणपिहितेक्षणः ॥ संविवेशसधर्मात्माभ्रातृभिःपरिवारितः ॥ शोकसंविग्नहृदयोनिशश्वासयथाद्विपः ॥ २४ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्ये उत्तरकांडे पञ्चचत्वारिंशः सर्गः ॥ ४५ ॥ ततोरजन्यांव्युष्टायांलक्ष्मणोदीनचेतनः ॥ सुमंत्रमब्रवीद्वाक्यं मुखेनपरिशुष्यता ॥ १ ॥ सारथेतुरगान्शीघ्रान्योजयस्वरथोत्तमे ॥ स्वास्तीर्णंराजवचनात्सीतायाश्चासनंशुभम् ॥ २ ॥ सीताहिराजवचनादा श्रमंपुण्यकर्मणाम् ॥ मयानेयामहर्षीणांशीघ्रमानीयतांरथः ॥ ३ ॥ सुमंत्रस्तुतथेत्युक्त्वायुक्तंपरमवाजिभिः ॥ रथंसुरुचिरप्रख्यंस्वास्तीर्णंसुख शय्यया ॥ ४ ॥ आनीयोवाचसौमित्रिंमित्राणांमानवर्धनम् ॥ रथोयंसमनुप्राप्तोयत्कार्यंक्रियतांप्रभो ॥ ५ ॥ एवमुक्तःसुमंत्रेणराजवेश्मनिल क्ष्मणः ॥ प्रविश्यसीतामासाद्यव्याजहारनरर्षभः ॥ ६ ॥ त्वयाकिलैषनृपतिर्वरंवैयाचितःप्रभुः ॥ नृपेणचप्रतिज्ञातमाज्ञप्तश्चाश्रमंप्रति ॥ ७ ॥ गंगातीरेमयादेविऋषीणामाश्रमाञ्छुभान् ॥ शीघ्रंगत्वातुवैदेहिशासनात्पार्थिवस्यनः ॥ ८ ॥ अरण्येमुनिभिर्जुष्टेअवनेयाभविष्यसि ॥ एव मुक्तातुवैदेहीलक्ष्मणेनमहात्मना ॥ ९ ॥

तुम अति शीघ्र रथ लेआओ ॥ ३ ॥ सुमंत्र "जो आज्ञा" कह सुखकारी शय्या बिछा हुआ उत्तम घोडोंसे जुताहुआ सुन्दर पवित्र रथ लायकर ॥ ४ ॥ मित्रगणोंका मन बढानेवाले लक्ष्मणजीसे बोले । " प्रभो ! यह रथ आगया " अब जो उचितहो सो कीजिये ॥ ५ ॥ नरश्रेष्ठ लक्ष्मणजी सुमंत्रजीके यह वचन सुनकर राजभवनमें प्रवेशकर सीताजीके निकट जाय उनसे बोले ॥ ६ ॥ आपने महाराजके निकट आश्रम देखनेकी प्रार्थना की थी और उन्होंनेभी आपको आश्रमर्में लेजाना स्वीकार कियाथा, सो उन्होंने इस समय आपको ले जानेके लिये हमको आज्ञा दीहै ॥ ७ ॥ इसलिये हे देवि ! आप गंगाजीके तीरपर ऋषियोंके पवित्र आश्रममें गमन कीजिये, हम महाराजकी आज्ञानुसार शीघ्र आपको ॥ ८ ॥ मुनियोंसे सेवित वनमें लेजायँगे महात्मा लक्ष्मणजीके ऐसा कहनेपर जानकीजी ॥ ९ ॥

अनन्त इनको मानकर जानेका अभिप्राय करतीहुई, वह विविध प्रकारके बडे २ मोलके वस्त्र और रत्नोंकी राशिको ग्रहणकर ॥ १० ॥ जानेके लिये ... लक्ष्मणजीसे बोलीं कि, हम मुनि लोगोंकी स्त्रियोंको यह बडे २ मोलके आभरण दान करेंगी ॥ ११ ॥ इसके अतिरिक्त महामूल्यवान् वस्त्र और विविध ... धनभी हम तिनको देंगी लक्ष्मणजीने "यही होगा" यह कह सीताजीको रथपर सवार कराय ॥ १२ ॥ श्रीरामचन्द्रजीकी आज्ञाका स्मरण करते हुए शीघ्र ... वेगवाले घोडोंके रथपर चढकर यात्रा करतेहुए, तब सीताजी लक्ष्मीके बढानेवाले लक्ष्मणजीसे बोलीं ॥ १३ ॥ हे रघुनंदन ! हम इस समय अनेक अशकुन ... देखतीहैं, हमारा दहिना नेत्र फडकता और शरीर कम्पायमान होताहै ॥१४॥ हे लक्ष्मण ! हमारा हृदयभी व्याकुल हुआजाताहै, मनके बीचमें विषम उत्कंठासे ...

श्चर्यमनुत्तमंभगमनंचाप्यरोचयत् ॥ वासांसिचमहार्हाणिरत्नानिविविधानिच ॥१०॥ गृहीत्वातानिवैदेहीगमनायोपचक्रमे ॥ इमानिमुनिपत्नी-
नांदास्याम्याभरणान्यहम् ॥११॥ वस्त्राणिचमहार्हाणिधनानिविविधानिच ॥ सौमित्रिस्तुतथेत्युक्त्वारथमारोप्यमैथिलीम् ॥ १२ ॥ प्रययौशी-
घ्रगैरश्वैरामस्याज्ञामनुस्मरन् ॥ अब्रवीत्तदासीतालक्ष्मणंलक्ष्मिवर्धनम् ॥१३॥ अशुभानिबहून्येवपश्यामिरघुनंदन ॥ नयनंमेस्फुरत्यद्यगात्रो-
त्कम्पश्चजायते ॥१४॥ हृदयंचैवसौमित्रेअस्वस्थमिवलक्षये ॥ औत्सुक्यंपरमंचापिअधृतिश्चपरामम ॥१५॥ शून्यामेवचपश्यामिपृथिवींपृथुलोचन ॥
अपिस्वस्तिभवेत्तस्यभ्रातुस्तेभ्रातृवत्सल ॥ १६ ॥ श्वश्रूणांचैवमेवीरसर्वासामविशेषतः ॥ पुरेजनपदेचैवकुशलंप्राणिनामपि ॥ १७ ॥ इत्यंज-
लिकृतासीतादेवताअभ्ययाचत ॥ लक्ष्मणोर्थंततःश्रुत्वाशिरसावंद्यमैथिलीम् ॥ १८ ॥ शिवमित्यब्रवीद्धृष्टोहृदयेनविशुष्यता ॥ ततोवासमुपागम्य-
गोमतीतीरआश्रमे ॥१९॥ प्रभातेपुनरुत्थायसौमित्रिःसूतमब्रवीत् ॥ योजयस्वरथंशीघ्रमद्यभागीरथीजलम् ॥ २० ॥ शिरसाधारयिष्यामित्र्यंबक-
इवोजसा ॥ सोऽश्वान्विचारयित्वातुरथेयुक्तान्मनोजवान् ॥ २१ ॥

उत्पन्न होती अधिकता हुईहै ॥ १५ ॥ हे विशाललोचन ! हम पृथ्वीको सुखसे सूनी देखतीहैं, मातृवत्सल ! तुम्हारे बडे भइयाका तो कोई अमंगल नहीं हुआ ? ॥ १६ ॥ हे वीर ! हमारी सासुयें तो सब प्रकारसे अच्छीहैं ? नगरके और जनपदोंके प्राणिगण तो कुशलहैं ? ॥ १७ ॥ यह कह सीताजी हाथ जोड देवताओंके ... प्रार्थना करने लगीं, लक्ष्मणजीने यह वृत्तान्त श्रवणकर शिर झुकाय जानकीजीको प्रणाम कर ॥ १८ ॥ हृदयके शुष्क होनेपरभी सन्तुष्टहीकी समान कहा कि- ... कुशलहै। इसके उपरान्त गोमतीके तीर आश्रममें पहुंच लक्ष्मणजी वहां रात्रिको वसे ॥ १९ ॥ तिसके पीछे सवेरे उठकर लक्ष्मणजीने सारथिसे कहा कि रथ ... जोडो। आज हम भागीरथीका जल ॥२०॥ महादेवजीकी नाईं अपने मस्तक पर धारण करेंगे, सारथि रथमें जुतेहुए मनकी समान वेगवान् घोडोंको टहलाय॥ २१ ॥

साथ जोड़कर जनककुमारी सीताजीसे बोला कि आप रथपर सवारहों, सूतके कहनेसे उत्तम रथपर चढ़ीं ॥ २२ ॥ सीताजी, लक्ष्मणजी बुद्धिमान् सुमंत्रके स
चढीं और वह विशालाक्षी जानकीजी पापनाशिनी गंगाजीके तीरपर पहुँची॥२३॥ इसके उपरान्त लक्ष्मणजी आधे दिनतक चलकर भागीरथी गंगाजीकी धार देख
भाव और ऊँचे शब्दसे रोदन करने लगे ॥ २४ ॥ तब धर्मज्ञ सीताजी अतिदुःखितहो खेदको प्राप्त हुए लक्ष्मणजीसे बोलीं कि, हे लक्ष्मण ! तुम किस कारणसे
हो ? ॥२५॥ हे लक्ष्मण ! हमको बहुत दिनोंसे अभिलाषा थी, कि हम गंगाजीके तीर चलें सो यहांपर हम आईं भला इससे तुमको हर्ष प्राप्त करना उचित था
तुम इस समय हमको विषादित क्यों करतेहो ? ॥ २६ ॥ हे पुरुषश्रेष्ठ ! तुम दिन रात रामचन्द्रके साथ समय वितातेहो सो आज उनको छोड़े दो दिन हुएहैं

आरोहस्वेतिवैदेहींसूतःप्रांजलिरब्रवीत् ॥ सातुसूतस्यवचनादारुरोहरथोत्तमम् ॥ २२ ॥ सीतासौमित्रिणासार्धंसुमंत्रेणचधीमता ॥ आससाद वि
शालाक्षीगंगांपापविनाशिनीम् ॥ २३ ॥ अथार्धदिवसंगत्वाभागीरथ्याजलाशयम् ॥ निरीक्ष्यलक्ष्मणोदीनःप्ररुरोदमहास्वनः ॥ २४ ॥ सीता
तुपरमायत्तादृष्ट्वालक्ष्मणमातुरम् ॥ उवाचवाक्यंधर्मज्ञाकिमिदंरुद्यतेत्वया ॥ २५ ॥ जाह्नवीतीरमासाद्यचिराभिलषितंमम ॥ हर्षकालेकिमर्थंमां
विषादयसिलक्ष्मण ॥ २६ ॥ नित्यंत्वंरामपार्श्वेषुवर्तसेपुरुषर्षभ ॥ कच्चिद्विनाकृतस्तेनद्विरात्रंशोकमागतः ॥ २७ ॥ ममापिदयितोरामो
वितादपिलक्ष्मण ॥ नचाहमेवंशोचामिमैवंत्वंबालिशोभव ॥ २८ ॥ तारयस्वचमांगंगांदर्शयस्वचतापसान् ॥ ततोमुनिभ्योवासांसिदास्या
म्याभरणानिच ॥ २९ ॥ ततःकृत्वामहर्षीणांयथार्हमभिवादनम् ॥ तत्रचैकांनिशामुष्ययास्यामस्तांपुरींपुनः ॥ ३० ॥ ममापिपद्मपत्राक्षंसिंहोर
स्कंकृशोदरम् ॥ त्वरतेहिमनोद्रष्टुंरामंरमयतांवरम् ॥ ३१ ॥ तस्यास्तद्वचनंश्रुत्वाप्रमृज्यनयनेशुभे ॥ नाविकानाह्वयामासलक्ष्मणःपरवीरहा ॥
इयंचसज्जानौश्चेतिदाशाःप्रांजलयोब्रुवन् ॥ ३२ ॥

इसी कारणसे तुमको यह दुःख हुआ है ? ॥ २७ ॥ हे लक्ष्मण ! राम हमको प्राणोंसेभी अधिक प्यारेहैं, तथापि हम ऐसा शोक नहीं करतीं सो तुम विह्वल न हो
॥ २८ ॥ हमको गंगाजीके दूसरी पार लेचलो और तपस्विलोगोंके दर्शन कराओ, उसके पीछे हम मुनियोंको वस्त्राभरण दान करेंगी ॥ २९ ॥ फिर हम उन म
योंको यथायोग्य प्रणाम करके वहां एक रात वासकर फिर अयोध्यापुरीको लौटेंगी ॥ ३० ॥ विशेष करके कमलदलकी समान विशाललोचन, सिंहकी समान छा
वाले, कृशोदर, पुरुषोत्तम श्रीरामचन्द्रजीका शीघ्र दर्शन करनेके लिये हमारा जी उकमाताहै ॥ ३१ ॥ सीताजीके यह वचन सुन सुन्दर दोनों नेत्र पोंछ शत्रुनाशी

लक्ष्मणजीने नाविकोंको पुकारा, पुकारतेही नाविकोंने हाथ जोडकर निवेदन किया कि, नाव तैयारहै ॥ ३२ ॥ पुण्यजलवाली गंगाजीके पार होनेकी इच्छा
इस प्रकार नौका मँगाय लक्ष्मणजीने सावधानहो सीताजीको गंगापार करवाया ॥ ३३ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा०वाल्मी०आदि० उत्तरकांडे भाषाटीकायां पट्चत्वारि-
सर्गः ॥४६॥ इसके उपरान्त निषादसे लाई हुई सजीसजाई बडी नावपर पहले जानकीजीको सवार कराय फिर लक्ष्मणजी उसपर सावधान होकर चढे ॥ १ ॥
और सुमंत्रसे कहा कि तुम रथ लेकर इसी स्थानमें टिके रहो; और फिर शोकाकुल होकर नाववालोंसे कहा कि, चलो ॥२॥ गंगाजीके दूसरी पार पहुँचकर वा-
भरआनेसे लक्ष्मणजीका गला रुकगया और वह हाथ जोडकर श्रीजानकीजीसे बोले ॥ ३ ॥ हे विदेहकुमारी ! बुद्धिमान् आर्य रामचन्द्रजीने हमको लोकमें नि-

तितीर्षुर्लक्ष्मणोगंगांशुभांनावमुपारुहत् ॥ गंगांसंतारयामासलक्ष्मणस्तांसमाहितः ॥ ३३ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्ये उत्तरकांडे पट्चत्वारिंशः सर्गः ॥ ४६ ॥ अथनावंसुविस्तीर्णांनैषादींराघवानुजः ॥ आरुरोहसमायुक्तांपूर्वमारोप्यमैथिलीम् ॥ १ ॥ सुमंत्रंचैव सरथंस्थीयतामितिलक्ष्मणः ॥ उवाचशोकसंतप्तःप्रयाहीतिचनाविकम् ॥ २ ॥ ततस्तीरमुपागम्यभागीरथ्याःसलक्ष्मणः ॥ उवाचमैथिलींवा क्यंप्रांजलिर्बाष्पसंवृतः ॥ ३ ॥ हृद्गतंमेमहच्छल्यंयस्मादार्येणधीमता ॥ अस्मिन्निमित्तेवैदेहिलोकस्यवचनीकृतः ॥ ४ ॥ श्रेयोहिम- रणंमेऽद्यमृत्युर्वायत्परंभवेत् ॥ नचास्मिन्नीदृशेकार्येनियोज्योलोकनिंदिते ॥ ५ ॥ प्रसीदचनमेपापंकर्तुमर्हसिशोभने ॥ इत्यंजलिकृ- तोभूमौनिपपातसलक्ष्मणः ॥ ६ ॥ रुदंतंप्रांजलिंदृष्ट्वाकांक्षंतंमृत्युमात्मनः ॥ मैथिलीभृशसंविग्नालक्ष्मणंवाक्यमब्रवीत् ॥ ७ ॥ किमिदंनावगच्छामिब्रूहितत्त्वेनलक्ष्मण ॥ पश्यामित्वांनचस्वस्थमपिक्षेमंमहीपतेः ॥ ८ ॥ शापितोसिनरेंद्रेणयत्त्वंसंतापमागतः ॥ तद्ब्रूयाः सन्निधौमह्यमहमाज्ञापयामिते ॥ ९ ॥

होनेके कारण इस क्रूरकार्यमें नियुक्त करके लोकसमाजमें निन्दाका:पात्र कियाहै सो हमारे हृदयमें यही बडा घाव लगा है ॥ ४ ॥ सो अब ऐसे अवस्थानमें अ:
हमको मृत्यु आजाना या मूर्च्छाका होनाही श्रेष्ठ है परन्तु इस प्रकारके लोकनिन्दित कार्यमें नियुक्त होना अच्छा नहीं ॥ ५ ॥ हे शोभने ! इस कारण
हमारा दोष ग्रहण न करना आप प्रसन्न होवें, यह कहकर लक्ष्मणजी हाथ जोडकर पृथ्वीपर गिरपडे ॥ ६ ॥ जब लक्ष्मणजी हाथ जोड पृथ्वी
गिर अपनी मृत्युकी कामना करनेलगे तब देवी सीताजीने लक्ष्मणजीकी ऐसी दशा देख अत्यन्त घबडायकर कहा ॥ ७ ॥ हे लक्ष्मण ! हमतो कुछ
नहीं समझ सकती कि: क्या हुआ, तुम हमसे स्पष्ट २ कहो । हम देखतीहैं कि, तुम अति व्याकुलहो, महाराज तो कुशल हैं ? ॥ ८ ॥ हे वत्स ! हम तुमको म-

॥१०॥

राजकी शपथ कराती हैं कि, तुम जिसनिमित्त कातर हुए सो हमसे प्रकाश करके कहो यह हम तुम्हें आज्ञा देतीहैं ॥ ९ ॥ जब सीताजीने इस प्रकार

दीनचित्त हुए लक्ष्मणजीने नीचेको मुख झुकाय और आँसू आयकर गद्गद वाणीसे उत्तर दिया ॥ १० ॥ हे जनककुमारी ! नगरी और जनपदमें दा-

रुण कथा सभाके बीचमें सुनकर ॥ ११ ॥ श्रीरामचन्द्रजीने सर्वप्रकारसे हृदयमें सन्तापितहो हमसे यह सब वृत्तान्त कहा और गृहमें चलेगये से

आगे नहीं कहसकेंगे इसी कारणसे वह वचन हम नहीं कहसकते ॥ १२ ॥ जोकि हे देवि ! राजाने क्रोधके वश हो हृदयसे निकालेथे । राजाने आ

पको हमारे सामने कहीहै ॥ १३ ॥ उन्होंने केवल पुरवासी लोगोंके अपवादके भयसे भीतहो आपको परित्याग कियाहै परन्तु इससे आप अपनेको वास्त

वैदेह्यानोद्यमानस्तुलक्ष्मणोदीनचेतनः ॥ अवाङ्मुखोबाष्पगलोवाक्यमेतदुवाचह ॥ १० ॥ श्रुत्वापरिषदोमध्येह्यपवादंसुदारुणम् ॥ पु-

रे जनपदेचैवत्वत्कृतेजनकात्मजे ॥ ११ ॥ रामःसंतप्तहृदयोमांनिवेद्यगृहंगतः ॥ नतानिवचनीयानिमयादेवितवाग्रतः ॥ १२ ॥ यानिराज्ञा

हृदित्यस्तान्यमर्षात्पृष्ठतःकृतः ॥ सात्वंत्यक्तानृपतिनानिर्दोषाममसन्निधौ ॥ १३ ॥ पौरापवादभीतेनग्राह्यंदेविनतेन्यथा ॥ आश्रमांतेषुचमया

त्याज्यात्वंभविष्यसि ॥ १४ ॥ राज्ञःशासनमादायतथैवकिलदौहृदम् ॥ तदेतज्जाह्नवीतीरेब्रह्मर्षीणांतपोवनम् ॥ १५ ॥ पुण्यंचरमणीयंचमा

विषादंकृथाःशुभे ॥ राज्ञोदशरथस्यैवपितुर्मेमुनिपुंगवः ॥ १६ ॥ सखापरमकोविप्रोवाल्मीकिःसुमहायशाः ॥ पादच्छायामुपागम्यसुखमस्य महा-

त्मनः ॥ उपवासपरैकाग्रावसत्वंजनकात्मजे ॥ १७ ॥ पतिव्रतात्वमास्थायरामंकृत्वासदाहृदि ॥ श्रेयस्तेपरमंदेवितथाकृत्वाभविष्य-

ति ॥ १८ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे सप्तचत्वारिंशः सर्गः ॥ ४७ ॥

व न समझ लीजिये इसलिये हम आपको मैदानमें छोडे जाते हैं ॥ १४ ॥ क्योंकि गर्भिणीकी अभिलाषा और राजाकी आज्ञा अवश्यही पूरी करनी चा-

हिये कारण गंगाजीके तीर महर्षियोंके तपोवनमें ॥ १५ ॥ जो कि अति रमणीक और पवित्रहै हम त्यागेंगे सो आप यहींपर रहें और शोक न करें. हे शुभे

हमारे पिता राजा दशरथजीके मुनिश्रेष्ठ ॥ १६ ॥ महायशस्वी विप्र वाल्मीकिजी परम सखाहैं । हे जानकि ! इससे आप उन्हीं महात्माके चरणमूलमें पहुँच ।

कर उनकी पूजाकर उपवासादि कर सुखसे वास करें ॥ १७ ॥ हे देवि ! हृदयमें श्रीरामचंद्रजीको धारण करके आप पतिव्रत धर्म पालन करें बस इससेही

आपका परम कल्याण होगा ॥ १८ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्वा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषाटीकायां सप्तचत्वारिंशः सर्गः ॥ ४७ ॥

मनकृपारी महारानी जानकीजी लक्ष्मणजीके ऐसे दारुण वचन सुनकर महा दुःखको प्राप्तहो पृथ्वीमें गिर पडीं ॥ १ ॥ जनककुमारी सीताजी एक मु
गो अचेतन पडीरहीं फिर नेत्रोंमें जलभरे दीनहो लक्ष्मणजीसे कहनेलगीं ॥ २ ॥ हे लक्ष्मण ! ऐसा विदित होताहै कि, विधाताने मेरा शरीर दुःखही भोगनेके
बनायाहै. इसी कारण दुःखसमूह मूर्ति धारण करके मुझे दिखाई देताहै ॥ ३ ॥ न जानूं मैंने पूर्वजन्ममें क्या पाप कियाहै, किसका स्त्रीसे वियोग करा दिया
मती और शुद्धाचरणवाली मुझे राजाने त्याग करदिया ॥ ४ ॥ पूर्वकालमें रामचन्द्रके साथ वनमें वास करके रामचन्द्रके चरणोंकी सेवा की
लक्ष्मण ! आश्रममें वास करते समय दुःख सहकरभी मैंने स्वामीके संग सुखही माना ॥ ५ ॥ हे सौम्य ! अब मैं मनुष्यरहित इस आश्रममें किस प्र

लक्ष्मणस्यवचःश्रुत्वादारुणंजनकात्मजा ॥ परंविषादमागम्यवैदेहीनिपपातह ॥ १ ॥ सामुहूर्तमिवासंज्ञाबाष्पपर्याकुलेक्षणा ॥ लक्ष्मणं दीन
वाचाजनकात्मजा ॥ २ ॥ मामिकेयंतनुर्नूनंसृष्टादुःखायलक्ष्मण ॥ धात्रायस्यास्तथामेद्यदुःखमूर्तिःप्रदृश्यते ॥ ३ ॥ किंनुपापं
पूर्वंकोवादारैर्वियोजितः ॥ याहंशुद्धसमाचारात्यक्तानृपतिनासती ॥ ४ ॥ पुराहमाश्रमेवासंरामपादानुवर्तिनी ॥ अनुरुध्यापिसौमित्रेदुः
परिवर्तिनी ॥ ५ ॥ साकथंह्याश्रमेसौम्यवत्स्यामिविजनीकृता ॥ आख्यास्यामिचकस्याहंदुःखंदुःखपरायणा ॥ ६ ॥ किंनुवक्ष्यामिमुनिषु
नागतं प्रभो ॥ कस्मिन्वाकारणेत्यक्ताराघवेणमहात्मना ॥ ७ ॥ नखल्वद्यैवसौमित्रेजीवितंजाह्नवीजले ॥ त्यजेयंराजवंशस्तुभर्तुर्मेपरि
ग्यते ॥ ८ ॥ यथाज्ञंकुरुसौमित्रेत्यजमांदुःखभागिनीम् ॥ निदेशेस्थीयतांराज्ञःशृणुचेदंवचोमम ॥ ९ ॥ श्वश्रूणामविशेषेणप्रांजलिप्रग्रहेणच ॥
शिरसाभिवन्द्यचरणौकुशलंब्रूहिपार्थिवम् ॥ १० ॥ शिरसाभिनतोब्रूयाःसर्वासामेवलक्ष्मण ॥ वक्तव्यश्चापिनृपतिर्धर्मेषुसुसमाहितः ॥ ११ ॥

कहूंगी ? महात्माओंसे मैं किसके आगे अपना दुःख कहूंगी ॥ ६ ॥ हे लक्ष्मण ! मैं ऋषियोंके पूछनेपर उनको क्या उत्तर दूंगी ? क्योंकि मैंने कोई दुष्कर्म
कियाहै, फिर क्या पता कहूंगी कि, महात्मा रामचन्द्रने किस कारणसे त्याग दियाहै ॥ ७ ॥ हे लक्ष्मण ! मैं गंगामें गिरकर अपना शरीर त्यागन कर
परन्तु ऐसा नहीं करती क्योंकि ऐसा करनेसे राजवंशका विच्छेद होजायगा कारण कि, मैं गर्भवतीहूं ॥ ८ ॥ हे सुमित्रानंदन ! आप हमारे स्वामीका वचन प
मुझ दुःखभागिनीको त्यागकर जाइये परंतु मेरे यह वचन सुनो ॥ ९ ॥ प्रथम तो हाथ जोडकर मेरी ओरसे सब सासुओंके चरण वंदन करना और फिर महारा
प्रणामपूर्वक कुशल पूछना ॥ १० ॥ हे लक्ष्मण ! सब किसीको शिर झुकाकर मेरा प्रणाम कहना और अपने धर्ममें सदा सावधान रहनेवाले महाराजसेभी नि

करना ॥ ११ ॥ हे रघुनंदन ! आप यथार्थमें जानतेहैं कि, तुम्हारी जानकी शुद्धहै और परमभक्तिसे नित्यही तुम्हारा हित चाहती रहतीहैं ॥१२॥ हे वीर ! ... तुमने मनुष्योंके अपवाद लगानेके भयसे मुझे त्यागन कियाहै और जोकि; यह अपवाद निन्दासहित उपस्थित हुआहै ॥ १३ ॥ इसीकारण तुमने मुझे त्यागन ... है, परंतु मेरी तो तुमही परम गतिहो, यही वार्ता धर्ममें सावधान हमारे महाराजसे कहदेना ॥ १४ ॥ कि, जिस प्रकार आप भाइयोंसे वर्ततेहो इसी ... सदा नगरवासियोंके साथ वर्तना चाहिये, यही तुम्हारा परम धर्म है, इसके करनेसे महाराजकी बडी कीर्ति होगी ॥ १५ ॥ जिसप्रकारसे कि, प्रजापा... उत्पन्न होताहै, वही परम धर्महै, हे श्रेष्ठ ! कुछ मैं अपने शरीरको नहीं सोचतीहूं ॥ १६ ॥ आपने हमें पुरवासियोंके अपवादसे छोडा, परन्तु स्त्रियोंके पतिही ...

जानासिचयथाशुद्धासीतातत्त्वेनराघव ॥ भक्त्याचपरयायुक्ताहिताचतवनित्यशः ॥ १२ ॥ अहंत्यक्ताचतेवीरअयशोभीरुणाजने ॥ यच्च... नीयंस्यादपवादःसमुत्थितः ॥१३॥ मयाचपरिहर्तव्यंत्वंहिमेपरमागतिः ॥ वक्तव्यश्चैवनृपतिर्धर्मेणसुसमाहितः ॥१४॥ यथाभ्रातृषुवर्तेथास्तथा पौरेषुनित्यदा ॥ परमोह्येपधर्मस्तेतस्मात्कीर्तिरनुत्तमा ॥ १५ ॥ यत्तुपौरजनेराजन्धर्मेणसमाप्नुयात् ॥ अहंतुनानुशोचामिस्वशरीरंनरर्षभ ॥ १६ ॥ यथापवादःपौराणांतथैवरघुनंदन ॥ पतिर्हिदेवतानार्याःपतिर्बंधुःपतिर्गुरुः ॥ १७ ॥ प्राणैरपिप्रियंतस्माद्भर्तुःकार्यंविशेषतः ॥ इति मद्वचनाद्रामोवक्तव्योममसंग्रहः ॥ १८ ॥ निरीक्ष्यमाद्यगच्छत्वमृतुकालातिवर्तिनीम् ॥ एवंब्रुवंत्यांसीतायांलक्ष्मणोदीनचेतनः ॥ १९ ॥ शिरसावंद्यधरणींव्याहर्तुंनशशाकह ॥ प्रदक्षिणंचतांकृत्वारुदन्नेवमहास्वनः ॥ २० ॥ ध्यात्वामुहूर्तंतामाहकिंमांवक्ष्यसिशोभने ॥ दृष्टपूर्वं न ते रूपंपादौदृष्टौतवानघे ॥ २१ ॥ कथमत्रहिपश्यामिरामेणरहितांवने ॥ इत्युक्त्वातांनमस्कृत्यपुनर्नावमुपारुहत् ॥ २२ ॥

पतिही गुरुहै ॥ १७ ॥ फिर प्राणोंकी समान प्यारे मेरे स्वामीका विशेप कार्य सिद्ध होय तो इसमें मैं प्रसन्नहूं यह मेरा संदेशा जाकर तुम राजासे कहदेना ॥१८॥ ... तुम मुझको देखते जाओ कि, मैं गर्भवतीहूं, ऐसा न हो कि कहीं फिर कोई अपवाद स्वामीको लगे, जब जानकीजीने ऐसा कहा तो लक्ष्मणजीका चित्त दीन हो... ॥ १९ ॥ प्रणाम करके अपना शिर पृथ्वीमें धरदिया और फिर कुछ कहनेको समर्थ न हुए और महारानीजीकी प्रदक्षिणा करके ऊँचे स्वरसे रोदन करने लगे ॥२०॥ और कुछ देर ध्यान करके बोले, हे शोभने ! यह तुम क्या कहतीहो कि, मुझे देखकर जाओ, मैंने कभीभी आपका रूप नहीं देखा, सदा चरणोंमेंही दृष्टि रख... ॥ २१ ॥ फिर रघुनाथजीके विना इस निर्जन वनमें किस प्रकार तुमको अवलोकन करसकाहूं, यह कह जानकीजीको नमस्कार करके फिर नावपर चढे ॥२२॥

और नावपर चढनेके उपरान्त फिर मल्लाहसे कहा, नाव चलाओ, इस प्रकारसे महाशोकसे व्याकुल हुए लक्ष्मणजी गंगाजीके उत्तर तटपर आये ॥ २३ ॥ महादुःखी चित्तसे लक्ष्मणजी फिर रथमें चढे और अनाथकी नाई व्याकुल जानकीको फिर फिरकर देखने लगे ॥ २४ ॥ कि, जानकी पछीपार रुदनकर रहीहैं फिर लक्ष्मणजी चले गये, जानकी लक्ष्मणको और दूर गये हुए रथको वारंवार देखने लगीं जब कि, यह दृष्टिपथसे दूर निकल गये उस समय जानकी अत्यन्त शोकाकुल हुई ॥ २५ ॥ फिर वह दुःखभारसे लदीहुई यशस्विनी पतिव्रता सीताजी अपने स्वामी श्रीरामचन्द्रजीको नहीं देखकर मयूरोंसे शब्दायमान उस अरण्यमें बडे शब्दसे रुदन करने लगीं ॥ २६ ॥ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्ये उत्तरकांडे भाषाटीकायामष्टचत्वारिंशः सर्गः ॥ ४८ ॥ ॥

आरुरोहपुनर्नावंनाविकंचाभ्यचोदयत् ॥ सगत्वाचोत्तरंतीरंशोकभारसमन्वितः ॥ २३ ॥ संमूढइवदुःखेनरथमध्यारुहद्द्रुतम् ॥ मुहुर्मुहुःपरावृत्य दृष्ट्वासीतामनाथवत् ॥ २४ ॥ चेष्टंतींपरतीरस्थांलक्ष्मणःप्रययावथ ॥ दूरस्थंरथमालोक्यलक्ष्मणंचमुहुर्मुहुः ॥ निरीक्षमाणांतूद्विग्नांसीतांशोकःसमाविशत् ॥ २५ ॥ सादुःखभारावनतायशस्विनीयशोधरानाथमपश्यतीसती ॥ रुरोदसाबर्हिणनादितेवनेमहास्वनंदुःखपरायणासती ॥ ॥ २६ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडेऽष्टचत्वारिंशः सर्गः ॥ ४८ ॥ सीतांतुरुदतींदृष्ट्वातेतत्रमुनिदारकाः ॥ प्राद्रवन्यत्रभगवानास्तेवाल्मीकिरुग्रधीः ॥ १ ॥ अभिवाद्यमुनेःपादौमुनिपुत्रामहर्षये ॥ सर्वेनिवेदयामासुस्तस्यास्तुरुदितस्वनम् ॥ २ ॥ अदृष्टपूर्वा भगवन्कस्याप्येपामहात्मनः ॥ पत्नीश्रीरिवसंमोहाद्विरौतिविकृतानना ॥ ३ ॥ भगवन्साधुपश्येस्त्वंदेवतामिवखाच्च्युताम् ॥ नद्यास्तुतीरेभगवन्वरस्त्रीकापिदुःखिता ॥ ४ ॥ दृष्टाऽस्माभिःप्ररुदितादृढंशोकपरायणा ॥ अनर्हादुःखशोकाभ्यामेकादीनाअनाथवत् ॥ ५ ॥

उस स्थानमें खेलतेहुए मुनिकुमार जानकीजीको रोतीहुई देखकर बडे बुद्धिमान् वाल्मीकिजी जहांथे तहां शीघ्रतासे आये ॥ १ ॥ वे मुनिकुमार महर्षि वाल्मीकिजीके चरणोंमें नमस्कार करके जानकीजीका रोना निवेदन करने लगे ॥ २ ॥ हे भगवन्! किसी महात्माकी लक्ष्मीकी समान स्त्री जिसे हमने पहले कभी नहीं देखाहै वह किस कारणसे मुख फैलाये वनमें रोदन कर रहीहै ॥ ३ ॥ हे भगवन्! आप चलकर देखिये कि, वह श्रेष्ठ स्त्री आकाशसे गिरेहुए देवताकी समान नदीके किनारे महादुःखीहै॥ ४॥ हमने उसको बडे शोकसे रुदन करतीहुई देखाहै, यद्यपि वह शोकके अयोग्यहै; तथापि दुःख शोकसे अनाथकी नाई वह दीन होरहीहै ॥ ५ ॥

"हम जानतेहैं कि, वह मानुषी नहीं है, आपको उसका सत्कार करना उचित है, वह आश्रमके धोरेही आपकी शरणमें आनकर प्राप्त हुई है ॥ १ ॥ धर्मात्मा वाल्मी
उनबालकोंके वचन श्रवणकर और बुद्धिसे निश्चयकर तपद्वारा सब कुछ जानकर शीघ्रतासे जानकीके पासको चले ॥२॥ महामतिमान् वाल्मीकिजीको जाते दे
शिष्यभी उनके पीछे चले सो बुद्धिमान् महर्षि शीघ्रतासे कुछ दूर चले ॥ ३ ॥ और अर्घ्य लियेहुए गंगाजीके किनारेको आये, वहां रामकी प्यारी महारानी
कीजीको अनाथोंकी समान देखा ॥ ४ ॥ " मुनिश्रेष्ठ वाल्मीकिजी शोकभारसे व्याकुल हुई जानकीको अपने तेजसे आनंद देतेहुए मधुरवाणीसे बोले ॥ ६ ॥
तुम दशरथ महाराजकी पुत्रवधू रामचन्द्रकी प्यारी भार्या जनकराजकी पुत्री हो, हे पतिव्रते ! तुम्हारा शुभागमनहो ॥ ७ ॥ मैंने धर्मसमाधिसे आतेही

"नह्येनांमानुषींविद्मःसत्क्रियास्याःप्रयुज्यताम् ॥ आश्रमस्याविदूरेचत्वामियंशरणंगता ॥ त्रातारमिच्छतेसाध्वीभगवंस्त्रातुमर्हसि ॥ १ ॥ ते
तुवचनंश्रुत्वाबुद्ध्यानिश्चित्यधर्मवित् ॥ तपसालब्धचक्षुष्मान्प्राद्रवद्यत्रमैथिली ॥ २ ॥ तंप्रयांतमभिप्रेत्यशिष्याह्येनंमहामतिम् ॥ तंतुदेश
भिद्रुत्यकिंचित्पद्भ्यांमहामतिः ॥ ३ ॥ अर्घ्यमादायरुचिरंजाह्नवीतीरमागमत् ॥ ददर्शराघवस्येष्टांसीतांपत्नीमनाथवत् ॥ ४ ॥" तांसीतांशो
भारातांवाल्मीकिर्मुनिपुंगवः ॥ उवाचमधुरांवाणींह्लादयन्निवतेजसा ॥ ६ ॥ स्नुषादशरथस्यत्वंरामस्यमहिषीप्रिया ॥ जनकस्यसुताराज्ञःस्वाग
तेपतिव्रते ॥७॥ आयांतीचासिविज्ञातामयाधर्मसमाधिना ॥ कारणंचैवसर्वंमेहृदयेनोपलक्षितम् ॥८॥ तवचैवमहाभागेविदितंममतत्त्वतः ॥ स
चविदितंमत्स्यंत्रैलोक्येयद्विवर्तते ॥९॥ अपापांवेद्मिसीतेत्वांतपोलब्धेनचक्षुषा ॥ विस्रब्धाभववैदेहिसांप्रतंमयिवर्तसे ॥ १० ॥ आश्रमस्याविदू
मेतापस्यस्तपसिस्थिताः ॥ तास्त्वांवत्सेयथावत्संपालयिष्यंतिनित्यशः ॥११॥ इदमर्घ्यंप्रतीच्छत्वंविस्रब्धाविगतज्वरा ॥ यथास्वगृहमभ्येत्य
पादंचैवमाकृथाः ॥ १२ ॥ श्रुत्वातुभाषितंसीतामुनेःपरमद्भुतम् ॥ शिरसावंद्यचरणौतथेत्याहकृतांजलिः ॥ १३ ॥

जानलिया है और जिस कारण तुमको त्याग दियाहै वहभी मैंने ध्यानसे सब जान लियाहै ॥८॥ हे महाभाग्यवाली ! मैं यथार्थमें तुम्हारे शुद्धाचरणकोभी
ताहूं, यहतो क्या जो कुछ त्रिलोकीमें है वह सब कुछ मैं योगसमाधिद्वारा जानताहूं ॥ ९ ॥ हे जानकि ! मैं तपके द्वारा प्राप्त हुए ज्ञाननेत्रसे तुमको पा
जानताहूं, हे जानकी ! तुम निश्चिन्त होकर हमारे निकट वास करो ॥ १० ॥ हमारे आश्रमके निकटही तपस्विनी तप करती हैं, हे पुत्री ! वह सदा पुत्र
समान पालन करेंगी ॥ ११ ॥ अब तुम सावधान और शोकरहित होकर हमारे दिये इस अर्घ्यको ग्रहण करो और इस स्थानको अपने
समान जानो किसी प्रकारका विषाद मत करो ॥ १२ ॥ जानकी मुनिराजके यहपरम अद्भुत वचन श्रवण करके शिरसे

स्वीकार करती हुई ॥ १३ ॥ जिस समय मुनि उन तपस्वियोंके आश्रमको लौटे वो जानकीजी हाथ जोडे २ चलीं, उन मुनिराजको जानकी सहित आया हुआ देखकर मुनिपत्नियें बडी प्रसन्नतासे आनकर यह वचन कहने लगीं ॥ १४ ॥ हे मुनिराज ! आपका शुभागमन हो; बहुत दिनोंमें पधारे; हम सब आपको अभिवादन करती हैं, कहिये इस समय हम आपका कौन कार्य करें ॥ १५ ॥ उन सबके यह वचन सुनकर मुनि वाल्मीकिजी इस प्रकारसे बोले, यह बुद्धिमान् महाराज रामचन्द्रजीकी भार्या जानकीजी यहां आई हैं ॥ १६ ॥ यह दशरथकी पुत्रवधू महाराज जनकजीकी सुशीला कन्या हैं, इन्हें निष्कारण इनके पतिने त्यागन कर दियाहै इसकारण मैं इनका सदा पालन करूंगा ॥ १७ ॥ और तुम सबभी इनको सदा स्नेहकी दृष्टिसे अवलोकन करना और मेरे वाक्यके गौरवसे यह विशेष

तंप्रयांतंमुनिंसीताप्रांजलिःपृष्ठतोन्वगात् ॥ तंदृष्ट्वामुनिमायांतंवैदेह्यामुनिपत्नयः ॥ उपाजग्मुर्मुदायुक्तावचनंचेदमब्रुवन् ॥ १४ ॥ स्वागतंते मुनिश्रेष्ठचिरस्यागमनंचते ॥ अभिवादयामस्त्वांसर्वाउच्यतांकिंचकुर्महे ॥ १५ ॥ तासांतद्वचनंश्रुत्वावाल्मीकिरिदमब्रवीत् ॥ सीतेयंसमनुप्राताप्तवीरामस्यधीमतः ॥ १६ ॥ स्नुषादशरथस्यैषाजनकस्यसुतासती ॥ अपापापतिनात्यक्तापरिपाल्यामयासदा ॥ १७ ॥ इमांभवत्यः पश्यंतुस्नेहेनपरमेणहि ॥ गौरवान्ममवाक्याच्चपूज्यावोस्तुविशेषतः ॥ १८ ॥ मुहुर्मुहुश्चवैदेहींपरिदायमहायशाः ॥ स्वमाश्रमंशिष्यवृतःपुनरायान्महातपाः ॥ १९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांड एकोनपंचाशःसर्गः ॥ ४९ ॥ दृष्ट्वातुमैथिलींसीतामाश्रमे संप्रवेशिताम् ॥ संतापमगमद्घोरंलक्ष्मणोदीनचेतनः ॥ १ ॥ अब्रवीच्चमहातेजाःसुमंत्रंमंत्रसारथिम् ॥ सीतासंतापजंदुःखंपश्यरामस्यसारथे ॥ ॥ २ ॥ ततोदुःखतरंकिंनुराघवस्यभविष्यति ॥ पत्नींशुद्धसमाचारांविसृज्यजनकात्मजाम् ॥ ३ ॥ व्यक्तंदैवादहंमन्येराघवस्यविनाभवम् ॥ वैदेह्याःसारथेनित्यंदैवंहिदुरतिक्रमम् ॥ ४ ॥

करके तुमसे सन्मान पानेके योग्य हैं ॥ १८ ॥ इस प्रकार महायशस्वी वाल्मीकिजी वारंवार उनके हाथमें जानकीका हाथ समर्पणकर फिर वह महातपस्वी शिष्योंके सहित अपने आश्रममें आये ॥ १९ ॥ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदिका० उत्तरकांडे भाषाटीकायामेकोनपंचाशः सर्गः ॥ ४९ ॥ ॥ इसके उपरान्त जानकीजीको वाल्मीकिके आश्रममें प्रवेश करते देखकर लक्ष्मणजी दीनचित्तहो महाघोर दुःखको प्राप्त हुए ॥ १ ॥ वह महातेजस्वी मन्त्रसहायकारी सारथी सुमंत्रसे कहने लगे कि, हे रघुनाथजीके सारथी ! आप सीताके संतापसे उत्पन्न हुए दुःखको देखिये ॥ २॥ भला इससे अधिक और दुःख रघुनाथजीको क्या होगा जो उन्होंने शुद्ध सदाचारयुक्त जनकदुलारी जानकीको त्यागन करदिया ॥ ३ ॥ हे सारथी ! यह जानकीका त्यागन और रामका वियोग

सहना मैं प्रारब्धसेही मानताहूं इसकारणसे दैवका उल्लंघन करनेमें कोई समर्थ नहीं ॥ ४ ॥ जो रघुनाथजी देव, दानव, असुर और राक्षसोंको क्रोध करके संहार कर सकते हैं वह रघुनाथजी दैवके वशीभूत देखे जाते हैं ॥ ५ ॥ देखो प्रथम तो रामचन्द्रने पिताके वचनसे चौदह वर्ष जनरहित दण्डकवनमें वास किया ही था, वह पिताके वचनके गौरवसे हुआ और नियमितथा परन्तु ॥ ६ ॥ अब यह जानकीका त्यागना जो नगरवासियोंके वचन सुनकर हुआ है जिसका कोई नियमही नहीं है; यह उससे बढकर कहीं दुःखदायी है, यह बडाही कुत्सित कार्य हुआ है ॥ ७ ॥ हे सूत ! नहीं जानते कि, न्यायहीन वचन बोलनेवाले पुरवासियोंके वचनसे इस यशके दूर करनेवाले जानकीके त्यागकर्म करके रघुनाथजीने क्या धर्म प्राप्त किया है, क्योंकि स्त्री सब धर्मोंकी मूल है, उसके त्यागनेसे धर्म

योहिदेवान्सगंधर्वानसुरान्सहराक्षसैः ॥ निहन्याद्राघवःक्रुद्धःसदैवंपर्युपासते ॥ ५ ॥ पुरारामःपितुर्वाक्याद्दंडकेविजनेवने ॥ उषित्वानववर्षाणिपंचचैवमहावने ॥ ६ ॥ ततोःदुखतरंभूयःसीतायाविप्रवासनम् ॥ पौराणांवचनंश्रुत्वानृशंसंप्रतिभातिमे ॥ ७ ॥ कोनुधर्माश्रयःसूतकर्मण्यस्मिन्यशोहरे ॥ मैथिलींसमनुप्राप्तःपौरैर्हीनार्थवादिभिः ॥ ८ ॥ एतावाचोबहुविधाःश्रुत्वालक्ष्मणभाषिताः ॥ सुमंत्रःश्रद्धयाप्राज्ञोवाक्यमेतदुवाचह ॥ ९ ॥ नसंतापस्त्वयाकार्यःसौमित्रेमैथिलींप्रति ॥ दृष्टमेतत्पुराविप्रैःपितुस्तेलक्ष्मणाग्रतः ॥ १० ॥ भविष्यतिदृढंरामोदुःखप्रायोविसौख्यभाक् ॥ प्राप्स्यतेचमहाबाहुर्विप्रयोगंप्रियैर्द्रुतम् ॥ ११ ॥ त्वांचैवमैथिलींचैवशत्रुघ्नभरतौतथा ॥ सत्यजिष्यतिधर्मात्माकालेनमहता महान् ॥ १२ ॥ इदंत्वयिनवक्तव्यंसौमित्रेभरतेऽपिवा ॥ राज्ञोवाव्याहृतंवाक्यंदुर्वासायदुवाचह ॥ १३ ॥ महाजनसमीपेचममचैवनरर्षभ ॥ ऋषिणाव्याहृतंवाक्यंवसिष्ठस्यचसन्निधौ ॥ १४ ॥

भी नष्ट होता है ॥ ८ ॥ इसप्रकार लक्ष्मणजीकी कही हुई बहुतसी बातें सुनकर बुद्धिमान् सुमंत्र इच्छासे लक्ष्मणजीके प्रति कहनेलगे ॥ ९ ॥ हे लक्ष्मण ! तुम्हें जानकीके निमित्त संताप करना उचित नहींहै, तुम्हारे पिताजीके सामने ऋषियोंने पहलेही कह दिया था कि, जानकी वनमें वास करेंगी ॥ १० ॥ जिन कारण कि. रामचन्द्रजी वियोगका अधिकतर दुःख सहेंगे प्रायः यह सुखसे नहीं रहेंगे यह महाबाहु अपने प्रियजनोंके वियोगको शीघ्रही प्राप्त होंगे ॥ ११ ॥ जानकीको क्या, तुम्हें शत्रुघ्न भरतजीकोभी यह धर्मात्मा कुछ अधिक समयपर त्यागनकर देंगे (शत्रुघ्न भरतको मथुराराज्य और गन्धर्वराज्यमें रहनेको कहना त्यागहै) ॥ १२ ॥ हे लक्ष्मण ! यह बात तुम भरत या शत्रुघ्नसे मत कहना। जिस समय राजाने दुर्वासासे तुम्हारे विषयमें प्रश्न किया था तब उन्होंने राजासे ऐसा कहाथा ॥ १३ ॥ [illegible]

निकट यहे पुरुष वसिष्ठजी बैठेथे और मैंभी बैठाथा उस समय ऋषिने यह वचन कहथ ॥ १४ ॥ ऋषिराजके वचन सुनकर महाराज दशरथजीने मुझसे कहाथा कि, हे सूत ! यह बात तुम कहीं बहुत मनुष्योंके सन्मुखमें मत कहना ॥ १५ ॥ तबसे मैं उन लोकपाल महाराज दशरथजीके वाक्यकी सावधानतासे रक्षा करताहूं, उन्हें असत्य नहीं करताहूं, हे सौम्य ! यह मेरा संकल्प है ॥ १६ ॥ हे सौम्य ! सर्वथा मुझको तुमसे कहना उचित नहीं है, परन्तु हे रघुनन्दन ! जो आपको सुननेकी इच्छाहो वो श्रद्धासे सुनिये ॥ १७ ॥ पूर्वकालमें यह वार्ता एकान्तमें राजाने मुझे सुनाईथी सो मैं तुमसे कहताहूं, क्या कियाजाय दैव बडा प्रबल है जो इस समय गुप्त बातभी कहनी पडतीहै परन्तु आपकी दुःखनिवृत्तिके निमित्त ऐसा कहताहूं क्योंकि, राजाकी आज्ञा तत्त्व जाननेवालोंसे गुप्त रखनेकी नहीं थी ॥ १८ ॥

ऋषेस्तुवचनंश्रुत्वामामाहपुरुषर्षभः ॥ सूतनकचिदेवंतेवक्तव्यंजनसन्निधौ ॥ १५ ॥ तस्याहंलोकपालस्यवाक्यंतत्सुसमाहितः ॥ नैवजात्वनृतंकुर्यामितिमेसौम्यदर्शनम् ॥ १६ ॥ सर्वथैवनवक्तव्यंमयासौम्यतवाग्रतः ॥ यदितेश्रवणेश्रद्धाश्रूयतांरघुनंदन ॥ १७ ॥ यद्यप्यहंनरेंद्रेणरहस्यंश्रावितंपुरा ॥ तथाप्युदाहरिष्यामिदैवंहिदुरतिक्रमम् ॥ १८ ॥ येनेदमीदृशंप्राप्तंदुःखंशोकसमन्वितम् ॥ नत्वयाभरतस्याग्रेशत्रुघ्नस्यापिसन्निधौ ॥ ॥ १९ ॥ तच्छ्रुत्वाभाषितंतस्यगंभीरार्थपदंमहत् ॥ तथ्यंब्रूहीतिसौमित्रिःसूतंतंवाक्यमब्रवीत् ॥ २० ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे पंचाशः सर्गः ॥ ५० ॥ तथासंचोदितःसूतोलक्ष्मणेनमहात्मना ॥ तद्वाक्यमृषिणाप्रोक्तंव्याहर्तुमुपचक्रमे ॥ १ ॥ पुरानाम्नाहिदुर्वासाअत्रेःपुत्रोमहामुनिः ॥ वसिष्ठस्याश्रमेपुण्येवार्षिक्यंसमुवासह ॥ २ ॥ तमाश्रमंमहातेजाःपितातेसुमहायशाः ॥ पुरोहितंमहात्मानंदिदृक्षुरगमत्स्वयम् ॥ ३ ॥ सदृष्ट्वासूर्यसंकाशंज्वलंतमिवतेजसा ॥ उपविष्टंवसिष्ठस्यसव्यपार्श्वेमहामुनिम् ॥ ४ ॥ तौमुनीतापसश्रेष्ठौविनीतावभ्यवादयत् ॥ सताभ्यांपूजितोराजास्वागतेनासनेनच ॥ ५ ॥

दैवके कारणसे इस प्रकारका दुःख शोक प्राप्त हुआ है सो यह गूढ बात तुम भरत शत्रुघ्नके निकट मत कहना ॥ १९ ॥ इसप्रकार गंभीर अर्थपदसहित सत्य२ सूतके वचन श्रवण करके लक्ष्मणजी बोले हे सूत ! तुम विस्तारसे कहो हम किसीसे नहीं कहेंगे ॥ २० ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषाटीकायां पंचाशः सर्गः ॥ ५० ॥ जब महात्मा लक्ष्मणजीने सूतसे इस प्रकारके वचन कहे तब वह ऋषिराजके कहे वचन इस प्रकारसे सुनानेलगे ॥ १ ॥ हे लक्ष्मण ! एक समय महामुनि अत्रिके पुत्र दुर्वासाजी वसिष्ठजीके पास आनकर वर्षाकालमें वास करतेहुए ॥ २ ॥ उस स्थानपर तुम्हारे तेजस्वी महायशस्वी पिता दशरथजी अपनी इच्छासे वसिष्ठजीके देखनेको आये ॥ ३ ॥ सो उन्होंने सूर्यकी समान अपने तेजसे प्रकाशमान महामुनि दुर्वासाजीको वसिष्ठजीके निकट बैठे देखा ॥ ४ ॥ राजा दशरथजीने नम्र

होकर तपस्यामें श्रेष्ठ उन दोनों मुनियोंको प्रणाम किया, उन दोनो महात्माओंनेभी स्वागत कुशल पूँछकर राजाको सत्कारसे आसनपर बैठाया ॥ ५ ॥ और पा अर्घ्य फल मूल द्वारा सत्कृत हो राजा उन मुनियोंके सहित बैठे ॥ ६ ॥ उस समय उन सबके विराजनेपर अनेक २ परम ऋषियोंकी मधुर कथा होनेलगी. उ समय मध्याह्नका समय था ॥ ७॥ किसी कथाप्रसंगमें राजा दशरथजी हाथ जोड तपोधन महात्मा अत्रिके पुत्र दुर्वासाजीसे कहने लगे, हे भगवन्! यह तो कहिये मेरा वंश कहांतक चलेगा; रामचन्द्रकी कितनी आयु है तथा और पुत्रोंकी कितनी आयु है ॥ ८ ॥९॥ और जो रामचन्द्रके पुत्र होंगे उनकी कितनी अवस्था होगी? हे भगवन्! मुझे बडी इच्छा है आप हमारे वंशका वृत्तान्त वर्णन कीजिये ॥ १० ॥ इस प्रकार महाराज दशरथके कहे हुए वचन सुनकर महातेजस्वी

पार्थ्यंनफलमूलैश्चउवासमुनिभिःसह ॥ ६ ॥ तेषांतत्रोपविष्टानांतास्ताःसुमधुराःकथाः ॥ बभूवुःपरमर्षीणांमध्यादित्यगतेहनि ॥ ७ ॥ ततः कथायांकस्यांचित्प्रांजलिःप्रग्रहोनृपः ॥ उवाचतंमहात्मानमत्रेःपुत्रंतपोधनम् ॥ ८ ॥ भगवन्किंप्रमाणेनममवंशोभविष्यति ॥ किमायुश्चहि मेरामःपुत्राश्चान्येकिमायुषः ॥ ९ ॥ रामस्यचसुतायेस्युस्तेषामायुःकियद्भवेत् ॥ काम्ययाभगवन्ब्रूहिवंशस्यास्यगतिंमम ॥१०॥ तच्छ्रुत्वाव्याह तंवाक्यंराज्ञोदशरथस्यतु ॥ दुर्वासाःसुमहातेजाव्याहर्तुमुपचक्रमे ॥ ११ ॥ शृणुराजन्पुरावृत्तंतदादेवासुरेयुधि ॥ दैत्याःसुरैर्भर्त्स्यमानाभृगुपत्नीं समाश्रिताः ॥ तयादत्ताभयास्तत्रन्यवसन्नभयास्तदा ॥ १२ ॥ तयापरिगृहीतांस्तान्दृष्ट्वाक्रुद्धःसुरेश्वरः ॥ चक्रेणशितधारेणभृगुपत्न्याःशिरो हरत् ॥ १३ ॥ ततस्तांनिहतांदृष्ट्वापत्नींभृगुकुलोद्वहः ॥ शशापसहसाक्रुद्धोविष्णुंरिपुकुलार्दनम् ॥ १४ ॥ यस्मादवध्यांमेपत्नीमवधीः क्रोधमूर्च्छितः ॥ तस्मात्त्वंमानुषेलोकेजनिष्यसिजनार्दन ॥ १५ ॥ तत्रपत्नीवियोगंत्वंप्राप्स्यसेबहुवार्षिकम् ॥ शापाभिहतचेतास्तुस्वात्म नाभावितोभवत् ॥ १६ ॥

दुर्वासाजी कहने लगे ॥११॥ हे राजन्! श्रवण कीजिये प्रथम देवताओंके संग दैत्योंका बडाभारी संग्राम हुआ उससमय दैत्य देवताओंसे मार खाकर भृगुजीकी पत्नीकी शरणमें गये तब उसने उनको अभय दिया और दैत्य वहां निर्भय वास करने लगे॥१२॥जब विष्णुने देखा कि,भृगुपत्नीने दैत्योंकी रक्षा की है तबउन्होंने तीक्ष्णधारवाले चक्रसे भृगुपत्नीका मस्तक छेदन करदिया ॥ १३ ॥ जब भृगुजीने अपनी पत्नीको मरी हुई देखा तो उन वंशउजागरने शत्रुकुलके मारनेहारे जनार्दन भगवान्‌को शाप दिया ॥ १४ ॥ जिस कारण कि, क्रोध वश होकर वध करनेके अयोग्य तपस्विनी मेरी पत्नीको मारडाला है इस कारण हे जनार्दन! तुम मनुष्य लोकमें अवतार लोगे ॥ १५ ॥ उस शरीरमें तुमको बहुत वर्षोंतक स्त्रीका वियोग रहेगा इसप्रकारसे शाप देकर तपक्षीण होनेसे फिर भृगुजी [illegible]

लगे कि, मैंने क्या किया जो श्रीके निमित्त शाप दिया ॥ १६ ॥ फिर शाप प्रदानके भयसे पीड़ित होकर शाप सफल होनेके निमित्त भृगुजी भगवान् जना- नकी आराधन करने लगे, उस समय जब अनेक प्रकारसे भगवान्‌को तपस्या द्वारा आराधन किया तब भक्तवत्सल भगवान् बोले ॥१७॥ कि, तुम चिंता मत करो तुम्हारा शाप मिथ्या नहीं होगा, मैंने लोकके कल्याणके निमित्त तुम्हारे शापको ग्रहण किया है, इस प्रकारसे महातेजस्वी भृगुने शाप दियाहै ॥ १८ ॥ हे राजोंमें मान देनेहारे! वही जनार्दन भगवान् यहां आय तुम्हारे यहां पुत्रभावको प्राप्तहो रामनामसे त्रिलोकीमें विख्यात हुएहैं॥१९॥सो भृगुके शापका वह बड़ा फल अवश्य करें रामचन्द्र अयोध्याके महाराज बहुत कालतक रहेंगे ॥२०॥ और इनके छोटे भाई सुखी और अर्थोंमें परिपूर्ण होंगे, यह रामचन्द्र ग्यारह सहस्र वर्षतक ॥२१॥ अ-

अर्चयामासतंदेवंभृगुःशापेनपीडितः ॥ तपसाराधितोदेवोह्यब्रवीद्भक्तवत्सलः ॥ १७ ॥ लोकानांसंप्रियार्थंतुतंशापंगृह्यमुक्तवान् ॥ इतिशप्तोन हातेजाभृगुणापूर्वजन्मनि ॥ १८ ॥ इहागतोहिपुत्रत्वंतवपार्थिवसत्तम ॥ रामइत्यभिविख्यातस्त्रिपुलोकेपुमानद ॥ १९ ॥ तत्फलंप्राप्स्यतेचा पिभृगुशापकृतंमहत् ॥ अयोध्यायाःपतीरामोदीर्घकालंभविष्यति ॥ २० ॥ सुखिनश्चसमृद्धाश्चभविष्यंत्यस्ययेऽनुगाः ॥ दशवर्षसहस्राणिदश वर्षशतानिच ॥ २१ ॥ रामोराज्यमुपासित्वाब्रह्मलोकंगमिष्यति ॥ समृद्धैश्चाश्वमेधैश्चइष्ट्वापरमदुर्जयः ॥ २२ ॥ राजवंशांश्चबहुशोबहून्संस्था पयिष्यति ॥ द्वौपुत्रौतुभविष्येतेसीतायांराघवस्यतु ॥ २३ ॥ ससर्वमखिलंराज्ञोवंशस्याहगतागतम् ॥ आख्यायसुमहातेजास्तूष्णीमासीन्म हामुनिः ॥ २४ ॥ तूष्णींभूतेतदातस्मिन्राजादशरथोमुनौ ॥ अभिवाद्यमहात्मानौपुनरायात्पुरोत्तमम् ॥ २५ ॥ एतद्वचोमयातत्रमुनिनाव्याह तंपुरा ॥ श्रुतंहृदिचनिक्षिप्तंनान्यथातद्भविष्यति ॥ २६ ॥ सीतायाश्चततःपुत्रावभिषेक्ष्यतिराघवः ॥ अन्यत्रनत्वयोध्यायांमुनेस्तुवचनंयथा ॥ ॥ २७ ॥ एवंगतेनसंतापंकर्तुमर्हसिराघव ॥ सीतार्थेराघवार्थेवादृढोभवनरोत्तम ॥ २८ ॥

प्रकारके अश्वमेध यज्ञ विधिपूर्वक करके तथा औरभी यज्ञकर राज्य पालन करके ब्रह्मलोकको जायँगे॥२२॥यह अनेक राजवंशोंका राज्य पालनकरेंगे और जानकीमें रघुनाथजीसे दो पुत्र होंगे ॥२३॥ इस प्रकार तुम्हारे वंशकी होनहार गतिका वर्णन करके वही महातेजस्वी मुनि मौन हुए, जब वे मुनि मौन हुए॥२४॥ तब राजा दशरथजी दोनों ऋषिश्रेष्ठोंको अभिवादन करके उत्तम नगरमें आये ॥२५॥ उस समय मुनिराजके मुखसे यह सब बातें वहाँ श्रवण की थीं और अपने हृदयहीमें धारण करलीथीं, सो इनका कहना अन्यथा नहीं होगा ॥ २६ ॥ रामचन्द्र सीताके पुत्रोंको कहीं और स्थानमें नहीं अभिषेक करेंगे अयोध्यामेंही करेंगे क्यों कि, मुनिके वचन ऐसेही हैं ॥ २७ ॥ हे सुमित्रानंदन ! इस प्रकारसे आपके शोक करनेकी कोई बात नहींहै सो आप जानकी और रघुनाथजी

ओरसे निश्चिन्त रहिये ॥ २८ ॥ इस प्रकार सूतजीके परमाश्चर्ययुक्त वाक्य श्रवण करके लक्ष्मणजी अधिक आनंदको प्राप्त हो सुमंत्रको धन्यवाद देनेलगे ॥ २९ ॥ इस प्रकार लक्ष्मण और सारथी सुमंत्र मार्गमें वार्ता करते २ सन्ध्या समय केशिनी नगरीके निकट वास करते हुए ॥ ३० ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषाटीकायामेकपंचाशः सर्गः ॥ ५१ ॥ रघुनंदन लक्ष्मणजी केशिनी नगरीमें एक रात्रि वास करके प्रातःकाल उठके वहांसे गमन करतेहुए ॥ १ ॥ फिर मध्याह्नके समय महारथी लक्ष्मणजी रत्नोंसे भरीपुरी हृष्टपुष्ट मनुष्योंसे व्याप्त अयोध्यापुरीमें प्रवेश करते हुए ॥२॥ अब उस समय मतिमान् लक्ष्मणजीको बडा दुःख हुआ कि, मैं रघुनाथजीके चरणोंको प्राप्त होकर क्या कहूंगा ॥ ३ ॥ वह इस प्रकार चिन्ता कररही रहेथे कि, उन्होंने आगे जाकर

श्रुत्वातुव्याहृतंवाक्यंसूतस्यपरमाद्भुतम् ॥ प्रहर्षमतुलंलेभेसाधुसाध्वितिचाब्रवीत् ॥२९॥ ततःसंवदतोरेवंसूतलक्ष्मणयोःपथि ॥ अस्तमर्केगतेवासंकेशिन्यांतावथोषतुः ॥ ३० ॥ इ० श्रीमद्रा० वा० आ० उ० एकपंचाशः सर्गः ॥ ५१ ॥ तत्रतांरजनीमुष्यकेशिन्यांरघुनंदनः ॥ प्रभातेपुनरुत्थायलक्ष्मणःप्रययौतदा ॥ १ ॥ ततोर्धदिवसेप्राप्तेप्रविवेशमहारथः ॥ अयोध्यांरत्नसंपूर्णांहृष्टपुष्टजनावृताम् ॥ २ ॥ सौमित्रिस्तुपरंदैन्यंजगामसुमहामतिः ॥ रामपादौसमासाद्यवक्ष्यामिकिमहंगतः ॥ ३ ॥ तस्यैवंचिंतयानस्यभवनंशशिसन्निभम् ॥ रामस्यपरमोदारंपुरस्तात्समदृश्यत ॥ ४ ॥ राज्ञस्तुभवनद्वारेसोऽवतीर्यनरोत्तमः ॥ अवाङ्मुखोदीनमनाःप्रविवेशानिवारितः ॥ ५ ॥ सदृष्ट्वाराघवंदीनमासीनंपरमासने ॥ नेत्राभ्यामश्रुपूर्णाभ्यांददर्शाग्रजमग्रतः ॥ ६ ॥ जग्राहचरणौतस्यलक्ष्मणोदीनचेतनः ॥ उवाचदीनयावाचाप्रांजलिःसुसमाहितः ॥ ७ ॥ आर्यस्याज्ञांपुरस्कृत्यविसृज्यजनकात्मजाम् ॥ गंगातीरेयथोद्दिष्टेवाल्मीकेराश्रमेशुभे ॥ ८ ॥ तत्रतांचशुभाचारामाश्रमांतेयशस्विनीम् ॥ पुनरप्यागतोवीरपादमूलमुपासितुम् ॥ ९ ॥

चन्द्रमाकी समान परम उदार रघुनाथजीका मंदिर देखा ॥ ४ ॥ वह नरोत्तम राजाके भवनके द्वारपर रथसे उतरकर नीचेको मुख किये दीन मनसे बिना रोक टोक मंदिरमें प्रवेश करनेलगे ॥५॥ जाकर देखते क्या हैं कि, रघुनाथजी दीन हुए नेत्रोंमें जलभरे एक आसनपर बैठे हैं, इसप्रकार रघुनाथजीको आगे बैठे देखा ॥ ६ ॥ लक्ष्मणजीने दीनचित्तसे उनके चरण युगल ग्रहण किये और फिर सावधानहो हाथ जोडकर रघुनाथजीसे दीन वचन कहने लगे ॥ ७ ॥ कि, मैं आपकी आज्ञासे जानकीजीको गंगाजीके किनारे वाल्मीकिजीके शुभ आश्रमके निकट छोड आया ॥ ८ ॥ उन शुभा, शुभाचारिणी यशस्विनी

त्याग दियाहै अब फिर हे वीर ! आपके चरण उपासना करनेके निमित्त आयाहूं ॥ ९ ॥ हे पुरुषसिंह ! आप शोक न कीजिये कारण कि, कालकी गति ऐ
आपसरीखे बुद्धिमान् पुरुष शोक नहीं करते हैं ॥ १० ॥ सम्पूर्ण ऐश्वर्य नाशोन्मुख हैं । जो ऊंचे उठतेहैं वे नीचे गिरतेहैं, संयोगसे वियोग होताहै और जीवनके
मरण होताहीहै ॥ ११ ॥ इसकारणसे स्त्री पुत्र मित्र धनमें अत्यन्त मन लगाना उचित नहीं है कारण कि, उनका अवश्य वियोग होताहै ॥ १२ ॥ आप तो
आत्मासे आत्माको, मनसे मनको शिक्षा करनेको समर्थ हैं बहुत क्या कहें हे रघुनाथजी ! आप सम्पूर्ण लोकोंके शिक्षा करनेको समर्थ हैं फिर अपना शोक नि
करना क्या बडी बातहै ॥ १३ ॥ आप सरीखे महात्मा पुरुष मोहको नहीं प्राप्त होते हैं, हे रघुनंदन ! शोच करनेसे फिर वही अपवाद आनकर प्राप्त होजायगा ॥ १४ ॥

माशुचःपुरुषव्याघ्रकालस्यगतिरीदृशी ॥ त्वद्विधानहिशोचंतिबुद्धिमंतोमनस्विनः ॥ १० ॥ सर्वेक्षयांतानिचयाःपतनांताःसमुच्छ्रयाः ॥
संयोगाविप्रयोगांतामरणांतंचजीवितम् ॥ ११ ॥ तस्मात्पुत्रेषुदारेषुमित्रेषुचधनेषुच ॥ नातिप्रसंगःकर्तव्योविप्रयोगोहितेध्रुवम् ॥ १२ ॥ श
स्त्वमात्मनात्मानंविनेतुंमनसामनः ॥ लोकान्सर्वांश्चकाकुत्स्थकिंपुनःशोकमात्मनः ॥ १३ ॥ नेदृशेषुविमुह्यन्तित्वद्विधाःपुरुषर्षभाः ॥ अप
वादःसकिलतेपुनरेष्यतिराघव ॥ १४ ॥ यदर्थंमैथिलीत्यक्ताअपवादभयान्नृप ॥ सोपवादःपुरेराजन्भविष्यतिनसंशयः ॥ १५ ॥ सत्वंपुरु
शार्दूलधैर्येणसुसमाहितः ॥ त्यजेमांदुर्बलांबुद्धिंसंतापंमाकुरुष्वह ॥ १६ ॥ एवमुक्तःसकाकुत्स्थोलक्ष्मणेनमहात्मना ॥ उवाचपरयाप्रीत्यासौमि
मित्रवत्सलः ॥ १७ ॥ एवमेतन्नरश्रेष्ठयथावदसिलक्ष्मण ॥ परितोषश्चमेवीरममकार्यानुशासने ॥ १८ ॥ निवृत्तिश्चागतासौम्यसंतापश्चनिरा
कृतः ॥ भवद्वाक्यैःसुरुचिरैरनुनीतोस्मिलक्ष्मण ॥ १९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे द्विपंचाशःसर्गः ॥ ५२ ॥
लक्ष्मणस्यतुतद्वाक्यंनिशम्यपरमाद्भुतम् ॥ सुप्रीतश्चाभवद्रामोवाक्यमेतदुवाचह ॥ १ ॥

जिस अपवादके भयसे आपने जानकीका त्याग कियाहै; यदि शोच करोगे तो हे श्रीरामचन्द्रजी ! फिर वही अपवाद आपको प्राप्त होगा इसमें संदेह नहीं
॥ १५ ॥ हे पुरुषसिंह ! इस कारण आप धैर्य धारणकर इस दुर्बल बुद्धिको त्यागन कीजिये सन्ताप न कीजिये ॥ १६ ॥ जब महात्मा लक्ष्मणजीने इस
कहा तब मित्रवत्सल रघुनाथजी मनोहरवाणीसे लक्ष्मणजीसे बोले ॥ १७ ॥ हे नरश्रेष्ठ लक्ष्मण ! तुम जो कहतेहो सो यथार्थहै, हे वीर ! प्रजापालन करने
सन्तुष्टहूं ॥ १८ ॥ हे सौम्य ! तुम्हारे वाक्यसे मेरा दुःख छूटगया और मेरा सन्ताप भी मिटगया, हे लक्ष्मण ! तुम्हारे सुन्दरवाक्योंसे अनुगृहीतहूं ॥ १९ ॥
इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषाटीकायां द्विपंचाशः सर्गः ॥ ५२ ॥ लक्ष्मणजीके यह परमअद्भुत वाक्य श्रवण करके रामचन्द्रजी बडे प्रसन्न

इसप्रकारसे वचन कहनेलगे ॥ १ ॥ हे सौम्य ! जैसे तुम महाबुद्धिमान् मेरे वचन माननेवाले हो इस कालमें तुम सरीखा बन्धु मिलना विशेष करके कठिनहै ॥ २ ॥ हे शुभलक्षण ! जो कुछ मेरे हृदयमें वर्तमानहै उसको सुनकर तुम मेरे वचन मानो ॥ ३ ॥ आज चार दिन हुए कि मैंने राजकाज कुछभी नहीं देखा भालाहै न कुछ कियाहै इस कारण हे लक्ष्मण ! हमारे मर्मस्थानोंमें पीडा होतीहै ॥४॥ इससे पुरोहित मंत्री और सब प्रजाको बुलाओ और स्त्री पुरुष जो किसी कार्यकी रक्षा करतेहैं हे पुरुषश्रेष्ठ ! उन सबको बुलाओ ॥ ५ ॥ जो राजा प्रतिदिन पुरवासियोंके कार्यको नहीं करताहै वह वायुस्पर्शहीन घोर नरकमें पडताहै, इसमें कोई सन्देह नहीं ॥६॥ सुनो भाई पूर्वकालमें एक नृगनाम महायशस्वी राजा थे वह ब्राह्मणोंके माननेवाले,सत्यवादी,पवित्र, प्रजापालक थे॥ ७॥उन्होंने एकसमय बछडे सहित करोड

दुर्लभस्त्वादृशोबंधुरस्मिन्कालेविशेषतः॥ यादृशस्त्वंमहाबुद्धिर्ममसौम्यमनोनुगः ॥२॥ यच्चमेहृदयेकिंचिद्वर्ततेशुभलक्षण ॥ तन्निशामयचश्रुत्वा कुरुष्ववचनंमम ॥ ३ ॥ चत्वारोदिवसाःसौम्यकार्यंपौरजनस्यच ॥ अकुर्वाणस्यसौमित्रेतन्मेमर्माणिकृंतति ॥ ४ ॥ आहूयंतांप्रकृतयःपुरोधामंत्रिणस्तथा ॥ कार्यार्थिनश्चपुरुषाःस्त्रियोवापुरुषर्षभ ॥ ५ ॥ पौरकार्याणियोराजानकरोतिदिनेदिने ॥ संवृतेनरकेघोरेपतितोनात्रसंशयः ॥ ॥ ६ ॥ श्रूयतेहिपुराराजानृगोनाममहायशाः ॥ बभूवपृथिवीपालोब्रह्मण्यःसत्यवाक्शुचिः ॥ ७ ॥ सकदाचिद्गवांकोटीःसवत्साःस्वर्णभूषिताः ॥ नृदेवोभूमिदेवेभ्यःपुष्करेषुददौनृपः ॥ ८ ॥ ततःसंगाद्गताधेनुःसवत्सास्पर्शिताऽनघ ॥ ब्राह्मणस्याहिताग्नेस्तुदरिद्रस्योंछवर्तिनः॥ ९ ॥ सनष्टांगांक्षुधार्तोवैअन्विषंस्तत्रतत्रह ॥ नापश्यत्सर्वराष्ट्रेषुसंवत्सरगणान्बहून् ॥ १० ॥ ततःकनखलंगत्वाजीर्णवत्सांनिरामयाम् ॥ ददर्शतांस्वकांधेनुंब्राह्मणस्यनिवेशने ॥ ११ ॥ अथतांनामधेयेनस्वकेनोवाचब्राह्मणः ॥ आगच्छशबलेत्येवंसातुशुश्रावगौःस्वरम् ॥ १२ ॥

गाय सुवर्णके भूषणोंसे सजाय पुष्करक्षेत्रमें ब्राह्मणोंको दान करदीं॥८॥ हे पापरहित लक्ष्मणजी ! उनकी गायोंमें जो राजाने दान करनेके निमित्त मँगाईथी भूलसे किसी एक दरिद्री अग्निहोत्री उञ्छवृत्तिसे जीनेवाले ब्राह्मणकी गऊ आमिली ॥ ९ ॥ वहां ब्राह्मण भूखा प्यासा खोई हुई गौको इधर उधर ढूंढने लगा और कई वर्षतक राज्यभरमें कहीं उसकी गाय नहीं मिली ॥१०॥ चलते २ जब वह हरिद्वारके निकट कनखलमें आया तब उसने एक ब्राह्मणके यहां रोगरहित दुबले बछडेवाली अपनी गौ देखी ॥ ॥ ११ ॥ तब वह ब्राह्मण उस गायको अपने पोहले नामसे पुकारने लगा " हे शबले ! यहां आओ " सो ज्योंही गौने उस ब्राह्मणका यह शब्द सुना ॥ १२ ॥

गौ इस भूपाने चाबुक सरीकी समान वक्रगमन ब्राह्मणका स्वर पहचानकर वह गौ आनकर उसकेपीछे २ चलनेलगी ॥ १३ ॥ जिस ब्राह्मणके पासमें वह गौथी जो पालन करताथा वहभी उसके पीछे दौडा और शीघ्रतामें जाकर उस ऋषिसे बोला " कि यह गौ तो मेरी है ॥ १४ ॥ यह गौ मुझे राजेन्द्र नृगराजाने दानमें दीहै " इसप्रकारसे उन पंडित ब्राह्मणोंका परस्पर विवाद होनेलगा ॥ १५ ॥ और यह झगडा करते २ राजा नृगके पास गये परन्तु वह राजाकी आज्ञाके न मिलनेसे मंदिरमें प्रवेश न करसके ॥ १६ ॥ जब पडे २ कई दिन रात बीत गये तब वे दोनों ब्राह्मण क्रोधमें भरगये, तब वे महात्मा दोनों ब्राह्मणश्रेष्ठ क्रोधमें भरे और शापयुक्त वचन बोलने लगे ॥ १७ ॥ जब कि, अर्थियोंके कार्य सिद्ध करनेके निमित्त राजाने दर्शन नहीं दियाहै तो यह

नष्टवत्सग्मामायक्षुधार्तंग्यद्विजस्यवै ॥ अन्वगात्पृष्ठतःसागौर्गच्छंतंपावकोपमम् ॥१३॥ योपिपालयतेविप्रःसोपिगामन्वगाद्रुतम् ॥ गत्वाचत मृषिंतश्रेममगौरितिनिमत्वरन् ॥ १४ ॥ स्पर्शिनाराजसिंहेनममदत्तानृगेणह ॥ तयोर्ब्राह्मणयोर्वादोमहानासीद्विपश्चितोः ॥ १५ ॥ विवदंतौततो न्योन्यंदातारमभिजग्मतुः॥ तौराजभवनद्वारिनप्राप्तौनृगशासनम् ॥१६॥ अहोरात्राण्यनेकानिवसंतौक्रोधमीयतुः ॥ ऊचतुश्चमहात्मानौतावुभौ द्विजसत्तमौ ॥ क्रुद्धौपरममंप्राप्तौवाक्यंघोराभिसंहितम् ॥ १७ ॥ अर्थिनांकार्यसिद्ध्यर्थंयस्मात्त्वंनेपिदर्शनम् ॥ अदृश्यःसर्वभूतानांकृकलासो भविष्यसि ॥ १८ ॥ बहुवर्षसहस्राणिबहुवर्षशतानिच ॥ श्वभ्रेत्वंकृकलीभूतोदीर्घकालंनिवत्स्यसि ॥ १९ ॥ उत्पत्स्यतेहिलोकेस्मिन्यदूनां कीर्तिवर्धनः ॥ वासुदेवइतिख्यातोविष्णुःपुरुषविग्रहः ॥ २० ॥ सतेमोक्षयिताशापाद्राजंस्तस्माद्भविष्यसि ॥ कृताचतेनकालेननिष्कृतिस्ते भविष्यति ॥ २१ ॥ भारावतारणार्थंहिनरनारायणावुभौ ॥ उत्पत्स्येतेमहावीर्यौकलौयुगउपस्थिते ॥ २२ ॥ एवंतौशापमुत्सृज्यब्राह्मणौवि गतज्वरौ ॥ तांगांहिदुर्बलांवृद्धांददतुर्ब्राह्मणायवै ॥ २३ ॥

राजा सब प्राणियोंका अदृश्य गिरगिट होजायगा ॥ १८ ॥ सैकडों हजारों वर्ष एक सूखे कुएमें रहकर बहुत काल व्यतीत करेगा ॥ १९ ॥ जिस समय इस संसारमें यदुवंशकी कीर्ति बढानेवाले साक्षात् विष्णुजी वासुदेव नामसे शरीर धारण करेंगे ॥ २० ॥ हे राजा नृग वह तुझको इस योनिसे मोक्ष करेंगे अब तू गिरगट होगा परन्तु उस समय इस शापसे तेरी मुक्ति होजायगी ॥२१॥ नर और नारायण जिससमय द्वापरका अन्त और कलियुगका आरंभ होगा, उससमय पृथ्वीका भार दूर करनेके निमित्त अवतार धारण करेंगे ॥ २२ ॥ जब इसप्रकार उन दोनों ब्राह्मणोंका शाप देकर क्रोध शांत हुआ तब उन्होंने उस वृद्ध और दुर्बल गायको किसी और

शासनसे देकर अपना झगडा मिटाया ॥ २३ ॥ इसप्रकारसे वह राजा इस समय दारुण शापका फल भोग रहाहै, कार्यार्थियोंका झगडा न मिटानेसे राजाको दोष होताहै ॥ २४ ॥ इसकारण कार्यार्थियोंको शीघ्रतासे मेरे सामने लाओ, अच्छे कर्त्तव्य कार्यका फल राजा पाताही है ॥२५॥ इसकारण हे लक्ष्मण ! तुम जाकर देखते रहो कि, कौन कार्यार्थी (अर्जी देनेवाले) आतेहैं ॥ २६ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषाटीकायां त्रिपंचाशः सर्गः ॥५३॥ परम अर्थके जाननेवाले लक्ष्मणजी श्रीरामचन्द्रजीके वचन सुनकर तेजसे देदीप्यमान श्रीरामचन्द्रजीसे हाथ जोडकर कहनेलगे ॥ १ ॥ हे महाराज ! थोडे अपराधपरही उन ब्राह्मणोंने महान् राजर्षि नृगराजाको दूसरे यमदंडकी समान महाघोर शाप दिया ॥ २ ॥ हे पुरुषश्रेष्ठ ! उस समय राजा नृगने अपनेको महापा

एषसराजातंशापमुपभुंक्तेसुदारुणम् ॥ कार्यार्थिनांविमर्दोहिराज्ञांदोषायकल्पते ॥ २४ ॥ तच्छीघ्रंदर्शनंमह्यमभिवर्ततुकार्यिणः ॥ सुकृतस्यहि कार्यस्यफलंनावेतिपार्थिवः ॥ २५ ॥ तस्माद्गच्छप्रतीक्षस्वसौमित्रेकार्यवाञ्जनः ॥ २६ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे त्रिपंचाशः सर्गः ॥ ५३ ॥ रामस्यभाषितंश्रुत्वालक्ष्मणःपरमार्थवित् ॥ उवाचप्रांजलिर्वाक्यंराघवंदीप्ततेजसम् ॥ १ ॥ अल्पापराधेकाकुत्स्थद्विजाभ्यांशापईदृशः ॥ महान्नृगस्यराजर्षेर्यमदण्डइवापरः ॥२॥ श्रुत्वातुपापसंयुक्तमात्मानंपुरुषर्षभ ॥ किमुवाचनृगोराजाद्विजौक्रोधसमन्वितौ ॥ ३ ॥ लक्ष्मणेनैवमुक्तस्तुराघवःपुनरब्रवीत् ॥ शृणुसौम्ययथापूर्वंसराजाशापविक्षतः ॥ ४ ॥ अथाध्वनिगतौविप्रौविज्ञायसनृपस्तदा ॥ आहूयमंत्रिणःसर्वान्नैगमान्सपुरोधसः ॥ ५ ॥ तानुवाचनृगोराजासर्वाश्चप्रकृतीस्तथा ॥ दुःखेनसुसमाविष्टःश्रूयतांमेसमाहिताः ॥ ६ ॥ नारदःपर्वतश्चैवममदत्त्वामहद्भयम् ॥ गतौत्रिभुवनंभद्रौवायुभूतावनिंदितौ ॥ ७ ॥ कुमारोयंवसुर्नामसचेहाद्याभिषिच्यताम् ॥ श्वभ्रं नयत्सुखस्पर्शंक्रियतांशिल्पिभिर्मम ॥ ८ ॥

युक्त शापी सुनकर उन क्रोधी ब्राह्मणोंसे क्या कहा सो कहिये ॥ ३ ॥ जब लक्ष्मणजीने यह पूछा तब रामचन्द्रजी फिर कहने लगे कि, हे सौम्य ! क्रमसे सुनिये जब राजाने शाप सुनकर उन ब्राह्मणोंसे कहा ॥ ४ ॥ जब वे ब्राह्मण वहांसे आकाशमार्ग होकर चले गये, तो राजाने यह सब बात जानकर पुरवासी पुरोहित और सब मंत्रियोंको बुलाया ॥ ५ ॥ उस समय राजा बडे दुःखमें प्राप्त होकर उन सब प्रजाके लोगोंसे कहने लगे हे महात्माओ ! सब सावधान होकर मेरे वचनको सुनो ॥ ६ ॥ नारद और पर्वत ऋषि आनकर मुझे शापकी कथा सुनाकर बडा भय दे वायुवेगसे ब्रह्मलोकको चलेगये ॥ ७ ॥ यह हमारा वसुनामक पुत्रहै, इसे यौवराज्यमें आजही अभिषेक कराना चाहताहूं, और शिल्पियोंके द्वारा एक ऐसा गढा (गर्त) बनवाया जाय जो

अच्छाहो ॥ ८ ॥ जिसस्थानमें निवास करके मैं ब्राह्मणोंका शाप बिताऊंगा, एक गर्त तो ऐसा बनाओ जहां वर्षाकी बाधा न हो, एक ऐसा जिसमें शीतकी बाधा न हो ॥ ९ ॥ एक ऐसा जिसमें ग्रीष्मकी बाधा न हो, ऐसा सुखस्पर्शवाला कारीगरोंके द्वारा गर्त बनाया जावे, जो फलवाले वृक्ष और फूलोंवाली लता ॥ १० ॥ य और छायावाले अनेक प्रकारके गुल्म वहां लगाये जावें, यह गर्त चारोंओरसे शोभायमान बनाये जावें ॥ ११ ॥ जहां मैं शापके अन्ततक सुखपूर्वक वास करूंगा, और वहां ऐसे सुगन्धिके वृक्ष लगाओ जिनमें सदा फूल खिलते रहें ॥ १२ ॥ और ऐसा करो कि, वहां फुलवाडियें दो कोश पर्यंत लगाई जायँ, यह सब विधानकर और उसमें अनेक ऐश्वर्यका स्थापन करके ॥ १३ ॥ पुत्रसे कहा हे पुत्र ! पुत्रकी नांई तुमको नित्यप्रति प्रजापालन करना उचित है, असावधानीका

यत्राहंसंशयिष्यामिशापंब्राह्मणनिःसृतम् ॥ वर्षघ्नमेकंश्वभ्रंतुहिमघ्नमपरंतथा ॥ ९ ॥ ग्रीष्मघ्नंतुसुखस्पर्शमेकंकुर्वंतुशिल्पिनः ॥ फलवंतश्चयेवृक्षाःपुष्पवत्यश्चयालताः ॥ १० ॥ विरोप्यंतांबहुविधाश्छायावंतश्चगुल्मिनः ॥ क्रियतांरमणीयंचश्वभ्राणांसर्वतोदिशम् ॥ ११ ॥ सुखमत्रवसिष्यामियावत्कालस्यपर्ययः ॥ पुष्पाणिचसुगंधीनिक्रियंतांतेषुनित्यशः ॥ १२ ॥ परिवार्ययथामेस्युरध्यर्धयोजनंतथा ॥ एवंकृत्वाविधानंससन्निवेश्यसुतंतदा ॥ १३ ॥ धर्मनित्यःप्रजाःपुत्रक्षत्रधर्मेणपालय ॥ प्रत्यक्षंतेयथाशापोद्विजाभ्यांमयिपातितः ॥ १४ ॥ नरश्रेष्ठसरोषाभ्यामपराधेपिताहशे ॥ माकृथास्त्वनुसंतापंमत्कृतेहिनरर्षभ ॥ १५ ॥ कृतांतःकुशलःपुत्रयेनास्मिव्यसनीकृतः ॥ प्राप्तव्यान्येवप्राप्नोतिगंतव्यान्येवगच्छति॥१६॥ लब्धव्यान्येवलभतेदुःखानिचसुखानिच ॥ पूर्वेजात्यंतरेवत्समाविषादंकुरुष्वह ॥१७॥ एवमुक्त्वानृपस्तत्रसुतंराजामहायशाः ॥ श्वभ्रंजगामसुकृतंवासायपुरुषर्षभ ॥ १८ ॥

गया यह प्रत्यक्षहीहै कि, ब्राह्मणोंने यह मुझे शाप दिया ॥ १४ ॥ हे नरश्रेष्ठ पुत्र ! ऐसे क्रोधसे दिये हुए शापमें मेरे प्रति तुमको संताप करना उचित नहीं है ॥ ॥ १५ ॥ हे पुत्र ! पूर्वकर्मही प्रधानहै, जिसने मुझे व्यसनमें डालदियाहै, जो वस्तु प्राप्त होनेके योग्यहै वह प्राप्त होती है और जो जानेयोग्यहै वह जायेजातेहैं ॥ ॥ १६ ॥ जो दुःख सुख होनहार हैं वह आनकर प्राप्त होतेही हैं । जो कुछ प्रथम जन्ममें दूसरी जातीमें कर आयेहैं वह भोगना पडेगा, इस कारण हे पुत्र ! विषाद मत करो ॥ १७ ॥ हे पुरुषश्रेष्ठ ! इस प्रकारसे वह यशस्वी राजा अपने पुत्रसे कहकर उस अच्छे बनाये हुए गर्तमें वास करनेको चलागया ॥ १८ ॥

इस प्रकारसे उस समय उस राजाने अनेक रत्नोंसे परिपूर्ण महागर्तमें प्रवेश किया और वहां रहकर वह महात्मा क्रोधित ब्राह्मणोंके शापको अनुभव करता हुआ॥ १९॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषाटीकायां चतुःपंचाशः सर्गः ॥ ५४ ॥ इसके उपरान्त रामचन्द्रजी बोले हे लक्ष्मण ! तुमको नृगके शापकी विचार पूर्वक कथा सुना दी और कुछ सुननेकी इच्छा हो तो एक और कथा सुनाऊं ॥ १ ॥ रामचन्द्रजीके यह वचन सुनकर लक्ष्मणजी कहनेलगे, हे महाराज ! इन आश्चर्यकी कथाओंके श्रवण करनेसे मेरी तृप्ति नहीं होती ॥ २ ॥ जिस समय लक्ष्मणजीने यह वार्ता कही; तब इक्ष्वाकुनंदन श्रीरामचन्द्रजी परम धर्मयुक्त कथा कहने लगे ॥ ३ ॥ कि, एक इक्ष्वाकुओंमें निमिनामक राजा थे, यह इक्ष्वाकुके बारहवें पुत्र थे, वीर्य और धर्ममें निष्ठावाले थे ॥ ४ ॥

एवंप्रविश्येवनृपस्तदानींश्वभ्रंमहद्रत्नविभूषितंतम् ॥ संपादयामासतदामहात्माशापंद्विजाभ्यांहिरुपाविमुक्तम् ॥ १९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे चतुष्पंचाशः सर्गः ॥ ५४ ॥ एषतेनृगशापस्यविस्तरोभिहितोमया ॥ यद्यस्तिश्रवणेश्रद्धाशृणुष्वेहापरां कथाम् ॥१॥ एवमुक्तस्तुरामेणसौमित्रिःपुनरब्रवीत् ॥ तृप्तिराश्चर्यभूतानांकथानांनास्तिमेनृप ॥२॥ लक्ष्मणेनैवमुक्तस्तुरामइक्ष्वाकुनंदनः॥ कथां परमधर्मिष्ठांव्याहर्तुमुपचक्रमे ॥ ३ ॥ आसीद्राजानिमिर्नामइक्ष्वाकूणांमहात्मनाम् ॥ पुत्रोद्वादशमोवीर्येधर्मेचपरिनिष्ठितः ॥४॥ सराजावीर्य संपन्नःपुरंदेवपुरोपमम् ॥ निवेशयामासतदाअभ्याशेगौतमस्यतु ॥ ५ ॥ पुरस्यसुकृतंनामवैजयंतमितिश्रुतम् ॥ निवेशंयत्रराजर्षिर्निमिश्चक्रे महायशाः ॥ ६ ॥ तस्यबुद्धिःसमुत्पन्नानिवेश्यसुमहापुरम् ॥ यजेयंदीर्घसत्रेणपितुःप्रह्लादयन्मनः ॥ ७ ॥ ततःपितरमामंत्र्यइक्ष्वाकुंहिमनोः सुतम् ॥ वसिष्ठंवरयामासपूर्वंब्रह्मर्षिसत्तमम् ॥ ८ ॥ अनंतरंसराजर्षिर्निमिरिक्ष्वाकुनंदनः ॥ अत्रिमंगिरसंचैवभृगुंचैवतपोनिधिम् ॥ ९ ॥ तमुवाचवसिष्ठस्तुनिमिंराजर्षिसत्तमम् ॥ वृतोहंपूर्वमिंद्रेणअंतरंप्रतिपालय ॥ १० ॥

यह बडे बली राजा गौतमजीके आश्रमके निकट देवताओंकी नगरीकी समान एक नगरमें वास करतेथे ॥५॥ उस श्रेष्ठ पुरका वैजयन्त नाम था जिसमें महायशस्वी राजा निमि वास करतेथे ॥ ६ ॥ उस पुरमें वास करते २ उनकी बुद्धिमें यह बात समाई कि, हम अपने पिताको प्रसन्न करतेहुए एक बडे यज्ञका विधान करें जो बहुतदिनोंमें समाप्तहो ॥७॥ यह मनमें विचार मनुके पुत्र इक्ष्वाकुने अपने पितासे मंत्रणा करके ब्रह्मर्षियोंमें श्रेष्ठ वसिष्ठजीको यज्ञमें वरण किया ॥ ८ ॥ हे लक्ष्मण ! उसके उपरान्त इक्ष्वाकुपुत्र राजर्षि निमिने अत्रि, अंगिरा और तपोधन भृगुको वरण किया ॥ ९ ॥ उस समय वसिष्ठजी राजर्षिश्रेष्ठ निमिसे कहनेलगे कि, मैं [illegible]

[illegible] ॥ १० ॥ यह कह महातेजस्वी वसिष्ठजी [illegible] अपने पुरके निकट यज्ञ करते हुए ॥ ११ ॥ [illegible] ॥ १२ ॥ पाँच हजार वर्षतक राजा यज्ञकी [illegible] इस प्रकार निमिराज [illegible] रहित हैं यज्ञ करानेके निमित्त राजाके निकट आये, देखें तो गौतम [illegible] और उस समय राजासे मिलनेके लि [illegible]

[illegible] मालूम है इस कारणसे तुम कुछ काल [illegible] ठहरो ॥ १० ॥ यह कह महातेजस्वी वसिष्ठजी इन्द्रके यहां यज्ञ करानेलगे इधर [illegible] गौतमऋषिने [illegible] यज्ञ करनेको स्थित हुए ॥ ११ ॥ इस प्रकार निमिराज उन ब्राह्मणोंको संग लेकर हिमालयके पार्श्वमें [illegible] यज्ञ करते हुए ॥ १२ ॥ पांच हजार वर्षतक राजा यज्ञकी दीक्षामें रहे, इधर इन्द्रके यज्ञ पूर्णहोनेपर भगवान् वसिष्ठजी ॥ १३ ॥ जो निंदा रहित हैं यज्ञ करानेके निमित्त राजाके निकट आये, वहां गौतमजीने उस यज्ञको पूर्ण करदी दिखाई ॥ १४ ॥ देखतेही ब्रह्माजीके पुत्र वसिष्ठजी क्रोधमें भरगये [illegible] उस समय राजाके मिलनेके लिये उनके द्वारपर एक मुहूर्त भरतक स्थित रहे उस दिन राजा अधिक निद्राके कारण सोगयेथे ॥ १५ ॥ यह

अनंतरंमहातेजागौतमस्याभ्यपूरयत् ॥ वसिष्ठोपिमहातेजाइंद्रयज्ञमथाकरोत् ॥११॥ निमिस्तुराजाविप्रांस्तान्समानीयनराधिपः ॥ अयजद्धिमवत्पार्श्वेस्वपुरस्यसमीपतः॥१२॥ पंचवर्षसहस्राणिराजादीक्षामथाकरोत् ॥ इंद्रयज्ञावसानेतुवसिष्ठोभगवानृषिः ॥१३॥ सकाशमागतोराज्ञोहौत्रंकर्तुमनिंदितः ॥ तदंतरमथापश्यद्गौतमेनाभिपूरितम् ॥१४॥ कोपेनमहताविष्टोवसिष्ठोब्रह्मणःसुतः॥ सराज्ञोदर्शनाकांक्षीमुहूर्तंसमुपाविशत् ॥ तस्मिन्नहनिराजर्षिर्निद्रयापहृतोभृशम् ॥१५॥ ततोमन्युर्वसिष्ठस्यप्रादुरासीन्महात्मनः ॥ अदर्शनेनराजर्षेर्व्याहर्तुमुपचक्रमे ॥१६॥ यस्मात्त्वमन्यंवृतवान्मामवज्ञायपार्थिव ॥ चेतनेनविनाभूतोदेहस्तेपार्थिवैष्यति॥१७॥ ततःप्रबुद्धोराजातुश्रुत्वाशापमुदाहृतम् ॥ ब्रह्मयोनिमथोवाचसराजाक्रोधमूर्छितः॥१८॥ अजानतःशयानस्यक्रोधेनकलुषीकृतः॥ उक्तवान्ममशापाग्निंयमदंडमिवापरम्॥१९॥ तस्मात्तवापिब्रह्मर्षेचेतनेनविनाकृतः॥ देहःसुरुचिरप्रख्योभविष्यतिनसंशयः ॥२०॥ इतिरोषवशादुभौतदानीमन्योन्यंशपितौनृपद्विजेंद्रौ ॥ सहसैवबभूवतुर्विदेहौतत्तुल्याधिगतप्रभाववंतौ ॥ २१ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्ये उत्तरकांडे पंचपंचाशः सर्गः ॥ ५५ ॥

देखकर वसिष्ठजीका क्रोध औरभी बढ़गया, राजाके दर्शन न पानेसे इस प्रकार कहनेलगे ॥ १६ ॥ हे राजन् ! जो कि तुमने मेरा निरादर करके औरका वरण किया है इस कारण तेरा देह जीवरहित हो जायगा ॥ १७ ॥ जब राजाने जागकर यह शापकी व्यवस्था सुनी तो वह राजाभी महाक्रोधितहो वसिष्ठजीको शाप देने लगे ॥१८॥ आपने मुझ सोतेहुएपर बिना जाने क्रोधके वशमें दूसरे यमदंडकी नाईं जो शापाग्नि गिराई है ॥१९॥ इस कारणसे हे महर्षे ! तुम्हारी सुन्दर देह भी बिना जीवके बहुत कालतक रहेगी ॥ २० ॥ इस प्रकारसे वह राजेन्द्र और द्विजेन्द्र क्रोधके वशीभूतहो एक दूसरेको उस समय शाप देकर दोनोंही बराबर प्रभाव वाले होंगे कारण बराबर देहरहित होगये ॥ २१ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्ये उत्तरकांडे भाषाटीकायां पञ्चपञ्चाशः सर्गः ॥ ५५ ॥

शत्रुघाती लक्ष्मणजी रघुनाथजीके वचन सुनकर हाथ जोड महातेजस्वी रघुनाथजीसे बोले ॥ १ ॥ हे रघुनाथजी ! देवताओंसे पूजित वह राजा और देहरहित होकर फिर किसप्रकारसे देह संयोगको प्राप्त हुए ॥२॥ लक्ष्मणजीके यह वचन सुनकर इक्ष्वाकुकुलनन्दन पुरुषश्रेष्ठ दीप्तिमान् रघुनाथजी बोले ॥ ३ वह दोनों धर्मात्मा परस्पर शापके कारण देहत्यागन करके तपस्वी विप्रर्षि और राजा वायुरूप होगये ॥ ४ ॥ अब महामुनि महातेजस्वी वसिष्ठजी शरीर दूसरे स्थूल शरीरसे प्राप्त होनेके निमित्त अपने पिता ब्रह्माजीके पास गये ॥ ५ ॥ वहां जायकर वह धर्म जाननेवाले वायुभूत शरीर वसिष्ठजी देवदेवके च अभिवादन करके ब्रह्माजीसे इस प्रकार कहनेलगे ॥६॥ हे भगवन् ! मैं निमिके शापसे विदेहपनको प्राप्त होगया हूं, हे अंडसे उत्पन्न ! हे देवदेव ! हे महा

रामस्यभाषितंश्रुत्वालक्ष्मणःपरवीरहा ॥ उवाचप्रांजलिर्भूत्वाराघवंदीप्ततेजसम् ॥ १ ॥ निक्षिप्यदेहौकाकुत्स्थकथंतौद्विजपार्थिवौ ॥ पुनर्दे संयोगंजग्मतुर्देवसंमतौ ॥ २ ॥ लक्ष्मणेनैवमुक्तस्तुरामइक्ष्वाकुनंदनः ॥ प्रत्युवाचमहातेजालक्ष्मणंपुरुषर्षभः ॥ ३ ॥ तौपरस्परशापेनदेहमु ज्यधार्मिकौ ॥ अभूतांनृपविप्रर्षीवायुभूतौतपोधनौ ॥४॥ अशरीरःशरीरस्यकृतेन्यस्यमहामुनिः ॥ वसिष्ठस्तुमहातेजाजगामपितुरंतिकम् ॥ ५ ॥ सोभिवाद्यततःपादौदेवदेवस्यधर्मवित् ॥ पितामहमथोवाचवायुभूतइदंवचः ॥ ६ ॥भगवन्निमिशापेनविदेहत्वमुपागमम् ॥ देवदेवमहादेववायु तोहमंडज ॥७॥ सर्वेषांदेहहीनानांमहद्दुःखंभविष्यति ॥ लुप्यंतेसर्वकार्याणिहीनदेहस्यवैप्रभो ॥८॥ देहस्यान्यस्यसद्भावेप्रसादंकर्तुमर्हसि ॥ तम वाचततोब्रह्मास्वयंभूरमितप्रभः ॥ ९ ॥ मित्रावरुणजंतेजआविशत्वंमहायशः ॥ अयोनिजस्त्वंभवितातत्रापिद्विजसत्तम ॥ धर्मेणमहतायुक्तः पुनरेष्यसिमेवशम् ॥ १० ॥ एवमुक्तस्तुदेवेनअभिवाद्यप्रदक्षिणम् ॥ कृत्वापितामहंतूर्णंप्रययौवरुणालयम् ॥ ११ ॥ तमेवकालंमित्रोपिवरु णत्वमकारयत् ॥ क्षीरोदेनसहोपेतःपूज्यमानःसुरेश्वरैः ॥ १२ ॥

वायुभूत हो रहाहूं ॥ ७ ॥ प्रभो ! शरीररहित सबहीको बडा दुःख होताहै, और हीनदेहकी इस लोक तथा परलोककी सब क्रिया नष्ट होजातीहैं ॥ ८ ॥ जिस प्रकारसे मुझे और देह प्राप्त होजाय ऐसी कृपा आप कीजिये, यह वचन सुन बडे प्रभाववाले स्वयंभू ब्रह्माजी उनसे बोले ॥ ९ ॥ हे महायश ! तुम मित्र और वरुणके तेज वीर्यमें प्रवेश कर जाओ, हे द्विजश्रेष्ठ ! वहां भी तुम अयोनिज रहोगे और धर्मसे युक्त होकर तुम मेरे पुत्रत्वको प्राप्त हो ज्ञानी और प्रजापति रहोगे ॥ १० ॥ जब पितामह ब्रह्माजीने ऐसा कहा तो उनको अभिवादन कर प्रदक्षिणा करके वरुणलोकको गये ॥ ११ ॥ उसी समयमें मित्र

[illegible] देखकर वहां आये और तपस्याका कार्य करने लगे और श्रीसागरको प्राप्त हुए मायही मित्रजीभी गये ॥ १२ ॥ उसी
[illegible] उर्वशी अपनी इच्छासे सखियोंको साथ लिये विचरती हुई उस देशमें आनकर प्राप्त हुई ॥ १३ ॥ वरुणालयमें उस रूपयौवनसम्पन्न उर्वशी
[illegible] क्रीडा करतीहुआ देखकर उसकी प्रीतिके निमित्त वरुणजीको बडी प्रसन्नता हुई ॥ १४ ॥ उस कमलनेत्रा पूर्णचन्द्रमुखी श्रेष्ठ अप्सराको वरुणजी
[illegible] निमित्त वरण करते हुए ॥ १५ ॥ तब वह अप्सरा हाथ जोडकर वरुणजीसे बोली हे सुरेश्वर ! इस समय साक्षात् मित्रजीने हमें वरण कियाहै ॥
॥ १६ ॥ तब वरुणजी कामसे पीडित होकर कहने लगे जो ऐसाहै तो तेरे दर्शनसे क्षुभितहुए आने इस वीर्यको हम पुत्रोत्पत्तिकी सामर्थ्यवाले देवताओंके

एतस्मिन्नंतरेकालेतूर्वशीवरमाप्सराः ॥ यदृच्छयानमुद्देशमागतासखिभिर्वृता ॥ १३ ॥ दृष्ट्वातांरूपसंपन्नांक्रीडतींवरुणालये ॥ तदाविशत्प
रोहर्षोवरुणंतोरंगीकृते ॥ १४ ॥ सतांपद्मपलाशाक्षींपूर्णचंद्रनिभाननाम् ॥ वरुणोवरयामाससमैथुनायाप्सरोवराम् ॥ १५ ॥ प्रत्युवाचततः
सातुवरुणंप्राञ्जलिःस्थिता ॥ मित्रेणाहंवृतासाक्षात्पूर्वमेवसुरेश्वर ॥१६॥ वरुणस्त्वत्रवीद्वाक्यंकंदर्पशरपीडितः ॥ इदंतेजःसमुत्स्रक्ष्येकुंभेस्मिन्दे
वनिर्मिते ॥१७॥ एवमुत्सृज्यसुश्रोणित्वय्यहंवरवर्णिनि ॥ कृतकामोभविष्यामियदिनेच्छसिसंगमम् ॥१८॥ तस्यतल्लोकनाथस्यवरुणस्यसुभा
षितम् ॥ उर्वशीपरमप्रीताश्रुत्वावाक्यमुवाचह ॥ १९ ॥ काममेतद्भवत्वेवंहृदयंमेत्वयिस्थितम् ॥ भावश्चाप्यधिकंतुभ्यंदेहोमित्रस्यतुप्रभो॥२०॥
उर्वश्याएवमुक्तस्तुरेतस्तत्सुमहदद्भुतम् ॥ ज्वलदग्निसमप्रख्यंतस्मिन्कुंभेन्यवासृजत् ॥ २१ ॥ उर्वशीत्वगमत्तत्रमित्रोवैयत्रदेवता ॥ तांतुमित्रः
सुसंक्रुद्धउर्वशीमिदमब्रवीत् ॥ २२ ॥ मयाऽभिमंत्रितापूर्वंकस्मात्त्वमवसर्जिता ॥ पतिमन्यंवृतवतीकिमर्थंदुष्टचारिणि ॥ २३ ॥

बनाये इस घडेमें स्थापन करतेहैं ॥ १७ ॥ हे सुन्दरनितम्बोंवाली ! जो तू मेरे संगकी इच्छा नहीं करतीहै तो तेरे निमित्त इस घटमें वीर्य स्थापन कर काम
भोगकी समान कृतकाम हूंगा ॥ १८ ॥ उस लोकनाथ वरुणके यह वचन सुनकर उर्वशी परम प्रसन्न होकर यह वचन कहने लगी ॥ १९ ॥ यह बात ऐसेही
हो क्योंकि तुमभी मेरे हृदयमें अधिक वस रहेहो और भावद्वाराही हमारा तुम्हारा भोग हो कारण कि, इस समय यह देह तो मित्रके निमित्त देचुकी
हूं ॥२०॥ जब उर्वशीने ऐसा कहा तो वह परम अद्भुत वीर्य जो जलतीहुई अग्निकी समान था उस घडेमें छोडदिया ॥ २१ ॥ और उर्वशी वहां गई जहां मित्र देवता
थे, तब मित्रजी उर्वशीको देखकर क्रोधमें कहने लगे ॥ २२ ॥ हे दुराचारिणी ! जब कि तुझे मैंने बुलायाथा तो कैसे तुमने मुझसे मिले विना दूसरे पतिका वरण

किया ॥ २३ ॥ इस पापसे तू मेरे क्रोधसे कलुषित होकर कुछकाल पर्यन्त मृत्यु लोकमें वास करेगी ॥ २४ ॥ हे कुबुद्धिनी ! काशीराज बुधके पुत्र राजर्षिपुरू रवाके निकट जाकर प्राप्तहो वह तेरा भर्ता होगा॥२५॥तब वह अप्सरा शाप दोषसे पुरूरवाके पास आई, यह पुरूरवा बुधके औरस पुत्र प्रतिष्ठानपुरमें वास करतेथे॥ ॥ २६ ॥ उससे उन राजाके श्रीमान् आयुनाम पुत्र वडे वली उत्पन्न हुए जिनके पुत्र इन्द्रकी समान कांतिवाले नहुषजी हुए ॥ २७ ॥ जिन राजा नहुषने "वृत्रासुरके ऊपर वज्र चलानेसे ब्रह्महत्याको प्राप्त हुए इन्द्रके छिपनेपर बहुत हजार वर्षतक इन्द्रलोकका राज्य किया" ॥ २८ ॥ वह सुन्दरदंत और सुन्दर नेत्र वाली उर्वशी मित्रके शापवश भूलोकमें प्राप्त हुई और बहुत वर्षतक मनुष्यलोकमें वास किया, शापक्षय होनेपर फिर इन्द्रलोकको गई ॥ २९ ॥ इत्यार्षे

अनेनदुष्कृतेनत्वंमत्क्रोधकलुषीकृता ॥ मनुष्यलोकमास्थायकंचित्कालंनिवत्स्यसि ॥ २४ ॥ बुधस्यपुत्रोराजर्षिःकाशिराजःपुरूरवाः ॥ तमभ्यागच्छदुर्बुद्धेसतेभर्ताभविष्यति ॥ २५ ॥ ततःसाशापदोषेणपुरूरवसमभ्यगात् ॥ प्रतिष्ठानेपुरुरवंबुधस्यात्मजमौरसम् ॥ २६ ॥ तस्य जज्ञेततःश्रीमानायुःपुत्रोमहाबलः ॥ नहुषोयस्यपुत्रस्तुबभूवेंद्रसमद्युतिः ॥ २७ ॥ वज्रमुत्सृज्यवृत्रायश्रांतेथत्रिदिवेश्वरे ॥ शतंवर्षसहस्राणियेनेंद्रत्वंप्रशासितम् ॥ २८ ॥ सातेनशापेनजगामभूमिंतदोर्वशीचारुदतीसुनेत्रा ॥ बहूनिवर्षाण्यवसच्चसुभ्रूःशापक्षयादिंद्रसदोययौच ॥ २९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे षट्पंचाशःसर्गः ॥ ५६ ॥ तांश्रुत्वादिव्यसंकाशांकथामद्भुतदर्शनाम् ॥ लक्ष्मणः परमप्रीतोराघवंवाक्यमब्रवीत् ॥ १ ॥ निक्षिप्तदेहौकाकुत्स्थकथंतौद्विजपार्थिवौ ॥ पुनर्देहेनसंयोगंजग्मतुर्देवसंमतौ ॥ २ ॥ तस्यतद्भाषितंश्रुत्वा रामःसत्यपराक्रमः ॥ तांकथांकथयामासवसिष्ठस्यमहात्मनः ॥ ३ ॥ यःसकुंभोरघुश्रेष्ठतेजःपूर्णोमहात्मनोः ॥ तस्मिंस्तेजोमयौविप्रौसंभूता नृपिसत्तमौ ॥ ४ ॥ पूर्वंसमभवत्तत्रअगस्त्योभगवानृषिः ॥ नाहंसुतस्तवेत्युक्त्वामित्रंतस्मादपाक्रमत् ॥ ५ ॥

श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषाटीकायां षट्पंचाशः सर्गः ॥ ५६ ॥ इस प्रकारसे परम दिव्य अद्भुत दर्शनयुक्त कथाको रघुनाथजीके मुखसे श्रवण कर लक्ष्मणजी परम प्रसन्नहो रघुनाथजीसे बोले ॥ १ ॥ हे रामचन्द्रजी ! जब उन देवपूजित ब्राह्मण और राजाने अपना शरीर त्यागन किया वो फिर किस प्रकारसे वे देहयोगको प्राप्त हुए ॥२॥ सत्यपराक्रमी श्रीरामचन्द्रजी इस प्रकार लक्ष्मणके वचन सुनकर उन महात्मा वसिष्ठजीकी उस कथाको कहनेलगे ॥ ३ ॥ हे भ्राता लक्ष्मण! जो वह घडा उन महात्माके वीर्यसे पूर्ण हुआथा उसमेंसे तेजस्वी दो ऋषिश्रेष्ठ उत्पन्नहुए ॥४॥ पहले तो उसमेंसे भगवान् [illegible]

कल्याणकामी हूं " यह मित्रजीने कहकर वहांसे चलेगये ॥ ५ ॥ कारण कि, उर्वशीमें मित्रका तेज पूर्वसे विराजितथा उस कुंभमें वरुणजीने अपना तेज स्थापित कि
उसमें प्रथम मित्रका तेज आगयाथा ॥ ६ ॥ (इसी कारण अगस्त्यजीने कहा कि, मैं केवल तुम्हारा पुत्र नहींहूं; इसी कारण अगस्त्यजीको मैत्रावरुणि कहते हैं)
दिनों उपरान्त मित्रावरुणके तेजसे अपने तेजसे देदीप्यमान इक्ष्वाकुकुलके पूज्य वसिष्ठजी उत्पन्न हुए ॥ ७ ॥ उन निन्दारहितके उत्पन्न होतेही इक्ष्वाकु महार
कहा, आप हमारे वंशके कल्याणके निमित्त पुरोहित हूजिये ॥ ८ ॥ हे लक्ष्मण! इस प्रकारसे तो महात्मा वसिष्ठजीको नूतन देहकी प्राप्ति हुई
सौम्य! अब निमिजीका वृत्तांत सुनिये ॥९॥ निमि राजाको विदेह देखकर यह सब ऋषि जो बडे बुद्धिमान्थे उनको निमि दीक्षाकर्ममें नियुक्त करते हुए॥१

तद्धितेजस्तुमित्रस्यउर्वश्यांपूर्वमाहितम् ॥ तस्मिन्समभवत्कुंभेतत्तेजोयत्रवारुणम् ॥ ६ ॥ कस्यचित्त्वथकालस्यमित्रावरुणसंभवः ॥ वसि
स्तेजसायुक्तोजज्ञेइक्ष्वाकुदैवतम् ॥ ७ ॥ तमिक्ष्वाकुर्महातेजाजातमात्रमनिंदितम् ॥ वव्रेपुरोधसंसौम्यवंशस्यास्यहितायनः ॥ ८ ॥ एवंत्वपू
देहस्यवसिष्ठस्यमहात्मनः ॥ कथितोनिर्गमःसौम्यनिमेःशृणुयथाभवत् ॥ ९ ॥ दृष्ट्वाविदेहंराजानमृषयःसर्वएवते ॥ तंचतेयोजयामासुर्यज्ञदी
मनीषिणः ॥ १० ॥ तंचदेहंनरेंद्रस्यरक्षंतिस्मद्विजोत्तमाः ॥ गंधैर्माल्यैश्चवस्त्रैश्चपौरभृत्यसमन्विताः ॥११॥ ततोयज्ञेसमाप्तेतुभृगुस्तत्रेदमब्र
व ॥ आनयिष्यामितेचेतस्तुष्टोस्मितवपार्थिव ॥ १२ ॥ सुप्रीताश्चसुराःसर्वेनिमेश्चेतस्तदाब्रुवन् ॥ वरंवरयराजर्षेकतेचेतोनिरूप्यताम् ॥ १३
एवमुक्तःसुरैःसर्वैर्निमेश्चेतस्तदाब्रवीत् ॥ नेत्रेषुसर्वभूतानांवसेयंसुरसत्तमाः ॥ १४ ॥ बाढमित्येवविबुधानिमेश्चेतस्तदाब्रुवन् ॥ नेत्रेषुसर्वभूता
वायुभूतश्चरिष्यसि ॥ १५ ॥ त्वत्कृतेचनिमिष्यंतिचक्षूंषिपृथिवीपते ॥ वायुभूतेनचरताविश्रामार्थंमुहुर्मुहुः ॥ १६ ॥

वह ब्राह्मणश्रेष्ठ उस राजाके देहकी वेलकटाहमें रक्षा करने लगे, और गंधमाला वस्त्रादिसे रक्षित किया, और पुरवासी भृत्यादि सब सावधान र
जिससे देह न बिगडे ॥ ११ ॥ जब यज्ञ समाप्त हुआ उस समय भृगुजी यह बोले हे राजन्! मैं तुम्हारे ऊपर प्रसन्नहूं, इस कारण तुम्हारे देहमें तुम्हारे आत्म
लाताहूं ॥ १२ ॥ इस ओर सब देवताभी आकर निमिसे कहनेलगे हे राजर्षि! वर मांगिये कि, हम आपका जीव कहां स्थापन करें ॥ १३ ॥ जब संपूर्ण
ताओंने ऐसा कहा तब निमिका आत्मा कहने लगा हे देवताओ! हम सब प्राणियोंके नेत्रोंमें बसनेकी इच्छा करते हैं ॥ १४ ॥ बहुत अच्छा कह
संपूर्ण देवताओंने कहा कि, आप वायुरूपसे सब प्राणियोंकी देहोंमें निवास करोगे ॥ १५ ॥ हे राजन्! जब वायुरूप होकर आप सब प्राणियोंके ने

वाम करोगे वो विश्रामके निमित्त संपूर्ण प्राणियोंके नेत्र पलक लगा करेंगे ॥ १६ ॥ यह कहकर सब देवता अपने स्थानको चलेगये और तब महात्मा ऋषिभी निमिके देहको लेकर ॥ १७ ॥ उसमें अरणि डालकर पराक्रमसे हवनके मंत्र पढकर वे सब महात्मा निमिके पुत्र होनेके निमित्त हवनके मंत्रोंसे मथन करनेलगे ॥ ॥ १८ ॥ जब इस प्रकार अरणीद्वारा देह मथन किया तब उससे महातपस्वी पुरुषका जन्म हुआ मथनेसे उत्पन्न होनेके कारण मिथिनाम हुआ जनन अर्थात् प्रादुर्भूत होनेसे जनक कहलाये ॥ १९ ॥ और चेतन रहित देहसे उत्पन्न होनेके कारण एक नाम विदेहभी हुआ; इस प्रकार जनक विदेह पूर्वकालमें राजा हुए वह मिथि बडे तेजस्वी हुए जिनके वंशमेंके राजा मैथिल कहाये ॥ २० ॥ हे लक्ष्मण ! मैंने ऋषिके शापसे राजाका और राजाके शापसे ऋषिश्रेष्ठका चेतनारहित

एवमुक्त्वातुविबुधाःसर्वेजग्मुर्यथागतम् ॥ ऋषयोपिमहात्मानोनिमेर्देहंसमाहरन् ॥ १७ ॥ अरणिंतत्रनिक्षिप्यमथनंचक्रुरोजसा ॥ मंत्रहोमैर्महात्मानःपुत्रहेतोर्निमेस्तदा ॥ १८ ॥ अरण्यांमथ्यमानायांप्रादुर्भूतोमहातपाः ॥ मथनान्मिथिरित्याहुर्जननाज्जनकोभवत् ॥ १९ ॥ यस्माद्विदेहात्संभूतोवैदेहस्तुततःस्मृतः ॥ एवंविदेहराजश्चजनकःपूर्वकोभवत् ॥ मिथिर्नाममहातेजास्तेनायंमैथिलोभवत् ॥ २० ॥ इतिसर्वमशेषतोमयाकथितंसंभवकारणंतुसौम्य ॥ नृपपुंगवशापजंद्विजस्यद्विजशापाच्चयदद्भुतंनृपस्य ॥ २१ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय 'आदिकाव्य उत्तरकांडे सप्तपंचाशः सर्गः ॥ ५७ ॥ एवंब्रुवतिरामेतुलक्ष्मणःपरवीरहा ॥ प्रत्युवाचमहात्मानंज्वलंतमिवतेजसा ॥ १ ॥ महदद्भुतमाश्चर्यंविदेहस्यपुरातनम् ॥ निवृत्तंराजशार्दूलवसिष्ठस्यमुनेश्चह ॥ २ ॥ निमिस्तुक्षत्रियःशूरोविशेषेणचदीक्षितः ॥ नक्षमंकृतवान्राजावसिष्ठस्यमहात्मनः ॥ ३ ॥ एवमुक्तस्तुतेनायंरामःक्षत्रियपुंगवः ॥ उवाचलक्ष्मणंवाक्यंसर्वशास्त्रविशारदम् ॥ ४ ॥ रामोरमयतांश्रेष्ठोभ्रातरंदीप्ततेजसम् ॥ नसर्वत्रक्षमावीरपुरुषेषुप्रदृश्यते ॥ ५ ॥ सौमित्रेदुःसहोरोषोयथाक्षांतोययातिना ॥ सत्त्वानुगंपुरस्कृत्यतन्निबोधसमाहितः ॥ ६ ॥

होना और फिर अद्भुत शरीरकी प्राप्ति होना यह तुमको संपूर्ण सुनाया ॥२१॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा०वाल्मी०आदि०उत्तरकांडे भाषाटीकायां सप्तपंचाशः सर्गः ॥५७॥ शत्रुओंके मारनेवाले लक्ष्मणजी श्रीरामचन्द्रजीके यह वचन सुनकर तेजसे प्रकाशित महात्मा रामचंद्रसे फिर बोले ॥ १ ॥ हे पुरुषराजशार्दूल ! यह विदेहराजकी पुरातन कथा जिसमें वसिष्ठ मुनिजीके साथ प्रसंगहै बहुतही आश्चर्ययुक्तहै ॥ २ ॥ परन्तु राजा निमि तो बडे शूर क्षत्रिय और विशेष करके यज्ञमें दीक्षितथे सो उन राजाने वसिष्ठजीपर क्षमा क्यों नहीं की ॥ ३ ॥ क्षत्रियोंमें श्रेष्ठ श्रीरामचन्द्रजी इस प्रकार पुछे जानेपर सम्पूर्ण शास्त्रके जाननेवाले लक्ष्मणजीसे कहने लगे ॥४॥ आनंद करानेवालोंमें श्रेष्ठ श्रीरामचन्द्र तेजयुक्त लक्ष्मण भ्रातासे कहने लगे । हे वीर ! सर्वत्र सब पुरुषोंमें क्षमा नहीं देखी जाती है ॥५॥ हे लक्ष्मण ! यह दुस्सह कोध

जिस प्रकार ययाति राजाने सत्वगुणमें स्थित होकर सहन किया था, वह तुम सावधान होकर सुनो ॥ ६ ॥ नहुपके पुत्र राजा ययाति बडे प्रजापालक थे. हे लक्ष्मण ! पृथ्वीमें सबसे अधिक रूपवान उनकी दो भार्या थीं ॥७॥ एक तो उन राजर्षि नहुपके पुत्र ययातिराजाकी शर्मिष्ठा भार्या थी जो दितिकी पोती वृषपर्वा दैत्यकी कन्या थी यह राजाको प्यारीथी ॥ ८ ॥ दूसरे शुक्रकी कन्या उनकी भार्या थी उसका नाम देवयानी था, यह सुमध्यमा राजाको बहुत प्यारी नहीं थी ॥ ॥ ९ ॥ उन दोनोंके रूपवान श्रेष्ठ दो पुत्र हुए शर्मिष्ठासे पुरु और देवयानीसे यदुका जन्म हुआ ॥ १० ॥ माताकी समान गुणयुक्त होनेसे पुरुपुत्र राजाको बहुत प्यारा हुआ, यह देख महत् दुःखीहो यदुने अपनी मातासे जाकर कहा ॥ ११ ॥ हे माता ! अलौकिककर्म देव भार्गवके कुलमें जन्म लेकर ऐसे हृदय

नहुपस्यसुतोराजाययातिःपौरवर्धनः ॥ तस्यभार्याद्वयंसौम्यरूपेणाप्रतिमंभुवि ॥ ७ ॥ एकातुतस्यराजर्षेर्नाहुपस्यपुरस्कृता ॥ शर्मिष्ठानामदैतेयीदुहितावृषपर्वणः ॥ ८ ॥ अन्यातूशनसःपत्नीययातेःपुरुपर्षभ ॥ नतुसादयिताराज्ञोदेवयानीसुमध्यमा ॥ ९ ॥ तयोःपुत्रौतुसंभूतौरूपवंतौसमाहितौ ॥ शर्मिष्ठाऽजनयत्पूरुंदेवयानीयदुंतदा ॥ १० ॥ पूरुस्तुदयितोराज्ञोगुणैर्मातृकृतेनच ॥ ततोदुःखसमाविष्टोयदुर्मातरमब्रवीत् ॥११॥ भार्गवस्यकुलेजातादेवस्याक्लिष्टकर्मणः ॥ सहसेहृद्गतंदुःखमवमानंचदुःसहम् ॥ १२ ॥ आवांचसहितौदेविप्रविशावहुताशनम् ॥ राजातुरमतांसार्धंदैत्यपुत्र्याबहुक्षपाः ॥ १३ ॥ यदिवासहनीयंतेमामनुज्ञातुमर्हसि ॥ क्षमत्वंनक्षमिष्येहंमारिष्यामिनसंशयः ॥ १४ ॥ पुत्रस्यभाषितंश्रुत्वापरमार्तस्यरोदतः ॥ देवयानीतुसंक्रुद्धासस्मारपितरंतदा ॥ १५ ॥ इंगितंतदभिज्ञायदुहितुर्भार्गवस्तदा ॥ आगतस्त्वरितंतत्रदेवयानीस्मयत्रसा ॥ १६ ॥ दृष्ट्वाचाप्रकृतिस्थांतामप्रहृष्टामचेतनाम् ॥ पितादुहितरंवाक्यंकिमेतदितिचाब्रवीत् ॥ १७ ॥

भेदी दुःख और अपमानको कैसे सहन करतीहो ॥ १२ ॥ हे माता ! हमारे सहित आप अग्निमें प्रवेशकर जाइये, राजा तो बहुत कालसे दैत्यपुत्रीके संग रमण करतेहैं ॥ १३ ॥ और जो माता तुम इसे सहन करतीहो तो मुझे आज्ञादो तुम चाहे कुछ मत करो परन्तु मैं तो निःसंदेह प्राणत्याग करूंगा ॥ १४ ॥ परम दुःखी रोतेहुए पुत्रके यह वचन सुनकर देवयानी क्रोधितहो पिताको स्मरण करती हुई ॥ १५ ॥ शुक्रजी अपनी पुत्रीकी यह अवस्था जानकर शीघ्रतासे जहां देवयानी थी वहां आये ॥ १६ ॥ देवयानीको अस्वस्थ दुःखी और क्षुभितचित्त देखकर शुक्रजी कन्यासे बोले कि, यह क्या बात है ? ॥ १७ ॥

जब उन महादीप्तिमान् भार्गवजीने वारंवार पूँछा तव देवयानी क्रोधकर पितासे कहनेलगी ॥ १८ ॥ हे मुनिसत्तम ! या तो मैं अवश्य अग्निमें प्रवेशकर जाऊंगी या विष भक्षण करूंगी परन्तु किसी प्रकारभी प्राण धारण नहीं करूंगी ॥ १९ ॥ तुम नहीं जानते कि, मैं कितनी दुःखी हूं और मेरा कैसा निरादर होवाहै; हे महन् ! जैसे वृक्षके कटनेपर वृक्षजीवीभी मरजातेहैं यही दशा मेरे पुत्रोंकी होगी ॥ २० ॥ हे भार्गव राजर्षि ! वह अवज्ञा और निरादर यह है कि, वह राजर्षि मेरा तिरस्कारभी करते हैं और मुझे बहुत नहीं मानते ॥ २१ ॥ अपनी कन्याके यह वचन सुन महाक्रोधितहो शुक्रजी नहुषपुत्र ययातिके निमित्त ऐसे वचन वोले ॥ २२ ॥ हे दुरात्मा नहुषपुत्र ! जिस कारणसे कि, तुमने हमारा निरादर कियाहै इसीसे तुमको अभी जराअवस्था प्राप्त होगी

पृच्छंतमसकृत्तत्रैभार्गवंदीप्तचेतसम् ॥ देवयानीतुसंक्रुद्धापितरंवाक्यमब्रवीत् ॥१८॥ अहमग्निंविषंतीक्ष्णमपोवामुनिसत्तम ॥ भक्षयिष्येप्रवेक्ष्येवानतुशक्ष्यामिजीवितुम् ॥१९॥ नमांत्वमवजानीषेदुःखितामवमानिताम् ॥ वृक्षस्यावज्ञयाब्रह्मंश्छिद्यंतेवृक्षजीविनः ॥ २० ॥ अवज्ञयाचराजर्षिःपरिभूयचभार्गव॥मय्यवज्ञांप्रयुंक्तेहिनचमांबहुमन्यते ॥२१॥ तस्यास्तद्वचनंश्रुत्वाकोपेनाभिपरीवृतः ॥ व्याहर्तुमुपचक्रामभार्गवोनहुषात्मजम्॥२२॥ यस्मान्मामवजानीषेनाहुषत्वंदुरात्मवान् ॥ वयसाजरयाजीर्णःशैथिल्यमुपयास्यसि ॥ २३ ॥ एवमुक्त्वादुहितरंसमाश्वास्यसभार्गवः ॥ पुनर्जगामब्रह्मर्षिर्भवनंस्वंमहायशाः ॥२४॥ सएवमुक्त्वाद्विजपुंगवाग्र्यःसुतांसमाश्वास्यचदेवयानीम् ॥ पुनर्ययौसूर्यसमानतेजादत्त्वाचशापंनहुषात्मजाय ॥२५॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे ऽष्टपंचाशः सर्गः ॥ ५८ ॥ श्रुत्वातूशनसंक्रुद्धंतदार्तोनहुषात्मजः ॥ जरांपरमिकांप्राप्ययदुंवचनमब्रवीत् ॥१॥ यदोत्वमसिधर्मज्ञोमदर्थंप्रतिगृह्यताम् ॥ जरांपरमिकांपुत्रभोगैरंस्येमहायशः ॥२॥ नतावत्कृतकृत्योस्मिविषयेषुनरर्षभ ॥ अनुभूयतदाकामंततःप्राप्स्याम्यहंजराम्॥३॥यदुस्तद्वचनंश्रुत्वाप्रत्युवाचनरर्षभम् ॥पुत्रस्तेदयितःपूरुःप्रतिगृह्णातुवैजराम् ॥४॥

और तुम्हारे सब अंग शिथिल होजायँगे ॥ २३ ॥ ऐसा कह शुक्रजी अपनी कन्याको समझाय वह महायशस्वी ब्रह्मर्षि फिर अपने स्थानको आये ॥ २४ ॥ वह ब्राह्मणोंमें अग्रणी इसप्रकारसे कहकर अपनी पुत्री देवयानीको समझाय बुझाय नहुषपुत्रको शाप देकर वह तेजस्वी फिर अपने घर आये ॥ २५ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्वा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषाटीकायामष्टपंचाशः सर्गः ॥ ५८ ॥ ॥ नहुषपुत्र ययाति शुक्रजीको क्रोधित सुनकर महादुःखी हो अत्यन्त वृद्धताको प्राप्त यदुसे कहने लगे ॥ १ ॥ हे पुत्र यदु ! तू बडा धर्मात्मा है सो यह मेरी जरा अवस्था ग्रहणकर, हे महायशस्वी ! अभी मैं तृप्त नहीं हूं अभी भोग भोगूंगा ॥ २ ॥ हे नरश्रेष्ठ ! जबतक मैं विषय भोगने सन्तुष्ट न होजाऊँ तबतक मैं कामक्रीडा करूँगा, पश्चात् तुमसे जरा अवस्था ग्रहण करूंगा ॥ ३ ॥ यह वचन सुनकर

हुए राजन्‌ ययातिने कहा, तुम्हारा प्यारा बेटा पुरु तुम्हारे बुढापेको तुमसे ग्रहण करलेगा ॥ ४ ॥ हे राजन्‌ ! आपने तो मुझे अपने निकटसे और सब अलग कर दिया है, और जिसके संग खाते पीते हो वही तुम्हारे बुढापेको ग्रहण करेगा ॥ ५ ॥ तिसके यह वचन सुनकर राजा पुरुसे कहने लगा कि, हे मह... मेरे लिए करनेके निमित्त तुम यह मेरी अवस्था ग्रहण करो ॥ ६ ॥ जब ययातिने ऐसा कहा तो पुरु हाथ जोडकर बोला आज मैं आपकी आज्ञा माननेसे धन्य ... अनुगृहीत हुआ हूं ॥ ७ ॥ यह पुरुके वचन सुनकर ययाति परम प्रसन्न हो अत्यन्त सुखको प्राप्त हुए और योगबलसे उसके शरीरमें जरा प्रवेश करदेते हुए ॥ ८ ॥ तब वह राजा तरुण हो हजारों यज्ञ करके बहुत सहस्रों वर्षतक पृथ्वीका पालन करतेहुए ॥ ९ ॥ फिर बहुत काल बीतनेपर राजाने पुरुसे कहा हे पुत्र ! ...

तद्दिष्कृतोदमर्थंपुमग्निकर्णांचपार्थिव ॥ प्रतिगृह्णातुवैराजन्यःसहाश्नातिभोजनम्‌ ॥ ५ ॥ तस्यतद्वचनंश्रुत्वाराजापूरुमथाब्रवीत्‌ ॥ इयंजरा... ग्राह्यामदर्थंमनिगृह्यताम्‌ ॥६॥ नाहुषेणैवमुक्तस्तुपूरुःप्रांजलिरब्रवीत्‌ ॥ धन्योस्म्यनुगृहीतोस्मिशासनेस्मितवस्थितः ॥ ७ ॥ पूरोर्वचनमाज्ञा... नाहुषःपरयामुदा ॥ प्रहर्षमतुलंलेभेजरांसंक्रामयन्नताम्‌ ॥ ८ ॥ ततःसराजातरुणःप्राप्ययज्ञान्सहस्रशः ॥ बहुवर्षसहस्राणिपालयामासमे... नीम्‌ ॥ ९ ॥ अथदीर्घस्यकालस्यराजापूरुमथाब्रवीत्‌ ॥ आनयस्वजरांपुत्रन्यासंनिर्यातयस्वमे ॥ १० ॥ न्यासभूतामयापुत्रत्वयिसंक्रामि... जरा ॥ तस्मात्प्रतिग्रहीष्यामितांजरांमाव्यथांकृथाः ॥ ११ ॥ प्रीतश्चास्मिमहाबाहोशासनस्यप्रतिग्रहात्‌ ॥ त्वांचाहमभिषेक्ष्यामिप्रीतियु... नराधिपम्‌ ॥ १२ ॥ एवमुक्त्वासुतंपूरुंययातिर्नहुषात्मजः ॥ देवयानीसुतंक्रुद्धोराजावाक्यमुवाचह ॥ १३ ॥ राक्षसस्त्वंमयाजातःक्षत्ररूपा... दुरासदः ॥ प्रतिहंसिममाज्ञांत्वंप्रजार्थेविफलोभव ॥ १४ ॥ पितरंगुरुभूतंमांयस्मात्त्वमवमन्यसे ॥ राक्षसान्यातुधानांस्त्वंजनयिष्यसिदारु... णान्‌ ॥ १५ ॥ नतुमामकुलोत्पन्नेवंशेस्थास्यतिदुर्मतेः ॥ वंशोपिभवतस्तुल्योदुर्विनीतोभविष्यति ॥ १६ ॥

धरोहरकी समान रक्खी हुई जरावस्था आप हमको दीजिये ॥ १० ॥ हे पुत्र तुझे जरा अवस्था धरोहरकी भाँति दीथी इस कारण इसमें व्यथा करनेकी बात नहीं है ॥ ११ ॥ हे महाभुज ! तुमने जो मेरी आज्ञा मानी इस कारण मैं तुमसे अधिक प्रसन्न हूं और मैं प्रसन्न होकर तुमको राज्यसिंहासनमें अभि... करूंगा ॥ १२ ॥ नहुषपुत्र ययाति अपने पुरुपुत्रसे इस प्रकार कहकर देवयानीके पुत्रसे क्रोध सहित बोले ॥ १३ ॥ हे नीच ! तु मुझसे क्षत्रियरूपमें कोई राक्षस उ... हुआ है, जिससे तैंने मेरी आज्ञा नहीं मानी इस कारण तू राज्यका अधिकारी नहीं होगा ॥ १४ ॥ गुरुरूप मुझे अपने पिताका जो तैंने निरादर किया है इस कारण ... राक्षस यातुधान क्रूरकर्मा सन्तान होगी ॥ १५ ॥ तेरी सन्तान जो कि राक्षसस्वभाववाली नहीं होगी वह क्षत्रियमात्र नामवाली होगी किन्तु राज्याभिषिक्त न ...

क्योंकि तेरा वंश बहुधा मेरी समान दुर्विनीत होगा ॥ १६ ॥ उसे राजर्षि ययाति इस प्रकार कह, राज्य बढानेवाले पुरुको राज्यसिंहासनमें बैठाय वानप्रस्थाश्रममें प्रवेश करगये ॥ १७ ॥ फिर बहुत समय उपरान्त प्रारब्धके अन्तको प्राप्त हो नहुषपुत्र ययाति स्वर्गको सिधारे ॥ १८ ॥ और पुरु धर्मपूर्वक उनके राज्यका पालन करने लगे काशीराज्यमें श्रेष्ठ प्रतिष्ठानपुर (प्रयाग) के निकट वह महायशस्वी राज्य करतेथे ॥ १९ ॥ शापसे यदुके सहस्रों यातुधान उत्पन्न हुए जो राजवंशसे बाहर क्रौञ्च वनके दुर्गस्थानमें यह सब वास करने लगे ॥ २० ॥ इस प्रकारसे शुक्राचार्यके दिये हुए शापको ययातिने क्षत्र धर्मसे स्वीकार करलिया जिसको राजा निमि न सहसके ॥ २१ ॥ यह आपके प्रति प्रजापालनके वृत्तान्त सब वर्णन किये हे सौम्य ! हमको इस प्रकारसे वर्तना चाहिये जिसमें कोई दोष उपस्थित नहो

तमेवमुक्त्वाराजर्षिःपूरुंराज्यविवर्धनम् ॥ अभिषेकेणसंपूज्यआश्रमंप्रविवेशह ॥ १७ ॥ ततःकालेनमहतादिष्टांतमुपजग्मिवान् ॥ त्रिदिवंसगतो राजाययातिर्नहुषात्मजः ॥ १८ ॥ पूरुश्चकारतद्राज्यंधर्मेणमहतावृतः ॥ प्रतिष्ठानेपुरवरेकाशिराज्येमहायशाः ॥ १९ ॥ यदुस्तुजनयामास यातुधानान्सहस्रशः ॥ पुरेक्रौंचवनेदुर्गेराजवंशबहिष्कृते ॥ २० ॥ एषतूशनसामुक्तःशापोत्सर्गोययातिना ॥ धारितःक्षत्रधर्मेणयंनिमिश्च क्षमेनच ॥ २१ ॥ एतत्तेसर्वमाख्यातंदर्शनंसर्वकारिणाम् ॥ अनुवर्तामहेसौम्यदोषोनस्याद्यथानृगे ॥ २२ ॥ इतिकथयतिरामेचंद्रतुल्याननेनप्र विरलतरतारंव्योमजज्ञेतदानीम् ॥ अरुणकिरणरक्तादिग्वभौचैवपूर्वाकुसुमरसविमुक्तंवस्त्रमालुंठितेव ॥ २३ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे एकोनषष्टितमः सर्गः ॥ ५९ ॥ एतदग्रे प्रक्षिप्ताः सर्गाः ॥ ३ ॥ ततःप्रभातेविमलेकृत्वापौर्वाह्णिकींक्रियाम् ॥ धर्मासनगतोराजारामोराजीवलोचनः ॥ १ ॥ राजधर्मानवेक्षन्वैब्राह्मणैर्नैगमैः सह ॥ पुरोधसावसिष्ठेनऋषिणाकश्यपेनच ॥ २ ॥ मंत्रिभि र्व्यवहारज्ञैस्तथान्यैर्धर्मपाठकैः ॥ नीतिज्ञैरथसभ्यैश्चराजभिःसासभावृता ॥ ३ ॥

जैसा नृगसे हुआ ॥ २२ ॥ चन्द्रमुख रामचन्द्रके ऐसा कहते आकाश थोडे तारोंसे युक्त होगया; और पूर्वदिशा अरुणकी किरणोंसे लाल होगई मानो उसने कुसुंभका वस्त्र ओढ लियाहै ॥ २३ ॥ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये उत्तरकांडे भाषाटीकायामेकोनषष्टितमः सर्गः ॥ ५९ ॥ ॥ प्रातःकाल होतेही प्रभातकी सब क्रियाओंसे निश्चिन्त हो राजीवलोचन राम धर्मासनपर जा विराजे ॥ १ ॥ वेद शास्त्रोंके जाननेवाले पुरोहित वसिष्ठ और कश्यपऋषिके सहित राजकार्योंको देखते हुए ॥ २ ॥ व्यवहारके जाननेवाले मंत्री तथा धर्मके जाननेवाले नीतिके जाननेवाले सभासदों और राजाओंसे वह सभा

परिपूर्णथी ॥ ३ ॥ जैसी सभा महेन्द्र यम वरुणकी है, इसीप्रकार अक्लिष्टकर्मा राजसिंह रामचन्द्रकी यह सभा शोभित हुई ॥ ४ ॥ उस समय रामचन्द्रजी शुभलक्षणयुक्त लक्ष्मणजीसे बोले हे महाभुज ! सुमित्राके आनन्द बढानेवाले तुम बाहर जाओ ॥ ५ ॥ और हे लक्ष्मण ! जो कार्यार्थी बाहर हों उन्हें लिवा लाओ, शुभ लक्षण युक्त लक्ष्मणजी रामचन्द्रके वचन सुनकर ॥ ६ ॥ द्वारपर जाय स्वयं कार्यार्थियोंको बुलाने लगे सो वहाँ कोईभी नहीं बोला कि, हमारा यह कार्य है ॥ ७ ॥ कारण कि, रामके राज्यमें आधिव्याधि नहीं थी पके खेतोंसे और सब औषधियोंसे भरीपूरी पृथ्वी रहतीथी ॥ ८ ॥ बालक युवा कोई रामके राज्यमें नहीं मरता था, सब कोई धर्ममें शिक्षित थे इस कारण कोई व्याधि नहीं थी ॥ ९ ॥ रामके राज्य करते समयमें कोई

सभायथामहेंद्रस्ययमस्यवरुणस्यच॥शुशुभेराजसिंहस्यरामस्याक्लिष्टकर्मणः॥४॥अथरामोऽब्रवीत्तत्रलक्ष्मणंशुभलक्षणम् ॥ निर्गच्छत्वंमहाबाहोसुमित्रानंदवर्धन॥५॥कार्यार्थिनश्चसौमित्रेव्याहर्तुंत्वमुपाक्रम ॥ रामस्यभाषितंश्रुत्वालक्ष्मणःशुभलक्षणः ॥६॥ द्वारदेशमुपागम्यकार्यिणश्चाह्वयत्स्वयम्॥नकश्चिदब्रवीत्तत्रममकार्यमिहाद्यवै ॥ ७॥ नाधयोव्याधयश्चैवरामेराज्यंप्रशासति ॥ पक्वसस्यावसुमतीसर्वौषधिसमन्विता ॥ ८॥ नबालोम्रियतेतत्रनयुवानचमध्यमः ॥ धर्मेणशासितंसर्वंनचबाधाविधीयते ॥ ९॥ दृश्यतेनचकार्यार्थीरामेराज्यंप्रशासति ॥ लक्ष्मणःप्रांजलिर्भूत्वारामायैवंन्यवेदयत् ॥ १० ॥ अथरामःप्रसन्नात्मासौमित्रिमिदमब्रवीत् ॥ भूयएवतुगच्छत्वंकार्यिणःप्रविचारय ॥ ११॥ सम्यक्प्रणीतयानीत्यानाधर्मोविद्यतेक्वचित् ॥ तस्माद्राजभयात्सर्वेरक्षंतीहपरस्परम् ॥ १२ ॥ बाणाइवमयामुक्ताइहरक्षंतिमेप्रजाः ॥ तथापित्वंमहाबाहोप्रजारक्षस्वतत्परः ॥ ॥१३॥ एवमुक्तस्तुसौमित्रिर्निर्जगामनृपालयात् ॥ अपश्यद्द्वारदेशेवैश्वानंतावदवस्थितम् ॥ १४ ॥ तमेवंवीक्षमाणोवैविक्रोशन्तंमुहुर्मुहुः ॥ दृष्ट्वाथलक्ष्मणस्तंवैसपप्रच्छाथवीर्यवान् ॥ १५ ॥ किंतेकार्यंमहाभागब्रूहिविस्रब्धमानसः ॥ लक्ष्मणस्यवचःश्रुत्वासारमेयोऽभ्यभाषत ॥ १६ ॥

कार्यार्थी नहीं था सो लक्ष्मणने हाथ जोडकर रामचन्द्रसे यह बात निवेदन की ॥ १० ॥ फिर रामचन्द्रजी प्रसन्न होकर लक्ष्मणजीसे कहने लगे तुम फिर जाकर कार्य करनेवालोंको विचारसे देखो ॥ ११ ॥ सम्यक् प्रकार प्रणय और नीतिके कारण कहीं कुछ अधर्म नहींथा; इस कारण राज्यभयसे सबकोई परस्पर एक दूसरेकी रक्षा करते हैं ॥ १२ ॥ बाणकी नाई यह मुझसे छोडेहुए प्रजाकी रक्षा करते हैं तोभी हे महाबाहो ! तुम प्रजा रक्षण करनेमें तत्पर हो ॥ १३॥ यह सुनकर लक्ष्मणजी राजमंदिरसे बाहर आये और वहांपर आनकर द्वारपर बैठेहुए एक श्वानको देखा ॥ १४ ॥ इस प्रकार उसको वारम्वार रुदन करताहुआ देखकर महावीर्यवान् लक्ष्मणजी उससे पूछने लगे ॥ १५ ॥ हे महाभाग ! तुम्हारा क्या कार्य है तुम निडर होकर हमसे वर्णन करो लक्ष्मणके वचन सुनकर यह कुत्ता कहने

क्योंकि तेरा वंश बहुधा तेरी समान दुर्विनीत होगा ॥ १६ ॥ उसे राजर्षि ययाति इस प्रकार कह, राज्य बढानेवाले पुरुको राज्यसिंहासनमें बैठाय वानप्रस्थाश्रममें प्रवेश करगये ॥ १७ ॥ फिर बहुत समय उपरान्त प्रारब्धके अन्तको प्राप्त हो नहुषपुत्र ययाति स्वर्गको सिधारे ॥ १८ ॥ और पुरु धर्मपूर्वक उनके राज्यका पालन करते हुए काशीराज्यमें श्रेष्ठ प्रतिष्ठानपुर (प्रयाग) के निकट वह महायशस्वी राज्य करतेथे ॥ १९ ॥ शापसे यदुके सहस्रों यातुधान उत्पन्न हुए जो राजवंशसे बाहर क्रौंच वनके महादुर्गस्थानमें वह सब वास करने लगे ॥ २० ॥ इस प्रकारसे शुक्राचार्यके दिये हुए शापको ययातिने क्षत्र धर्मसे स्वीकार करलिया जिसको राजा निमि न सहसके ॥ २१ ॥ यह आपके प्रति प्रजापालनके वृत्तान्त सब वर्णन किये हे सौम्य ! हमको इस प्रकारसे वर्तना चाहिये जिसमें कोई दोष उपस्थित न हो जैसा नृगको हुआ ॥ २२ ॥ चन्द्रमुख रामचन्द्रके ऐसा कहते आकाश थोडे तारोंसे युक्त होगया; और पूर्वदिशा अरुणकी किरणोंसे लाल होगई मानो कुसुमरंगका वस्त्र ओढ लियाहै ॥ २३ ॥ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये उत्तरकांडे भाषाटीकायामेकोनषष्टितमः सर्गः ॥ ५९ ॥ ॥ प्रातःकाल होतेही प्रभातकी सब क्रियाओंसे निश्चिन्तहो राजीवलोचन राम धर्मासनपर जा विराजे ॥ १ ॥ वेद शास्त्रोंके जाननेवाले पुरोहित वसिष्ठ और कश्यपऋषिके सहित राजकार्योंको देखते हुए ॥ २ ॥ व्यवहारके जाननेवाले मंत्री तथा धर्मके जाननेवाले नीतिके जाननेवाले सभासदों और राजाओंसे वह सभा

तमेवमुक्काराजर्षिःपूरुंराज्यविवर्धनम् ॥ अभिषेकेणसंपूज्यआश्रमंप्रविवेशह ॥ १७ ॥ ततःकालेनमहतादिष्टांतमुपजग्मिवान् ॥ त्रिदिवंसगतो राजाययातिर्नहुषात्मजः ॥ १८ ॥ पूरुश्चकारतद्राज्यंधर्मेणमहतावृतः ॥ प्रतिष्ठानेपुरवरेकाशिराज्येमहायशाः ॥ १९ ॥ यदुस्तुजनयामास यातुधानान्सहस्रशः ॥ पुरेक्रौंचवनेदुर्गेराजवंशबहिष्कृते ॥ २० ॥ एषतूशनसामुक्तःशापोत्सर्गोययातिना ॥ धारितःक्षत्रधर्मेणयंनिमिश्च क्षमेनच ॥ २१ ॥ एतत्तेसर्वमाख्यातंदर्शनंसर्वकारिणाम् ॥ अनुवर्तामहेसौम्यदोषोनस्याद्यथानृगे ॥ २२ ॥ इतिकथयतिरामेचंद्रतुल्याननेनप्र विरलतरतारंव्योमजज्ञेतदानीम् ॥ अरुणकिरणरक्तादिग्बभौचैवपूर्वाकुसुमरसविमुक्तंवस्त्रमालुंठितेव ॥ २३ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे एकोनषष्टितमः सर्गः ॥ ५९ ॥ एतदग्रे प्रक्षिप्ताः सर्गाः ॥ ३ ॥ ततःप्रभातेविमलेकृत्वापौर्वाह्णिकींक्रियाम् ॥ धर्मासनगतोराजारामोराजीवलोचनः ॥ १ ॥ राजधर्मानवेक्षन्वैब्राह्मणैर्नैगमैः सह ॥ पुरोधसावसिष्ठेनऋषिणाकश्यपेनच ॥ २ ॥ मंत्रिभि र्व्यवहारज्ञैस्तथान्यैर्धर्मपाठकैः ॥ नीतिज्ञैरथसभ्यैश्चराजभिःसासभावृता ॥ ३ ॥

रिपूर्णथी ॥ ३ ॥ जैसी सभा महेन्द्र यम वरुणकी है, इसीप्रकार अक्लिष्टकर्मा राजासिंह रामचन्द्रकी यह सभा शोभित हुई ॥ ४ ॥ उस समय रामचन्द्र शुभलक्षणयुक्त लक्ष्मणजीसे बोले हे महाभुज ! सुमित्राके आनन्द बढानेवाले तुम बाहर जाओ ॥ ५ ॥ और हे लक्ष्मण ! जो कार्यार्थी बाहर उन्हें लिवा लाओ, शुभ लक्षण युक्त लक्ष्मणजी रामचन्द्रके वचन सुनकर ॥ ६ ॥ द्वारपर जाय स्वयं कार्यार्थियोंको बुलाने लगे सो वहाँ कोईभी न बोला कि, हमारा यह कार्य है ॥ ७ ॥ कारण कि, रामके राज्यमें आधिव्याधि नहीं थी पके खेतोंसे और सब औषधियोंसे भरीपूरी पृथ्वी रहतीथी ॥ ८ बालक युवा कोई रामके राज्यमें नहीं मरता था, सब कोई धर्ममें शिक्षित थे इस कारण कोई व्याधि नहीं थी ॥ ९ ॥ रामके राज्य करते समयमें क

नभायथामहेंद्रस्ययमस्यवरुणस्यच॥शुशुभेराजसिंहस्यरामस्याक्लिष्टकर्मणः॥४॥अथरामोब्रवीत्तत्रलक्ष्मणंशुभलक्षणम् ॥ निर्गच्छत्वंमहाबाहोसुमित्रानंदवर्धन॥५॥कार्यार्थिनश्चसौमित्रेव्याहर्तुंत्वमुपाक्रम ॥ रामस्यभाषितंश्रुत्वालक्ष्मणःशुभलक्षणः ॥६॥ द्वारदेशमुपागम्यकार्यिणश्चाह्वयत्स्वयम्॥नकश्चिदब्रवीत्तत्रममकार्यमिहाद्यवै ॥७॥ नाधयोव्याधयश्चैवरामेराज्यंप्रशासति ॥ पक्कसस्यावसुमतीसर्वौषधिसमन्विता ॥ ८॥ नबालोम्रियतेतत्रनयुवानचमध्यमः॥ धर्मेणशासितंसर्वंनचबाधाविधीयते ॥ ९॥ दृश्यतेनचकार्यार्थीरामेराज्यंप्रशासति॥ लक्ष्मणःप्रांजलिर्भूत्वारामायन्यवेदयत् ॥ १० ॥ अथरामःप्रसन्नात्मासौमित्रिमिदमब्रवीत् ॥ भूयएवतुगच्छत्वंकार्यिणःप्रविचारय ॥ ११॥ सम्यक्प्रणीतयानीत्यानाधर्मेविद्यतेक्वचित् ॥ तस्माद्राजभयात्सर्वेरक्षंतीहपरस्परम् ॥ १२ ॥ बाणाइवमयामुक्ताइहरक्षंतिमेप्रजाः ॥ तथापित्वंमहाबाहोप्रजारक्षस्वतत्परः ॥ ॥१३॥ एवमुक्तस्तुसौमित्रिर्निर्जगामनृपालयात् ॥ अपश्यद्द्वारदेशेवैश्वानंतावदवस्थितम् ॥ १४ ॥ तमेवंवीक्षमाणोवैविक्रोशन्तंमुहुर्मुहुः ॥ दृष्ट्वालक्ष्मणस्तंवैसपप्रच्छाथवीर्यवान् ॥ १५ ॥ किंतेकार्यंमहाभागब्रूहिविस्रब्धमानसः ॥ लक्ष्मणस्यवचःश्रुत्वासारमेयोभ्यभाषत ॥ १६ ॥

कार्यार्थी नहीं था सो लक्ष्मणने हाथ जोडकर रामचन्द्रसे यह बात निवेदन की ॥ १० ॥ फिर रामचन्द्रजी प्रसन्न होकर लक्ष्मणजीसे कहने लगे तुम फिर जा कार्य करनेवालोंको विचारसे देखो ॥ ११ ॥ सम्यक् प्रकार प्रणय और नीतिके कारण कहीं कुछ अधर्म नहींथा; इस कारण राज्यभयसे सबकोई परस्पर एक दूसरेकी रक्षा करते हैं ॥ १२ ॥ बाणकी नाई यह मुझसे छोडेहुए प्रजाकी रक्षा करते हैं तोभी हे महाबाहो ! तुम प्रजा रक्षण करनेमें तत्पर हो ॥ १३ ॥ यह सुनकर लक्ष्मणजी राजमंदिरसे बाहर आये और वहांपर आनकर द्वारपर बैठेहुए एक श्वानको देखा ॥ १४ ॥ इस प्रकार उसको वारम्वार रुदन करताहुआ देखकर महावीर्यवान् लक्ष्मणजी उससे पूछने लगे ॥ १५ ॥ हे महाभाग ! तुम्हारा क्या कार्य है तुम निडर होकर हमसे वर्णन करो लक्ष्मणके वचन सुनकर वह कुत्ता कह

णम् ॥ १६ ॥ सब प्राणियोंके शरण देनेवाले अक्लिष्टकर्मकारी भयभीतोंको अभय देनेवाले रामचन्द्रसे मैं कुछ कहनेकी इच्छा करता हूं ॥१७॥ कुत्तेके यह वचन सुनकर लक्ष्मणजी रामचन्द्रसे निवेदन करनेको फिर राजमंदिरमें गये ॥ १८ ॥ रामचन्द्रसे निवेदन कर फिर राजमंदिरसे बाहर आय कहने लगे यदि तुमको कुछ कहना हो तो सत्य २ महाराजसे कहो ॥ १९ ॥ लक्ष्मणके वचन सुनकर कुत्ता बोला देवताके स्थानमें राजाके और ब्राह्मणके स्थानमें ॥२०॥ अग्नि इन्द्र सूर्य, और वायु रहते हैं सो हे लक्ष्मण ! ऐसोंके स्थानमें हम अधम योनिके जीव नहीं जा सकते हैं ॥ २१ ॥ मैं वहां प्रवेश नहींकर सकता कारण कि, धर्मही राजाका शरीर धारण किये हैं जो कि सत्य बोलनेवाले रणमें चतुर सब प्राणियोंके हित करनेवाले हैं ॥ २२ ॥ वह रामचन्द्र छे गुणोंके पदको जाननेवाले नीतिके कर्ता

सर्वभूतशरण्यायरामायाक्लिष्टकर्मणे॥भयेष्वभयदात्रेचतस्मैवक्तुंसमुत्सहे॥१७॥ एतच्छ्रुत्वाचवचनंसारमेयस्यलक्ष्मणः ॥ राघवायतदाख्यातुंप्रविवेशालयंशुभम् ॥ १८ ॥ निवेद्यरामस्यपुनर्निर्जगामनृपालयात् ॥ वक्तव्यंयदितेकिंचित्तत्त्वंब्रूहिनृपायवै ॥ १९ ॥ लक्ष्मणस्यवचःश्रुत्वासारमेयोऽभ्यभाषत ॥ देवागारेनृपागारेद्विजवेश्मसुवैतथा ॥ २० ॥ वह्निःशतक्रतुश्चैवसूर्योवायुश्चतिष्ठति ॥ नात्रयोग्यास्तुसौमित्रेयोनीनामधमावयम्॥ ॥२१॥ प्रवेष्टुंनात्रशक्ष्यामिधर्मोविग्रहवान्नृपः ॥ सत्यवादीरणपटुःसर्वसत्त्वहितेरतः ॥ २२ ॥ षाड्गुण्यस्यपदंवेत्तिनीतिकर्तासराघवः ॥ सर्वज्ञः सर्वदर्शीचरामोरमयतांवरः॥२३॥ ससोमःसचमृत्युश्चसयमोधनदस्तथा ॥ वह्निःशतक्रतुश्चैवसूर्योवैवरुणस्तथा ॥२४॥ तस्यत्वंब्रूहिसौमित्रेप्रजापालःसराघवः॥अनाज्ञातस्तुसौमित्रेप्रवेष्टुंनेच्छयाम्यहम्॥२५॥आनृशंस्यान्महाभागप्रविवेशमहाद्युतिः ॥ नृपालयंप्रविश्याथलक्ष्मणोवाक्यमब्रवीत्॥२६॥श्रूयतांममविज्ञाप्यंकौसल्यानंदवर्धन॥यन्मयोक्तंमहाबाहोतवशासनजंविभो॥२७॥श्वावैतेतिष्ठतेद्वारिकार्यार्थीसमुपागतः ॥ लक्ष्मणस्यवचःश्रुत्वारामोवचनमब्रवीत्॥२८॥संप्रवेशयवैक्षिप्रंकार्यार्थीयोत्रतिष्ठति॥२९॥इत्यार्षेश्रीमद्रामायणेवाल्मीकीयआदिकाव्यउत्तरकांडेप्र०सर्गः ॥१॥

हैं वह सर्वज्ञ सर्वदर्शी और जगत्के रमानेवाले हैं ॥ २३ ॥ वही चन्द्रमा, मृत्यु, यम, कुबेर, वरुण, सूर्य, इन्द्ररूप हैं ॥ २४ ॥ हे लक्ष्मण ! उन प्रजाके पालन करनेवाले रघुनाथजीसे तुम जाकर कहो हे सुमित्रानंदन ! विना उनकी आज्ञा पाये मैं राजमंदिरमें प्रवेश नहीं करसकता ॥ २५ ॥ वह महाद्युतिमान लक्ष्मणजी उसका यह भीषण देखकर राजमंदिरमें गये और वहां जाकर कहने लगे ॥ २६ ॥ हे कौशल्यानन्दवर्धन ! हमारे वचनको आप श्रवण कीजिये हे महाबाहु ! हे सर्वज्ञ ! जो कुछ आपकी आज्ञाथी सो मैंने कही ॥२७॥ एक कार्यके निमित्त आया हुआ कुत्ता आपके द्वारपर है लक्ष्मणके यह वचन सुन रघुनाथजी बोले ॥ २८ ॥ जो कोई कार्यार्थी है उसे शीघ्र लाओ ॥ २९ ॥ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा॰ वाल्मी॰ आदि॰ उत्तरकांडे भाषाटीकायां प्रथमः सर्गः ॥ १ ॥

रामचन्द्रके वचन सुनकर शीघ्रतासे लक्ष्मणजीने श्वानको बुलाकर रामचन्द्रके आगे निवेदन किया ॥ १ ॥ कुत्तेको आया हुआ देखकर रामचन्द्रजी बोले सारमेय ! तुम भय छोड अपना मनोरथ कहो ॥ २ ॥ रामचन्द्रको बैठा देखकर श्वान अपना मस्तक झुकाय रघुनाथजीके प्रति वचन कहने लगा ॥ ३ ॥ राजा प्राणियोंका कर्ताहै राजाही विनायकहै, सबके सोनेपर राजाही जागताहै ॥ ४ ॥ सुन्दर नीतिसे राजा धर्मकी रक्षा करताहै; कारण कि वह रक्षा करनेवाला जो राजा प्रजा पालन न करे तो प्रजा शीघ्र नष्ट होजाय ॥ ५ ॥ राजाही कर्ता रक्षक सम्पूर्ण जगत्का पिताहै, राजाही कलियुग है बहुत क्या राजाही सब जगत रूपहै, ॥ ६ ॥ धारण किया जाताहै इसीकारण धर्म कहलाताहै; धर्मसे प्रजा स्थित होती है इसकारणसे धर्मका धारण करनेवा

श्रुत्वारामस्यवचनंलक्ष्मणस्त्वरितस्तदा ॥ श्वानमाहूयमतिमान्राघवायन्यवेदयत् ॥ १ ॥ दृष्ट्वासमागतंश्वानंरामोवचनमब्रवीत् ॥ विवक्षितं ब्रूहिसारमेयनतेभयम् ॥ २ ॥ आथापश्यततत्रस्थंरामंश्वाभिन्नमस्तकः ॥ ततोदृष्ट्वासराजानंसारमेयोऽब्रवीद्वचः ॥ ३ ॥ राजैवकर्ताभूतानां राजैवविनायकः ॥ राजासुप्तेषुजागर्तिराजापालयतिप्रजाः ॥ ४ ॥ नीत्यासुनीतयाराजाधर्मंरक्षतिरक्षिता ॥ यदानपालयेद्राजाक्षिप्रंनश्यंति वैप्रजाः ॥ ५ ॥ राजाकर्ताचगोप्ताचसर्वस्यजगतःपिता ॥ राजाकालोयुगंचैवराजासर्वमिदंजगत् ॥ ६ ॥ धारणाद्धर्ममित्याहुर्धर्मेणविधृताः प्रजाः ॥ यस्माद्धारयतेसर्वंत्रैलोक्यंसचराचरम् ॥७॥ धारणाद्विद्विपांचैवधर्मेणारंजयन्प्रजाः ॥ तस्माद्धारणमित्युक्तंसधर्मइतिनिश्चयः ॥८॥ एष राजन्परोधर्मःफलवान्प्रेत्यराघव ॥ नहिधर्माद्भवेत्किंचिद्दुष्प्रापमितिमेमतिः ॥ ९ ॥ दानंदयासतांपूजाव्यवहारेषुचार्जवम् ॥ एषरामपरोधर्मोरक्षणात्प्रेत्यचेहच ॥ १० ॥ त्वंप्रमाणंप्रमाणानामसिराघवसुव्रत ॥ विदितश्चैवतेधर्मःसद्भिराचरितस्तुवै ॥ ११ ॥ धर्माणांत्वंपरंधामगुणानांसागरोपमः ॥ अज्ञानान्मयाराजन्नुक्तस्त्वंराजसत्तमः ॥१२॥ प्रसादयामिशिरसानत्वंकोद्धुमिहार्हसि ॥ शुनःसवचनंश्रुत्वाराघवोवाक्यमब्रवीत् ॥१३॥

त्रिलोकी और चराचरको धारण कर सकताहै ॥ ७ ॥ शत्रुओंको धारण करनेसे और प्रजाको धर्मसे प्रसन्न करनेसे धारणहीका नाम धर्म कहाहै यह निश्चयहै ॥ ८ ॥ हे रामचंद्र ! यही परमधर्महै और परलोकमें फल देनेहाराहै यह मुझे निश्चयहै कि, धर्म करनेवालेको कुछभी दुष्प्राप्त नहींहै ॥ ९ ॥ दान दया सत्पुरुषोंका सत्कार व्यवहारमें सीधापन हे राम ! यही परमधर्महै, रक्षा करनेसे दोनों लोक फलीभुत होतेहैं ॥ १० ॥ हे राघव ! सुव्रत तुमही प्रमाणोंके प्रमाणहो सत्पुरुषोंसे आचरण किया हुआ तुम्हारा धर्म सबको विदितहै ॥ ११ ॥ धर्मोंके तुम परमधर्म हो गुणोंमें सागरकी समानहो हे राजश्रेष्ठ ! जो कुछ आपसे मैंने अज्ञानताके वश कहाहो ॥ १२ ॥ सो मैं शिर झुका कर आपको प्रसन्न करता हूं. आप क्रोध न कीजिये श्वानके वचन सुनकर रामचंद्र बोले ॥ १३ ॥

हे भानमें! तुम्हारा क्या कार्य करूं निडरहो शीघ्र कहो रामचंद्रके वचन सुनकर सारमेय यह वचन बोला॥ १४ ॥धर्मसेही राज्य बढताहै धर्मसेही प्रजा पालन उचितहै, धर्महीके कारण प्राणी शरण आतेहैं कारण कि, राजा सब भयका हरनेहाराहै ॥१५॥ यह जानकर जो कुछ मेरा कार्य है, राघव आप वह सुनिये एक सर्वार्थसिद्ध ब्राह्मण भिक्षुकहै मैं उसके स्थानपर था कि, ॥ १६ ॥ उसने बिना प्रयोजनहीके बिना अपराध किये मुझे मारा यह वचन सुनतेही रामचंद्रने द्वारपालको बुलाने भेजा ॥ १७ ॥ वह जाकर सर्वार्थसिद्ध पंडित ब्राह्मणको बुलालाया जब उस ब्राह्मणने महाद्युतिमान रामचंद्रको देखा तो बोला ॥ १८ ॥ हे पापरहित रघुनंदन ! आपका क्या कार्यहै सो आप वर्णन कीजिये जब ब्राह्मणने ऐसा कहा तो रामचंद्रजी कहने लगे ॥ १९ ॥ हे ब्राह्मण ! तुमने इस कुत्तेको क्यों मारा

किंतेकार्यंकरोम्यद्यब्रूहिविस्रब्धमाचिरम् ॥ रामस्यवचनंश्रुत्वासारमेयोब्रवीदिदम् ॥ १४ ॥ धर्मेणराष्ट्रंविंदेतधर्मेणैवानुपालयेत् ॥ धर्माच्छरण्यतांयातिराजासर्वभयापहः ॥ १५ ॥ इदंविज्ञाययत्कृत्यंश्रूयतांममराघव ॥ भिक्षुःसर्वार्थसिद्धश्चब्राह्मणावसथेवसन् ॥१६॥ तेनदत्तःप्रहारोमेनिष्कारणमनागसः ॥ एतच्छ्रुत्वातुरामेणद्वास्थःसंप्रेपितस्तदा ॥ १७ ॥ आनीतश्चद्विजस्तेनसर्वसिद्धार्थकोविदः ॥ अथद्विजवरस्तत्ररामंदृष्ट्वा महाद्युतिः ॥ १८ ॥ किंतेकार्यंमयारामतद्ब्रूहित्वंममानघ ॥ एवमुक्तस्तुविप्रेणरामोवचनमब्रवीत् ॥ १९ ॥ त्वयादत्तःप्रहारोयंसारमेयस्यवैद्विज ॥ किंतवापकृतंविप्रदंडेनाभिहतोयतः ॥ २० ॥ क्रोधःप्राणहरःशत्रुःक्रोधोमित्रमुखोरिपुः ॥ क्रोधोह्यसिर्महातीक्ष्णःसर्वंक्रोधोऽपकर्षति ॥ २१ ॥ तपतेयजतेचैवयच्चदानंप्रयच्छति ॥ क्रोधेनसर्वंहरतितस्मात्क्रोधंविसर्जयेत् ॥ २२ ॥ इंद्रियाणांप्रदुष्टानांहयानामिवधावताम् ॥ कुर्वीतधृत्यासारथ्यंसंहृत्येंद्रियगोचरम् ॥ २३ ॥ मनसाकर्मणावाचाचक्षुपाचसमाचरेत् ॥ श्रेयोलोकस्यचरतोनद्वेष्टिनचलिप्यते ॥ २४ ॥ नतत्कुर्यादसिस्तीक्ष्णःसर्पोवाव्याहतःपदा ॥ अरिर्वानित्यसंक्रुद्धोयथात्मादुरनुष्ठितः ॥ २५ ॥

तुम्हारा इसने क्या अपकार किया जो तुमने इसके ऊपर दंडका प्रहार किया ॥ २० ॥ क्रोधही प्राणका हरनेहारा शत्रुहै क्रोधही मित्रकी समान प्रियभाषी शत्रु है क्रोधही महा तीक्ष्ण तलवार और क्रोधही सब सद्गुणको खैंच लेताहै ॥ २१ ॥ जो तप यजन और दान किया जाताहै वह क्रोधसे सब नष्ट होजाताहै इस कारण क्रोधको त्यागना चाहिये॥ २२ ॥ इन्द्रियें जो दुष्टघोडोंकीनाईं विषयोंमें दौडती हैं जो बुद्धिसे उन इंद्रियोंको रोककर सारथीकी समान श्रेष्ठ मार्गमें चलावे ॥ २३ ॥ मन वचन कर्म और चक्षुसे संसारका भला करे और किसीका बुरा न चाहे तो वह कर्मोंसे लिप्त नहीं होताहै

न दोनेवर जो अनिष्ट करताहै वह तेज अनिष्ट धारकी वलवार ठुकराया हुआ सर्प व अतिक्रोधी शत्रुभी नहीं कर सक्ता ॥ २५ ॥ जिस पुरुषने विनय सीखाहै उसके स्वभावका विश्वास नहीं किया जाता जो पुरुष स्वभावको छिपाताहै वह स्वभावही उसके यथार्थ स्वभावको प्रकाश करदेताहै ॥ २६ ॥ जब अक्लिष्टकर्मा रघुनाथजीने उस ब्राह्मणसे ऐसा कहा तो सर्वार्थसिद्ध ब्राह्मण रामचंद्रसे बोला ॥ २७ ॥ महाराज! मैंने क्रोधके कारण इस श्वानको मारा कारण कि, मैं उस समयमें भिक्षा मांगता फिरताथा परन्तु उस समय भिक्षा नहीं मिलीथी ॥ २८ ॥ यह श्वान अस्थिलिये गलीमें फिरताथा, मैंने इससे जा, जा, कहा फिर यह मार्गके अन्तमें जाकर खडा हुआ और बडे जोरसे चिल्लाया ॥ २९ ॥ एक तो भूखा दूसरे मुझे क्रोध आगया तो हे रघुनाथजी ! मैंने इसे मारा मैं अपराधी तो हूं जो

विनीतविनयस्यापिप्रकृतिर्नविधीयते ॥ प्रकृतिंगूहमानस्यनिश्चयेनकृतिर्ध्रुवा ॥ २६ ॥ एवमुक्तःसविप्रोवैरामेणाक्लिष्टकर्मणा ॥ द्विजःसर्वार्थसिद्धस्तुअब्रवीद्रामसंनिधौ ॥ २७ ॥ मयादत्तप्रहारोयंक्रोधेनाविष्टचेतसा ॥ भिक्षार्थमटमानेनकालेविगतभैक्षके ॥२८॥ रथ्यास्थितस्त्वयंश्वावैगच्छगच्छेतिभाषितः ॥ अथस्वैरेणगच्छंस्तुरथ्यांतेविषमःस्थितः ॥ २९ ॥ क्रोधेनक्षुधयाविष्टस्ततोदत्तोस्यराघव ॥ प्रहारोराजराजेंद्रशाधिमामपराधिनम् ॥ ३० ॥ त्वयाशस्तस्यराजेंद्रनास्तिमेनरकाद्भयम् ॥ अथरामेणसंपृष्टाःसर्वएवसभासदः ॥ ३१ ॥ किंकार्यमस्यवैब्रूतदंडोवैकोस्यपात्यताम् ॥ सम्यक्प्रणिहितेदंडेप्रजाभवतिरक्षिता ॥ ३२ ॥ भृग्वांगिरसकुत्साद्यावसिष्ठश्चसकाश्यपः ॥ धर्मपाठकमुख्याश्चसचिवानेगमास्तथा ॥३३॥ एतेचान्येचबहवःपंडितास्तत्रसंगताः ॥ अवध्योब्राह्मणोदंडैरितिशास्त्रविदोविदुः ॥ ३४ ॥ ब्रुवतेराघवंधर्मेराजधर्मेषुनिष्ठिताः ॥ अथतेमुनयःसर्वेराममेवाब्रुवंस्तदा ॥ ३५ ॥ राजाशास्ताहिसर्वस्यत्वंविशेषेणराघव ॥ त्रैलोक्यस्यभवाञ्शास्तादेवोविष्णुःसनातनः ॥ ३६ ॥

आपकी इच्छा हो सो मुझे दंड दीजिये ॥ ३० ॥ हे राजेन्द्र ! जो आप मुझे दंड देंगे तो पवित्र हो जाऊंगा फिर मुझे नरकसे भय नहीं होगा यह सुनकर रघुनाथजीने सब सभासदोंसे पूछा ॥ ३१ ॥ कहो भाई इसका क्या कियाजाय कौनसा दंड इसको दिया जाय कारण कि, सम्यक् प्रकार दंड देनेसे प्रजा रक्षित रहतीहै ॥ ॥ ३२ ॥ उससमय भृगु, आंगिरस, कुत्सादिक, वसिष्ठ, और काश्यप तथा मुख्य धर्मपाठक मंत्री और शास्त्रके जाननेवाले ॥ ३३ ॥ इनके सिवाय वहां औरभी पंडितथे उन सब शास्त्रके जाननेवालोंने कहा ब्राह्मण अवध्यहै ॥ ३४ ॥ वे राजधर्मके जाननेवाले यह वचन कहनेलगे फिर वे सब मुनि रामचन्द्रसे बोले ॥ ३५ ॥ राजा सबको शिक्षा करनेवाला होताहै, और विशेष करके आपतो सबसे अधिकहैं आप साक्षात् सनातन विष्णु भगवान् त्रिलोकीका शासन करनेवालेहैं ॥ ३६ ॥

जब उन सब लोगोंने ऐसा कहा तो वह कुत्ता इस प्रकारसे बोला हे राम ! जो आप मुझपर प्रसन्नहो और मुझे वरदान देतेहो तो वर दीजिये ॥ ३७ ॥ और आप प्रतिज्ञाभी कर चुकेहो कि, मैं तेरा क्या कार्य करूं सो हे नराधिप ! इस ब्राह्मणको आप मठपति (कौलपत्य) कर दीजिये ॥ ३८ ॥ हे महाराज ! इस ब्राह्मणको कालिंजर देशका कौलाधिपत्य दीजिये यह वचन सुनकर रामचन्द्रने उसे कालिंजर देशके कौलाधिपत्यपर अभिषेक किया ॥ ३९ ॥ वह ब्राह्मण अभिषेक होके प्रसन्नहो हाथीपर चढकर गया और रघुनाथजीके मंत्री बडे २ आश्चर्यको प्राप्तहो बोले ॥ ४० ॥ हे दीप्तिमान ! यह तो ब्राह्मणको वर मिला दंड नहीं हुआ जब मंत्रियोंने ऐसा कहा तब रामचन्द्रजी बोले ॥४१॥ तुम इस बातके तत्त्वको नहीं जानते, श्वान इसका कारण जानता होगा, फिर रघुनाथजीके पूछनेपर सारमेय इस

एवमुक्तेतुतैःसर्वैःश्वावैवचनमब्रवीत् ॥ यदितुष्टोसिमेरामयदिदेयोवरोमम ॥ ३७ ॥ प्रतिज्ञातंत्वयावीरकिंकरोमीतिविश्रुतम् ॥ प्रयच्छब्राह्मणस्यास्यकौलपत्यंनराधिप ॥ ३८ ॥ कालंजरेमहाराजकौलपत्येभिषेचितः ॥ ३९ ॥ प्रययौब्राह्मणोहृष्टोगजस्कंधेनसोर्चितः ॥ अथतेरामसचिवाःस्मयमानावचोब्रुवन् ॥ ४० ॥ वरोयंदत्तएतस्यनायंशापोमहाद्युतेः ॥ एवमुक्तस्तुसचिवैरामोवचनमब्रवीत् ॥ ४१ ॥ नयूयंगतितत्त्वज्ञाःश्वात्रजानातिकारणम् ॥ अथपृष्टस्तुरामेणसारमेयोब्रवीदिमम् ॥ ४२ ॥ अहंकुलपतिस्तत्रआसंशिष्टान्नभोजनः ॥ देवद्विजातिपूजायांदासीदासेषुराघव ॥ ४३ ॥ संविभागीशुभरतिर्देवद्रव्यस्यरक्षिता ॥ विनीतःशीलसंपन्नःसर्वसत्त्वहितेरतः ॥ ४४ ॥ सोहंप्राप्तइमांघोरामवस्थामधमांगतिम् ॥ एवंक्रोधान्वितोविप्रस्त्यक्तधर्माहितेरतः ॥ ४५ ॥ क्रुद्धोनृशंसःपरुषअविद्वांश्चाप्यधार्मिकः ॥ कुलानिपातयत्येवसप्तसप्तचराघव ॥ ४६ ॥ यमिच्छेन्नरकंनेतंसपुत्रपशुबांधवम् ॥ ४७ ॥ देवेष्वधिष्ठितंकुर्याद्गोषुतंब्राह्मणेषुच ॥ ब्रह्मस्वंदेवद्रव्यंस्त्रीणांबालधनंचयत् ॥ ४८ ॥ दत्तंहरतियोभूयइष्टैःसहविनश्यति ॥ ब्राह्मणद्रव्यमादत्तेदेवानांचैवराघव ॥ ४९ ॥ तस्मात्सर्वास्ववस्थासुकौलपत्यंनकारयेत् ॥

प्रकारसे कहनेलगा ॥४२॥ हे रघुनाथजी ! मैं इस स्थानका कुलपति था; श्रेष्ठ फल भोजन करताथा, देव ब्राह्मणोंको पूजता दासी दासोंको ॥ ४३ ॥ उनके अनुसार विभाग करके धन देता देवताके द्रव्यकी रक्षा करता नीतिमान् सत्ययुक्त और सर्व प्राणियोंका हितकारी था ॥ ४४ ॥ सो मैं इस घोर अवस्था और अधम ... धर्मत्यागी अहितकारी ॥ ४५ ॥ क्रुद्ध, नृशंस, अविद्वान्, अधर्मी होनेसे हे राघव ! यह अपनी सात २ ... जो अपने पुत्रबंधु बांधवको नरकमें लेजाना चाहे ॥ ४७ ॥

... करताहै वह शीघ्रही ... नरकमें गिरताहै अथवा जो देवताका द्रव्य या ब्राह्मण ...
... हरण करताहै ॥ ५०॥ ५० ॥ वह नराधम नरकमें जाताहै यह वचन सुनतेही विस्मयके कारण रघुनाथजीके नेत्र प्रफुल्लित होगये और महातेजस्वी कु...
... वहां चलागया वह पूर्व जातियोंमें भी बुद्धिमान था जातिमात्रसे दूषितथा ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ वह महाभाग वाराणसीमें चलागया ॥ ५३ ॥
इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आ० उत्त० भाषाटीकायां प्र० द्वितीयः सर्गः ॥ २ ॥ इसके उपरान्त एक समय वनोदेश जहां कि सुन्दर वृक्ष लगरहेथे और नदी...
... स्थानोंमें जहां वृक्षोंमें कोकिला कूक रहीथीं ॥ १ ॥ जो वन सिंह और व्याघ्रोंसे युक्त था जहां अनेक पक्षी शब्द कर रहेथे वहां सैकडों वर्षोंसे एक ...

...पतनियोग्येनरकेघोरेनिमज्जके ॥ मनसापिहिदेवस्वंब्रह्मस्वंचहरेत्तुयः ॥५०॥ निरयान्निरयंचैवपतत्येवनराधमः ॥ तच्छ्रुत्वावचनंरामोविस्म...
...फुल्ललोचनः ॥ ५१ ॥ प्राप्यगच्छन्महातेजायतएवागतस्ततः ॥ मनस्वीपूर्वजात्यासजातिमात्रोपदूषितः ॥५२॥ वाराणस्यांमहाभागःप्रायं
...परिनिर्गतः ॥ ५३ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे प्र० द्वि० सर्गः ॥ २ ॥ अथतस्मिन्वनोद्देशेरम्येपादपशोभिते ॥
नदीगिरिदरीकोकिलानेककूजिते ॥ १ ॥ सिंहव्याघ्रसमाकीर्णेनानाद्विजगणावृते ॥ गृध्रोलूकौप्रवसतोवहुवर्षगणानपि ॥ २ ॥ अथोलूक
...भवनंगृध्रःपापविनिश्चयः ॥ ममेदमितिकृत्वासौकलहंतेनचाकरोत् ॥ ३ ॥ राजासर्वस्यलोकस्यरामोराजीवलोचनः ॥ तंप्रपद्यावहेशीघ्रं
...यस्यैतद्भवनंभवेत् ॥ ४ ॥ इतिकृत्वामतिंतौतुनिश्चयार्थंसनिश्चिताम् ॥ गृध्रोलूकौप्रपद्येतांकोपाविष्टौह्यमर्षितौ ॥ ५ ॥ रामंप्रपद्यतौशीघ्रंकलि
...व्याकुलचेतसौ ॥ तौपरस्परविद्वेषात्स्पृशतश्चरणौतदा ॥ ६ ॥ अथदृष्ट्वानरेन्द्रंतंगृध्रोवचनमब्रवीत् ॥ सुराणामसुराणांचप्रधानस्त्वंमतोमम ॥७॥
बृहस्पतेश्चशुक्राच्चविशिष्टोसिमहाद्युते ॥ परावरज्ञोभूतानांकांत्याचंद्रइवापरः ॥ ८ ॥

और उलूक वास करतेथे ॥ २॥ वह पापात्मा गृध्र उलूकके घरको "यह मेरा है" ऐसा कहकर प्रतिदिन उसके साथ कलह करताथा ॥ ३ ॥ जो राजीवलोचन राम सबज...
के राजाहैं हम उनके पास जाते हैं वह जिसका घर बतादें उसीका वह घर होगा ॥ ४ ॥ इसप्रकारसे वह दोनों निश्चित मति करके महाक्रोधको प्राप्तहो वह गृध्र ...
उलूक वहांसे चले ॥५॥ क्रोधसे व्याकुल हुए वे दोनों रामचन्द्रके निकट प्राप्तहो आपसमें द्वेषके कारण दोनों एक साथही चरण छूतेहुए ॥६॥ इस प्रकार रामचंद्र...
देखकर गृध्र वचन बोला, हे भगवन् ! मैं ऐसा जानताहूं कि, आप सुर और असुर दोनोंके विषे प्रधानहैं ॥ ७ ॥ हे महाद्युतिमान् ! आप बुद्धिमें बृहस्पति और शु...

जैसे सूर्यको कोई देख नहीं सकते ऐसे आप दुर्निरीक्ष्य हो,
तेभी अधिकहैं; आप प्राणियोंके, पर अपरके जाननेहारेहो और कांतिमें दूसरे चंद्रमाही हो ॥ ८ ॥ सहनशीलतामें पृथ्वीकी समान, वेगमें वायुकी समान आप सबके गुरु, सबसे युक्तहो
गौरवमें हिमालयकी समान हो लोकपालन करनेमें यमकी समान हो ॥ ९ ॥ और सब शास्त्रोंके पारगामीहो हे नरश्रेष्ठ रामचन्द्रजी ! मेरी विपत्ति
और हे राम ! आपकी बडी कीर्ति है ॥ १० ॥ आप क्रोधरहित हो दुर्जयहो सबके जीतनेवाले और सब शास्त्रोंके पारगामीहो है सो इससे रक्षा आप कीजिये ॥ १२ ॥ जब
आप सुनिये ॥११॥ हे राघव ! जो मेरा बहुत दिनोंका स्थान है सो यह बाहोंके बलके कारण उलूक छीनता है ॥ १३ ॥ उसमें मनुष्यता तो थोडीसी है, सम्पूर्ण
गृध्रने ऐसा कहा तो उलूक कहने लगा; चन्द्रमासे; इन्द्रसे, सूर्यसे, कुबेरसे, यमसे राजाका शरीर कल्पित होता है ॥ १३ ॥

क्षांत्याधरण्यातुल्योसिशीघ्रत्वेह्यनिलोपमः ॥ गुरुस्त्वं दुर्निरीक्ष्योयथासूर्योहिमवांश्चैवगौरवे ॥ सागरश्चैवगांभीर्येलोकपालोयमोह्यसि ॥ ९ ॥ अमर्षीदुर्जयोजेतासर्वास्त्रविधिपारगः ॥ शृणुष्वममवैरामविज्ञाप्यंनरपुंगव ॥ ११ ॥ ममालयंपूर्वकृतंबाहु सर्वसंपन्नकीर्तियुक्तश्चराघव ॥१०॥ वीर्येणराघव ॥ उलूकोहरतेराजंस्तत्रत्वंत्रातुमर्हसि ॥ १२ ॥ एवमुक्तेतुगृध्रेणउलूकोवाक्यमब्रवीत् ॥ सोमाच्छतक्रतोःसूर्याद्धनदाद्वायमात्तथा ॥ जायतेवैनृपोरामाकिंचिद्भवतिमानुषः ॥ १३ ॥ त्वंतुसर्वमयोदेवोनारायणइवापरः ॥ १४ ॥ याचतेसौम्यताराजन्सम्यक्प्रणिहिताविमो ॥ समंचरसिचान्विष्यतेनसोमांशकोभवान् ॥ १५ ॥ क्रोधेदंडेप्रजानाथदानेपापभयापहः ॥ दाताहर्तासिगोप्तासितेनेंद्रइवनोभवान् ॥ १६ ॥ अधृष्यःसर्वभूतेषुतेजसाचानलोपमः ॥ अभीक्ष्णंतपसेलोकांस्तेनभास्करसन्निभः ॥ १७ ॥ साक्षाद्वित्तेशतुल्योसिअथवाधनदाधिकः ॥ वित्तेशस्येवपद्माश्रीर्नित्यंतेराजसत्तम ॥ १८ ॥ धनदस्यतुकार्येणधनदस्तेननोभवान् ॥ समःसर्वेषुभूतेषुस्थावरेषुचरेषुच ॥ १९ ॥ शत्रौमित्रे चतेदृष्टिःसमतोयातिराघव ॥ धर्मेणशासनंनित्यंव्यवहारेविधिक्रमात् ॥ २० ॥

देखता है और तुम तो सब देवमय साक्षात् नारायणरूपही हो ॥१४॥ हे प्रभो ! जो आपके प्रति प्रणाम करके सम्यक् प्रकारसे याचना करते हैं आप सब बातोंको
खोजते सबमें समान दृष्टि रखते हो इसकारण आप सोमके अंश हो ॥ १५ ॥ हे प्रजानाथ ! क्रोध और दंड देनेमें और दानमें पाप और भयके हरनेहारे दाता हर्ता और
रक्षा करनेवाले होनेमे आप इन्द्रके अंश हो॥१६॥सम्पूर्ण प्राणियोंसे अधृष्य होनेके कारण तेजमें आप अग्निके समान हो और सूर्यके समान निरन्तर लोकोंको तपाते हो॥
॥१७॥ आप साक्षात् कुबेरकी तुल्य वा इनसे अधिक हो कारण कि, कुबेरकी समान राज्यलक्ष्मी नित्य तुम्हारे यहां वास करतीहै ॥ १८ ॥ कुबेरका कार्य करनेमे अर्थात
[illegible] समान दृष्टि रखतेहो ॥ १९ ॥ हे राघव ! आपकी दृष्टि शत्रु मित्रमें समान रहती है आप धर्मसे

व्यवहार करतेहो ॥ २० ॥ हे राम ! तुम जिसके ऊपर क्रोध करो उसकी मृत्यु होनेमें क्या सन्देह है इसी कारणसे आपमें यमराजकी समान विक्रम
... ॥ २१ ॥ हे नृपश्रेष्ठ ! यही आपमें मनुष्यभाव दीखताहै कि, अनृशंसता और प्राणियोंके ऊपर दया करनी॥ २२॥ दुर्बल और अनाथका राजाही बल होवाहै,
... ॥ २३ ॥ हे धार्मिक ! सुनिये हमारेभी तुमही नाथ हो. हे नृप ! मेरे घरमें घुसकर यह गृध्र मुझे बडी पीडा देताहै ॥ २४ ॥
हे ... ! देवता और मनुष्योंमें आपही शासन करनेवाले हैं, यह श्रवण करतेही रघुनाथजीने मंत्रियोंको बुलाया ॥ २५ ॥ धृष्टि, जयन्त, विजय, सिद्धार्थ, राष्ट्रवर्धन,
अशोक, धर्मपाल और महावीर, सुमन्त्र ॥ २६ ॥ यह राजा दशरथकेही मन्त्री श्रीरामचन्द्रजीके मंत्री थे वह सब महात्मा नीतियुक्त और सब शास्त्रोंके जाननेवाले

यस्यक्रुध्यसिराजेन्द्रनस्यमृत्युर्विधावति ॥ गीयसेतेनवैरामयमइत्यभिविक्रमः ॥२१॥ यश्चैपमानुपोभावोभवतोनृपसत्तम ॥ आनृशंस्यपरोराजा सर्वेषुक्षमयान्वितः ॥ २२ ॥ दुर्बलस्यत्वनाथस्यराजाभवतिवैबलम् ॥ अचक्षुषोत्तमंचक्षुरगतेःसगतिर्भवान् ॥ २३ ॥ अस्माकमपिनाथस्त्वं श्रूयतांममधार्मिक ॥ ममालयंप्रविष्टस्तुगृध्रोमांबाधतेनृप ॥ २४ ॥ त्वंहिदेवमनुष्येषुशास्तावैनरपुंगव ॥ एतच्छ्रुत्वातुवैरामःसचिवानाह्वयत्स्वयम् ॥ २५ ॥ धृष्टिर्जयंतोविजयःसिद्धार्थोराष्ट्रवर्धनः ॥ अशोकोधर्मपालश्चसुमंत्रश्चमहाबलः ॥ २६ ॥ एतेरामस्यसचिवाराज्ञोदशरथस्यच॥ नीतियुक्तमहात्मानःसर्वशास्त्रविशारदाः ॥ २७ ॥ श्रीमंतश्चकुलीनाश्चनयेमंत्रेचकोविदाः ॥ तानाहूयचधर्मात्मापुष्पकादवतीर्यच ॥ ॥ २८ ॥ गृध्रोलूकविवादंतंपृच्छतिस्मरघूत्तमः ॥ कतिवर्षाणिवैगृध्रतवेदंनिलयंकृतम् ॥ २९ ॥ एतन्मेकारणंब्रूहियदिजानासितत्त्वतः ॥ एतच्छ्रुत्वातुवैगृध्रोभाषतेराघवंसतम् ॥ ३० ॥ इयंवसुमतीराममनुष्यैःपरितोयदा ॥ उत्थितैरावृतासर्वातदाप्रभृतिमेगृहम् ॥३१॥ उलूकश्चाब्रवीद्रामंपादपैःशोभिता ॥ यदेयंपृथिवीराजंस्तदाप्रभृतिमेगृहम् ॥ एतच्छ्रुत्वातुवैरामःसभासदमुवाचह ॥ ३२ ॥ नसासभायत्रनसंतिवृद्धावृद्धानतेयेनवदंतिधर्मम् ॥ नासौधर्मोयत्रनसत्यमस्तिनतत्सत्यंयच्छलेनानुविद्धम् ॥ ३३ ॥

थे ॥ २७ ॥ यह सब श्रीमान, कुलीन, नीतिज्ञ और पंडित थे धर्मात्मा रामचंद्रजी इन्हें बुलाकर और सिंहासनसे उतर ॥२८॥ रामचन्द्र गृध्र और उलूकके विवादको पूछनेलगे हे गृध्र ! तुमने यह स्थान कितने वर्षोंसे प्राप्त किया है ॥ २९ ॥ जो तुमही ठीक जानतेहो वो मुझसे यह वर्णन करो यह वार्ता सुन गृध्र रामसे कहनेलगा ॥ ३० ॥ हे राम ! जिस समय यह पृथ्वी मनुष्योंसे युक्त हुईथी जब सब यह मनुष्य इसपर वास करने लगे तभीसे मेरा घरहै ॥ ३१ ॥ यह सुनकर उलूक बोला हे राजन् ! जबसे यह पृथ्वी वृक्षोंसे शोभित हुई है तभीसे यह स्थान मेरा घरहै यह वचन सुनकर रामचन्द्र सभासदोंसे बोले ॥ ३२ ॥ वह सभा नहीं जहां वृद्ध

न हों और वह वृद्ध नहीं जो धर्मको न जानें, वह धर्म नहीं जो सत्यसे रहितहो,वह सत्य नहीं जिसमें छल मिलाहो ॥ ३३ ॥ जो सभासद सत्य वार्ताको जान करभी मौन हो जाते हैं, और ममयपर नहीं बोलते वह सब असत्यवादी हैं ॥ ३४ ॥ जानकर काम या क्रोधसे अथवा भयसे प्रश्नोंको नहीं कहताहै वह अपनेको वरु णकी हजार पाशोंसे बँधवाताहै ॥ ३५॥ एक वर्ष पूर्ण होनेपर उनकी एक पाश टूटती है इस प्रकार सत्यके जाननेवालोंको नित्य सत्यही बोलना चाहिये ॥ ३६॥ यह वचन सुनकर मंत्री रामचन्द्रसे बोले महाराज उलूक सत्य कहताहै और गृध्र झूठाहै ॥ ३७ ॥ हे महाराज ! इसमें आपही प्रमाणहैं क्योंकि राजाही परम गति होताहै सब प्रजाओंका राजाही मूलहै राजधर्मही सनातनहै ॥ ३८ ॥ जिनका शासन राजा करते हैं उनकी दुर्गति नहीं होती वह पुरुषोत्तम यमराजके फंदेसे

येतुमभ्याःसदाज्ञात्वातूष्णींध्यायंतआसते ॥ यथाप्राप्तंनब्रुवतेतेसर्वेनृतवादिनः ॥ ३४ ॥ जानन्नवाब्रवीत्प्रश्नान्कामात्क्रोधाद्भयात्तथा ॥ सहस्रं वारुणान्पाशानात्मनिप्रतिमुंचति ॥ ३५ ॥ तेषांसंवत्सरेपूर्णेपाशएकःप्रमुच्यते ॥ तस्मात्सत्येनवक्तव्यंजानतासत्यमंजसा ॥ ३६ ॥ एतच्छ्रुत्वातुसचिवारामंमेवाब्रुवंस्तदा ॥ उलूकःशोभतेराजन्नतुगृध्रोमहामते ॥ ३७ ॥ त्वंप्रमाणंमहाराजराजाहिपरमागतिः॥ राजमूलाःप्रजाःसर्वाराजा धर्मःसनातनः ॥ ३८ ॥ शास्तानृणांनृपोयेपांतेनगच्छंतिदुर्गतिम् ॥ वैवस्वतेनमुक्तास्तुभवंतिपुरुषोत्तमाः ॥ ३९ ॥ सचिवानांवचःश्रुत्वारामोवचनमब्रवीत् ॥ श्रूयतामभिधास्यामिपुराणेयदुदाहृतम् ॥ ४० ॥ द्यौःसचंद्रार्कनक्षत्रासपर्वतमहावना ॥ सलिलार्णवसंपूर्णंत्रैलोक्यंसचरा चरम् ॥ ४१ ॥ एकएवतदाह्यासीद्युक्तोमेरुरिवापरः ॥ पुराभूःसहलक्ष्म्याचविष्णोर्जठरमाविशत् ॥ ४२ ॥ तांनिगृह्यमहातेजाः प्रविश्यसलिलार्णवम् ॥ सुष्वापदेवोभूतात्मावहून्वर्षगणानपि ॥ ४३ ॥ विष्णौसुप्तेतदाब्रह्माविवेशजठरंततः ॥ रुद्धस्रोतंतुतंज्ञात्वामहायोगीसमाविशत् ॥ ४४ ॥ नाभ्यांविष्णोःसमुत्पन्नेपद्मेहेमविभूषिते ॥ सतुनिर्गम्यवैब्रह्मायोगीभूत्वामहाप्रभुः ॥ ४५ ॥

मुक्त हो जातेहैं ॥ ३९ ॥ मंत्रियोंके वचन सुनकर रामचन्द्रजी कहनेलगे जो कुछ पुराणोंमें लिखाहै सुनो मैं कहताहूं ॥४०॥ आकाश, चन्द्रमा, सूर्यनारायण, पर्वत, वन, यह सब तुरत चराचर सागरमें पूर्णथा ॥ ४१ ॥ उस समय सुमेरुकी समान अचल परमात्मा थे और पृथ्वी तो लक्ष्मीसहित भगवानके उदरमें प्रवेश कर गई ॥ ४२ ॥ वह महातेजस्वी ईश्वर इससे सबको ग्रहणकर जलमें प्रवेश करगये और वह सबके आत्मा देव नारायण उसमें सैकडों वर्षतक शयन करते रहे ॥ ४३ ॥ विष्णु भगवानके सोनेपर ब्रह्माजी उनके उदरमें प्रवेश करगये कारण कि, इन महायोगीने रुद्धस्रोत जानकर उनमें प्रवेश किया ॥ ४४ ॥ फिर सुवर्णोंकर

[illegible] उत्पन्न हुआ (और कान तो कम थे) उसमेंसे योग धारण कियेहुए महाप्रभु ब्रह्माजी उत्पन्न हुए ॥ ४५ ॥ उन्होंने [illegible] इस ब्रह्माण्डकी रचना की, इसी बीचमें सब प्रजा मनुष्य और रेंगनेवाले जीव ॥ ४६ ॥ जरायुज, अण्डज इत्यादि सबही प्राणियोंको म[illegible] ब्रह्माजीने उत्पन्न किया, इसी समय उनके कानके मलसे मधु और कैटभ उत्पन्न हुए ॥ ४७ ॥ यह दोनों दानव बडे बली वीर्यवान् दुरासद थे और ब्रह्माजीको बैठा देखकर बडे क्रोधित हुए ॥ ४८ ॥ और बडे वेगसे ब्रह्माजीपर दौडे उनको देखतेही ब्रह्माजीने विकृत चीत्कार की ॥ ४९ ॥ उस शब्दसे तुरंत भगवान् आनकर प्राप्त हुए; और भगवान्के संग उनका संग्राम हुआ तब भगवानने चक्रके प्रहारसे दोनोंको मारड

[illegible]पृथिवींवायुंपर्वतान्समहीरुहान् ॥ तदंतरेप्रजाःसर्वाःसमनुष्यसरीसृपाः ॥४६॥ जरायुजांडजाःसर्वाःससर्जमहातपाः ॥ तत्रश्रोत्रमल[illegible] [illegible]कैटभौमधुनासह ॥ ४७ ॥ दानवौतौमहावीर्यौघोररूपौदुरासदौ ॥ दृष्ट्वाप्रजापतिंतत्रक्रोधाविष्टौबभूवतुः ॥ ४८ ॥ वेगेनमहतातत्रस्वयं[illegible] [illegible]म् ॥ ब्रह्मास्वयंभुवायुक्तोगवोवैविकृतस्तदा ॥ ४९ ॥ तेनशब्देनसंप्राप्तोदानवौहरिणासह ॥ अथचक्रप्रहारेणसूदितौमधुकैटभौ ॥५० [illegible]प्लाविताभूपृथिवीनममंततः ॥ भूयोविशोधितातेनहरिणालोकधारिणा ॥ ५१ ॥ शुद्धांवैमेदिनींतांतुवृक्षैःसर्वामपूरयत् ॥ ओषध्यः [illegible]निनिष्पन्नंतपृथग्विधाः ॥ ५२ ॥ मेदोगंधातुधरणीमेदिनीत्यभिसंज्ञिता ॥ तस्मान्नगृध्रस्यगृहमुलूकस्येतिमेमतिः ॥ ५३ ॥ तस्मा[illegible] [illegible]दंडनीयोपापात्मापरालयम् ॥ पीडांकरोतिपापात्मादुर्विनीतोमहानयम् ॥ ५४ ॥ अथाशरीरिणीवाणीअंतरिक्षात्प्रबोधिनी ॥ मावधीरा[illegible] [illegible]पूर्वदग्धंतपोबलात् ॥ ५५ ॥ कालगौतमदग्धोयंप्रजानाथोनरेश्वर ॥ ब्रह्मदत्तेतिनाम्नैषशूरःसत्यव्रतःशुचिः ॥ ५६ ॥

॥ ५० ॥ उनकी चर्बीसे सब पृथ्वी गीली होगई तब संसारके धारण करनेवाले भगवानने उस पृथ्वीका फिर शोधन किया ॥ ५१ ॥ और जब पृथ्वी शु[illegible] [illegible] तब उसे सब स्थानोंमें वृक्षोंसे पूर्ण करदिया और उसमें ओषधी और अन्न उत्पन्न होने लगे ॥ ५२ ॥ मेदकी गंधवाली होनेसे इसपृथ्वीका नाम [illegible] हुआ इस कारणसे उलूकका पता देना ठीकहीहै; इससे इसीका घरहै गृध्रका नहीं यह हमें निश्चयहै ॥ ५३ ॥ इस कारण अब यह दूसरेके घरका हरण कर[illegible] पापात्मा गृध्र दंड देने योग्यहै यह दुर्विनीत पापात्मा उलूकको बहुत दुःख देताहै ॥५४॥ उसी समय आकाशसे अशरीरिणी वाणी हुई हे रामचन्द्र ! तुम गृध्रको मारे यह तपोबलसे पहलेही दग्ध होचुकाहै ॥ ५५ ॥ हे नरेश्वर ! इस प्रजानाथको कालगौतमने दग्ध कर दियाहै इसका नाम पूर्व जन्ममें ब्रह्मदत्तथा य[illegible]

सत्यव्रत और पवित्रथा ॥ ५६ ॥ एक समय इसके यहां मार्गसे चलाहुआ एक ब्राह्मण भोजनके निमित्त आया ॥ ५७ ॥ राजा ब्रह्मदत्तने उसे पाद्य और अर्घ्य प्रदान किया और उस महाद्युतिमान्का भोजनके निमित्त बडा सत्कार किया ॥ ५८ ॥ भोजन करनेको उन महात्माको इसने मांस दिया तब तो मुनिने क्रोध करके इसे दारुण शाप दिया ॥ ५९ ॥ हे राजन् तु गृध्र होजाओ राजाने कहा महाराज कृपा कीजिये हे धर्मज्ञ ! मैंने अनजाने यह कार्य किया इससे कृपा करो हे महाव्रत ! प्रसन्न हो ॥६०॥ हे महाभाग ! पापरहित शापका अन्त तो कीजिये तब मुनिने अज्ञानसे राजासे अपराध हुआ जानकर कहा ॥ ६१ ॥ कि, राजवंशमें महायशस्वी रामचन्द्र उत्पन्न होंगे वह महाभाग कमललोचन राम इक्ष्वाकुके कुलमें अवतार लेंगे ॥ ६२ ॥ हे नरश्रेष्ठ ! उनके स्पर्श करनेसे तुम पाप

गृहंतस्यागतोविप्रोभोजनंप्रत्यमार्गत ॥ साग्रंवर्षशतंचैवभोक्तव्यंनृपसत्तम ॥ ५७ ॥ ब्रह्मदत्तःसवैतस्यपाद्यमर्घ्यंस्वयंनृपः ॥ हार्दंचैवाकरोत्तस्य भोजनार्थंमहाद्युतेः ॥ ५८ ॥ मांसमस्याभवत्तत्रआहारेतुमहात्मनः ॥ अथक्रुद्धेनमुनिनाशापोदत्तोस्यदारुणः ॥ ५९ ॥ गृध्रस्त्वंभववैराजन्म मेनंव्यथसोब्रवीत् ॥ प्रसादंकुरुधर्मज्ञअज्ञानान्मेमहाव्रत ॥६०॥ शापस्यांतंमहाभागक्रियतांवैममानघ ॥ तदज्ञानकृतंमत्वाराजानंमुनिरब्रवीत् ॥ ६१ ॥ उत्पत्स्यतिकुलेराज्ञांरामोनाममहायशाः ॥ इक्ष्वाकूणांमहाभागोराजाराजीवलोचनः ॥६२॥ तेनस्पृष्टोविपापस्त्वंभवितानरपुंगव ॥ स्पृष्टोरामेणतच्छ्रुत्वानरेंद्रःपृथिवीपतिः ॥ ६३ ॥ गृध्रत्वंत्यक्तवान्राजादिव्यगंधानुलेपनः ॥ पुरुषोदिव्यरूपोभूदुवाचेदंचराघवम् ॥ ६४ ॥ साधु राघवधर्मज्ञत्वत्प्रसादादहंविभो ॥ विमुक्तोनरकाद्घोराच्छापस्यांतःकृतस्त्वया ॥ ६५ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तर कांड एतदंतं प्रक्षिप्ताःसर्गाः ॥३॥ ॥ तयोःसंवदतोरेवंरामलक्ष्मणयोस्तदा ॥ वासंतिकीनिशाप्राप्तानशीतानचघर्मदा ॥१॥ ततःप्रभातेविमले कृतपूर्वाह्णिकक्रियः ॥ अभिचक्रामकाकुत्स्थोदर्शनंपौरकार्यवित् ॥ २ ॥

रहित हो जाओगे यह वचन सुनकर रामचन्द्रने उस नरेन्द्र पृथ्वीपतिका स्पर्श किया ॥ ६३ ॥ उसी समय गृध्रपन त्यागकर वह राजा शरीरमें दिव्य गन्ध लगाये दिव्यरूप पुरुष होकर रामचन्द्रसे बोला ॥ ६४ ॥ धन्यहो धर्मात्मा रघुनंदनजी हे प्रभो ! तुम्हारेही प्रसादसे आज मैं घोर शापरूपी नरकसे उत्तीर्ण हुआ, आपने आज शापका अन्त किया ॥ ६५ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे भाषाटीकायां प्र० तृतीयः सर्गः ॥ ३ ॥ क्षेपक समाप्त हुआ । राम और लक्ष्मणको इसप्रकार वार्ता करते २ वसन्त ऋतुकी रात्रि प्राप्त हुई जिसमें न बहुत गरमी न बहुत शरदी होतीहै ॥ १ ॥ फिर उज्ज्वल प्रातःकाल होनेपर

... के कार्य देखनेको सभामें जाते ॥२॥ उसी समय सुमंतने आनकर रघुनाथजीसे कहा, हे भगवन् ! यह ... के निमित्त गहैहैं ॥३॥ भृगुवंशमें हुए च्यवनको आगे करके महर्षि आपके दर्शन पानेके निमित्त बडी शीघ्रता कर रहे हैं हमें ... मुनियोंको भेजाहै ॥४॥ हे नरेंद्र ! यह यमुनातीरके रहनेहारे मुनि आपकी प्रसन्नता चाहतेहैं सुमंतके यह वचन सुन रामचन्द्रजी बोले ॥ ५ ॥ ... च्यवनादि महाभाग्यवान ऋषियोंको शीघ्र बुलाओ, रामचन्द्रकी आज्ञा पाय द्वारपाल शिर झुकाय, हाथ जोड ॥६॥ उन बडे तपस्वियोंको प्रवेशित करतेहुए । वह ... कुछ अधिक नामी अपने तेजसे दीप्तिमान हो रहेथे ॥ ७ ॥ जिस समय महात्मा तपस्वियोंने राजभवनमें प्रवेश किया उस समय यह महात्मा सब तीर्थोंके

ततःसुमंत्रस्त्वागम्यराघवंवाक्यमब्रवीत् ॥ एतेप्रनिहताराजन्द्वारितिष्ठंतितापसाः ॥ ३ ॥ भार्गवंच्यवनंचैवपुरस्कृत्यमहर्षयः ॥ दर्शनंतेमहाराजनोदयंतिकृतत्वराः ॥ ४ ॥ प्रीयमाणानरव्याघ्रयमुनातीरवासिनः ॥ तस्यतद्वचनंश्रुत्वारामःप्रोवाचधर्मवित् ॥ ५ ॥ प्रवेश्यंतांमहाभागाभार्गवप्रमुखाद्विजाः ॥ राज्ञस्त्वाज्ञांपुरस्कृत्यद्वास्थोमूर्ध्नाकृतांजलिः ॥ ६ ॥ प्रवेशयामासतदातापसान्सुदुरासदान् ॥ शतंसमधिकंतत्रदीप्यमानंस्वतेजसा ॥ ७ ॥ प्रविष्टंराजभवनंतापसानांमहात्मनाम् ॥ तेद्विजाःपूर्णकलशैःसर्वतीर्थांबुसत्कृतैः ॥ ८ ॥ गृहीत्वाफलमूलंचरामस्याभ्याहरन्बहु ॥ प्रतिगृह्यतुतत्सर्वंरामःप्रीतिपुरस्कृतः ॥ ९ ॥ तीर्थोदकानिसर्वाणिफलानिविविधानिच ॥ उवाचचमहाबाहुःसर्वानेवमहामुनीन् ॥ ॥ १० ॥ इमान्यासनमुख्यानियथार्हमुपविश्यताम् ॥ रामस्यभाषितंश्रुत्वासर्वएवमहर्षयः ॥ ११ ॥ बृसीषुरुचिराख्यासुनिषेदुःकांचनीषुते ॥ उपविष्टानृषींस्तत्रदृष्ट्वापरपुरंजयः ॥ प्रयतःप्रांजलिर्भूत्वाराघवोवाक्यमब्रवीत् ॥ १२ ॥ किमागमनकार्यंवःकिंकरोमिसमाहितः ॥ आज्ञाप्योहंमहर्षीणांसर्वकामकरःसुखम् ॥ १३ ॥

जलसे पूर्णकलश लिये हुएथे ॥ ८ ॥ और फल मूलभी रघुनाथजीके निमित्त बहुत लायेथे श्रीरामचन्द्रजीने प्रसन्नहो यह सब भेंट ग्रहण की ॥ ९ ॥ सम्पूर्ण तीर्थोंका जल और अनेक प्रकारके कंद, मूल, फल लेकर महाबाहु रामचन्द्र सब मुनियोंसे बोले ॥१०॥ यह मुख्य आसन बिछेहैं; आप इनपर यथायोग्य बैठिये रामचन्द्रके वचन सुन करके सब महर्षि ॥ ११ ॥ सुन्दर शोभायुक्त सोनेकी चौकियोंके ऊपर बैठे, शत्रुघाती रामचन्द्र उन सब ऋषियोंको स्थित देख, शिर झुकाय हाथ जोडकर नीतियुक्त वचन बोले ॥ १२ ॥ आप लोगोंके आनेका कारण क्या है?, मैं आपकी कौनसी आज्ञाका पालन करूं, आप आज्ञा कीजिये; आपके सब

अभीष्ट पूरे होंगे ॥ १३॥ यह राज्य, जीवन और जो कुछ हृदयमें स्थित प्राण वह सब ब्राह्मणोंहीके निमित्तहैं यह मैं सत्य कहताहूं ॥१४॥ रघुनाथजीके यह वचन सुन ऋषिगण धन्य धन्य कहनेलगे और बडे तपस्वी यमुनातीरके ऋषि ॥ १५ ॥ बडे महात्मा महाहर्षितहो कहनेलगे कि, हे भगवन् ! इस संसारमें तुम्हारे सिवाय ऐसा वचन कोई नहीं कहसक्ता यह वचन आपहीके योग्यहैं ॥१६॥ हे राजन्! हमने बडे २ वली राजाओंके निकट अपना कार्य सुनाया परन्तु इस कार्यका गौरव जान किसीनेभी कार्य करनेकी प्रतिज्ञा न की ॥ १७ ॥ आपने ब्राह्मणोंके गौरवसे यह प्रतिज्ञा विनाही कारण जान कीहै इससे हमारा कार्य आप करेंगे इसमें संदेह नहीं आप ऋषियोंको महाभयसे छुडानेके योग्यहो ॥ १८ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे भाषाटीकायां षष्टितमः सर्गः ॥ ६० ॥

इदंराज्यंचसकलंजीवितंचहृदिस्थितम् ॥ सर्वमेतद्द्विजार्थंमेसत्यमेतद्ब्रवीमिवः ॥ १४ ॥ तस्यतद्वचनंश्रुत्वासाधुकारोमहानभूत् ॥ ऋषीणामुग्रतपसांयमुनातीरवासिनाम् ॥ १५ ॥ ऊचुश्चैवमहात्मानोहर्षेणमहतावृताः ॥ उपपन्नंनरश्रेष्ठतवैवभुविनान्यतः ॥ १६ ॥ बहवःपार्थिवाराजन्नतिक्रांतामहाबलाः॥ कार्यस्यगौरवंमत्वाप्रतिज्ञांनाभ्यरोचयन् ॥१७॥ त्वयापुनर्ब्राह्मणगौरवादियंकृताप्रतिज्ञाह्यनवेक्ष्यकारणम् ॥ ततश्चकर्ताह्यसिनात्रसंशयोमहाभयात्त्रातुमृषींस्त्वमर्हसि ॥ १८ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे षष्टितमः सर्गः ॥ ६० ॥ ब्रुवद्भिरेवमृषिभिःकाकुत्स्थोवाक्यमब्रवीत् ॥ किंकार्यंब्रूतमुनयोभयंतावदपैतुवः ॥ १ ॥ तथाब्रुवतिकाकुत्स्थेभार्गवोवाक्यमब्रवीत् ॥ भयानांशृणुयन्मूलंदेशस्यचनरेश्वर ॥ २ ॥ पूर्वंकृतयुगेराजन्दैतेयःसुमहामतिः ॥ लोलापुत्रोभवज्ज्येष्ठोमधुर्नाममहासुरः ॥ ३ ॥ ब्रह्मण्यश्चशरण्यश्चबुद्ध्याचपरिनिष्ठितः ॥ सुरैश्चपरमोदारैःप्रीतिस्तस्यातुलाभवत् ॥४॥ समधुर्वीर्यसंपन्नोधर्मेचसुसमाहितः ॥ बहुमानाच्चरुद्रेणदत्तस्तस्याद्भुतोवरः ॥ ५ ॥ शूलंशूलाद्विनिष्कृष्यमहावीर्यंमहाप्रभम् ॥ ददौमहात्मासुप्रीतोवाक्यंचैतदुवाचह ॥ ६ ॥

ऋषियोंके ऐसा कहनेपर रघुनाथजी बोले, हे मुनियो ! बताओ तुम्हारा क्या कार्यहै वह भय तुम्हारा दूर किया जायगा ॥ १ ॥ रामचन्द्रके ऐसा कहनेपर च्यवनजी बोले, हे नरेश्वर ! हमारे देशमें जो भयका कारणहै सो सुनिये ॥ २ ॥ प्रथम सतयुगमें एक महाबुद्धिमान दैत्य मधुनामक महाराक्षस लोलाका बडा पुत्रथा ॥ ३ ॥ वह ब्राह्मणोंका माननेहारा शरणागतवत्सल बडा बुद्धिमान् था और परम उदार देवताओंके संगभी इसकी बडी प्रीति हुई ॥ ४ ॥ वह महाबली मधु धर्ममें सावधान होकर बडे मानसे शिवको प्रसन्न करने लगा तब शिवजीने उसे अद्भुत वर दिया ॥ ५ ॥ [illegible]

तयायमतुलोधर्मोमत्प्रसादकरःशुभः ॥ प्रीत्यापरमयायुक्तोददाम्यायुधमुत्तमम् ॥ ७ ॥ यावत्सुरैश्चविप्रैश्चनविरुध्येर्महासुर ॥ तावच्छूलंतवेदं स्यादन्यथानाशमेष्यति ॥ ८ ॥ यश्चमामभियुंजीतयुद्धायविगतज्वरः ॥ तंशूलोभस्मसात्कृत्वापुनरेष्यतितेकरम् ॥ ९ ॥ एवंरुद्राद्वरंलब्ध्वाभूयएवमहासुरः ॥ प्रणिपत्यमहादेवंवाक्यमेतदुवाचह ॥ १० ॥ भगवन्ममवंशस्यशूलमेतदनुत्तमम् ॥ भवेत्तुसततंदेवसुराणामीश्वरोह्यसि ॥ ११ ॥ तंब्रुवाणंमधुंदेवःसर्वभूतपतिःशिवः ॥ प्रत्युवाचमहादेवोनैतदेवंभविष्यति ॥ १२ ॥ माभूत्तेविफलावाणीमत्प्रसादकृताशुभा ॥ भवतःपुत्रमेकंतु शूलमेतद्भविष्यति ॥ १३ ॥ यावत्करस्थःशूलोयंभविष्यतिसुतस्यते ॥ अवध्यःसर्वभूतानांशूलहस्तोभविष्यति ॥ १४ ॥ एवंमधुर्वरंलब्ध्वादेवात्सुमहदद्भुतम् ॥ भवनंसोऽसुरश्रेष्ठःकारयामाससुप्रभम् ॥ १५ ॥ तस्यपत्नीमहाभागाप्रियाकुंभीनसीतिया ॥ विश्वावसोरपत्यंसाप्यनलायांमहाप्रभा ॥ १६ ॥ तस्याःपुत्रोमहावीर्योलवणोनामदारुणः ॥ वाल्यात्प्रभृतिदुष्टात्मापापान्येवसमाचरत् ॥ १७ ॥ तंपुत्रंदुर्विनीतंतुदृष्ट्वाक्रोधसमन्वितः ॥ मधुःसशोकमापेदेनचैनंकिंचिदब्रवीत् ॥ १८ ॥

तब शंकर भगवान् शिवजीने उसे प्रिय और प्रसन्न होकर इस प्रकारसे कहने लगे ॥ ६ ॥ जोकि, तुमको अपनी प्रसन्नतासे तुम्हारी धर्मनिष्ठा देखकर प्रसन्नतासे तुमको यह उत्तम आयुध देताहूं ॥ ७ ॥ सो हे महासुर ! जबतक तुम देवता और ब्राह्मणोंसे विरोध न करोगे तबतक यह शूल तुम्हारे पास रहेगा इससे अन्यथा करनेमें नाश होजायगा ॥ ८ ॥ और जो तुमसे युद्ध करनेको आवे उसके ऊपर निर्भयहो इस शूलका प्रहार करना यह शूल उसको भस्मकर फिर तेरे हाथमें आजायगा ॥ ९ ॥ इसप्रकार शिवजीसे वर पाय वह महाराक्षस फिरभी महादेवजीको दंडवत्कर इसप्रकार बोला ॥ १० ॥ हे भगवन् ! यह शूल मेरे वंशवालोंके पासभी मेरे पीछे रहे, ऐसी आप कृपा कीजिये कारण कि, आप देवताओंके ईश्वर समर्थ हैं ॥ ११ ॥ मधुके ऐसा कहनेपर सब प्राणियोंके अधिपति शिवजी (महादेवजी) कहने लगे ऐसा वो नहीं होसक्ता ॥ १२ ॥ परन्तु तेरी याचनाभी मिथ्या होनी उचित नहीं कारण तेंने मेरी प्रसन्नता प्राप्त कीहै इस कारण तुम्हारे एक पुत्रके हाथमें शूल रहेगा ॥ १३ ॥ जबतक तुम्हारे पुत्रके हाथमें शूल रहेगा वो शूल हाथमें रहनेके कारण यह सब प्राणियोंसे अवध्य होगा ॥ १४ ॥ इस प्रकारसे वह असुरश्रेष्ठ मधु महादेवजीसे अद्भुतवर पाय एक बडा श्रेष्ठ कांतियुक्त मंदिर निर्माण करता हुआ ॥ १५ ॥ उसकी महाभाग्यवती कुंभीनसी नाम पत्नी थी वह महाकांतिमान् अनलामें विश्वावसुसे उत्पन्न हुई थी ॥ १६ ॥ [यह अनला माल्यवानकी सुता रावणकी स्वसाथी] उसका पुत्र महावीर्यवान् दारुण लवणासुर है जो बालकपनसेही दुष्ट स्वभाव पापभावि पापही करताहै ॥ १७ ॥ उस अपने पुत्रको ऐसा दुर्विनीत देखकर क्रोधित हो मधुने तथा

शोक किया और उससे कुछभी न बोला ॥१८॥ और वह इस लोकको छोड वरुणलोकको चलागया और वह त्रिशूल उसे देकर सब वरका समाचार कह गया कि, जबतक तेरे हाथमें शूल रहेगा तबतक तू अवध्य रहेगा ॥ १९ ॥ वह शूलके प्रभाव और अपनी कुटिलतासे त्रिलोकीको दुःखी करताहै और तपस्वियोंको बहुतही सताताहै ॥ २० ॥ इस प्रभाववाला वह लवणासुरहै और ऐसा उसके पास शूलहै अब आप इसमें जो चाहो सो करो क्योंकि हमारे परमगति आपही हो ॥ २१ ॥ हे राजन् ! भयसे व्याकुलहो ऋषियोंने बहुतसे राजाओंसे अपने अभयकी याचना की परन्तु किसीने रक्षा न की ॥ २२ ॥ सो जब हमने सुना कि, आपने सकुटुम्ब रावणका संहार किया तो हमने आपकोही अपना रक्षक जाना पृथ्वीमें और कोई राजा हमारा रक्षक नहीं सो लवणासुरके भयसे

सविहायइमंलोकंप्रविष्टोवरुणालयम् ॥ शूलंनिवेश्यलवणेवरंतस्मैन्यवेदयत् ॥१९॥ सप्रभावेणशूलस्यदौरात्म्येनात्मनस्तथा ॥ संतापयतिलोकांस्त्रीन्विशेषेणचतापसान् ॥ २० एवंप्रभावोलवणःशूलंचैवतथाविधम् ॥ श्रुत्वाप्रमाणंकाकुत्स्थत्वंहिनःपरमागतिः ॥ २१ ॥ बहवःपार्थिवा रामभयार्तैर्ऋषिभिःपुरा ॥ अभयंयाचितावीरत्रातारंनचविद्महे ॥ २२ ॥ तेवयंरावणंश्रुत्वाहतंसबलवाहनम् ॥ त्रातारंविद्महेतातनान्यं भुविनराधिपम् ॥ तत्परित्रातुमिच्छामोलवणाद्भयपीडितान् ॥ २३ ॥ इतिरामनिवेदितंतुतेभयजंकारणमुत्थितंचयत ॥ विनिवारयितुंभवान्क्षमःकुरुतंकाममहीनविक्रम ॥ २४ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्ये उत्तरकांडे एकषष्टितमः सर्गः ॥ ६१ ॥ तथोक्ते तानृषीन्रामःप्रत्युवाचकृतांजलिः ॥ किमाहारःकिमाचारोलवणःक्वचवर्तते ॥ १ ॥ राघवस्यवचःश्रुत्वाऋषयःसर्वएवते ॥ ततोनिवेदयामासुर्लवणोववृधेयथा ॥ २ ॥ आहारःसर्वसत्त्वानिविशेषेणचतापसाः ॥ आचारोरौद्रतानित्यंवासोमधुवनेतथा ॥ ३ ॥ हत्वाबहुसहस्राणि सिंहव्याघ्रमृगांडजान् ॥ मानुषांश्चैवकुरुतेनित्यमाहारमाह्निकम् ॥ ४ ॥

पीडित हुए हम आपसे अपनी रक्षाकी इच्छा करते हैं ॥ २३ ॥ इस प्रकारसे अपने भयका कारण उन्होंने रघुनाथजीसे निवेदन किया और बोले, हे भगवन् ! आप बडे बलीहो, इस भयके निवारण करनेमें आपही समर्थहो ॥ २४ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषाटीकायामेकषष्टितमः सर्गः ॥ ६१ ॥
उन ऋषियोंके ऐसा कहनेपर रघुनाथजी हाथ जोड बोले, लवणासुरका क्या आहार, क्या आचारहै और वह कहां रहताहै ॥ १ ॥ रामचन्द्रके यह वचन श्रवणकर ये सब ऋषि जिस प्रकार लवणासुरकी वृद्धि हुईथी सब निवेदन करने लगे ॥ २ ॥ हे महाराज ! यह सभी जीवोंका भक्षण करताहै परन्तु विशेषकर तपस्वियोंको खाताहै, सदा क्रूरता उसका आचारहै और मधुवनमें रहताहै ॥ ३ ॥ हजारों सिंह, व्याघ्र, मृग पक्षियोंको मारकर और जो मनुष्य मिलतेहैं उनकोभी नित्य आहार कर जाताहै ॥ ४ ॥

इनके बीचमें वह महाबली और जीवोंको भी खा जाताहै वह संहार करनेके समय मुख फैलायकर कालकी समान दृष्टि आताहै ॥५॥ यह वचन सुन रामचन्द्रजी महामुनियोंसे बोले, मैं उस राक्षसका वध करवा दूंगा आप उसका भय त्याग कीजिये ॥ ६ ॥ इस प्रकार उन बडे तेजस्वी ऋषियोंसे प्रतिज्ञा करके सब भाइयोंसे रघुनाथजी बोले ॥७॥ हे वीरो! तुममेंसे लवणासुरको कौन मारेगा और वह किसका अंश है सो बताओ महाबाहु भरतकाहै या बुद्धिमान शत्रुघ्नका ॥८॥ रामचन्द्रके ऐसा कहने पर भरतजी बोले, मैं उसे मारडालूंगा उसे मेरा भाग विधान कीजिये ॥ ९ ॥ यह भरतजीके वचन सुनकर धीरता और शूरता सहित लक्ष्मणके छोटे भ्राता सोनेका सिंहासन छोडकर खडे हुए ॥ १० ॥ रामचन्द्रको प्रणाम करके शत्रुघ्नजी बोले, कि महाबाहु भरतजी तो कृतकार्य हो चुकेहैं ॥ ११ ॥ कारण कि, जिस समय

ततोन्तराणिसत्त्वानिखादतेसमहाबलः ॥ संहारेसमनुप्राप्तेव्यादितास्यइवांतकः ॥ ५ ॥ तच्छ्रुत्वाराघवोवाक्यमुवाचसमहामुनीन् ॥ घातयिष्यामितद्रक्षोव्यपगच्छतुवोभयम् ॥ ६ ॥ प्रतिज्ञायतदातेषांमुनीनामुग्रतेजसाम् ॥ सभ्रातॄन्सहितान्सर्वानुवाचरघुनंदनः ॥ ७ ॥ कोहंतालवणंवीरःकस्यांशःसविधीयताम् ॥ भरतस्यमहाबाहोःशत्रुघ्नस्यचधीमतः ॥ ८ ॥ राघवेणैवमुक्तस्तुभरतोवाक्यमब्रवीत् ॥ अहमेनंवधिष्यामिममांशःसविधीयताम् ॥ ९ ॥ भरतस्यवचःश्रुत्वाधैर्यशौर्यसमन्वितम् ॥ लक्ष्मणावरजस्तस्थौहित्वासौवर्णमासनम् ॥ १० ॥ शत्रुघ्नस्त्वब्रवीद्वाक्यंप्रणिपत्यनराधिपम् ॥ कृतकर्मामहाबाहुर्मध्यमोरघुनंदन ॥ ११ ॥ आर्येणहिपुराशून्यात्वयोध्यापरिपालिता ॥ संतापंहृदयेकृत्वाआर्यस्यागमनंप्रति ॥ १२ ॥ दुःखानिचबहूनीहअनुभूतानिपार्थिव ॥ शयानोदुःखशय्यासुनंदिग्रामेमहायशाः ॥ १३ ॥ फलमूलाशनोभूत्वाजटीचीरधरस्तथा ॥ अनुभूयेदृशंदुःखमेषराघवनंदन ॥ १४ ॥ प्रेष्येमयिस्थितेराजन्नभूयःक्लेशमाप्नुयात् ॥ तथाब्रुवतिशत्रुघ्नेराघवःपुनरब्रवीत् ॥ १५ ॥ एवंभवतुकाकुत्स्थक्रियतांममशासनम् ॥ राज्येत्वामभिषेक्ष्यामिमधोस्तुनगरेशुभे ॥ १६ ॥ निवेशयमहाबाहोभरतंयद्यवेक्षसे ॥ शूरस्त्वंकृतविद्यश्चसमर्थश्चनिवेशने ॥ १७ ॥

आप अयोध्यासे वनको चले गये उस समय हृदयमें सन्ताप धारण कर आपके आगमन पर्यन्त अयोध्याकी पालना की ॥ १२ ॥ हे रामचन्द्रजी ! इन्होंने बहुतसे दुःख उठाये हैं यह महायशस्वी दुःख भोगते नंदिग्राममें कुशासनपर सोचुकेहैं ॥ १३ ॥ फल, मूल भक्षणकर जटा धारण किये चीर वस्त्र पहरे इस प्रकारके हे रघुनंदन ! इन्होंने बहुत दुःख उठायेहैं ॥१४॥ मेरे जानेसे यह यहां रहेंगे तो फिर इनको क्लेश न होगा जब ऐसा शत्रुघ्नने कहा तो रामचन्द्र बोले ॥ १५ ॥ हे काकुत्स्थ ! ऐसाही हो मेरी आज्ञा मानिये मैं तुमको उस शुभ मधुनगरके राज्यमें अभिषेक करताहूं ॥ १६ ॥ हे महाबाहो !

स्त्रियोंके संग मिलकर मंगल करनेलगीं और यमुनातीरवासी महात्मा ऋषिगण ॥ १७ ॥ शत्रुघ्नके अभिषेकसे लवणासुरको मरा मानने लगे, तब अभिषेकको प्राप्त हुए शत्रुघ्नको रामचन्द्र गोदीमें बैठाकर उनके तेजको बढातेहुए मधुरवाणी बोले ॥१८॥ हे सौम्य ! रघुनंदन ! मैं यह शत्रुको मारनेवाला दिव्य बाण तुमको देताहूं इसीसे तुम लवणासुरको मारना ॥ १९ ॥ हे काकुत्स्थ ! सागरमें शयन करतेहुए स्वयंभूने इस दिव्य बाणको निर्माण कियाथा उस समय इसे देवता और दैत्य किसीनेभी नहीं देखाथा ॥ २० ॥ यह सब प्राणियोंको अदृश्य है; इसी कारण सब बाणोंमें श्रेष्ठ है; यह क्रोध करके उन दोनों दुरात्माओंके मारनेको बनायाथा ॥ ॥ २१ ॥ जिस समय ब्रह्माजी त्रिलोकीको निर्माण करतेथे उस समय मधु और कैटभ तथा और भी राक्षस उसमें विघ्न करतेथे सो इसी बाणसे संग्राममें उन

हतंलवणमाशंसुःशत्रुघ्नस्याभिषेचनात् ॥ ततोभिषिक्तंशत्रुघ्नमंकमारोप्यराघवः ॥ उवाचमधुरांवाणींतेजस्तस्याभिपूरयन् ॥ १८ ॥ अयंशर स्त्वमोघस्तेदिव्यःपरपुरंजयः ॥ अनेनलवणंसौम्यहंतासिरघुनंदन ॥ १९ ॥ सृष्टःशरोयंकाकुत्स्थयदाशेतेमहार्णवे ॥ स्वयंभूरजितोदिव्यो यंनापश्यन्सुरासुराः ॥ २० ॥ अदृश्यःसर्वभूतानांतेनायंहिशरोत्तमः ॥ सृष्टःक्रोधाभिभूतेनविनाशार्थंदुरात्मनोः ॥ २१ ॥ मधुकैटभयोर्वीर विघातेसर्वरक्षसाम् ॥ स्रष्टुकामेनलोकांस्त्रींस्तौचानेनहतौयुधि ॥ २२ ॥ तौहत्वाजनभोगार्थेकैटभंतुमधुंतथा ॥ अनेनशरमुख्येनततोलोकांश्च कारसः ॥ २३ ॥ नायंमयाशरःपूर्वंरावणस्यवधार्थिना ॥ मुक्तःशत्रुघ्नभूतानांमहान्ह्यासोभवेदिति ॥ २४ ॥ यच्चतस्यमहच्छूलंत्र्यंबकेणमहा त्मना ॥ दत्तंशत्रुविनाशायमधोरायुधमुत्तमम् ॥ २५ ॥ तत्सन्निक्षिप्यभवनेपूज्यमानंपुनःपुनः ॥ दिशःसर्वाःसमासाद्यप्राप्नोत्याहारमुत्तमम् ॥ ॥ २६ ॥ यदातुयुद्धमाकांक्षन्यदिकश्चित्समाह्वयेत् ॥ तदाशूलंगृहीत्वातुभस्मरक्षःकरोतिहि ॥ २७ ॥ सत्वंपुरुषशार्दूलतमायुधविनाकृतम् ॥ अप्रविष्टंपुरंपूर्वंद्वारितिष्ठधृतायुधः ॥ २८ ॥

दोनोंको मारडाला ॥ २२ ॥ उन मधु और कैटभको मारकर स्वयंभूने मनुष्योंके भोगके अर्थ त्रिलोकी निर्माण करी सो यह सब कार्य इसी बाणसे सिद्ध हुए ॥ ॥ २३ ॥ हे शत्रुघ्न ! रावणके मारनेके निमित्तभी यह बाण मैंने नहीं छोडा, कारण कि इसके छोडनेसे बहुतही प्राणियोंका संहार होताहै॥२४॥ और जो कि उसे शिवजीसे महाघोर उत्तम आयुध शत्रुका नाश करनेहारा शूल प्राप्त हुआहै ॥ २५ ॥ यह उसे अपने घरही रखताहै और उसका वारंवार पूजन करताहै और उसे छोड कर सब दिशाओंमें आहारके निमित्त जाताहै ॥ २६ ॥ उस समय जो कोई युद्धकी इच्छासे उसे बुलाता है तो वह राक्षस घरसे शूल लाकर उसे भस्म कर देताहै ॥ ॥ २७ ॥ हे पुरुषसिंह ! जिस समय वह आयुधरहित हो उस समय उसके नगरमें आनेसे पहलेही तुम आयुध धारण कर नगरके बाहर स्थित रहना ॥ २८ ॥

और उसको मरनेमें भंग करनेके पहलेही युद्धके निमित्त बुलाना तो तुम अवश्य उस राक्षसको मारसकोगे ॥ २९ ॥ इससे अन्यथा करनेमें वह किसी प्रकार नहीं मारा जायगा और जो हमारे कहे वचनके अनुसार करोगे तो अवश्य उसका नाश होजायगा ॥ ३० ॥ यह सब शूलका परिहार (निवारण) तुमसे वर्णन किया अन्यथा श्रीमान् शिवजी महाराजका वह शूल किसीके वशका नहीं ॥ ३१ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा०वाल्मी०आदि० उत्तरकांडे भाषाटीकायां त्रिषष्टितमः सर्गः॥६३॥ इसप्रकार शत्रुघ्नजीसे कह और वारंवार प्रशंसा कर फिर रघुनाथजी उनसे बोले ॥ १ ॥ हे पुरुषश्रेष्ठ ! यह चार सहस्र घोडे, दो सहस्र रथ और सौ हाथी ॥ ॥ २ ॥ और सामग्री बेंचनेवाले व्यापारी जिनके पास अनेक प्रकारके द्रव्य हैं वह तथा नट नर्तक भी तुम्हारे साथ जायँ ॥ ३ ॥ हे पुरुषसिंह शत्रुघ्न ! सेनादि

अशस्त्रं त्वमरन्तं युद्धाय पुरुषर्षभ ॥ आह्वयेथा महाबाहो ततो हंतासि राक्षसम् ॥ २९ ॥ अन्यथा क्रियमाणे तु अवध्यः स भविष्यति ॥ यदि त्वेवं कृतं वीर विनाशमुपयास्यति ॥ ३० ॥ एतत्ते सर्वमाख्यातं शूलस्य च विपर्ययः ॥ श्रीमतः शितिकंठस्य कृत्यं हि दुरतिक्रमम् ॥ ३१ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्ये उत्तरकांडे त्रिषष्टितमः सर्गः ॥ ६३ ॥ एवमुक्त्वा च काकुत्स्थं प्रशस्य च पुनः पुनः ॥ पुनरेवापरं वाक्यमुवाच रघुनंदनः ॥ १ ॥ इमान्यश्वसहस्राणि चत्वारि पुरुषर्षभ ॥ रथानां द्वे सहस्रे च गजानां शतमुत्तमम् ॥ २ ॥ अंतरापणवीथ्यश्च नानापण्योपशोभिताः ॥ अनुगच्छंतु काकुत्स्थं तथैव नटनर्तकाः ॥ ३ ॥ हिरण्यस्य सुवर्णस्य नियुतं पुरुषर्षभ ॥ आदाय गच्छ शत्रुघ्न पर्याप्तधनवाहनः ॥ ४ ॥ बलं च सुभृतं वीर हृष्टपुष्टमनुत्तमम् ॥ संभाषासंप्रदानेन रंजयस्व नरोत्तम ॥ ५ ॥ नह्यर्थास्तत्र तिष्ठंति न दारा न च बांधवाः ॥ सुप्रीतो भृत्यवर्गस्तु यत्र तिष्ठति राघव ॥ ६ ॥ अतो हृष्टजनाकीर्णां प्रस्थाप्य महतीं चमूम् ॥ एक एव धनुष्पाणिर्गच्छ त्वं मधुनो वनम् ॥ ७ ॥ यथा त्वां न प्रजानाति गच्छंतं युद्धकांक्षिणम् ॥ लवणस्तु मधोः पुत्रस्तथा गच्छेरशंकितम् ॥ ८ ॥ न तस्य मृत्युरन्योस्ति कश्चिद्धि पुरुषर्षभ ॥ दर्शनं योभिगच्छेत स वध्यो लवणेन हि ॥ ९ ॥

सकल पदार्थ लिये हुये व्यापारी एक लक्ष मुहरभी तुम लेते जाओ ॥ ४ ॥ और हे वीरनरोत्तम ! हृष्ट पुष्ट सेनाको अच्छे वचन बोलने तथा अपने विषयमें संतुष्ट करनेके लिये पारितोषिक देकर प्रसन्न करते रहना ॥ ५ ॥ हे राघव ! जिस शत्रुस्थानमें प्रसन्न हुये भृत्य स्थित होनेको समर्थ होतेहैं वहां अर्थ स्त्री बंधु भी नहीं स्थित होसकते ॥ ६ ॥ इसकारण परम वीरोंवाली बडी सेनाको संग ले जाय और सेनाको गंगाके किनारे स्थापन कर वहाँसे तुम अकेलेही धनुष धारण करके मधुवनको जाओ ॥ ७ ॥ वह मधुका पुत्र लवणासुर जिस प्रकारसे तुमको अपनेसे युद्धकर्त्ता न जाने इस प्रकारसे तुम निःशंक हो जाओ ॥ ८ ॥ हे पुरुषश्रेष्ठ !

और किसीके हाथसे उसकी मृत्यु नहीं है, परन्तु जिसे वह पहलेसे जान लेता है कि, यह मुझसे युद्धको आताहै उसे देखतेही शूलसे मार डालताहै ॥९॥ हे
सो आप ग्रीष्मऋतुके बीतनेपर वर्षाकाल प्राप्त होनेपर तुम उस दुष्टको मारना कारण कि वह उसकी मृत्युका समय होगा उस समय वह जानेगा कि, इस समय कोई
युद्ध करने नहीं आवेगा, इस कारण वह शूल विनाही विचरेगा ॥ १० ॥ तुम्हारी सेनाके लोग महर्षियोंको आगे करके जायँ जिस कारणसे कि, ग्रीष्मके समान
गंगाके पार हो जायँ॥११॥ हे अमितविक्रम ! वहाँ नदीके तीरमें सब सेनाको स्थापन करके फिर तुम धनुष धारण करके आगे चले जाना ॥ १२ ॥ जब रघुनाथ
ऐसा कहा तब शत्रुघ्नजीने महाबली सेनामुखियोंको बुलाकर ऐसा कहा ॥ १३ ॥ यह तुम्हारे ठहरनेके निमित्त दिन नियत करदियेहैं वहां

सग्रीष्मअपयातेतुवर्षारात्रउपागते ॥ हन्यास्त्वंलवणंसौम्यसहिकालोस्यदुर्मतेः ॥ १० ॥ महर्षीस्तुपुरस्कृत्यप्रयांतुतवसैनिकाः ॥ यथाग्रीष्म
शेषेणतरेयुर्जाह्नवीजलम् ॥ ११॥ तत्रस्थाप्यबलंसर्वंनदीतीरेसमाहितः ॥ अग्रतोधनुषासार्धंगच्छत्वंलघुविक्रम ॥१२॥ एवमुक्तस्तुरामेणशत्रुघ्न
स्तान्महाबलान् ॥ सेनामुख्यान्समानीयततोवाक्यमुवाचह ॥१३॥ एतेवोगणितावासायत्रतत्रनिवत्स्यथ ॥ स्थातव्यंचाविरोधेनयथाबाधान
स्यचित् ॥ १४ ॥ तथातांस्तुसमाज्ञाप्यप्रस्थाप्यचमहद्बलम् ॥ कौसल्यांचसुमित्रांचकैकेयींचाभ्यवादयत् ॥ १५ ॥ रामंप्रदक्षिणीकृत्यशि
साभिप्रणम्यच ॥ लक्ष्मणंभरतंचैवप्रणिपत्यकृतांजलिः ॥ १६ ॥ पुरोहितंवसिष्ठंचशत्रुघ्नःप्रयतात्मवान् ॥ रामेणचाभ्यनुज्ञातःशत्रुघ्नःशत्रुता
नः ॥ प्रदक्षिणमथोकृत्वानिर्जगाममहाबलः ॥ १७ ॥ निर्याप्यसेनामथसोग्रतस्तदागजेंद्रवाजिप्रवरौघसंकुलाम् ॥ उपास्यमानःसनरेंद्रपार्श्व
प्रतिप्रयातोरघुवंशवर्धनः ॥ १८ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे चतुःषष्टितमः सर्गः ॥ ६४ ॥ प्रस्थाप्यचब
सर्वंमासमात्रोषितःपथि ॥ एकएवाशुशत्रुघ्नोजगामत्वरितंतदा ॥ १ ॥

बाधा रहितहो स्थिति करना इसमें तुमको कुछ बाधा नहीं होगी ॥ १४ ॥ इस प्रकारसे उन्हें आज्ञा दे और उस महासेनाको भेजकर उन्होंने जाय कौश
सुमित्रा और कैकेयीको प्रणाम किया ॥ १५ ॥ रामचन्द्रकी प्रदक्षिणा और प्रणामकर तथा लक्ष्मण और भरतजीको हाथ जोड प्रणामकर ॥ १६ ॥ और
ष्ठ वसिष्ठजीको दंडवत करके नियमसे रहनेहारे शत्रुओंके ताप देनेहारे महाबली शत्रुघ्नजी रघुनाथजीकी आज्ञाले और उनकी प्रदक्षिणा कर चले ॥ १७ ॥ ग
श्रेष्ठ आदिकोंसे युक्त उस महासेनाको तो उन्होंने आगे भेजा और पीछेसे वह रघुवंशके बढानेहारे नरेन्द्र रामचन्द्रसे विदाहो आपभी गये ॥ १८ ॥

इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषाटीकायां चतुःषष्टितमः सर्गः ॥ ६४ ॥ सेनाको स्थापनकर और एक मास अयोध्यामें बिताय शत्रुघ्नजी शीघ्रता

...मनहीं थे ॥१॥ वह रघुनन्दन और दो रात्रि मार्गमें बिताकर वाल्मीकिजीके पवित्र वासस्थानमें जायकर प्राप्त हुए ॥२॥ सो शत्रुघ्नजी महामुनि वा-
ल्मीकिजीको प्रणाम करके हाथ जोड उनसे यह वचन बोले ॥ ३ ॥ हे भगवन् ! मैं एक बडे कार्यके निमित्त आया हूं सो एक रात्रि यहां रहा,चाहताहूं प्रातःक
ाल पश्चिम दिशाको जाऊंगा ॥४॥ शत्रुघ्नजीके वचन सुन मुनिश्रेष्ठ वाल्मीकिजी उन महायशस्वीसे बोले कि,तुम भले आये॥५॥हे सौम्य ! यह हमारा आश्रम
रघुकुलके निमित्तही है यह आसन,पाद्य,अर्घ्य और निःशंक हमसे ग्रहण कीजिये ॥६॥ इसप्रकार महायशस्वी शत्रुघ्नजी फल, मूल और भोजनको ग्रहणकर उन
परम तृप्तिको प्राप्त हुए ॥७॥ वह फल, मूलको भोजन कर महर्षि वाल्मीकिजीसे बोले यह आपके आश्रममें पूर्व ओर किसके यज्ञकी विभुति दीखतीहै ॥८॥

द्वितीयमंतरेशूरस्त्यक्त्वारघुनंदनः ॥ वाल्मीकेराश्रमंपुण्यमगच्छद्वासमुत्तमम् ॥ २ ॥ सोभिवाद्यमहात्मानंवाल्मीकिंमुनिसत्तमम् ॥ कृ
ताञ्जलिरथोवाक्यमिदंवचनमब्रवीत् ॥ ३ ॥ भगवन्वस्तुमिच्छामिगुरोःकृत्यादिहागतः ॥ श्वःप्रभातेगमिष्यामिप्रतीचींवारुणींदिशम् ॥ ४ ॥
शत्रुघ्नस्यवचःश्रुत्वाप्रहस्यमुनिपुंगवः ॥ प्रत्युवाचमहात्मानंस्वागतंतेमहायशः ॥ ५ ॥ स्वमाश्रममिदंसौम्यराघवाणांकुलस्यवै ॥ आसनं
पाद्यमर्घ्यंचनिर्विशंकःप्रतीच्छमे ॥ ६ ॥ प्रतिगृह्यतदापूजांफलमूलंचभोजनम् ॥ भक्षयामासकाकुत्स्थस्तृप्तिंचपरमांगतः ॥ ७ ॥ सभुक्त्वाफल
मूलंचमहर्षिंतमुवाचह ॥ पूर्वायज्ञविभूतीयंकस्याश्रमसमीपतः ॥ ८ ॥ तत्तस्यभाषितंश्रुत्वावाल्मीकिर्वाक्यमब्रवीत् ॥ शत्रुघ्नशृणुयस्येदंवभू
वायतनंपुरा ॥ ९ ॥ युष्माकंपूर्वकोराजासौदासस्तस्यभूपतेः ॥ पुत्रोवीर्यसहोनामवीर्यवानतिधार्मिकः ॥ १० ॥ सबालएवसौदासोमृगयामुप
चक्रमे ॥ चंचूर्यमाणंददृशेसशूरोराक्षसद्वयम् ॥ ११ ॥ शार्दूलरूपिणौघोरौमृगान्बहुसहस्रशः ॥ भक्षमाणावसंतुष्टौपर्याप्तिंनैवजग्मतुः ॥ १२ ॥
सतुतौराक्षसौदृष्ट्वानिर्मृगंचवनंकृतम् ॥ क्रोधेनमहताविष्टोजघानैकंमहेषुणा ॥ १३ ॥ विनिपात्यतमेकंतुसौदासःपुरुषर्षभः ॥ विज्वरः
क्रोधरहितोराक्षसंहतमुदैक्षत ॥ १४ ॥

वाल्मीकिजी बोले, सुनो शत्रुघ्नजी जिनका स्थान यह पूर्वकालमें था सो कहताहूं ॥९॥ तुम्हारे वंशमें एक पूर्वकालमें सौदास राजा था उस राजाके
नाम महाबली अतिधर्मवान् पुत्र हुआ ॥ १० ॥ बालक अवस्थामेंही वह सौदास मृगयाके निमित्त गया, वहां उन महावीरने दो राक्षसोंको फिरते हु
॥ ११ ॥ वे दोनों व्याघ्ररूपी सिंह घोर सहस्रों मृगोंको भक्षण करतेहुएभी सन्तुष्ट नहीं होतेथे ॥ १२ ॥ जब सौदासने देखा कि, इन दोनोंने तो व-
नको मृगरहित करदिया तब महाक्रोधित हो बाणके प्रहारसे एकको मारडाला ॥ १३ ॥ सौदास पुरुषश्रेष्ठ एक राक्षसका संहार करके सन्ताप क्रोधरहितहो दूसरे ...

मृतकही समझा ॥ १४ ॥ उसके सहायक दूसरे राक्षसने राजाको देखा कि; यह हमारी ओरभी देखते हैं तब वह दूसरा राक्षस घोर सन्ताप करके राजासे कहने लगा ॥ १५ ॥ हे पापी! जिस कारण कि, तुमने बिना अपराध मेरे सहायकको मारा है इसकारण इसका फल तुम्हें अवश्य दूंगा ॥१६॥ यह कह वह राक्षस वहीं अंतर्धान होगया कुछ दिनोंके उपरान्त राजा सौदास तो मृतक हुए और उनके पुत्र मित्रसह राजा हुए ॥ १७ ॥ सो राजा इस आश्रमके निकट अश्वमेध महायज्ञका अनुष्ठान करनेलगे और वसिष्ठजी उसकी पालना करनेलगे ॥ १८ ॥ वह यज्ञ बहुतही वर्षोंतक रहा और महालक्ष्मी तथा धन धान्यसे युक्त होनेके कारण देवयज्ञकी समान हुआ ॥ १९ ॥ यज्ञान्तमें वह राक्षस अपना वैर लेनेके लिये राजासे वसिष्ठका रूप बनकर कहने लगा ॥ २० ॥ आज तुम्हारा यज्ञ पूर्ण

निरीक्षमाणंतंदृष्ट्वासहायंतस्यरक्षसः ॥ संतापमकरोद्घोरंसौदासंचेदमब्रवीत् ॥ १५ ॥ यस्मादनपराधंतंसहायंममजघ्निवान् ॥ तस्मात्तवापिपापिष्ठप्रदास्यामिप्रतिक्रियाम् ॥ १६ ॥ एवमुक्त्वातुतद्रक्षस्तत्रैवांतरधीयत ॥ कालपर्याययोगेनराजामित्रसहोभवत् ॥ १७ ॥ राजापियजतेयज्ञमस्याश्रमसमीपतः ॥ अश्वमेधंमहायज्ञंतंवसिष्ठोप्यपालयत् ॥ १८ ॥ तत्रयज्ञोमहानासीद्बहुवर्षगणायुतः ॥ समृद्धःपरयालक्ष्म्यादेवयज्ञसमोभवत् ॥ १९ ॥ अथावसानेयज्ञस्यपूर्ववैरमनुस्मरन् ॥ वसिष्ठरूपीराजानमितिहोवाचराक्षसः ॥ २० ॥ अद्ययज्ञावसानांतेसामिषंभोजनंमम ॥ दीयतामितिशीघ्रंवैनात्रकार्याविचारणा ॥ २१ ॥ तच्छ्रुत्वाव्याहृतंवाक्यंरक्षसाब्रह्मरूपिणा ॥ सूदान्संस्कारकुशलानुवाचपृथिवीपतिः ॥ २२ ॥ हविष्यंसामिषंस्वादुयथाभवतिभोजनम् ॥ तथाकुरुतशीघ्रंवैपरितुष्येद्यथागुरुः ॥ २३ ॥ शासनात्पार्थिवेंद्रस्यसूदःसंभ्रांतमानसः ॥ तच्चरक्षःपुनस्तत्रसूदवेषमथाकरोत् ॥ २४ ॥ समानुषमथोमांसंपार्थिवायन्यवेदयत् ॥ इदंस्वादुहविष्यंचसामिषंचान्नमाहृतम् ॥ २५ ॥, संभोजनंवसिष्ठायपत्न्यासार्धमुपाहरत् ॥ मदयंत्यानरश्रेष्ठसामिषंरक्षसाहृतम् ॥ २६ ॥

होगया इसकारण शीघ्रही हमको समांस भोजन दो इसमें विचार करनेकी कोई आवश्यकता नहीं ॥ २१ ॥ ब्राह्मणरूपी राक्षसके यह वचन सुनकर राजाने भोजनबनानेमें चतुर रसोइयोंसे कहा ॥ २२ ॥ हविष्य पवित्र मांस लाकर जिस प्रकार भोजन बहुतही स्वादिष्ठहो और जिसे भोजनकर गुरुजी परमप्रसन्न हों सो तुम शीघ्र विधान करो ॥ २३ ॥ राजाके वचन सुनकर रसोइये चकित होगये कि, राजा क्या कहतेहैं; इसी अवसरमें वह राक्षस रसोइयेका वेष धार राजाके भोजनागारमें गया वहां कौशलसे मनुष्यका मांस मिलाय तैयारकर वह ॥ २४ ॥ मनुष्यका मांस लाकर राजाको दिया और कहा यह परम स्वादिष्ठ हविष्य आमिष अन्न उपस्थित है ॥ २५ ॥ हे नरश्रेष्ठ ! राजाने अपनी मदयन्ती पत्नीसहित वसिष्ठजीको भोजनके निमित्त वह राक्षसके द्वारा लायाहुआ मांस दिया ॥ २६ ॥

सिष्ठजीने देखा कि, राजाने हमें मनुष्यका मांस भोजनको दियाहै, तब महाक्रोधकर इसप्रकारसे कहनेलगे ॥ २७ ॥ हे राजन् ! जैसा यह भोजन तू हमारे भोजनके निमित्त लायाहै ऐसा भोजन तेरेही खानेके निमित्त होगा इसमें कुछ संदेह नहीं अर्थात् तू राक्षस होगा ॥ २८ ॥ यह सुन सौदासने कहा कि, इन्होंने मुझे वृथा शाप दिया इसकारण क्रोधकर हाथमें जल ले वसिष्ठजीको शाप देनेलगा तब उनकी भार्याने आनकर निवारण किया कि, ॥ २९ ॥ हे राजन् ! भगवान् ऋषि वसिष्ठजी हमारे प्रभुहैं यह देवतुल्य पुरोहितहैं उनको शाप देनेको आप समर्थ नहीं हैं ॥ ३० ॥ यह वचन सुनकर उन महात्माने तेजयुक्त जल जो क्रोधसे ग्रहण किया था अपने चरणोंपर डाल लिया ॥ ३१ ॥ इससे इन राजाके दोनों चरण काले होगये और उसी दिनसे

ज्ञात्वातदामिषंविप्रोमानुषंभोजनागतम् ॥ क्रोधेनमहताविष्टोव्याहर्तुमुपचक्रमे ॥ २७ ॥ यस्मात्त्वंभोजनंराजन्ममैतद्दातुमिच्छसि ॥ तस्माद्भोजनमेतत्तेभविष्यतिनसंशयः ॥ २८ ॥ ततःक्रुद्धस्तुसौदासस्तोयंजग्राहपाणिना ॥ वसिष्ठंशप्तुमारेभेभार्याचैनमवारयत् ॥ २९ ॥ राजन्प्रभुर्यतोस्माकंवसिष्ठोभगवानृषिः ॥ प्रतिशप्तुंनशक्तस्त्वंदेवतुल्यंपुरोधसम् ॥३०॥ ततःक्रोधमयंतोयंतेजोबलसमन्वितम् ॥ व्यसर्जयतधर्मात्मा ततःपादौसिषेचच ॥ ३१ ॥ तेनास्यराज्ञस्तौपादौतदाकल्माषतांगतौ ॥ तदाप्रभृतिराजासौसौदासःसुमहायशाः ॥ ३२ ॥ कल्माषपादःसंवृत्तःख्यातश्चैवंतथानृपः ॥ सराजासहपत्न्याचैप्रणिपत्यमुहुर्मुहुः ॥ पुनर्वसिष्ठंप्रोवाचयदुक्तंब्रह्मरूपिणा ॥ ३३ ॥ तच्छ्रुत्वापार्थिवेंद्रस्यरक्षसाविकृतंवचः ॥ पुनःप्रोवाचराजानंवसिष्ठःपुरुषर्षभम् ॥ ३४ ॥ मयारोषपरीतेनयदिदंव्याहृतंवचः ॥ नैतच्छक्यंवृथाकर्तुंप्रदास्यामिचतेवरम् ॥ ३५ ॥ कालोद्वादशवर्षाणिशापस्यांतोभविष्यति ॥ मत्प्रसादाच्चराजेंद्रअतीतंनस्मरिष्यसि ॥ ३६ ॥ एवंसराजातंशापमुपभुज्यारिसूदन ॥ प्रतिलेभेपुनाराज्यंप्रजाश्चैवान्वपालयत् ॥ ३७ ॥ तस्यकल्माषपादस्ययज्ञस्यायतनंशुभम् ॥ आश्रमस्यसमीपेऽस्मिन्यन्मांपृच्छसिराघव ॥ ३८ ॥

यह महायशस्वी सौदास राजा ॥ ३२ ॥ कल्माषपाद राजा इस नामसे विख्यात हुए । फिर राजाने स्त्री सहित वारंवार मुनिके चरणोंमें प्रणाम करके जो कुछ ब्राह्मणरूपधारी वसिष्ठने कहा था वह सब निवेदन किया ॥ ३३ ॥ राजाके वचन सुन और राजाकी करीहुई इस चेष्टाका विचार फिर वसिष्ठजीने उन पुरुषश्रेष्ठ राजा सौदाससे कहा ॥ ३४ ॥ जो कुछ कि, हमने क्रोधसे यह वचन कहेहैं इसे हम मिथ्या तो नहीं करसक्ते पर तुमको वर देतेहैं कि, ॥ ३५ ॥ बारह वर्षके उपरान्त शापका अन्त होजायगा और हे राजेन्द्र ! हमारे प्रसादसे राक्षसपनकी करीहुई घटनाओंका तुम्हें स्मरण न होगा ॥ ३६ ॥ फिर हे शत्रुघ्नजी ! इस प्रकारसे यह राजा शापको भोग अन्तमें फिर राज्यको प्राप्त हो प्रजाको धर्मसे पालन करनेलगे ॥ ३७ ॥ यह उन्हीं कल्माषपाद राजाके यज्ञका सुन्दर

मृतकही समझा ॥ १४ ॥ उसके सहायक दूसरे राक्षसने राजाको देखा कि; यह हमारी ओरभी देखते हैं तब वह दूसरा राक्षस घोर सन्ताप करके राजासे कहने लगा ॥ १५ ॥ हे पापी। जिस कारण कि, तुमने विना अपराध मेरे सहायकको मारा है इसकारण इसका फल तुम्हें अवश्य दूंगा ॥१६॥ यह कह वह राक्षस वहाँ अंतर्धान होगया कुछ दिनोंके उपरान्त राजा सौदास तो मृतक हुए और उनके पुत्र मित्रसह राजा हुए ॥ १७ ॥ सो राजा इस आश्रमके निकट अश्वमेध महायज्ञका अनुष्ठान करनेलगे और वसिष्ठजी उसकी पालना करनेलगे ॥ १८ ॥ वह यज्ञ बहुतही वर्षोंतक रहा और महालक्ष्मी तथा धन धान्यसे युक्त होनेके कारण देवयज्ञकी समान हुआ ॥ १९ ॥ यज्ञान्तमें वह राक्षस अपना वैर लेनेके लिये राजासे वसिष्ठका रूप बनकर कहने लगा ॥ २० ॥ आज तुम्हारा यज्ञ पूर्ण

निरीक्षमाणंतंदृष्ट्वासहायंतस्यरक्षसः ॥ संतापमकरोद्घोरंसौदासंचेदमब्रवीत् ॥ १५ ॥ यस्मादनपराधंतंसहायंममजघ्निवान् ॥ तस्मात्तवापिपापिष्ठप्रदास्यामिप्रतिक्रियाम् ॥ १६ ॥ एवमुक्त्वातुतद्रक्षस्तत्रैवांतरधीयत ॥ कालपर्याययोगेनराजामित्रसहोभवत् ॥ १७ ॥ राजापियजतेयज्ञमस्याश्रमसमीपतः ॥ अश्वमेधंमहायज्ञंतंवसिष्ठोप्यपालयत् ॥ १८ ॥ तत्रयज्ञोमहानासीद्बहुवर्षगणायुतः ॥ समृद्धःपरयालक्ष्म्यादेवयज्ञसमोभवत् ॥ १९ ॥ अथावसानेयज्ञस्यपूर्ववैरमनुस्मरन् ॥ वसिष्ठरूपीराजानमितिहोवाचराक्षसः ॥ २० ॥ अद्ययज्ञावसानांतेसामिषंभोजनंमम ॥ दीयतामितिशीघ्रंवैनात्रकार्याविचारणा ॥ २१ ॥ तच्छ्रुत्वाव्याहृतंवाक्यंरक्षसाब्रह्मरूपिणा ॥ सूदान्संस्कारकुशलानुवाचपृथिवीपतिः ॥ २२ ॥ हविष्यंसामिषंस्वादुयथाभवतिभोजनम् ॥ तथाकुरुतशीघ्रंवैपरितुष्येद्यथागुरुः ॥ २३ ॥ शासनात्पार्थिवेंद्रस्यसूदःसंभ्रांतमानसः ॥ तच्चरक्षःपुनस्तत्रसूदवेषमथाकरोत् ॥ २४ ॥ समानुषमथोमांसंपार्थिवायन्यवेदयत् ॥ इदंस्वादुहविष्यंचसामिषंचान्नमाहृतम् ॥ २५ ॥; संभोजनंवसिष्ठायपत्न्यासार्धमुपाहरत् ॥ मदयंत्यानरश्रेष्ठसामिषंरक्षसाहृतम् ॥ २६ ॥

होगया इसकारण शीघ्रही हमको समांस भोजन दो इसमें विचार करनेकी कोई आवश्यकता नहीं ॥ २१ ॥ ब्राह्मणरूपी राक्षसके यह वचन सुनकर राजाने भोजन बनानेमें चतुर रसोइयोंसे कहा ॥ २२ ॥ हविष्य पवित्र मांस लाकर जिस प्रकार भोजन बहुतही स्वादिष्ठहो और जिसे भोजनकर गुरुजी परमप्रसन्न हों सो तुम शीघ्र विधान करो ॥ २३ ॥ राजाके वचन सुनकर रसोइये चकित होगये कि, राजा क्या कहतेहैं; इसी अवसरमें वह राक्षस रसोइयेका वेष धार राजाके भोजनागारमें गया वहां कौशलसे मनुष्यका मांस मिलाय तैयारकर वह ॥ २४ ॥ मनुष्यका मांस लाकर राजाको दिया और कहा यह परम स्वादिष्ठ हविष्य आमिष अन्न उपस्थित है ॥ २५ ॥ हे नरश्रेष्ठ ! राजाने अपनी मदयन्ती पत्नीसहित वसिष्ठजीको भोजनके निमित्त यह राक्षसके द्वारा लायाहुआ मांस दिया ॥ २६ ॥

वसिष्ठजीने देखा कि, राजाने हमें मनुष्यका मांस भोजनको दियाहै, तब महाक्रोधकर इसप्रकारसे कहनेलगे ॥ २७ ॥ हे राजन् ! जैसा यह भोजन तू हमारे भोजनके निमित्त लायाहै ऐसा भोजन तेरेही खानेके निमित्त होगा इसमें कुछ संदेह नहीं अर्थात् तू राक्षस होगा ॥ २८ ॥ यह सुन सौदासने कहा कि, इन्होंने मुझे वृथा शाप दिया इसकारण क्रोधकर हाथमें जल ले वसिष्ठजीको शाप देनेलगा तब उनकी भार्याने आनकर निवारण किया कि, ॥ २९ ॥ हे राजन् ! भगवान् ऋषि वसिष्ठजी हमारे प्रभुहैं यह देवतुल्य पुरोहितहैं उनको शाप देनेको आप समर्थ नहीं हैं ॥ ३० ॥ यह वचन सुनकर उन महात्माने तेजबलयुक्त जल जो क्रोधसे ग्रहण किया था अपने चरणोंपर डाल लिया ॥ ३१ ॥ इससे इन राजाके दोनों चरण काले होगये और उसी दिनमे

ज्ञात्वातदामिषंविप्रोमानुषंभोजनागतम् ॥ क्रोधेनमहताविष्टोव्याहर्तुमुपचक्रमे ॥ २७ ॥ यस्मात्त्वंभोजनंराजन्ममैतद्दातुमिच्छसि ॥ तस्माद्भोजनमेतत्तेभविष्यतिनसंशयः ॥ २८ ॥ ततःक्रुद्धस्तुसौदासस्तोयंजग्राहपाणिना ॥ वसिष्ठंशप्तुमारेभेभार्याचैनमवारयत् ॥ २९ ॥ राजन्प्रभुर्यतोस्माकंवसिष्ठोभगवानृषिः ॥ प्रतिशप्तुंनशक्तस्त्वंदेवतुल्यंपुरोधसम् ॥३०॥ ततःक्रोधमयंतोयंतेजोबलसमन्वितम् ॥ व्यसर्जयतधर्मात्मा ततःपादौसिषेचच ॥ ३१ ॥ तेनास्यराज्ञस्तौपादौतदाकल्माषतांगतौ ॥ तदाप्रभृतिराजासौसौदासःसुमहायशाः ॥ ३२ ॥ कल्माषपादःसंवृत्तःख्यातश्चैवतथानृपः ॥ सराजासहपत्न्यावैप्रणिपत्यमुहुर्मुहुः ॥ पुनर्वसिष्ठंप्रोवाचयदुक्तंब्रह्मरूपिणा ॥ ३३ ॥ तच्छ्रुत्वापार्थिवेंद्रस्यरक्षसाविकृतंचतत् ॥ पुनःप्रोवाचराजानंवसिष्ठःपुरुषर्षभम् ॥ ३४ ॥ मयारोषपरीतेनयदिदंव्याहृतंवचः ॥ नैतच्छक्यंवृथाकर्तुंप्रदास्यामिचतेवरम् ॥ ३५ ॥ कालोद्वादशवर्षाणिशापस्यांतोभविष्यति ॥ मत्प्रसादाच्चराजेंद्रअतीतंनस्मरिष्यसि ॥ ३६ ॥ एवंसराजातंशापमुपभुज्यारिसूदन ॥ प्रतिलेभे पुनाराज्यंप्रजाश्चैवान्वपालयत् ॥ ३७ ॥ तस्यकल्माषपादस्ययज्ञस्यायतनंशुभम् ॥ आश्रमस्यसमीपेऽस्मिन्यन्मांपृच्छसिराघव ॥ ३८ ॥

यह महायशस्वी सौदास राजा ॥ ३२ ॥ कल्माषपाद राजा इस नामसे विख्यात हुए । फिर राजाने स्त्री सहित वारंवार मुनिके चरणोंमें प्रणाम करके जो कुछ ब्राह्मणरूपधारी वसिष्ठने कहा था वह सब निवेदन किया ॥ ३३ ॥ राजाके वचन सुन और राजाकी करीहुई इस चेष्टाका विचार फिर वसिष्ठजीने उस पुरुषश्रेष्ठ राजा सौदाससे कहा ॥ ३४ ॥ जो कुछ कि, हमने क्रोधसे यह वचन कहेहैं इसे हम मिथ्या तो नहीं करसक्ते पर तुमको वर देतेहैं कि, ॥ ३५ ॥ बारह वर्षके उपरान्त शापका अन्त होजायगा और हे राजेन्द्र ! हमारे प्रसादसे राक्षसपनकी करीहुई घटनाओंका तुम्हें स्मरण न होगा ॥ ३६ ॥ फिर हे शत्रुघ्नजी ! इस प्रकारसे यह राजा शापको भोग अन्तमें फिर राज्यको प्राप्त हो प्रजाको धर्मसे पालन करनेलगे ॥ ३७ ॥ यह उन्हीं कल्माषपाद राजाके यज्ञका सुन्दर

स्थानहै जो हमारे आश्रमके समीपहै और जिसकी कथा तुमने हमसे पूछीहै ॥ ३८॥ शत्रुघ्नजी इस प्रकारसे उन महात्मा राजाकी दारुण कथा श्रवणकर महर्पिको प्रणाम कर पर्णशालामें गये॥ ३९॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा०वाल्मी०आ०उत्तरकांडे भापाटीकायां पंचपष्टितमः सर्गः ॥६५॥ जिस रात्रिमें शत्रुघ्नजी पर्णशालामें ठहरेथे उसी रात्रिमें जानकीके दो बालक उत्पन्न हुएथे ॥ १ ॥ सो उस आधीरातके समय मुनिकुमारोंने आनकर वाल्मीकिजीसे जानकीके सन्तान होनेके शुभ समाचार कहे ॥२॥ कि-हे भगवन् ! उन रामकी भार्याने दो पुत्र उत्पन्न कियेहैं सो आप बालग्रहके नाश करनेहारी उनकी रक्षा कीजिये ॥३॥ उनके वचन सुनतेही वाल्मीकिजी चले और बाल चन्द्रमाकी समान कांतिमान् पराक्रमी ॥४॥ उन दोनों कुमारोंको प्रसन्नतासे जाकर देखा, भूत और राक्षसोंका भय दूर करनेहारी रक्षा की ॥ ५ ॥ एक मुट्ठि कुश

तस्यतांपार्थिवेंद्रस्यकथांश्रुत्वासुदारुणाम् ॥ विवेशपर्णशालायांमहर्षिमभिवाद्यच ॥ ३९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आ० उ० पंचपष्टितमः सर्गः ॥ ६५ ॥ यामेवरात्रिंशत्रुघ्नःपर्णशालांसमाविशत् ॥ तामेवरात्रिंसीतापिप्रसूतादारकद्वयम् ॥ १ ॥ ततोर्धरात्रसमयेबालकामुनिदारकाः ॥ वाल्मीकेःप्रियमाचख्युःसीतायाःप्रसवंशुभम् ॥ २ ॥ भगवन्रामपत्नीसाप्रसूतादारकद्वयम् ॥ ततोरक्षांमहातेजःकुरुभूतविनाशिनीम् ॥ ३ ॥ तेषांतद्वचनंश्रुत्वामहर्षिःसमुपागमत् ॥ बालचंद्रप्रतीकाशौदेवपुत्रौमहौजसौ ॥ ४ ॥ जगामतत्रहृष्टात्मादद‌र्शचकुमारकौ ॥ भूतघ्नीचाकरोत्ताभ्यांरक्षांरक्षोविनाशिनीम् ॥ ५ ॥ कुशमुष्टिमुपादायलवंचैवतुसद्विजः ॥ वाल्मीकिःप्रददौताभ्यांरक्षांभूतविनाशिनीम् ॥ ६ ॥ यस्तयोःपूर्वजो जातःसकुशैर्मंत्रसत्कृतैः ॥ निर्मार्जनीयस्तुतदाकुशइत्यस्यनामतत् ॥ ७ ॥ यश्चापरोभवेत्ताभ्यांलवेनसुसमाहितः ॥ निर्मार्जनीयोवृद्धाभिर्लवेतिचसनामतः ॥ ८ ॥ एवंकुशलवौनाम्नातावुभौयमजातकौ ॥ मत्कृताभ्यांचनामभ्यांख्यातियुक्तौभविष्यतः ॥ ९ ॥ तांरक्षांजगृहुस्ताश्चमुनिहस्तात्समाहिताः ॥ अकुर्वंश्चततोरक्षांतयोर्विगतकल्मषाः ॥ १० ॥

लेकर और उसमेंका आधा भाग लव (जड) लेकर बीचमेंसे उसे चीरकर क्रमसे दोनोंकी रक्षा करी जिससे कोई बालग्रह आदिक वहां प्रवेश न कर सका ॥ ६ ॥ जो उन दोनों बालकोंमें पूर्व उत्पन्न हुआ और मंत्र पढेहुए कुशसे मार्जन किया इस कारण उसका नाम कुश हुआ ॥ ७ ॥ और जो उनमें छोटा हुआ उसकी लवद्वारा रक्षा करी इस कारण उसका नाम लव हुआ ॥ ८ ॥ इस कारण वह दोनों यमज कुश लव नामवाले होकर इन्हीं मेरे रक्खेहुए नामसे विख्यात होंगे॥ ९ ॥ इसप्रकारसे मुनि रक्षाकर पर्णशालाको गये और उस रक्षाको ग्रहण करके वे पापरहित वृद्धा जो जो जानकीजीके निकट थीं सो बडी सावधानीसे रक्षा [illegible]

उस समय मध्यरात्रिके मारे महात्मा [illegible]

रक्षणी ॥ १० ॥ जिससमय वह वृद्धा उनकी रक्षा करने लगीं तो उन्होंने उनका गोत्र उच्चारण कर रामचन्द्र और सीताका पुत्र कहकर रक्षा की ॥ ११ ॥
गो शत्रुघ्नजी ! इस महा आनंदकी वार्ताको आधीरातके समय सुना और अपनी पर्णशालामें जाकर कहा कि, माता भाग्यकी बातहै जो तुम्हारे पुत्र हुए ॥१२॥
उस समय प्रसन्नताके मारे महात्मा शत्रुघ्नजीको वह वर्षाकालकी श्रावण महीनेकी रात्रि बडी शीघ्रतासे व्यतीत होगई ॥१३॥ फिर प्रातःकालके समय वह महावी
प्रातःकृत्य करके हाथ जोड मुनिसे आज्ञा ले पश्चिमकी ओरको चले ॥१४ वह सात रात्रि मार्गमें बिताकर यमुनाके तीर जाय बडे पुण्यकर्मा ऋषियोंके आश्रममें प्र
हुए ॥ १५ ॥ शत्रुघ्नजी भार्गव आदि ऋषियोंके संग अनेक सुन्दर कथाश्रवण करते वहाँ रहे ॥१६॥ वह नरेन्द्रपुत्र महात्मा शत्रुघ्नजी च्यवनादि ऋषियोंके सं

तथातांक्रियमाणांचवृद्धाभिर्गोत्रनामच ॥ संकीर्तनंचरामस्यसीतायाःप्रसवौशुभौ ॥ ११ ॥ अर्धरात्रेतुशत्रुघ्नःशुश्रावसुमहत्प्रियम् ॥ पर्णशालां
ततोगत्वामातर्दिष्ट्येतिचाब्रवीत् ॥१२॥ तदातस्यप्रहृष्टस्यशत्रुघ्नस्यमहात्मनः ॥ व्यतीतावार्षिकीरात्रिःश्रावणीलघुविक्रमा ॥१३॥ प्रभातेसुम
हावीर्यःकृत्वापौर्वाह्णिकींक्रियाम् ॥ मुनिंप्रांजलिरामंत्र्यययौपश्चान्मुखःपुनः ॥१४॥ सगत्वायमुनातीरंसप्तरात्रोषितःपथि ॥ ऋषीणांपुण्यकीर्ती
नामाश्रमेवासमभ्ययात् ॥ १५ ॥ सतत्रमुनिभिःसार्धंभार्गवप्रमुखैर्नृपः ॥ कथाभिरभिरूपाभिर्वासंचक्रेमहायशाः ॥ १६ ॥ सकांचनाद्यैर्मुनि
भिःसमेतैरघुप्रवीरोरजनींतदानीम् ॥ कथाप्रकारैर्बहुभिर्महात्माविरामयामासनरेंद्रसूनुः ॥ १७ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदि
काव्ये उत्तरकांडे पट्पष्टितमः सर्गः ॥ ६६ ॥ अथरात्र्यांप्रवृत्तायांशत्रुघ्नोभृगुनंदनम् ॥ पप्रच्छच्यवनंविप्रंलवणस्ययथाबलम् ॥ १ ॥ शूल
स्यकेबलवंतःकेचपूर्वंविनाशिताः ॥ अनेनशूलमुख्येनद्वंद्वयुद्धमुपागताः ॥ २ ॥ तस्यतद्वचनंश्रुत्वाशत्रुघ्नस्यमहात्मनः ॥ प्रत्युवाचमहातेजा
श्च्यवनोरघुनंदनम् ॥ ३ ॥ असंख्येयानिकर्माणियान्यस्यरघुनंदन ॥ इक्ष्वाकुवंशप्रभवयद्वृत्तंतच्छृणुष्वमे ॥ ४ ॥ अयोध्यायांपुराराजायुवना
श्वसुतोबली ॥ मांधाताइतिविख्यातस्त्रिषुलोकेषुवीर्यवान् ॥ ५ ॥

समय ऋषियोंसे अनेक प्रकारकी कथायें श्रवण कर वह रात्रि बिताते हुए ॥१७॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा०वा०आदि०उत्तरकांडे भाषाटीकायां षट्षष्टितमःसर्गः॥६६॥
रात्रिमें शत्रुघ्नजी भृगुनंदन च्यवन ब्राह्मणसे लवणासुरके बलकी जिज्ञासा करने लगे ॥ १ ॥ हे ब्रह्मन् ! उसके शूलका बल कैसाहै और उसने कितनोंक
मारडालाहै ! कौन कौन उस शूलसे द्वंद्व युद्ध करनेको आयेथे ॥ २ ॥ उन महात्मा शत्रुघ्नजीके यह वचन सुनकर महातेजस्वी च्यवनजी रघुनंदन
से ॥ ३ ॥ हे रघुनंदन ! इसके शूलके कर्म तो अगणितहैं, परन्तु जो कथा इक्ष्वाकुवंशोत्पन्न मांधाताजीके विषयमें हुई है वह आप मुझसे श्रवण कीजिये
॥ ४ ॥ हे राजन ! पूर्वकालमें युवनाश्वके पुत्र महाबली मांधाताजी जो त्रिलोकीमें विख्यात थे वे अयोध्याजीमें वास करतेथे ॥ ५ ॥

वह राजा सम्पूर्ण पृथ्वीको अपने अधिकारमें करके पुनः स्वर्गलोक जीतनेका उद्योग करतेहुए॥६॥जिस समय मांधाताने इन्द्रलोकको जीतनेका उद्योग किया उस समय इन्द्र और महात्मा देवताओंको बड़ा भय हुआ ॥७॥ वह राजा इन्द्रके आधीनमें बैठानेकी और देवताओंसे स्तुति करानेकी प्रतिज्ञा करके स्वर्गको चलनेलगे ॥८॥ इन्द्रजी उनका यह पाप अभिप्राय जानकर सत्यतापूर्वक वाक्य मांधातासे बोले ॥ ९ ॥ हे राजन्! पुरुषश्रेष्ठ ! तुम प्रथम मनुष्यलोककी सब पृथ्वी जबतक अपने वशमें नहीं करलोगे तबतक देवराज्य प्राप्त नहीं करसक्ते सो सब पृथ्वी वशमें किये विना किसप्रकार देवलोकके राज्यकी इच्छा करतेहो ॥ १० ॥ हे वीर ! यदी सम्पूर्ण पृथ्वी तुम्हारे वशमें है तो अपने भृत्य बल वाहन सहित देवलोकका राज्य कीजिये ॥ ११ ॥ इन्द्रके ऐसा कहनेपर मांधाताजी बोले हे

सकृत्वापृथिवींकृत्स्नांशासनेपृथिवीपतिः ॥ सुरलोकमितोजेतुमुद्योगमकरोन्नृपः ॥ ६ ॥ इंद्रस्यचभयंतीव्रंसुराणांचमहात्मनाम् ॥ मांधातरिकृतोद्योगेदेवलोकजिगीषया ॥ ७ ॥ अर्धासनेनशक्रस्यराज्यार्धेनचपार्थिवः ॥ वंद्यमानःसुरगणैःप्रतिज्ञामध्यरोहत ॥ ८ ॥ तस्यपापमभिप्रायंविदित्वापाकशासनः ॥ सांत्वपूर्वमिदंवाक्यमुवाचयुवनाश्वजम् ॥ ९ ॥ राजात्वंमानुषेलोकेनतावत्पुरुषर्षभ ॥ अकृत्वापृथिवींवश्यांदेवराज्यमिहेच्छसि ॥ १० ॥ यदिवीरसमग्रातेमेदिनीनिखिलावशे ॥ देवराज्यंकुरुष्वेहसभृत्यबलवाहनः ॥ ११ ॥ इंद्रमेवंब्रुवाणंतंमांधातावाक्यमब्रवीत् ॥ क्वमेशक्रप्रतिहतंशासनंपृथिवीतले ॥ १२ ॥ तमुवाचसहस्राक्षोलवणोनामराक्षसः ॥ मधुपुत्रोमधुवनेनतेऽज्ञांकुरुतेऽनघ ॥ १३ ॥ तच्छ्रुत्वाविप्रियंघोरंसहस्राक्षेणभाषितम् ॥ व्रीडितोवाङ्मुखोराजाव्याहर्तुंनशशाकह ॥ १४ ॥ आमंत्र्यचसहस्राक्षंप्रायात्किंचिदवाङ्मुखः ॥ पुनरेवागमच्छ्रीमानिमंलोकंनरेश्वरः ॥ १५ ॥ सकृत्वाहृदयेऽमर्षंसभृत्यबलवाहनः ॥ आजगाममधोःपुत्रंवशेकर्तुमरिंदमः ॥१६॥ सकांक्षमाणोलवणंयुद्धायपुरुषर्षभः ॥दूतंसंप्रेषयामाससकाशंलवणस्यसः ॥ १७ ॥ सगत्वाविप्रियाण्याहबहूनिमधुनःसुतम् ॥ वदंतमेवंतंदूतंभक्षयामासराक्षसः ॥ १८ ॥

इन्द्र ! बताओ पृथ्वीतलमें मेरी आज्ञा कहां नहीं है ॥१२॥ तब सहस्राक्ष इन्द्रजी कहनेलगे, मधुवनमें मधुका पुत्र लवणासुर तुम्हारी आज्ञा नहीं मानताहै ॥ १३ ॥ वह इन्द्रने कहाहुआ घोर अप्रिय वचन सुनकर लज्जित और नीचेको मुख करके राजा मांधाता कुछभी कहनेको समर्थ न हुए ॥ १४ ॥ और इन्द्रको आमंत्रण करके नीचेको मुख किये वहांसे चले और वे श्रीमान् फिर नरलोकको चले आये ॥ १५ ॥ और वह शत्रुतापन हृदयमें क्रोधकर भृत्य और वाहनोंके सहित मधुके पुत्रको वशमें करनेकी इच्छासे आये ॥ १६ ॥ और उन पुरुषश्रेष्ठने लवणासुरसे युद्ध करनेकी इच्छासे उसके पास दूत भेजा ॥ १७ ॥ उस दूतने जाकर

मधुके पुत्र लवणासुरसे बहुतसे दुर्वचन कहे तब वह क्रोधकर कटुभलापी दूतको भक्षण कर गया ॥ १८ ॥ दूतके आनेमें देरहोनेसे राजा महाक्रोधित होकर चारोंओरसे बाण वृष्टिकर उस राक्षसको मर्दन करनेलगे ॥ १९ ॥ तब उस राक्षसने हँसकर और त्रिशूल हाथमें लेकर उनको सेना सहित मारनेके निमित्त शूल छोडा ॥ २० ॥ वह दीप्यमान त्रिशूल भृत्य बल वाहन सहित राजाको पृथ्वीमें भस्म करके फिर लवणासुरके हाथमें आनकर प्राप्त हुआ ॥ ॥ २१ ॥ इसप्रकारसे वह बडे राजा भृत्य बल वाहन सहित नष्ट होगये, हे शत्रुघ्नजी ! शूलका बल अप्रमेय और बडा श्रेष्ठहै ॥ २२ ॥ परन्तु आप कल प्रातःकालही लवणासुरको मारडालोगे इसमें कुछभी सन्देह नहीं जिस समय उसके हाथमें आयुध न होगा उस समय तुम अवश्य उसे जीतसकोगे ॥ २३ ॥ तुम्हारे इस कर्मके करनेपर

चिरायमाणेदूतेतुराजाक्रोधसमन्वितः॥ अर्दयामासतद्रक्षःशरवृष्ट्यासमंततः ॥ १९ ॥ ततःप्रहस्यतद्रक्षःशूलंजग्राहपाणिना ॥ वधायसानुबंधस्य मुमोचायुधमुत्तमम् ॥२०॥ तच्छूलंदीप्यमानंतुसभृत्यबलवाहनम् ॥ भस्मीकृत्वानृपंभूमौलवणस्यागमत्करम् ॥२१॥ एवंसराजासुमहान्हतःसबलवाहनः ॥ शूलस्यतुबलंसौम्यअप्रमेयमनुत्तमम् ॥२२॥ श्वःप्रभातेतुलवणंवधिष्यसिनसंशयः ॥ अगृहीतायुधंक्षिप्रंध्रुवोहिविजयस्तव ॥ २३ ॥ लोकानांस्वस्तिचैवंस्यात्कृतेकर्मणिचत्वया ॥ एतत्तेसर्वमाख्यातंलवणस्यदुरात्मनः ॥ २४ ॥ शूलस्यचबलंघोरमप्रमेयंनरर्षभ ॥ विनाशश्चैवमांधातुर्यत्नेनाभूच्चपार्थिव ॥२५॥ त्वंश्वःप्रभातेलवणंमहात्मन्वधिष्यसेनात्रतुसंशयोमे ॥ शूलंविनानिर्गतमामिषार्थेध्रुवोजयस्तेभवितानरेंद्र ॥२६॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे सप्तषष्टितमः सर्गः ॥ ६७ ॥ कथांकथयतस्तेपांजयंचाकांक्षतांशुभम् ॥ व्यतीतारजनीशीघ्रंशत्रुघ्नस्यमहात्मनः ॥ १ ॥ ततःप्रभातेविमलेतस्मिन्कालेसराक्षसः ॥ निर्गतस्तुपुराद्वीरोभक्ष्याहारप्रचोदितः ॥ २ ॥ एतस्मिन्नंतरेवीरउत्तीर्ययमुनांनदीम् ॥ तीर्त्वामधुपुरद्वारिधनुष्पाणिरतिष्ठत ॥ ३ ॥ ततोर्धदिवसेप्राप्तेक्रूरकर्मासराक्षसः ॥ अगच्छद्बहुसाहस्रंप्राणिनांभारमुद्वहन्॥४॥

संसारका कल्याण होय यह दुरात्मा लवणासुरका सब चरित्र तुमसे वर्णन किया ॥ २४ ॥ हे नरश्रेष्ठ! त्रिशूलका बल घोर और प्रमाणरहितहै और हे नृप ! मांधाता राजाका नाश तो अति साहससे धोकेमें होगया ॥२५॥ हे नरेन्द्र ! निःसन्देह आप कल प्रातःकाल उस राक्षसको संग्राममें मारडालोगे इसमें संदेह नहीं जिस समय वह शूलके विना आमिष लेनेको घरसे जायगा उस समय आप उसे अवश्य जीतलेंगे॥२६॥इत्यार्षे श्रीमद्रा०वा०आदि०उत्तर०भाषाटीकायां सप्तषष्टितमःसर्गः॥६७॥ उन महात्मा शत्रुघ्नजीसे इस प्रकारसे कथा कहते और जयकी इच्छा करतेहुए वार्तामेंही शीघ्रतासे रात्रि बीतगई॥१॥ उज्ज्वल प्रातःकाल होतेही वह राक्षस वीर अपने पुरसे आहार करनेके निमित्त निकला॥२॥उसी समय वीर शत्रुघ्नजी यमुना नदीको तरकर मधुपुरीके द्वारपै धनुष धारण करके स्थित हुए॥३॥तब मध्याह्नके समय वह

क्रूरकर्मा राक्षस सहस्रों प्राणियोंको अपने ऊपर लादकर प्राप्तहुआ ॥ ४ ॥ उसने अपने नगरके द्वारे आयुध धारण किये शत्रुघ्नजीको देखा तब राक्षस बोला तुम इस धनुष बाणसे क्या करोगे ॥ ५ ॥ हे नराधम ! इस प्रकारके तो आयुध लिये सहस्रों वीरोंको मैं रोपसे भक्षण कर गया तो आज तुमभी कालके प्रेरणासे प्राप्त हुएहो ॥ ६ ॥ हे पुरुषाधम ! आज मेरा आहार भी थोडा हीहै सो हे दुर्मति ! आज तू स्वयंही मेरे मुखमें किस प्रकारसे आकर प्रविष्ट हुआ है ॥ ७ ॥ उसके इस प्रकारके कहनेसे और वारंवार हँसनेसे वीर्यसम्पन्न शत्रुघ्नजी क्रोधके मारे आंसू त्यागनेलगे ॥ ८ ॥ उन महात्मा शत्रुघ्नजीके महाक्रोध होनेसे उनके शरीरसे तेजमयी किरणें निकलनेलगीं ॥ ९ ॥ और महाक्रोधकर शत्रुघ्नजी निशाचरसे बोले, हे दुर्बुद्धे ! मैं तेरे संग द्वंद्वयुद्ध करनेकी इच्छा करता

ततोददर्शशत्रुघ्नंस्थितंद्वारिधृतायुधम् ॥ तमुवाचततोरक्षःकिमनेनकरिष्यसि ॥ ५ ॥ ईदृशानांसहस्राणिसायुधानांनराधम ॥ भक्षितानिमया रोषात्कालेनानुगतोह्यसि ॥ ६ ॥ आहारश्चाप्यसंपूर्णोममायंपुरुषाधम ॥ स्वयंप्रविष्टोवमुखंकथमासाद्यदुर्मते ॥ ७ ॥ तस्यैवंभाषमाणस्यह सतश्चमुहुर्मुहुः ॥ शत्रुघ्नोवीर्यसंपन्नोरोषादश्रूण्यवासृजत् ॥ ८ ॥ तस्यरोषाभिभूतस्यशत्रुघ्नस्यमहात्मनः ॥ तेजोमयामरीच्यस्तुसर्वगात्रैर्विनि ष्पतन् ॥ ९ ॥ उवाचचसुसंक्रुद्धःशत्रुघ्नःसनिशाचरम् ॥ योद्धुमिच्छामिदुर्बुद्धेद्वंद्वयुद्धंत्वयासह ॥ १० ॥ पुत्रोदशरथस्याहंभ्राताराामस्यधीमतः ॥ शत्रुघ्नोनामशत्रुघ्नोवधाकांक्षीतवागतः ॥ ११ ॥ तस्यमेयुद्धकामस्यद्वंद्वयुद्धंप्रदीयताम् ॥ शत्रुस्त्वंसर्वभूतानांनमेजीवन्गमिष्यसि ॥ १२ ॥ तस्मिंस्तथाब्रुवाणेतुराक्षसःप्रहसन्निव ॥ प्रत्युवाचनरश्रेष्ठंदिष्ट्याप्राप्तोसिदुर्मते ॥ १३ ॥ ममभ्रातृष्वसुर्भ्रातारावणोनामराक्षसः ॥ हतोरामेण दुर्बुद्धेस्त्रीहेतोःपुरुषाधम ॥ १४ ॥ तच्चसर्वंमयाक्षांतंरावणस्यकुलक्षयम् ॥ अवज्ञांपुरतःकृत्वामयायूयंविशेषतः ॥ १५ ॥ निहताश्चहितेसर्वे परिभूतास्तृणंयथा ॥ भूताश्चैवभविष्याश्चयूयंचपुरुषाधमाः ॥ १६ ॥

हूं ॥ १० ॥ मैं बुद्धिमान् रामचन्द्रका भ्राता और महाराज दशरथजीका पुत्र हूं और शत्रुओंका मारनेवाला शत्रुघ्न मेरा नामहै सो तेरे मारनेके निमित्त मैं आयाहूं॥ ॥ ११ ॥ तू मुझसे युद्धकी इच्छा करनेवालेको द्वंद्वयुद्ध दे तू सारे प्राणियोंका शत्रुहै इस कारण आज मेरे हाथसे जीता न बचेगा ॥ १२ ॥ शत्रुघ्नके ऐसे कहने पर यह राक्षस हँसताहुआ नरश्रेष्ठसे बोला, हे दुर्मते ! तू आज भाग्यसेही प्राप्त हुआ है ॥ १३ ॥ हे दुर्बुद्धि नराधम ! मेरी मौसीके भाई रावण राक्षसको स्त्रीके निमित्त रामचन्द्रने मारडालाहै ॥ १४ ॥ सो उस रावणके कुलक्षयको और उसके मरणको हमने किसी कारणसे सहन कर लिया; अब तुमने विशेष करके मेरी अवज्ञाही कीहै क्योंकि मेरे सम्मुखही कहते हो ॥ १५ ॥ जो कहो तुममें बल नहीं है तो सुनो तुम्हारे कुलके प्रथम उत्पन्न हुए मांधाताको हमने मारडाला

... कारण उनकी अपेक्षा भविष्य समयवाले तुम हमारे सम्मुख तृणकी समान हो इससे आजतक नहीं मारा ॥
॥ १६ ॥ हे दुर्बो ! यदि तुम युद्धकी इच्छा करतेहो तो मैं तुमको द्वंद्वयुद्ध दूंगा, एक मुहूर्तमात्र तुम स्थित रहो जबतक मैं अपना आयुध ले आऊँ ॥ १७ ॥
तेरो जैसे आयुधकी आवश्यकताहै वैसाही आयुध धारण करूंगा यह वचन सुन शीघ्रतासे शत्रुघ्नजी बोले, अरे तू मुझसे बचके अब कहां जासकताहै ॥ १८ ॥
बुद्धिमानोंको उचितहै कि, जब शत्रु स्वयंही आनकर स्थित हो जाय तब उसका त्याग न करें और जो अपनी हीनबुद्धिसे शत्रुको अवसर देताहै वह
पुरुष कायरोंकी नाईं मारा जाता है ॥ १९ ॥ इस कारण अब तू जीवलोकको देखले, मैं तीक्ष्ण बाणोंसे अब तुझको यमराजके घरका पाहुना करताहूं क...

तस्यतेयुद्धकामस्ययुद्धंदास्यामिदुर्मते॥ तिष्ठत्वंचमुहूर्तंतुयावदायुधमानये ॥१७॥ इप्सितंयादृशंतुभ्यंसज्जयेयावदायुधम् ॥ तमुवाचाशुशत्रुघ्नः ...
जीवन्गमिष्यसि ॥ १८ ॥ स्वयमेवागतःशत्रुर्नमोक्तव्यःकृतात्मना ॥ योहिविक्लवयाबुद्ध्याप्रसरंशत्रवेदिशेत ॥ सहतोमंदबुद्धिःस्याद्यथा...
पस्तथा ॥ १९ ॥ तस्मात्सुदृष्टंकुरुजीवलोकंशरैःशितैस्त्वांविविधैर्नयामि ॥ यमस्यगेहाभिमुखंहिपापंरिपुंत्रिलोकस्यचराघवस्य ॥२०॥ इत्यार्षे
श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडेऽष्टषष्टितमःसर्गः॥६८॥ तच्छ्रुत्वाभाषितंतस्यशत्रुघ्नस्यमहात्मनः ॥ क्रोधमाहारयत्तीव्रं...
ष्ठतिष्ठेतिचाब्रवीत् ॥१॥ पाणौपाणिंसनिष्पिष्यदंतान्कटकटाय्यच ॥ लवणोरघुशार्दूलमाह्वयामासचासकृत् ॥२॥ तंब्रुवाणंतथावाक्यंलवणंघो...
नम् ॥ शत्रुघ्नोदेवशत्रुघ्नइदंवचनमब्रवीत् ॥३॥ शत्रुघ्नोनतदाजातोयदान्येनिर्जितास्त्वया ॥ तदद्यबाणाभिहतोव्रजत्वंयमसादनम् ॥४॥ ...
गोऽप्यद्यपापात्मन्मयात्वांनिहतंरणे ॥ पश्यंतुविप्राविद्वांसस्त्रिदशाइवरावणम् ॥ ५ ॥

तू बड़ा पापी त्रिलोकी और रघुनाथजीका शत्रुहै ॥ २० ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे भाषाटीकायामष्टषष्टितमः सर्गः ॥ ६८ ॥
यह महात्मा शत्रुघ्नजीके वचन सुन बड़े क्रोधसे राक्षस कहने लगा, खड़े रहो खड़े रहो ॥ १ ॥ हाथसे हाथ मलकर और दांतोंको कटकटाकर लवणासुर र...
एकसाही युद्धके निमित्त बुलाताहुआ ॥ २ ॥ इस प्रकारसे घोर दर्शन लवणासुरको घोर वाक्य कहतेहुए सुनकर देवताओंके शत्रुओंको मारनेवाले ...
बोले ॥ ३ ॥ जिससमय तुमने और वीरोंको जीताथा उस समय शत्रुघ्न नहीं उत्पन्न हुआथा सो आज मेरे बाणसे मृतक होकर तू यमलोकको जायगा ॥ ४ ॥
हे पापी ! जिसप्रकार रामचन्द्रसे मरेहुए रावणको देवताओंने देखाथा इसी प्रकार आज मुझसे निहत हुए तुझको संग्राममें ऋषि, ब्राह्मण और विद्वान् देखेंगे ॥ ५ ॥

आज मेरे बाणसे विदीर्ण होकर तेरे गिरजानेपर इस पुर और देशमें कुशल होजायगी ॥ ६ ॥ आज वज्रके समान बाण मेरे हाथोंसे छूटकर तेरे हृदयमें ऐसे प्रवेश करेंगे जैसे कमलमें सूर्यकी किरण प्रवेश कर जाती हैं ॥ ७ ॥ यह सुनते ही महाक्रोधकर लवणासुरने एक महावृक्षको उखाडकर शत्रुघ्नजीकी छातीमें मारा उन्होंने बाणसे उसके सौ खण्ड कर दिये ॥ ८ ॥ बली राक्षसने अपने वृक्षप्रहारको व्यर्थ देखकर और बहुतसे वृक्ष उखाडकर शत्रुघ्नजीके मारे ॥ ९ ॥ तेजस्वी शत्रुघ्नजीनेभी बहुतसे वृक्षोंको आता देखकर नतपर्व बाण चलाय किसीको तीन किसीको चार बाणोंसे छेदन करडाला वीर्यवान् शत्रुघ्नजीने॥ ॥ १० ॥ फिर राक्षसके ऊपर बाणोंकी वर्षा करदी परन्तु वह राक्षस कुछभी व्यथित नहीं हुआ ॥११॥ तब वीर्यवान् लवणासुरने एक वृक्ष उठाय हास्य करके

त्वयिमद्बाणनिर्दग्धेपतितेऽद्यनिशाचरे ॥ पुरेजनपदेचापिक्षेममेवभविष्यति ॥ ६ ॥ अद्यमद्बाहुनिष्क्रांतःशरोवज्रनिभाननः ॥ प्रवेक्ष्यतेतेहृदयंपद्ममंशुरिवार्कजः ॥ ७ ॥ एवमुक्तोमहावृक्षंलवणःक्रोधमूर्च्छितः ॥ शत्रुघ्नोरसिचिक्षेपसचतंशतधाच्छिनत् ॥ ८ ॥ तद्दृष्ट्वाविफलंकर्मराक्षसःपुनरेवतु ॥ पादपान्सुबहून्गृह्यशत्रुघ्नायासृजद्बली ॥९॥ शत्रुघ्नश्चापितेजस्वीवृक्षानापततोबहून् ॥ त्रिभिश्चतुर्भिरेकैकंचिच्छेदनतपर्वभिः ॥१०॥ ततोबाणमयंवर्षंव्यसृजद्राक्षसोपरि ॥ शत्रुघ्नोवीर्यसंपन्नोविव्यथेनसराक्षसः ॥ ११ ॥ ततःप्रहस्यलवणोवृक्षमुद्यम्यवीर्यवान् ॥ शिरस्यभ्यहनच्छूरंस्त्रस्तांगःसमुमोहवै ॥ १२ ॥ तस्मिन्निपतितेवीरेहाहाकारोमहानभूत् ॥ ऋषीणांदेवसंघानांगंधर्वाप्सरसांतथा ॥ १३ ॥ तमवज्ञायतुहतंशत्रुघ्नंभुविपातितम् ॥ रक्षोलब्धांतरमपिनविवेशस्वमालयम् ॥ १४ ॥ नापिशूलंप्रजग्राहतंदृष्ट्वाभुविपातितम् ॥ ततोहतइतिज्ञात्वातान्भक्षान्समुदावहत् ॥ १५ ॥ मुहूर्ताल्लब्धसंज्ञस्तुपुनस्तस्थौधृतायुधः ॥ शत्रुघ्नोवैपुरद्वारिऋषिभिःसंप्रपूजितः ॥ १६ ॥ ततोदिव्यममोघंतंजग्राहशरमुत्तमम् ॥ ज्वलंतंतेजसाघोरंपूरयंतंदिशोदश ॥ १७ ॥

वीर शत्रुघ्नजीके शिरमें मारा जिससे वह शिथिल होकर मोहको प्राप्त हुए ॥१२॥ उस वीरके गिरनेपर देवता, ऋषि, गन्धर्व और अप्सराओंमें महा हाहाकार मच गया ॥१३॥ पृथ्वीमें शत्रुघ्नजीको मृतककी समान पडा देखकर यद्यपि राक्षसको शूल लानेका अवसर मिलगया परन्तु वह उन्हें तुच्छ समझकर मन्दिरमें शूल लेने न गया ॥ १४ ॥ उन्हें पृथ्वीमें पडा देख शूल लेनेको न गया और फिर मृतक समझ अपने भक्ष जीवोंको उठाने लगा ॥ १५ ॥ शत्रुघ्नजी एक मुहूर्तमात्रमें संज्ञा को प्राप्त हो फिर धनुष धारणकर उठे, तब उस पुरके द्वारपरही ऋषियोंने उनकी बडाई की ॥ १६ ॥ तब शत्रुघ्नजीने उस दिव्य और अमोघ [illegible]

... और सर्वो दिशाओंको पूर्ण कर रहा था ॥ १७ ॥ यह वज्रकी समान मुखवाला वज्रके समान वेगवाला मेरु और मन्दरकी समान गौरव
युक्त सम्पूर्ण शत्रियोंसे मुक्त हुआ कभी संग्राममें न हारनेवाला ॥ १८ ॥ लाल चन्दनसे लिप्त पक्षियोंकी समान पंखयुक्त यह बाण दानवेन्द्र पर्वत और असुरोंको
दारुण था ॥ १९ ॥ इसे कालाग्निके समान प्रलय करनेको उद्यत हुए उस बाणको देखकर सब प्राणी भयभीत होगये ॥ २० ॥ देवता, गन्धर्व, मुनि अप्सरादि
सारा जगत् अस्वस्थ होगया और देवतादि ब्रह्माजीके निकट गये ॥ २१ ॥ देवदेव वरदायक पितामहसे देवता कहने लगे कि; हमको बड़ा भय है क्या आज
लोकोंका संहार होजायगा ॥ २२ ॥ लोकपितामह ब्रह्मा उनके यह वचन सुन देवताओंके अभय करनेहारे वचन बोले ॥ २३ ॥ मधुर वाणीसे कहने लगे,

वज्राननंवज्रवेगंमेरुमंदरसन्निभम् ॥ नतंपर्वसुसर्वेषुसंयुगेष्वपराजितम् ॥ १८ ॥ असृक्चंदनदिग्धांगंचारुपत्रंपतत्रिणम् ॥ दानवेंद्राचलेन्द्राणाम सुराणांचदारुणम् ॥ १९ ॥ तंदीप्तमिवकालाग्निंयुगांतेसमुपस्थितम् ॥ दृष्ट्वासर्वाणिभूतानिपरित्रासमुपागमन् ॥ २० ॥ सदेवासुरगंधर्वंमुनिभिः साप्सरोगणम् ॥ जगद्धिसर्वमस्वस्थंपितामहमुपस्थितम् ॥ २१ ॥ ऊचुश्चदेवदेवेशंवरदंप्रपितामहम् ॥ देवानांभयसंमोहोलोकानांसंक्षयंप्रति ॥ ॥ २२ ॥ तेषांतद्वचनंश्रुत्वाब्रह्मालोकपितामहः ॥ भयकारणमाचष्टदेवानामभयंकरः ॥ २३ ॥ उवाचमधुरांवाणींशृणुध्वंसर्वदेवताः ॥ वधायलवणस्याजौशरःशत्रुघ्नधारितः ॥ २४ ॥ तेजसातस्यसंमूढाःसर्वेस्मःसुरसत्तमाः ॥ एषोपूर्वस्यदेवस्यलोककर्तुःसनातनः ॥ २५ ॥ शरस्तेजोमयो वत्साधेनवैभयमागतम् ॥ एषवैकैटभस्यार्थंमधुनश्चमहाशरः ॥ २६ ॥ सृष्टोमहात्मनातेनवधार्थंदैत्ययोस्तयोः ॥ एकएवप्रजानातिविष्णुस्तेजोम यंशरम् ॥२७॥ एषाएवतनुःपूर्वाविष्णोस्तस्यमहात्मनः ॥ इतोगच्छतपश्यध्वंवध्यमानंमहात्मना ॥२८॥ रामानुजेनवीरेणलवणंराक्षसोत्तमम् ॥ तस्यतेदेवदेवस्यनिशम्यवचनंसुराः ॥ २९ ॥

सम्पूर्ण देवताओ ! सुनो संग्राममें लवणासुरके मारनेके निमित्त शत्रुघ्नने बाण धारण किया है ॥ २४ ॥ हे देवताओ ! तुम सब उसके तेजसे संमूढ होगये हो, यह लोक
कर्ता सबसे प्रथम उत्पन्न हुए देव सनातन भगवानने ॥ २५ ॥ कैटभके मारनेके निमित्त यह महातेजयुक्त बाण धनुष निर्माण किया था जिसके कारण तुम भयभीत
हुए हो ॥ २६ ॥ उन महात्मा देवने उन दोनों दैत्योंके मारनेके निमित्त इस बाणको निर्माण किया था; एक विष्णु भगवानही इस महातेजयुक्त बाणको
जानते हैं ॥२७॥ यह बाण साक्षात् विष्णुकी मूर्तिही है, जाओ उन महात्मासे उस राक्षसका मरण देखो ॥२८॥ रामानुज महावीर शत्रुघ्नजी उसको मारडालेंगे,

इसप्रकार देवता उन देवदेव ब्रह्माजीके वचन श्रवणकर ॥ २९ ॥ जहां शत्रुघ्न और लवणासुरका संग्राम होरहाथा वहां आये, उस दिव्य बाणको शत्रुघ्नके हाथमें ॥ ॥३०॥ सब प्राणी प्रलयकालकी अग्निके समान देखतेहुए, रघुनंदनने देवताओंसे युक्त आकाश देखकर ॥ ३१ ॥ बडाभारी सिंहनादकर लवणासुरकी ओर देखा; और उन महात्मा शत्रुघ्नने उसको बुलाया ॥ ३२ ॥ लवणासुरभी महाक्रोधकर फिर युद्ध करनेको उपस्थित हुआ तब धनुष धारण करनेवालोंमें श्रेष्ठ शत्रुघ्नजीने कर्णपर्यन्त धनुष खैंच ॥ ३३ ॥ उस महाबाणको लवणासुरके हृदयमें मारा वह उसके उरस्थलको भेदकर शीघ्र पातालमें प्रवेश करगया वह देवपूजित बाण शीघ्र रसातलमें प्रवेश करके फिर इक्ष्वाकुकुलनन्दन शत्रुघ्नजीके पास चलाआया ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ शत्रुघ्नके बाणसे भिन्नहृदयहो वह राक्षस लवणासुर वज्रसे हत

आजग्मुर्यत्रयुध्येतेशत्रुघ्नलवणावुभौ ॥ तंशरंदिव्यसंकाशंशत्रुघ्नकरधारितम् ॥ ३० ॥ ददृशुःसर्वभूतानियुगांताग्निमिवोत्थितम् ॥ आकाशमा वृतंदृष्ट्वादेवैर्हिरघुनंदनः ॥ ३१ ॥ सिंहनादंभृशंकृत्वाददर्शलवणंपुनः ॥ आहूतश्चपुनस्तेनशत्रुघ्नेनमहात्मना ॥ ३२ ॥ लवणःक्रोधसंयुक्तोयुद्धा यसमुपस्थितः ॥ आकर्णात्सविकृष्याथतद्धनुर्धन्विनांवरः ॥ ३३ ॥ समुमोचमहाबाणंलवणस्यमहोरसि ॥ उरस्तस्यविदार्याशुप्रविवे शरसातलम् ॥ ३४ ॥ गत्वारसातलंदिव्यःशरोविबुधपूजितः ॥ पुनरेवागमत्तूर्णमिक्ष्वाकुकुलनंदनम् ॥ ३५ ॥ शत्रुघ्नशरनिर्भिन्नोलवणः सनिशाचरः ॥ पपातसहसाभूमौवज्राहतइवाचलः ॥ ३६ ॥ तच्चशूलंमहद्दिव्यंहतेलवणराक्षसे ॥ पश्यतांसर्वदेवानांरुद्रस्यवशमन्वगात् ॥ ३७ ॥ एकेषुपातेनभयंनिपात्यलोकत्रयस्यास्यरघुप्रवीरः ॥ विनिर्बभावुत्तमचापबाणस्तमःप्रणुद्येवसहस्ररश्मिः ॥ ३८ ॥ ततोहिदेवास्तृ पिपन्नगाश्चप्रपूजिरेह्यप्सरसश्चसर्वाः ॥ दिष्ट्याजयोदाशरथेरवाप्तस्त्यक्त्वाभयंसर्पइवप्रशांतः ॥ ३९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणेवाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांड एकोनसप्ततितमः सर्गः ॥ ६९ ॥

हुए पर्वतके समान पृथ्वीमें गिरा ॥ ३६ ॥ लवण राक्षसके मरजानेपर वह दिव्य त्रिशूल सम्पूर्ण देवताओंके देखते २ शिवजीके पास चलागया ॥ ३७ ॥ रघु वीरने एकही बाणको छोड़कर त्रिलोकीका भय दूर करदिया और उत्तम चाप बाण धारणकर ऐसे सुशोभित हुए जैसे अन्धकार दूर कर सूर्य शोभित होताहै ॥ ॥ ३८ ॥ उस समय देवता, ऋषि, सर्प, पन्नग, अप्सरा सब कोई शत्रुघ्नकी बडाई करने लगे, हे काकुत्स्थ ! आपने भाग्यसेही भय त्याग इस राक्षसको मार कर जय पाई और सर्पसमान लवणासुर हत हुआ ॥ ३९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषाटीकायामेकोनसप्ततितमः सर्गः ॥ ६९ ॥

लवणासुरके मरनेपर अग्निसहित सब देवता शत्रुओंके तपानेवाले शत्रुघ्नजीसे मधुर वाणी बोले ॥ १ ॥ हे वत्स ! भाग्यसेही आपकी जय हुई और भाग्यसेही लवणासुर राक्षस मारागया. हे पुरुषसिंह ! अब तुम वर माँगो ॥ २ ॥ हे महाभुज ! हमारे दर्शन निष्फल नहीं जाते, हम सब वर देनेवाले विजयकी इच्छासे तुम्हारे निकट आये थे ॥ ३ ॥ नियमित महाबाहु शत्रुघ्नजी देवताओंके यह वचन सुन शिर झुकाय हाथ जोड बोले ॥ ४ ॥ "यह देवताओंकी बनाई मनोहर मधुपुरी शीघ्रही धन जनसे पूर्ण होजाय" हम इसी वरकी इच्छा करतेहैं ॥ ५ ॥ यह वचन सुन देवताओंने प्रसन्न हो शत्रुघ्नजीसे "तथास्तु" कहा और निश्चयही यह शोभायमान पुरी शूरसेनदेशसे संयुक्त होगी ॥ ६ ॥ यह कहकर महात्मा देवता स्वर्गको चलेगये और महातेजस्वी शत्रुघ्नजीने

हतेतुलवणेदेवाःसेंद्राःसाग्निपुरोगमाः ॥ ऊचुःसुमधुरांवाणींशत्रुघ्नंशत्रुतापनम् ॥ १ ॥ दिष्टयातेविजयोवत्सदिष्टयालवणराक्षसः ॥ हतःपुरुषशार्दूलवरंवरयसुव्रत ॥ २ ॥ वरदास्तुमहाबाहोसर्वएवसमागताः ॥ विजयाकांक्षिणस्तुभ्यममोघंदर्शनंहिनः ॥ ३ ॥ देवानांभाषितंश्रुत्वाशूरोमूर्ध्निकृतांजलिः ॥ प्रत्युवाचमहाबाहुःशत्रुघ्नःप्रयतात्मवान् ॥ ४ ॥ इयंमधुपुरीरम्यामधुरादेवनिर्मिता ॥ निवेशंप्राप्नुयाच्छीघ्रमेपमेऽस्तुवरः परः ॥ ॥ ५ ॥ तंदेवाःप्रीतमनसोबाढमित्येवराघवम् ॥ भविष्यतिपुरीरम्याशूरसेनानसंशयः ॥ ६ ॥ तेतथोक्त्वामहात्मानोदिवमारुरुहुस्तदा ॥ शत्रुघ्नोपिमहातेजास्तांसेनांसमुपानयत् ॥ ७ ॥ सासेनाशीघ्रमागच्छच्छ्रुत्वाशत्रुघ्नशासनम् ॥ निवेशनंचशत्रुघ्नःश्रावणेनसमारभत् ॥ ८ ॥ सपुरादिव्यसंकाशोवर्षेद्वादशमेशुभे ॥ निविष्टःशूरसेनानांविषयश्चाकुतोभयः ॥ ९ ॥ क्षेत्राणिसस्ययुक्तानिकालेवर्षतिवासवः ॥ अरोगवीरपुरुषाशत्रुघ्नभुजपालिता ॥ १० ॥ अर्धचंद्रप्रतीकाशायमुनातीरशोभिता ॥ शोभितागृहमुख्यैश्चचत्वरापणवीथिकैः ॥ चातुर्वर्ण्यसमायुक्तानानावाणिज्यशोभिता ॥ ११ ॥ यच्चतेनपुराशुभ्रंलवणेनकृतंमहत् ॥ तच्छोभयतिशत्रुघ्नोनानावर्णोपशोभितम् ॥ १२ ॥

गंगाके किनारेसे अपनी सेनाको बुलाया ॥ ७ ॥ वह सेना शत्रुघ्नकी आज्ञा श्रवण कर बहुत शीघ्रतासे आई और शत्रुघ्नजीने श्रावण माससे उसका बसाना प्रारम्भ किया ॥ ८ ॥ द्वादशवर्षमें प्रथमही संपूर्ण देश भयरहित हो शूरसेनवंशी राजाओंके रहनेके निमित्त होगया ॥ ९ ॥ सब क्षेत्र धान्ययुक्त हुये इन्द्र समयपर वर्षा करते इसप्रकार शत्रुघ्नके पालन करनेसे मधुपुरी अरोगी और वीर पुरुषोंसे परिपूर्ण होगई ॥ १० ॥ वह अर्धचंद्राकार पुरी यमुनाके किनारे शोभित हुई, उसमें अनेकों सुन्दर घर गली बाजार चौराहे दूकानें बनी जिसमें चारों वर्ण और अनेक व्यापारी आनंदसे वास करने लगे ॥ ११ ॥ जैसा कुछ प्रथम लवणासुरने उसमें

मंदिर शोभित किया था उससे कहीं अधिक अनेक प्रकारकी वस्तुओंसे शत्रुघ्नजीने उसे शोभित किया ॥ १२ ॥ जिसके चारोंओर उपवन विहारस्थान शोभित थे और भी अनेक शोभाके योग्य देवता ब्राह्मणोंसे वह पुरी शोभायमान थी ॥ १३ ॥ अनेक प्रकारकी व्यापारकी वस्तुओंसे शोभित वह पुरी देशदेशांतरसे आये वणिकोंमे परममनोहर होरही थी ॥ १४ ॥ भरतके छोटे भाई समृद्धार्थ शत्रुघ्नजी उस पुरीको सब प्रकारसे अन्न जनसे पूर्ण देखकर परम प्रसन्न हुए इसप्रकार मधुपुरीको बसाकर उनके चित्तमें यह वार्त्ता आई कि, अब चलकर रघुनाथजीके चरणोंका दर्शन करूं कारण कि, बिना मिले बारह वर्ष बीतगये ॥ १५ ॥ १६ ॥ तब वह नरश्रेष्ठ रघुकुलके बढानेवाले नरराज देवताओंकी पुरीकी समान अनेक जनोंसे अपनी पुरीको पूर्ण देख रघुनाथजीके चरणकमल देखनेकी इच्छा करनेलगे ॥१७॥

आरामैश्चविहारैश्चशोभमानांसमंततः ॥ शोभितांशोभनीयैश्चतथान्यैर्देवमानुषैः ॥ १३ ॥ तांपुरींदिव्यसंकाशांनानापण्योपशोभिताम् ॥ नानादेशगतैश्चापिवणिग्भिरुपशोभिताम् ॥ १४ ॥ तांसमृद्धांसमृद्धार्थःशत्रुघ्नोभरतानुजः ॥ निरीक्ष्यपरमप्रीतःपरंहर्षमुपागमत् ॥१५॥ तस्यबुद्धिःसमुत्पन्नानिवेश्यमधुरांपुरीम् ॥ रामपादौनिरीक्षेऽहंवर्षेद्वादशआगते ॥ १६ ॥ ततःसताममरपुरोपमांपुरींनिवेश्यवैविविधजनाभिसंवृताम् ॥ नराधिपोरघुपतिपाददर्शनेदधेमतिंरघुकुलवंशवर्धनः॥१७॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मी०आदि०उत्तरकांडे सप्ततितमःसर्गः ॥७०॥ ततोद्वादशमेवर्षेशत्रुघ्नोरामपालिताम्॥अयोध्यांचकमेगंतुमल्पभृत्यबलानुगः॥१॥ततोमंत्रिपुरोगांश्चबलमुख्यान्निवर्त्यच॥ जगामहयमुख्येनरथानांचशतेनसः॥२॥सगत्वागणितान्वासान्सप्ताष्टौरघुनंदनः॥वाल्मीकाश्रममागत्यवासंचक्रेमहायशाः॥३॥सोभिवाद्यततःपादौवाल्मीकेःपुरुषर्षभः॥ पाद्यमर्घ्यंतथातिथ्यंजग्राहमुनिहस्ततः ॥४॥ बहुरूपाःसुमधुराःकथास्तत्रसहस्रशः ॥ कथयामाससमुनिःशत्रुघ्नायमहात्मने॥५॥उवाचचमुनिर्वाक्यंलवणस्यवधाश्रितम्॥सुदुष्करंकृतंकर्मलवणंनिघ्नतात्वया॥६॥बहवःपार्थिवाःसौम्यहताःसबलवाहनाः॥ लवणेनमहाबाहोयुध्यमानामहाबलाः ॥ ७ ॥

इत्यार्षे श्रीमद्रा०वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषाटीकायां सप्ततितमः सर्गः ॥७०॥ तब बारहवें वर्षमें शत्रुघ्नजी थोडीसी सेनाको साथ ले रामपालित अयोध्यामें जानेकी इच्छा कर चले ॥ १ ॥ तब वह मन्त्री आदि मुख्य २ सेनाके लोगोंको लौटाकर एक अच्छे घोडे जुते रथपर चढ और सौ रथ संग लेकर अयोध्याको चले ॥ २ ॥ महायशस्वी रघुनंदन सात आठ दिनमें वाल्मीकिजीके आश्रममें आनकर ठहरे ॥ ३ ॥ उन पुरुषश्रेष्ठने वाल्मीकिजीके चरण स्पर्शकर पीछे मुनिसे पाद्य अर्घ्य और आतिथ्य ग्रहण किया॥४॥ उससमय मुनि वाल्मीकिजीने महात्मा शत्रुघ्नजीसे मनोहर सहस्रों कथा वर्णन कीं ॥५॥ और यहभी कहा, हे शत्रुघ्न! तुमने जो लवणासुरको मारा यह बडा दुष्कर कर्म किया है ॥ ६ ॥ हे महाबाहो! इस बलिष्ठ लवणासुरने युद्ध करते समय बडे २ राजाओंको बल और वाहन

...लिन संहार कर दिया था ॥ ७ ॥ हे पुरुषश्रेष्ठ ! तुमने उस महापापीको लीलासेही मारडाला तुम्हारे प्रतापसे जगत् शान्त और निर्भय होगया ॥ ८ ॥ रामचन्द्रने बडे यत्नसे रावणका विनाश कियाथा परन्तु तुमनेभी यह महत्कर्म विना प्रयत्नके सिद्ध किया ॥ ९ ॥ इस लवणके मारनेसे तुमपर देवता बडे प्रसन्न हुए कारण यह तुमने सब जगत् और प्राणियोंका प्रिय कार्य सिद्ध कियाहै ॥१०॥हे राघव ! उस समय इन्द्रकी सभामें बैठे२ मैंने वह सब युद्ध यथावत् देखाथा॥ ॥ ११ ॥ हे शत्रुघ्नजी ! मुझेभी तुम्हारे ऊपर बडी प्रसन्नता हुईहै इस कारण मैं तुम्हारे शिरको सूँघता हूँ कारण कि, स्नेहकी पराकाष्ठा यहीहै ॥ १२ ॥ यह कहकर महामति वाल्मीकिजीने शत्रुघ्नजीका शिर सूँघलिया और शत्रुघ्न तथा उनके सब सेवकोंका अतिथिसत्कार किया ॥ १३ ॥ जब वह

सत्वयानिहतःपापोलीलयापुरुषर्षभ ॥ जगतश्चभयंतत्रप्रशांतंतवतेजसा ॥ ८ ॥ रावणस्यवधोघोरोयत्नेनमहताकृतः ॥ इदंचसुमहत्कर्मत्वया कृतमयत्नतः ॥ ९ ॥ प्रीतिश्चास्मिन्पराजातादेवानांलवणेहते ॥ भूतानांचैवसर्वेषांजगतश्चप्रियंकृतम् ॥ १० ॥ तच्चयुद्धंमयादृष्टंयथावत्पुरुषर्षभ ॥ सभायांवासवस्याथउपविष्टेनराघव ॥ ११ ॥ ममापिपरमाप्रीतिर्हृदिशत्रुघ्नवर्तते ॥ उपाघ्रास्यामितेमूर्ध्निस्नेहस्यैषापरागतिः ॥ १२ ॥ इत्युक्त्वामूर्ध्निशत्रुघ्नमुपाघ्रायमहामतिः ॥ आतिथ्यमकरोत्तस्ययेचतस्यपदानुगाः ॥ १३ ॥ सभुक्तवान्नरश्रेष्ठोगीतमाधुर्यमुत्तमम् ॥ शुश्रावरामचरितंतस्मिन्कालेयथाकृतम् ॥ १४ ॥ तंत्रीलयसमायुक्तंत्रिस्थानकरणान्वितम् ॥ संस्कृतंलक्षणोपेतंसमतालसमन्वितम् ॥१५॥ शुश्रावरामचरितंतस्मिन्कालेपुराकृतम् ॥ तान्यक्षराणिसत्यानियथावृत्तानिपूर्वशः ॥ १६ ॥ श्रुत्वापुरुषशार्दूलोविसंज्ञोबाष्पलोचनः ॥ समुहूर्तमिवासंज्ञोविनिःश्वस्यमुहुर्मुहुः ॥ १७ ॥ तस्मिन्गीतेयथावृत्तंवर्तमानमिवाशृणोत् ॥ पदानुगाश्चयेराज्ञस्तांश्रुत्वागीतिसंपदम् ॥ १८ ॥

नरश्रेष्ठ भोजन करचुके उस समय किसी स्थानमें गातेहुओंसे रामचन्द्रका चरित्र परम मधुर छंदोंमें प्रत्यक्ष अनुभवकी समान श्रवण करनेलगे ॥ १४ ॥ उर कंठ शिरमें मंद्र मध्य तार स्वरसे उचारण हुए वीणाकी लयसहित समताल गानसे युक्त व्याकरण वृत्त छंद काव्य संगीत शास्त्रके लक्षणोंसे परिपूर्ण संस्कृत किया॥ ॥ १५ ॥ पूर्व कालके किये हुए रामचरितको अक्षरोंसे पूर्ण वाक्य और सत्य अर्थयुक्त क्रमानुसार शत्रुघ्नजी श्रवण करनेलगे ॥ १६ ॥ वह पुरुषसिंह उस गीतको श्रवण करतेही जल पूरित नेत्र और विचेतन हुए, एक मुहूर्ततक निश्चेष्ट और वारंवार श्वास लेते रहे ॥ १७ ॥ उस गीतिकी पूर्व काल कथाको

वर्तमानकी समान श्रवण करनेलगे और जो शत्रुघ्नजीके साथी थे उन्होंनेभी वह मनोहर गीत श्रवणकर ॥ १८ ॥ ऐसा हमने रामचरित्र गानेहारा न देखा ऐसा विचार नीचेको मुख कर लिये और गानेवाले गीतिकी कुशलतासे दीन होगये सेनाके लोग क्या आश्चर्यहै ऐसा परस्पर कहनेलगे ॥ १९ ॥ कि, यह क्याहै हम कहां हैं कुछ स्वप्न तो नहीं देखते हैं जो हमने पूर्वकालमें देखाथा उसे हम फिर इस आश्रममें ॥ २० ॥ श्रवण करते हैं क्या हम इस चारित्रको स्वप्नमें देखते हैं इसप्रकार परमाश्चर्यको प्राप्तहो शत्रुघ्नजीसे बोले ॥ २१ ॥ हे नरश्रेष्ठ! आप वाल्मीकिजीसे यह अच्छीतरह पूछिये कि, यह कर्तृक गान है वा और कुछ; तब शत्रुघ्नजी उन सब आश्चर्यको प्राप्त हुए पुरुषोंसे कहने लगे ॥ ॥ २२ ॥ हे सैनिको! हम ऐसी बातको मुनिसे नहीं पूछसक्ते कारण कि,

अवाङ्मुखाश्चदीनाश्चह्याश्चर्यमितिचाब्रुवन् ॥ परस्परंचयेतत्रसैनिकाःसंबभाषिरे ॥ १९ ॥ किमिदंक्कचवर्तामःकिमेतत्स्वप्नदर्शनम् ॥ अर्थोयोनः पुराद्दष्टस्तमाश्रमपदेपुनः ॥ २० ॥ शृणुमःकिमिदंस्वप्नेगीतबंधनमुत्तमम् ॥ विस्मयंतेपरंगत्वाशत्रुघ्नमिदमब्रुवन् ॥ २१ ॥ साधुपृच्छनरश्रेष्ठ वाल्मीकिंमुनिपुंगवम् ॥ शत्रुघ्नस्त्वब्रवीत्सर्वान्कौतूहलसमन्वितान् ॥ २२ ॥ सैनिकानक्षमोस्माकंपरिप्रष्टुमिहेदृशः ॥ आश्चर्याणिबहूनीहभवंत्यस्याश्रमेमुनेः ॥ २३ ॥ नतुकौतूहलाद्युक्तमन्वेष्टुंतंमहामुनिम् ॥ एवंतद्वाक्यमुक्तातुसैनिकान्रघुनंदनः ॥ अभिवाद्यमहर्षिंतंस्वंनिवेशंययौ तदा ॥ २४ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांड एकसप्ततितमःसर्गः ॥ ७१ ॥ तंशयानंनरव्याघ्रंनिद्रानाभ्यागमत्तदा ॥ चिंतयानमनेकार्थंरामगीतमनुत्तमम् ॥ १ ॥ तस्यशब्दंसुमधुरंतंत्रीलयसमन्वितम् ॥ श्रुत्वारात्रिर्जगामाशुशत्रुघ्नस्यमहात्मनः ॥ २ ॥ तस्यां रजन्यांव्युष्टायांकृत्वापौर्वाह्णिकक्रमम् ॥ उवाचप्रांजलिर्वाक्यंशत्रुघ्नोमुनिपुंगवम् ॥ ३ ॥ भगवन्द्रष्टुमिच्छामिराघवंरघुनंदनम् ॥ त्वयानुज्ञातुमिच्छामिसहैभिःसंशितव्रतैः ॥ ४ ॥

इन मुनिके आश्रममें बहुत आश्चर्य हुआ करते हैं ॥ २३ ॥ कौतूहल होनेसे यह बात मुनिराजसे पूछनी उचित नहीं इसप्रकार रघुनंदन सेनाके पुरुषोंसे कह कर महर्षिको अभिवादन कर अपने निवासस्थानपर आये ॥ २४ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० उत्तरकांडे भाषाटीकायामेकसप्ततितमः सर्गः ॥ ७१ ॥ उन नरव्याघ्रको शयन करते उस समय निद्रा नहीं आई कारण कि, अनेकार्थ युक्त रामचरित उत्तम गीतमें वह अनेक प्रकारकी चिंता करतेरहे ॥ १ ॥ महात्मा शत्रुघ्नको वह मधुर वीणाके शब्दोंसे युक्त गीत श्रवण करते २ शीघ्रही रात्रि व्यतीत होगई ॥ २ ॥ उस रात्रिके बीतजानेपर प्रातःकृत्य कर शत्रुघ्नजी मुनिश्रेष्ठ वाल्मीकिजीसे हाथ जोड बोले ॥ ३ ॥ हे भगवन्! अब मेरी इच्छा [illegible] रामचन्द्रके देखनेकी है इन मुनिके सहित आपकी आज्ञा लेकर

इत्येवंवादिनंतंतुशत्रुघ्नंशत्रुसूदनम् ॥ वाल्मीकिःसंपरिष्वज्यविससर्जसराघवम्॥५॥ सोभिवाद्यमुनिश्रेष्ठंरथमारुह्यसुप्रभम् ॥ अयोध्यामगमत्तूर्णंराघवोत्सुकदर्शनः ॥ ६ ॥ सप्रविष्टःपुरींरम्यांश्रीमानिक्ष्वाकुनंदनः ॥ प्रविवेशमहाबाहुर्यत्ररामोमहाद्युतिः ॥ ७ ॥ सरामंमंत्रिमध्यस्थंपूर्णचंद्रनिभाननम् ॥ पश्यन्नमरमध्यस्थंसहस्रनयनंयथा ॥ ८ ॥ सोभिवाद्यमहात्मानंज्वलंतमिवतेजसा ॥ उवाचप्रांजलिर्भूत्वारामंसत्यपराक्रमम् ॥९॥ यदाज्ञप्तंमहाराजसर्वंतत्कृतवानहम् ॥ हतःसलवणःपापःपुरीचास्यनिवेशिता ॥ १० ॥ द्वादशैतानिवर्षाणित्वांविनारघुनंदन ॥ नोत्सहेयमहंवस्तुंत्वयाविरहितोनृप ॥ ११ ॥ समेप्रसादंकाकुत्स्थकुरुष्वामितविक्रम ॥ मातृहीनोयथावत्सोनचिरंप्रवसाम्यहम् ॥ १२ ॥ एवंब्रुवाणंकाकुत्स्थःपरिष्वज्येदमब्रवीत् ॥ माविषादंकृथाःशूरनैतत्क्षत्रियचेष्टितम् ॥ १३ ॥ नावसीदंतिराजानोविप्रवासेपुराघव ॥ प्रजाहिपरिपाल्याहिक्षत्रधर्मेणराघव ॥ १४ ॥ कालेकालेतुमांवीरअयोध्यामवलोकितुम् ॥ आगच्छत्वंनरश्रेष्ठगंतासिचपुरंतव ॥ १५ ॥ ममापित्वंसुदयितःप्राणैरपिनसंशयः ॥ अवश्यंकरणीयंचराज्यस्यपरिपालनम् ॥ १६ ॥

...नेकी इच्छा करता हूं ॥ ४ ॥ शत्रुसूदन शत्रुघ्नजीके ऐसा कहनेपर वाल्मीकिजीने हृदयसे लगाय उन्हें बिदा कर दिया ॥ ५ ॥ शत्रुघ्नजीभी मुनिश्रेष्ठको अभिवादन कर और श्रेष्ठरथपर चढ रामचन्द्रके दर्शनकी इच्छा किये शीघ्रतासे अयोध्याको चले ॥ ६ ॥ वह श्रीमान् इक्ष्वाकुनंदन महाबाहु कान्तिमान् रघुनाथजीकी मनोहर पुरीमें पहुँचे ॥ ७ ॥ तब वह पूर्णचन्द्रमाकी समान मन्त्रियोंके बीचमें बैठेहुए रामचन्द्रको देखने लगे जैसे कि; देवताओंके बीचमें इन्द्र बैठे होते हैं ॥ ८ ॥ वह सत्यपराक्रम तेजसे दीप्तिमान् महात्मा रामचन्द्रको अभिवादन कर हाथ जोडकर कहने लगे ॥ ९ ॥ हे महाराज ! जो कुछ आपने आज्ञा दीथी वह मैंने सम्पूर्ण प्रतिपालन की है वह पापी लवण मारागया और वहां मैंने पुरीभी बसाई है ॥ १० ॥ हे नृप रघुनन्दन ! अब वहां रहते द्वादशवर्ष आपके बिना दर्शन किये बीतगये अब आपके वियोगमें मुझसे रहा नहीं जाता ॥ ११ ॥ हे काकुत्स्थ ! अब आप मेरे ऊपर प्रसन्न हूजिये माताहीन बछडेकी समान अब मैं वहां बहुत समयतक नहीं रहसकता ॥ १२ ॥ शत्रुघ्नके यह वचन सुन रघुनाथजी उन्हें हृदय लगाकर बोले, हे वीर ! तुम विषाद मत करो क्षत्रियोंको यह वचन कहने उचित नहीं ॥ १३ ॥ हे राघव ! राजा परदेशमें रहनेसे दुःखी नहीं होते हैं राजा को तो क्षत्रधर्मसे प्रजा पालनीही उचित है ॥ १४ ॥ हे नरश्रेष्ठ ! जिससमय तुम्हारी इच्छा हो तभी २ हमको देखनेको चले आया करो और फिर २ अपने पुरको चले जाया करो ॥ १५ ॥ तुम मुझे प्राणोंकी समान प्यारे हो इसमें कुछभी

सन्देह नहीं परन्तु राज्यपालनभी तो अवश्य करना उचित है ॥ १६॥ इसकारण भाई आप सात दिनतक यहां रहिये और इसके उपरान्त सेना वाहन सहित फिर मधुपुरीको चले जाना ॥१७॥ रघुनाथजीके यह धर्मयुक्त मनोगत वचन श्रवण करके शत्रुघ्नजी दीन हो "जो आज्ञा" ऐसे कहते हुए ॥१८॥ इस प्रकार रामचन्द्रकी आज्ञासे सात रात्रि रहकर फिर महावीर शत्रुघ्नजीने जानेका विचार किया ॥ १९ ॥ सत्यपराक्रम महात्मा रघुनाथजी और भरत लक्ष्मणको आमन्त्रण करके रथपर चढे ॥ २० ॥ महात्मा लक्ष्मण भरतजी शत्रुघ्नजीके साथ कुछ दूरतक पैरों पैरों चले और फिर पुरीको शीघ्र लौटि आये ॥ २१ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषाटीकायां द्विसप्ततितमः सर्गः॥७२॥ भाइयोंके सहित रघुनाथजी शत्रुघ्नजीको विदा करके धर्मपूर्वक राज्य करते

तस्मात्त्वंवसकाकुत्स्थसप्तरात्रंमयासह ॥ ऊर्ध्वंगंतासिमथुरांसभृत्यवलवाहनः॥१७॥ रामस्यैतद्वचःश्रुत्वाधर्मयुक्तंमनोनुगम् ॥ शत्रुघ्नोदीनयावा चावाढमित्येवचाब्रवीत् ॥ १८ ॥ सप्तरात्रंचकाकुत्स्थोराघवस्ययथाज्ञया ॥ उष्यतत्रमहेष्वासोगमनायोपचक्रमे ॥१९॥ आमंत्र्यतुमहात्मानं रामंसत्यपराक्रमम् ॥ भरतंलक्ष्मणंचैवमहारथमुपारुहत् ॥ २० ॥ दूरंपद्भ्यामनुगतोलक्ष्मणेनमहात्मना ॥ भरतेनचशत्रुघ्नोजगामाशुपुरीं तदा ॥ २१ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे द्विसप्ततितमःसर्गः॥७२॥ प्रस्थाप्यतुसशत्रुघ्नंभ्रातृभ्यांसहराघवः ॥ प्रमुमोदसुखीराज्यंधर्मेणपरिपालयन् ॥ १ ॥ ततःकतिपयाहस्सुवृद्धोजानपदोद्विजः ॥ मृतंवालमुपादायराजद्वारमुपागमत् ॥ २ ॥ किंनुमेदु ष्कृतंकर्मपुरादेहांतरेकृतम् ॥ रुदन्बहुविधावाचःस्नेहदुःखसमन्वितः ॥ असकृत्पुत्रपुत्रेतिवाक्यमेतदुवाचह ॥३॥ किंनुमेदुष्कृतंकर्मपुरादेहांतरे कृतम् ॥ यदहंपुत्रमेकंतुपश्यामिनिधनंगतम् ॥ ४ ॥ अप्राप्तयौवनंवालंपंचवर्षसहस्रकम् ॥ अकालेकालमापन्नंममदुःखायपुत्रक ॥ ५ ॥ अल्पैरहोभिर्निधनंगमिष्यामिनसंशयः ॥ अहंचजननीचैवतवशोकेनपुत्रक ॥ ६ ॥०

सुखसे रहने लगे ॥ १ ॥ फिर कुछ दिन वीतनेपर एक उस देशका बूढा ब्राह्मण मृतक बालक लेकर राजद्वारपर आया ॥ २ ॥ मैंने पूर्वजन्ममें न जाने क्या पाप किया है इस प्रकार स्नेह दुःख भरी बहुतसी बातें कहकर वह रोने लगा और वारंवार हे पुत्र ! हे पुत्र ! ऐसा कहने लगा ॥ ३ ॥ हाय मैंने क्या पाप पूर्वजन्ममें किया था जो मेरा इकलौता पुत्र मरगया ॥ ४ ॥ मेरा बालक तो अभी तरुणभी नहीं हुआ था अभी पांच ❀ हजार दिनकी अवस्था थी हाय पुत्र ! अकालमेंही तुम मुझे दुःख देनेके निमित्त कालको प्राप्त हुए ॥ ५ ॥ हे पुत्र ! मैं और तुम्हारी माता तुम्हारे शोकसे थोडेही दिनोंमें मरजायँगे इसमें कुछ सन्देह नहीं ॥ ६ ॥

❀ ' पंचवर्षसहस्रकम् ' [illegible]

न तो मैंने किसीसे झूठही बोला न मैंने किसीकी हिंसाही करी न मैंने मन वचन कर्मसे किन्ही प्राणियोंका कभी कुछ पाप स्मरण किया ॥७॥ फिर किस पापसे यह मेरा पुत्र बाल्य अवस्थामेंही यमलोकको गया और अपने पितरोंके श्राद्धादि कर्म न कर सका॥८॥रामचन्द्रके देशोंमें इसप्रकार घोर दर्शन वार्ता हमने नहीं सुनी जोकि अकालमें प्राणी मरते हों ॥ ९ ॥ निःसन्देह इसमें कोई रामचन्द्रकाही बडा पाप है, जिससे कि उनके देशमें बालकोंकी मृत्यु होने लगी ॥ १० ॥ और देशके रहनेवाले बालकोंको मृत्युसे भय नहीं है सो हे राजन् ! आप इस मेरे मरे हुए बालकको जिलाओ ॥ ११ ॥ नहीं तो मैं अनाथोंकी समान स्त्रीसहित राजद्वारपर प्राण देदूंगा उससमय तुम ब्रह्महत्याको प्राप्त होकर सुखी होना ॥ १२ ॥ हे राजन्! भाइयोंसहित आपकी बडी उमर होगी; हे महाबली ! हम आपके राज्यमें बहुत

नस्मराम्यनृतंवक्तुंनचहिंसांस्मराम्यहम् ॥ सर्वेषांप्राणिनांपापंनस्मरामिकदाचन ॥ ७ ॥ केनाद्यदुष्कृतेनायंबालएवममात्मजः ॥ अकृत्वापितृकार्याणिगतोवैवस्वतक्षयम् ॥ ८ ॥ नेदृशंदृष्टपूर्वंमेश्रुतंवाघोरदर्शनम् ॥ मृत्युरप्राप्तकालानांरामस्यविषयेह्यहम् ॥ ९ ॥ रामस्यदुष्कृतंकिंचिन्महदस्तिनसंशयः ॥ यथाहिविषयस्थानांबालानांमृत्युरागतः ॥ १० ॥ नह्यन्यविषयस्थानांबालानांमृत्युतोभयम् ॥ सराजन्जीवयस्वैनंबालंमृत्युवशंगतम् ॥ ११ ॥ राजद्वारिमरिष्यामिपत्न्यासार्धमनाथवत् ॥ ब्रह्महत्यांततोरामसमुपेत्यसुखीभव ॥ १२ ॥ भ्रातृभिःसहितोराजन्दीर्घमायुरवाप्स्यसि ॥ उषिताःस्मसुखंराज्येतवास्मिन्सुमहाबल ॥ १३ ॥ इदंतुपतितंतस्मात्तवरामवशेस्थितान् ॥ कालस्यवशमापन्नाःस्वल्पंहिनहिनःसुखम् ॥ १४ ॥ संप्रत्यनाथोविषयइक्ष्वाकूणांमहात्मनाम् ॥ रामंनाथमिहासाद्यबालांतकरणंध्रुवम् ॥ १५ ॥ राजदोषैर्विपद्यंतेप्रजाह्यविधिपालिताः ॥ असद्वृत्तेहिनृपतावकालेम्रियतेजनः ॥ १६ ॥ यद्वापुरेष्वयुक्तानिजनाजनपदेषुच ॥ कुर्वतेनचरक्षास्तितदाकालकृतंभयम् ॥ १७ ॥ सुव्यक्तंराजदोषोहिभविष्यतिनसंशयः ॥ पुरेजनपदेचापितथाबालवधोह्ययम् ॥ १८ ॥

सुखसे रहे ॥ १३ ॥ आपके राज्यमें स्थित रहनेसे हमें यह सुख मिला कि, जो हम कालके वशमें पडे आपके राज्यमें कुछ भी सुख नहीं ॥ १४ ॥ इससमय यह महात्मा इक्ष्वाकुओंसे सनाथ हुआ देश रामचन्द्रके हस्तगत हो बालकोंकी मृत्यु होनेसे अनाथोंकी समान होगया है ॥ १५ ॥ जब प्रजा विधिपूर्वक पालित नहीं होती तो खोटे आचरण करनेवाले राजाके दोषसे अकालमेंही प्राणी मरतेहैं॥ १६॥ अथवा आपकी असावधानीसे और रक्षा न करनेसे जनपद और नगरमें मनुष्य असद् व्यवहार करतेहैं इसकारणसे अकालमें कालका भय होता है ॥१७॥ अवश्य राजदोष पुर वा जनपदमेंही है इसमें संदेह नहीं जिससे यह बालक मरगया ॥१८॥

गण अनृतके द्वारा आयु क्षयको मिटानेके निमित्त सत्यधर्मपरायण होकर विविध शुभकार्योंका आचरण करने लगे अर्थात् त्रेतायुगमें यज्ञादि अनुष्ठानद्वारा शीघ्र मन शुद्ध होकर अभिमानकी निवृत्ति होती थी ॥ १९ ॥ त्रेतायुगमें ब्राह्मण क्षत्रिय तपस्यामें लगे रहते और वैश्य शूद्रगण उनकी सेवा करते हैं ॥२०॥ उस कालमें ब्राह्मण क्षत्रियोंकी सेवा करनाही वैश्य और शूद्रोंका परम धर्म था विशेष करके शूद्रोंको तो सब वर्णोंकी सेवा करनाही परमधर्म है ॥ २१ ॥ हे नृपश्रेष्ठ ! त्रेता युगके अन्तमें वैश्य और शूद्रोंको अनृत रूप अधर्मके भलीभाँति प्राप्त होजानेसे ब्राह्मण और क्षत्रियगण उनके संगमें न्यूनताको प्राप्त हुए ॥ २२ ॥ तब अधर्मका दूसरा चरण पृथ्वीपर गिरा तब द्वापर युगका आरम्भ हुआ ॥२३॥ हे पुरुषश्रेष्ठ ! द्वापर युगमें धर्मके दो चरण टूट गये और अधर्म और असत्यकी वृद्धि हुई ॥२४॥

त्रेतायुगेचवर्ततेब्राह्मणाःक्षत्रियाश्चये ॥ तपोऽतप्यंततेसर्वेशुश्रूषामपरेजनाः ॥ २० ॥ स्वधर्मःपरमस्तेषांवैश्यशूद्रंतदागमत् ॥ पूजांचसर्ववर्णानां शूद्राश्चक्रुर्विशेषतः ॥२१॥ एतस्मिन्नंतरेतेषामधर्मेचानृतेचह ॥ ततः पूर्वेपुनर्ह्रासमगमन्नृपसत्तम ॥२२॥ ततःपादमधर्मस्यद्वितीयमवतारयत्॥ ततोद्वापरसंख्यासायुगस्यसमजायत ॥ २३ ॥ तस्मिन्द्वापरसंख्येतुवर्तमानेयुगक्षये ॥ अधर्मश्चानृतंचैववर्वृधेपुरुषर्षभ ॥२४॥ अस्मिन्द्वापरसंख्यानेतपोवैश्यान्समाविशत् ॥ त्रिभ्योयुगेभ्यस्त्रीन्वर्णान्क्रमाद्वैतपआविशत् ॥ २५ ॥ त्रिभ्योयुगेभ्यस्त्रीन्वर्णान्धर्मश्चपरिनिष्ठितः ॥ नशूद्रोलभतेधर्मंयुगतस्तुनरर्षभ ॥ २६ ॥ हीनवर्णोनृपश्रेष्ठतप्यतेसुमहत्तपः ॥ भविष्यच्छूद्रयोन्यांहितपश्चर्याकलौयुगे ॥ २७ ॥ अधर्मःपरमोराजन् द्वापरेशूद्रजन्मनः ॥ सवैविषयपर्यंतेतवराजन्महातपाः ॥ २८ ॥ अद्यतप्यतिदुर्बुद्धिस्तेनबालवधोह्ययम् ॥ योह्यधर्ममकार्यंवाविषयेपार्थिवस्य तु ॥ २९ ॥ करोतिचाश्रीमूलंतत्पुरेवादुर्मतिर्नरः ॥ क्षिप्रंचनरकंयातिसचराजानसंशयः ॥ ३० ॥ अधीतस्यचतप्तस्यकर्मणः सुकृतस्यच ॥ षष्ठंभजतिभागंतुप्रजाधर्मेणपालयन् ॥ ३१ ॥

इस द्वापर युगमें वैश्यभी तप करने लगे इसप्रकारसे तीन युगमें तीन वर्ण यथाक्रमसे तपस्या करते हुए ॥ २५ ॥ तपरूप धर्म युगयुगमें तीन वर्णोंमें प्रतिष्ठित हुआ है, परन्तु हे नरश्रेष्ठ ! इन तीन युगमें शूद्र तप धर्मके अधिकारी नहीं थे ॥ २६ ॥ परन्तु हे नृपश्रेष्ठ ! हीनवर्ण शूद्रभी महातप करता है यहाँ शूद्रयोनिमें उत्पन्न हुए जीव तो कलियुगमेंही तपस्या करेंगे ॥ २७ ॥ हे राजन् ! यदि द्वापरमें शूद्र तपस्या करे तोभी बडा अधर्म है आपके राज्यमें तो इसीसमय महातपस्वी ॥ २८ ॥ दुर्बुद्धि शूद्र तपस्या करता है इससेही यह ब्राह्मणका बालक मरगया कारण कि, जिन नृपतिके राज्यमें जो कोई अधर्म वा अकार्य करता है ॥ २९ ॥ उन दुर्मति मनुष्योंका अकार्य दरिद्रताका कारण है [illegible] ...को प्राप्त होता है ॥ ३० ॥ धर्मपूर्वक प्रजापालन [illegible]

षड्भागस्य च भोक्तासि रक्षसे न प्रजाः कथम् ॥ सत्वंपुरुषशार्दूलमार्गस्वविषयंस्वकम् ॥ ३२ ॥ दुष्कृतंयत्रपश्येथास्तत्रयत्नंसमाचर ॥ एवंचेद्धर्म वृद्धिश्चनृणांचायुर्विवर्धनम् ॥ भविष्यतिनरश्रेष्ठबालस्यास्यचजीवितम् ॥३३॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मी०आदिकाव्य उत्तरकांडे चतुःसप्ततितमःसर्गः ॥ ७४ ॥ नारदस्यतुतद्वाक्यंश्रुत्वामृतमयंयथा ॥ प्रहर्षमतुलंलेभेलक्ष्मणंचेदमब्रवीत् ॥ १ ॥ गच्छसौम्यद्विजश्रेष्ठंसमाश्वासयसुव्रत ॥ बालस्यचशरीरंतत्तैलद्रोण्यांनिधापय ॥ २ ॥ गंधैश्चपरमोदारैस्तैलैश्चसुसुगंधिभिः ॥ यथानक्षीयतेबालस्तथासौम्यविधीयताम् ॥ ३ ॥ यथाशरीरंबालस्यगुप्तस्याक्लिष्टकर्मणः ॥ विपत्तिःपरिभेदोवानभवेच्चतथाकुरु ॥ ४ ॥ एवंसंदिश्यकाकुत्स्थोलक्ष्मणंशुभलक्षणम् ॥ मनसापुष्पकंदध्यावागच्छेतिमहायशाः ॥ ५ ॥ इंगितंसतुविज्ञायपुष्पकोहेमभूषितः ॥ आजगाममुहूर्तेनसमीपेराघवस्यवै ॥ ६ ॥ सोऽब्रवीत्प्रणतोभूत्वाअयमस्मिनराधिप ॥ वश्यस्तवमहाबाहोकिंकरःसमुपस्थितः ॥ ७ ॥ भाषितंरुचिरंश्रुत्वापुष्पकस्यनराधिपः ॥ अभिवाद्यमहर्षीन्सविमानंसोध्यरोहत ॥ ८ ॥ धनुर्गृहीत्वातूणींचखड्गंचरुचिरप्रभम् ॥ निक्षिप्यनगरेवीरौसौमित्रिभरतावुभौ ॥ ९ ॥

[illegible] भाग प्राप्त होता है ॥ ३१ ॥ फिर छठे भागका भागी होकर राजा प्रजाका पालन क्यों न करे ? इसकारण हे पुरुषसिंह ! आप अपने राज्यमें खोज करिये ॥ ३२ ॥ जहाँ जहाँ आप देखो वहाँ वहाँ यत्नसे उसका निवारण करो इससे धर्मकी वृद्धि और मनुष्योंकी आयुभी बढेगी और हे नरश्रेष्ठ ! यह बालकभी जीवित होजायगा ॥ ३३ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषाटीकायां चतुःसप्ततितमः सर्गः ॥ ७४ ॥ ॥ नारदजीके अमृतकी समान वचन श्रवणकर रामचन्द्रजी बहुत प्रसन्नहो लक्ष्मणजीसे बोले ॥ १ ॥ हे सौम्य ! हे सुव्रत ! जाकर उस ब्राह्मणश्रेष्ठको समझाओ और उस बालकके शरीरको तेलकी नावमें धरादो ॥ २ ॥ बडे २ दिव्यगंध सुगंधित तेलमें उसके शरीरको रक्खो हे सौम्य ! जिस प्रकारसे उसका शरीर न बिगडे ऐसा करो ॥ ३ ॥ जिस प्रकारसे कि, इस पुण्यात्मा बालकका शरीर किसी प्रकारसे न बिगडे यही तुम करो ॥ ४ ॥ रामचन्द्रने इस प्रकार शुभ लक्षणयुक्त लक्ष्मणजीसे कहकर मनसे पुष्पकविमानका स्मरण किया कि, महायशस्वी पुष्पक ! आओ ॥ ५ ॥ रामचन्द्रकी इच्छा जानकर वह सुवर्णभूषित पुष्पकविमान एक मुहूर्तमात्रमें रघुनन्दनके समीप आगया ॥ ६ ॥ और नम्रहोकर बोला महाराज ! मैं यह उपस्थितहूं. हे महाबाहो ! मैं आपके वशीभूत आपका दास उपस्थित हूं ॥ ७ ॥ पुष्पककी मनोहर वाणी सुनकर रघुनाथजी महर्षियोंको प्रणामकर उसपर सवार हुए ॥ ८ ॥ सुन्दर कान्तिवाला

राम धनुषबाण ग्रहणकर और भरत शत्रुघ्नको नगरकी रक्षामें नियुक्तकर ॥ ९ ॥ रामचन्द्रजी इधर उधर ढूंढते हुए पूर्व दिशाको गये, फिर वहाँसे हिमालयसे आवृत उत्तर दिशामें आये ॥ १० ॥ वहाँभी रघुनाथजीने किंचित् मात्र पाप नहीं देखा फिर सब पूर्वदिशाको अच्छी प्रकार शोधकर रघुनाथजी देखने लगे ॥ ११ ॥ वहांके वासी सब शुद्धाचार होनेसे दर्पणके समान निर्मल थे महाबाहु रामचन्द्रने पुष्पकविमानपर स्थितहो यह सब देखा ॥ १२ ॥ तब राजर्षिनन्दन रघुनाथजी दक्षिण दिशाको आये और उन्होंने विन्ध्याचलके उत्तर पार्श्वमें शैवल पर्वत और एक बडा सरोवर देखा ॥ १३ ॥ महातपस्वी श्रीमान् रघुनाथजीने उस सरोवरके निकट तपस्या करते नीचेको मुखकर लटकते हुए उस तपस्वीको देखा ॥ १४ ॥ रघुनाथजी उसके पास आकर उस उत्तम प्रकारसे तप करते हुए तप

प्रायात्प्रतीचींहरितंविचिन्वंश्चततस्ततः ॥ उत्तरामगमच्छ्रीमान्दिशंहिमवतावृताम् ॥ १० ॥ अपश्यमानस्तत्रापिस्वल्पमप्यथदुष्कृतम् ॥ पूर्वामपिदिशंसर्वामथोपश्यन्नराधिपः ॥ ११ ॥ अविशुद्धसमाचारामादर्शतलनिर्मलाम् ॥ पुष्पकस्थोमहाबाहुस्तदापश्यन्नराधिपः ॥ १२ ॥ दक्षिणांदिशमाक्रामत्ततोराजर्षिनंदनः ॥ शैवलस्योत्तरेपार्श्वेददर्शसुमहत्सरः ॥ १३ ॥ तस्मिन्सरसितप्यंतंतापसंसुमहत्तपः ॥ ददर्शराघवः श्रीमाँल्लंबमानमधोमुखम् ॥ १४ ॥ राघवस्तमुपागम्यतप्यंतंतपउत्तमम् ॥ उवाचचनृपोवाक्यंधन्यस्त्वमसिसुव्रत ॥ १५ ॥ कस्यांयोन्यांतपोवृद्धवर्तसेदृढविक्रम ॥ कौतूहलात्त्वांपृच्छामिरामोदाशरथिर्ह्यहम् ॥ १६ ॥ कोर्थोमनीषितस्तुभ्यंस्वर्गलाभोपरोथवा ॥ वराश्रयोयदर्थंत्वंतपस्यन्यैःसुदुश्चरम् ॥१७॥ यमाश्रित्यतपस्तप्तंश्रोतुमिच्छामितापस ॥ ब्राह्मणोवासिभद्रंतेक्षत्रियोवासिदुर्जयः ॥ वैश्यस्तृतीयोवर्णोवाशूद्रोवासत्यवाग्भव ॥ १८ ॥ इत्येवमुक्तःसनराधिपेनअवाक्छिरादाशरथायतस्मै ॥ उवाचजातिंनृपपुंगवाययत्कारणंचैवतपःप्रयत्नः ॥ १९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे पंचसप्ततितमः सर्गः ॥ ७५ ॥

स्वीसे बोले हे सुव्रत ! तुम धन्यहो ॥ १५ ॥ हे दृढविक्रम ! तपस्याव्रती आप कौन वर्ण हैं जो ऐसा तप करते हैं मैं दशरथपुत्र रामचन्द्र कौतुहलसेही तुमसे पूछताहूं ॥ १६ ॥ तुमने तपस्या किस निमित्त की है स्वर्गकी इच्छा है वा और कुछ, वह क्याहै जिस वर पानेके निमित्त तुम दुस्तर तपस्या करतेहो ॥ १७ ॥ आप जिस निमित्त तपस्या करते हैं वह मेरे सुननेकी इच्छाहै हे महाराय ! आप ब्राह्मण वा दुर्जय क्षत्रिय तीसरे वर्ण वैश्य वा शूद्रहैं सो सत्य कहिये ॥ १८ ॥ जब महाराजने ऐसा कहा तो वह नीचेको मुख किये तपस्या करनेहारा नृपश्रेष्ठ रामचन्द्रजीसे अपनी जाति और तपस्या करनेका कारण कहने

॥ इति श्रीमद्वाल्मीकीये आदिकाव्ये उत्तरकाण्डे भाषाटीकायां पञ्चसप्ततितमः सर्गः ॥७५॥ अक्लिष्टकर्मा रघुनाथजीके यह वचन सुनकर वह तपस्वी इस प्रकारसे कहने लगा ॥ १ ॥ हे राम ! मैं शूद्रयोनिमें उत्पन्न हुआहूं, और इसी शरीरसे देवत्व प्राप्त करनेकी इच्छा करके महातपस्या करताहूं ॥२॥ हे राम ! काकुत्स्थ मैं सत्य कहताहूं, देवलोक जीतनेकी मेरी इच्छाहै, मेरी जाति शूद्र और शंबूक नामहै ॥३॥ शूद्रके यह वचन कहतेही रघुनाथजीने बडी कांतिवाला विमल खड्ग कोशसे निकालकर उस शूद्रका शिर छेदन कर डाला ॥४॥ उस शूद्रके मारनेपर इन्द्र और अग्नि सहित सब देवता धन्य २ कहकर रामचन्द्रकी-बडाई करनेलगे ॥५॥ उसी समय दिव्य सुगंधित फूलोंकी वर्षा हुई; वायुसे छोडे हुए पुष्प चारोंओर गिरनेलगे ॥६॥ सत्यपराक्रम रामचन्द्रसे प्रसन्न होकर सब देवता कहनेलगे हे महामते ! आपने यह

तस्यतद्वचनंश्रुत्वारामस्याक्लिष्टकर्मणः ॥ अवाक्छिरास्तथाभूतोवाक्यमेतदुवाचह ॥ १ ॥ शूद्रयोन्यांप्रजातोस्मितपउग्रंसमास्थितः ॥ देवत्वंप्रार्थयेरामसशरीरोमहायशः ॥ २ ॥ नमिथ्याहंवदेरामदेवलोकजिगीषया ॥ शूद्रंमांविद्धिकाकुत्स्थशंबूकोनामनामतः ॥३॥ भाषतस्तस्यशूद्रस्यखड्गंसुरुचिरप्रभम् ॥ निष्कृष्यकोशाद्विमलंशिरश्चिच्छेदराघवः ॥ ४ ॥ तस्मिञ्छूद्रेहतेदेवाःसेंद्राःसाग्निपुरोगमाः ॥ साधुसाध्वितिकाकुत्स्थंतेशशंसुर्मुहुर्मुहुः ॥ ५ ॥ पुष्पवृष्टिर्महत्यासीद्दिव्यानांसुसुगंधिनाम् ॥ पुष्पाणांवायुमुक्तानांसर्वतःप्रपपातह ॥ ६ ॥ सुप्रीताश्चाब्रुवन्रामंदेवाःसत्यपराक्रमम् ॥ सुरकार्यमिदंदेवसुकृतंतेमहामते ॥ ७ ॥ गृहाणचवरंसौम्ययंत्वमिच्छस्यरिंदम ॥ स्वर्गभाङ्नहिशूद्रोयंत्वत्कृतेरघुनंदन ॥ ॥ ८ ॥ देवानांभाषितंश्रुत्वारामःसत्यपराक्रमः ॥ उवाचप्रांजलिर्वाक्यंसहस्राक्षंपुरंदरम् ॥ ९ ॥ यदिदेवाःप्रसन्नामेद्विजपुत्रःसजीवतु ॥ दिशंतुवरमेतंमेईप्सितंपरमंमम ॥ १० ॥ ममापचाराद्बालोसौब्राह्मणस्यैकपुत्रकः ॥ अप्राप्तकालःकालेननीतोवैवस्वतक्षयम् ॥ ११ ॥ तंजीवयतभद्रंवोनानृतंकर्तुमर्हथ ॥ द्विजस्यसंश्रुतोर्थोमेजीवयिष्यामितेसुतम् ॥ १२ ॥ राघवस्यतुतद्वाक्यंश्रुत्वाविबुधसत्तमाः ॥ प्रत्यूचूराघवंप्रीतादेवाःप्रीतिसमन्वितम् ॥ १३ ॥

देवताओंका कार्य कियाहै ॥७॥ हे शत्रुनाशन सौम्य रघुनंदन ! यह शूद्र स्वर्गका अनधिकारी आपके करनेसेही हुआ आप इस कारण हमसे वर माँगिये ॥ ८ ॥ सत्यपराक्रमी रघुनाथजी देवताओंका वचन सुनकर हाथ जोडकर सहस्राक्ष इन्द्रजीसे बोले ॥ ९ ॥ यदि आप सब देवता मुझसे प्रसन्नहैं तो यही इच्छित वर दीजिये कि, वह ब्राह्मणका पुत्र जी जाय ॥ १० ॥ मेरेही अपराधसे यह ब्राह्मणका इकलौता पुत्र अप्राप्तकालमें मरकर यमलोकको गया ॥११॥ हे देवताओ ! आपका मंगलहो आप उस ब्राह्मणके पुत्रको जिलादो क्योंकि, मैं उसके जिलानेकी प्रतिज्ञा करचुकाहूं वह मेरा वचन झूँठा न होना चाहिये ॥१२॥ रामचन्द्रके यह वचन

सुनकर वे देवता प्रीतिसहित रघुनाथजीके प्रति कहने लगे ॥ १३ ॥ हे रामचंद्र ! अब आप गृहको पधारिये वह बालक तो आज जी उठा और अपने पिता मातासे मिलगया ॥ १४ ॥ रामचंद्र ! जिस मुहूर्त्तमें आपने इस शूद्रको मारा; उसी समय वह बालक जीगया ॥ १५ ॥ हे नरश्रेष्ठ रामचंद्र ! आपका कल्याणहो अब हम अगस्त्यजीका श्रेष्ठ आश्रम देखनेको जातेहैं ॥ १६ ॥ उन महाद्युतिमान् ऋषिकी आज उस यज्ञकी दीक्षा समाप्त हुई जो वह बारह वर्षसे जलमेंही सोया करतेथे ॥ १७ ॥ हे रघुनाथजी ! हम उन मुनिराजको प्रसन्न करने जातेहैं यदि आपकी इच्छाहो तो आपभी उन ऋषि श्रेष्ठका दर्शन कीजिये ॥ १८ ॥ रघुनाथजी देवताओंके वचन सुनकर बोले ' ऐसाही करेंगे ' यह कह स्वर्णभूषित विमानपर सवार हुए ॥ १९ ॥ वह देवता

निर्वृतोभवकाकुत्स्थसोस्मिन्नद्यनिबालकः॥जीवितंप्राप्तवान्भूयः समेतश्चापिबंधुभिः॥१४॥यस्मिन्मुहूर्तेकाकुत्स्थशूद्रोयंविनिपातितः॥तस्मिन्मुहूर्तेबालोसौजीवेनसमयुज्यत॥१५॥स्वस्तिप्राप्नुहिभद्रंतेसाधुयामनरर्षभ ॥ अगस्त्यस्याश्रमपदंद्रष्टुमिच्छामराघव॥१६॥तस्यदीक्षासमाप्ताहिब्रह्मर्षेःसुमहाद्युते॥द्वादशंहिगतंवर्षंजलशय्यांसमासतः॥१७॥काकुत्स्थतद्गमिष्यामोमुनिंसमभिनंदितम्॥त्वंचापिगच्छभद्रंतेद्रष्टुंतमृषिसत्तमम्॥१८॥ सतथेतिप्रतिज्ञायदेवानांरघुनंदनः॥ आरुरोहविमानंतंपुष्पकंहेमभूषितम्॥१९॥ ततोदेवाःप्रयातास्तेविमानैर्बहुविस्तरैः ॥ रामोप्यनुजगामाशुकुंभयोनेस्तपोवनम् ॥२०॥ दृष्ट्वातुदेवान्संप्राप्तानगस्त्यस्तपसांनिधिः ॥ अर्चयामासधर्मात्मासर्वांस्तानविशेषतः ॥ २१ ॥ प्रतिगृह्यततःपूजांसंपूज्यचमहामुनिम् ॥ जग्मुस्तेत्रिदशाहृष्टानाकपृष्ठंसहानुगाः॥२२॥गतेषुतेषुकाकुत्स्थःपुष्पकादवरुह्यच॥ ततोऽभिवादयामासअगस्त्यमृषिसत्तमम् ॥ २३ ॥ सोभिवाद्यमहात्मानंज्वलंतमिवतेजसा ॥ आतिथ्यंपरमंप्राप्यनिषसादनराधिपः॥२४॥तमुवाचमहातेजाःकुंभयोनिर्महातपाः॥ स्वागतंतेनरश्रेष्ठदिष्ट्याप्राप्तोसिराघव ॥ २५ ॥ त्वंमेबहुमतोरामगुणैर्बहुभिरुत्तमैः ॥ अतिथिःपूजनीयश्चममराजन्हृदिस्थितः ॥ २६ ॥

अपने २ विमानोंपर बैठ अगस्त्यजीको देखनेगये और रघुनाथजीभी शीघ्रतासे अगस्त्यजीके तपोवन देखनेको गये॥२०॥ तपोनिधि धर्मात्मा अगस्त्यजीने देवताओंको आये देखकर उन सबका सम्यक् प्रकारसे पूजन सत्कार किया ॥ २१ ॥ वह सम्पूर्ण देवता अगस्त्यजीकी पूजा ग्रहणकर पीछे स्वयंभी महामुनिको पूज प्रसन्न हो साथियों सहित स्वर्गको चले गये ॥ २२ ॥ देवताओंके जानेके उपरान्त रामचंद्रजीने विमानसे उतर फिर ऋषिश्रेष्ठ अगस्त्यजीको प्रणाम किया ॥ २३ ॥ वह रघुनाथजी अग्निके समान दीप्तिमान् महात्मा अगस्त्यजीको अभिवादन कर और उनसे अतिथिसत्कार पाय आसनपर बैठे ॥ २४ ॥ महातेजस्वी महातपस्वी अगस्त्यजी रामचंद्रजीसे बोले हे राघव ! तुम भले आये आप आनंदसे तो हो? ॥ २५ ॥ हे राम ! तुम अनेक गुणसम्पन्न होनेके कारण बहुमान्य हो और

रोकनेके कारण हमारे जनवरी तिके रहनेके कारण तुम अधिक पूजाके योग्यहो ॥ २६ ॥ देवताओंने कहा था कि, रघुनाथजीने शूद्रको मारा है और ब्राह्मणके पुत्र जिवाया अब आपके देखनेको आया चाहते हैं ॥ २७ ॥ हे रामचंद्र ! आजकीरात आप हमारे यहांही रहिये कारण कि, आपही श्रीमान् साक्षात् नारायण सबके प्रभु हैं सारा संसार आपमें प्रतिष्ठित है ॥ २८ ॥ हे प्रभु ! आप सब देवताओंके प्रभु हैं आपही सनातन पुरुष हैं आज रहिये प्रातःकालही पुष्पकपर बैठ अयोध्यापुरीको चलेजाना ॥ २९ ॥ हे सौम्य ! यह दिव्य आभरण विश्वकर्माका बनाया हुआ हमारे पास है जो अपने तेजसे देदीप्यमान है ॥ ३० ॥ हे काकुत्स्थ रामचन्द्र ! इसको ग्रहणकर आप हमारा प्रिय कीजिये। कारण कि, मनसे किसीको कोई वस्तु देनेपर फिर उसे प्रदान करनेसे महाफल होता है ॥३१॥ आप आभरणके धारण करनेमें समर्थ हैं कारण कि बडे २ उत्कृष्ट फल देसकते हैं, आप तो इन्द्रादिक देवताओंकोभी मारनेको समर्थ हैं, इस कारण हमारे दिये भूषण ले

सुराहिकथयंतित्वामागतंशूद्रघातिनम् ॥ ब्राह्मणस्यतुधर्मेणत्वयाजीवापितःसुतः ॥ २७ ॥ उष्यतांचेहरजनींसकाशेममराघव ॥ त्वंहिनारायणः श्रीमांस्त्वयिसर्वंप्रतिष्ठितम् ॥ २८ ॥ त्वंप्रभुःसर्वदेवानांपुरुषस्त्वंसनातनः ॥ प्रभातेपुष्पकेणत्वंगंतास्वपुरमेवहि ॥२९॥ इदंचाभरणंसौम्यनिर्मितंविश्वकर्मणा ॥ दिव्यंदिव्येनवपुषादीप्यमानंस्वतेजसा॥३०॥प्रतिगृह्णीष्वकाकुत्स्थमत्प्रियंकुरुराघव ॥ दत्तस्यहिपुनर्दानेसुमहत्फलमुच्यते॥ ॥ ३१ ॥ भरणेहिभवाञ्छक्तःफलानांमहतामपि ॥ त्वंहिशक्तस्तारयितुंसेंद्रानपिदिवौकसः ॥३२॥ तस्मात्प्रदास्येविधिवत्तत्प्रतीच्छनराधिप॥ अथोवाचमहात्मानमिक्ष्वाकूणांमहारथः ॥ ३३॥ "रामोमतिमतांश्रेष्ठःक्षत्रधर्ममनुस्मरन् ॥ प्रतिग्रहोयंभगवन्ब्राह्मणस्यविगर्हितः ॥१॥ क्षत्रियेणकथंविप्रप्रतिग्राह्यंभवेत्ततः ॥ प्रतिग्रहोहिविप्रेंद्रक्षत्रियाणांसुगर्हितः ॥ २ ॥ ब्राह्मणेनविशेषेणदत्तंतद्वक्तुमर्हसि ॥ एवमुक्तस्तुरामेणप्रत्युवाचमहानृषिः ॥ ३ ॥ आसन्कृतयुगेरामब्रह्मभूतेपुरायुगे ॥ अपार्थिवाःप्रजाःसर्वाःसुराणांतुशतक्रतुः ॥ ४ ॥ ताःप्रजादेवदेवेशंराजार्थंसमुपाद्रवन् ॥ सुरगणास्थापितोराजात्वयादेवशतक्रतुः ॥ ५ ॥

संकोच न कीजिये कि, हम क्षत्रिय ब्राह्मणोंसे कोई वस्तु कैसे ग्रहण करें ॥ ३२ ॥ इसप्रकार हमारे दिये भूषणको आप विधिपूर्वक ग्रहण कीजिये, यह वचन सुन महारथी इक्ष्वाकुनन्दन रामचन्द्र अगस्त्यजीसे बोले ॥ ३३ ॥ " बुद्धिमानोंमें श्रेष्ठ रघुनाथजी क्षत्रियधर्म स्मरणकर बोले महाराज ! ब्राह्मणसे दान लेनेका बडा दोष है ॥ १ ॥ क्षत्रिय होकर ब्राह्मणसे किसप्रकार कोई वस्तु लीजाय ? हे विप्रेन्द्र ! विशेषकर क्षत्रियोंको प्रतिग्रह लेनेका बडा दोषहै ॥ २ ॥ और फिर ब्राह्मणसे प्रतिग्रह लिया जाय सो आप कहिये, रामचन्द्रके ऐसा कहनेपर अगस्त्यजी बोले ॥३॥ हे राजन् ! ब्रह्मज्ञानपूर्ण सतयुगमें प्रजाका कोई राजा नहींथा देवतोंके राजा इन्द्र थे ॥ ४ ॥ तब वह प्रजा ब्रह्माजीके पास जाय राजा बनानेके निमित्त प्रार्थना करनेलगी, हे भगवन् ! आपने देवताओंका राजा इन्द्र तो बना दिया ॥ ५

... अनेक आश्चर्यांके सागर हैं रामचन्द्रके ऐसा कहनेपर अगस्त्यजी कहने लगे कि, हे राजन् ! पहले त्रेतायुगमें जो वार्ता हुईथी वह आप सुनिये ॥ ३६ ॥ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्वा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषाटीकायां षट्सप्ततितमः सर्गः ॥ ७६ ॥ ॥ हे रघुनाथजी ! प्रथम त्रेतायुगमें यहां एक बहुत बडा वन मृगपक्षीहीन सौ योजनके विस्तारवालाथा ॥ १ ॥ हे सौम्य ! उस निर्जनवनमें उत्तम तपस्या करनेके निमित्त मैं विचरताहुआ आया ॥ २ ॥ उसके किसी २ स्थलमें बडे २ सुस्वादु फलमूल लगेथे और उसमें छोटे बडे वन इस प्रकार मिश्रितथे कि, उसे कोई यह नहीं जानसकताथा कि, इस वनका कितना विस्तारहै ॥ ३ ॥ उस वनके बीचमें एक योजनका एक सरोवर था जो हंस कारंडव चकवा चकवियोंसे शोभितथा ॥ ४ ॥ उसमें अनेक

आश्चर्याणांबहूनांहिनिधिःपरमकोभवान् ॥ एवंब्रुवतिकाकुत्स्थेमुनिर्वाक्यमथाब्रवीत ॥ शृणुरामयथावृत्तंपुरात्रेतायुगेयुगे ॥ ३६ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे षट्सप्ततितमः सर्गः ॥ ७६ ॥ पुरात्रेतायुगेरामबभूवबहुविस्तरम् ॥ समंताद्योजनशतंविमृगंपक्षिविवर्जितम् ॥ १ ॥ तस्मिन्निर्मानुषेरण्येकुर्वाणस्तपउत्तमम् ॥ अहमाक्रमितुंसौम्यतदारण्यमुपागमम् ॥ २ ॥ तस्यरूपमरण्यस्यनिर्देष्टुंनशशाकह ॥ फलमूलैःसुखास्वादैर्बहुरूपैश्चकाननैः ॥ ३ ॥ तस्यारण्यस्यमध्येतुसरोयोजनमायतम् ॥ हंसकारंडवाकीर्णंचक्रवाकोपशोभितम् ॥ ४ ॥ पद्मोत्पलसमाकीर्णंसमतिक्रांतशैवलम् ॥ तदाश्चर्यमिवात्यर्थंसुखास्वादमनुत्तमम् ॥ ५ ॥ अरजस्कंतदाक्षोभ्यंश्रीमत्पक्षिगणायुतम् ॥ तस्मिन्सरःसमीपेतुमहदद्भुतमाश्रमम् ॥ ६ ॥ पुराणंपुण्यमत्यर्थंतपस्विजनवर्जितम् ॥ तत्राहमवसंरात्रिंनैदाघींपुरुषर्षभ ॥ ७ ॥ प्रभातेकल्यमुत्थायसरस्तदुपचक्रमे ॥ अथापश्यंशवंतत्रसुपुष्टमरजःक्वचित् ॥ ८ ॥ तिष्ठंतंपरयालक्ष्म्यातस्मिंस्तोयाशयेनृप ॥ तमर्थंचिंतयानोहंमुहूर्तंतत्रराघव ॥ ९ ॥ विष्ठितोस्मिसरस्तीरेकिंत्विदंस्यादितिप्रभो ॥ अथापश्यंमुहूर्तात्तुदिव्यमद्भुतदर्शनम् ॥ १० ॥

प्रकारके पद्म उत्पल कमल खिलेथे जिनसे सिवार दृष्टिगोचर नहीं होताथा एक अद्भुतता यह थी कि, उसका जल बहुतही स्वादिष्ठ था ॥ ५ ॥ धूरिरहित शोभारहित पक्षियोंसे शोभायमान सरोवरके किनारे एक श्रेष्ठ अद्भुत आश्रम बनाथा ॥ ६ ॥ जो बडा पुराना पुण्यरूप तपस्वियोंसे हीन था । हे राम ! उस ग्रीष्मकालकी रात्रिमें मैं यहीं रहा ॥ ७ ॥ जब मैं प्रातःकाल उठकर उस सरोवरके निकट स्नानादिक करनेको गया तो उसमें सर्वांगसे पुष्ट उज्ज्वल एक मृतक शरीर पडा था ॥ ८ ॥ हे रामचन्द्र ! यह शव उस सरोवरमें शोभायमान होरहा था उसकी स्वच्छता देखकर मैं एक मुहूर्ततक विचार करतारहा ॥ ९ ॥ मैं उस स्थानमें

हे लोकेश ! हमारे निमित्त भी कोई नरश्रेष्ठ राजा दीजिये जिसकी पूजाकर हम पापरहितहो स्वच्छन्द विचरैं ॥ ६ ॥ हमारा यह निश्चयहै कि हम विना राजाके नहीं रहेंगे। तब सुरश्रेष्ठ ब्रह्माजीने लोकपाल इन्द्रादि ॥ ७ ॥ बुलाकर कहा कि, तुम सब अपने २ तेजसे भाग दो तब सब लोकपालोंने अपने २ तेजोंमेंसे भाग दिया ॥ ८ ॥ तब ब्रह्माजीने क्षुप अर्थात् शब्द किया जिससे क्षुपनाम राजा उत्पन्न हुआ उसको ब्रह्माजीने लोकपालोंके अंशसे युक्त किया ॥ ९ ॥ तब उस क्षुपराजाको ब्रह्माजीने प्रजाका आधिपत्य दिया इन्द्रके अंशसे राजा पृथ्वीके शासनमें समर्थ हुए ॥ १० ॥ वरुणके भागसे राजाका शरीर पुष्ट हुआ, कुबेरके

प्रयच्छास्मासुलोकेशपार्थिवंनरपुंगवम् ॥ यस्मैपूजांप्रयुंजानाधूतपापाश्चरेमहि ॥ ६ ॥ नवसामोविनाराज्ञाएषनोनिश्चयःपरः ॥ ततोब्रह्मासुर श्रेष्ठोलोकपालान्सवासवान् ॥ ७ ॥ समाहूयाब्रवीत्सर्वांस्तेजोभागान्प्रयच्छत ॥ ततोददुर्लोकपालाःसर्वेभागान्स्वतेजसः ॥ ८ ॥ अक्षुपच्चत तोब्रह्मायतोजातःक्षुपोनृपः ॥ तंब्रह्मालोकपालानांसमांशैःसमयोजयत् ॥ ९ ॥ ततोददौनृपंतासांप्रजानामीश्वरंक्षुपम् ॥ तत्रैन्द्रेणचभागेनमही माज्ञापयन्नृपः ॥ १० ॥ वारुणेनतुभागेनवपुःपुष्यतिपार्थिवः ॥ कौबेरेणतुभागेनवित्तपाभांददौतदा ॥ ११ ॥ यस्तुयाम्योऽभवद्भागस्तेनशा स्तिस्मसप्रजाः ॥ तत्रैन्द्रेणनरश्रेष्ठभागेनरघुनंदन ॥ १२ ॥ प्रतिगृह्णीष्वभद्रंतेतारणार्थंममप्रभो ॥ तद्रामःप्रतिजग्राहमुनेस्तस्यमहात्मनः ॥ ॥ १३ ॥ दिव्यमाभरणंचित्रंप्रदीप्तमिवभास्करम् ॥ प्रतिगृह्यततोरामस्तदाभरणमुत्तमम् ॥ १४ ॥" आगमंतस्यदीप्तस्यप्रष्टुमेवोपचक्रमे ॥ अत्यद्भुतमिदंदिव्यंवपुषायुक्तमद्भुतम् ॥ ३४ ॥ कथंवाभवताप्राप्तंकुतोवाकेनवाहृतम् ॥ कौतूहलतयाब्रह्मन्पृच्छामित्वांमहायशः ॥ ३६ ॥

भागसे प्रजाओंको धनदान किया ॥ ११ ॥ यमके भागसे प्रजा शासित होतीहै इस कारण हे नरश्रेष्ठ रघुनंदन ! इन्द्रके भागसे आप ॥ १२ ॥ उद्धारार्थ करनेके निमित्त इस आभूषणको ग्रहण करो तुम्हारा मंगलहो तब रघुनाथजीने महात्मा मुनिका दिया वह कंकण ग्रहण किया ॥ १३ ॥ वह दिव्य आभरण सूर्यके समान प्रदीप्त था तब रघुनाथजी उस दिव्य आभरणको ग्रहणकर ॥ १४ ॥ इति क्षेपकाः ॥ " उसकी प्राप्ति रघुनाथजी पूछने लगे कि; हे भगवन् ! अतिदीप्तिमान् अद्भुत देहमे युक्त ॥ ३५ ॥ यह दिव्य आभरण आपने कब कहांसे पाया और इसे कौन लायाथा ? हे महायशस्वी भगवन् ! कौतूहलसे

हे रघुनाथजी ! ...
विचरताहुआ आया ॥ २ ॥ उसके किसी २ स्थलमें बड़े २ ...
याया कि, इस वनका कितना विस्तारहै ॥

वह मैं आपसे पूछनाहूं सो सुनाइये ॥ ३५ ॥ कारण कि आप अनेक आश्चर्योंके सागर हैं रामचन्द्रके ऐसा कहनेपर अगस्त्यजी कहने लगे कि, हे राजन्
त्रेतायुगमें जो वार्ता हुईथी वह आप सुनिये ॥ ३६ ॥ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषाटीकायां षट्सप्ततितमः सर्गः ॥ ७६
हे रघुनाथजी ! प्रथम त्रेतायुगमें यहां एक बहुत बडा वन मृगपक्षीहीन सौ योजनके विस्तारवालाथा ॥ १ ॥ हे सौम्य ! उस निर्जनवनमें उत्तम तपस्या करनेके नि
विचरताहुआ आया ॥ २ ॥ उसके किसी २ स्थलमें बडे २ सुस्वादु फलमूल लगेथे और उसमें छोटे बडे वन इस प्रकार मिश्रितथे कि, उसे कोई यह नहीं उ
ताथा कि, इस वनका कितना विस्तारहै ॥ ३ ॥ उस वनके बीचमें एक योजनका एक सरोवर था जो हंस कारंडव चकवा चकवियोंसे शोभितथा ॥ ४ ॥ उस

आश्चर्याणांवहूनांहिनिधिःपरमकोभवान् ॥ एवंब्रुवतिकाकुत्स्थेमुनिर्वाक्यमथाब्रवीत ॥ शृणुरामयथावृत्तंपुरात्रेतायुगेयुगे ॥ ३६ ॥ इ
श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे षट्सप्ततितमः सर्गः ॥ ७६ ॥ पुरात्रेतायुगेरामवभूववहुविस्तरम् ॥ समंताद्योजनशत
गंपक्षिवर्जितम् ॥ १ ॥ तस्मिन्निर्मानुषेरण्येकुर्वाणस्तपउत्तमम् ॥ अहमाक्रमितुंसौम्यतदारण्यमुपागमम् ॥ २ ॥ तस्यरूपमरण्यस्यनि
शशाकह ॥ फलमूलैःसुखास्वादैर्वहुरूपैश्चकाननैः ॥ ३ ॥ तस्यारण्यस्यमध्येतुसरोयोजनमायतम् ॥ हंसकारंडवाकीर्णंचक्रवाकोपश
तम् ॥ ४ ॥ पद्मोत्पलसमाकीर्णंसमतिक्रांतशैवलम् ॥ तदाश्चर्यमिवात्यर्थंसुखास्वादमनुत्तमम् ॥ ५ ॥ अरजस्कंतदाक्षोभ्यंश्रीमत्पक्षिग
तम् ॥ तस्मिन्सरःसमीपेतुमहदद्भुतमाश्रमम् ॥ ६ ॥ पुराणंपुण्यमत्यर्थंतपस्विजनवर्जितम् ॥ तत्राहमवसंरात्रिंनैदाघींपुरुषर्षभ ॥ ७ ॥ प्रभ
त्यमुत्थायसरस्तदुपचक्रमे ॥ अथापश्यंशवंतत्रसुपुष्टमरजःक्वचित् ॥ ८ ॥ तिष्ठंतंपरयालक्ष्म्यातस्मिंस्तोयाशयेनृप ॥ तमर्थंचिंतयानोहं-
तत्राद्य ॥ ९ ॥ विष्ठितोस्मिसरस्तीरेकिंत्विदंस्यादितिप्रभो ॥ अथापश्यंमुहूर्तात्तुदिव्यमद्भुतदर्शनम् ॥ १० ॥

प्रकारके पद्म उत्पल कमल खिलेथे जिससे सिवार दृष्टिगोचर नहीं होताथा एक अद्भुतता यह थी कि, उसका जल बहुतही स्वादिष्ठ था ॥ ५ ॥ धू
शोभित पक्षियोंसे शोभायमान सरोवरके किनारे एक श्रेष्ठ अद्भुत आश्रम बनाथा ॥ ६ ॥ जो बडा पुराना पुण्यरूप तपस्वियोंसे हीन था । हे राम
ग्रीष्मकालकी रात्रिमें मैं वहीं रहा ॥ ७ ॥ जब मैं प्रातःकाल उठकर उस सरोवरके निकट स्नानादिक करनेको गया तो उसमें सर्वांगसे पुष्ट उज्ज्वल एक मृतक
पडा था ॥ ८ ॥ हे रामचन्द्र ! वह शव उस सरोवरमें शोभायमान होरहा था उसकी स्वच्छता देखकर मैं एक मुहूर्ततक विचार करतारहा ॥ ९ ॥ मैं उस-

बैठा एक मुहूर्ततक विचार करता रहा कि, यह क्या है तदनन्तर उसी मुहूर्तमें ... आश्चर्ययुक्त वार्ता देखी ॥ १० ॥ हे रघुनन्दन ! उस स्थानमें एक मनके
वेगकी समान हंसयुक्त विमान आया और उसमें अत्यन्त रूपवान् स्वर्गकी ॥ ११ ॥ एक सहस्र अप्सरायें दिव्य भूषण पहरे बैठी थीं उसमें कोई मनोहर गीत गाती और
कोई बाजे बजाती थीं ॥ १२ ॥ मृदंग, वीणा, नगारे, तबले आदि बजते थे. कोई २ उनमें नृत्य करती थीं; दूसरी स्त्रियें सोनेकी डंडी लगे चन्द्रमाके समान निर्मल
चामरोंसे ॥ १३ ॥ उसमें चढे हुए कमलनेत्रवाले स्वर्गवासीके मुखपर बयार कर रहीं थीं फिर जिस प्रकार सूर्य भगवान् सुमेरु पर्वतसे उतरते हैं इस प्रकार वह उस
विमानको त्यागन करके ॥ १४ ॥ हे रघुनन्दनजी ! हमारे देखते २ उस विमानपरसे उतरके वह स्वर्गवासी उस शवको भक्षण करने लगा ॥ १५ ॥ तदनन्तर
स्वर्गी इच्छानुसार पुष्टस्थानके मांसको भक्षण करके फिर जलपान करनेके निमित्त सरोवरमें आया ॥ १६ ॥ वह स्वर्गी जलपान कर आचमन करके फिर उस

विमानंपरमोदारंहंसयुक्तंमनोजवम् ॥ अत्यर्थंस्वर्गिणंतत्रविमानेरघुनन्दन ॥ ११ ॥ उपास्तेऽप्सरसांवीरसहस्रंदिव्यभूषणम् ॥ गायंतिकाश्चिद्र
म्याणिवादयंतितथापराः ॥ १२ ॥ मृदंगवीणापणवान्नृत्यंतिचतथापराः ॥ अपराश्चंद्ररश्म्याभैर्हेमदंडैर्महाधनैः ॥ १३ ॥ दोधूयुर्वदनंतस्यपुंड
रीकनिभेक्षणाः ॥ ततःसिंहासनंचित्वामेरुकूटमिवांशुमान् ॥ १४ ॥ पश्यतोमेतदारामविमानादवरुह्यच ॥ तंशवंभक्षयामाससस्वर्गीरघुनंदन ॥
॥ १५ ॥ ततोभुक्त्वायथाकाममांसंबहुसुपीवरम् ॥ अवतीर्यसरःस्वर्गीसंस्प्रष्टुमुपचक्रमे ॥ १६ ॥ उपस्पृश्ययथान्यायंसस्वर्गीरघुनंदन ॥ आरो
ढुमुपचक्रामविमानवरमुत्तमम् ॥ १७ ॥ तमहंदेवसंकाशमारोहंतमुदीक्ष्यवै ॥ अथाहमब्रुवंवाक्यंतमेवपुरुषर्षभ ॥ १८ ॥ कोभवान्देवसंकाश
आहारश्चविगर्हितः ॥ त्वयेदंभुज्यतेसौम्यकिमर्थंवक्तुमर्हसि ॥ १९ ॥ कस्यस्यादीदृशोभावआहारोदेवसंमतः ॥ आश्चर्यंवर्ततेसौम्यश्रोतुमिच्छा
मितत्त्वतः ॥ नाहमापेयिकंमन्येतवभक्ष्यमिमंशवम् ॥ २० ॥ इत्येवमुक्तःसनरेंद्रनाकीकौतूहलात्सूनृतयागिराच ॥ श्रुत्वाचवाक्यंममसर्वमेत
त्सर्वंतथाचाकथयन्ममेति ॥ २१ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे सप्तसप्ततितमः सर्गः ॥ ७७ ॥

श्रेष्ठ विमानपर चढने लगा ॥ १७ ॥ हे राम ! तब उस देवताकी समान पुरुषको विमानमें चढते देखकर उससे मैं इस प्रकारसे वचन कहने लगा ॥१८॥ आप
देवताकी समान कौन हो ? किस कारण ऐसा निन्दित भोजन करते हो ? यह आप किस निमित्त खाते हो सो हमसे बताइये ॥ १९ ॥ हे सौम्य ! किसका ऐसा
आहार और ऐसा भाव होगा कोईभी देवता शव भोजन नहीं करते मुझे इससे बडा आश्चर्य है यह मैं सब श्रवण करना चाहता हूं ॥२०॥ हे रामचन्द्र ! जब मैंने
ऐसा कहा तो वह स्वर्गवासी मेरे वचन सुन कौतूहलसे सत्य और नम्र वाणीसे अपना सब वृत्तान्त मुझसे कहने लगा ॥ २१ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्वा० वाल्मी० आदि०
उत्तरकांडे भाषाटीकायां सप्तसप्ततितमः सर्गः ॥ ७७ ॥

हे रघुनन्दन राम ! मेरे शुभाक्षर युक्त वचन सुनकर वह स्वर्गी हाथ जोडकर मुझसे कहने लगा ॥ १ ॥ हे भगवन् ! हमारे सुख दुःखका पूर्व वृत्तान्त श्रवण कीजिये । हे ब्राह्मण ! जिस प्रकार आप पूछते हैं सो सुनकर इसका निरादर न करना ॥ २ ॥ तीन लोकमें विख्यात मेरे पितासुदेवजी महायशस्वी विदर्भ देशके राजा थे ॥ ३ ॥ हे ब्रह्मन् ! उनकी रानियोंसे दो पुत्र उत्पन्न हुए मेरा नाम श्वेत मेरे छोटे भाईका नाम सुरथ हुआ ॥ ४ ॥ जिस समय पिताजी स्वर्गको गये तो पुरवासियोंने मुझे राजा बनाया तब मैं धर्मपूर्वक सावधानीसे राज्य करने लगा ॥ ५ ॥ हे ब्रह्मन् ! हे सुव्रत ! इस प्रकार धर्मसे प्रजा पालते और राज्य करते २ मुझे पांचहजार वर्ष बीत गये ॥ ६ ॥ हे ब्रह्मन् ! सो किसी लक्षणसे मैं अपनी शीघ्रता प्राप्त होनेवाली मृत्युका निश्चय करके कालधर्मके हृदयमें धारण कर

श्रुत्वातुभाषितंवाक्यंममरामशुभाक्षरम् ॥ प्रांजलिःप्रत्युवाचेदंसस्वर्गीरघुनंदन ॥ १ ॥ शृणुब्रह्मन्पुरावृत्तंममैतत्सुखदुःखयोः ॥ अनतिक्रमणीयं यथाप्रच्छसिमांद्विज ॥ २ ॥ पुरावैदर्भकोराजापितामममहायशाः ॥ सुदेवइतिविख्यातस्त्रिषुलोकेषुवीर्यवान् ॥ ३ ॥ तस्यपुत्रद्वयंब्रह्मन्द्वा भ्यांस्त्रीभ्यामजायत ॥ अहंश्वेतइतिख्यातोयवीयान्सुरथोभवत् ॥ ४ ॥ ततःपितरिस्वर्यातेपौरामामभ्यषेचयन् ॥ तत्राहंकृतवान्राज्यंधर्म्यंचसु समाहितः ॥ ५ ॥ एवंवर्षसहस्राणिसमतीतानिसुव्रत ॥ राज्यंकारयतोब्रह्मन्प्रजाधर्मेणरक्षतः ॥६॥ सोहंनिमित्तेकस्मिंश्चिद्विज्ञातायुर्द्विजोत्तम ॥ कालधर्मंहृदिन्यस्यततोवनमुपागमम् ॥ ७ ॥ सोहंवनमिदंदुर्गंमृगपक्षिविवर्जितम् ॥ तपश्चर्तुंप्रविष्टोस्मिसमीपेसरसःशुभे ॥ ८ ॥ भ्रातरंसुरथं राज्येअभिषिच्यनरेश्वरम् ॥ इदंसरःसमासाद्यतपस्तप्तंमयाचिरम् ॥ ९ ॥ सोहंवर्षसहस्राणितपस्त्रीणिमहावने ॥ तप्त्वासुदुष्करंप्राप्तोब्रह्मलो कमनुत्तमम् ॥१०॥ तस्यमेस्वर्गभूतस्यक्षुत्पिपासेद्विजोत्तम ॥ बाधेतेपरमोदारततोहंव्यथितेंद्रियः ॥११॥ गत्वात्रिभुवनश्रेष्ठंपितामहमुवाचह ॥ भगवन्ब्रह्मलोकोयंक्षुत्पिपासाविवर्जितः ॥ १२ ॥ कस्यायंकर्मणःपाकःक्षुत्पिपासानुगोह्यहम् ॥ आहारःकश्चमेदेवतन्मेब्रूहिपितामह ॥ १३ ॥

इसी वनमें गया ॥ ७ ॥ इस मृगपक्षी रहित वनमें प्रवेश करके मैं इस सरोवरके निकट तपस्या करने लगा ॥८॥ भाई सुरथ राजाको राज्यमें अभिषेक करके इस सरोवरके निकट मैंने बहुत कालतक तपस्या की ॥९॥ तीन सहस्र वर्षतक दुष्कर तपस्या करके परमश्रेष्ठ ब्रह्मलोकको प्राप्त हुआ ॥१०॥ हे द्विजोत्तम ! स्वर्गमें प्राप्त होकर भी मैं भूख प्याससे ऐसा कातर हुआ कि, भूखसे व्याकुलेन्द्रिय होगया ॥११॥तब मैं त्रिभुवनमें श्रेष्ठ ब्रह्माजीसे जाकर कहने लगा कि,हे भगवन् !यह ब्रह्मलोक भूख प्याससे रहित है ॥ १२ ॥ यह कौनसे कर्मोंका फल है जो इस स्थानमेंभी मुझे भूँख प्यास बाधा करती है ? हे पितामह ! मुझे कुछ भोजन करनेके निमित्त

पगारहे ॥ १३ ॥ यह वचन सुनकर ब्रह्माजी बोले, हे सुदेवनन्दन ! तुम्हारा भोजन तुम्हाराही स्वादिष्ठ मांसहो उसकोही तुम सदा भक्षण करो ॥ १४ ॥ तुमने तप करनेके समय अपने शरीरकोही पुष्ट किया है, हे श्वेत ! बिना बोये कदापि बीज उत्पन्न नहीं होता आपने कुछभी दान नहीं किया केवल तपही किया इस कारण स्वर्गमें प्राप्त होकरभी तुमको क्षुधा पीडित करती है ॥ १५ ॥ १६ ॥ इसीसे तुमने जो अपने शरीरको अनेक भोजन खवाकर पुष्ट किया है उसीको तुम अमृतकी समान भोजन करो इसीसे तुम्हारी क्षुधा निवृत्त होजायगी ॥ १७ ॥ हे श्वेत ! जिससमय उस वनमें दुर्द्धर्ष भगवान् अगस्त्यजी आवेंगे उससमय तुम इस दुःखसे छूट जाओगे ॥ १८ ॥ हे सौम्य ! तुम्हें क्या वह तो देवताओंकोभी तारनेमें समर्थ हैं कारण कि, तुम तो केवल क्षुधा पिपासासेही पीडितहो ॥ १९ ॥ हे बुद्धिमन् ! मैं

पितामहस्तुमामाहतवाहारःसुदेवज ॥ स्वादूनिस्वानिमांसानितानिभक्षयनित्यशः ॥ १४ ॥ स्वशरीरंत्वयापुष्टंकुर्वतातपउत्तमम् ॥ अनुप्तंरोहते श्वेतनकदाचिन्महामते ॥ १५ ॥ दत्तंनतेस्तिसूक्ष्मोपितपएवनिपेवसे ॥ तेनस्वर्गगतोवत्सबाध्यसेक्षुत्पिपासया ॥ १६ ॥ सत्वंसुपुष्टमाहारैः स्वशरीरमनुत्तमम् ॥ भक्षयित्वामृतरसंतेनवृत्तिर्भविष्यति ॥ १७ ॥ यदातुतद्वनंश्वेतअगस्त्यःसमहानृषिः ॥ आगमिष्यतिदुर्धर्षस्तदाकृच्छ्राद्विमोक्ष्यते ॥ १८ ॥ सहितारयितुंसौम्यशक्तःसुरगणानपि ॥ किंपुनस्त्वांमहाबाहोक्षुत्पिपासावशंगतम् ॥ १९ ॥ सोहंभगवतःश्रुत्वादेवदेवस्य निश्चयम् ॥ आहारंगर्हितंकुर्मिस्वशरीरंद्विजोत्तम ॥ २० ॥ बहून्वर्षगणान्ब्रह्मन्भुज्यमानमिदंमया ॥ क्षयंनाभ्येतिब्रह्मर्षेतृप्तिश्चापिममोत्तमा ॥ ॥ २१ ॥ तस्यमेकृच्छ्रभूतस्यकृच्छ्रादस्माद्विमोक्षय ॥ अन्येषांनगतिर्ह्यत्रकुंभयोनिमृतेद्विजम् ॥ २२ ॥ इदमाभरणंसौम्यधारणार्थंद्विजोत्तम ॥ प्रतिगृह्णीष्वभद्रंतेप्रसादंकर्तुमर्हसि ॥ २३ ॥ इदंतावत्सुवर्णंचधनंवस्त्राणिचद्विज ॥ भक्ष्यंभोज्यंचब्रह्मर्षेददाम्याभरणानिच ॥ २४ ॥ सर्वान्कामान्प्रयच्छामिभोगांश्चमुनिपुंगव ॥ तारणेभगवन्मह्यंप्रसादंकर्तुमर्हसि ॥ २५ ॥

इस प्रकारसे देवदेव ब्रह्माजीके वचन श्रवणकर इस अपने शरीरका गर्हित भोजन करता हूँ ॥ २० ॥ हे ब्रह्मन् ! यह भोजन करते २ मुझे बहुत वर्ष बीत गयेतो भी मेरा शरीर क्षपन होता है न मेरी तृप्ति होती है ॥ २१ ॥ हे भगवन् ! आप मुझे महादुःखीको संकटसे छुडाइये कारण कि, अगस्त्यजीके विना हमारा कोई छुडाने वाला नहीं है ॥ २२ ॥ हे सौम्य द्विजोत्तम ! यह सुवर्ण भूषण मैं आपके धारण करनेके निमित्त प्रदान करताहूं आपका मंगलहो आप इसे ग्रहण करके मेरे ऊपर कृपा कीजिये ॥ २३ ॥ हे ब्रह्मर्षि ! यह सुवर्ण वस्त्र धन भक्ष भोजन आभरण आपके निमित्त देताहूं यद्यपि सब पदार्थ विद्यमान हैं परन्तु दान न करनेसे हम इनको भोग नहीं करसकते ॥ २४ ॥ हे मुनिश्रेष्ठ ! यह सब काम और भोगके पदार्थ हम आपको प्रदान करते हैं । हे भगवन् ! अब कृपा करके हमें

धीमने ॥ २५ ॥ हे राम ! तब दुःखभरे उस तपस्वीके वाक्य सुनकर उसके तारनके निमित्त मन यह कंकण ग्रहण किया ॥ २६ ॥ हे राजर्षि रामचंद्र ! ज्योंही मैंने वह कंकण ग्रहण किया त्योंही वह उसका सरोवरका मनुष्य शरीर नष्ट होगया ॥ २७ ॥ उस शरीरके नष्ट होतेही वह राजर्षि प्रसन्नतासे हर्षितहो सुखपूर्वक स्वर्गको चलागया ॥ २८ ॥ हे राम ! इस चन्द्रकी समान कांतिवाले स्वर्गीने यह अद्भुत कंकण मुझे अपने तारनेके निमित्त दिया था ॥ २९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी आदि० उत्तरकांडे भाषाटीकायामष्टसप्ततितमः सर्गः ॥ ७८ ॥ रामचंद्र ऐसे अगस्त्यजीके अद्भुत वचन सुनकर गौरव और विस्मयसे फिर प्रश्न करनेलगे ॥ १ ॥ हे भगवन् ! जिस वनमें वह विदर्भदेशका राजा श्वेत तपस्या करताथा वह घोर वन किस कारण मृगपक्षीहीन था ॥ २ ॥ उस मृगजन्तुरहित

तस्याहंस्वर्गिणोवाक्यंश्रुत्वादुःखसमन्वितम् ॥ तारणायोपजग्राहतदाभरणमुत्तमम् ॥ २६ ॥ मयाप्रतिगृहीतेतुतस्मिन्नाभरणेशुभे ॥ मानुषः पूर्वकोदेहोराजर्षेर्विननाशह ॥ २७ ॥ प्रनष्टेतुशरीरेसोराजर्षिःपरयामुदा ॥ तृप्तःप्रमुदितोराजाजगामत्रिदिवंसुखम् ॥ २८ ॥ तेनेदंशक्रतुल्येन दिव्यमाभरणंमम ॥ तस्मिन्निमित्तेकाकुत्स्थदत्तमद्भुतदर्शनम् ॥ २९ ॥ इति श्रीमद्रामायणे वाल्मी० आदिकाव्य उत्तरकांडेऽष्टसप्ततितमः सर्गः ॥ ७८ ॥ तदद्भुततमंवाक्यंश्रुत्वागस्त्यस्यराघवः ॥ गौरवाद्विस्मयाचैवभूयःप्रष्टुंप्रचक्रमे ॥ १ ॥ भगवंस्तद्वनंघोरंतपस्तप्यतियत्रसः ॥ श्वेतोवैदर्भकोराजाकथंतदमृगद्विजम् ॥ २ ॥ तद्वनंसकथंराजाशून्यंमनुजवर्जितम् ॥ तपश्चर्तुंप्रविष्टःसश्रोतुमिच्छामितत्त्वतः ॥ ३ ॥ रामस्यवचनंश्रुत्वाकौतूहलसमन्वितम् ॥ वाक्यंपरमतेजस्वीवक्तुमेवोपचक्रमे ॥ ४ ॥ पुराकृतयुगेराममनुर्दंडधरःप्रभुः ॥ तस्यपुत्रोमहानासीदिक्ष्वाकुःकुलनंदनः ॥ ५ ॥ तंपुत्रंपूर्वकंराज्येनिक्षिप्यभुविदुर्जयम् ॥ पृथिव्यांराजवंशानांभवकर्तेत्युवाचतम् ॥ ६ ॥ तथैवचप्रतिज्ञातंपितुःपुत्रेणराघव ॥ ततःपरमसंतुष्टोमनुःपुत्रमुवाचह ॥ ७ ॥ प्रीतोस्मिपरमोदारकर्ताचासिनसंशयः ॥ दंडेनचप्रजारक्षमाचदंडमकारणे ॥ ८ ॥

वनमें वह राजा तपस्या करनेको क्यों आयाथा यह सुननेकी मेरी इच्छाहै ॥३॥ तेजस्वी अगस्त्यजी रघुनाथजीके इसप्रकार कौतूहलयुक्त वचन श्रवणकर कहने लगे ॥ ४ ॥ हे रामचन्द्र ! आगे सतयुगमें जब मनुजी राजा थे जिनके पुत्र वंशके बढानेहारे बडे विख्यात इक्ष्वाकु हुए ॥५॥ राजा मनुजीने अपने दुर्जय पुत्रको सिंहासनपर बैठायके कहा कि, तुम पृथ्वीके विषे राजवंशोंका विस्तार करो ॥ ६ ॥ हे रामचंद्र ! पुत्रने पिताकी यह आज्ञा अंगीकार की तब मनुजी परम संतुष्ट होकर पुत्रसे बोले ॥ ७ ॥ हे परमोदार पुत्र ! मैं आपके ऊपर प्रसन्नहूं तुम वंशकर्ता होगे प्रजाको दंडसे रक्षा करना परन्तु अकारण

कभी दंड न देना ॥ ८ ॥ राजाने अपराधी पुरुषोंकोही जो दंड दियाहै वह विधिपूर्वक दिया हुआ दंड राजाको स्वर्गमें लेजाताहै ॥९॥ हे महाभुज ! पुत्र ! इसकारण दंड देनेसे बहुत सावधान रहना धर्मही संसारमें सब कुछहै ऐसा करनेसे धर्मकी प्राप्ति तुमको होगी ॥ १० ॥ इसप्रकार मनुजी अपने पुत्रको बहुत प्रकारसे समझायकर प्रसन्नहो समाधिद्वारा आप सनातन ब्रह्मलोकको गये ॥ ११ ॥ उनके स्वर्ग जानेपर महापराक्रमी इक्ष्वाकुजी, पुत्र किसप्रकार उत्पन्न किये जायँ यह चिंता करनेलगे ॥ १२ ॥ यज्ञ दान तप लक्षणवाले अनेक कर्म करके उन महात्माने देवपुत्रोंकी समान सौ पुत्र उत्पन्न किये ॥ १३ ॥ हे रघुनन्दन ! उनमें सबसे छोटा था वह मूढ विद्याहीन हुआ और अपने बडे भाइयोंकी शुश्रूषा उसने नहीं की ॥१४॥ उस अल्प तेजस्वी पुत्रका नाम पिताने दंड रक्खा कारण कि, उन्होंने शोच लिया कि, अवश्य इसके शरीरपर दंडपात होगा ॥ १५ ॥ हे शत्रुसूदन राम ! जैसे यह पुत्र थे इनके योग्य अतिघोर देश न देखकर राजाने

अपराधिपुयोदंडःपात्यतेमानवेपुवै ॥ सदंडोविधिवन्मुक्तःस्वर्गनयतिपार्थिवम् ॥९॥ तस्माद्दंडेमहाबाहोयत्नवान्भवपुत्रक ॥ धर्मोहिपरमोलोके कुर्वतस्तेभविष्यति ॥१०॥ इतितंबहुसंदिश्यमनुःपुत्रंसमाधिना ॥ जगामत्रिदिवंहृष्टोब्रह्मलोकंसनातनम् ॥११॥ प्रयातेत्रिदिवेतस्मिन्निक्ष्वाकुरमितप्रभः ॥ जनयिष्येकथंपुत्रानितिचिंतापरोभवत् ॥१२॥ कर्मभिर्बहुरूपैश्चतैस्तैर्मनुसुतस्तदा ॥ जनयामासधर्मात्माशतंदेवसुतोपमान्॥१३॥ तेषामवरजस्तातसर्वेषांरघुनंदन ॥ मूढश्चाकृतविद्यश्चनशुश्रूषतिपूर्वजान् ॥१४॥ नामतस्यचदंडेतिपिताचक्रेऽल्पतेजसः ॥ अवश्यंदंडपतनंशरीरेस्यभविष्यति ॥ १५ ॥ अपश्यमानस्तंदेशंघोरंपुत्रस्यराघव ॥ विंध्यशैवलयोर्मध्येराज्यंप्रादादरिंदम ॥ १६ ॥ सदंडस्तत्रराजाभूद्रम्येपर्वतरोधसि ॥ पुरंचाप्रतिमंरामन्यवेशयदनुत्तमम् ॥ १७ ॥ पुरस्यचाकरोन्नाममधुमंतमितिप्रभो ॥ पुरोहितंतूशनसंवरयामाससुव्रतम् ॥१८॥ एवंसराजाराज्यमकरोत्सपुरोहितः ॥ प्रहृष्टमनुजाकीर्णंदेवराजोयथादिवि ॥१९॥ ततःसराजामनुजेंद्रपुत्रःसार्धंचतेनोशनसातदानीम् ॥ चकारराज्यंसुमहान्महात्माशक्रोदिवीवोशनसासमेतः ॥ २० ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्ये उत्तरकांडे एकोनाशीतितमःसर्गः॥७९॥

विन्ध्याचल और शैवल पर्वतके बीचके देशका राज्य दंडको दिया ॥ १६ ॥ उन रम्यपर्वतके बीच देशोंका वह दंड राजा हुआ, हे रामचन्द्रजी ! वहां उनने एक बहुत उत्तम नगरभी बसाया ॥ १७ ॥ हे राम ! उस पुरका नाम मधुमान रक्खा और उसने सुव्रत शुक्राचार्यको अपना पुरोहित किया ॥१८॥ इस प्रकारसे वह राजा पुरोहितके साथ हृष्टपुष्ट मनुष्योंसे युक्त उस देशका राज्य करने लगे, जैसे इन्द्र देवलोकका राज्य करते हैं ॥ १९ ॥ उस समय इक्ष्वाकुके पुत्र महात्मा दंडजी शुक्राचार्यके साथ अपने नगरका ऐसे राज्य करने लगे जिस प्रकारसे इन्द्र देवलोकका राज्य करते हैं ॥ २० ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदि

कृतयुगमें महर्षि अगस्त्यजी रामचन्द्रजी इसप्रकार कहकर इसी कथाके सम्बन्धमें विशेष कहने लगे ॥ १ ॥ हे राम ! इस प्रकार वह चतुरतासे युक्त होकर राजा दण्ड बहुत वर्षों तक निष्कंटक राज्य उस देशका करते रहे ॥ २ ॥ कुछ दिनों उपरान्त एक समय मनोहर चैत्रमासमें राजा दण्ड शुक्राचार्यके आश्रममें आया ॥ ३ ॥ वहां दण्डने वनमें विहार करती परमसुन्दरी शुक्राचार्यकी कन्या देखी ॥ ४ ॥ वह दुर्मति उसे देखतेही कामबाणसे पीडित हो व्याकुलतासे उस कन्याके निकट जाकर कहने लगा ॥ ५ ॥ हे सुश्रोणि ! तुम कौन हो? कहांसे आईहो? किसकी कन्याहो? हेशुभानने ! यह सब कुछ कामसे पीडित होकर तुमसे पूंछता हूं ॥ ६ ॥ उस महामदनोन्मत्त कामीके ऐसा कहनेपर शुक्राचार्यकी कन्या नम्रतासे कहने लगी ॥ ७ ॥ हे राजेंद्र ! हम अक्लिष्टकर्मा भार्गवकी ज्येष्ठ कन्या

एतदाख्यायरामायमहर्षिःकुंभसंभवः ॥ अस्यामेवापरंवाक्यंकथायामुपचक्रमे ॥ १ ॥ ततःसदंडःकाकुत्स्थबहुवर्षगणायुतम् ॥ अकरोत्तत्रदांतात्माराज्यंनिहतकंटकम् ॥ २ ॥ अथकालेतुकस्मिंश्चिद्राजाभार्गवमाश्रमम् ॥ रमणीयमुपाक्रामच्चैत्रेमासिमनोरमे ॥ ३ ॥ तत्रभार्गवकन्यांसरूपेणाप्रतिमांभुवि ॥ विचरंतींवनोद्देशेदंडोऽपश्यदनुत्तमाम् ॥ ४ ॥ सदृष्ट्वातांसुदुर्मेधाअनंगशरपीडितः ॥ अभिगम्यसुसंविग्नःकन्यांवचनमब्रवीत् ॥ ५ ॥ कुतस्त्वमसिसुश्रोणिकस्यवासिसुताशुभे ॥ पीडितोहमनंगेनपृच्छामित्वांशुभानने ॥ ६ ॥ तस्यत्वेवंब्रुवाणस्यमोहोन्मत्तस्यकामिनः ॥ भार्गवीप्रत्युवाचेदंवचःसानुनयंन्विदम् ॥ ७ ॥ भार्गवस्यसुतांविद्धिदेवस्याक्लिष्टकर्मणः ॥ अरजांनामराजेंद्रज्येष्ठामाश्रमवासिनीम् ॥ ८ ॥ मामास्पृशत्वंराजेन्द्रकन्यापितृवशाह्यहम् ॥ गुरुःपितामेराजेंद्रत्वंचशिष्योमहात्मनः ॥ ९ ॥ व्यसनंसुमहत्क्रुद्धःसतेदद्यान्महातपाः ॥ यदिवान्यन्मयाकार्यंधर्मदृष्टेनसत्पथा ॥ १० ॥ वरयस्वनरश्रेष्ठपितरंमेमहाद्युतिम् ॥ अन्यथातुफलंतुभ्यंभवेद्घोराभिसंहितम् ॥ ॥ ११ ॥ क्रोधेनहिपितामेस्त्रैलोक्यमपिनिर्दहेत् ॥ दास्यतेचानवद्यांगतवमायाचितःपिता ॥ १२ ॥ एवंब्रुवाणामरजांदंडःकामवशंगतः ॥ प्रत्युवाचमदोन्मत्तःशिरस्याधायचांजलिम् ॥ १३ ॥

हैं मेरा नाम अरजा है और हम इसी आश्रममें रहती हैं ॥ ८ ॥ हे राजन् ! आप मुझ कन्याको बलसे मत छूइये कारण कि, मैं पिताके वशमें हूं हे राजेंद्र ! मेरे पिता तुम्हारे गुरु हैं और तुम उन महात्माके शिष्य हो ॥ ९ ॥ यदि तुम बलसे हमको छुओगे तो हमारे पिता तुमपर महाक्रोध प्रकाश करेंगे यदि तुम्हारी मेरी इच्छा है तो धर्मपूर्वक धर्ममार्गसे ग्रहण करो ॥ १० ॥ हे नरश्रेष्ठ ! महाद्युतिमान् पिताजीके पास जाकर तुम मुझे मांगो अन्यथा करनेसे तुमको महाघोर फल प्राप्त होगा

ऐसा कहा तो वह दंड कामसे पीडितहो हाथ जोडकर कहने लगा ॥ १३ ॥ हे सुश्रोणि ! अब मेरे ऊपर प्रसन्नहो वृथा कालक्षेप मत करो। हे वरानने ! तुम्हारे निमित्त अब मेरे प्राण पयान करतेहैं ॥१४॥ तुमको प्राप्तहो फिर चाहे मरण होजाय या कठिन पाप हो परन्तु हे भीरु ! अब तो विह्वल मुझे अपने भक्तको भजो ॥ १५ ॥ ऐसा कहकर उस बली दंडने दोनों हाथोंसे कन्याको आलिंगन किया यद्यपि उसने पलायनकी इच्छा करी परन्तु वह उसे गिराकर रमण करने लगा ॥१६॥ वह दंडराजा इस महाघोर अनर्थको करके शीघ्रतासे अपने मधुमान नगरको चला आया ॥१७॥ यहां अरजाभी रोती २ अपने आश्रमके निकट खडी हो व्याकुलतासे देवताकी समान अपने पिताको देखने लगी ॥ १८ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषाटीकायामशीतितमः सर्गः ॥ ८० ॥

प्रसादंकुरुसुश्रोणिनकालंक्षेप्तुमर्हसि ॥ त्वत्कृतेहिममप्राणाविदीर्यंतेवरानने ॥ १४ ॥ त्वांप्राप्यतुवधोवापिपापंवापिसुदारुणम् ॥ भक्तंभजस्व मांभीरुभजमानंसुविह्वलम् ॥ १५ ॥ एवमुक्त्वातुतांकन्यांदोर्भ्यांप्राप्यबलाद्बली ॥ विस्फुरंतींयथाकाममैथुनायोपचक्रमे ॥ १६ ॥ तमनर्थं महाघोरंदंडःकृत्वासुदारुणम् ॥ नगरंप्रययावाशुमधुमंतमनुत्तमम् ॥ १७ ॥ अरजापिरुदंतीसाआश्रमस्याविदूरतः ॥ प्रतीक्षतेसुसंत्रस्ताछपितरं देवसन्निभम ॥ १८ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांड अशीतितमः सर्गः ॥ ८० ॥ समुहूर्तादुपश्रुत्यदेवर्षिरमितप्रभः ॥ स्वमाश्रमंशिष्यवृतः क्षुधार्तःसंन्यवर्तत ॥१॥ सोपश्यदरजांदीनांरजसासमभिप्लुताम् ॥ ज्योत्स्नामिवग्रहग्रस्तांप्रत्यूषेनविराजतीम् ॥ २ ॥ तस्यरोषःसमभवत्क्षुधार्तस्यविशेषतः ॥ निर्दहन्निवलोकांस्त्रीन्शिष्यांश्चेतदुवाचह ॥ ३ ॥ पश्यध्वंविपरीतस्यदंडस्याविदितात्मनः ॥ विपत्तिंघोरसंकाशांक्रुद्धादग्निशिखामिव ॥ ४ ॥ क्षयोस्यदुर्मतेःप्राप्तःसानुगस्यमहात्मनः ॥ यःप्रदीप्तांहुताशस्यशिखांवैस्प्रष्टुमर्हति ॥ ५ ॥ यस्मात्सकृतवान्पापमीदृशंघोरसंहितम् ॥ तस्मात्प्राप्स्यतिदुर्मेधाःफलंपापस्यकर्मणः ॥ ६ ॥

महाप्रतापी देवर्षि शुक्राचार्यजी किसी शिष्यसे अरजाका वृत्तान्त श्रवणकर शिष्योंसहित भूखेही अपने आश्रममें प्राप्त हुए ॥ १ ॥ उन्होंने महादीन धूसरांग रुदन करते ग्रहण लगे हुए प्रातःकालके समान अशोभित अरजाको देखा ॥ २ ॥ एक तो दारुण वृत्तान्त दूसरे क्षुधित होनेके कारण ऋषिको क्रोध हुआ त्रिलोकीको भस्म करतेहुएसे अपने शिष्योंसे बोले ॥ ३ ॥ तुम उस विपरीत करनेवाले दुरात्मा दंडके ऊपर क्रोधित अग्निशिखाकी समान आई घोर विपत्ति देखो ॥ ४ ॥ इस दुरात्माका अनुचरोंसहित नाश प्राप्त हुआहै कि, जलतीहुई अग्निकी शिखाके छूनेका इसने साहस कियाहै ॥ ५ ॥ जिस कारण वि.

पापीने ऐसा घोर कर्म किया है उससे यह दुष्ट इस अपने कुत्सित कर्मका शीघ्र फल पावेगा ॥ ६ ॥ यह दुर्मति राजा सात दिनमें पुत्र बलवाहन सहित इस पापके कारणसे नाश होजायगा ॥ ७ ॥ इस दुष्ट राजाके सौ योजनतक चारों ओर राज्यको इन्द्रजी महाधूरि वर्षाकर भस्मकर डालेंगे ॥ ८ ॥ जितने यहांके स्थावर जंगम जीव हैं जो चर अचर हैं वे सब धूरिके वर्षनेसे नाश होजायँगे ॥९॥ जितना यह दंडका राज्य है सात दिनतक निरंतर धूरि वर्षनेसे अलक्षित होजायगा कहीं चिह्नभी न रहेगा ॥ १० ॥ इस प्रकार क्रोधसे लाल नेत्र कर शुक्रजीने उस आश्रमके वासियोंसे कहा कि, तुम इस देशको छोड शीघ्रतासे दूसरे स्थानोंमें चले जाओ ॥ ११ ॥ शुक्रजीके यह वचन सुन उस आश्रमके निवासी जन वहाँसे उठकर दूसरे देशोंको शीघ्रतासे चलेगये ॥ १२ ॥ इस प्रकार आश्रमवासियोंसे कह

सप्तरात्रेणराजासौसपुत्रबलवाहनः॥ पापकर्मसमाचारोवधंप्राप्स्यतिदुर्मतिः॥७॥समंताद्योजनशतंविषयंचास्यदुर्मतेः॥धक्ष्यतेपांसुवर्षेणमहतापाकशासनः॥८॥ सर्वसत्त्वानियानीहस्थावराणिचराणिच ॥ महतापांसुवर्षेणविलयंसर्वतोगमन् ॥९॥ दंडस्यविषयोयावत्तावत्सर्वंसमुच्छ्रयम् ॥ पांसुवर्षमिवालक्ष्यंसप्तरात्रंभविष्यति ॥ १० ॥ इत्युक्त्वाक्रोधताम्राक्षस्तमाश्रमनिवासिनम् ॥ जनंजनपदांतेषुस्थीयतामितिचाब्रवीत् ॥ ११ ॥ श्रुत्वातूशनसोवाक्यंसोश्रमावसथोजनः ॥ निष्क्रांतोविषयात्तस्मात्स्थानंचक्रेथबाह्यतः॥१२॥सतथोक्त्वामुनिजनमरजामिदमब्रवीत् ॥ इहैववस दुर्मेधेआश्रमेसुसमाहिता ॥१३॥ इदंयोजनपर्यंतंसरःसुरुचिरप्रभम् ॥ अरजेविज्वराभुंक्ष्वकालश्चात्रप्रतीक्ष्यताम् ॥ १४ ॥ त्वत्समीपेचयेसत्त्वावाममेष्यंतितांनिशाम् ॥ अवध्याःपांसुवर्षेणतेभविष्यंतिनित्यदा ॥१५॥ श्रुत्वानियोगंब्रह्मर्षेःसाऽरजाभार्गवीतदा॥ तथेतिपितरंप्राहभार्गवंभृशदुःखिता ॥ १६ ॥ इत्युक्त्वाभार्गवोवासमन्यत्रसमकारयत् ॥ तच्चराज्यंनरेंद्रस्यसभृत्यबलवाहनम् ॥१७॥ सप्ताहाद्भस्मसाद्भूतंयथोक्तंब्रह्मवादिना॥ तस्यासौदंडविषयोविंध्यशैवलयोर्नृप ॥ १८ ॥ शप्तोब्रह्मर्षिणातेनवैधर्म्येसहितेकृते ॥ ततःप्रभृतिकाकुत्स्थदंडकारण्यमुच्यते ॥ १९ ॥

कर शुक्रजीने अरजासे कहा हे दुष्टबुद्धि ! तू इसी स्थानपर एकाग्रचित्तहो निवास कर ॥ १३ ॥ हे अरजे ! यह जो एक योजनका कांतिमान सरोवर इस स्थानमें है यहां स्थित हो अपने कर्मोंका फल भोगती कालकी प्रतीक्षा कर ॥ १४ ॥ उन सात रात्रियोंमें जो पशु पक्षी तेरे समीप वास करेंगे उनका नाश नहीं होगा वे धूरि वर्षनेसे नहीं दबेंगे ॥ १५ ॥ पिताजीके कहेहुए वचन श्रवणकर अरजाने महादुःखी होकर उनकी आज्ञा तत्काल स्वीकार करी ॥ १६ ॥ यह कहकर शुक्रजीभी दूसरे स्थानमें वास करनेको चले गये और वह भृत्य वाहनसहित राजाका राज्य ॥ १७ ॥ जैसा ब्रह्मवादी ऋषिने कहा था उसीके अनुसार सात दिनमें सब भस्म होगया । हे राम ! यह विन्ध्याचल और शैवलपर्वतके बीचमें उसीका राज्य था ॥१८॥ ब्रह्मर्षिके शाप देनेसे उसे यह पापका फल मिला, हे रामचन्द्र ! उसी

दिनमें इस देशका नाम दण्डकारण्य विख्यात है ॥ १९ ॥ हे रामचन्द्र ! तपस्वियोंके वास करनेसे यह जनस्थान कहलाया हे राघव ! जो कुछ आपने पूँछा वह सब वर्णन किया ॥ २० ॥ हे वीर ! अब संध्योपासनका समय आगया कारण कि यह सब ऋषि जलसे पूर्ण घडे लिये हुए सब ओरसे ॥ २१ हे नरसिंह ! स्नानादि करके आदित्य भगवान्‌की उपासना करतेहैं इसकारण चलकर इन सत्यवादी ब्राह्मणोंके संग बैठकर आचमन आदि करो कारण कि, अब सूर्य भगवान् अस्त होगये ॥२२॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा०वाल्मी०आदि० उत्तरकांडे भापाटीकायामेकाशीतितमः सर्गः ॥८१॥ अगस्त्यजीके वचन सुनकर रघुनाथजी अप्सराओंसे सेवित उस निर्मल सरोवरके निकट संध्यावंदन करने चले ॥१॥ तहां जाय जलस्पर्शकर सायंसंध्यासे निश्चिन्त होकर रघुनाथ महात्मा अगस्त्यजीके आश्रममें चले आये ॥२॥

तपस्विनः स्थिताह्यत्रजनस्थानमतोभवत् ॥ एतत्तेसर्वमाख्यातंयन्मांपृच्छसिराघव ॥ २० ॥ संध्यामुपासितुंवीरसमयोह्यतिवर्तते ॥ एतेमहर्षयःसर्वेपूर्णकुंभाःसमंततः ॥ २१ ॥ कृतोदकानरव्याघ्रआदित्यंपर्युपासते ॥ सतैर्ब्राह्मणमभ्यस्तंसहितैर्ब्रह्मवित्तमैः ॥ रविरस्तंगतोरामगच्छोदकमुपस्पृश ॥ २२ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांड एकाशीतितमः सर्गः ॥ ८१ ॥ ऋषेर्वचनमाज्ञायरामःसंध्यामुपासितुम् ॥ अपाक्रामत्सरःपुण्यमप्सरोगणसेवितम् ॥ १ ॥ तत्रोदकमुपस्पृश्यसंध्यामन्वास्यपश्चिमाम् ॥ आश्रमंप्राविशद्रामःकुंभयोनेर्महात्मनः ॥ २ ॥ तस्यागस्त्योबहुगुणंकंदमूलंतथौषधम् ॥ शाल्यादीनिपवित्राणिभोजनार्थमकल्पयत् ॥ ३ ॥ सभुक्तवान्नरश्रेष्ठस्तदन्नममृतोपमम् ॥ प्रीतश्चपरितुष्टश्चतांरात्रिंसमुपाविशत् ॥ ४ ॥ प्रभातेकाल्यमुत्थायकृत्वाह्निकमरिंदमः ॥ ऋषिंसमुपचक्रामगमनायरघूत्तमः ॥ ५ ॥ अभिवाद्याब्रवीद्रामोमहर्षिंकुंभसंभवम् ॥ आपृच्छेस्वाश्रमंगंतुंमामनुज्ञातुमर्हसि ॥ ६ ॥ धन्योस्म्यनुगृहीतोस्मिदर्शनेनमहात्मनः ॥ द्रष्टुंचैवागमिष्यामिपावनार्थंमहात्मनः ॥ ७ ॥

अगस्त्यजीने रामचन्द्रके भोजन करनेके निमित्त अनेक प्रकारके स्वादिष्ठ कन्द मूल फल औषधी चावल आदि पवित्र सामग्री सहित दिये ॥३॥ वह नरश्रेष्ठ रामचंद्रने अगस्त्यजीके दिये अमृतकी समान पदार्थोंको भोजनकर प्रसन्नतासे वह रात्रि उसी आश्रममें विताई ॥ ४ ॥ प्रातःकालही उठ और पूर्वकालके कृत्यसे निश्चिन्त हो विदा होनेके निमित्त रघुनाथजी अगस्त्यजीके पास आये ॥ ५ ॥ रामचंद्र प्रणाम करके अगस्त्यजीसे कहने लगे हे भगवन् ! अब मुझे स्थानपर जानेकी आज्ञा दीजिये ॥६॥ मैं धन्यहूं आपने मेरे ऊपर बडा अनुग्रह किया आप महात्माके दर्शनमें मैं कृतार्थ हुआ और पवित्र होनेके निमित्त आपके निकट मैं कभी २ आया करूंगा ॥

८ ॥ हे रघुनंदन ! यह सुन्दर ...
अद्भुत हैं आप संपूर्ण प्राणियोंके पवित्र करनेहारे हैं ॥ ९ ॥ हे रामचन्द्रजी ! जो कोई एक मुहूर्तकोभी आपका दर्शन करतेहैं वह सब लोकोंको पवित्र करतेहुए स्वर्गमें गमनकर देवताओंसे पूजित होते हैं ॥ १० ॥ और जो प्राणी पृथ्वीमें आपको क्रूरदृष्टिसे देखतेहैं वह यमदंडसे ताडित होकर नरकको जाते हैं ॥ ११ ॥ हे रघुनाथजी ! संपूर्ण प्राणियोंके पवित्र करनेहारे आप इसप्रकार हैं । हे राघव ! पृथ्वीमें जो कोई आपके चरित्र वर्णन करेंगे वह सिद्ध होजायँगे ॥ १२ ॥ आप अपने स्थानपर निर्भय पधारिये मार्ग आपको मंगलकारी हो धर्मपूर्वक राज्यपालन कीजिये कारण कि, आपही जगत्की गति हो ॥ १३ ॥ जब मुनिराजने ऐसा कहा

तथावदतिकाकुत्स्थेवाक्यमद्भुतदर्शनम् ॥उवाचपरमप्रीतोधर्मनेत्रस्तपोधनः॥ ८ ॥ अत्यद्भुतमिदंवाक्यंतवरामशुभाक्षरम् ॥ पावनःसर्वभूतानां त्वमेवरघुनंदन ॥ ९ ॥ मुहूर्तमपिरामत्वांयेनुपश्यंतिकेचन ॥ पाविताःस्वर्गभूताश्चपूज्यास्तेत्रिदिवेश्वरैः ॥ १० ॥ येचत्वांघोरचक्षुर्भिःपश्यंतिप्राणिनोभुवि ॥ हतास्तेयमदंडेनसद्योनिरयगामिनः ॥ ११ ॥ ईदृशस्त्वंरघुश्रेष्ठपावनःसर्वदेहिनाम् ॥ भुवित्वांकथयंतोहिसिद्धिमेष्यंतिराघव ॥ ॥ १२ ॥ त्वंगच्छारिष्टमव्यग्रःपंथानमकुतोभयम् ॥ प्रशाधिराज्यंधर्मेणगतिर्हिजगतोभवान् ॥ १३ ॥ एवमुक्तस्तुमुनिनाप्रांजलिःप्रग्रहोनृपः ॥ अभ्यवादयतप्राज्ञस्तमृषिंसत्यशीलिनम् ॥ १४ ॥ अभिवाद्यऋषिश्रेष्ठंतांश्चसर्वांस्तपोधनान् ॥ अध्यारोहत्तदव्यग्रःपुष्पकंहेमभूषितम् ॥ ॥ १५ ॥ तंप्रयांतंमुनिगणाआशीर्वादैःसमंततः ॥ अपूजयन्महेंद्राभंसहस्राक्षमिवामराः ॥१६॥ स्वस्थःसददृशेरामःपुष्पकेहेमभूषिते ॥ शशीमेघसमीपस्थोयथाजलधरागमे ॥ १७ ॥ ततोर्धदिवसेप्राप्तेपूज्यमानस्ततस्ततः ॥ अयोध्यांप्राप्यकाकुत्स्थोमध्यकक्षामवातरत् ॥ १८ ॥ ततोविसृज्यरुचिरंपुष्पकंकामगामिनम् ॥ विसर्जयित्वागच्छेतिस्वस्तितेस्त्विितिचप्रभुः ॥ १९ ॥

तो बुद्धिमान् रामचन्द्रने सत्यशीलवान् ऋषिको कर जोडकर प्रणाम किया ॥ १४ ॥ इसप्रकार ऋषिश्रेष्ठ अगस्त्य तथा और सब मुनियोंको अभिवादन कर रघुनाथजी स्वस्थचित्तसे सुवर्णभूषित विमानमें चढे ॥ १५ ॥ जिस प्रकार इन्द्रकी देवता पूजा करते हैं इसी प्रकारसे रघुनाथजीको जाते देख मुनिजन आशीर्वादोंसे रघुनाथजीकी पूजा करने लगे ॥ १६ ॥ सुवर्णभूषित पुष्पक विमानमें बैठे आकाशमार्गमें रघुनाथजी ऐसे शोभित हुए जैसे वर्षाकालीन मेघके निकट चन्द्रमा शोभित होताहै ॥ ॥ १७ ॥ इस प्रकार रघुनाथजी मार्गमें अनेक स्थलोंमें पूजितहो मध्याह्नसमय अयोध्यामें प्राप्त हुए और बीचकी पौरीमें उतरे ॥ १८ ॥ तब प्रभुने उस श्रेष्ठ काम

गामी विमानसे कहा कि तुम्हारा मंगलहो अब तुम कुवेरजीके स्थानमें जाओ ॥ १९ ॥ तब रघुनाथजी पुष्पकको विदा दे उस स्थानके द्वारपालसे बोले उन श्रेष्ठ विक्रमी भरत और लक्ष्मणजीके निकट जाकर हमारा आना निवेदन करो और सब नगरमें भी हमारे आनेका समाचार कहदो ॥ २० ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे भाषाटीकायां द्व्यशीतितमः सर्गः ॥ ८२ ॥ सरलकर्मकारी रघुनाथजीके वचन श्रवणकर द्वारपाल भरत और लक्ष्मणको बुला लाया और रघुनाथजीसे उनका आना निवेदन किया ॥ १ ॥ भरत लक्ष्मणजीने रघुनाथजीके दर्शन किये और रघुनाथजीने देखतेही उन दोनोंको हृदयसे लगा कर कहा ॥ २॥ मैंने ब्राह्मणका संपूर्ण कार्य किया परंतु अब एक धर्मसेतु (अर्थात् राजसूयादि यज्ञ) करनेकी इच्छाहै॥ ३॥मेरे मतमें धर्मसेतु अक्षय अव्यय धर्मका बढा

कक्षांतरस्थितंक्षिप्रंद्वास्थंरामोब्रवीद्वचः ॥ लक्ष्मणंभरतंचैवगत्वातौलघुविक्रमौ ॥ ममागमनमाख्यायशब्दापयतमाचिरम् ॥२०॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे द्व्यशीतितमःसर्गः ॥ ८२ ॥ तच्छ्रुत्वाभाषितंतस्यरामस्याक्लिष्टकर्मणः ॥ द्वाःस्थःकुमारावाहूय राघवायन्यवेदयत् ॥१॥ दृष्ट्वातुराघवःप्राप्तावुभौभरतलक्ष्मणौ ॥ परिष्वज्यततोरामोवाक्यमेतदुवाचह ॥२॥ कृतंमयायथातथ्यंद्विजकार्यमनुत्तमम् ॥ धर्मसेतुमथोभूयःकर्तुमिच्छामिराघवौ ॥ ३ ॥ अक्षयश्चाव्ययश्चैवधर्मसेतुर्मतोमम ॥ धर्मप्रवचनंचैवसर्वपापप्रणाशनम् ॥ ४ ॥ युवाभ्यामात्मभूताभ्यांराजसूयमनुत्तमम् ॥ सहितोयष्टुमिच्छामितत्रधर्मस्तुशाश्वतः ॥ ५ ॥ इष्ट्वातुराजसूयेन मित्रः शत्रुनिबर्हणः ॥ सुहुतेनसुयज्ञेनवरुणत्वमुपागमत् ॥ ६ ॥ सोमश्चराजसूयेनइष्ट्वाधर्मेणधर्मवित् ॥ प्राप्तश्चसर्वलोकेषुकीर्तिंस्थानंचशाश्वतम ॥ ७ ॥ अस्मिन्नहनियच्छ्रेयश्चिंत्यतांतन्मयासह ॥ हितंचायतियुक्तंचप्रयतौवक्तुमर्हथः ॥ ८ ॥ श्रुत्वातुराघवस्यैतद्वाक्यंवाक्यविशारदः ॥ भरतःप्रांजलिर्भूत्वावाक्यमेतदुवाचह ॥ ९ ॥ त्वयिधर्मःपरःसाधोत्वयिसर्वावसुंधरा ॥ प्रतिष्ठितामहाबाहोयशश्चामितविक्रम ॥ १० ॥

नेहारा और सब पापोंका नाश करनेहाराहै ॥४॥ अपने तुम दोनों भाइयोंकी सहायतासे मैं यज्ञश्रेष्ठ राजसूयका अनुष्ठान किया चाहताहूं इसके करनेसे अक्षय धर्म होताहै॥ ॥ ५॥ शत्रुतापन मित्रजी सम्यक् प्रकारसे राजसूय यज्ञका अनुष्ठान कर वरुणकी पदवीको प्राप्त हुएहैं ॥ ६ ॥ धर्मात्मा सोमभी धर्मपूर्वक राजसूय यज्ञ करके अत्यन्त कीर्ति और अक्षय स्थानको प्राप्त हुए ॥ ७ ॥ सो आजहीके दिन तुम दोनों इस विषयमें सम्मति करके जो हितकारक और उत्तर कालमें भी सुखदायक वार्ता हो सो कहो ॥ ८ ॥ बोलनेमें चतुर भरतजी रघुनाथजीके यह वचन

जव महात्मा भरतजीसे रघुनाथजीने ऐसा कहा तो लक्ष्मणजी रघुनाथजीसे मनोहर वचन वोले ॥ १ ॥ हे रघुनंदन ! सम्पूर्ण पापोंसे पवित्र करनेहारा अश्वमेध यज्ञ है हे दुर्धर्ष ! यदि आपकी इच्छा हो तो यही यज्ञ कीजिये॥२॥ ऐसा सुनाहै कि, पूर्वकालमें महात्मा इन्द्रजीको ब्रह्महत्या लगीथी वह इसी अश्वमेधयज्ञ करनेसे पवित्र हुएथे ॥ ३ ॥ हे महावाहो ! पूर्वकालमें देवासुर संग्राममें वृत्रनामवाला लोकपूजित एक दैत्यथा ॥ ४ ॥ यह सौ योजनका स्थूल और तीनसौ योजनका ऊंचा था यह अभिमानसे त्रिलोकीको अपने वशमें समझकर संतोषसे देखाकरताथा ॥ ५ ॥ यह धर्मज्ञ कृतकर्मा और वडा बुद्धिमान् था धर्मयुक्त सम्पूर्ण देश और पृथ्वीको पालन करताथा ॥ ६ ॥ उसके राज्यमें पृथ्वी कामधेनुकी समान थी सब मूल फल स्वादिष्ट उत्पन्न होतेथे ॥ ७ ॥ विना हल

तथोक्तवतिरामेतुभरतेचमहात्मनि ॥ लक्ष्मणोथशुभंवाक्यमुवाचरघुनंदनम् ॥ १ ॥ अश्वमेधोमहायज्ञःपावनःसर्वपाप्मनाम् ॥ पावनस्तवदुर्धर्षरोचतांरघुनंदन ॥ २ ॥ श्रूयतेहिपुरावृत्तंवासवेसुमहात्मनि ॥ ब्रह्महत्यावृतःशक्रोहयमेधेनपावितः ॥ ३ ॥ पुराकिलमहावाहोदेवासुरसमागमे ॥ वृत्रोनाममहानासीद्दैतेयोलोकसंमतः ॥४॥ विस्तीर्णोयोजनशतमुच्छ्रितस्त्रिगुणंततः ॥ अनुरागेणलोकांस्त्रीन्स्नेहात्पश्यतिसर्वतः ॥५॥ धर्मज्ञश्चकृतज्ञश्चबुद्ध्याचपरिनिष्ठितः ॥ शशासपृथिवींस्फीतांधर्मेणसुसमाहितः ॥६॥ तस्मिन्प्रशासतितदासर्वकामदुघामही ॥ रसवंतिप्रसूनानिमूलानिचफलानिच ॥ ७ ॥ अकृष्टपच्यापृथिवीसुसंपन्नामहात्मनः ॥ सराज्यंतादृशंभुंक्तेस्फीतमद्भुतदर्शनम् ॥ ८ ॥ तस्यबुद्धिःसमुत्पन्नातपःकुर्यामनुत्तमम् ॥ तपोहिपरमंश्रेयःसंमोहमितरत्सुखम् ॥ ९ ॥ सनिक्षिप्यसुतंज्येष्ठंपौरेषुमधुरेश्वरम् ॥ तपउग्रंसमातिष्ठत्तापयन्सर्वदेवताः ॥ ॥ १० ॥ तपस्तप्यतिवृत्रेतुवासवःपरमार्तवत् ॥ विष्णुंसमुपसंक्रम्यवाक्यमेतदुवाचह ॥ ११ ॥ तपस्यतामहावाहोलोकाःसर्वेविनिर्जिताः ॥ वलवान्सहिधर्मात्मानैनंशक्ष्यामिशासितुम् ॥ १२ ॥ यद्यसौतपआतिष्ठेद्भूयएवसुरेश्वर ॥ यावल्लोकाधरिष्यंतितावदस्यवशानुगाः ॥ १३ ॥

चलाये पृथ्वीमें अन्न उत्पन्न होताथा इसप्रकारसे वहुतकालतक वह उत्तम प्रकारसे राज्य करता रहा ॥ ८ ॥ राज्य करते २ उसकी बुद्धिमें यह वात समाई कि, तपस्या करूं क्योंकि तपही कल्याणकारक है और सुख तो मोह देनेहारे हैं ॥ ९ ॥ यह विचारकर मधुरेश्वर अपने वडे पुत्रको राज्य दे सम्पूर्ण देवताओंको भयदायक तपस्या करनेलगा ॥ १० ॥ जब वृत्रासुर तप करनेलगा तब इन्द्र महादुःखी हो विष्णु भगवान्के पास जाकर कहनेलगे ॥ ११ ॥ हे भगवन् ! इस वृत्रासुरने तपसे त्रिलोकी जीत ली एक तो यह वली दूसरे धर्मात्मा इससे हम इसको परास्त नहीं करसकेंगे ॥ १२ ॥ अव यह जो और भी तपस्या

करता रहेगा तो सम्पूर्ण लोक इसके वशमें होजायगे ॥ १३ ॥ हे देवताओंके ईश्वर ! एस वृत्रासुरको और अनीतिके आपने दृष्टि नहीं की, जिससमय आप कोप करोगे तो यह क्षणमात्रमें न रहेगा ॥ १४ ॥ हे विष्णु भगवन् ! जबसे इसने आपमें प्रीति की है तभीसे यह संसारका ईश्वर होगयाहै ॥ १५ ॥ हे भगवन् ! इन सबलोगोंके ऊपर आप प्रसन्न हूजिये आपके करनेसे सब जगत् शांत और रोगरहित होजायगा ॥ १६ ॥ हे विष्णो ! यह सम्पूर्ण देवता आपहीको निरीक्षण करते हैं, इस कारण वृत्रासुरके मारनेमें हमारी सहायता कीजिये कारण कि, यह दैत्योंकी ओरसे युद्ध करेगा ॥ १७ ॥ और आपने इन महात्माओंकी पूर्वकालमेंभी सहाय कीहै और आपके सिवाय और कोई इस कार्यको नहीं करसक्ता कारण कि, अनाथोंके आपही गति हो ॥ १८ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे

तंनेनंपरमोदारमुपेक्षसिमहानल ॥ क्षणंहिनभवेद्वृत्रःक्रुद्धेत्वयिसुरेश्वर॥१४॥यदाहिप्रीतिसंयोगंत्वयाविष्णोसमागतः॥ तदाप्रभृतिलोकानांनाथत्वमुपलब्धवान् ॥१५॥ सत्वंप्रसादंलोकानांकुरुष्वसुसमाहितः ॥ त्वत्कृतेनहिसर्वस्यात्प्रशांतमरुजंजगत् ॥१६॥ इमेहिसर्वेविष्णोत्वांनिरीक्षंतेदिवौकसः ॥ वृत्रघातेनमहतातेषांसाह्यंकुरुष्वह ॥१७॥ त्वयाहिनित्यशःसाह्यंकृतमेषांमहात्मनाम् ॥ असह्यमिदमन्येषामगतीनांगतिर्भवान्॥॥१८॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे चतुरशीतितमः सर्गः ॥ ८४ ॥ लक्ष्मणस्यतुतद्वाक्यंश्रुत्वाशत्रुनिबर्हणः ॥ वृत्रघातमशेषेणकथयेत्याहसुव्रत ॥ १ ॥ राघवेणैवमुक्तस्तुसुमित्रानंदवर्धनः ॥ भूयएवकथांदिव्यांकथयामाससुव्रतः॥२॥सहस्राक्षवचःश्रुत्वासर्वेषांचदिवौकसाम् ॥ विष्णुर्देवानुवाचेदंसर्वानिंद्रपुरोगमान्॥३॥पूर्वंसौहृदबद्धोस्मिवृत्रस्येहमहात्मनः॥तेनयुष्मत्प्रियार्थंहिनाहंहन्मिमहासुरम्॥४॥ अवश्यंकरणीयंचभवतांसुखमुत्तमम् ॥ तस्मादुपायमाख्यास्येसहस्राक्षोवधिष्यति ॥ ५ ॥ त्रेधाभूतंकरिष्यामिआत्मानंसुरसत्तमाः ॥ तेनवृत्रंसहस्राक्षोवधिष्यतिनसंशयः ॥ ६ ॥ एकांशोवासवंयातुद्वितीयोवज्रमेवतु ॥ तृतीयोभूतलंयातुतदावृत्रंहनिष्यति ॥ ७ ॥

वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे भाषाटीकायां चतुरशीतितमः सर्गः ॥ ८४ ॥ लक्ष्मणके वचन सुनकर रघुनाथजी बोले हे लक्ष्मण ! वृत्रासुरके वधकी सम्पूर्ण कथा कहो ॥ १ ॥ सुमित्रानंदन लक्ष्मणजी रघुनाथजीके यह वचन सुनकर उस दिव्य कथाको कहनेलगे ॥ २ ॥ इस प्रकारसे इन्द्र और सम्पूर्ण देवताओंके वचन सुनकर विष्णु भगवान् इंद्रादि देवताओंसे कहने लगे ॥ ३ ॥ कि, वृत्रासुर महात्माने बहुत कालसे मुझमें प्रेम लगायाहै इस कारणसे तुम्हारी प्रसन्नताके निमित्त हम इस महात्माका वध नहीं करेंगे ॥ ४ ॥ और तुम्हारे सुखका उपायभी अवश्य करना चाहिये इस कारणसे यह उपाय कहते हैं जिसप्रकार इन्द्र उसको मार सकेंगे ॥ ५ ॥ हे देवताओ ! हम अपनेके तीन भाग करके वृत्रासुरका वध इन्द्रके द्वारा करादेंगे इसमें संदेह नहीं ॥ ६ ॥ उनमें एक अंश वृत्रासुरमें दूसरा वज्रमें

और तीसरा पृथ्वीमें प्राप्त होगा तो वृत्रासुरका वध होगा (पृथ्वीमें एक अंश इस कारण रक्खा कि वृत्रासुरके गिरनेके समय पृथ्वी उसके धारण करनेमें समर्थ होगी) ॥ ७ ॥ जिस समय भगवान्‌ने ऐसा कहा तो देवता कहने लगे हे दैत्योंके मारनेहारे ! जो कुछ आप कहते हैं वह निःसंदेह ऐसाही है ॥ ८ ॥ हे भगवन् ! आपका कल्याण हो वृत्रासुरके मरणकी इच्छावाले हम जाते हैं आप अपना परम उदार तेज इन्द्रमें स्थापित कीजिये ॥ ९ ॥ फिर इन्द्रादिक सम्पूर्ण देवता उस स्थानमें गये जिस वनमें महासुर वृत्रासुर विद्यमान था ॥ १० ॥ उन्होंने उस दैत्यको तपस्या करते तेजसे दीप्यमान देखा कि, मानो त्रिलोकीको पान कर जायगा और आकाशको जला देगा ॥ ११॥ इसप्रकार उस दैत्यको देखकर देवता भयभीत हुए कि, किसप्रकारसे हम इसको मारसकें और हमारी हार न हो ॥ १२ ॥ उनके

तथाब्रुवतिदेवेशेदेवावाक्यमथाब्रुवन् ॥ एवमेतन्नसंदेहोयथावदसिदैत्यहन् ॥८॥ भद्रंतेस्तुगमिष्यामोवृत्रासुरवधैषिणः ॥ भजस्वपरमोदारवास वं स्वेन तेजसा ॥ ९ ॥ ततःसर्वेमहात्मनःसहस्राक्षपुरोगमाः ॥ तदरण्यमुपाक्रामन्यत्रवृत्रोमहासुरः॥१०॥ तेपश्यंस्तेजसाभूतंतपंतमसुरोत्तमम्॥ पिबंतमिवलोकांस्त्रीन्निर्दहंतमिवांबरम् ॥ ११ ॥ दृष्ट्वैवचासुरश्रेष्ठंदेवास्त्रासमुपागमन् ॥ कथमेनंवधिष्यामःकथंनस्यात्पराजयः ॥ १२ ॥ तेषां चिंतयतांतत्रसहस्राक्षःपुरंदरः ॥ वज्रंप्रगृह्यपाणिभ्यांप्राहिणोद्वृत्रमूर्धनि ॥१३॥ कालाग्निनेवघोरेणदीप्तेनेवमहार्चिषा ॥ पततावृत्रशिरसाजगत्त्रा समुपागमत् ॥ १४ ॥ असंभाव्यंवधंतस्यवृत्रस्यविबुधाधिपः ॥ चिंतयानोजगामाशुलोकस्यांतंमहायशाः ॥ १५ ॥ तमिंद्रंब्रह्महत्याशुगच्छंत मनुगच्छति ॥ अपतच्चास्यगात्रेषुतमिंद्रंदुःखमाविशत् ॥ १६ ॥ हतारयःप्रनष्टेंद्रादेवाःसाग्निपुरोगमाः ॥ विष्णुंत्रिभुवनेशानंमुहुर्मुहुरपूजयन् ॥ ॥ १७ ॥ त्वंगतिःपरमेशानपूर्वजोजगतःपिता ॥ रक्षार्थंसर्वभूतानांविष्णुत्वमुपजग्मिवान् ॥ १८ ॥

ऐसा कहनेपर सहस्राक्ष इन्द्रने हाथमें वज्र ग्रहण करके वृत्रासुरके शिरमें मारा॥१३॥ कालाग्निके समान महाघोर और महाकांतियुक्त वह वृत्रासुरका शिर कटकर पृथ्वी पर गिरपडा जिससे सम्पूर्ण जगत् भयभीत होगया ॥ १४ ॥ महायशस्वी इन्द्र उसका असंभाव्य वध विचारकर कि, एक तो इसका कुछ अपराध नहीं दूसरे यह मौनधारे तप करता था इसे वृथा मारा इस शोकसे व्याकुल हो लोकके अन्तस्थानमें जहां अन्धकार था ब्रह्महत्याके डरसे चले गये ॥ १५ ॥ परन्तु ब्रह्महत्या भी उनके पीछेही चलीगई और उनके शरीरमें प्रवेश करगई जिससे इन्द्र महादुःखी हुए ॥ १६ ॥ इसप्रकार वृत्रासुरके मरने और इन्द्रके गुप्त होजानेसे अग्नि सहित सब देवता त्रिलोकेश्वर भगवान्‌के निकट जा उनकी पूजा करने लगे ॥ १७ ॥ हे भगवन् ! तुमही जगत्‌की गतिहो सबसे बडे हो, हे विष्णु ! तुमही जगतके [illegible]

पिता और संसारकी रक्षा करनेको विष्णु हुएहो ॥ १८ ॥ हे देवताओंमें श्रेष्ठ ! वृत्रासुर मारागया परन्तु अब इन्द्रको ब्रह्महत्या बाधा करती है उसके छुटकारेका कोई उपाय कहिये ॥ १९ ॥ उन देवताओंके वचन सुनकर भगवान् विष्णुजी बोले, हे देवताओ ! इन्द्र हमारा यज्ञ करें, हम उन्हें पवित्र करदेंगे ॥ २० ॥ इन्द्र पवित्र अश्वमेध यज्ञसे मेरा यजन करके निःसंदेह फिर देवपतिकी पदवीको प्राप्त होंगे ॥ २१ ॥ इसप्रकार देवताओंको अमृतमयी वाणीसे उपदेश करके देवताओंसे पूजितहो भगवान् वैकुंठको चलेगये ॥ २२ ॥ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषाटीकायां पंचाशीतितमः सर्गः ॥ ८५ ॥ ॥ इसप्रकार लक्ष्मणजी वृत्रासुरका सम्पूर्ण वध कहकर फिर शेष कथा कहनेलगे ॥ १ ॥ जिससमय देवताओंका भयदाई महाबली वृत्रासुर मारागया तो ब्रह्महत्याके

हतश्चायंत्वयावृत्रोब्रह्महत्याचवासवम् ॥ बाधतेसुरशार्दूलमोक्षंतस्यविनिर्दिश ॥ १९ ॥ तेषांतद्वचनंश्रुत्वादेवानांविष्णुरब्रवीत् ॥ मामेवयजतां शक्रःपावयिष्यामिवज्रिणम ॥ २० ॥ पुण्येनहयमेधेनमामिष्ट्वापाकशासनः ॥ पुनरेष्यतिदेवानामिंद्रत्वमकुतोभयः ॥ २१ ॥ एवंसंदिश्यतां वाणींदेवानांचामृतोपमाम् ॥ जगामविष्णुर्देवेशःस्तूयमानस्त्रिविष्टपम् ॥ २२ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे पंचाशीतितमः सर्गः ॥ ८५ ॥ तदावृत्रवधंसर्वमखिलेनसलक्ष्मणः ॥ कथयित्वानरश्रेष्ठःकथाशेषंप्रचक्रमे ॥ १ ॥ ततोहतेमहावीर्येवृत्रेदेवभयंकरे ॥ ब्रह्महत्यावृतःशक्रःसंज्ञांलेभेनवृत्रहा ॥ २ ॥ सोन्तमाश्रित्यलोकानांनष्टसंज्ञोविचेतनः ॥ कालंतत्रावसत्कंचिद्वेष्टमानइवोरगः ॥ ३ ॥ अथनष्टेसहस्राक्षेउद्विग्नमभवज्जगत् ॥ भूमिश्चध्वस्तसंकाशानिःस्नेहाशुष्ककानना ॥ ४ ॥ निःस्रोतसस्तेसर्वेतुह्रदाश्चसरितस्तथा ॥ संक्षोभश्चैव सत्त्वानामनावृष्टिकृतोभवत् ॥ ५ ॥ क्षीयमाणेतुलोकेस्मिन्संभ्रांतमनसःसुराः ॥ यदुक्तंविष्णुनापूर्वंतंयज्ञंसमुपानयन् ॥ ६ ॥ ततःसर्वेसुरगणाः सोपाध्यायाःसहर्षिभिः ॥ तंदेशंसमुपाजग्मुर्यत्रेंद्रोभयमोहितः ॥७॥ तेतुदृष्ट्वासहस्राक्षमावृतंब्रह्महत्यया ॥ तंपुरस्कृत्यदेवेशमश्वमेधंप्रचक्रिरे॥८॥

लगनेसे इन्द्र चेतनारहित होगये ॥ २ ॥ वह निश्चेष्ट होकर लोकोंके अन्तमें जाकर लोटनेलगे और अजगर सर्पकी समान पडेहुए कुछ काल विताया ॥३॥ इन्द्रके नष्ट होनेसे सब जगत् उद्विग्न होगया, पृथ्वी प्रकाशरहित हुई; रस सूखगया, वनभी शुष्क होगये ॥ ४ ॥ सम्पूर्ण ह्रद और सरोवर जलहीन होगये; नदी सूखगई, विना वर्षाके सब प्रजा क्षुभित होगई ॥ ५ ॥ लोकके क्षय होनेसे संभ्रान्त मनसे देवता विष्णुके कहे यज्ञका अनुष्ठान करने लगे ॥६॥ तब सम्पूर्ण देवता उपाध्याय और महर्षियोंके साथ उस स्थानमें आये जहां इन्द्र भयसे व्याकुल हुए पडेथे ॥ ७ ॥ इन देवताओंने इन्द्रको ब्रह्महत्यासे युक्त देख, इन्हें दीक्षामें बैठाय यज्ञ

करना प्रारंभ किया ॥ ८ ॥ हे राजन् ! तब महात्मा इन्द्रको महाब्रह्महत्या मिटानेके निमित्त अश्वमेध यज्ञ होनेलगा ॥ ९ ॥ जब यज्ञ समाप्त हुआ, तब
हत्या इन्द्रके शरीरसे निकल स्त्रीरूप बनाय कहनेलगी कि, मेरे रहनेका कोई स्थान बताओ ॥ १० ॥ यह वचन सुन संतुष्ट हो प्रीतिसहित सम्पूर्ण देवता
हे ब्रह्महत्या ! तू अपनेको चार भागमें विभक्तकर ॥ ११ ॥ ब्रह्महत्या उन महात्मा देवताओंके वचन सुनकर इन्द्रको त्याग उन देवताओंसे निवास करने
मांगनेलगी ॥ १२ ॥ और बोली कि, एक अंशसे मैं तो वर्षाकालमें नदियोंमें वास करूंगी. इस कारणसे नदी ऊंचे नीचे सब स्थानोंमें यथेच्छ बहेंगी,
ब्रह्महत्याका अंश होगा ॥ १३ ॥ और एक अंशसे मैं सब काल पृथ्वीमें वास करूंगी, मेरे इस सत्य वचनमें कोई संदेह नहीं उसमें ऊपरस्थान ब्रह्मह
ततोश्वमेधःसुमहान्महेंद्रस्यमहात्मनः ॥ ववृतेब्रह्महत्यायापावनार्थंनरेश्वर ॥ ९ ॥ ततोयज्ञेसमाप्तेतुब्रह्महत्यामहात्मनः ॥ अभिग
द्वास्येंऽक्रमेस्थानंविधास्यथ ॥ १० ॥ तेतामूचुस्ततोदेवास्तुष्टाःप्रीतिसमन्विताः ॥ चतुर्धाविभजात्मानमात्मनैवदुरासदे ॥ ११ ॥
भाषितंश्रुत्वाब्रह्महत्यामहात्मनाम् ॥ संदधौस्थानमन्यत्रवरयामासदुर्वसा ॥ १२ ॥ एकेनांशेनवत्स्यामिपूर्णोदासुनदीषुवै ॥ चतुरोनार्पिका
न्मा॥जान्दर्पघ्नीकामचारिणी ॥ १३ ॥ भूम्यामहंसर्वकालमेकेनांशेनसर्वदा ॥ वसिष्यामिनसंदेहःसत्येनैतद्ब्रवीमिवः ॥ १४ ॥ योयमंशस्तृती
योमेस्त्रीषुयौवनशालिषु ॥ त्रिरात्रंदर्पपूर्णासुवसिष्येदर्पघातिनी ॥ १५ ॥ हंतारोब्राह्मणान्येतुमृषापूर्वमदूषकान् ॥ तांश्चतुर्थेनभागेनसंश्रयिष्ये
सुरर्षभाः॥१६॥ प्रत्यूचुस्तांततोदेवायथावदसिदुर्वसे ॥ तथाभवतुतत्सर्वंसाधयस्वयदीप्सितम् ॥१७॥ ततःप्रीत्यान्वितादेवाःसहस्राक्षंववंदिरे ॥
विज्वरःपूतपाप्माचवासवःसमपद्यत ॥ १८ ॥ प्रशांतंचजगत्सर्वंसहस्राक्षेप्रतिष्ठिते ॥ यज्ञंचाद्भुतसंकाशंतदाशक्रोभ्यपूजयत् ॥ १९ ॥ ईदृशो
ह्यश्वमेधस्यप्रसादोरघुनंदन ॥ यजस्वसुमहाभागहयमेधेनपार्थिव ॥ २० ॥
होगा ॥ १४ ॥ और एक अंशसे युवास्त्रियोंकी योनिमें उनका दर्प चूर्ण करनेके निमित्त एक मासमें तीन दीनतक वास करूंगी; वह रुधिर ब्रह्महत्याका अंश होगा
॥ १५ ॥ हे देवताओ ! हम अपने चौथे अंशसे उन लोगोंमें वास करूंगी जो झूंठे दोष लगाय ब्राह्मणोंको ताडन करेंगे ॥ १६ ॥ यह उसके वचन सुनकर सब
देवता कहने लगे कि, जैसे तेरी इच्छाहै, तू अपने उन अभीष्ट स्थानोंमें जाकर वास कर ॥ १७ ॥ यह कहकर सम्पूर्ण देवताओंने इन्द्रको प्रणाम किया और
इन्द्रभी पवित्र होनेके कारण बडे आनंदको प्राप्त हुए ॥ १८ ॥ जब इन्द्र अपने स्थानपर आकर विराजे, तब सब जगत् शान्त होगया और फिर
इन्द्रने बडे अद्भुत यज्ञका यजन पूजन किया ॥ १९ ॥ हे रघुनाथजी ! अश्वमेध यज्ञकी ऐसी महिमा है, हे महाभाग भगवन् ! इसकारण आपभी
॥ १ ॥ हे लक्ष्मणजी ! ... इल था और जो बडे धर्मात्मा थे वह बाह्लीक देशके राजा हुए ॥

ननवर वन कीगते ॥ २० ॥ इन्द्रकी समान पराक्रमी रघुनाथजी लक्ष्मणके कहे उत्तम और मनोहर वचन सुनकर परमसंतुष्ट और प्रसन्न हुए ॥ २१ ॥ इत्यार्षे
श्रीमद्वा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषाटीकायां पडशीतितमः सर्गः ॥ ८६ ॥ बोलनेवालोंमें चतुर महातेजस्वी रघुनाथजी लक्ष्मणजीके यह वचन सुन हँस
कर कहनेलगे ॥ १ ॥ हे लक्ष्मणजी ! तुमने जो कहा यह ऐसेही है वृत्रासुरका वध और अश्वमेधका फल इसी प्रकार है ॥ २ ॥ हे सौम्य ! हमने सुनाहै कि
पूर्वकालमें कर्दम प्रजापतिके बडे पुत्र जिनका नाम इल था और जो बडे धर्मात्मा थे वह बाह्लीक देशके राजा हुए ॥ ३ ॥ हे नरशार्दूल ! वह महायशस्वी राजा
सम्पूर्ण पृथ्वी अपने वशमें करके राज्यको पुत्रकी समान पालन करने लगे ॥ ४ ॥ इस राज्यकी उत्तमतासे देवता दैत्य नाग राक्षस यक्ष गंधर्व और भी उदार

इतिलक्ष्मणवाक्यमुत्तमंवैनृपतिरतीवमनोहरंमहात्मा ॥ परितोषमवापहृष्टचेताःसनिशम्येंद्रसमानविक्रमौजाः ॥ २१ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे पडशीतितमः सर्गः ॥ ८६ ॥ तच्छ्रुत्वालक्ष्मणेनोक्तंवाक्यंवाक्यविशारदः ॥ प्रत्युवाचमहातेजाः प्रहसन्राघवोत्तमः ॥ १ ॥ एवमेवनरश्रेष्ठयथावदसिलक्ष्मण ॥ वृत्रघातमशेषेणवाजिमेधफलंचयत् ॥ २ ॥ श्रूयतेहिपुरासौम्यकर्दमस्यप्रजापतेः ॥ पुत्रोबाह्लीश्वरःश्रीमानिलोनामसुधार्मिकः ॥ ३ ॥ सराजापृथिवींसर्वांवशेकृत्वामहायशाः ॥ राज्यंचैवनरव्याघ्रपुत्रवत्पर्यपालयत् ॥ ४ ॥ सुरैश्च परमोदारैर्दैतेयैश्चमहाधनैः ॥ नागराक्षसगंधर्वैर्यक्षैश्चसुमहात्मभिः ॥ ५ ॥ पूज्यतेनित्यशःसौम्यभयार्तैरघुनंदन ॥ अबिभ्यंश्चत्रयोलोकाः सरोषस्यमहात्मनः ॥ ६ ॥ सराजातादृशोप्यासीद्धर्मेवीर्येचनिष्ठितः ॥ बुद्ध्याचपरमोदारोबाह्लीकेशोमहायशाः ॥ ७ ॥ सप्रचक्रेमहाबाहुर्मृगयांरुचिरेवने ॥ चैत्रेमनोरमेमासिसभृत्यबलवाहनः ॥ ८ ॥ प्रजघ्नेसनृपोऽरण्येमृगाञ्छतसहस्रशः ॥ हत्वैवतृप्तिर्नाभूच्चराज्ञस्तस्यमहात्मनः ॥ ९ ॥ नानामृगाणामयुतंवध्यमानंमहात्मना ॥ यत्रजातोमहासेनस्तंदेशमुपचक्रमे ॥ १० ॥ तस्मिन्प्रदेशेदेवेशःशैलराजसुतांहरः ॥ रमयामासदुर्धर्षःसर्वैरनुचरैःसह ॥ ११ ॥

महात्मा उसकी पूजा करतेथे ॥ ५ ॥ हे रघुनंदन ! वह नित्यही आनकर राजाकी पूजाकरतेथे और इन महात्माके क्रोध करनेसे त्रिलोकी भयभीत हो जातीथी ॥ ६ ॥
इस प्रकारके महायशस्वी धर्मपरायण बाह्लीकके यह राजा उदारता और बुद्धिमानीसे बाह्लीकदेशका राज्य करतेथे ॥ ७ ॥ एक समय चैत्रमासमें वह राजा अपनी
सेना आदि लेकर वनमें मृगयाके निमित्त गया ॥ ८ ॥ राजाने वनमें जाकर सहस्रों मृगोंका संहार किया तथापि उन महात्माकी तृप्ति न हुई ॥ ९ ॥ जब अनेक
प्रकारके हजारों मृग वध करनेसे तृप्ति न हुई तब वह उस वनमें गये जहाँ स्वामिकार्तिकका जन्म हुआथा ॥ १० ॥ उस वनमें दुर्द्धर्ष देवादिदेव महादेवजी पार्वतीको

संग लिये और अपने सब अनुचरों सहित विहार करतेथे ॥ ११ ॥ वृषध्वज शिवजीभी अपना स्त्रीका रूप बनाये पार्वतीका प्रिय करनेके निमित्त
निर्झरोंमें विचरतेथे ॥ १२ ॥ उस वनमें उससमय जितने पुरुष नामवाले थे वृक्ष मृगादिक वे सब स्त्रीलिंग होगये ॥ १३ ॥ बहुत क्या जो कुछभ
स्थानमें था वह सब स्त्रीरूप होगया उसी समय कर्दमके पुत्र इल राजाभी ॥ १४ ॥ सहस्रों मृगोंका संहार करते उस देशमें आये उन्होंने दे
उस वनमें सर्व मृग पक्षी सब स्त्रीरूप हैं ॥ १५ ॥ और अपनेकोभी सेना और बल वाहनसहित स्त्रीरूप देखकर बहुत दुःखी हुआ ॥ १
यह शिवजी महाराजके कारणसे स्त्रीत्व प्राप्त हुआहै यह जानकर राजा महाभयभीत हुए तब शितिकंठ कपर्दी महात्मा देवदेव शंकरजीके ॥ १

कृत्वास्त्रीरूपमात्मानमुमेशोगोपतिध्वजः ॥ देव्याःप्रियचिकीर्षुःसंस्तस्मिन्पर्वतनिर्झरे ॥ १२ ॥ यत्रयत्रवनोद्देशेसत्त्वाःपुरुषवादिनः ॥ वृ
पुरुषनामानस्तेसर्वेस्त्रीजनाभवन् ॥ १३ ॥ यच्चकिंचनतत्सर्वंनारीसंज्ञंबभूवह ॥ एतस्मिन्नंतरेराजासइलः कर्दमात्मजः ॥ १४ ॥ निघ्नन्मृ
हस्रागितंदेशमुपचक्रमे ॥ सद्दृष्ट्वास्त्रीकृतंसर्वंसव्यालमृगपक्षिणम् ॥ १५ ॥ आत्मानंस्त्रीकृतंचैवसानुगंरघुनंदन ॥ तस्यदुःखंमहच्चासीद्दृष्ट्
नंतथागतम् ॥ १६ ॥ उमापतेश्चतत्कर्मज्ञात्वात्रासमुपागमत् ॥ ततोदेवंमहात्मानंशितिकंठंकपर्दिनम् ॥ १७ ॥ जगामशरणंराजासभृत्यबल
वाहनः ॥ ततःप्रहस्यवरदःसहदेव्यामहेश्वरः ॥ १८ ॥ प्रजापतिसुतंवाक्यमुवाचवरदःस्वयम् ॥ उत्तिष्ठोत्तिष्ठराजर्षेकार्दमेयमहाबल ॥ १९ ॥
पुरुषत्वमृतेसौम्यवरंवरयसुव्रत ॥ ततःसराजाशोकार्तःप्रत्याख्यातोमहात्मना ॥ २० ॥ स्त्रीभूतोसौनजग्राहवरमन्यंसुरोत्तमात् ॥ ततःशोके
नमहताशैलराजसुतांनृपः ॥ २१ ॥ प्रणिपत्यउमांदेवींसर्वेणैवांतरात्मना ॥ ईशेवराणांवरदेलोकानामसिभामिनी ॥ २२ ॥ अमोघदर्शनेदेवी
भजसौम्येनचक्षुषा ॥ हृद्गतंतस्यराजर्षेर्विज्ञायहरसन्निधौ ॥ २३ ॥

शरणमें राजा अपने सेना वाहन सहित प्राप्त हुआ तब वरदेनेहारे शंकर पार्वतीसहित हँसते हुए आये ॥ १८ ॥ और प्रजापति कर्दमके पुत्रसे स्वयं
शंकर यह वचन कहनेलगे कि, हे कर्दमके पुत्र महाबली राजर्षि ! उठो ॥१९॥ हे सुव्रत ! पुरुष प्राप्तिके सिवाय जो चाहो सो वरदान मांगो जब महात्मा शिवजीने
ऐसा कहा तो यह राजा महादुःखी हुआ ॥ २० ॥ और उसने कोई और वर सुरश्रेष्ठ शिवजीसे नहीं मांगा और महाशोकसे राजा शैलराजकन्या पार्वती ॥ २१ ॥
उमादेवीको प्रणाम करके चित्तकी वृत्ति एकाग्रकर बोला, हे वरदायिनी ! तुम लोक और ईश्वरोंकोभी वर देती हो ॥ २२ ॥ हे देवी ! तुम्हारा दर्शन सफल होताहै
[illegible] ॥ २५ ॥ [illegible] प्रसन्न होकर राजा कहने लगी, [illegible]
र दीजिये कि ॥ २६ ॥ मैं एक मासतक स्त्री और एक मासतक पुरुष रहा करूं. सुमुखी पार्वती देवी राजाके मनोरथ [illegible] ॥

हमारे ऊपर कृपादृष्टि करो पार्वती उस राजाका मनोरथ जान शिवजीके निकट बैठीहुई ॥ २३ ॥ देवी भगवती, शिवजीकी सम्मतिसे राजासे सुन्दर वचन कहने लगीं, हे राजन् ! आधे वरदानकी देनेहारी मैं हूं और आधे वरदाता शिवजी हैं ॥ २४ ॥ इसकारण स्त्री पुरुषमें आधा वर जो चाहो सो ग्रहण करो इसप्रकार पार्वती देवीके अद्भुत वाक्यको सुनकर ॥ २५ ॥ बहुतही प्रसन्न होकर राजा कहने लगे, हे अलौकिक गुणरूपयुक्त भगवति ! जो मेरे ऊपर प्रसन्न हो तो यह वर दीजिये कि ॥ २६ ॥ मैं एक मासतक स्त्री और एक मासतक पुरुष रहा करूं. सुमुखी पार्वती देवी राजाके मनोरथको विचार ॥ २७ ॥ सुन्दर वचनसे कहने लगीं कि, ऐसाही होगा. हे राजन् ! जब तुम पुरुष होजाओगे तो स्त्रीभावका तुम्हें स्मरण नहीं रहेगा ॥ २८ ॥ और जब स्त्री होजाओगे तो पुरुषभावका स्मरण नहीं

प्रत्युवाचशुभंवाक्यंदेवीरुद्रस्यसंमता ॥ अर्धस्यदेवोवरदोवरार्धस्यतवाह्यहम् ॥२४॥ तस्मादर्धंगृहाणत्वंस्त्रीपुंसोर्यावदिच्छसि ॥ तदद्भुततरंश्रुत्वा देव्यावरमनुत्तमम् ॥ २५ ॥ संप्रहृष्टमनाभूत्वाराजावाक्यमथाब्रवीत् ॥ यदिदेविप्रसन्नामेरूपेणाप्रतिमाभुवि ॥२६॥ मासंस्त्रीत्वमुपासित्वामासं स्यांपुरुषःपुनः ॥ ईप्सितंतस्यविज्ञायदेवीसुरुचिरानना ॥ २७ ॥ प्रत्युवाचशुभंवाक्यमेवमेवभविष्यति ॥ राजन्पुरुषभूतस्त्वंस्त्रीभावंनस्मरिष्यसि ॥ २८ ॥ स्त्रीभूतश्चपरंमासंनस्मरिष्यसिपौरुषम् ॥ एवंसराजापुरुषोमासंभूत्वाथकार्दमिः ॥ २९ ॥ त्रैलोक्यसुंदरीनारीमासमेकमिलाभवत् ॥ ३० ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे सप्ताशीतितमःसर्गः ॥८७॥ तांकथामैलसंबद्धांरामेणसमुदीरिताम्॥ लक्ष्मणोभरतश्चैवश्रुत्वापरमविस्मितौ ॥ १ ॥ तौरामंप्रांजलीभूत्वातस्यराज्ञोमहात्मनः ॥ विस्तरंतस्यभावस्यतदापप्रच्छतुःपुनः ॥ २ ॥ कथंसराजास्त्रीभूतोवर्तयामासदुर्गतिः ॥ पुरुषःसयदाभूतःकांवृत्तिंवर्तयत्यसौ ॥३॥ तयोस्तद्भाषितंश्रुत्वाकौतूहलसमन्वितम्॥ कथयामासकाकुत्स्थस्तस्यराज्ञोयथागमम् ॥ ४ ॥ तमेवप्रथमंमासंस्त्रीभूत्वालोकसुंदरी ॥ ताभिःपरिवृतास्त्रीभिर्येऽस्यपूर्वंपदानुगाः ॥ ५ ॥

रहेगा, इस प्रकारसे कर्दमके पुत्र एक मासतक स्त्री और एक मासतक पुरुष रहते थे ॥ २९ ॥ स्त्रीभावमें इला नाम रहता था जो त्रिलोकीमें महासुन्दरी विख्यात हुई और पुरुषभावमें इल नाम रहा ॥ ३० ॥ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषाटीकायां सप्ताशीतितमः सर्गः ॥ ८७ ॥ ॥ रामचन्द्रके मुखसे इल सम्बन्धी कथा सुनकर भरत और लक्ष्मण अत्यन्त आश्चर्यको प्राप्त हुए ॥ १ ॥ वे दोनों हाथ जोडकर रघुनाथजीसे उस महात्मा राजाकी कथा विस्तारपूर्वक सुननेकी इच्छा कर कहने लगे ॥ २ ॥ जिससमय वह राजा दुर्गतिसे स्त्री होताथा तो क्या करता था और पुरुष होकर क्या करता था यह सब सुनाइये ॥ ३ ॥ भरत और लक्ष्मणके इसप्रकार कौतूहलके वचन सुनकर रामचन्द्र उस राजाका चरित्र वर्णन करने लगे ॥ ४ ॥ पहले मासमें वह

लोकसुन्दरी स्त्री होकर उन अपने सेनाके लोगोंके संग जो कि, वहभी सब स्त्री थीं ॥ ५ ॥ उस वनमें (वह लोकसुन्दरी) विचरने लगी वह कमलकी समान नेत्र वाली पैरों पैरों वृक्ष और गुँल्मलताओंसे परिपूर्ण उस वनमें ॥ ६ ॥ सम्पूर्ण वाहनोंको त्यागकर उस पर्वतकी गुफाओंमें इला इच्छासे विचरण करने लगी ॥ ७ ॥ पर्वतके निकटही उस वनमें अनेक प्रकारके मृग पक्षियोंसे युक्त एक सरोवर था ॥ ८ ॥ उस ❀ सरोवरके निकट पूर्णिमाके चन्द्रमाकी समान प्रकाशमान चन्द्रपुत्र बुधको इलाने देखा ॥ ९ ॥ वह जलमें खडेहुए कठिन तपस्या करतेथे, जो यश और कामनाओंके दाता कृपासागर आदि गुणोंसे युक्त थे ॥ १० ॥ हे लक्ष्मण ! उस इलाने अपने स्त्रीरूप साथियोंके साथ जाकर विस्मित हो उस सरोवरको क्षुभित किया ॥ ११ ॥ उस इलाको देख बुध काम

तत्काननंविगाह्याशुविजहेलोकसुंदरी॥द्रुमगुल्मलताकीर्णंपद्भ्यांपद्मदलेक्षणा॥६॥वाहनानिचसर्वाणिसंत्यक्त्वावैसमंततः॥पर्वताभोगविवरेतस्मिन्नेमेइलातदा ॥७॥ अथतस्मिन्वनोद्देशेपर्वतस्याविदूरतः ॥ सरःसुरुचिरप्रख्यंनानापक्षिगणायुतम् ॥८॥ ददर्शसाइलातस्मिन्बुधंसोमसुतंतदा॥ ज्वलंतंस्वेनवपुषापूर्णंसोममिवोदितम्॥९॥तपंतंचतपस्तीव्रमंभोमध्येदुरासदम्॥यशस्करंकामकरंकारुण्येपर्यवस्थितम्॥१०॥ सातंजलाशयंसर्वं क्षोभयामासविस्मिता॥सहतैःपूर्वपुरुषैःस्त्रीभूतैरघुनंदन॥११॥बुधस्तुतांसमीक्ष्यैवकामबाणवशंगतः॥नोपलेभेतदात्मानंसचचालतदांभसि॥१२॥ इलांनिरीक्षमाणस्तुत्रैलोक्यादधिकांशुभाम् ॥ चिंतांसमभ्यतिक्रामत्कान्वियंदेवताधिका ॥१३॥ नदेवीषुननागीषुनासुरीष्वप्सरस्सुच॥दृष्टपूर्वा मयाकाचिद्रूपेणानेनशोभिता ॥ १४ ॥ सदृशीयंममभवेद्यदिनान्यपरिग्रहः ॥ इतिबुद्धिंसमास्थायजलात्कूलमुपागमत् ॥१५॥ आश्रमंसमुपागम्यततस्ताःप्रमदोत्तमाः ॥ शब्दापयतधर्मात्माताश्चैनंचववंदिरे ॥ १६ ॥ सताःपप्रच्छधर्मात्माकस्यैषालोकसुंदरी ॥ किमर्थमागताचैवसर्वमाख्यातमाचिरम् ॥ १७ ॥

बाणसे पीडित हुए और अपनेको न सँभालके जलमें चलायमान होगये ॥१२॥ त्रिलोकीमें अधिक सुन्दर उसका रूप देखकर बुधजी विचार करने लगे कि, यह देवताओंसेभी अधिक रूपवान् कौन स्त्री है ॥ १३ ॥ ऐसा रूप तो देवी नागोंकी स्त्री असुरी अप्सराओंमेंभी हमने कभी नहीं देखा ॥ १४ ॥ यदि इसका विवाह नहीं हुआ हो तो यह मेरे योग्य है यह विचारकर बुधजी जलसे किनारेपर आये ॥ १५ ॥ और अपने आश्रमपर आकर उन्होंने उन श्रेष्ठ स्त्रियोंको पुकारा और उन सबने आनकर इन्हें प्रणाम किया ॥ १६ ॥ उनसे धर्मात्मा बुध प्रश्न करने लगे कि, लोकसुन्दरी किसकी स्त्री है और यहां यह किस निमित्त आई हमसे यह

❀ जिस वनमें बुध तपस्या करतेथे यह वह स्थानसे थोडीदूर था इससे यह स्त्री न हुए थे ॥

॥ १८ ॥ यह हमारी स्वामिनी है; इसका को

नहीं है हमारे साथ वनमें विचरती रहती है॥ १९ ॥ उन स्त्रियोंके ऐसे स्वच्छ वचन सुनकर बुधजीने अपनी आवर्तिनी (आकर्षण) विद्याका स्मरण किया ॥
गके द्वारा राजाका सम्पूर्ण वृत्तान्त जानकर बुधजी उन सब स्त्रीजनोंसे कहने लगे ॥ २१ ॥ तुम सब किम्पुरुषी होकर इस पर्वतके स्थानमें वास करे
यहांही आने रहनेके स्थान निर्माण करलो ॥२२॥ मूल पत्र फल भोजन करके अपने स्थानोंमें रहो तुम सब अपने किम्पुरुषनामक पतियोंको प्राप्त होजाउ
॥ २३ ॥ यह सब स्त्रियें यह सुनकर कि, बुधने हमको किम्पुरुषी (देवयोनि विशेष) बना दिया, तब वे पर्वतमें वास करने लगीं ॥ २४ ॥ ॥

शुभंतुनस्यतद्वाक्यंमधुरंमधुराक्षरम् ॥ श्रुत्वास्त्रियश्चताःसर्वाऊचुर्मधुरयागिरा ॥ १८ ॥ अस्माकमेषासुश्रोणीप्रभुत्वेवर्ततेसदा ॥ अप
काननांतेषुसहास्माभिश्चरत्यसौ ॥ १९ ॥ तद्वाक्यमव्यक्तपदंतासांस्त्रीणांनिशम्यच ॥ विद्यामावर्तनींपुण्यामावर्तयतिसद्द्विजः ॥ २
मोर्थंविदित्वासफलंतस्यराज्ञोयथातथा ॥ सर्वाएवस्त्रियस्ताश्चबभाषेमुनिपुंगवः ॥ २१ ॥ अत्रकिंपुरुषीर्भूत्वाशैलरोधसिवत्स्यथ ॥ आवार
गिरावस्मिञ्छीघ्रमेवविधीयताम् ॥ २२ ॥ मूलपत्रफलैःसर्वावर्तयिष्यथनित्यदा ॥ स्त्रियःकिंपुरुषान्नामभर्तॄन्समुपलप्स्यथ ॥ २३ ॥ ताः
सोमपुत्रस्यस्त्रियःकिंपुरुषीकृताः ॥ उपासांचक्रिरेशैलंवध्वस्तावहुलास्तदा ॥ २४ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तर
ऽष्टाशीतितमः सर्गः ॥ ८८ ॥ श्रुत्वाकिंपुरुषोत्पत्तिंलक्ष्मणोभरतस्तथा ॥ आश्चर्यमितिचाब्रूतामुभौरामंजनेश्वरम् ॥ १ ॥ अथरामः
महायशाः ॥ कथयामासधर्मात्माप्रजापतिसुतस्यवै ॥ २ ॥ सर्वास्ताविद्रुताद्दृष्ट्वाकिन्नरीर्ऋषिसत्तमः ॥ उवाचरूपसंपन्नांतांस्त्रि
मस्मि ॥३॥ सोमस्याहंसुदयितःसुतःसुरुचिरानने ॥ भजस्वमांवरारोहेभक्त्यास्निग्धेनचक्षुषा ॥ ४ ॥ तस्यतद्वचनंश्रुत्वाशून्येस्वजनवर्जि
स्यागुरुनिग्रहंत्यंप्रत्युवाचमहाप्रभम् ॥ ५ ॥ अहंकामचरीसौम्यतवास्मिवशवर्तिनी ॥ प्रशाधिमांसोमसुतयथेच्छसितथाकुरु ॥ ६ ॥

श्रीमद्वा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषाटीकायामष्टाशीतितमः सर्गः ॥ ८८ ॥ इसप्रकार किम्पुरुषकी उत्पत्ति श्रवणकर भरत और लक्ष्मण रामचन्द्रसे
कहे कि, यह बडे आश्चर्यकी कथा है ॥१॥ उनके अभिप्रायको जान महायशस्वी रघुनाथजी फिर धर्मात्मा प्रजापतिके पुत्रकी कथा कहनेलगे॥ २॥उन सब स्त्रि
वियोंको विचरण करती देख ऋषि रूपयौवनसम्पन्न उन स्त्रीसे हँसतेहुए बोले॥ ३॥हे सुन्दर मुखवाली हे वरानने ! मैं चन्द्रमाका पुत्रहूं, तुम हमारी ओर कृपादृष्टिसे
और हमें भजो ॥ ४ ॥ उस जनशून्य देशमें इला उनके ऐसे मनोहर वचन श्रवण कर उन महाकान्तिमान् बुधसे कहने लगी ॥ ५॥ हे सौम्य ! मैं स्वतंत्र तुम्हा-

तुम्हारे वशमें हूं हे चंद्रपुत्र ! हमें शिक्षा कीजिये; जो आपकी इच्छा हो सो करो॥६॥उसके यह अद्भुत वचन सुन बुध बहुत प्रसन्न हुए, और वह चन्द्रमाके पुत्र उसके संग विहार करने लगे ॥७॥ कामासक्त बुधको विहार करते२ चैत्रका महीना क्षणमात्रमें वीतगया ॥ ८ ॥ एक मास पूर्ण होनेपर चन्द्रमाकी समान मुखवाले श्रीमान् प्रजापतिके पुत्र इल शयनसे उठकर ॥ ९ ॥ देखने लगे कि, चन्द्रमाके पुत्र सरोवर में ऊपरको बाहें उठाये निरालम्ब तपस्या कर रहे हैं राजा उनसे कहने लगे ॥ १० ॥ हे भगवन् ! मैं इस पर्वतदुर्गमें अपनी सेनासहित आयाथा परन्तु यहां उनमेंसे किसीको नहीं देखता वह हमारे साथी कहां गये ॥ ११ ॥ उन राजर्षिके कि, जिनको अपने स्त्रीभावका स्मरण नहीं है वचन सुनकर बुध समझाते हुए सुन्दर वाणीसे बोले ॥ १२ ॥ बडी पत्थरोंकी वर्षासे आपके भृत्य मृतक होगये, परन्तु

तस्यास्तदद्भुतप्रख्यंश्रुत्वाहर्षमुपागतः ॥ सवैकामीसहतयारेमेचंद्रमसःसुतः ॥ ७ ॥ बुधस्यमाधवोमासस्तामिलांरुचिराननाम् ॥ गतोरमयतोत्यर्थंक्षणवत्तस्यकामिनः ॥८॥ अथमासेतुसंपूर्णेपूर्णेंदुसदृशाननः ॥ प्रजापतिसुतःश्रीमाञ्छयनेप्रत्यबुध्यत ॥९॥ सोपश्यत्सोमजंतत्रतपंतंसलिलाशये ॥ ऊर्ध्वबाहुंनिरालंबंतंराजाप्रत्यभाषत ॥ १० ॥ भगवन्पर्वतंदुर्गंप्रविष्टोस्मिसहानुगः ॥ नचपश्यामितत्सैन्यंक्वनुतेमामकागताः ॥११॥ तच्छ्रुत्वातस्यराजर्षेर्नष्टसंज्ञस्यभाषितम् ॥ प्रत्युवाचशुभंवाक्यंसांत्वयन्परयागिरा ॥१२॥ अश्मवर्षेणमहताभृत्यास्तेविनिपातिताः ॥ त्वंचाश्रमपदेसुप्तोवातवर्षभयार्दितः ॥ १३ ॥ समाश्वसिहिभद्रंतेनिर्भयोविगतज्वरः ॥ फलमूलाशनोवीरनिवसेहयथासुखम् ॥ १४ ॥ सराजातेनवाक्येन प्रत्याश्वस्तोमहामतिः ॥ प्रत्युवाचशुभंवाक्यंदीनोभृत्यजनक्षयात् ॥१५॥ त्यक्ष्याम्यहंस्वकंराज्यंनाहंभृत्यैर्विनाकृतः॥वर्तयेयंक्षणंब्रह्मन्समनुज्ञातुमर्हसि ॥१६॥ सुतोधर्मपरोब्रह्मञ्ज्येष्ठोममहायशाः ॥ शशबिंदुरितिख्यातःसमेराज्यंप्रपत्स्यते ॥१७॥ नहिशक्ष्याम्यहंहित्वाभृत्यदारान्सुखान्वितान् ॥ प्रतिवक्तुंमहातेजाःकिंचिदप्यशुभंवचः ॥ १८ ॥ तथाब्रुवतिराजेंद्रेबुधःपरममद्भुतम् ॥ सांत्वपूर्वमथोवाचवासस्तइहरोचताम् ॥ १९ ॥

तुम महापवनसे व्याकुलहो हमारे आश्रममें सोनेसे बचे ॥ १३ ॥ हे वीर ! आप सावधान हूजिये और सुखपूर्वक कंद मूल भोजन करते हमारे आश्रममें वास करो॥ ॥ १४ ॥ राजा अपने भृत्योंका नाश सुनकर महादुःखी हुए परन्तु बुधके वाक्योंसे सावधान होकर कहनेलगे ॥ १५ ॥ हे ब्रह्मन् ! मैं भृत्योंके नाश होनेसे राज्य छोडदूंगा कारण कि, उनके विना मैं क्षणमात्र नहीं रहसक्ता आप मुझे जानेकी आज्ञा दीजिये ॥ १६ ॥ हे ब्रह्मन् ! मेरा महायशस्वी धर्मात्मा शशबिंदु नामक ज्येष्ठ पुत्र राज्य करेगा ॥ १७ ॥ परंतु मैं अपने भृत्य स्त्री जो कि सुखसे देशमें वसतेहैं, उन्हें छोडकर यहाँ नहीं रहसक्ता हे तेजस्वी ! आप हमसे यहां रहनेके निमित्त अशुभ वचन न कहिये ॥ १८ ॥ राजाके यह वचन श्रवणकर बुधजी समझातेहुए बोले, कि तुम कुछ काल पर्यंत यहां रहो हम तुम्हारा अभीष्ट सिद्ध करेंगे ॥

धर्मराजकी आलोचना करते ॥ २२ ॥ इस प्रकार रहते ९ जब भी मास बीत गये [illegible]
शोभन नितम्बवालीने पुत्र उत्पन्न होतेही उसे वृद्धिको प्राप्त हुआ देखकर [illegible]

॥ १९ ॥ हे महाबली ! कर्दमपुत्र ! आप संताप मत करो, एक वर्ष यहां रहोगे तो हम तुम्हारे मनोरथ पूर्ण करेंगे ॥ २० ॥ उन सरलकर्मा बुधके यह वचन श्रवण
कर ब्रह्मवादी ऋषिके कहने उपरान्त राजा रहनेको सम्मत हुए ॥ २१ ॥ वह एक मास स्त्री होकर बुधके साथ विहार करते और पुरुष होकर एक मासतक
धर्मशास्त्रकी आलोचना करते ॥ २२ ॥ इस प्रकार रहते २ जब नौ मास बीत गये बुधसे सुश्रोणी इलाने पुरूरवा नाम ❀ पुत्रको उत्पन्न किया ॥ २३ ॥ उस
शोभन नितम्बवालीने पुत्र उत्पन्न होतेही उसे वृद्धिको प्राप्त हुआ देखकर उपनयनादि कर्मके निमित्त उसके पिताको सौंप दिया, इलाके पुत्रका बुधकी समान वर्ण
और पराक्रम था ॥ २४ ॥ एक वर्षतक बुधजी जब २ वह राजा पुरुष होता तबतक उसके साथ अनेक कथा वार्ता कह उसका चित्त प्रसन्न करते रहे ॥ २५ ॥

नसंतापस्त्वयाकार्यःकार्दमेयमहाबल ॥ संवत्सरोपितस्याद्यकारयिष्यामितेहितम् ॥ २० ॥ तस्यतद्वचनंश्रुत्वाबुधस्याक्लिष्टकर्मणः ॥ वासाय
विदधेबुद्धिंयदुक्तंब्रह्मवादिना ॥ २१ ॥ मासंसस्त्रीतदाभूत्वारमयत्यनिशंसदा ॥ मासंपुरुषभावेनधर्मबुद्धिंचकारसः ॥ २२ ॥ ततःसानवमेमासि
इलासोमसुतात्सुतम् ॥ जनयामाससुश्रोणीपुरूरवसमूर्जितम् ॥ २३ ॥ जातमात्रेतुसुश्रोणीपितुर्हस्तेन्यवेशयत् ॥ बुधस्यसमवर्णंचइलापुत्रं
महाबलम् ॥ २४ ॥ बुधस्तुपुरुषीभूतंसवैसंवत्सरांतरम् ॥ कथाभीरमयामासधर्मयुक्त्याभिरात्मवान् ॥ २५ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मी
कीय आदिकाव्य उत्तरकांड एकोननवतितमःसर्गः ॥ ८९ ॥ तथोक्तवतिरामेतुतस्यजन्मतदद्भुतम् ॥ उवाचलक्ष्मणोभूयोभवतश्चमहायशाः ॥
॥ १ ॥ इलासासोमपुत्रस्यसंवत्सरमथोपिता ॥ अकरोत्किंनरश्रेष्ठतत्त्वंशंसितुमर्हसि ॥२॥ तयोस्तद्वाक्यमाधुर्यंनिशम्यपरिपृच्छतोः ॥ रामः
पुनरुवाचेदंप्रजापतिसुतेकथाम् ॥ ३ ॥ पुरुषत्वंगतेशूरेबुधःपरमबुद्धिमान् ॥ संवर्तंपरमोदारमाजुहावमहायशाः ॥ ४ ॥

इत्यार्षे श्रीमद्रा०वाल्मी०आदि०उत्तरकांडे भाषाटीकायामेकोननवतितमः सर्गः॥८९॥ रामचन्द्रके ऐसा कहनेपर और पुरूरवाका अद्भुत जन्मचरित्र श्रवणकर लक्ष्मण
और भरतजी महायशस्वी रामचन्द्रसे फिर कहने लगे ॥ १ ॥ हे भगवन् ! इलाने चन्द्रपुत्र बुधके स्थानपर एक वर्ष रहकर और क्या क्या किया सो आप श्रवण
कराइये ॥ २ ॥ भरत लक्ष्मणके मधुर वचन सुनकर रामचन्द्र फिर प्रजापतिके पुत्रकी कथा कहने लगे ॥ ३ ॥ जब बारहवें मासमें महाबली राजा फिर पुरुष

❀ यदि नवमासगर्भ रहकर पुरूरवाकी उत्पत्ति हुई तोभी दोप नहीं कारण कि पार्वतीके वरसे गर्भादिक चिह्नको राजा भूलजाताथा अथवा नवमें मासमें गर्भ रहा और तत्काल पुत्रकी उत्पत्ति हुई यहभी-
संभव है क्योंकि वह पुत्र उत्पन्न होतेही वृद्धिको प्राप्त होगया ॥

हुए तब बुधने महायशस्वी संवर्त ॥ ४ ॥ भृगुपुत्र च्यवन आरिष्टनेमि प्रमोदन मोदकर दुर्वासा इन सब मुनियोंको बुलाया ॥ ५ ॥ वाक्य जाननेवाले तत्त्वदर्शी बुधने इन सब मुनियोंको बुलाकर उन' अपने मित्रोंसे धीरतासहित वचन कहे ॥ ६ ॥ यह महाबाहु इल राजा कर्दमके पुत्रहैं आप जानतेहीहैं कि, शिवजीके वनमें प्रवेश करनेके कारण एक महीने स्त्री एक मास पुरुष होजातेहैं, सो वह आप कीजिये जिसमें इनका कल्याण होय ॥ ७ ॥ इसप्रकार यह वार्ता करतेही थे।कि, महातेजस्वी महात्मा कर्दमजी बहुतसे मुनियोंको साथ लिये वहां आये ॥ ८ ॥ पुलस्त्य, क्रतु, वषट्कार ॐकार यहभी सब महातेजस्वी उस आश्रममें आये ॥ ९ ॥ वह सब एक दूसरेको देख प्रसन्न हो मिलकर बाह्लेश्वर राजाके उद्धारके निमित्त पृथक् २ वचन कहने लगे ॥ १० ॥ तब

च्यवनंभृगुपुत्रंचमुनिंचारिष्टनेमिनम् ॥ प्रमोदनंमोदकरंततोदुर्वाससंमुनिम् ॥ ५ ॥ एतान्सर्वान्समानीयवाक्यज्ञस्तत्त्वदर्शनः ॥ उवाचसर्वान्सुहृदोधैर्येणसुसमाहितान् ॥ ६ ॥ अयंराजामहाबाहुःकर्दमस्यइलःसुतः ॥ जानीतैनंयथाभूतंश्रेयोह्यत्रविधीयताम् ॥ ७ ॥ तेषांसंवदतामेवंद्विजैःसहमहात्मभिः ॥ कर्दमस्तुमहातेजास्तदाश्रमसुपागमत् ॥ ८ ॥ पुलस्त्यश्चक्रतुश्चैववषट्कारस्तथैवच ॥ ओंकारश्चमहातेजास्तमाश्रमसुपागमन् ॥ ९ ॥ तेसर्वेहृष्टमनसःपरस्परसमागमे ॥ हितैपिणोबाह्लिपतेःपृथग्वाक्यान्यथाब्रुवन् ॥ १० ॥ कर्दमस्त्वब्रवीद्वाक्यंसुतार्थंपरमंहितम् ॥ द्विजाःशृणुतमद्वाक्यंयच्छ्रेयःपार्थिवस्यहि ॥ ११ ॥ नान्यंपश्यामिभैषज्यमंतरावृषभध्वजम् ॥ नाश्वमेधात्परोयज्ञःप्रियश्चैवमहात्मनः ॥ १२ ॥ तस्माद्यजामहेसर्वेपार्थिवार्थेदुरासदम् ॥ कर्दमेनैवमुक्तास्तुसर्वएवद्विजर्षभाः ॥ १३ ॥ रोचयंतिस्मतंयज्ञंरुद्रस्याराधनंप्रति ॥ संवर्तस्यतुराजर्षिःशिष्यःपरपुरंजयः ॥ १४ ॥ मरुत्तइतिविख्यातस्तंयज्ञंसमुपाहरत् ॥ ततोयज्ञोमहानासीद्बुधाश्रमसमीपतः ॥ १५ ॥

कर्दमजी अपने पुत्रके हितकारक वचन कहने लगे हे ब्राह्मण ! हमारे वाक्य सुनो, जिससे इस राजाका हित होगा ॥ ११ ॥ शिवजीको छोडकर हम देखते हैं कि, इसकी और औषधि नहीं है और शिवजीको अश्वमेध यज्ञसे प्यारा और कोई यज्ञ नहीं है ॥ १२ ॥ इस कारण इस राजाके हित और शिवजीके प्रसन्न करनेके निमित्त हमको अश्वमेध करना उचितहै कर्दमके यह वचन सुन वे सब ब्राह्मणश्रेष्ठ ॥ १३ ॥ शिवजीकी प्रसन्नताके अर्थ उस यज्ञकोही अच्छा मानते हुए, और विचार कर बोले कि, संवर्त ऋषिके शिष्य शत्रुतापन मरुत्तने ॥ १४ ॥ जो यज्ञ कियाथा उस अश्वमेध यज्ञकी सामग्री उस स्थानपर बहुत विद्यमानहै वह लाई जाय, तैसा अनुष्ठानकर ऋषियोंने बुधके आश्रमके निकटही महान् अश्वमेध यज्ञका प्रारंभ

जब शंकरने ऐसा कहा तौ हे ब्राह्मण सावधानतासे ॥ १८ ॥ शिवजीको प्रसन्नकर यही वर [illegible] ... प्रसन्नहो इलको सब कालका पुरुषत्व प्रदान किया ॥ १९ ॥ इलको यह वर दे शिवजी अन्तर्धान हुए जब शिव अन्तर्हित हुए और अश्वमेध समाप्त [illegible] तब वह ज्ञानी मुनि अपने २ [illegible]

किया ॥ १५ ॥ इस यज्ञमें महायशस्वी शंकर बहुतही प्रसन्न हुए, और यज्ञके समाप्त होनेपर बडी प्रसन्नतासे ॥ १६ ॥ इलके निकटही शिवजी सब ब्राह्मणोंसे बोले हे ब्राह्मणो ! तुम्हारी भक्ति और इस अश्वमेध यज्ञसे मैं प्रसन्न हुआ हूं ॥ १७ ॥ इस बाह्लदेशके राजाका कौनसा प्रिय कार्य करें, जब शंकरने ऐसा कहा तो वे ब्राह्मण सावधानतासे ॥१८॥ शिवजीको प्रसन्नकर यही वर माँगनेलगे कि इलको सदैव कालका पुरुषत्व प्रदान कीजिये तब शिवजीने प्रसन्नहो इलको सब कालका पुरुषत्व प्रदान किया ॥१९॥ इलको यह वर दे शिवजी अन्तर्धान हुए जब शिव अन्तर्हित हुए और अश्वमेध समाप्त हुआ ॥२०॥ तब वह ज्ञानी मुनि अपने २ आश्रमोंको चलेगये राजाभी उस बाह्लिदेशको छोडकर सुन्दर मध्यदेशमें ॥ २१ ॥ प्रतिष्ठानपुर बसाता हुआ जो बडा विख्यात हुआ

रुद्रश्चपरमंतोषमाजगाममहायशाः ॥ अथयज्ञेसमाप्तेतुप्रीतःपरमयामुदा ॥ १६ ॥ उमापतिर्द्विजान्सर्वानुवाचइलसन्निधौ ॥ प्रीतोस्मिहयमेधेन भक्त्याचद्विजसत्तमाः ॥ १७ ॥ अस्यबाह्लिपतेश्चैवकिंकरोमिप्रियंशुभम् ॥ तथावदतिदेवेशेद्विजास्तेसुसमाहिताः ॥ १८ ॥ प्रसादयंतिदेवेशंयथास्यात्पुरुषस्त्विला ॥ ततःप्रीतोमहादेवःपुरुषत्वंददौपुनः ॥१९॥ इलायैसुमहातेजादत्त्वाचांतरधीयत ॥ निवृत्तेहयमेधेचगतेचादर्शनंहरे ॥ २० ॥ यथागतंद्विजाःसर्वेतेऽगच्छन्दीर्घदर्शिनः ॥ राजातुबाह्लिमुत्सृज्यमध्यदेशेह्यनुत्तमम् ॥ २१ ॥ निवेशयामासपुरंप्रतिष्ठानंयशस्करम् ॥ शशबिंदुश्चराजर्षिर्बाह्लिंपरपुरंजयः ॥ २२ ॥ प्रतिष्ठानेइलोराजाप्रजापतिसुतोबली ॥ सकालेप्राप्तवाँल्लोकमिलोब्राह्ममनुत्तमम् ॥२३॥ ऐलःपुरूरवाराजाप्रतिष्ठानमवाप्तवान् ॥ ईदृशोह्यश्वमेधस्यप्रभावःपुरुषर्षभ ॥२४॥ स्त्रीपूर्वःपौरुषंलेभेयच्चान्यदपिदुर्लभम् ॥२५॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे नवतितमः सर्गः ॥९०॥ एतदाख्यायकाकुत्स्थोभ्रातृभ्याममितप्रभः ॥ लक्ष्मणंपुनरेवाहधर्मयुक्तमिदंवचः ॥ १ ॥ वसिष्ठंवामदेवंचजाबालिमथकश्यपम् ॥ द्विजांश्चसर्वप्रवरानश्वमेधपुरस्कृतान् ॥ २ ॥

और बाह्लदेशका राज्य शशिबिंदु उसका ज्येष्ठ पुत्र करने लगा जोबडा प्रतापी शत्रुका मारनेवाला था ॥२२॥ प्रजापतिके पुत्र महाबलवान् इल राजा * प्रतिष्ठानपुरमें बहुत कालतक राज्यकर अन्तमें ब्रह्मलोकको गये ॥ २३ ॥ इलसे उत्पन्न हुए पुरूरवाजी प्रतिष्ठानपुरके राजा हुए हे पुरुषश्रेष्ठ ! अश्वमेध यज्ञका ऐसा प्रभावहै ॥२४॥ जो स्त्रीत्व त्यागकर राजाने इसीके अनुष्ठानसे सदाकेलिये पुरुषत्व पाया ॥२५॥ इत्यार्षे श्रीमद्वा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषाटीकायां नवतितमः सर्गः ॥९०॥ अमितप्रभावी रामचन्द्र भाइओंसे ऐसा कहकर फिर लक्ष्मणजीसे धर्मपूर्वक यह वचन बोले ॥ १ ॥ कि अश्वमेध यज्ञ करानेवाले वसिष्ठ वामदेव जाबालि

* प्रतिष्ठानपुरको इलाबाद [illegible] कहते हैं जो गंगापार प्रयागराजके सन्मुख विद्यमान है।

रूपवादन श्रेष्ठ ब्राह्मणोंको बुलाओ ॥ २ ॥ इन सबके साथ सम्मत करके सावधान चित्तहो सम्पूर्ण लक्षणसम्पन्न घोडा छोडेंगे ॥ ३ ॥ यह वचन सुनकर शीघ्रतासे लक्ष्मणजी उन सब ब्राह्मणोंको बुलाकर लाये और रघुनाथजीसे निवेदन किया ॥ ४ ॥ वे सब ब्राह्मण देवताकी समान रघुनाथजीको प्रणामकरते देखकर आशीर्वाद देने लगे ॥ ५ ॥ तब रघुनाथजी उन श्रेष्ठ ब्राह्मणोंको प्रणामकर अश्वमेध यज्ञके सम्बन्धमें धर्मसंयुक्त वचन कहने लगे ॥ ६ ॥ वे ऋषि रघुनाथजीके वचन सुन शिरजीको नमस्कार कर सब ब्रह्मवादी ऋषि अश्वमेध यज्ञकी बडाई करने लगे ॥ ७ ॥ रघुनाथजी उन श्रेष्ठ ब्राह्मणोंके वचन अश्वमेधकी प्रशंसामें सुन बहुत प्रसन्न हुए ॥ ८ ॥ ब्राह्मणोंको अश्वमेध यज्ञ करनेमें प्रवृत्ति देखकर रामचन्द्रजी लक्ष्मणजीसे बोले हे महाबाहो! सुग्रीवजीके बुलानेको दूत भेजो ॥ ९ ॥ जो वह

एतान्सर्वान्समानीयमंत्रयित्वाचलक्ष्मणः ॥ हयंलक्षणसंपन्नंविमोक्ष्यामिसमाधिना॥३॥ तद्वाक्यंराघवेणोक्तंश्रुत्वात्वरितविक्रमः ॥ द्विजान्सर्वान्समाहूयदर्शयामासराघवम् ॥ ४ ॥ तेदृष्ट्वादेवसंकाशंकृतपादाभिवंदनम् ॥ राघवंसुदुराधर्षमाशीर्भिःसमपूजयन् ॥५॥ प्रांजलिःसतदाभूत्वाराघवोद्विजसत्तमान् ॥ उवाचधर्मसंयुक्तमश्वमेधाश्रितंवचः ॥ ६ ॥ तेपिरामस्यतच्छ्रुत्वानमस्कृत्वावृषध्वजम् ॥ अश्वमेधंद्विजाःसर्वेपूजयंतिस्मसर्वशः ॥ ७ ॥ सतेषांद्विजमुख्यानांवाक्यमद्भुतदर्शनम् ॥ अश्वमेधाश्रितंश्रुत्वाभृशंप्रीतोभवत्तदा ॥ ८ ॥ विज्ञायकर्मतत्तेषांरामोलक्ष्मणमब्रवीत् ॥ प्रेषयस्वमहाबाहोसुग्रीवायमहात्मने ॥९॥ यथामहद्भिर्हरिभिर्बहुभिश्चवनौकसाम् ॥ सार्धमागच्छभद्रंतेअनुभोक्तुंमहोत्सवम् ॥१०॥ विभीषणश्चरक्षोभिःकामगैर्बहुभिर्वृतः ॥ अश्वमेधंमहायज्ञमायात्वतुलविक्रमः ॥११॥ राजानश्चमहाभागायेमेप्रियचिकीर्षवः॥सानुगाःक्षिप्रमायांतुयज्ञभूमिनिरीक्षकाः ॥ १२ ॥ देशांतरगतायेचद्विजाधर्मसमाहिताः ॥ आमंत्रयस्वतान्सर्वानश्वमेधायलक्ष्मण ॥ १३ ॥ ऋषयश्चमहाबाहोआहूयंतांतपोधनाः ॥ देशांतरगताःसर्वेसदाराश्चद्विजातयः ॥ १४ ॥ तथैवतालावचरास्तथैवनटनर्तकाः ॥ यज्ञवाटश्चसुमहान्गोमत्यानैमिषेवने ॥ ॥ १५ ॥ आज्ञाप्यतांमहाबाहोतद्धिपुण्यमनुत्तमम् ॥ शांतयश्चमहाबाहोप्रवर्ततांसमंततः ॥ १६ ॥

सम्पूर्ण वानर और वनवासियोंके साथ इस महोत्सव देखनेके निमित्त आवें ॥१०॥ और अतुलविक्रम विभीषणको लिख भेजो कि, इच्छाचारी राक्षसोंके साथ अश्वमेध महायज्ञ देखनेको आवें ॥ ११ ॥ और जो महाभाग हमारे हितकारी राजा हैं वे अपने साथियों सहित यज्ञभूमि देखनेको आवें ॥ १२ ॥ जो ब्राह्मण देशांतरोंमें जाके धर्ममें सावधान रहतेहैं, उन सबको बुलावा भेज दो ॥ १३ ॥ हे लक्ष्मण ! ऋषि और तपस्वियोंको बुलाओ और देशांतरोंसे स्त्रीसहित ब्राह्मणोंको बुलाओ ॥ १४ ॥ इसी प्रकार अनेक गाने बजानेवाले नर्तकोंको बुलाओ और गोमतीनदी के किनारे नैमिषारण्यमें यज्ञभूमि निर्माण कीजाय ॥१५॥ वह बडा पुण्यस्थान है

[illegible] बडे बहुत लाख बैलोंकी गाडीमें चावल भरकर वहां भेजे जावें, और दस सहस्र बैलोंकी गाडियोंमें तिल मूंग भर भरभी भेज दियेजावें ॥ [illegible] सार चना कुलथी उरद और लौन भेजा जाय, और इसीके अनुसार यथानुरूप [illegible] त तैल और सुगंधित द्रव्य [illegible]

वहांके ऋषियोंको निमंत्रण करो कि, वे सब प्रकारसे शान्तिपाठ करें ॥ १६ ॥ उन महात्माओंने नैमिषारण्यमें सहस्रों यज्ञ कियेहैं, हे लक्ष्मण ! इसकारण वे इस यज्ञकी विधिको सम्यक् प्रकारसे जानतेहैं ॥ १७ ॥ और ऐसा कोई दूत भेजा जाय जो दानमानसे संतुष्टहो, धर्मपूर्वक सबको निमंत्रण दे शीघ्र आवे ॥ १८ ॥ हे महाबली ! बडे हृष्टपुष्ट लक्ष बैलोंकी गाडीमें चावल भरकर वहां भेजे जायँ, और दश सहस्र बैलोंकी गाडियोंमें तिल मूंग भर अभी भेज दियेजायँ ॥ १९ ॥ और इसीके अनुसार चना कुलथी उरद और लोन भेजा जाय, और इसीके अनुसार यथानुरूप घृत तेल और सुगंधित द्रव्य भेजेजायँ ॥ २० ॥ और भरतजी सबसे आगे मात्र धानवामे चांदी सोनेकी करोडों मुद्रा लेकर जायँ ॥ २१ ॥ सब बाजार और व्यापारी नट नर्तक रसोइयें और रसोई बनानेवाली स्त्री तथा औरभी मंगल

शतशश्चापिधर्मज्ञाःक्रतुमुख्यमनुत्तमम् ॥ अनुभूयमहायज्ञंनैमिषेरघुनंदन ॥१७॥ तुष्टःपुष्टश्चसर्वांसोमानितश्चयथाविधि ॥ प्रतियास्यतिधर्मज्ञशीघ्रमामंत्र्यतांजनः ॥ १८ ॥ शतंवाहसहस्राणांतंडुलानांवपुष्मताम् ॥ अयुतंतिलमुद्गस्यप्रयात्वग्रेमहाबल ॥ १९ ॥ चणकानांकुलत्थानांमाषाणांलवणस्यच ॥ अतोनुरूपंस्नेहंचगंधंसंक्षिप्तमेवच ॥ २० ॥ सुवर्णकोटयोबहुलाहिरण्यस्यशतोत्तराः ॥ अग्रतोभरतःकृत्वागच्छत्वग्रेसमाधिना ॥ २१ ॥ अंतरापणवीथ्यश्चसर्वेचनटनर्तकाः ॥ सूदानार्यश्चबहवोनित्यंयौवनशालिनः ॥ २२ ॥ भरतेनतुसार्धंतेयांतुसैन्यानिचाग्रतः ॥ नैगमान्बालवृद्धांश्चद्विजांश्चसुसमाहिताः ॥ २३ ॥ कर्मांतिकान्वर्धकिनःकोशाध्यक्षांश्चनैगमान् ॥ ममममातृस्तथासर्वाःकुमारांतःपुराणिच ॥ २४ ॥ कांचनींममपत्नींचदीक्षायाज्ञांश्चकर्मणि ॥ अग्रतोभरतःकृत्वागच्छत्वग्रेमहायशाः ॥ २५ ॥ उपकार्यामहार्हांश्चपार्थिवानांमहौजसाम् ॥ सानुगानांनरश्रेष्ठव्यादिदेशमहाबलः ॥ २६ ॥ अन्नपानानिवस्त्राणिअनुगानांमहात्मनाम् ॥ भरतःसतदायातःशत्रुघ्नसहितस्तदा ॥ २७ ॥ वानराश्चमहात्मानःसुग्रीवसहितास्तदा ॥ विप्राणांप्रवराःसर्वेचक्रुश्चपरिवेषणम् ॥ २८ ॥

कारिणी स्त्रिया भी जायँ ॥ २२ ॥ शास्त्र जाननेवाले तथा बालक, बूढे और ब्राह्मण और सेना यह सब भरतजीके संग आगे २ जायँ ॥ २३ ॥ कार्याध्यक्ष, शास्त्र जाननेवाले, कोषाध्यक्ष, सेवक, कौशल्यादि सब हमारी माता और भरतादिकोंकी स्त्रियें ॥ २४ ॥ और दीक्षाकर्मके निमित्त सुवर्णकी हमारी पत्नीकोभी लेकर महायशस्वी भरतजी आगे २ जायँ ॥२५॥ बडे २ राजाओंके ठहरनेके निमित्त अनेक प्रकारके डेरे तम्बू भेजे जायँ और सेवकोंके रहनेके निमित्तभी रावटी आदि जायँ, इस प्रकार महाबली रघुनाथजीने आज्ञादी ॥२६॥ इस प्रकार भरतजी शत्रुघ्नजीके सहित अन्न पान वस्त्र और नौकरोंको लेकर चले॥२७॥ उस समय सुग्रीवके

सहित महात्मा वानरगण समाचार सुनतेही आये और बडे २ ब्राह्मणोंकी सेवामें रहे ॥ २८ ॥ विभीषणजीभी निमंत्रण पातेही राक्षस और राक्षसियोंको साथ लेकर आये और बडे तपस्वी महात्मा ऋषियोंकी पूजा करनेलगे ॥२९॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषाटीकायामेकनवतितमः सर्गः ॥९१॥ इस प्रकार रघुनाथजीने सब सामग्री भिजवाकर सम्पूर्ण लक्षणसम्पन्न घोडा छोडा ॥ १ ॥ घोडेके संगमें ऋत्विजोंको भेजकर पीछेसे सेनासहित रघुनाथजीने नैमिषारण्यको गमन किया ॥ २ ॥ महाबाहु रघुनाथजीने परमअद्भुत यज्ञका स्थान देखा तो बडे प्रसन्न हुए और कहने लगे ॥ ३ ॥ यह देश बहुत उत्तम है ऐसा कह यहाँ निवास करने लगे व रघुनाथजीके रहनेपर बहुतसे राजा भेंट लाये रघुनाथजीने स्वीकार कर उन सब राजाओंकी प्रशंसा की ॥ ४ ॥ अन्नपान

विभीषणश्चरक्षोभिस्त्रीभिश्चबहुभिर्वृतः ॥ ऋषीणामुग्रतपसांपूजांचक्रेमहात्मनाम् ॥२९॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तर कांड एकनवतितमः सर्गः ॥ ९१ ॥ तत्सर्वमखिलेनाशुप्रस्थाप्यभरताग्रजः ॥ हयलक्षणसंपन्नंकृष्णसारंमुमोचह ॥ १ ॥ ऋत्विग्भिर्लक्ष्मणं सार्धमश्वेनविनियुज्यच ॥ ततोभ्यगच्छत्काकुत्स्थःसहसैन्येननैमिषम् ॥ २ ॥ यज्ञवाटंमहाबाहुर्दृष्ट्वापरममद्भुतम् ॥ प्रहर्षमतुलंलेभेश्रीमानि तिचसोब्रवीत् ॥ ३ ॥ नैमिषेवसतस्तस्यसर्वएवनराधिपाः ॥ आनिन्युरुपहारांश्चतान्रामःप्रत्यपूजयत् ॥ ४ ॥ अन्नपानादिवस्त्राणिसर्वोपकर णानिच ॥ भरतःसहशत्रुघ्नोनियुक्तोराजपूजने ॥ ५ ॥ वानराश्चमहात्मानःसुग्रीवसहितास्तदा ॥ परिवेषणंचविप्राणांप्रयताःसंप्रचक्रिरे ॥ ६ ॥ विभीषणश्चरक्षोभिर्बहुभिःसुसमाहितः ॥ ऋषीणामुग्रतपसांकिंकरःसमपद्यत ॥ ७ ॥ उपकार्यामहार्हांश्चपार्थिवानांमहात्मनाम् ॥ सानुगानांनर श्रेष्ठोव्यादिदेशमहाबलः ॥ ८ ॥ एवंसुविहितोयज्ञोह्यश्वमेधोह्यवर्तत ॥ लक्ष्मणेनसुगुप्तासाहयचर्याप्रवर्तत ॥९॥ ईदृशंराजसिंहस्ययज्ञप्रवरमुत्त मम्॥ नान्यःशब्दोभवत्तत्रहयमेधेमहात्मनः ॥१०॥ छंदतोदेहिविस्रब्धोयावत्तुष्यंतियाचकाः॥ तावत्सर्वाणिदत्तानिक्रतुमुख्येमहात्मनः ॥११॥

वस्त्र स्थानादिसे राजाओंका सत्कार करनेको भरत और शत्रुघ्न नियुक्त थे ॥ ५ ॥ और महात्मा वानरभी सुग्रीवसहित निमन्त्रित ब्राह्मणोंकी सावधानतासे सेवा करने लगे ॥ ६ ॥ और विभीषणभी अनेक राक्षसोंके सहित सावधानीसे निमन्त्रित तपस्वी ऋषियोंकी सेवा करने लगे ॥ ७॥ महात्मा राजाओंके रहनेके स्थान तथा परिचर्या और रक्षामें नियुक्त हुए ॥ ९ ॥ इसप्रकार राजसिंह महाराज रामचन्द्रके उस श्रेष्ठ यज्ञमें जबतक यज्ञ होता रहा तबतक और कोई शब्द श्रवणगोचर नहीं हुआ ॥ १० ॥ एक यही शब्द सुननेमें आता था कि जबतक याचक सन्तुष्ट न हों बराबर उन्हें देते रहो, इसप्रकारसे उन महात्माके यज्ञमें निरन्तर दान सभी उसमें लक्ष्मणजी घोडेकी ॥ ८ ॥ इसप्रकारसे विधिपूर्वक यज्ञ आरम्भ होने लगा, लक्ष्मणजी घोडेकी

लोगोंकी इच्छा होती उसे सोना मिलता ॥ १५ ॥ धनकी इच्छावालेको धन रत्न की इच्छावालेको रत्न मिलता था, [illegible]
करनेहीके निमित्त ढेरके ढेर लगरहे थे न इन्द्र न चन्द्र न यम न वरुण ॥ ७। [illegible]

... वानर और राक्षस उसे वह पदार्थ देदेते उस यज्ञमें कोई मलीन क्लेश अथवा दीन नहीं था ॥ १३ ॥ याचकोंके मुखसे मांगनेका शब्द जबतक
यज्ञमें सबही मनुष्य हृष्टपुष्ट थे और जो उस यज्ञमें महात्मा मार्कण्डेयादि चिरंजीवी मुनि थे ॥ १४ ॥ वह कहने लगे हमने किसी यज्ञमें ऐसा दान नहीं देखा जिसे उस
मांगनेकी इच्छा होती उसे सोना मिलता ॥ १५ ॥ धनकी इच्छावालेको धन रत्न की इच्छावालेको रत्न मिलता था, हिरण्यसुवर्ण वस्त्रादिकोंके ॥ १६ ॥ दान
करनेहीके निमित्त ढेरके ढेर लगरहे थे न इन्द्र न चन्द्र न यम न वरुण ॥ १७ ॥ देवताओंके यहांभी ऐसा यज्ञ हमने कभी देखा, इसप्रकार वे सब तपस्वी कहने लगे,

विविधानिचगोडानिखांडवानितथैवच ॥ ननिःसृतंभवत्योष्ठाद्वचनंयावदर्थिनाम् ॥ १२ ॥ तावद्वानररक्षोभिर्दत्तमेवाभ्यदृश्यत ॥ नकश्चिन्म लिनोवापिदीनोवाप्यथवाकृशः ॥ १३ ॥ तस्मिन्यज्ञवरेराज्ञोहृष्टपुष्टजनावृते ॥ येचतत्रमहात्मानोमुनयश्चिरजीविनः ॥ १४ ॥ नास्मरंस्तादृशं यज्ञंदानौघसमलंकृतम् ॥ यःकृत्यवान्सुवर्णेनसुवर्णंलभतेस्मसः ॥ १५ ॥ वित्तार्थीलभतेवित्तंरत्नार्थीरत्नमेवच ॥ हिरण्यानांसुवर्णानांरत्नानाम थवाससाम् ॥ १६ ॥ अनिशंदीयमानानांराशिःसमुपदृश्यते ॥ नशक्रस्यनसोमस्ययमस्यवरुणस्यच ॥ १७ ॥ ईदृशोदृष्टपूर्वोनएवमूचुस्तपो धनाः ॥ सर्वत्रवानरास्तस्थुःसर्वत्रैवचराक्षसाः ॥ १८ ॥ वासोधनान्नकामेभ्यःपूर्णहस्तादुर्भृशम् ॥ ईदृशोराजसिंहस्ययज्ञःसर्वगुणान्वितः ॥ संवत्सरमथोसाग्रंवर्ततेनचहीयते ॥ १९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे द्विनवतितमः सर्गः ॥ ९२ ॥ वर्तमानेतथाभूतेयज्ञेचपरमा द्भुते ॥ सशिष्यआजगामाशुवाल्मीकिर्भगवानृषिः ॥ १ ॥ सदृष्ट्वादिव्यसंकाशंयज्ञमद्भुतदर्शनम् ॥ एकांतऋषिसंवातश्चकारउटजाञ्शु भान् ॥ २ ॥ शकटांश्चबहून्पूर्णान्फलमूलांश्चशोभनान् ॥ वाल्मीकिवाटेरुचिरेस्थापयन्नविदूरतः ॥ ३ ॥

सबही स्थानोंमें वानर और राक्षस ॥ १८ ॥ वस्त्र धन अन्नसे पूर्ण दान करनेके निमित्त खडे दीखते थे इसप्रकार सर्वगुणसम्पन्न राजसिंह रघुनाथजीका यज्ञ वर्ष दिनमें कुछ अधिक पर्यन्त होता रहा परन्तु किसी बातमें कोई त्रुटि नहीं हुई ॥ १९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० उत्तरकांडे भाषाटीकायां द्विनवतितमः सर्गः ॥ ९२ ॥
इसप्रकार यह परमअद्भुत यज्ञ होरहा था उसीसमय शिष्यों सहित भगवान् वाल्मीकि ऋषि आये ॥ १ ॥ उन्होंने इसप्रकार परमअद्भुत यज्ञको देखकर ऋषियोंके स्थानोंके निकटही एकान्तमें अपना डेरा किया और अपने बहुतसे शिष्योंके निमित्त पर्णशालायें बनाई ॥ २ ॥ फल मूलोंसे भरे बहुतसे छकडे अपनी पर्णशालाके निकटही स्थापन करे, कारण कि, जनकजीमें अधिक स्नेह होनेके कारण ...

सहित महात्मा वानरगण समाचार सुनतेही आये और बडे २ ब्राह्मणोंकी सेवामें रहे ॥ २८ ॥ विभीषणजीभी निमंत्रण पातेही राक्षस और राक्षसियोंको साथ लेकर आये और बडे तपस्वी महात्मा ऋषियोंकी पूजा करनेलगे ॥२९॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषाटीकायामेकनवतितमः सर्गः ॥९१॥
इस प्रकार रघुनाथजीने सब सामग्री भिजवाकर सम्पूर्ण लक्षणसम्पन्न घोडा छोडा ॥ १ ॥ घोडेके संगमें ऋत्विजोंको भेजकर पीछेसे सेनासहित रघुनाथजीने नैमिषारण्यको गमन किया ॥ २ ॥ महाबाहु रघुनाथजीने परमअद्भुत यज्ञका स्थान देखा तो बडे प्रसन्न हुए और कहने लगे ॥ ३ ॥ यह देश बहुत उत्तम है ऐसा कह वहाँ निवास करने लगे व रघुनाथजीके रहनेपर बहुतसे राजा भेंट लाये रघुनाथजीने स्वीकार कर उन सब राजाओंकी प्रशंसा की ॥ ४ ॥ अन्नपान

विभीषणश्चरक्षोभिस्त्रीभिश्चबहुभिर्वृतः ॥ ऋषीणामुग्रतपसांपूजांचक्रेमहात्मनाम् ॥२९॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तर कांड एकनवतितमः सर्गः ॥ ९१ ॥ तत्सर्वमखिलेनाशुप्रस्थाप्यभरताग्रजः ॥ हयलक्षणसंपन्नंकृष्णसारंमुमोचह ॥ १ ॥ ऋत्विग्भिर्लक्ष्मणं सार्धमश्वेचविनियुज्यच ॥ ततोभ्यगच्छत्काकुत्स्थःसहसैन्येननैमिषम् ॥ २ ॥ यज्ञवाटंमहाबाहुर्दृष्ट्वापरममद्भुतम् ॥ प्रहर्षमतुलंलेभेश्रीमानि तिचसोब्रवीत् ॥ ३ ॥ नैमिषेवसतस्तस्यसर्वएवनराधिपाः ॥ आनिन्युरुपहारांश्चतान्रामःप्रत्यपूजयत् ॥ ४ ॥ अन्नपानादिवस्त्राणिसर्वोपकर णानिच ॥ भरतःसहशत्रुघ्नोनियुक्तोराजपूजने ॥ ५ ॥ वानराश्चमहात्मानःसुग्रीवसहितास्तदा ॥ परिवेषणंचविप्राणांप्रयताःसंप्रचक्रिरे ॥ ६ ॥ विभीषणश्चरक्षोभिर्बहुभिःसुसमाहितः ॥ ऋषीणामुग्रतपसांकिंकरःसमपद्यत ॥ ७ ॥ उपकार्यामहार्हांश्चपार्थिवानांमहात्मनाम् ॥ सानुगानांनर श्रेष्ठोव्यादिदेशमहाबलः ॥ ८ ॥ एवंसुविहितोयज्ञोह्यश्वमेधोह्यवर्तत ॥ लक्ष्मणेनसुगुप्तासाहयचर्याप्रवर्तत ॥९॥ ईदृशंराजसिंहस्ययज्ञप्रवरमुत्त मम्॥ नान्यःशब्दोभवत्तत्रहयमेधेमहात्मनः ॥१०॥ छंदतोदेहिविस्रब्धोयावत्तुष्यंतियाचकाः॥ तावत्सर्वाणिदत्तानिक्रतुमुख्येमहात्मनः ॥११॥

वस्त्र स्थानादिसे राजाओंका सत्कार करनेको भरत और शत्रुघ्न नियुक्त थे ॥ ५ ॥ और महात्मा वानरभी सुग्रीवसहित निमन्त्रित ब्राह्मणोंकी सावधानतासे सेवा करने लगे ॥ ६ ॥ और विभीषणभी अनेक राक्षसोंके सहित सावधानीसे निमन्त्रित तपस्वी ऋषियोंकी सेवा करने लगे ॥ ७॥ महात्मा राजाओंके रहनेके स्थान तथा उनका सन्मान और उनका सब प्रकार सत्कार महाबली रघुनाथजी स्वयंभी करते थे ॥ ८ ॥ इसप्रकारसे विधिपूर्वक यज्ञ आरम्भ होने लगा, लक्ष्मणजी घोडेकी परिचर्या और रक्षामें नियुक्त हुए ॥ ९ ॥ इसप्रकार राजसिंह महाराज रामचन्द्रके उस श्रेष्ठ यज्ञमें जबतक यज्ञ होता रहा तबतक और कोई शब्द श्रवणगोचर नहीं हुआ ॥ १० ॥ एक यही शब्द सुननेमें आता था कि जबतक याचक सन्तुष्ट न हों बराबर उन्हें देते रहो, इसप्रकारसे उन महात्माके यज्ञमें निरन्तर दान [illegible]

होरहा था ॥ ११ ॥ अनेक प्रकारके सुवर्ण शर्करा अन्नादिके ढेर प्रातःकाल लगाये जाते और सन्ध्यासमयतक देदिये जाते. याचकोंके मुखसे मांगनेका शब्द जबतक निकला चाहे कि ॥ १२ ॥ तबतक उससे पहलेही वानर और राक्षस उसे वह पदार्थ देदेते उस यज्ञमें कोई मलीन क्लेश अथवा दीन नहीं था ॥ १३ ॥ उस यज्ञमें सबही मनुष्य हृष्टपुष्ट थे और जो उस यज्ञमें महात्मा मार्कण्डेयादि चिरंजीवी मुनि थे ॥ १४ ॥ वह कहने लगे हमने किसी यज्ञमें ऐसा दान नहीं देखा जिसे दान लेनेकी इच्छा होती उसे सोना मिलता ॥ १५ ॥ धनकी इच्छावालेको धन रत्न की इच्छावालेको रत्न मिलता था, हिरण्यसुवर्ण वस्त्रादिकोंके ॥ १६ ॥ दान करनेहीके निमित्त ढेरके ढेर लगरहे थे न इन्द्र न चन्द्र न यम न वरुण ॥१७॥ देवताओंके यहांभी ऐसा यज्ञ हमने कभी देखा, इसप्रकार वे सब तपस्वी कहने लगे,

विविधानिचगोडानिखांडवानितथैवच ॥ ननिःसृतंभवत्योष्ठाद्वचनंयावदर्थिनाम् ॥ १२ ॥ तावद्वानररक्षोभिर्दत्तमेवाभ्यदृश्यत ॥ नकश्चिन्म लिनोवापिदीनोवाप्यथवाकृशः ॥ १३ ॥ तस्मिन्यज्ञवरेराज्ञोहृष्टपुष्टजनावृते ॥ येचतत्रमहात्मानोमुनयश्चिरजीविनः ॥ १४ ॥ नास्मरंस्तादृशं यज्ञंदानौघसमलंकृतम् ॥ यःकृत्यवान्सुवर्णेनसुवर्णंलभतेस्मसः ॥१५॥ वित्तार्थीलभतेवित्तंरत्नार्थीरत्नमेवच ॥ हिरण्यानांसुवर्णानांरत्नानाम थवाससाम् ॥ १६ ॥ अनिशंदीयमानानांराशिःसमुपदृश्यते ॥ नशक्रस्यनसोमस्ययमस्यवरुणस्यच ॥ १७ ॥ ईदृशोदृष्टपूर्वोनएवमूचुस्तपो धनाः ॥ सर्वत्रवानरास्तस्थुःसर्वत्रैवचराक्षसाः ॥ १८ ॥ वासोधनान्नकामेभ्यःपूर्णहस्तादुर्भृशम् ॥ ईदृशोराजसिंहस्ययज्ञःसर्वगुणान्वितः ॥ संवत्सरमथोसाग्रंवर्ततेनचहीयते ॥१९॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे द्विनवतितमः सर्गः ॥९२॥ वर्तमानेतथाभूतेयज्ञेचपरमा द्भुते ॥ सशिष्यआजगामाशुवाल्मीकिर्भगवानृषिः ॥ १ ॥ सदृष्ट्वादिव्यसंकाशंयज्ञमद्भुतदर्शनम् ॥ एकांतऋषिसंघातश्चकारउटजाञ्शु भान् ॥ २ ॥ शकटांश्चबहून्पूर्णान्फलमूलांश्चशोभनान् ॥ वाल्मीकिवाटेरुचिरेस्थापयन्नविदूरतः ॥ ३ ॥

सबही स्थानोंमें वानर और राक्षस ॥ १८ ॥ वस्त्र धन अन्नसे पूर्ण दान करनेके निमित्त खडे दीखते थे इसप्रकार सर्वगुणसम्पन्न राजसिंह रघुनाथजीका यज्ञ वर्ष दिनसे कुछ अधिक पर्यन्त होता रहा परन्तु किसी बातमें कोई त्रुटि नहीं हुई ॥१९॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० उत्तरकांडे भाषाटीकायां द्विनवतितमः सर्गः ॥९२॥ इसप्रकार वह परमअद्भुत यज्ञ होरहा था उसीसमय शिष्यों सहित भगवान् वाल्मीकि ऋषि आये ॥ १ ॥ उन्होंने इसप्रकार परमअद्भुत यज्ञको देखकर ऋषियोंके स्थानोंके निकटही एकान्तमें अपना डेरा किया और अपने बहुतसे शिष्योंके निमित्त पर्णशालायें बनाईं ॥ २ ॥ फल मूलोंसे भरे बहुतसे छकडेभी अपनी पर्णशालाके निकटही स्थापन करे, कारण कि, जनकजीमें अधिक स्नेह होनेके कारण उन्हें भ्राता मानते थे इसीसे रघुनाथजीके यहांका भोजन नहीं

करते थे ॥ ३ ॥ इसप्रकार निवासकर वाल्मीकिजीने अपने शिष्य लव और कुशसे एकान्तमें कहा तुम दोनों प्रसन्नतापूर्वक सम्पूर्ण रामायण काव्यका गान क-
ऋषियोंके पवित्र स्थानमें ब्राह्मणोंके निवास स्थानोंमें गली राजमार्ग तथा राजाओंके डेरोंमें ॥ ५ ॥ रामचन्द्रके भवनके द्वारपर, जहां ब्राह्मण यज्ञ कर्म क-
जहां ऋत्विक् ब्राह्मण हों विशेष रीतिसे गान करो ॥६॥ यह जो अमृतकी समान स्वादवाले पर्वतके समीप उत्पन्न हुए फल हैं इनको भोजन करके
काव्यका गान करो ॥ ७ ॥ हे सौम्य ! जो तुम इन फलोंको भक्षण कर गान करोगे तो श्रम नहीं होगा मीठे फलमूलोंके भक्षण करने उपरान्त ग
भी भङ्ग नहीं होता ॥ ८ ॥ जो इस चरित्र श्रवण करनेके निमित्त महाराज रामचन्द्र तुमको बुलावें तो उनके और ऋषियोंके सम्मुख अवश्य प्रणामा

सशिष्यावब्रवीद्धृष्टौयुवांगत्वासमाहितौ ॥ कृत्स्नंरामायणंकाव्यंगायतांपरयामुदा ॥ ४ ॥ ऋषिवाटेषुपुण्येषुब्राह्मणावसथेषुच ॥ रथ्या-
मार्गेषुपार्थिवानांगृहेषुच ॥ ५ ॥ रामस्यभवनद्वारियत्रकर्मचकुर्वते ॥ ऋत्विजामग्रतश्चैवतत्रगेयंविशेषतः ॥ ६ ॥ इमानिचफलान्यत्रस्-
विविधानिच ॥ जातानिपर्वताग्रेषुआस्वाद्यास्वाद्यगायताम् ॥ ७ ॥ नयास्यथःश्रमंवत्सौभक्षयित्वाफलान्यथ ॥ मूलानिचसुमृष्टानिनग-
रिहास्यथः ॥ ८ ॥ यदिशब्दापयेद्रामःश्रवणायमहीपतिः ॥ ऋषीणामुपविष्टानांयथायोगंप्रवर्तताम् ॥ ९ ॥ दिवसेविंशतिःसर्गागेयाम-
गिरा ॥ प्रमाणैर्बहुभिस्तत्रयथोद्दिष्टंमयापुरा ॥ १० ॥ लोभश्चापिनकर्तव्यःस्वल्पोपिधनवांछया ॥ किंधनेनाश्रमस्थानांफलमूलाशि-
॥ ११ ॥ यदिपृच्छेत्सकाकुत्स्थोयुवांकस्येतिदारकौ ॥ वाल्मीकेरथशिष्यौद्वौब्रूतमेवंनराधिपम् ॥ १२ ॥ इमास्तंत्रीःसुमधुराःस्थानं-
दर्शनम् ॥ मूर्छयित्वासुमधुरंगायतांविगतज्वरौ ॥१३॥ आदिप्रभृतिगेयंस्यान्नचावज्ञायपार्थिवम् ॥ पिताहिसर्वभूतानांराजाभवतिधर्मतः॥
तद्युवांहृष्टमनसौश्वःप्रभातेसमाहितौ ॥ गायतंमधुरंगेयंतंत्रीलयसमन्वितम् ॥ १५ ॥

गाना ॥ ९ ॥ मैंने जो प्रमाणादि सहित सर्ग निर्माण किये हैं वह कोमल वाणीसे बीस सर्ग प्रतिदिन गाना क्योंकि इतनेही गाने चाहिये ॥१०॥ यदि क-
कर कुछ धन देने लगे तो थोडेसे धनकाभी लोभ मत करना और कह देना हम फल मूलाहारी आश्रममें रहनेवालोंको धन लेकर क्या करना है ॥
यदि रघुनाथजी पूछें कि तुम कौन और किसके पुत्र हो, तो महाराजसे इतनाही कहना कि हम वाल्मीकिजीके शिष्य हैं ॥१२॥ यह मधुर वीणा तंत्र ले-
स्थान और यथोचित ताल लय स्वरसे अपूर्व मूर्च्छनाके संगीतसे सुखपूर्वक मधुर वाणीसे गाना ॥ १३ ॥ प्रथम सर्गसेही गाना प्रारम्भ करना; राजा
उनकी अवज्ञा न करना कारण कि धर्मसे राजा सब प्राणियोंका पिता है, उनके सम्मुख हास्यादि न करना ॥ १४ ॥ सो तुम प्रसन्न मन हो कल प्रा-
सर्गः ॥१३॥ जब वह रात्रि बीती और प्रातःकाल हुआ तब लव [illegible] श उठे और स्नानसे निश्चिन्त हो आ
पूर्व आचार्यकी निर्माण करी पहले कभी न [illegible]

तसी लयसे संयुक्त इस काव्यको गाना ॥ १५॥ प्राचेतस मुनि वाल्मीकिजी इसप्रकार उन्हें अनेक विधिसे समझाकर मौन हुए ॥ १६ ॥ वे दोनों जानकीके पुत्र इसप्रकारसे मुनिसे शिक्षित हो ऐसाही करेंगे यह कह वहांसे चले आये॥ १७॥ वे दोनों कुमार ऋषिकी कही अद्भुत वाणी हृदयमें धारण करके सुखपूर्वक उस स्थानमें ऐसे वास करते हुए जिसप्रकार च्यवनजीके स्थानपर उनके वचन सुन अश्विनीकुमार रहे थे॥ १८॥इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० उत्तरकाण्डे भाषाटीकायां त्रिनवतितमः सर्गः ॥९३॥ जब वह रात्रि बीती और प्रातःकाल हुआ तब लव कुश उठे और स्नानसे निश्चिन्त हो अग्निहोत्रकर ऋषिके कहे अनुसार रामायण गाने लगे ॥ १॥ वह पूर्व आचार्यकी निर्माण करी पहले कभी न सुनी पाठ्यके और गानेके षड्जादि स्वरोंसे भूषित ॥ २ ॥ ध्वनि परिच्छेदादि प्रमाणोंसे भूषित वीणाकी लयसे संयुक्त

इतिसंदिश्यबहुशोमुनिःप्राचेतसस्तदा ॥ वाल्मीकिःपरमोदारस्तूष्णीमासीन्महामुनिः॥ १६ ॥ संदिष्टौमुनिनातेनतावुभौमैथिलीसुतौ ॥ तथैव करवावेतिनिर्जग्मतुररिंदमौ ॥ १७॥ तामद्भुतांतौहृदयेकुमारौनिवेश्यवाणीमृषिभाषितांतदा ॥ समुत्सुकौतौसुखमूषतुर्निशांयथाश्विनौभार्गवनीतिसंहिताम् ॥१८॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदिकाव्य उत्तरकांडे त्रिनवतितमःसर्गः ॥९३॥ तौरजन्यांप्रभातायांस्नातौहुतहुताशनौ ॥ यथोक्तमृषिणापूर्वंसर्वंतत्रोपगायताम् ॥१॥ तांसशुश्रावकाकुत्स्थःपूर्वाचार्यविनिर्मिताम् ॥ अपूर्वांपाठ्यजातिंचगेयेनसमलंकृताम् ॥२॥ प्रमाणैर्बहुभिर्बद्धांतंत्रीलयसमन्विताम् ॥ बालाभ्यांराघवःश्रुत्वाकौतूहलपरोभवत् ॥३॥ अथकर्मांतरेराजासमाहूयमहामुनीन् ॥ पार्थिवांश्चनरव्याघ्रः पंडितान्नैगमांस्तथा ॥ ४॥ पौराणिकान्शब्दविदोयेवृद्धाश्चद्विजातयः ॥ स्वराणांलक्षणज्ञांश्चउत्सुकान्द्विजसत्तमान् ॥५॥ लक्षणज्ञांश्चगांधर्वान्नैगमांश्चविशेषतः ॥ पादाक्षरसमासज्ञांश्छंदःसुपरिनिष्ठितान् ॥ ६ ॥ कलामात्राविशेषज्ञान्ज्योतिषेचपरंगतान् ॥ क्रियाकल्पविदश्चैवतथाकार्यविशारदान् ॥ ७ ॥ हेतूपचारकुशलान्हैतुकांश्चबहुश्रुतान् ॥ छंदोविदःपुराणज्ञान्वैदिकान्द्विजसत्तमान् ॥ ८ ॥

मनोहर काव्य बालकोंके मुखसे श्रवणकर रघुनाथजी बडे विस्मित हुए ॥३॥ यज्ञके अवसानमें जब अवकाशका समय हुआ तब नरसिंह रघुनाथजीने महामुनि, राजा और नगरके जाननेहारोंको और पंडितोंको बुलाया ॥ ४ ॥ पौराणिकाचार्य, व्याकरणाचार्य, और वृद्ध ब्राह्मण, षड्जादि स्वरोंके जाननेहारे, संगीताचार्य, तथा औत्सुकी गुणोंके उत्कंठित ब्राह्मणश्रेष्ठ बुलायेगये॥५॥ सामुद्रिकाचार्य,संगीत विद्याके जाननेहारे पुरवासी साहित्याचार्य, पाद अक्षर समास गुरु लघुप्रयोगोंके जाननेहारे, छंदविद्यामें निपुण पिंगलाचार्य ॥६॥ कला मात्रा प्रस्तार, मेरु मर्कटी आदिके ज्ञाता तथा ज्योतिषाचार्य, तथा व्यवहारके जाननेहारे क्रिया कल्पसूत्रके जाननेवाले तथा कार्यमें पारंगत ॥ ७ ॥ हेतु व्यवहारके जाननेवाले, तर्क जाननेवाले बहुश्रुत तथा छंद वेद और पुराणोंके जाननेवाले ब्राह्मणोंको बुलाया ॥ ८ ॥

रामचन्द्र बडे विस्मित हुए ॥ २१ ॥ तब महातेजस्वी रघुनाथजीने उस काव्यका भाग सुननेमें उत्सुक होकर उन दोनों कुमारोंसे पूछा ॥ २२ ॥ यह काव्य कितना बडा है और महात्मा कविका क्या विषय है कितने कालतक इस काव्यकी स्थिति रहेगी और इस बडे काव्यके निर्माण करनेहारे मुनिश्रेष्ठ कहांहैं ॥ २३ ॥ रामचन्द्रके यह वचन सुन वे दोनों ऋषिकुमार कहने लगे कि, इस काव्यके कर्त्ता भगवान् वाल्मीकिजी हैं जो आपके यज्ञमें आये हैं जिन्होंने यह संपूर्ण चरित्र तुम्हें सुनानेको कहा है ॥ २४ ॥ इस काव्यमें चौवीस सहस्र श्लोक हैं सो उपाख्यान हैं भृगुवंशावतंस महर्षि वाल्मीकिजीने बनायाहै ॥ २५ ॥ प्रथमकांडसे प्रारंभ कर महात्मा ऋषिने इसमें ५०० पांचशत सर्ग छः कांडोंमें कहे हैं और सातवां उत्तर कांड है ॥ २६ ॥ महर्षि वाल्मीकिजीने इसे महत काव्यको आपहीकी कीर्तिसे

तस्यचैवागमंरामःकाव्यस्यश्रोतुमुत्सुकः ॥ पप्रच्छतौमहातेजास्तावुभौमुनिदारकौ ॥ २२ ॥ किंप्रमाणमिदंकाव्यंकाप्रतिष्ठामहात्मनः ॥ कर्ता काव्यस्यमहतःक्वचासौमुनिपुंगवः ॥ २३ ॥ पृच्छंतंराघवंवाक्यमूचतुर्मुनिदारकौ ॥ वाल्मीकिर्भगवान्कर्तासंप्राप्तोयज्ञसंविधम् ॥ येनेदंचरितं तुभ्यमशेषंसंप्रदर्शितम् ॥ २४ ॥ सन्निबद्धंहिश्लोकानांचतुर्विंशत्सहस्रकम् ॥ उपाख्यानशतंचैवभार्गवेणतपस्विना ॥ २५ ॥ आदिप्रभृतिवैराजन्पंचसर्गशतानिच ॥ कांडानिषट्कृतानीहसोत्तराणिमहात्मना ॥ २६ ॥ कृतानिगुरुणास्माकमृषिणाचरितंतव ॥ प्रतिष्ठाजीवितंयावत्तावत्सर्वस्यवर्तते ॥ २७ ॥ यदिबुद्धिकृताराजञ्छ्रवणायमहारथ ॥ कर्मांतरेक्षणीभूतस्तच्छृणुष्वसहानुजः ॥ २८ ॥ बाढमित्यब्रवीद्रामस्तौचानुज्ञाप्य राघवौ ॥ प्रहृष्टौजग्मतुःस्थानेयत्रास्तेमुनिपुंगवः ॥ २९ ॥ रामोपिमुनिभिःसार्धंपार्थिवैश्चमहात्मभिः ॥ श्रुत्वातद्गीतिमाधुर्यंकर्मशालामुपागमत् ॥ ३० ॥ शुश्रावतत्तालयोपपन्नंसर्गान्वितंसस्वरशब्दयुक्तम् ॥ तंत्रीलयव्यंजनयोगयुक्तंकुशीलवाभ्यांपरिगीयमानम् ॥ ३१ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे चतुर्नवतितमः सर्गः ॥ ९४ ॥

परिपूर्ण कियाहै और जबतक सृष्टि रहेगी तबतक इस काव्यकी प्रतिष्ठा होगी ॥ २७ ॥ हे महाराज ! यदि संपूर्ण सुननेकी इच्छा हो तो आप यज्ञक्रियाके अवकाशमें प्रतिदिन भ्राताओं सहित श्रवण कीजिये ॥ २८ ॥ यह वचन श्रवणकर रघुनाथजी बोले हम सब सुनेंगे, तब वे रघुनाथजीकी आज्ञासे प्रसन्नहो वाल्मीकि मुनिके निकट गये ॥ २९ ॥ रघुनाथजीभी मुनि और महात्मा राजाओंके संग इस काव्यकी मधुरता श्रवणकर यज्ञशालामें आये ॥ ३० ॥ इस प्रकारसे सर्गबंध महाकाव्यको ताल गीति लय स्वर शब्द वीणाकी मूर्छना व्यंजना सहित कुश लवके मुखसे रघुनाथजीने श्रवण किया ॥ ३१ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे भाषाटीकायां चतुर्नवतितमः सर्गः ॥ ९४ ॥

इस प्रकारसे उस महाकाव्यको रघुनाथजीने मुनि राजा वानरोंके सहित बहुत दिनतक सुना (उत्तरकांड सहित ६११ सर्ग साढेतीस दिनमें श्रवण किया) ॥ १ ॥ जब उत्तरकांडकी कथा श्रवण करनेसे यह ज्ञात हुआ कि, यह दोनों सीताके पुत्र हैं, तब सभामें अपनी इच्छासे शुद्ध आचरणवाले शीघ्रगामी दूतोंसे रघुनाथजीने कहा कि, तुम भगवान् वाल्मीकिजीके आश्रममें जाकर हमारी ओरसे कहो ॥ २ ॥ ३ ॥ कि, यदि जानकी शुद्धाचार पापरहित हैं तो आपकी अनुमतिसे सभामें आकर अपनी शुद्धता प्रगट करें ॥ ४ ॥ यह उनसे कहकर मुनिकी सम्मति और सीताकी इच्छाको जानकर (कि वे अपनी शुद्धता प्रगट किया चाहती हैं) तुम बहुत शीघ्र हमारे पास आओ ॥ ५ ॥ जनककुमारी कल प्रातःकालही सभाके बीचमें हमें ❀ और अपने शुद्ध करनेके निमित्त शपथ करें ॥

रामोबहून्यहान्येवतद्गीतंपरमंशुभम् ॥ शुश्रावमुनिभिःसार्धंपार्थिवैःसहवानरैः ॥ १ ॥ तस्मिन्गीतेतुविज्ञायसीतापुत्रौकुशीलवौ ॥ तस्याःपरिषदोमध्येरामोवचनमब्रवीत् ॥ २ ॥ दूतान्शुद्धसमाचारानाहूयात्ममनीषया ॥ मद्वचोब्रूतगच्छध्वमितोभगवतोंतिके ॥ ३ ॥ यदिशुद्धसमाचारायदिवावीतकल्मषा ॥ करोत्विहात्मनःशुद्धिमनुमान्यमहामुनिम् ॥ ४ ॥ छंदंमुनेश्वविज्ञायसीतायाश्चमनोगतम् ॥ प्रत्ययंदातुकामायास्ततःशंसतमेलघु ॥ ५ ॥ श्वःप्रभातेतुशपथंमैथिलीजनकात्मजा ॥ करोतुपरिषन्मध्येशोधनार्थंममैवच ॥ ६ ॥ श्रुत्वातुराघवस्यैतद्वचःपरममद्भुतम् ॥ दूताःसंप्रययुर्वाढंयत्रवैमुनिपुंगवः ॥ ७ ॥ तेप्रणम्यमहात्मानंज्वलंतममितप्रभम् ॥ ऊचुस्तेरामवाक्यानिमृदूनिमधुराणिच ॥ ८ ॥ तेषांतद्भाषितंश्रुत्वारामस्यचमनोगतम् ॥ विज्ञायसुमहातेजामुनिर्वाक्यमथाब्रवीत् ॥ ९ ॥ एवंभवतुभद्रंवोयथावदतिराघवः ॥ तथाकरिष्यतेसीतादेवतंहिपतिःस्त्रियः ॥ १० ॥ तथोक्तामुनिनासर्वेराजदूतामहौजसः ॥ प्रत्येत्यराघवंसर्वंमुनिवाक्यंबभाषिरे ॥ ११ ॥ ततःप्रहृष्टःकाकुत्स्थःश्रुत्वावाक्यंमहात्मनः ॥ ऋषींस्तत्रसमेतांश्चराज्ञश्चैवाभ्यभाषत ॥ १२ ॥

॥ ६ ॥ रघुनाथजीके यह वचन सुन 'जो आज्ञा' ऐसा कहकर शीघ्रतासे दूत वाल्मीकिजीके निकट गये ॥ ७ ॥ वे अग्निके समान दीप्तिवाले वाल्मीकिजीको प्रणाम करके रघुनाथजीके कोमल और मधुर वाक्य उनको सुनानेलगे ॥ ८ ॥ महातेजस्वी वाल्मीकिजीने उनके वचन और रघुनाथजीके मनकी बात जानकर दूतोंसे कहा ॥ ९ ॥ तुम्हारा कल्याण हो जो रामचन्द्र कहतेहैं, ऐसाही होगा और जानकीजीभी शपथ करेंगी कारण कि, स्त्रियोंका पतिही देवताहै ॥ १० ॥ मुनिसे यह वचन सुनकर वह मुनिके वचन शीघ्रतासे आकर दूतोंने रघुनाथजीसे कहे ॥ ११ ॥ यह वचन सुनकर महात्मा रामचन्द्रजी प्रसन्न हुए और

❀ रामचन्द्र जानकीको शुद्धतासे युक्त हैं इसकारण उन्हें घरमें रखलिया यह अपयश रघुनाथजीने अपनेमें माना ।

... ॥ १३ ॥ यह महात्मा रामचन्द्रके वचन सुनकर सब ऋषिमंडलीमें धन्य धन्यकी ध्वनि होनेलगी ॥ १४ ॥ और महात्मा राजाभी रघुनाथजीकी ... और अपने शिष्य और सेवकों सहित सब राजा, सीताकी शपथ ... जिनकी इच्छा
प्रशंसा करने लगे कि, आपके सिवाय और कोई इस जगत्में ऐसे वचन नहीं कहसका ॥ १५ ॥ इस प्रकार शत्रुतापन रघुनाथजीने प्रातःकालको सीताकी
शपथका निश्चयकर उन सबको विदा किया ॥ १६ ॥ महाप्रतापी महात्मा राजार्सिंह रघुनाथजीने इस प्रकारसे दूसरे दिन प्रातःकाल जानकीके शपथका निश्चय
करके उन सम्पूर्ण मुनि और राजाओंको विदा किया ॥ १७ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषाटीकायां पंचनवतितमः सर्गः ॥ ९५ ॥

भगवंतःसशिष्यावैसानुगाश्चनराधिपाः ॥ पश्यंतुसीताशपथंयश्चैवान्योपिकांक्षते ॥ १३ ॥ तस्यतद्वचनंश्रुत्वाराघवस्यमहात्मनः ॥ सर्वेषा
नृपिमुख्यानांसाधुवादोमहानभूत् ॥ १४ ॥ राजानश्चमहात्मानःप्रशंसंतिस्मराघवम् ॥ उपपन्नंनरश्रेष्ठत्वय्येवभुविनान्यतः ॥ १५ ॥ एवं
विनिश्चयंकृत्वाश्वोभूतइतिराघवः ॥ विसर्जयामासतदासर्वांस्ताञ्छत्रुसूदनः ॥ १६ ॥ इतिसंप्रविचार्यराजसिंहःश्वोभूतेशपथस्यनिश्चयम् ॥
विससर्जमुनीन्नृपांश्चसर्वान्समहात्माममहतोमहानुभावः ॥ १७ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे पंचनवतितमः
सर्गः ॥ ९५ ॥ तस्यांरजन्यांव्युष्टायांयज्ञवाटंगतोनृपः ॥ ऋषीन्सर्वान्महातेजाःशब्दापयतिराघवः ॥ १ ॥ वसिष्ठोवामदेवश्चजाबालिरथका
श्यपः ॥ विश्वामित्रोदीर्घतमादुर्वासाश्चमहातपाः ॥२॥ पुलस्त्योपितथाशक्तिर्भार्गवश्चैववामनः ॥ मार्कंडेयश्चदीर्घायुर्मौद्गल्यश्चमहायशाः ॥३॥
गर्गश्चच्यवनश्चैवशतानंदश्चधर्मवित् ॥ भरद्वाजश्चतेजस्वीअग्निपुत्रश्चसुप्रभः ॥ ४ ॥ नारदःपर्वतश्चैवगौतमश्चमहायशाः ॥ एतेचान्येचबहवो
मुनयःसंशितव्रताः ॥ ५ ॥ कौतूहलसमाविष्टाःसर्वएवसमागताः ॥ राक्षसाश्चमहावीर्यावानराश्चमहाबलाः ॥ ६ ॥ सर्वएवसमाजग्मुर्महा
त्मानःकुतूहलात् ॥ क्षत्रियायेचशूद्राश्चवैश्याश्चैवसहस्रशः ॥ ७ ॥

यह राति बीतनेपर महातेजस्वी रामचन्द्रने यज्ञशालामें गमन कर, सम्पूर्ण ऋषियोंको बुलाय ॥ १ ॥ वसिष्ठ, वामदेव, जाबालि, काश्यप, विश्वामित्र,
दीर्घतमा, महातेजस्वी दुर्वासा ॥ २ ॥ पुलस्त्य, शक्ति, भार्गव, वामन, दीर्घायु, मार्कण्डेय, महातेजस्वी मौद्गल्य ॥ ३ ॥ गर्ग, च्यवन, धर्मात्मा शतानन्द,
तेजस्वी भरद्वाज, अग्निपुत्र सुप्रभ ॥ ४ ॥ नारद, पर्वत, महायशस्वी गौतमजी इनको आदिले बहुतसे महाव्रतधारी मुनि ॥ ५ ॥ कौतूह
लमें सब आये, और महावीर्यवान राक्षस तथा महाबली वानर ॥ ६ ॥ और भी महात्मा बडी उत्कंठासे यज्ञशालामें आये और सहस्रों क्षत्रिय

वैश्य शूद्र ॥ ७ ॥ और अनेक देशोंसे आयेहुए महाव्रतधारी ब्राह्मणभी जानकीकी शपथ देखनेको सभामें आये ॥ ८ ॥ इस प्रकारसे सब आय कर प्रस्तरकी मूर्तिकी समान सभामें मौन होकर बैठगये. सबका आना सुनकर मुनिश्रेष्ठ वाल्मीकिजी जानकीके सहित सभामें आये ॥ ९ ॥ रामचन्द्रको मनमें धारण किये आंखोंमें आंसू भरे मुख नीचा किये हाथ जोडे श्रीमती महारानी जानकीजी वाल्मीकिजीके पीछे २ आई ॥ १० ॥ वाल्मीकिजीके पीछे ब्रह्माजीके पश्चात् श्रुतिकी समान जानकीको आती देखकर सभामें ❀ धन्य २ की ध्वनि होने लगी ॥ ११ ॥ उस समय सीताके दर्शनसे उत्पन्न हुए अत्यन्त दुःखसे सभाके लोग व्याकुल होगये और उनका बडा कोलाहल होनेलगा ॥ १२ ॥ कोई २ धन्य राम ! कोई २ धन्य सीता ! ! कोई २ धन्य रामसीता ! ! ! इसप्रकारसे कहकर कोलाहल करने लगे ॥ १३ ॥ तब मुनिश्रेष्ठ वाल्मीकिजी जानकीको संग लिये सभाके बीचमें प्रवेशकर रामचन्द्रसे बोले ॥ १४ ॥ यह जानकी रामचन्द्रकी भार्या सुव्रता और धर्मचारिणी हैं इनको अपवादसे रघुनाथजीने मेरे आश्रमके निकट त्याग दिया ॥ १५ ॥ हे महाव्रत रघुनाथजी ! आपने लोकापवादके भयसे जानकीको त्याग दिया है, इस विषयमें जानकी अपनी शुद्धिका परिचय देंगी. आप आज्ञा दीजिये ॥ १६ ॥ हे रघुनाथजी ! यह दोनों महाबली दुर्द्धर्ष तुम्हारे पुत्र हैं जो जानकीके उदरसे एक साथही उत्पन्न हुए हैं, यह हमारे वचन आप सत्य जानें ॥ १७ ॥ हे रामचन्द्र ! मैं वरुणजीका दशमा पुंत्र हूं मैंने आजतक कभी

नानादेशगताश्चैवब्राह्मणाःसंशितव्रताः ॥ सीताशपथवीक्षार्थंसर्वएवसमागताः ॥ ८ ॥ तदासमागतंसर्वमश्मभूतमिवाचलम् ॥ श्रुत्वामुनिवरस्तूर्णंससीतःसमुपागमत् ॥ ९ ॥ तमृषिंपृष्ठतःसीताअन्वगच्छदवाङ्मुखी ॥ कृतांजलिर्बाष्पकलाकृत्वाराममंमनोगतम् ॥ १० ॥ तांदृष्ट्वाश्रुतिमायांतींब्रह्माणमनुगामिनीम् ॥ वाल्मीकेःपृष्ठतःसीतांसाधुवादोमहानभूत् ॥११॥ ततोहलहलाशब्दःसर्वेषामेवमाबभौ ॥ दुःखजन्मविशालेन शोकेनाकुलितात्मनाम् ॥ १२ ॥ साधुरामेतिकेचित्तुसाधुसीतेतिचापरे ॥ उभावेवचतत्रान्यप्रेक्षकाःसंप्रचुक्रुशुः ॥ १३ ॥ ततोमध्येजनौघस्य प्रविश्यमुनिपुंगवः ॥ सीतासहायोवाल्मीकिरितिहोवाचराघवम् ॥ १४ ॥ इयंदाशरथेःसीतासुव्रताधर्मचारिणी ॥ अपवादात्परित्यक्ताममाश्रमसमीपतः ॥ १५ ॥ लोकापवादभीतस्यतवराममहाव्रत ॥ प्रत्ययंदास्यतेसीतातामनुज्ञातुमर्हसि ॥ १६ ॥ इमौतुजानकीपुत्रावुभौचयमजातकौ॥सुतौतवैवदुर्धर्षौसत्यमेतद्ब्रवीमिते ॥ १७ ॥ प्रचेतसोहंदशमःपुत्रोराघवनंदन ॥ नस्मराम्यनृतंवाक्यमिमौतुतवपुत्रकौ ॥ १८ ॥

❀ सभासद् मनमें–क्या येही सिय जनक दुलारी । तपसे कृशित अंग सब दुर्बल रघुपतिके प्राणोंकी प्यारी १ वल्कल वस्त्र किये ... एकटी ऋषिसंग प्यारी ३ मन नहिं धीर [illegible]

...पका स्मरणभी नहीं किया, यह दोनों तुम्हारे पुत्र हैं इसमें सन्देह नहीं॥ १८ ॥ मैंने सहस्रवर्षतक तपस्या कीहै यदि जानकीका चारित्र अशुद्ध हो तो मुझे तपस्याका फल कुछभी न प्राप्तहो ॥ १९॥ मन वचन कर्मसे जो पाप हमने कभी नहीं कियाहै, यदि जानकी पापरहित हैं, तो इस अनुष्ठानका फल हमें प्राप्त हो ॥२०॥ हे रघुनन्दन! हम पंच भूतोंसे निर्मित श्रोत्रादि पंच इंद्रिय और छठे मनसे जानकीको शुद्ध जानकर वनसे अपने आश्रमको लेगये थे ॥२१॥ यह पतिव्रता शुद्धाचार और पापरहित हैं, लोकापवादसे भीतहुए आपको अपना परिचय देंगी ॥२२॥ हे रघुनन्दन! मैंने दिव्यदृष्टिसे देखलिया है कि, जानकी शुद्ध हैं। आपभी जानते हैं कि, हमारी प्रिया जानकी शुद्ध हैं, परन्तु आपने इन्हें लोकापवादसे त्यागन करदिया है* ॥२३॥इत्यार्षे श्रीम० वा० आ० उ०भाषाटीकायां षण्णवतितमः सर्गः॥९६॥
वाल्मीकिजीके यह वचन सुन और सभाके बीचमें जानकीको खडी देख रघुनाथजी कर जोड कहने लगे॥ १ ॥ हे महाभाग धर्मज्ञ! जो आप कहते हैं यह

बहुवर्षसहस्राणितपश्चर्यामयाकृता ॥ नोपाश्नीयांफलंतस्यादुष्टेयंयदिमैथिली ॥ १९ ॥ मनसाकर्मणावाचाभूतपूर्वंनकिल्बिषम् ॥ तस्याहं फलमश्नामिअपापामैथिलीयदि ॥ २० ॥ अहंपंचसुभूतेषुमनःषष्ठेषुराघव ॥ विचिंत्यसीताशुद्धेतिजग्राहवननिर्झरे ॥ २१ ॥ इयंशुद्ध समाचाराअपापापतिदेवता ॥ लोकापवादभीतस्यप्रत्ययंतवदास्यति ॥२२॥ तस्मादियंनरवरात्मजशुद्धभावादिव्येनदृष्टिविषयेणमयाप्रदिष्टा॥ लोकापवादकलुषीकृतचेतसायात्यक्तात्वयाप्रियतमाविदितापिशुद्धा ॥२३॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे षण्णव तितमः सर्गः ॥ ९६ ॥ वाल्मीकिनैवमुक्तस्तुराघवःप्रत्यभाषत ॥ प्रांजलिर्जगतोमध्येदृष्ट्वातांवरवर्णिनीम् ॥ १ ॥ एवमेतन्महाभाग यथावदसिधर्मवित् ॥ प्रत्ययस्तुममब्रह्मंस्तववाक्यैरकल्मषैः ॥ २ ॥ प्रत्ययश्चपुरावृत्तोवैदेह्याःसुरसन्निधौ ॥ शपथश्चकृतस्तत्रतेनवेश्मप्रवे शिता ॥ ३ ॥ लोकापवादोबलवान्येनत्यक्ताहिमैथिली ॥ सेयंलोकभयाद्ब्रह्मन्नपापेत्यभिजानता ॥ परित्यक्तामयासीतातद्भवान्क्षंतुमर्हति ॥४॥

ठीक ऐसेहीहै; आपके पापरहित वाक्योंका मुझे विश्वासहै ॥ २ ॥ कारण कि, लंका जीतनेके उपरान्त देवताओंके समीपमें जानकीने शपथकीथी इसी कारण हम इनको शुद्ध जानकर घर लायेथे॥ ३॥परन्तु फिर लोकापवादको बलवान् जानकर हमने जानकीको त्यागा. हे भगवन्! मैं जानताहूं कि, जानकीमें कुछ पाप नहीं,

* दो०--आज श्रीरामके दर्बारमें यह दृश्य भारी है सभासद जितने हैं सबसे ये एक विनती हमारी है ॥ १ ॥ जो मैं कहताहूं उसको ध्यान देकर सब कोई सुना। मेरी वाणी नहीं झूंठी यह सब जगने विचारी है ॥ २ ॥ सो मैं श्रीसूर्य धर्म औ चंद्रको कर साक्षी इसमें, तनकभी झूंठ बोलूं तो तपस्या झूठ सारी है ॥ ३ ॥ महारानी ये सीताहै बनाये वेष तपसिनका, नहीं कुछःपापहै इनमें गिरा यह सत्य उचारीहै ॥ ४ ॥ जो तुम मानो मेरी बानी तो जानो शुद्धसीताको। नहीं कुछ मिथ्याहै संदेह शपथ क्या तपसे भारीहै ॥ ५ ॥

सीतामें मन लगाये रहगये ॥ २५ ॥ उन सम्पूर्ण ऋपियोंका समागम और सीताजीका प्रवेश देखकर मुहूर्त मात्रतक संपूर्ण जगत मोहित होगया ॥ २६ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषाटीकायां सप्तनवतितमः सर्गः ॥ ९७ ॥ जानकीको रसातलमें प्रवेशित हुई देखकर रघुनाथजीके निकटमें सम्पूर्ण वानर रोदन करने और मुनि धन्य धन्य कहने लगे ॥ १ ॥ काष्ठदंडमें आश्रित हो आंसुवोंसे नेत्र पूरितकिये नीचेको शिर दीन मनहो रघुनाथजी अत्यन्तही व्याकुल हुए॥ ॥ २ ॥ और बहुत काल तक रोदन करते करते नेत्रोंसे अविरल अश्रु त्यागन करते करते महाक्रोधित होकर रघुनाथजी बोले ॥ ३ ॥ जो कि, लक्ष्मीकी समान रूपवाली जानकीजी हमारे देखतेही देखते पातालमें प्रवेश करगई इस कारण हमें वह शोक प्राप्त हुआहै जैसा कभी नहीं हुआथा ॥ ४ ॥ जब कि, जनकसुताको मैं समुद्रके

सीताप्रवेशनंदृष्ट्वातेषामासीत्समागमः॥ तन्मुहूर्तमिवात्यर्थंसमंसंमोहितंजगत् ॥२६॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे सप्तनवतितमः सर्गः ॥ ९७ ॥ रसातलंप्रविष्टायांवैदेह्यांसर्ववानराः ॥ चुक्रुशुःसाधुसाध्वीतिमुनयोरामसन्निधौ ॥ १ ॥ दंडकाष्ठमवष्टभ्यबाष्प व्याकुलितेक्षणः ॥ अवाक्शिरादीनमनारामोह्यासीत्सुदुःखितः ॥२॥ सरुदित्वाचिरंकालंबहुशोबाष्पमुत्सृजन् ॥ क्रोधशोकसमाविष्टोरामोव चनमब्रवीत् ॥ ३ ॥ अभूतपूर्वंशोकंमेमनःस्प्रष्टुमिवेच्छति ॥ पश्यतोमेयथानष्टासीताश्रीरिवरूपिणी ॥ ४ ॥ साऽदर्शनंपुरासीतालंकांपारेम होदधेः ॥ ततश्चापिमयानीताकिंपुनर्वसुधातलात् ॥ ५ ॥ वसुधेदेविभवतिसीतानिर्यात्यतांमम ॥ दर्शयिष्यामिवारोपंयथामामवगच्छसि ॥ ॥ ६ ॥ कामंश्वश्रूर्ममैवत्वंत्वत्सकाशात्तुमैथिली ॥ कर्षताफालहस्तेनजनकेनोद्धृतापुरा ॥ ७ ॥ तस्मान्निर्यात्यतांसीताविवरंवाप्रयच्छमे ॥ पाता लेनाकपृष्ठेवावसेयंसहितस्तया ॥ ८ ॥ आनयत्वंहितांसीतांमत्तोऽहंमैथिलीकृते ॥ नमेदास्यसिचेत्सीतांयथारूपांमहीतले ॥ ९ ॥ सपर्वतवनांकृ त्स्नांव्यथयिष्यामितेस्थितिम्॥ नाशयिष्याम्यहंभूमिंसर्वमापोभवंत्विह ॥ १० ॥

पारसेभी ले आया कि, जहां उनके रहनेको नहीं कोई जानताथा फिर पृथ्वीके नीचेसे लाना क्या बडी बात है ॥५॥ हे पृथ्वी देवी भगवति । तुम हमारी जान कीको लादो यदि तुम हमारा अनादर करोगी तो हमभी तुमपर अपना क्रोध प्रकाश करेंगे ॥ ६ ॥ और तुमही हमारी सासुभी हो कारण कि, जनकने हल कर्षण करते समय तुमसे जानकीको पाया था ॥ ७ ॥ इस कारण या तो जानकीको लाओ या मुझे भी प्रवेश करनेको स्थान दो पाताल या स्वर्गमें जहां भी मैं जानकीको लाओ मैं उनके निमित्त अत्यन्त व्याकुलहूं और जो तुम जानकीको नहीं दोगी तो ... इस सब पृथ्वीको जलमें मग्न कर दूंगा इसमें सब जल

हो जायगा ॥ १० ॥ जब क्रोध और शोकसे रघुनाथजीने ऐसा कहा तो ब्रह्माजी देवताओंके सहित रघुनाथजीसे आकर बोले ॥ ११ ॥ हे राम ! हे सुव्रत ! आप किसी प्रकार सन्ताप न कीजिये हे शत्रुतापन ! आपने जो पूर्वकालमें देवताओंसे कहाथा कि, हम इतने कार्यके निमित्त पृथ्वीमें अवतार लेंगे उसे स्मरण कीजिये ॥ १२ ॥ हम आपको स्मरण नहीं कराते हे महाभुज ! हम प्रार्थना करते हैं कि आप अपने दुर्द्धर्ष वैष्णवरूपका इस समय ध्यान कीजिये अब मनुष्य नाट्यका समय ॥ १३ ॥ होचुका जानकीजी सब प्रकारसे पवित्र और सदा तुम्हारी अनुगामिनीहैं तुम्हारे आश्रित तपोबलसे नागलोकको गई ॥ १४ ॥ अब वैकुंठमें इनका और तुम्हारा फिर संगम होगा इस सभाके मध्यमें जो कुछ मैं आपसे कहताहूं वह मेरे वचन सुनो ॥ १५ ॥ और यह काव्य जो सब काव्योंमें उत्तम काव्यहै इसका आगे

एवंब्रुवाणेकाकुत्स्थेक्रोधशोकसमन्विते ॥ ब्रह्मासुरगणैःसार्धमुवाचरघुनंदनम् ॥ ११ ॥ रामरामनसंतापंकर्तुमर्हसिसुव्रत ॥ स्मरत्वंपूर्वकंभावंमंत्रं नामित्रकर्शन ॥ १२ ॥ नखलुत्वांमहाबाहोस्मारयेयमनुत्तमम् ॥ इमंमुहूर्तंदुर्धर्षस्मरत्वंजन्मवैष्णवम् ॥ १३ ॥ सीतादिविमलासाध्वीतवपूर्वप रायणा ॥ नागलोकंसुखंप्रायात्त्वदाश्रयतपोबलात् ॥ १४ ॥ स्वर्गेतेसंगमोभूयोभविष्यतिनसंशयः ॥ अस्यास्तुपरिषन्मध्येयद्ब्रवीमिनिबोध तत् ॥ १५ ॥ एतदेवहिकाव्यंतेकाव्यानामुत्तमंश्रुतम् ॥ सर्वंविस्तरतोरामव्याख्यास्यतिनसंशयः ॥ १६ ॥ जन्मप्रभृतितेवीरसुखदुःखोपसेव नम् ॥ भविष्यदुत्तरंचेहसर्वंवाल्मीकिनाकृतम् ॥ १७ ॥ आदिकाव्यमिदंरामत्वयिसर्वंप्रतिष्ठितम ॥ नह्यन्योर्हतिकाव्यानांयशोभाग्राघवाहते ॥ ॥ १८ ॥ श्रुतंतेपूर्वमेतद्धिमयासर्वंसुरैःसह ॥ दिव्यमद्भुतरूपंचसत्यवाक्यमनावृतम् ॥ १९ ॥ सत्वंपुरुषशार्दूलधर्मेणसुसमाहितः ॥ शेषंभवि ष्यंकाकुत्स्थकाव्यंरामायणंशृणु ॥ २० ॥ उत्तरंनामकाव्यस्यशेषमत्रमहायशः ॥ तच्छृणुष्वमहातेजऋषिभिःसार्धमुत्तमम् ॥ २१ ॥ नखल्वन्ये नकाकुत्स्थश्रोतव्यमिदमुत्तमम् ॥ परमऋषिणावीरत्वयैवरघुनंदन ॥ २२ ॥

बड़ा विस्तार होगा (अर्थात् इसकी कीर्ति होगी) जो इसमें लिखाहै उसीके अनुसार करो ॥ १६ ॥ हे राम ! जन्मसे लेकर जो आपको सुख दुःखकी प्राप्ति हुईहै यह सब वाल्मीकिजीने इसमें वर्णन कियाहै और शेष भविष्य उत्तरभी कहाहै जिसमें होनहार वर्णनहै ॥ १७ ॥ हे रघुनाथ ! इस आदिकाव्यकी सब कथा आपमें प्रतिष्ठापितहै, आपको छोड़कर इस काव्यके यशको कोई नहीं पासक्ता ॥ १८ ॥ यदि कहो तुम किस प्रकारसे जानतेहो ? तो हमने दिव्य अद्भुत रूप सत्य वचन संयुत और अज्ञानविनाशक यह काव्य देवताओंके साथही तुम्हारे यज्ञमें सब सुनाहै ॥ १९ ॥ हे पुरुषसिंह रघुनाथजी ! आप अब सावधान होकर शेष रामायण कोभी श्रवण कीजिये ॥ २० ॥ हे महातेजस्वी महायशस्वी ! आप उत्तरकाण्डको जो शेष रहाहै, इन ऋषियोंके साथही श्रवण कीजिये ॥ २१ ॥ इस शेषकाण्डके श्रवण करनेमें

अन्य भरतादिके श्रवण करनेका प्रयोजन नहींहै हे वीर रघुनन्दन ! ब्रह्मलोकनिवासी ऋषियोंके साथ इसे केवल आपही सुनिये ॥२२॥ तीनों भुवनके ईश्वर ब्रह्माजी रामचन्द्रसे यह कह (बांधव) देवताओंके सहित ब्रह्मलोकको गये ॥ २३ ॥ उनके संगमें जो ब्रह्मलोकनिवासी महात्मा ऋषि थे वे फिर रघुनाथजीकी यज्ञशालामें ब्रह्माजीकी आज्ञासे चले आये ॥ २४ ॥ कारण कि, उन्हेंभी रघुनाथजीके भविष्य चरित्रसुननेकी इच्छाथी, इसप्रकार रघुनाथजीने देवदेव ब्रह्माजीकी सुन्दर वाणी सुनकर॥ ॥२५॥ परमतेजस्वी वाल्मीकिजीसे कहा, हे भगवन् ! यह ब्रह्मलोकनिवासी ऋषि भविष्यश्रवणकी इच्छा करते हैं ॥ २६ ॥ जो कुछ हमारे विषयमें भविष्यहै, वह कल प्रातःकाल सुनाया जाय; ऐसा निश्चयकर और कुश लवको साथ ले ॥२७॥ उन सब मनुष्योंको विदाकर श्रीरामचन्द्रजी वाल्मीकिजीकी पर्णशालामें आये

एतावदुक्त्वावचनंब्रह्मात्रिभुवनेश्वरः ॥ जगामत्रिदिवंदेवोदेवैःसहसबांधवैः ॥ २३ ॥ येचतत्रमहात्मानऋषयोब्राह्मलौकिकाः ॥ ब्रह्मणासमनुज्ञातान्यवर्ततमहौजसः ॥ २४ ॥ उत्तरंश्रोतुमनसोभविष्यंयच्चराघवे ॥ ततोरामःशुभांवाणींदेवदेवस्यभाषिताम् ॥२५॥ श्रुत्वापरमतेजस्वीवाल्मीकिमिदमब्रवीत्॥भगवञ्श्रोतुमनसऋषयोब्राह्मलौकिकाः ॥२६॥ भविष्यदुत्तरंयन्मेश्वोभूतेसंप्रवर्तताम् ॥एवंविनिश्चयंकृत्वासंप्रगृह्यकुशीलवौ ॥२७॥ तंजनौघंविसृज्याथपर्णशालामुपागमत्॥ तामेवशोचतःसीतांसाव्यतीताचशर्वरी ॥२८॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदिका० उत्तरकांडे ऽष्टनवतितमः सर्गः॥९८॥ रजन्यांतुप्रभातायांसमानीयमहामुनीन्॥ गीयतामविशंकाभ्यांरामःपुत्रावुवाचह ॥१॥ततःसमुपविष्टेषुमहर्षिषुमहात्मसु ॥ भविष्यदुत्तरंकाव्यंजगतुस्तौकुशीलवौ ॥२॥ प्रविष्टायांतुसीतायांभूतलंसत्यसंपदा॥तस्यावसानेयज्ञस्यरामःपरमदुर्मनाः॥३॥ अपश्यमानोवैदेहींमेनेशून्यमिदंजगत् ॥ शोकेनपरमायस्तोनशांतिंमनसागमत् ॥४॥ विसृज्यपार्थिवान्सर्वानृक्षवानरराक्षसान् ॥ जनौघंविप्रमुख्यानांवित्तपूर्वंविसृज्यच ॥ ५ ॥

॥ २८ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा०वाल्मी०आदि० उत्तरकांडे भाषाटीकायामष्टनवतितमः सर्ग ॥९८॥ रघुनाथजी प्रातः होतेही नित्यकर्मसे निश्चिन्तहो सम्पूर्ण महामुनियोंको बुलाकर कुश लवसे बोले कि, अब तुम निःशंक होकर गाओ (माताके वियोगका दुःख और हम तुम्हारे पिता हैं यह शंका मत करो) ॥ १ ॥ इसके उपरान्त जब महात्मा ऋषि बैठगये तब भविष्य उत्तरकाण्ड कुश लवने गाना प्रारंभ किया ॥२॥ जब अपने सत्य और पातिव्रत्यकी सम्पत्तिके कारण जानकी रसातलमें प्रवेश कर गई तब उस यज्ञके अवसानमें रघुनाथजी बहुत दुःखी हुए ॥ ३ ॥ जानकीके बिना देखे रघुनाथजी जगत्को शून्य मानने लगे और ऐसे शोकित हुए कि, किसी प्रकार शान्तिको न प्राप्त हुए ॥ ४ ॥ तब रघुनाथजीने संपूर्ण राजा रीछ, वानर, राक्षस ब्राह्मण और जनसमूहको अनेक प्रकारके दान मान धनसे सन्तुष्ट किया॥५॥

किन्तु जब जब यज्ञ करते सोनेकी सीतासे यज्ञ पूर्ण किया जाता ॥ ७ ॥ [illegible]
दशगुणा फलदायक वाजपेय जिसमें बहुत सुवर्ण दान किया जाता है किये ॥ ८ ॥ अग्निष्टोम, अतिरात्र, गोसव [illegible]

राजीवलोचन रामचन्द्र उन सबको बिदाकर जानकीको हृदयमें धारण किये अयोध्यामें आये ॥ ६ ॥ जानकीके बिना रघुनाथजीने और कोई भार्या नहीं की किन्तु जब जब यज्ञ करते सोनेकी सीतासे यज्ञ पूर्ण किया जाता ॥ ७ ॥ इस प्रकारसे प्रतिवर्ष अश्वमेध यज्ञ दशसहस्र वर्षतक किये और सहस्र वर्षके पीछे दशगुणा फलदायक वाजपेय जिसमें बहुत सुवर्ण दान किया जाता है किये ॥ ८ ॥ अग्निष्टोम, अतिरात्र, गोमेधादि यज्ञ तथा औरभी अनेक यज्ञ महादक्षिणा और देकर किये ॥ ९ ॥ इसप्रकार उन महात्मा रामचन्द्रको धर्मपूर्वक राज्य करते हुए बहुत समय बीतगया ॥ १० ॥ रीछ वानर और राक्षसभी सदा रामचन्द्र आज्ञा मानते रहे और प्रतिदिन देशान्तरोंके राजा आकर रघुनाथजीको प्रसन्न करते रहे ॥ ११ ॥ कालमें सदा मेघ वर्षता, दुर्भिक्ष कभी नहीं होता, दिशा

ततोविसृज्यतान्सर्वान्रामोराजीवलोचनः ॥ हृदिकृत्वासदासीतामयोध्यांप्रविवेशह ॥६॥ नसीतायाःपरांभार्यांवव्रेसरघुनन्दनः ॥ यज्ञेयज्ञे त्वर्थंजानकीकांचनीभवत् ॥ ७ ॥ दशवर्षसहस्राणिवाजिमेधानथाकरोत् ॥ वाजपेयान्दशगुणांस्तथाबहुसुवर्णकान् ॥ ८ ॥ अग्निष्टोमाति त्राभ्यांगोसवैश्चमहाधनैः ॥ ईजेक्रतुभिरन्यैश्चसश्रीमानाप्तदक्षिणैः ॥९॥ एवंसकालःसुमहान्राज्यस्थस्यमहात्मनः॥ धर्मेप्रयतमानस्यव्यतीय घवस्यच ॥ १० ॥ ऋक्षवानररक्षांसिस्थितारामस्यशासने ॥ अनुरंजंतिराजानोह्यहन्यहनिराघवम् ॥ ११ ॥ कालेवर्षतिपर्जन्यःसुभिक्षं लादिशः ॥ हृष्टपुष्टजनाकीर्णंपुरंजनपदास्तथा ॥ १२ ॥ नाकालेम्रियतेकश्चिन्नव्याधिःप्राणिनांतथा ॥ नानर्थोविद्यतेकश्चिद्रामेराज्यंप्रश मति ॥ १३ ॥ अथदीर्घस्यकालस्यराममातायशस्विनी ॥ पुत्रपौत्रैःपरिवृताकालधर्ममुपागमत् ॥ १४ ॥ अन्वियायसुमित्राचकैकेयीच शस्विनी ॥ धर्मंकृत्वाबहुविधंत्रिदिवेपर्यवस्थिता ॥ १५ ॥ सर्वाःप्रमुदिताःस्वर्गेराज्ञादशरथेनच ॥ समागतामहाभागाःसर्वधर्मंचलेभिरे ॥ ॥ १६ ॥ तासांरामोमहादानंकालेकालेप्रयच्छति ॥ मातॄणामविशेषेणब्राह्मणेषुतपस्विषु ॥ १७ ॥ पित्र्याणिब्रह्मरत्नानियज्ञान्परमदुस्तरान् ॥ चकारराामोधर्मात्मापितृन्देवान्विवर्धयन् ॥ १८ ॥

रहतीं, नगर देश सब हृष्ट पुष्ट मनुष्योंसे भरे पुरे रहते ॥ १२ ॥ न कोई अकालमें मरता, न प्राणियोंको कुछ बाधा होती, बहुत क्या रामचन्द्रके राज्यशासनमें भी कुछ अनर्थ नहीं था ॥ १३ ॥ तब बहुत काल बीतनेपर रामकी यशस्विनी माता कौशल्याजी पुत्र पौत्रोंसे संयुक्तहो मरणको प्राप्त हुईं ॥ १४ ॥ इसी अनेक धर्म करके उनके कुछ दिनही उपरान्त सुमित्रा और कैकेयीभी मृत्युवश हुईं ॥ १५ ॥ वे सब महाभाग्यवती स्वर्गमें प्राप्त होकर अपने पति राजा दशरथ मिलकर धर्मफल भोगने लगीं॥ १६ ॥ रामचन्द्रजी उन सब माताओंके कल्याणनिमित्त तपस्वी और ब्राह्मणोंको अनेक प्रकारके दान करते रहे॥ १७ ॥ धर्मात्मा रामचन्द्र

पितर और देवताओंकी वृद्धिके निमित्त और अपने पिताकी वृद्धिके निमित्त अनेक प्रकारके रत्नोंके दान और यज्ञके अनुष्ठान करते रहे ॥ १८ ॥ इसप्रकार यज्ञा नुष्ठानसे सदा धर्मकी वृद्धि करते कई सहस्र वर्षतक रघुनाथजी सुखसे राज्य करते रहे ॥ १९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आ० उत्त० भाषाटीकायां यज्ञावसानं नामैकोनशततमः सर्गः ॥९९॥ कुछ समयके उपरान्त केकय देशके राजा युधाजितने रघुनाथजीके निकट अपने गुरुको भेजा ॥ १ ॥ उनका नाम, गार्ग्य था ये गार्ग्यजी अंगिराके पुत्र महाज्ञानी ब्रह्मर्षि थे, उनके साथ दश सहस्र उत्तम काबुल देशके घोडे ॥ २ ॥ नाना प्रकारके विचित्र ऊनी वस्त्र शाल दुशाले उनमें एक वस्त्र तो बहुत मोलका था इसी प्रकार रत्न और भूषण बडे प्रसन्नहो राजाने रघुनाथजीके निमित्त दिवाकर भेजे ॥ ३ ॥ रघुनाथजीने जब यह सुना कि, महात्मा गार्ग्यजी आते हैं

एवंवर्षसहस्राणिबहून्यथययुःसुखम् ॥ यज्ञैर्बहुविधंधर्मंवर्धयानस्यसर्वदा ॥ १९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे यज्ञावसानंनामैकोनशततमः सर्गः ॥ ९९ ॥ कस्यचित्त्वथकालस्ययुधाजित्केकयोनृपः ॥ स्वगुरुंप्रेषयामासराघवायमहात्मने ॥ १ ॥ गार्ग्यमंगिरसःपुत्रंब्रह्मर्षिममितप्रभम् ॥ दशचाश्वसहस्राणिप्रीतिदानमनुत्तमम् ॥ २ ॥ कंबलानिचरत्नानिचित्रवस्त्रमथोत्तमम् ॥ रामायप्रददौराजा शुभान्याभरणानिच ॥ ३ ॥ श्रुत्वातुराघवोधीमान्महर्षिंगार्ग्यमागतम् ॥ मातुलस्याश्वपतिनःप्रहितंतन्महाधनम् ॥ ४ ॥ प्रत्युद्गम्यचकाकुत्स्थःक्रोशमात्रंसहानुजः ॥ गार्ग्यंसंपूजयामासतथाशक्रोबृहस्पतिम् ॥ ५ ॥ तथासंपूज्यतमृषिंतद्धनंप्रतिगृह्यच ॥ पृष्ट्वाप्रतिपदंसर्वंकुशलंमातुलस्यच ॥ ६ ॥ उपविष्टंमहाभागंरामःप्रष्टुंप्रचक्रमे ॥ किमाहमातुलोवाक्यंयदर्थंभगवानिह ॥ ७ ॥ प्राप्तोवाक्यविदांश्रेष्ठःसाक्षादिवबृहस्पतिः ॥ रामस्यभाषितंश्रुत्वामहर्षिःकार्यविस्तरम् ॥ ८ ॥ वक्तुमद्भुतसंकाशंराघवायोपचक्रमे ॥ मातुलस्तेमहाबाहोवाक्यमाहनरर्षभः ॥ ९ ॥ युधाजित्प्रीतिसंयुक्तंश्रूयतांयदिरोचते ॥ अयंगंधर्वविषयःफलमूलोपशोभितः ॥ १० ॥

और अश्वपति मामाने इनके साथ बहुत धनभी भेजाहै ॥ ४ ॥ एक कोशतक रामचन्द्र भाइयों सहित उनकी अगौनीको गये, और जैसे इन्द्र बृहस्पतिजीकी पूजा करतेहैं, इस प्रकार उनकी पूजा की ॥ ५ ॥ सम्यक् प्रकारसे ऋषिका पूजन कर और मामाका भेजा वह धन ले मामाके घरकी कुशल वार्ता बहुत प्रकारसे पूँछी ॥ ६ ॥ फिर रघुनाथजी ऋषिको वर लाय अच्छी प्रकार बैठाय पूँछनेलगे, कि हमारे मातुलने क्या संदेशा भेजाहै, जिसकारण आप ॥ ७ ॥ यहां पधारेहो आप बोलनेवालोंमें साक्षात् बृहस्पतिके समानहो, रामचन्द्रके वचन सुनकर महर्षि कार्यको विस्तारपूर्वक ॥ ८ ॥ रामचन्द्रसे कहने लगे, हे नरश्रेष्ठ महाभुज ! आपके मामाने यह संदेशा दियाहै ॥ ९ ॥ जो युधाजितने कहाहै वह आप प्रीतिसे सुनिये, यदि अच्छा लगे तो करिये; यह गंधर्व देश बहुतसे फल और मूलोंसे

निहारा ॥ १४ ॥ रामचन्द्रजी कर जोड प्रसन्नतासे बोले हे महर्षि ! आपका मंगलहो यह दोनों कुमार उस देशको जावेंगे

गन्धर्वके पुत्र हैं हे काकुत्स्थ! उनको युद्धमें जीत वह सुंदर गंधर्व नगर॥ १२॥ अपने राज्यमें मिलाइये हे महाबाहो! उस परमसुंदर देशमें दूसरेका गति नहीं है, यदि आपको रुचै तो कीजिये कुछ हम आपका अनभल नहीं चाहते॥ १३॥ मामाके यह वचन सुनकर रामचन्द्र बहुत प्रसन्न हुए और 'बहुत अच्छा' कहकर भरतकी ओर निहारा॥ १४॥ रामचन्द्रजी कर जोड प्रसन्नतासे बोले हे महर्षि! आपका मंगलहो यह दोनों कुमार उस देशको जायँगे॥ १५॥ भरतजीके दोनों कुमार महा बली तक्ष, और पुष्कल अपने धर्ममें सावधानहो वहाँ जायँगे, और मामासे रक्षितहो वहांका राज्य करेंगे॥ १६॥ भरतजी इन कुमारोंके संगमें बहुतसी सेना लेकर

सिंधोरुभयतःपार्श्वेदेशःपरमशोभनः॥ तंचरक्षंतिगंधर्वाःसायुधायुद्धकोविदाः॥११॥ शैलूषस्यसुतावीरतिस्रःकोट्योमहाबलाः॥ तान्विनिर्जित्यकाकुत्स्थगंधर्वनगरंशुभम्॥१२॥ निवेशयमहाबाहोस्वेपुरेसुसमाहिते॥अन्यस्यनगतिस्तत्रदेशःपरमशोभनः॥रोचतांतेमहाबाहोनाहंत्वामहितंवदे॥१३॥ तच्छ्रुत्वाराघवःप्रीतोमहर्षेर्मातुलस्यच॥उवाचबाढमित्येवभरतंचान्ववैक्षत॥१४॥ सोऽब्रवीद्राघवःप्रीतःसांजलिप्रग्रहोद्विजम्॥ इमौकुमारौतंदेशंब्रह्मर्षेविचरिष्यतः॥१५॥ भरतस्यात्मजौवीरौतक्षःपुष्कलएवच॥ मातुलेनसुगुप्तौतुधर्मेणसुसमाहितौ॥१६॥ भरतंचाग्रतःकृत्वाकुमारौसबलानुगौ॥निहत्यगंधर्वसुतान्द्वेपुरेविभजिष्यतः॥१७॥ निवेश्यतेपुरवरेआत्मजौसन्निवेश्यच॥ आगमिष्यतिमेभूयःसकाशमतिधार्मिकः॥१८॥ब्रह्मर्षिमेवमुक्त्वातुभरतंसबलानुगम्॥आज्ञापयामासतदाकुमारौचाभ्यषेचयत्॥१९॥ नक्षत्रेणचसौम्येनपुरस्कृत्यांगिरःसुतम्॥ भरतःसहसैन्येनकुमाराभ्यांविनिर्ययौ॥२०॥सासेनाशक्रयुक्तेवनगरान्निर्ययावथ॥ राघवानुगतादूरंदुराधर्षासुरैरपि॥२१॥ मांसाशिनश्चयेसत्त्वारक्षांसिसुमहांतिच॥ अनुजग्मुर्हिभरतंरुधिरस्यपिपासया॥२२॥भूतग्रामाश्चबहवोमांसभक्षाःसुदारुणाः॥ गंधर्वपुत्रमांसानिभोक्तुकामाःसहस्रशः॥ २३॥

जायँगे, और उन गंधर्व कुमारोंको मारकर वहां दो नगर बसावेंगे॥१७॥ उन पुरोंको बसाय और अपने पुत्रोंको वहाँका राज्य दे, हमारे पास शीघ्र यह धर्मात्मा चले आवेंगे॥ १८॥ इस प्रकार ब्रह्मर्षिसे कह रघुनाथजीने सेनासहित भरतजीको वहां जानेकी आज्ञादी और दोनों कुमारोंका अभिषेक किया॥ १९॥ अच्छे नक्षत्रमें अंगिराके पुत्र गार्ग्य ऋषिको आगे कर दोनों कुमारोंको साथले सेनासहित भरतजीने प्रस्थान किया॥ २०॥ वह सेना इंद्रकी समान भरतजीसे पालितहो नगरसे निकल उनके पीछे २ चली और देवताओंसे दुर्धर्ष उस सेनाकी दोनों कुमार रक्षा करते थे जब कुछ दूर गये॥ २१॥ मांसभक्षी जीव और बडे २ राक्षसभी गन्धर्व पुत्रोंके रुधिरके प्यासेहो भरतके पीछे चले॥ २२॥ औरभी अनेक प्राणी जो बडे दारुण और मांसभक्षी थे वे सहस्रोंही गन्धर्वपुत्रोंके मांस

भक्षण करनेको चले ॥ २३ ॥ सिंह, व्याघ्र, वराह तथा आकाशचारी सहस्रों पक्षी सेनाके आगे २ चले ॥ २४ ॥ वह सेना नीरोगतासे ठहरतीहुई सम्पूर्ण हृष्ट पुष्ट मनुष्योंसे युक्त हुई डेढमासमें केकयदेशमें पहुँच गई ॥ २५ ॥ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषाटीकायां शततमः सर्गः ॥ १०० ॥ ॥ जब केकयदेशके राजाने सुना कि, भरतजी सेनापति होकर आये हैं तब युधाजित् गर्गके सहित बहुतही प्रसन्न हुए ॥ १ ॥ केकयाधिपति बहुत मनुष्योंकी सेना साथ ले गन्धर्वोंके जीतनेके निमित्त बडी शीघ्रतासे चले ॥ २ ॥ महा पराक्रमी भरत और युधाजित् दोनों मिलकर सेना वाहन प्यादोंसहित गन्धर्व नगरमें पहुँचे ॥ ॥ ३ ॥ भरतको युद्ध करनेके निमित्त आये सुनकर महाबली वे गन्धर्व इकट्ठे हो युद्ध करनेकी इच्छासे गर्जने लगे ॥ ४ ॥ तब उन गन्धर्वोंके साथ, बराबर सात

सिंहव्याघ्रवराहाणांखेचराणांचपक्षिणाम् ॥ बहूनिवैसहस्राणिसेनायाययुरग्रतः ॥ २४ ॥ अध्यर्धमासमुषितापथिसेनानिरामया ॥ हृष्टपुष्टजनाकीर्णाकेकयंसमुपागमत् ॥ २५ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे शततमः सर्गः ॥ १०० ॥ श्रुत्वासेनापतिंप्राप्तं भरतंकेकयाधिपः ॥ युधाजिद्गर्गसहितंपरांप्रीतिमुपागमत् ॥ १ ॥ सनिर्ययौजनौघेनमहताकेकयाधिपः ॥ त्वरमाणोभिचक्रामगंधर्वान्केकयाधिपः ॥ २ ॥ भरतश्चयुधाजिच्चसमेतौलघुविक्रमैः ॥ गंधर्वनगरंप्राप्तौसबलौसपदानुगौ ॥ ३ ॥ श्रुत्वातुभरतंप्राप्तंगन्धर्वास्तेसमागताः ॥ योद्धुकामामहावीर्याव्यनदंस्तेसमंततः ॥ ४ ॥ ततःसमभवद्युद्धंतुमुलंलोमहर्षणम् ॥ सप्तरात्रंमहाभीमंनचान्यतरयोर्जयः ॥ ५ ॥ खड्गशक्तिधनुर्ग्राहा नद्यःशोणितसंस्रवाः ॥ नृकलेवरवाहिन्यःप्रवृत्ताःसर्वतोदिशम् ॥ ६ ॥ ततोरामानुजःक्रुद्धःकालस्यास्त्रंसुदारुणम् ॥ संवर्तंनामभरतोगंधर्वेष्वभ्यचोदयत् ॥ ७ ॥ तेबद्धाःकालपाशेनसंवर्तेनविदारिताः ॥ क्षणेनाभिहतास्तेनतिस्रःकोट्योमहात्मना ॥ ८ ॥ तद्युद्धंतादृशंघोरंनस्मरंतिदिवौकसः ॥ निमेषांतरमात्रेणतादृशानांमहात्मनाम् ॥ ९ ॥ हतेषुतेषुसर्वेषुभरतःकेकयीसुतः ॥ निवेशयामासतदासमृद्धेद्वेपुरोत्तमे ॥ १० ॥

दिन राततक बडा भयंकर और रोमहर्षण युद्ध होता रहा, परन्तु किसीकी जय वा पराजय न हुई ॥ ५ ॥ उस युद्धमें रुधिरकी नदी प्रवाहित होने लगी जिसमें खड्ग शक्ति और धनुष ग्राहरूप और मनुष्योंके शरीर कच्छपाकार दृष्टि आते थे ॥ ६ ॥ तब महाक्रोधकर रामानुज भरतने दारुण संवर्त नाम कालास्त्र जो प्रलय करनेवाला है लेकर गन्धर्वोंके ऊपर चलाया ॥७॥ वे सब गन्धर्व संवर्त अस्त्रसे विदारित होकर कालपाशमें बँधगये; इसप्रकारसे महात्मा भरतने क्षणमात्रमें वे तीन करोड गन्धर्व मारडाले ॥ ८ ॥ यह ऐसा युद्ध हुआ कि, देवताओंने कभी ऐसा युद्धनहीं देखा था; कि एक निमेषमें उन गन्धर्वोंका संहार होगया ॥९॥ इन गन्धर्वोंके नष्ट [illegible]
एक दूसरेकी स्पर्धाही करते थे ॥ १२ ॥ उन दोनों सुन्दर नगरोंमें [illegible]
॥ १३ ॥ यह दोनों नगर अनेक प्रकारके बडे श्रेष्ठ घरोंसे शोभायमान और बडे विस्तारके विमानोंसे [illegible]

होनेपर कैकेयीपुत्र भरतजीने वहांपर दो सुन्दर नगर बसाये ॥ १० ॥ उनका तक्षशिलावती पुरी नाम रख [illegible] बसाकर [illegible] पुष्कलावत नगर बसाकर वहांका राज्य पुष्कलको दिया ॥ ११ ॥ वे दोनों नगर धन रत्नादिकोंसे पूर्ण वन उपवनोंसे शोभायमान मानो अपने बडे बडे गुणोंमें एक दूसरेकी स्पर्धाही करते थे ॥ १२ ॥ उन दोनों सुन्दर नगरोंमें निर्मल व्यवहारोंसे प्रकाश होरहा था, बगीचे और चौराहे तथा चौक बडे रमणीक थे ॥ ॥ १३ ॥ वह दोनों नगर अनेक प्रकारके बडे श्रेष्ठ घरोंसे शोभायमान और बडे विस्तारयुक्त विमानोंसे परिपूर्ण थे ॥ १४ ॥ बडे बडे देवमन्दिरोंमें उनकी शोभा दुगुनी हो रहीथी ताल तमाल तिलक बकुल इन वृक्षोंसे शोभायमान ॥१५॥ इन नगरोंमें पुत्रोंको अभिषेकित कर भरतजी पांच वर्षतक वहां रहे, जब राज्य

तक्षंतक्षशिलायांतुपुष्कलंपुष्कलावते॥ गंधर्वदेशेरुचिरेगांधारविषयेचसः॥११॥ धनरत्नौघसंकीर्णेकाननैरुपशोभिते ॥ अन्योन्यसंघर्षकृतस्पर्धयागुणविस्तरैः ॥१२॥ उभेसुरुचिरप्रख्येव्यवहारैरकिल्बिषैः ॥ उद्यानयानसंपूर्णेसुविभक्तांतरायणे॥१३॥उभेपुरवरेरम्येविस्तरैरुपशोभिते ॥गृहमुख्यैःसुरुचिरैर्विमानैर्बहुभिर्वृते ॥ १४ ॥ शोभितेशोभनीयैश्चदेवायतनविस्तरैः ॥ तालैस्तमालैस्तिलकैर्बकुलैरुपशोभिते ॥ १५ ॥ निवेश्यपंचभिर्वर्षैर्भरतोराघवानुजः ॥ पुनरायान्महाबाहुरयोध्यांकेकयीसुतः ॥ १६ ॥ सोभिवाद्यमहात्मानंसाक्षाद्धर्ममिवापरम् ॥ राघवंभरतःश्रीमान्ब्रह्माणमिववासवः ॥ १७ ॥ शशंसचयथावृत्तंगंधर्ववधमुत्तमम् ॥ निवेशनंचदेशस्यश्रुत्वाप्रीतोस्यराघवः ॥ १८ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांड एकोत्तरशततमःसर्गः ॥ १०१ ॥ तच्छ्रुत्वाहर्षमापेदेराघवोभ्रातृभिःसह ॥ वाक्यंचाद्भुतसंकाशंभ्रातॄन्प्रोवाचराघवः ॥ १ ॥ इमौकुमारौसौमित्रेतवधर्मविशारदौ ॥ अंगदश्चंद्रकेतुश्चराज्यार्थेदृढविक्रमौ ॥ २ ॥ इमौराज्येभिषेक्ष्यामिदेशःसाधुविधीयताम् ॥ रमणीयोह्यसंबाधोरमेतांयत्रधन्विनौ ॥ ३ ॥

दृढ होगया, तब महाबाहु कैकेयीके पुत्र भरतजी फिर अयोध्याको चले आये ॥ १६ ॥ जिसप्रकार ब्रह्माजीको इन्द्र प्रणाम करतेहैं, इसी प्रकारसे साक्षात् धर्मकी समान विराजमान श्रीमान् महात्मा रामचन्द्रजीको भरतजीने प्रणाम कर ॥ १७ ॥ जिस प्रकारसे गंधर्वोंका वध किया वह और दोनों देशोंका बसाना यह सब रघुनाथजीसे निवेदन किया, जिसे सुनकर रामचन्द्रजी प्रसन्न हुए ॥ १८ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषाटीकायामेकोत्तरशततमः सर्गः ॥१०१॥

भरतजीके यह वचन सुन रामचन्द्र भाइयों सहित बडे प्रसन्न हुए और फिर भाइयोंसे कहने लगे ॥ १ ॥ हे लक्ष्मण ! यह जो तुम्हारे दोनों कुमार अंगद और चन्द्रकेतु हैं, अब यह अपने पराक्रमसे राज्य करने योग्य होगये हैं ॥ २ ॥ मेरी इच्छाहै कि, किसी देशका राज्य इनको दिया जाय, सो ऐसा देश विचारो जो रम

णीय और बाधारहित हो जहां यह दोनों धनुषधारी आनंदसे रहें ॥ ३ ॥ न तो वहां किसी राजाकी पीडा हो, न किसी आश्रमीको पीडा हो, हे सौम्य ! ऐसा देश विचारो जहां किसीका अपराध न करना पडे ॥ ४ ॥ रामचन्द्रके ऐसा कहनेपर भरतजी बोले, यह कारुपथ देश बडा रमणीय और सब प्रकारकी बाधाओंसे रहितहै ॥५॥ वहांका राज्य तो महात्मा अंगदको दीजिये और चन्द्रकान्त नगरका राज्य चन्द्रकेतुको दो ॥६॥ भरतके यह वचन रघुनाथजीने ग्रहण किये, उस देशको अपने वशमें कर वहांअं गदको अभिषेकित किया ॥ ७ ॥ इसप्रकारसे कामरूपदेशमें रमणीय अंगदीया नाम पुरी, अनेक प्रकारसे रक्षित करके सरलकर्मा श्रीरामचन्द्रने अंगदको वहांका राज्य दिया ॥ ८ ॥ और मल्लभूमिमें स्वर्गपुरीकी समान चन्द्रकान्तापुरी बसाकर वहांका राज्य महाविक्रमी चन्द्रकेतुको दिया ॥ ९ ॥ युद्धमें

नराज्ञांयत्रपीडास्यान्नाश्रमाणांविनाशनम् ॥ सदेशोदृश्यतांसौम्यनापराध्यामहेयथा ॥४॥ तथोक्तवतिरामेतुभरतःप्रत्युवाचह ॥ अयंकारुपथो देशोरमणीयोनिरामयः ॥ ५ ॥ निवेश्यतांतत्रपुरमंगदस्यमहात्मनः ॥ चंद्रकेतोःसुरुचिरंचंद्रकांतंनिरामयम् ॥ ६ ॥ तद्वाक्यंभरतेनोक्तंप्रतिजग्राहराघवः॥ तंचकृत्वावशेदेशमंगदस्यन्यवेशयत् ॥७॥ अंगदीयापुरीरम्याप्यंगदस्यनिवेशिता ॥ रमणीयासुगुप्ताचरामेणाक्लिष्टकर्मणा॥८॥चंद्रकेतोश्चमल्लस्यमल्लभूम्यांनिवेशिता ॥ चंद्रकांतेतिविख्यातादिव्यास्वर्गपुरीयथा ॥ ९ ॥ ततोरामःपरांप्रीतिंलक्ष्मणोभरतस्तथा ॥ ययुर्युद्धेदुराधर्षाअभिषेकंचचक्रिरे ॥ १० ॥ अभिषिच्यकुमारौद्वौप्रस्थाप्यसुसमाहितौ ॥ अंगदंपश्चिमांभूमिंचंद्रकेतुमुदङ्मुखम् ॥ ११ ॥ अंगदंचापिसौमित्रिर्लक्ष्मणोनुजगामह ॥ चंद्रकेतोस्तुभरतःपार्ष्णिग्राहोबभूवह ॥ १२ ॥ लक्ष्मणस्त्वंगदीयायांसंवत्सरमथोषितः ॥ पुत्रेस्थितेदुराधर्षेअयोध्यांपुनरागमत् ॥ १३ ॥ भरतोपितथैवोष्यसंवत्सरमतोधिकम् ॥ अयोध्यांपुनरागम्यरामपादावुपास्तसः ॥ १४ ॥ उभौसौमित्रिभरतौरामपादावनुव्रतौ ॥ कालंगतमपिस्नेहान्नजज्ञातेऽतिधार्मिकौ ॥ १५ ॥

दुराधर्ष रामचन्द्र भरत और लक्ष्मणने प्रसन्न होकर कुमारोंका अभिषेक कर दिया ॥१०॥ उन दोनों कुमारोंका अभिषेक करके सावधानतासे अंगदको तो पश्चिम देशकी पुरीमें, और चन्द्रकेतुको उत्तर ओरकी पुरीमें भेज दिया ॥ ११ ॥ अंगदके साथ तो लक्ष्मण और चन्द्रकेतुके साथ भरतजी सहायताके निमित्त गये ॥ १२ ॥ लक्ष्मण अंगदीयापुरीमें एक वर्षतक रहे जब देखा कि, अब पुत्रका राज्य दृढ होगया, तब फिर अयोध्याको चले आये ॥ १३ ॥ इसी प्रकार भरतजीभी वर्षदिनसे कुछ अधिक चन्द्रकेतुकी पुरीमें रहकर फिर रघुनाथजीकी सेवा करनेको अयोध्यामें चले आये ॥ १४ ॥ यह दोनों महात्मा धर्मज्ञ भरत और लक्ष्मणजी रामचन्द्रकी सेवा करतेरहे [illegible] ॥ १५ ॥

॥ १६ ॥ इस प्रकारसे उस धर्मपुरीमें लक्ष्मीसे युक्तहो संतुष्ट चित्तसे विहार करते बहुत समय बीत गया, [illegible] यज्ञकी प्रज्वलित तीन ३ अग्नियोंके स

जिससे उन्हें बहुत समय बीतगया, परन्तु उन्होंने कुछ न जाना ॥ १५ ॥ इस प्रकारसे धर्मपूर्वक प्रजा पालन करते हुए रामचन्द्रको दश सहस्र वर्ष बीतगये ॥ ॥ १६ ॥ इस प्रकारसे उस धर्मपुरीमें लक्ष्मीसे युक्तहो संतुष्ट चित्तसे विहार करते बहुत समय बीत गया, और वे तीनों भाई अपने प्रज्वलित अग्निके समान प्रकाशसे यज्ञकी प्रज्वलित तीन अग्नियोंके समान शोभित हुए ॥ १७ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० उत्तरकांडे भाषाटीकायां द्व्युत्तरशततमः सर्गः ॥१०२॥ ॥ इस प्रकार रामचन्द्रजीको धर्मपूर्वक राज्य करते २ कुछ दिन बीतनेपर तपस्वीका रूप बनाकर कालराज द्वारपर आया ॥ १ ॥ उसने लक्ष्मणसे कहा तुम अविपराक्रमी अतिबल महर्षिके दूत किसी कार्यके निमित्त रामचन्द्रके पास आये हैं ॥२॥ उसके यह वचन सुनकर लक्ष्मणजीने बडी शीघ्रतासे जाकर रामचंद्रजीने

एवंवर्षसहस्राणिदशतेषांययुस्तदा ॥ धर्मेप्रयतमानानांपौरकार्येषुनित्यदा ॥१६॥ विहृत्यकालंपरिपूर्णमानसाःश्रिय।वृताधर्मपरेचसंस्थिताः ॥ त्रयःसमिद्धाहुतिदीप्ततेजसोहुताग्नयःसाधुमहाध्वरेत्रयः ॥१७॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मी०आदिकाव्ये उत्तरकांडे द्व्युत्तरशततमःसर्गः१०२

कस्यचित्त्वथकालस्यरामेधर्मपरेस्थिते ॥ कालस्तापसरूपेणराजद्वारमुपागमत् ॥ १ ॥ दूतोह्यतिबलस्याहंमहर्षेरमितौजसः॥रामंदिदृक्षुरायातः कार्येणहिमहाबलः ॥ २ ॥ तस्यतद्वचनंश्रुत्वासौमित्रिस्त्वरयान्वितः ॥ न्यवेदयतरामायतापसंतंसमागतम् ॥ ३ ॥ जयस्वराजधर्मेणउभौलोकौ महाद्युते ॥ दूतस्त्वांद्रष्टुमायातस्तपसाभास्करप्रभः ॥ ४ ॥ तद्वाक्यंलक्ष्मणोक्तंवैश्रुत्वारामउवाचह ॥ प्रवेश्यतांमुनिस्तातमहौजास्तस्यवाक्य धृक् ॥५॥ सौमित्रिस्तुतथेत्युक्त्वाप्रावेशयततंमुनिम् ॥ ज्वलंतमिवतेजोभिःप्रदहंतमिवांशुभिः ॥ ६ ॥ सोभिगम्यरघुश्रेष्ठंदीप्यमानंस्वतेजसा ॥ ऋषिर्मधुरयावाचावर्धस्वेत्याहराघवम्॥७॥तस्मैरामोमहातेजाःपूजामर्घ्यपुरोगमाम्॥ददौकुशलमव्यग्रंप्रष्टुंचैवोपचक्रमे॥८॥ पृष्टश्चकुशलंतेनरामे णवदतांवरः॥ आसनेकांचनेदिव्येनिषसादमहायशाः ॥९॥ तमुवाचततोरामःस्वागतंतेमहामते॥प्रापयास्यचवाक्यानियतोदूतस्त्वमागतः॥१०॥

तपस्वीका आना निवेदन किया ॥ ३ ॥ हे महाराज! आपकी दोनों लोकमें जयहो, हे महाद्युतिमान्! एक सूर्यके समान कांतिवाले महर्षि आपके देखनेको आये हैं ॥४॥ लक्ष्मणके यह वचन सुनतेही रामचन्द्र बोले हे तात! उस सन्देशे लाये हुये महातेजस्वी मुनिको शीघ्र लाओ ॥ ५ ॥ रामचन्द्रके यह वचन श्रवण करतेही तेजसे प्रकाशमान और अपने किरणोंसे भस्मसा करतेहुए उन मुनिको रामचन्द्रके पास लाये ॥ ६ ॥ अपने तेजसे प्रकाशमान रामचन्द्रके पास उन ऋषिने जाकर कोमल वाणीसे आपकी जय और वृद्धिहो ऐसा कहा ॥ ७ ॥ महातेजस्वी रामचन्द्रजीने उन ऋषिको अर्घ्य पाद्य देकर आसनपर बैठाया और कुशल पूँछनेलगे ॥ ८ ॥ वह महायशस्वी सोनेके सिंहासनपर बैठे और बोलनेवालोंमें चतुर रामचन्द्रजी उनसे कुशल पूँछने लगे ॥ ९ ॥ रामचन्द्र बोले हे मतिमान्!

करीथी, वह समय अब पूरा होगया (यथा—दश वर्षसहस्राणि दश वर्षशतानि च । वत्स्यामि मानुषे लोके पालयन् पृथ्वीमिमामिति) ॥ ३ ॥ आप प्रलयकालमें अपनी शक्तिसे सब लोकोंका संहारकर अपने उदरमें धार महासागरमें शयन कर गयेथे बहुत कालके पीछे आपकी नाभिसे कमल हुआ जिससे मेरी उत्पत्ति हुई। (यथा यो ब्रह्माणं विदधाति पूर्वमिति श्रुतेः) ॥ ४ ॥ जलमें आप शेषनागके ऊपर शयन करतेथे, जिनको आपने अपनी मायासे उत्पन्न किया था, पुनः पृथ्वीके बनानेकी इच्छासे आपनेही महाबली जीव ॥ ५ ॥ मधु और कैटभ उत्पन्न किये उन्हें वध करनेसे मधुमें वसाथी जलमें मिल कर्दमरूपहो सूखकर पृथ्वी हुई और कैटभमें अस्थिथी जिसके शरीरसे यह पर्वत हुए इसप्रकार यह पर्वतों सहित पृथ्वी उत्पन्न हुई ॥ ६ ॥ फिर आपने अपनी नाभिसे सूर्यसमान कमल उत्पन्न कर उससे मुझे उत्पन्न किया और प्रजा उत्पन्न करनेका कार्य सब मुझे सौंप दिया ॥ ७ ॥ इसप्रकार आपसे प्राजापत्य अधिकार पाकर हमने आप जगदीश्वरकी उपासना

संक्षिप्यहिपुरालोकान्माययास्वयमेवहि ॥ महार्णवेशयानोऽप्सुमांत्वंपूर्वमजीजनः ॥ ४ ॥ भोगवंतंततोनागमनंतमुदकेशयम् ॥ मायायाजनयित्वात्वंद्वौचसत्त्वौमहाबलौ ॥ ५ ॥ मधुंचकैटभंचैवययोरस्थिचयैर्वृता ॥ इयंपर्वतसंबाधामेदिनीचाभवत्तदा ॥ ६ ॥ पद्मेदिव्येऽर्कसंकाशेनाभ्यामुत्पाद्यमामपि ॥ प्राजापत्यंत्वयाकर्ममयिसर्वंनिवेशितम् ॥ ७ ॥ सोऽहंसंन्यस्तभारोहित्वामुपास्यजगत्पतिम् ॥ रक्षांविधत्स्वभूतेषुममतेजस्करोभवान् ॥ ८ ॥ततस्त्वमसिदुर्धर्षात्तस्माद्भावात्सनातनात् ॥ रक्षांविधास्यन्भूतानांविष्णुत्वमुपजग्मिवान् ॥ ९ ॥ अदित्यांवीर्यवान्पुत्रोभ्रातॄणांवीर्यवर्धनः ॥ समुत्पन्नेषुकृत्येषुतेषांसाह्यायकल्पसे ॥ १० ॥ सत्वमुज्जास्यमानासुप्रजासुजगतोवर ॥ रावणस्यवधाकांक्षीमानुषेषुमनोदधाः ॥ ११ ॥ दशवर्षसहस्राणिदशवर्षशतानिच ॥ कृत्वावासस्यनियमंस्वयमेवात्मनापुरा ॥ १२ ॥ सत्वंमनोमयःपुत्रःपूर्णायुर्मानुषेष्विह ॥ कालोनरवरश्रेष्ठसमीपमुपवर्तितुम् ॥ १३ ॥

करके यह प्रार्थना की, हे भगवन्! जब आपने हमें सृष्टि उत्पन्न करनेकी सामर्थ्य दीहै तो इसका पालन आप कीजिये ॥ ८ ॥ यह वचन सुनकर तुम्हीं उस दुर्द्धर्ष समस्त संसारके मूलकारण होनेसे काल परिछेद त्रिगुण महत्तत्त्वनामक हिरण्यगर्भके सत्त्वप्रधानसे प्रजाकी रक्षा करनेको विष्णुरूप हुए ॥ ९ ॥ एक समय आपने इन्द्रादि देवताओंकी सहायताके निमित्त अदितिमें कश्यपसे जन्म लेकर दिव्य ज्ञानक्रियासे युक्त हो उपेन्द्र (वामन) नाम पाया था; और देवताओंके कार्यमें सहायता की ॥ १० ॥ हे जगत्में श्रेष्ठ! इसीप्रकार आपने इससमयभी प्रजाको महादुःखी देख रावणके वध करनेके निमित्त और प्रजाओंको सुख देनेको मनुष्यलोकमें अवतार ले रहनेकी इच्छा की ॥ ११ ॥ उस समय आपने ग्यारह सहस्र वर्षतक मनुष्यलोकमें रहनेका नियम किया था ॥ १२ ॥ सो आप राजा दशरथके यहां

आप अच्छी प्रकारसे आये, अब उनका संदेशा कहिये जिन्होंने आपको दूत बनाकर यहां भेजा है ॥ १० ॥ जब राजासिंह रघुनाथजीने यह कहा तो मुनिने कहा कि यह बात मैं तबहीं कहूँगा जब हम तुम दोहीजने होंगे, कारण कि देवताओंका हित देवताओंकी रहस्य बातके.छिपानेसेही होता है ॥ ११ ॥ और यहभी बात है कि,हम तुमको वार्त्ता करते समय जो देखले; या जो उन वार्तोंको सुने वह मारडाला जाय; क्योंकि उन ऋषिने ऐसाही कहाहै ॥१२॥ यह रामचन्द्रने स्वीकार करके लक्ष्मणसे कहा हे महाभुज ! तुम द्वारपर स्थित रहो, और वहांसे द्वारपालोंको विदा करो ॥ १३ ॥ हे लक्ष्मण ! इसका कारण यह है कि, जो कोई पुरुष इन ऋषिके साथ हमको वार्ता करते देखेगा; व वार्ता सुनेगा वह निश्चय मारडाला जायगा ॥ १४ ॥ इस प्रकार रामचन्द्रने लक्ष्मणको द्वारपर बैठायकर मुनिसे कहा अब आप संदेशा कहिये ॥ १५ ॥ जो कुछ आपका अभीष्टहो वा जिन्होंने तुमको भेजा है उनका मनोरथ आप निः

चोदितोराजसिंहेनमुनिर्वाक्यमभाषत ॥ द्वंद्वेह्येतत्प्रवक्तव्यंहितं वैयद्यवेक्षसे ॥११॥ यःशृणोतिनिरीक्षेद्वासवध्योभवितातव ॥ भवेद्वैमुनिमुख्यस्यवचनंयद्यवेक्षसे ॥ १२ ॥ तथेतिचप्रतिज्ञायरामोलक्ष्मणमब्रवीत् ॥ द्वारितिष्ठमहाबाहोप्रतिहारंविसर्जय ॥ १३ ॥ समेवध्यःखलुभवेद्वाचंद्वंद्वंसमीरितम् ॥ ऋषेर्ममचसौमित्रेपश्येद्वाशृणुयाच्चयः ॥ १४ ॥ ततोनिक्षिप्यकाकुत्स्थोलक्ष्मणंद्वारिसंग्रहम् ॥ तमुवाचमुनेर्वाक्यंकथयस्वेतिराघवः ॥ १५ ॥ तत्तेमनीषितंवाक्यंयेनवासिसमाहितः ॥ कथयस्वाविशंकस्त्वंममापिहृदिवर्तते ॥ १६ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे कालागमनंनामत्र्युत्तरशततमः सर्गः ॥ १०३ ॥ शृणुराजन्महासत्त्वयदर्थमहमागतः ॥ पितामहेनदेवेनप्रेषितोस्मिमहाबल ॥ १ ॥ तवाहंपूर्वकेभावेपुत्रःपरपुरंजय ॥ मायासंभावितोवीरकालःसर्वसमाहरः ॥ २ ॥ पितामहश्चभगवानाहलोकपतिःप्रभुः ॥ समयस्तेकृतःसौम्यलोकानसंपरिरक्षितुम् ॥ ३ ॥

सन्देह कहिये कारण कि; वह सुननेकी हमें अधिक इच्छा है (अथवा जो तुम कहोगे वह हमारे हृदयमेंभी वर्तता है) ॥ १६ ॥ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा०वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषाटीकायां कालागमनं नाम त्र्युत्तरशततमः सर्गः ॥ १०३ ॥ यह वचन सुनकर ऋषि कहने लगे कि, हे वीर्यवान् ! जिन्होंने हमको भेजा और जिसकारण हम यहां आये हैं हे महाबली ! हमको पितामह ब्रह्माजीने आपके पास भेजा है ॥ १ ॥ हे शत्रुघातिन् ! जिससमय पूर्वकालमें सृष्टि हुई थी उस समय हम आपकी मायासे उत्पन्न होनेके कारण आपके पुत्र हैं; हे वीर ! हमारा नाम काल है और हम सबके संहार करनेवाले हैं ॥ २ ॥ लोकस्वामी भगवान् पितामह ब्रह्माजीने आपसे कहा है हे सौम्य ! आपने जो रावणादिके वधके निमित्त अवतार लेकर ग्यारह सहस्र वर्षतक मनुष्यलोकमें बसनेकी और प्रजारक्षण करनेकी प्रतिज्ञा

करीथी, वह समय अब पूरा होगया (यथा—दश वर्षसहस्राणि दश वर्षशतानि च । वत्स्यामि मानुषे लोके पालयन् पृथ्वीमिमामिति) ॥ ३ ॥ आप प्रलयकालमें अपनी शक्तिसे सब लोकोंका संहारकर अपने उदरमें धार महासागरमें शयन कर गयेथे बहुत कालके पीछे आपकी नाभिसे कमल हुआ जिससे मेरी उत्पत्ति हुई। (यथा यो ब्रह्माणं विदधाति पूर्वमिति श्रुतेः) ॥ ४ ॥ जलमें आप शेषनागके ऊपर शयन करतेथे, जिनको आपने अपनी मायासे उत्पन्न किया था, पुनः पृथ्वीके बनानेकी इच्छासे आपनेही महाबली जीव ॥ ५ ॥ मधु और कैटभ उत्पन्न किये उन्हें वध करनेसे मधुमें वसाथी जलमें मिल कर्दमरूपहो सूखकर पृथ्वी हुई और कैटभमें अस्थिथी जिसके शरीरसे यह पर्वत हुए इसप्रकार यह पर्वतों सहित पृथ्वी उत्पन्न हुई ॥ ६ ॥ फिर आपने अपनी नाभिसे सूर्यसमान कमल उत्पन्न कर उससे मुझे उत्पन्न किया और प्रजा उत्पन्न करनेका कार्य सब मुझे सौंप दिया ॥ ७ ॥ इसप्रकार आपसे प्राजापत्य अधिकार पाकर हमने आप जगदीश्वरकी उपासना

संक्षिप्यहिपुरालोकान्माययास्वयमेवहि ॥ महार्णवेशयानोऽप्सुमांत्वंपूर्वमजीजनः ॥ ४ ॥ भोगवंतंततोनागमनंतमुदकेशयम् ॥ माययाजनयित्वात्वंद्वौचसत्त्वौमहाबलौ ॥ ५ ॥ मधुंचकैटभंचैवययोरस्थिचयैर्वृता ॥ इयंपर्वतसंबाधामेदिनीचाभवत्तदा ॥ ६ ॥ पद्मेदिव्येर्कसंकाशेनाभ्यामुत्पाद्यमामपि ॥ प्राजापत्यंत्वयाकर्ममयिसर्वंनिवेशितम् ॥ ७ ॥ सोहंसंन्यस्तभारोहित्वामुपास्यजगत्पतिम् ॥ रक्षांविधत्स्वभूतेषुमम तेजस्करोभवान् ॥ ८ ॥ततस्त्वमसिदुर्धर्षात्तस्माद्भावात्सनातनात् ॥ रक्षांविधास्यन्भूतानांविष्णुत्वमुपजग्मिवान् ॥ ९ ॥ अदित्यांवीर्यवान्पुत्रोभ्रातॄणांवीर्यवर्धनः ॥ समुत्पन्नेषुकृत्येषुतेषांसाह्यायकल्पसे ॥ १० ॥ सत्वमुज्जास्यमानासुप्रजासुजगतोवर ॥ रावणस्यवधाकांक्षीमानुषेषुमनोदधाः ॥ ११ ॥ दशवर्षसहस्राणिदशवर्षशतानिच ॥ कृत्वावासस्यनियमंस्वयमेवात्मनापुरा ॥ १२ ॥ सत्वंमनोमयःपुत्रःपूर्णायुर्मानुषेष्विह ॥ कालोनरवरश्रेष्ठसमीपमुपवर्तितुम् ॥ १३ ॥

करके यह प्रार्थना की, हे भगवन्! जब आपने हमें सृष्टि उत्पन्न करनेकी सामर्थ्य दीहै तो इसका पालन आप कीजिये ॥ ८ ॥ यह वचन सुनकर तुम्हीं उस दुर्द्धर्ष समस्त संसारके मूलकारण होनेसे काल परिच्छेद्य त्रिगुण महत्तत्त्वनामक हिरण्यगर्भके सत्त्वप्रधानसे प्रजाकी रक्षा करनेको विष्णुरूप हुए ॥ ९ ॥ एक समय आपने इन्द्रादि देवताओंकी सहायताके निमित्त अदितिमें कश्यपसे जन्म लेकर दिव्य ज्ञानक्रियासे युक्त हो उपेन्द्र (वामन) नाम पाया था; और देवताओंके कार्यमें सहायता की ॥ १० ॥ हे जगत्में श्रेष्ठ! इसीप्रकार आपने इससमयभी प्रजाको महादुःखी देख रावणके वध करनेके निमित्त और प्रजाओंको सुख देनेको मनुष्यलोकमें अवतार ले रहनेकी इच्छा की ॥ ११ ॥ उस समय आपने ग्यारह सहस्र वर्षतक मनुष्यलोकमें रहनेका नियम किया था ॥ १२ ॥ सो आप राजा दशरथके यहां

नोमय अर्थात् अपने संकल्पसेही उत्पन्न हुएहैं,हे नरश्रेष्ठ ! अब वह आपकी पूर्णायु होचुकीहै एकादशसहस्र वर्ष बीतनेमें बहुतही थोडे दिन शेषहैं॥ १३ ॥ हे वीर ! आपका मंगलहो यदि अभी और प्रजापालनकी इच्छाहो तो आप यहीं वास कीजिये आपसे यह ब्रह्माजीने कहला भेजा है ॥ १४ ॥ हे राघव ! यदि देवलोकमें आनेकी इच्छा हो तो चलकर अपने विष्णुरूपसे देवताओंको सनाथ और भयरहित कीजिये ॥ १५ ॥ ब्रह्माजीके कहलाये कालके यह वचन श्रवणकर श्रीरामचन्द्रजी हँसकर सबके संहार करनेवाले कालसे कहने लगे ॥ १६ ॥ देवदेव ब्रह्माजीके यह वचन श्रवण करने और तुम्हारे आनेसे हम बहुत प्रसन्न हुए हैं ॥ १७ ॥ मेरा जन्म तीनों लोकोंके कार्य सिद्ध करनेके निमित्त होताहै तुम्हारा मंगल हो, हम जहांसे आयेहैं, उसी लोकको चले जायँगे ॥ १८ ॥ हे काल ! प्रथमही हमने

यदिभूयोमहाराजप्रजाइच्छस्युपासितुम् ॥ वसवावीरभद्रंतेएवमाहपितामहः ॥ १४ ॥ अथवाविजिगीषातेसुरलोकायराघव ॥ सनाथाविष्णुनादेवाभवंतुविगतज्वराः ॥ १५ ॥ श्रुत्वापितामहेनोक्तंवाक्यंकालसमीरितम् ॥ राघवःप्रहसन्वाक्यंसर्वसंहारमब्रवीत् ॥ १६ ॥ श्रुत्वामेदेवदेवस्यवाक्यंपरममद्भुतम् ॥ प्रीतिर्हिमहतीजातातवागमनसंभवा ॥ १७ ॥ त्रयाणामपिलोकानांकार्यार्थंममसंभवः ॥ भद्रंतेस्तुगमिष्यामियतएवाहमागतः ॥ १८ ॥ हृद्गतोह्यसिसंप्राप्तोनमेतत्रविचारणा ॥ मयाहिसर्वकृत्येषुदेवानांवशवर्तिनाम् ॥ स्थातव्यंसर्वसंहारयथाह्याहपितामहः ॥ १९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मीकीय आदि० उत्तरकांडे कालवाक्यंनामचतुरधिकशततमः सर्गः ॥ १०४ ॥ तथातयोःसंवदतोर्दुर्वासाभगवानृषिः ॥ रामस्यदर्शनाकांक्षीराजद्वारमुपागमत् ॥ १ ॥ सोऽभिगम्यतुसौमित्रिमुवाचऋषिसत्तमः ॥ रामंदर्शयमेशीघ्रंपुरामेऽर्थोतिवर्तते ॥ २ ॥ मुनेस्तुभाषितंश्रुत्वालक्ष्मणःपरवीरहा ॥ अभिवाद्यमहात्मानंवाक्यमेतदुवाचह ॥ ३ ॥ किंकार्यंब्रूहिभगवन्कोह्यर्थःकिंकरोम्यहम् ॥ व्यग्रोहिराघवोब्रह्मन्मुहूर्तंपरिपाल्यताम् ॥ ४ ॥

मनमें प्रस्थानका विचार करलिया था, हमारे जानेमें कुछभी संदेह नहीं मुझे अपने अनुकूल देवताओंके सब कार्योंमें स्थित होना चाहिये,इसकारण जो कुछ ब्रह्माजीने कहाहै वह शीघ्र होगा ॥ १९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे भाषाटीकायां कालवाक्यं नाम चतुरधिकशततमः सर्गः ॥ १०४ ॥ जिससमय रामचन्द्र और कालमें यह वार्ता होतीथी, उसीसमय रामचन्द्रके दर्शनकी इच्छा करके महर्षि दुर्वासा राजद्वारपर आये ॥ १ ॥ वह ऋषिश्रेष्ठ लक्ष्मणके पास आनकर कहनेलगे, हे लक्ष्मण ! हमारा एक महत्कार्य है, इसकारण शीघ्र रामचन्द्रके दर्शन कराओ ॥ २ ॥ शत्रुघाती लक्ष्मणजी मुनिके यह वचन सुनकर उन महात्माको प्रणामकर इसप्रकारसे कहनेलगे ॥ ३ ॥ कहिये महाराज आपका क्या कार्यहै ? जो आज्ञा हो सो हम करें, हे ब्रह्मन् ! रामचन्द्र एक कार्यमेंहैं,

[illegible] नके परिणामको मनमें विचारने लगे ॥ ८ ॥ जो मैं रामचंद्रसे कहताहूं तो मेरा मरण होगा [illegible]
निधन उचित नहीं यह विचार लक्ष्मणजीने राम [illegible]

आप एक मुहूर्तभरतक ठहरेंगे ॥ ४ ॥ यह वचन सुनतेही ... ॥ ५ ॥

लक्ष्मण ! अभी जाकर हमारा आना रामचन्द्रसे निवेदन करो, नहीं तो हम तुम्हारे राज्यपर तुम्हें, और रामचन्द्रको शाप देंगे ॥ ६ ॥ हे लक्ष्मण ! भरत और तुम्हारी संतानको भी शाप देंगे, कारण कि; अब हम क्रोधको हृदयमें धारण नहीं करसकते ॥ ७ ॥ यह उन महात्मा ऋषिके घोर वचन सुनकर लक्ष्मणजी इस वचनके परिणामको मनमें विचारने लगे ॥ ८ ॥ जो मैं रामचंद्रसे कहताहूं तो मेरा मरण होगा, नहीं कहनेमें सब शापित होंगे; इस कारण मेरा विनाश अच्छा, सबका निधन उचित नहीं यह विचार लक्ष्मणजीने रामचन्द्रके पास जाय दुर्वासाजीका आना निवेदन किया ॥ ९ ॥ लक्ष्मणके वचन सुनतेही रघुनाथजीने कालको विदा

तच्छ्रुत्वाऋषिशार्दूलःक्रोधेनकलुषीकृतः ॥ उवाचलक्ष्मणंवाक्यंनिर्दहन्निवचक्षुषा ॥ ५ ॥ अस्मिन्क्षणेमांसौमित्रेरामायप्रतिवेदय ॥ विषयं त्वांपुरंचैवशपिष्येराघवंतथा ॥ ६ ॥ भरतंचैवसौमित्रेयुष्माकंयाचसंततिः ॥ नहिशक्ष्याम्यहंभूयोमन्युंधारयितुंहृदि ॥ ७ ॥ च्छ्रुत्वाघोरसंकाशंवाक्यंतस्यमहात्मनः ॥ चिंतयामासमनसातस्यवाक्यस्यनिश्चयम् ॥ ८ ॥ एकस्यमरणंमेऽस्तुमाभूत्सर्वविनाशनम् ॥ इतिबुद्ध्याविनिश्चित्यराघवायन्यवेदयत ॥ ९ ॥ लक्ष्मणस्यवचःश्रुत्वारामःकालंविसृज्यच ॥ निःसृत्यत्वरितोराजाअत्रेःपुत्रंददर्शह ॥ १० ॥ सोभिवाद्यमहात्मानंज्वलंतमिवतेजसा ॥ किंकार्यमितिकाकुत्स्थःकृतांजलिरभाषत ॥ ११ ॥ तद्वाक्यंराघवेणोक्तंश्रुत्वामुनिवरःप्रभुः ॥ प्रत्याहरामंदुर्वासाःश्रूयतांधर्मवत्सल ॥ १२ ॥ अद्यवर्षसहस्रस्यसमाप्तिर्ममराघव ॥ सोहंभोजनमिच्छामियथासिद्धंतवानघ ॥ १३ ॥ तच्छ्रुत्वावचनंराजाराघवःप्रीतमानसः ॥ भोजनंमुनिमुख्याययथासिद्धमुपाहरत् ॥ १४ ॥ सतुभुक्त्वामुनिश्रेष्ठस्तदन्नममृतोपमम् ॥ साधुरामेतिसंभाष्यस्वमाश्रममुपागमत् ॥ १५ ॥ संस्मृत्यकालवाक्यानिततोदुःखमुपागमत् ॥ दुःखेनचसुसंतप्तःस्मृत्वातद्घोरदर्शनम् ॥ १६ ॥

करके शीघ्रतासे द्वारे आकर अत्रिपुत्र दुर्वासाको देखा ॥ १० ॥ रघुनाथजी हाथ जोड तेजसे दीप्तिमान् महात्मा दुर्वासाजीको प्रणामकर बोले क्या आज्ञाहै ॥ ११ ॥ मुनिश्रेष्ठ रामचन्द्रजीके यह वचन सुनकर दुर्वासाजी बोले, हे धर्मज्ञ ! सुनिये ॥ १२ ॥ हे पापरहित ! हमने सहस्रवर्ष तक भोजन न करनेका (अनशन) व्रत किया था वह आज पूरा हुआहै इस कारण आपके यहां जो कुछ विद्यमान हो हमें भोजन करनेको दीजिये ॥ १३ ॥ यह वचन सुनतेही रघुनाथजीने अत्यन्त प्रसन्नहो अमृतके समान स्वादिष्ट पदार्थ मुनिराजको जिमाये ॥ १४ ॥ मुनिश्रेष्ठ दुर्वासाजी अमृत सदृश भोजन करके रघुनाथजीकी बडाई कर अपने आश्रमको गये ॥ १५ ॥ जब ऋषि चले गये तो रघुनाथजी कालके वह घोर दर्शन वचन स्मरण कर " कि जो हमें तुम्हें देखे या हमारी तुम्हारी बात सुने वह वधके योग्य है " बडे दुःखी

हुए ॥ १६ ॥ नीचेको मुखकर दीनमनसे उस समय कुछभी न कहसके; फिर रघुनाथजी कालके वाक्योंको बुद्धिसे विचारकर कि, अब भाई भृत्य सबकाही
समय प्राप्त हुआ है ॥ १७ ॥ इसकारण अब यह समाज कुछभी स्थित न रहेगा, यह विचार यशस्वी रामचंद्रजी मौन हुए ॥१८॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मी०
आदिका० उत्तरकांडे कालप्रस्थानो नाम पंचोत्तरशततमः सर्गः ॥ १०५ ॥ इसप्रकार राहुग्रस्त चन्द्रमाके समान नीचेको मुख किये दीन मलीन रामचन्द्रको
देखकर लक्ष्मणजी प्रसन्नतापूर्वक उनसे कहने लगे ॥ १ ॥ हे महाभुज ! आपको मेरे निमित्त संताप करना उचित नहीं है, पूर्वकालसे विधान कीहुई कालकी
गतिही इसप्रकार है ॥ २ ॥ हे राम ! आप शंका त्यागनकर मुझको मार अपनी प्रतिज्ञा पूरी कीजिये, हे काकुत्स्थ ! प्रतिज्ञा त्यागनेवाले पुरुष नरकमें जातेहैं ॥ ३ ॥

अवाङ्मुखोदीनमनाव्याहर्तुंनशशाकह ॥ ततोबुद्ध्याविनिश्चित्यकालवाक्यानिराघवः ॥ १७ ॥ नैतदस्तीतिनिश्चित्यतूष्णीमासीन्महायशाः
॥ १८ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे पंचोत्तरशततमः सर्गः ॥ १०५ ॥ अवाङ्मुखमथोदीनंदृष्ट्वासोममि॥
प्लुतम् ॥ राघवंलक्ष्मणोवाक्यंहृष्टोमधुरमब्रवीत् ॥ १ ॥ नसंतापंमहाबाहोमदर्थंकर्तुमर्हसि ॥ पूर्वनिर्माणबद्धाहिकालस्यगतिरीदृशी ॥ २ ॥
जहिमांसौम्यविस्रब्धंप्रतिज्ञांपरिपालय ॥ हीनप्रतिज्ञाःकाकुत्स्थप्रयांतिनरकंनराः ॥ ३ ॥ यदिप्रीतिर्महाराजयद्यनुग्राह्यतामयि ॥ जहिमांनि
र्विशंकस्त्वंधर्मंवर्धयराघव ॥ ४ ॥ लक्ष्मणेनतथोक्तस्तुरामःप्रचलितेंद्रियः ॥ मंत्रिणःसमुपानीयतथैवचपुरोधसः ॥ ५ ॥ अब्रवीच्चतदावृ॥
पांमध्येसराघवः ॥ दुर्वासोभिगमंचैवप्रतिज्ञांतापसस्यच ॥ ६ ॥ तच्छ्रुत्वामंत्रिणःसर्वेसोपाध्यायाःसमासत ॥ वसिष्ठस्तुमहातेजावाक्यमेत॥
चह ॥ ७ ॥ दृष्टमेतन्महाबाहोक्षयंतेरोमहर्षणम् ॥ लक्ष्मणेनवियोगश्चतवराममहायशः ॥ ८ ॥ त्यजैनंबलवान्कालोमाप्रतिज्ञांवृथाकृथाः ॥
प्रतिज्ञायांहिनष्टायांधर्मोहिविलयंव्रजेत् ॥ ९ ततोधर्मेविनष्टेतुत्रैलोक्यंसचराचरम् ॥ सदेवर्षिगणंसर्वंविनश्येत्तुनसंशयः ॥ १० ॥

हे महाराज ! यदि आपकी मुझमें प्रीति है, यदि आप मेरे ऊपर कृपा करते हैं तो आप मुझे निःसन्देह मारकर धर्मवृद्धि कीजिये ॥ ४ ॥ यह लक्ष्मणके
... और मन्त्रियोंको बुलाया ॥ ५ ॥ उन सबसे रघुनाथजीने तपस्वीकी प्रतिज्ञा और लक्ष्मणजीका दुर्वासाके वचनसे मंदिरमें
... मौन होगये, तब महातपस्वी वसिष्ठजी इसप्रकार कहने लगे ॥ ७ ॥ हे रघुनाथजी ! हमने
... वियोग होगा ॥ ८ ॥ हे राजन् ! काल बलवान् है आप प्रतिज्ञा
... त्रिलोकी और चर अचर सहित सब देवता

वह सीकारे हैं इसमें सन्देह नहीं ॥ १० ॥ हे रामचन्द्र ! त्रिलोकीको पालन करनेके निमित्त आज आप लक्ष्मणके बिना जगत्‌को स्वस्थ कीजिये ॥ ११ ॥ उन स आदिकोंके कहेहुए धर्मसहित वचन श्रवण करके रामचन्द्र सभाके बीचमें लक्ष्मणसे कहनेलगे ॥ १२ ॥ हे लक्ष्मण ! धर्मके विपरीत न होनेके निमित्त हम तुमको विसर्जन करते हैं, साधुओंका त्याग या वध यह दोनों समानही हैं ॥ १३ ॥ रघुनाथजीके यह वचन सुन व्याकुल चित्तहो नेत्रोंमें आंसू भरे लक्ष्मणजी वहांसे तुरंत चले गये और अपने घरभी न गये (लक्ष्मणको शरीर हानिका शोच नहीं किन्तु रघुनाथके वियोगकाही दुःख हुआ)॥ १४ ॥ तुरंत सरयूके किनारे जाय जलसे आचमनकर हाथजोड योगमार्गमें सम्पूर्ण इन्द्रियोंके मार्गोंको रोक प्राणोंकी गति रोक दी ॥ १५ ॥ इसप्रकार श्वास रहित योगारूढ लक्ष्मणको देखकर इन्द्र, अप्सरा, देवता और ब्रह्मर्षि सब

सत्वंपुरुषशार्दूलत्रैलोक्यस्याभिपालनात् ॥ लक्ष्मणेनविनाचाद्यजगत्स्वस्थंकुरुष्वह ॥ ११ ॥ तेषांतत्समवेतानांवाक्यंधर्मार्थसंहितम् ॥ श्रुत्वापरिषदोमध्येरामोलक्ष्मणमब्रवीत् ॥ १२ ॥ विसर्जयेत्वांसौमित्रमाभूद्धर्मविपर्ययः ॥ त्यागोवधोवाविहितःसाधूनांह्युभयंसमम् ॥ १३ ॥ रामेणभाषितेवाक्येबाष्पव्याकुलितेंद्रियः ॥ लक्ष्मणस्त्वरितःप्रायात्स्वगृहंनविवेशह ॥ १४ ॥ सगत्वासरयूतीरमुपस्पृश्यकृतांजलिः ॥ निगृह्य सर्वस्रोतांसिनिःश्वासंनमुमोचह ॥ १५ ॥ अनिःश्वसंतंयुक्तंतंसशक्राःसाप्सरोगणाः ॥ देवाःसर्षिगणाःसर्वेपुष्पैरभ्यकिरंस्तदा ॥ १६ ॥ अदृश्यंसर्वमनुजैःसशरीरंमहाबलम् ॥ प्रगृह्यलक्ष्मणंशक्रस्त्रिदिवंसंविवेशह ॥ १७ ॥ ततोविष्णोश्चतुर्भागमागतंसुरसत्तमाः ॥ हृष्टाःप्रमुदिताः सर्वेपूजयंतिस्मराघवम् ॥ १८ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये उत्तरकांडे लक्ष्मणवियोगोनामषड्डुत्तरशततमःसर्गः॥१०६॥ विसृज्यलक्ष्मणंरामोदुःखशोकसमन्वितः ॥ पुरोधसंमंत्रिणश्चनैगमांश्चेदमब्रवीत् ॥ १ ॥ अद्यराज्येभिषेक्ष्यामिभरतंधर्मवत्सलम् ॥ अयोध्यायाःपतिंवीरंततोयास्याम्यहंवनम् ॥ २ ॥ प्रवेशयतसंभारान्माभूत्कालात्ययोयथा ॥ अद्यैवाहंगमिष्यामिलक्ष्मणेनगतांगतिम् ॥ ३ ॥

ऋषिगणसहित इनके ऊपर फूलोंकी वर्षा करने लगे ॥ १६ ॥ और मनुष्योंको अदृश्य होकर इन्द्रजी वहां आये और महाबलवान् लक्ष्मणजीको शरीर सहित लेकर इन्द्रजी स्वर्गको चले गये ॥ १७ ॥ सम्पूर्ण देवता विष्णुके चतुर्थ भागको आयाहुआ देखकर प्रसन्नतासे उनकी पूजा करने लगे ॥ १८ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषाटीकायां लक्ष्मणवियोगोनाम षडुत्तरशततमः सर्गः ॥ १०६ ॥ लक्ष्मणको त्यागनकर दुःख और शोकमें संतप्तहो रामचंद्र, पुरोहित, मंत्री और पुरवासियोंको बुलाकर कहनेलगे ॥ १ ॥ आज मैं धर्मात्मा भरतको राज्यमें अभिषेक करूंगा, इन्हें अयोध्याका स्वामी कर मैं वनको चलाजाऊंगा ॥ २ ॥ इसका सब
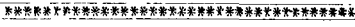
सामान अभी करो, वृथा काल खोना भला नहीं मैं अभी लक्ष्मणकी गतिको जाऊंगा ॥ ३ ॥ यह रघुनाथजीके वचन सुनतेही सम्पूर्ण प्रजा मुख नीचे किये पृथ्वीको प्रणाम करते हुएसे प्राणरहितोंकी समान होगये ॥४॥ रामचन्द्रके यह वचन सुन भरतजीभी मूर्च्छित हुए और राज्यकी निन्दा करते हुए रामचंद्रसे बोले ॥ ॥ ५ ॥ हे रामचन्द्र ! मैं सत्यकी सौगंध करके कहताहूँ कि, आपके विना मैं स्वर्ग वा पृथ्वी कहींकाभी राज्य नहीं चाहता ॥ ६ ॥ हे वीर ! आप इन दोनों वीर कुश और लवको अभिषेक कर दीजिये; कौशल देशमें कुशको और उत्तर कौशलमें लवको राज्य दीजिये ॥ ७ ॥ और शत्रुघ्नके पासभी दूत वहां शीघ्रतासे जाय कि, हमारी महायात्राके समाचार सुनाकर उनको शीघ्र लावे ॥ ८ ॥ यह भरतजीके वचन सुन और महादुःखी नीचेको मुख करके बैठेहुए

भरतश्चविसंज्ञोभूच्छ्रुत्वाराघवभाषितम् ॥ राज्यंविगर्हयामासवचनंचेदमब्रवीत् ॥ ५ ॥ सत्येनाहंशपेराजन्स्वर्गभोगेनचैवहि ॥ नकामयेयथाराज्यंत्वांविनारघुनंदन ॥ ६ ॥ इमौकुशीलवौराजन्नभिषिच्यनराधिप ॥ कोशलेषुकुशंवीरमुत्तरेषुयथालवम् ॥ ७ ॥ शत्रुघ्नस्यचगच्छंतुदूतास्त्वरितविक्रमाः ॥ इदंगमनमस्माकंशीघ्रमाख्यातुमाचिरम् ॥ ८ ॥ तच्छ्रुत्वाभरतेनोक्तंदृष्ट्वाचापिह्यधोमुखान् ॥ पौरान्दुःखेनसंतप्तान्वसिष्ठोवाक्यमब्रवीत् ॥ ९ ॥ वत्सरामइमाःपश्यधरणींप्रकृतीर्गताः ॥ ज्ञात्वेषामीप्सितंकार्यमाचैषांविप्रियंकृथाः ॥ १० ॥ वसिष्ठस्यतुवाक्येनउत्थाप्यप्रकृतीजनम् ॥ किंकरोमीतिकाकुत्स्थस्सर्वान्वचनमब्रवीत् ॥ ११ ॥ ततःसर्वाप्रकृतयोरामंवचनमब्रुवन् ॥ गच्छंतमनुगच्छामोयत्ररामगमिष्यसि ॥ १२ ॥ पौरेषुयदितेप्रीतिर्यदिस्नेहोह्यनुत्तमः ॥ सपुत्रदाराःकाकुत्स्थसमंगच्छामसत्पथम् ॥ १३ ॥ तपोवनंवादुर्गंवानदीमंभोनिधिंतथा ॥ वयंतेयदिनत्याज्याःसर्वान्नोनयईश्वर ॥ १४ ॥

मूर्धभिःप्रणताभूमौगतसत्त्वाइवाभवन् ॥ ४ ॥ तच्छ्रुत्वाराघवेणोक्तंसर्वाःप्रकृतयोभृशम् ॥

पुरवासियोंको देखकर वसिष्ठजी कहने लगे ॥ ९ ॥ हे वत्स राम ! इधर तो देखो कि, आपकी प्रजा शोकके मारे पृथ्वीपर व्याकुल पडीहै इनके मनोरथ जानकर कार्य करना उचित है किसी प्रकार इनके विपरीत कार्य करना भला नहीं है ॥ १० ॥ वसिष्ठजीके वचन सुनकर प्रजाओंको उठाकर उन सबसे रघुनाथजी बोले हम आपका क्या कार्य करें ॥ ११ ॥ रामचन्द्रके यह वचन सुन वह प्रजालोग कहने लगे हे राम ! आप जहांको जायँगे वहां हमभी आपके पीछे जायँगे ॥१२॥ हे राम ! यदि पुरवासियोंमें आपकी प्रीति और स्नेह है तो पुत्र स्त्रीसहित हम सब लोग आपके पीछे चलेंगे ॥ ॥ १३ ॥ हे ईश्वर ! तपोवन दुर्ग स्थान नदी सागर इन सब स्थानोंमें जहां कहीं भी आप जायँ आप हमें नहीं त्यागन करोगे तो हम आपके पीछे जायँगे ॥ १४ ॥

. . . . महा गया, और अपने कर्तव्य कर्मको विचारकर उसी दिन रामचन्द्रने ॥ १६ ॥ कोशल देशमें कुशको और उत्तर कोशलके सिंहासनमें महात्मा लवको अभिषेक कर दिया ॥ १७ ॥ इस प्रकार दोनों पुत्रोंको अभिषेक करके उन्हें गोदीमें बैठाय, सहस्र रथ, दशसहस्र हाथी, दशसहस्र घोडे और अनेक धन रत्न पृथक्पृथक् एकएक पुत्रको दिये ॥ १८॥ बहुत धन और बहुत रत्न देकर हृष्टपुष्ट मनुष्योंसे युक्त उन दोनों देशोंमें दोनों भ्राताओंको भेजदिया ॥ १९ ॥ इसप्रकार उन दोनों वीरोंको राज्यमें अभिषेक कर और उनको उन पुरोंमें भेजकर महाबली रामचन्द्रने महात्मा शत्रुघ्नके बुलानेके निमित्त दूतोंको भेजा ॥ २० ॥

. . . ॥ १५ ॥ पौराणांदृढभक्तिंचबाढमित्येवसोऽब्रवीत् ॥ स्वकृतांतंचा . . . ॥ १६ ॥ कोशलेषुकुशंवीरमुत्तरेषुतथालवम् ॥ अभिषिच्यमहात्मानावुभौरामःकुशीलवौ ॥ १७ ॥ अभिषिक्तौ सुतावंकेप्रतिष्ठाप्यपुरेततः ॥ रथानांतुसहस्राणिनागानामयुतानिच ॥ दशचाश्वसहस्राणिएकैकस्यधनंददौ ॥ १८ ॥ बहुरत्नौबहुधनौहृष्टपुष्ट जनाश्रयौ ॥ स्वपुरेप्रेषयामासभ्रातरौतौकुशीलवौ ॥१९॥ अभिषिच्यततोवीरौप्रस्थाप्यस्वपुरेतदा ॥ दूतान्संप्रेषयामासशत्रुघ्नायमहात्मने॥२०॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये उत्तरकांडे सप्तोत्तरशततमः सर्गः ॥ १०७ ॥ तेदूतारामवाक्येनचोदितालघुविक्रमाः ॥ प्रज . . . ॥ १ ॥ ततस्त्रिभिरहोरात्रैःसंप्राप्यमधुरामथ ॥ शत्रुघ्नाययथातथ्यमाचख्युःसर्वमेवतत् ॥ २ ॥ लक्ष्मणस्यप . . . ॥ पुत्रयोरभिषेकंचपौरानुगमनंतथा ॥ ३ ॥ कुशस्यनगरीरम्याविंध्यपर्वतरोधसि ॥ कुशावतीतिनाम्नासाकृतारा . . . ॥ ४ ॥ श्रावस्तीतिपुरीरम्याश्राविताचलवस्यच ॥ अयोध्यांविजनांकृत्वाराघवोभरतस्तथा ॥ ५ ॥

इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आ० उत्तरकांडे भाषाटीकायां सप्तोत्तरशततमः सर्गः ॥ १०७ ॥ वे शीघ्रगामी दूत रामचन्द्रकी आज्ञासे बहुत शीघ्रतासे मथुराको चले और रास्तेमें मार्गमें विश्राम भी नहीं किया ॥ १ ॥ इस प्रकारसे तीन दिन रातमें वे दूत मथुरामें पहुँचे और शत्रुघ्नजीको आद्योपान्त समस्त वृत्तान्त सुनाया ॥ २ ॥ रामचन्द्रकी प्रतिज्ञा और लक्ष्मणका त्याग, कुश और लवका राज्य तिलक, पुरवासियोंका संगजाना ॥ ३ ॥ और विन्ध्याचल पर्वतके निकट दक्षिण कुशावती नगरी बसाकर उसमें कुशका स्थापन करना ॥४॥ और लवके निमित्त श्रावस्ती नाम मनोहर पुरीको . . .

भरत और रामचन्द्र ॥५॥ स्वर्गमें जानेको उद्यत हुए हैं यह सब समाचार दूतोंने महात्मा शत्रुघ्नजीसे निवेदन किये ॥ ६ ॥ और 'आप शीघ्र चलिये' यह कहकर दूत मौन हुए. शत्रुघ्नजीने इस प्रकार कुलक्षयकारक घोर वृत्तान्त सुनकर ॥ ७ ॥ अपने सब मंत्री पुरजन और कांचननामक पुरोहितको बुलाकर शत्रुघ्नजीने उनसे सब समाचार सुनाये ॥ ८ ॥ और यहभी कहा कि, अब हम अपने भ्राताओंके साथ स्वर्ग जायँगे, पश्चात् अपने दोनों पराक्रमी पुत्रोंको उस देशके राज्यमें अभिषेकित किया ॥ ९ ॥ सुबाहु पुत्रको मथुरा नगरीका और शत्रुघातीको वैदिश देशका राज्य दिया, मथुराकी सब सेनाके और धनके दोभाग कर अपने पुत्रोंको दिये, पश्चात् शत्रुघ्नजी ॥ १० ॥ सुबाहुको मथुरामें और शत्रुघातीको वैदिश देशमें प्रतिष्ठित करके एक रथपर चढ आप अकेलेही अयोध्याको

स्वर्गस्यगमनोद्योगंकृतवंतौमहारथौ ॥ एवंसर्वंनिवेद्याशुशत्रुघ्नायमहात्मने ॥ ६ ॥ विरेमुस्तेततोदूतास्त्वरराजेतिचाब्रुवन् ॥ तच्छ्रुत्वाघोरसंकाशंकुलक्षयमुपस्थितम् ॥ ७ ॥ प्रकृतीस्तुसमानीयकांचनंचपुरोधसम् ॥ तेषांसर्वंयथावृत्तमब्रवीद्रघुनन्दनः ॥ ८ ॥ आत्मनश्चविपर्यासंभविष्यंभ्रातृभिः सह ॥ ततः पुत्रद्वयंवीरः सोभ्यषिंचन्नराधिपः ॥ ९ ॥ सुबाहुर्मधुरांलेभेशत्रुघातीचवैदिशम् ॥ द्विधाकृत्वातुतांसेनांमाधुरींपुत्रयोर्द्वयोः ॥ धनंचयुक्तंकृत्वावैस्थापयामासपार्थिवः ॥ १० ॥ सुबाहुंमधुरायांचवैदिशेशत्रुघातिनम् ॥ ययौस्थाप्यतदायोध्यांरथेनैकेनराघवः॥११॥ सददर्शमहात्मानंज्वलंतमिवपावकम् ॥ सूक्ष्मक्षौमांबरधरंमुनिभिःसार्धमक्षयैः ॥ १२ ॥ सोभिवाद्यततोरामंप्रांजलिःप्रयतेंद्रियः ॥ उवाचवाक्यंधर्मज्ञंधर्ममेवानुचिंतयन् ॥ १३ ॥ कृत्वाभिषेकंसुतयोर्द्वयोराघवनन्दनः ॥ तवानुगमनेराजन्विद्धिमांकृतनिश्चयम् ॥ १४ ॥ नचान्यदद्यवक्तव्यमतोवीरनशासनम् ॥ विहन्यमानमिच्छामिमद्विधेनविशेषतः ॥ १५ ॥ तस्यतांबुद्धिमक्लीबांविज्ञायरघुनंदनः ॥ बाढमित्येवशत्रुघ्नंरामोवाक्यमुवाचह ॥ १६ ॥ तस्यवाक्यस्यवाक्यांतेवानराः कामरूपिणः ॥ ऋक्षराक्षससंघाश्चसमापेतुरनेकशः ॥ १७ ॥

चले ॥११॥ उन्होंने अयोध्यामें पहुँचकर अग्निकी समान प्रकाशमान रेशमीन वस्त्र पहरे मुनियोंके साथमें बैठे महात्मा रामचन्द्रको देखकर ॥१२॥ सावधानता सहित शत्रुघ्नजीने प्रणाम किया और धर्मको विचारकर धर्मज्ञ रामचन्द्रसे इसप्रकार कहने लगे ॥१३॥ हे रामचन्द्र! अपने दोनों पुत्रोंका अभिषेक कर आपके साथ चलनेमें दृढ निश्चय करके मैं आपके सम्मुख उपस्थित हुआ हूं ॥१४॥ हे वीर ! इसकारण अब इसके विपरीत हमको और कुछ आज्ञा आप न दीजिये, क्योंकि हम आपकी आज्ञाका भंग करना नहीं चाहते और आपके संग जाना चाहते हैं ॥ १५ ॥ रघुनाथजीने शत्रुघ्नजीकी इसप्रकार दृढ बुद्धि देखकर कहा कि जो तुम कहतेहो ऐसेही किया जायगा ॥ १६ ॥ रामचन्द्र यह कहतेहीथे कि, उसीसमय अनगिन्त कामरूपी वानर रीछ और

सुग्रीवजीको आगे करके सम्पूर्ण वानरादिक स्वर्ग जानेकी इच्छा करनेवाले रघुनाथजीको देखनेके निमित्त आये ॥ १८ ॥ देवता, ऋषि और गन्धर्वोंके पुत्र यह सब वानर रघुनाथजीका साकेतलोकमें गमन विचारकर सब कोई आये ॥ १९ ॥ और कहने लगे हे भगवन् ! हम सब कोई आपके संग चलनेको आये हैं, हे पुरुषोत्तम ! जो आप विनाही हमलोगोंको साथ लिये चले जायँगे तो ॥ २० ॥ मानो यमदंडही उठायकर आपने हमलोगोंको निपातित करदिया इसी अवसरमें महाबली सुग्रीवजी ॥ २१ ॥ वीर्यवान् रघुनाथजीको प्रणामकर विनय करने लगे ॥ २२ ॥ हे नरेश्वर ! हम अंगदको राज्य देकर आपके साथ चलनेका दृढ निश्चय कर आपके पास आये हैं ॥ २३ ॥ उनके यह वचन रामचन्द्रने मुस्कुराकर स्वीकार किये और महायशस्वी रामचन्द्र विभीषणसे बोले ॥ २४ ॥ हे विभीषण !

सुग्रीवंतेपुरस्कृत्यसर्वएवसमागताः ॥ तंरामंद्रष्टुमनसःस्वर्गायाभिमुखंस्थितम् ॥ १८ ॥ देवपुत्राऋषिसुतागंधर्वाणांसुतास्तथा ॥ रामक्षयंविदित्वातेसर्वएवसमागताः ॥१९॥ तवानुगमनेराजन्संप्राप्ताःस्मसमागताः ॥ यदिरामविनास्माभिर्गच्छेस्त्वंपुरुषोत्तम ॥२०॥ यमदंडमिवोद्यम्यत्वयास्मविनिपातिताः ॥ एतस्मिन्नंतरेरामंसुग्रीवोपिमहाबलः ॥२१॥ प्रणम्यविधिवद्वीरंविज्ञापयितुमुद्यतः ॥२२॥ अभिषिच्यांगदंवीरमागतोस्मिनरेश्वर ॥ तवानुगमनेराजन्विद्धिमांकृतनिश्चयम् ॥२३॥ तैरेवमुक्तःकाकुत्स्थोबाढमित्यब्रवीत्स्मयन् ॥ विभीषणमथोवाचराक्षसेंद्रंमहायशाः ॥२४॥ यावत्प्रजाधरिष्यंतितावत्त्वंवैविभीषण ॥ राक्षसेंद्रमहावीर्यलंकास्थःस्वंधरिष्यसि ॥२५॥ यावच्चंद्रश्चसूर्यश्चयावत्तिष्ठतिमेदिनी ॥ यावच्चमत्कथालोकेतावद्राज्यंतवास्त्विह ॥२६॥ शासितश्चसखित्वेनकार्यंतेममशासनम् ॥ प्रजाःसंरक्षधर्मेणनोत्तरंवक्तुमर्हसि ॥२७॥ किंचान्यद्वक्तुमिच्छामिराक्षसेंद्रमहाबल ॥ आराधयजगन्नाथमिक्ष्वाकुकुलदैवतम् ॥२८॥ आराधनीयमनिशंदेवैरपिसवासवैः ॥ तथेतिप्रतिजग्राहरामवाक्यंविभीषणः ॥ राजाराक्षसमुख्यानांराघवाज्ञामनुस्मरन् ॥ २९ ॥ तमेवमुक्त्वाकाकुत्स्थोहनूमंतमथाब्रवीत् ॥ जीवितेकृतबुद्धिस्त्वंमाप्रतिज्ञांवृथाकृथाः ॥ ३० ॥

हे महाबली ! जबतक प्रजा विद्यमानहै तबतक लंकापुरीमें राज्य करते रहो ॥ २५ ॥ जबतक चन्द्रमा और सूर्य विद्यमान हैं, और जबतक यह पृथ्वी विद्यमानहै. जबतक मेरी कथा संसारमें विद्यमान है तबतक तुम राज्य करो ॥ २६ ॥ हे सखे ! तुम्हें हमारी आज्ञा माननी उचितहै; क्योंकि हम मित्रभावसे तुमको समझातेहैं, तुम धर्मपूर्वक प्रजाका पालन करो और हमारे वचनमें प्रत्युत्तर न करो ॥ २७ ॥ हे महाबली राक्षसेन्द्र ! हम तुमसे कुछ औरभी कहतेहैं, तुम इक्ष्वाकुकुलके देवता जगन्नाथकी आराधना करते रहना ॥ २८ ॥ देवता सहित इन्द्रभी (हमारीही) आराधना करतेहैं, यही तुम प्रतिदिन करना. यह सुनकर विभीषणने रामचन्द्रके वचन ग्रहण किये प्रधान राक्षसोंके राजा विभीषणने रघुनाथजीके वचन स्मरण रक्खे ॥ २९ ॥ (ब्रह्माजीने इन्हें अमरत्व दियाथा, इसकारण रामचन्द्रने इन्हें साथ न लिया)

विभीषणसे यह कहकर महावीरजीको अमर जानकर रामचन्द्र कहने लगे, कि तुम बहुत कालतक जानकी इच्छा करते रहो, यह हमारी प्रतिज्ञा वृथा न करना॥ ॥३०॥ हे वानरराज ! जबतक संसारमें हमारी कथा प्रचलित रहेगी, तबतक तुम प्रसन्नतापूर्वक मनुष्यलोकमें रहो ॥ ३१ ॥ जब रघुनाथजीने ऐसा कहा तो महावीरजी प्रसन्नहो रामचन्द्रसे कहने लगे ॥ ३२ ॥ हे भगवन् ! जबतक आपकी पवित्र कथा संसारमें वियमान रहेगी तबतक मैं आपकी आज्ञाका पालन करताहुआ संसारमें वास करूंगा ॥३३॥ इसीप्रकार ब्रह्माके पुत्र वृद्ध जाम्बवन्त मैन्द द्विविद इनसेभी रामचन्द्रजी बोले कि, तुम जबतक कलियुग आवे तबतक प्राण धारण करो, इसप्रकार महावीर, हनुमान्, विभीषणजी, जाम्बवन्त, मैन्द द्विविद इन पाँचोंको रघुनाथजीने आज्ञा दी ॥३४॥ इन पांचोंको इसप्रकारसे आज्ञादे

मत्कथाःप्रचरिष्यंतियावल्लोकेहरीश्वर ॥ तावद्रमस्वसुप्रीतोमद्वाक्यमनुपालयन् ॥ ३१ ॥ एवमुक्तस्तुहनुमान्राघवेणमहात्मना ॥ वाक्यंविज्ञापयामासपरंहर्षमवापच ॥ ३२ ॥ यावत्तवकथालोकेविचरिष्यतिपावनी ॥ तावत्स्थास्यामिमेदिन्यांतवाज्ञामनुपालयन् ॥ जांबवंतंतथोक्त्वातुवृद्धंब्रह्मसुतंतदा ॥ ३३ ॥ मैंदंचद्विविदंचैवपंचजांबवतासह ॥ यावत्कलिश्चसंप्राप्तस्तावज्जीवतसर्वदा ॥ ३४ ॥ तदेवमुक्त्वाकाकुत्स्थःसर्वांस्तानृक्षवानरान् ॥ उवाचबाढंगच्छध्वंमयासार्धंयथोदितम् ॥ ३५ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडेऽष्टोत्तरशततमः सर्गः ॥ १०८ ॥ प्रभातायां तुशर्वर्यांपृथुवक्षामहायशाः ॥ रामःकमलपत्राक्षःपुरोधसमथाब्रवीत् ॥ १ ॥ अग्निहोत्रंव्रजत्वग्रेदीप्यमानंसहद्विजैः ॥ वाजपेयातपत्रंचशोभमानंमहापथे ॥ २ ॥ ततोवसिष्ठस्तेजस्वीसर्वंनिरवशेषतः॥ चकारविधिवद्धर्मंमहाप्रास्थानिकंविधिम् ॥ ३ ॥ ततःसूक्ष्मांबरधरोब्रह्मआवर्तयन्परम् ॥ कुशान्गृहीत्वापाणिभ्यांसरयूंप्रययावथ ॥ ४ ॥ अव्याहरन्क्वचित्किंचिन्निश्चेष्टोनिःसुखःपथि ॥ निर्जगामगृहात्तस्मादीप्यमानोयथांशुमान् ॥ ५ ॥

रघुनाथजी शेष ऋक्ष वानरोंसे बोले कि, तुम सब हमारे साथ चलो ॥३५॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी०आदि०उत्तरकांडे भाषाटीकायामष्टोत्तरशततमः सर्गः ॥१०८॥ जब रात्रि बीती और प्रातःकाल हुआ, तब चौडी छातीवाले यशस्वी कमललोचन रामचन्द्रजी अपने पुरोहित वसिष्ठजीसे बोले ॥ १ ॥ दीप्तिमान् अग्निहोत्र और वाजपेयछत्र ब्राह्मणोंके साथ आगे २ शोभायमान महापथमें चले ॥ २ ॥ रघुनाथजीके यह वचन सुन तेजस्वी वसिष्ठजीने महाप्रस्थान विधिके उचित सब धर्मकार्य किया ॥ ३ ॥ तदनन्तर रेशमीन वस्त्र धारण करे वेदका उच्चारण करते कुश हाथमें लिये रघुनाथजी सरयूकी ओर चले । (परलोक गमन यात्राकी यही विधि है) ॥ ४ ॥ वेद उच्चारणके विना और कुछभी न कहते हुए, चलनेके सिवाय और चेष्टासे रहित, मार्गमें कांटे

आदि छगनेके दुःखमें आशा रहित, रामचन्द्र अपने उस मंदिरसे महा कान्तिमान् सूर्यकी समान निकले ॥ ५ ॥ चलनेके समय महाराजके दक्षिण ओर लक्ष्मी, बाईं ओर पृथ्वी देवी, और आगे संहारशक्ति चली ॥ ६ ॥ अनेक प्रकारके बाण और उत्तम धनुष और सम्पूर्ण आयुध पुरुषोंका रूप बनाये रघुनाथजीके संग चले ॥ ७ ॥ यह रौद्रशक्ति गमन कहा, ब्राह्मणका वेश धारणकर चारों वेद, सबकी रक्षा करने हारी गायत्री, ॐकार (ज्ञानयोग) वषट्कार (कर्मयोग) यह सब रामचन्द्रके संग चले ॥८॥ महात्मा ऋषि और सब ब्राह्मण लोग स्वर्गद्वार खुला देखकर रामचन्द्रके संग चले ॥ ९ ॥ रामचन्द्रके प्रस्थान करनेपर रनवासकी सब स्त्री, वृद्ध, बालक दासी कंचुकी तथा सेवकों सहित चलीं ॥ १० ॥ रनवासके सहित भरत और शत्रुघ्न भी अग्निहोत्रको आगेकर

रामस्यदक्षिणेपार्श्वेपद्माश्रीःसमुपाश्रिता ॥ सव्येपिचमहीदेवीव्यवसायस्तथाग्रतः ॥ ६ ॥ शरानानाविधाश्चापिधनुरायतमुत्तमम् ॥ तथायुधाश्च तेसर्वेययुःपुरुषविग्रहाः ॥ ७ ॥ वेदाब्राह्मणरूपेणगायत्रीसर्वरक्षिणी ॥ ओंकारोऽथवषट्कारःसर्वेराममनुव्रताः ॥ ८ ॥ ऋषयश्चमहात्मानःसर्वएव महीसुरः ॥ अन्वगच्छन्महात्मानंस्वर्गद्वारमपावृतम् ॥ ९ ॥ तंयांतमनुगच्छंतिह्यंतःपुरचराःस्त्रियः ॥ सवृद्धबालदासीकाःसवर्षवरकिंकराः ॥ ॥ १० ॥ सांतःपुरश्चभरतःशत्रुघ्नसहितोययौ ॥ रामंगतिमुपागम्यसाग्निहोत्रमनुव्रतः ॥ ११ ॥ तेचसर्वेमहात्मानःसाग्निहोत्राःसमागताः ॥ सपुत्रदाराःकाकुत्स्थमनुजग्मुर्महामतिम् ॥ १२ ॥ मंत्रिणोभृत्यवर्गाश्चसपुत्रपशुबांधवाः ॥ सर्वेसहानुगारामामन्वगच्छन्प्रहृष्टवत् ॥ १३ ॥ ततः सर्वाःप्रकृतयोहृष्टपुष्टजनावृताः ॥ गच्छंतमनुगच्छंतिराघवंगुणरंजिताः ॥ १४ ॥ ततःसस्त्रीपुमांसस्तेसपक्षिपशुबांधवाः ॥ राघवस्यानुगाः सर्वेहृष्टाविगतकल्मषाः ॥ १५ ॥ स्नाताःप्रमुदिताःसर्वेहृष्टपुष्टाश्चवानराः ॥ दृढंकिलकिलाशब्दैःसर्वंराममनुव्रतम् ॥ १६ ॥

रघुनाथजीके पीछे २ चले ॥ ११ ॥ इसप्रकार यह सब महात्मा अग्निहोत्रको आगेकर पुत्र स्त्री सहित महामति रामचन्द्रके पीछे २ चले ॥ १२ ॥ मन्त्री तथा दासगण अपने कुटुम्बी बांधव और पशुओंकोभी लेकर परम प्रसन्नतासे रघुनाथजी के पीछे हुए ॥ १३ ॥ इसके उपरान्त रामचन्द्रके गुणोंसे मोहित होकर सम्पूर्ण प्रजा हृष्ट पुष्ट हो प्रसन्नतासे रामचन्द्रके पीछे पीछे चली ॥ १४ ॥ इसके उपरान्त वे स्त्री पुरुष अपने बांधवसहित और पशु पक्षी सब कोई प्रसन्न मनसे पापरहित हो रामचन्द्रके पीछे २ चले ॥ १५ ॥ सम्पूर्ण वानर सरयूमें स्नानकर हृष्ट पुष्ट प्रसन्न चित्तसे रामचन्द्रके साथ जानेको किलकिला शब्द करने लगे ॥ १६ ॥

उस स्थानमें कोई दीन दुःखित वा लज्जित नहीं था, सबही प्रसन्न थे यह बडी अद्भुत बात हुई ॥ १७॥ उस समय जो कोई देशान्तरोंसे रामचन्द्रको देखने आये थे वह मनुष्यभी दर्शन करतेही रामचन्द्रके पीछे पीछे जाने लगे ॥१८॥ ऋक्ष वानर राक्षस और पुरवासी मनुष्य यह सावधान हुए भक्तिपूर्वक रघुनाथजीके पीछे २ जाते थे ॥१९॥ और जितने जीव अयोध्यामें अन्तर्धान रहते थे वहभी सब स्वर्गके जानेके निमित्त रामचन्द्रके पीछे २ चले ॥२०॥ अधिक क्या उससमय जितने स्थावर जंगम प्राणियोंने रामचन्द्रको देखा वह सबही उनके पीछे२ चलने लगे॥२१॥जितने श्वास लेनेवाले जीव कीट पतंग अयोध्यामें थे वह सबही रामचन्द्रके साथ२ चले॥ ॥२२॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा०वा०आदि०उत्तर०भाषाटीकायां नवाधिकशततमः सर्गः॥१०९॥इसप्रकार अयोध्यापुरीसे पश्चिमको मुख किये,तीन कोश दूरीपर जाय पवित्र

नतत्रकश्चिद्दीनोवाव्रीडितोवापिदुःखितः ॥ हृष्टंसमुदितंसर्वंबभूवपरमाद्भुतम् ॥१७॥ द्रष्टुकामोथनिर्यांतंरामंजानपदोजनः ॥ यःप्राप्तःसोपिदृष्ट्वैव स्वर्गायानुगतोजनः ॥ १८ ॥ ऋक्षवानररक्षांसिजनाश्चपुरवासिनः ॥ आगच्छन्परयाभक्त्यापृष्ठतःसुसमाहिताः ॥ १९ ॥ यानिभूतानिनगरेप्यंतर्धानगतानिच ॥ राघवंतान्यनुययुःस्वर्गायसमुपस्थितम् ॥ २० ॥ यानिपश्यंतिकाकुत्स्थंस्थावराणिचराणिच ॥ सर्वाणिरामगमने अनुजग्मुर्हितान्यपि ॥ २१ ॥ नोच्छ्वसत्तदयोध्यायांसुसूक्ष्ममपिदृश्यते ॥ तिर्यग्योनिगताश्चैवसर्वेराममनुव्रताः ॥ २२ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे नवाधिकशततमः सर्गः ॥ १०९ ॥ अध्यर्धयोजनंगत्वानदींपश्चान्मुखाश्रिताम् ॥ सरयूंपुण्यसलिलांददर्शरघुनंदनः ॥ १ ॥ तांनदीमाकुलावर्तांसर्वत्रानुसरन्नृपः ॥ आगतःसप्रजोरामस्तंदेशंरघुनंदनः ॥ २ ॥ अथतस्मिन्मुहूर्तेतुब्रह्मालोकपितामहः ॥ सर्वैःपरिवृतोदेवैर्भूषितैश्चमहात्मभिः ॥ ३ ॥ आययौयत्रकाकुत्स्थःस्वर्गायसमुपस्थितः ॥ विमानशतकोटीभिर्दिव्याभिरभिसंवृतः ॥ ४ ॥ दिव्यतेजोवृतंव्योमज्योतिर्भूतमनुत्तमम् ॥ स्वयंप्रभैःस्वतेजोभिःस्वर्गिभिःपुण्यकर्मभिः ॥५॥ पुण्यावाताववुश्चैवगंधवंतःसुखप्रदाः ॥ पपातपुष्पवृष्टिश्चदेवैर्मुक्तामहौघवत् ॥ ६ ॥

जलसे भरी सरयूनदी रघुनन्दनने देखी ॥१॥ रामचन्द्रजी अपनी सम्पूर्ण प्रजाको साथ लिये भँवर और बडी तरंगोंसे युक्त सरयूके गोप्रतारक घाटके तटपर आये ॥ ॥ २ ॥ इसी अवसरमें लोकपितामह ब्रह्माजी सम्पूर्ण देवताओंको साथ लिये तथा और महात्मा ऋषियोंको साथ लिये ॥३॥ सौ करोड़ विमानोंके सहित स्वर्ग जानेको निश्चय किये रघुनाथजीके निकट उपस्थित हुए ॥ ४ ॥ आकाश जो कि नक्षत्रोंके और अपने तेजके प्रकाशसे प्रकाशित था उससमय पुण्यकर्मा और स्वयं प्रकाशित स्वर्गवासियोंके तेजसे दिव्य तेजयुक्त होगया॥ ५॥ उससमय सुगंधलिये चारों ओरसे दिव्य पवन चलने लगा और देवताओंने बहुत पुष्पोंकी वर्षाकी ॥६॥

उससमय गंधर्व गाने अप्सरिसते ब्रह्माजी कहनेरं

उससमय गंधर्व गाने अप्सरा नृत्य करने लगीं आकाशमें बाजे बजनेलगे तब पूर्णब्रह्म रघुनाथजी पैरोंहीसे सरयूके जलमें प्रवेश करने लगे ॥ ७ ॥ उस समय अन्त रिक्षसे ब्रह्माजी कहनेलगे हे राघव ! हे सर्व व्यापक विष्णु भगवान् ! आइये आपका मंगल हो आज हमारे भाग्यसे ही आप अपने लोकमें आते हैं ॥ ८ ॥ देव ताओंकी समान कान्तिवाले भाइयों सहित आप अपने प्रियलोकमें आइये । हे महाबाहो ! जिस शरीरमें प्रवेश करनेकी इच्छा हो उसमें प्रवेश करिये ॥ ९ ॥ यदि वैष्णव तेजमें प्राप्त होनेकी इच्छा हो अथवा सनातन ब्रह्म शुद्धरूपकी इच्छा हो तो उसमें प्रवेश कीजिये. हे देव ! आपही सब लोकोंकी गति हैं और आपको कोई नहीं जानता ॥ १० ॥ हे भगवन् ! वह विशालनेत्रा ज्ञानशक्ति आपकी माया जानकीही आपको जानती हैं इस कारण आप अचिन्त्य—देशपरि

तस्मिंस्तूर्यशतैःकीर्णेगंधर्वाप्सरसंकुले ॥ सरयूसलिलंरामःपद्भ्यांसमुपचक्रमे ॥ ७ ॥ ततःपितामहोवाणींत्वंतरिक्षादभाषत ॥ आगच्छविष्णो भद्रंतेदिष्ट्याप्राप्तोसिराघव ॥ ८ ॥ भ्रातृभिःसहदेवाभैःप्रविशस्वस्विकांतनुम् ॥ यामिच्छसिमहाबाहोतांतनुंप्रविशस्विकाम् ॥ ९ ॥ वैष्णवीं तांमहातेजोयद्वाकाशंसनातनम् ॥ त्वंहिलोकगतिर्देवनत्वांकेचित्प्रजानते ॥ १० ॥ ऋतेमायांविशालाक्षींतवपूर्वपरिग्रहाम् ॥ त्वामचिंत्यं महद्भूतमक्षयंचाजरंतथा ॥ यामिच्छसिमहातेजस्तांतनुंप्रविशस्वयम् ॥ ११ ॥ पितामहवचःश्रुत्वाविनिश्चित्यमहामतिः ॥ विवेशवैष्णवं तेजःसशरीरःसहानुजः ॥ १२ ॥ ततोविष्णुमयंदेवंपूजयंतिस्मदेवताः ॥ साध्यामरुद्गणाश्चैवसेंद्राःसाग्निपुरोगमाः ॥ १३ ॥ येचदिव्याऋपि गणागंधर्वाप्सिरसश्चयाः ॥ सुपर्णनागयक्षाश्चदैत्यदानवराक्षसाः ॥ १४ ॥ सर्वंपुष्टंप्रमुदितंसुसंपूर्णमनोरथम् ॥ साधुसाध्वितितेर्देवैस्त्रिदिवंगत कल्मषम् ॥ १५ ॥ अथविष्णुर्महातेजाःपितामहमुवाचह ॥ एषांलोकंजनौघानांदातुमर्हसिसुव्रत ॥ १६ ॥

च्छेदशून्य, महद्भूत, अक्षय—नाशरहित और अजरहो. हे महातेजस्वी ! जिस शरीरमें आपको प्रवेश करनेकी इच्छा हो, आप उस शरीरमें प्रवेश कीजिये ॥ ११ ॥ महामतिमान् रघुनंदन ब्रह्माजीके यह वचन श्रवणकर विचारकर भाइयोंके साथ शरीर सहित वैष्णवी तेजमें प्रवेश करगये ॥ १२ ॥ उस समय विष्णुमय भग वान् रामचन्द्रका सब देवता, साध्य, मरुद्गण, इन्द्र, अग्नि सब पूजन करनेलगे ॥ १३ ॥ और जो दिव्य ऋषिगण अप्सरा, सुपर्ण, नाग, यक्ष, दैत्य, दानव राक्षस थे ॥ १४ ॥ सब बडे हर्षित हुए, और सबके मनोरथ पूर्ण हुए, पापरहित होगये और आकाशमें देवता उनको साधुवाद देनेलगे ॥ १५ ॥ तब महातेजस्वी विष्णुजी ब्रह्माजीसे कहने लगे हे सुव्रत ! यह जितने पुरुष हमारे संग आये हैं इन सबको उत्तम लोक दीजिये ॥ १६ ॥

कर स्वर्गको सिधारे ॥ २७ ॥ इस प्रकारसे लोकपति भगवान् सब मनुष्य पुरवासी ऋक्ष वानर जीव जन्तुओंको [illegible] सन्नतापूर्वक प्रमुदित देवतोंसहित सबसे उत्तम साकेतलोकमें भ्राताओंसहित पधारे॥२८॥इत्यार्षे श्रीमद्रा०वाल्मी०आदि०उत्तरकांडे भाषाटीकायांदशाधिकशततमः सर्गः॥११०॥ इतनीही यह महर्षि वाल्मीकिजीकी बनाई हुई ब्रह्मासे पूजित उत्तरकाण्ड युक्त रामायणहै जो "रामायण" नामसे विख्यातहै ॥ १ ॥ इसके अनन्तर जिनमें यह चराचर जगत् व्याप्त होरहाहै वह विष्णु भगवान् स्वर्गलोकमें पूर्वकालकी नाईं देवतोंके साथ स्थित हुए ॥ २ ॥ तबसे देवता गंधर्व सिद्ध परमर्षि स्वर्गमें प्रसन्नता पूर्वक नित्य इस रामायण काव्यको श्रवण करते हैं ॥३॥ यह आख्यान आयुका बढानेहारा, सौभाग्यदायक, और पापनाशकहै,इस वेदसमान रामायणको पंडितोंको

ततःसमागतान्सर्वान्स्थाप्यलोकगुरुर्दिवि ॥ हृष्टैःप्रमुदितैर्देवैर्जगामत्रिदिवंमहत् ॥ २८ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य उत्तरकांडे दशाधिकशततमः सर्गः ॥ ११० ॥ एतावदेतदाख्यानंसोत्तरंब्रह्मपूजितम् ॥ रामायणमितिख्यातंमुख्यंवाल्मीकिनाकृतम् ॥ १ ॥ ततःप्रतिष्ठितोविष्णुःस्वर्गलोकेयथापुरा ॥ येनव्याप्तमिदंसर्वंत्रैलोक्यंसचराचरम् ॥ २ ॥ ततोदेवाःसगंधर्वाःसिद्धाश्चपरमर्षयः ॥ नित्यंशृण्वंति संहृष्टाःकाव्यंरामायणंदिवि ॥ ३ ॥ इदमाख्यानमायुष्यंसौभाग्यंपापनाशनम् ॥ रामायणंवेदसमंश्राद्धेषुश्रावयेद्बुधः ॥ ४ ॥ अपुत्रोलभते पुत्रमधनोलभतेधनम् ॥ सर्वपापैः प्रमुच्येतपादमप्यस्ययःपठेत् ॥ ५ ॥ पापान्यपिचयःकुर्यादहन्यहनिमानवः ॥ पठत्येकमपिश्लोकं पापात्सपरिमुच्यते ॥ ६ ॥ वाचकायचदातव्यंवस्त्रंधेनुर्हिरण्यकम् ॥ वाचकेपरितुष्टेतुतुष्टाःस्युःसर्वदेवताः ॥ ७ ॥ एतदाख्यानमायुष्यंपठन्रामायणंनरः ॥ सपुत्रपौत्रोलोकेस्मिन्प्रेत्यचेहमहीयते ॥ ८ ॥ रामायणंगोविसर्गेमध्याह्नेवासमाहितः ॥ सायाह्नेवापराह्णेचवाचयन्नावसीदति ॥ ९ ॥

श्राद्धमें अवश्य सुनाना उचित है ॥ ४ ॥ विश्वासपूर्वक श्रद्धासे सुनै तो अपुत्रको पुत्र, निर्धनीको धन मिलताहै इसका चौथाई श्लोक पढनेसेभी सब पाप दूर होते हैं॥ ॥ ५ ॥ जो मनुष्य प्रतिदिन अनेक प्रकारके पाप करते हैं, वे इसका एकही श्लोक पढनेसे सबपापरहित हो जाते हैं ॥ ६ ॥ इस पुस्तकके बांचनेवालेको वस्त्र धेनु और सुवर्ण देना चाहिये, बांचनेहारेके प्रसन्न और तुष्ट होनेसे संपूर्ण देवता संतुष्ट होतेहैं ॥ ७ ॥ इस आयुके बढानेहारे रामायणनामक आख्यानके पढनेसे मनुष्य इस लोकमें पुत्र पौत्रोंको प्राप्त होकर अन्तमें स्वर्गलोकमें पूजित होते हैं ॥ ८ ॥ रामायणको प्रातःकाल मध्याह्नसमय तीसरे पहर संध्या समय सावधान होकर

पाठ करनेसे किसी प्रकारका दुःख नहीं होता ॥ ९ ॥ वह रम्य अयोध्यापुरी बहुत वर्षोंतक शून्य पडी रही, बहुत काल पीछे जब ऋषभ राजा इसमें राज्य करेंगे तब मनुष्योंका निवास इस पुरीमें होगा ॥ १० ॥ भविष्य उत्तर सहित यह आख्यान आयुका देनेहारा प्रचेतसके पुत्र वाल्मीकिजीका बनाया हुआ है और

अयोध्यापिपुरीरम्याशून्यावर्षगणान्बहून् ॥ ऋषभंप्राप्यराजानंनिवासमुपयास्यति ॥ १० ॥ एतदाख्यानमायुष्यंसभविष्यंसहोत्तरम् ॥ कृतवान्प्रचेतसःपुत्रस्तद्ब्रह्माप्यन्वमन्यत ॥ ११ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्य चतुर्विंशतिसहस्रसंहितायामुत्तरकांडे स्वर्गारोहणंनामैकादशोत्तरशततमः सर्गः ॥ १११ ॥ समाप्तं श्रीवाल्मीकीयं रामायणम् ॥

सर्वथा वेदार्थ प्रतिपादक होनेसे ब्रह्माजीने भी इसे स्वीकार कियाहै ॥ ११ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीय आदिकाव्ये चतुर्विंशतिसहस्रसंहितायामुत्तरकांडेमुरादाबाद नगरस्थपंडितकुलतिलकमिश्रसुखानन्दात्मजकामेश्वरनाथसंस्कृतपाठशालाप्रधानाध्यापकपंडितज्वालाप्रसादमिश्रकृतभाषाटीकायामेकादशाधिकशततमः सर्गः ॥ १११ ॥

इदं श्रीवाल्मीकीयरामायण उत्तरकाण्डं भाषाटीकासमेतं मुम्बय्यां
क्षेमराज–श्रीकृष्णदासश्रेष्ठिना स्वकीये "श्रीवेङ्कटेश्वर"–
(स्टीम्) मुद्रणालये मुद्रयित्वा प्रकाशितम् ।
संवत् १९६७, शके १८३२.

दोहा—रामायणको श्रवणकर, हेम रत्न रथ वाजि ॥ क्षौम पताकायुक्त कर, दाज बहु विध साज ॥ १ ॥ रत्न किंकिणी सहित रथ, और दुधारी गाय ॥
दान करै अति प्रेमसों, बहुत भाँति सुखपाय ॥२॥ अष्टोत्तरशत द्विजनको, बहुविध सहित जिमाय ॥ एहि प्रकार फल चारि लह, रहै सुयश जग छाय ॥३॥
रामायणको श्रवणकर, वाचकको दे दान ॥ धेनु हेम सुन्दर वसन, सुवरण कुंडल कान ॥ ४ ॥ मुद्री शय्या छत्र दे, पादत्राण ललाम ॥
भूमिदान शुभ अन्न पुनि, ताम्बूल सुखधाम ॥५॥ भक्ष्य भोज्य पुनि लेह्य अरु, चोष्य पदार्थ अनेक ॥ दान करै अति भक्तिसे, हियमें परम विवेक ॥६॥
अश्वमेधके महस अरु, वाजपेय शतयाग ॥ एक सर्गके सुनेते, इनको फल बडभाग ॥ ७ ॥ तीर्थ प्रयागादिक सकल, गंगादिक सरि जौन ॥
नैमिषादि वन क्षेत्र कुरु, तीरथ कीने तौन ॥८॥ जिन यह रामायण सुनी, तिन सबकर फल लीन्ह ॥ हेमभार कुरुक्षेत्रमें, भानु ग्रस्त जिन दीन्ह ॥९॥
अरु जेहि रामायण सुनी, दोनों पुण्य समान ॥ श्रद्धा भक्ति समेत जो, सुने रामगुण गान ॥ १० ॥ सर्वपापमे छूटकर, विष्णुलोक सो जाय ॥
आदिकाव्य यह ऋषीने, भाष्यो जग सुखदाय ॥११॥ भक्तिपूर्वक जो सुने, सो पावत हरिधाम ॥ पुत्र दार धन अति बढै, सिद्ध होत मनकाम ॥१२॥

इति श्रवणविधि समाप्त ।

दोहा—राम भरत लक्ष्मण सिया, रिपुहन पवनकुमार ॥ चरणकमल सुग्रीवके, बन्दों वारम्वार ॥ १ ॥ जहँ जहँ प्रभुको कीर्तन, तहँ निज शीश झुकाय ॥
खलवन पावक पवनसुत, प्रणवों सरल सुहाय ॥ २ ॥ रामचन्द्र श्रीराम प्रभु, रामचन्द्र भगवान ॥ सीतापति रघुनाथजी, करिये जग कल्यान ॥ ३ ॥
मंगल लेखकके भवन, मंगल पाठक गेह ॥ मंगल राजा प्रजाको, मंगल भूमिसनेह ॥ ४ ॥ कतक रामको सार ले, नहिं लघु नहिं विस्तार ॥
प्रतिपदकी टीका करी, निजमतिके अनुसार ॥ ५ ॥ कृपा करहिं अस पवनसुत, याको होय प्रचार ॥ घर घरमें पुस्तक पढें, बाल वृद्ध नर नार ॥ ६ ॥
नेक कृपाकी दृष्टिसों, रचना जगत दिखात ॥ तिन प्रभु करुणासिंधुको, बडी नहीं यह बात ॥ ७ ॥ प्रभु अपनो कर जानिये, तुमही होत सहाय ॥
लाज तुम्हारे हाथ है, याको देहु बनाय ॥ ८ ॥ खेमराज श्रीसेठजी, वेङ्कटेशकी छाप ॥ वाको फैलो जगतमें, देश विदेश प्रताप ॥ ९ ॥
तिनपर कृपा राखिये, दीनबन्धु सुखधाम ॥ तिमि ज्वालाप्रसादके, रक्षक रहिये राम ॥ १० ॥ उन्निससे पंचाश शुभ, श्रावण सित भृगुवार ॥
सर्व सिद्ध त्रयोदशी, पूर्ण कियो सुखसार ॥ ११ ॥

॥ इत्युत्तरकाण्ड भाषाटीका समाप्ता ॥